संघर्ष और निर्माण

शंकर गुहा नियोगी और उनका नये भारत का सपना

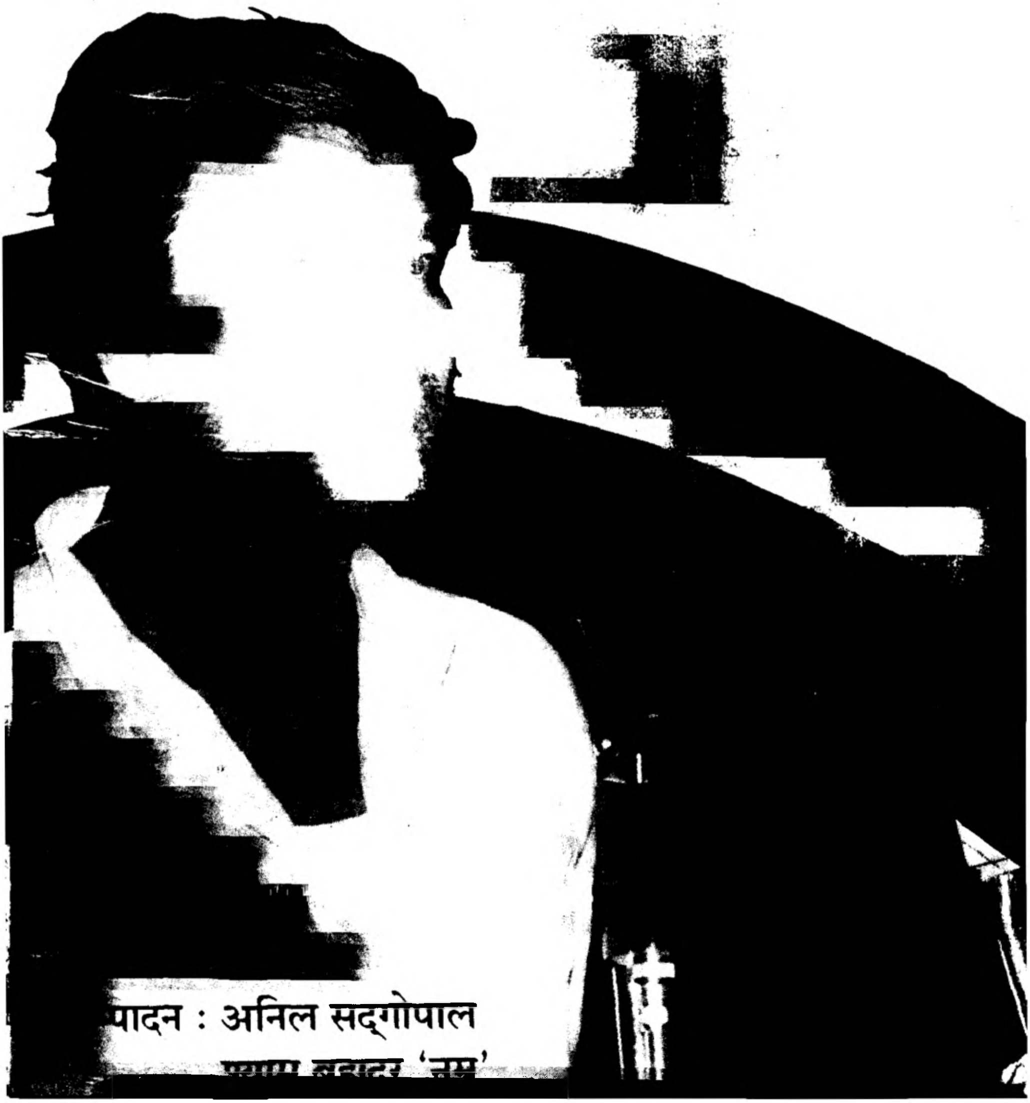

पादन : अनिल सद्गोपाल

संघर्ष और निर्माण

शहीद शंकर गुहा नियोगी और उनका
नये भारत का सपना

संघर्ष और निर्माण

शहीद शंकर गुहा नियोगी और उनका नये भारत का सपना

सम्पादन

अनिल सद्गोपाल ● श्याम बहादुर 'नम्र'

राजकमल प्रकाशन

नयी दिल्ली पटना

मूल्य : हार्ड कवर - रु. 250/-
पेपरबैक - रु. 125/-

कापीराइट : © छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा
दल्ली राजहरा, जिला दुर्ग,
मध्य प्रदेश 491 228

प्रथम संस्करण : सितम्बर 1993

प्रकाशन : छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के लिए
राजकमल प्रकाशन (दिल्ली)
द्वारा प्रकाशित

लेजर टाइपसेटिंग : चित्रांकन ग्राफ़िक्स
8725 शीदीपुरा, करोलबाग,
नयी दिल्ली 110 005

मुद्रण : मेहरा ऑफसेट प्रेस
चांदनी महल, दरियागंज,
नयी दिल्ली 110 002

इस पुस्तक के किसी भी अंश को उद्धृत करने अथवा अन्य कोई गैर-व्यावसायिक उपयोग करने के लिए अनुमति की आवश्यकता नहीं है, लेकिन हमें सूचित करना और यथोचित संदर्भ का उल्लेख करना अनिवार्य होगा।

सम्पादन :

अनिल सद्गोपाल ● श्याम बहादुर 'नम्र'

सम्पादन सहयोग :

● नरेन्द्र कुमार ● हरि जोशी ● राकेश दीवान

● अमन कुमार नम्र ● शशि मौर्य ● सीताराम राऊत

● विजय बहादुर सिंह ● अमित सेनगुप्ता

खंड सम्पादन :

खंड तीन : नियोगी की कलम से – निबंध : हरि जोशी

खंड चार : नियोगी की कलम से – कविताएं : विजय बहादुर सिंह

खंड दस : विरासत का प्रश्न : राकेश दीवान

खंड बारह : नियोगी यादों में : शशि मौर्य

लेज़र टाइपसेटर :

बुद्धिराम (चित्रांकन ग्राफ़िक्स)

रेखाचित्र, पोस्टर चित्र एवं नक्शे :

प्रेमनाथ त्यागी ● राजेन्द्र हरदेनिया

खंड चित्र (चौदह) एवं अंदर का आवरण :

ओरिजित सेन

चित्रमय श्रद्धांजलि (पृ. 6 पर) :

विष्णु चिंचालकर 'गुरुजी'

आवरण :

के. आर. सुबन्ना

आँधी-तूफान के बीच एक पौधे ने जन्म लिया,
पौधे में नई कोंपलें फूटीं, फूल खिले,
ज़ालिमों ने रोका, पर फूलों की खुशबू फैलती रही।

चित्रमय श्रद्धांजलि

विष्णु चिंचालकर 'गुरुजी'

आंदोलन की विरासत पाने वाली
अगली पीढ़ी को समर्पित

धारवाड़ (कर्नाटक) और हैदराबाद के कुछ मित्रों को पत्र लिखकर मदद माँगी थी। मात्र दो सप्ताह के अंदर ही इन मित्रों ने उदारतापूर्वक आर्थिक सहयोग भेजकर इस आंदोलन के प्रति अपनी निष्ठा का परिचय दिया। पुस्तक का शेष प्रकाशन खर्च (कुल खर्च का करीब आधा हिस्सा) छमुमो ने, यानी हजारों मजदूर साथियों ने, वहन किया है।

यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि इस पुस्तक की मूल योजना शहीद अस्पताल के डॉ. पुण्यब्रत गुण एवं डॉ. शैबाल जाना की पहल व मार्गदर्शन के बगैर कभी भी मूर्त रूप न ले पाती।

राजकमल प्रकाशन के श्री मोहन गुप्त शुरू से अंत तक हमारे संकटमोचक और अनौपचारिक परामर्शदाता बने रहे। उनकी सारी व्यस्तताओं के बावजूद यह पुस्तक उनकी प्राथमिकता रही।

अंत में छमुमो के नेतृत्व और अनगिनत कार्यकर्ताओं व मजदूर साथियों के धैर्य का उल्लेख करना जरूरी है। यह धीरज उन्होंने केवल तभी नहीं दिखाया जब यह पुस्तक नियोगी के पहले शहादत दिवस (28 सितम्बर 1992) पर निकल नहीं पायी। परंतु उनका इससे भी अधिक धैर्य तो तब दिखा जब हमारे द्वारा माँगे जा रहे आँकड़ों, दस्तावेजों व स्पष्टीकरणों का अंत ही नहीं हो रहा था। उनके इस सहयोग के बावजूद जो गलतियाँ हुई हैं, उनके लिए निःसंदेह हम स्वयं जिम्मेदार हैं।

शहीद दिवस / 3 जून 1993 — सम्पादकद्वय

इस पुस्तक के बारे में

आज से लगभग एक वर्ष पूर्व छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा (छमुमो) की ओर से हमारे सामने यह प्रस्ताव रखा गया था कि शहीद शंकर गुहा नियोगी के विचारों व काम को प्रस्तुत करने के लिए एक पुस्तक हिन्दी में सम्पादित की जाये। छमुमो का कहना था कि इस पुस्तक की प्रमुखतः जरूरत आंदोलन में भाग ले रहे हजारों मजदूरों, किसानों व युवाओं के लिए है जिन्हें नियोगी द्वारा दिखाये गये रास्ते पर अमल करने और आंदोलन को समाज व देश के हित में आगे बढ़ाने में इससे मदद मिलेगी। मोर्चा चाहता था कि यह पुस्तक उन तमाम बुद्धिजीवियों, समाजकर्मियों एवं राजनैतिक व ट्रेड यूनियन कार्यकर्ताओं के लिए भी उपयोगी होनी चाहिए जो देश में चल रहे विभिन्न जन आंदोलनों से जुड़े हुए हैं। छमुमो का आग्रह था कि इस पुस्तक में नियोगी के अधिकाधिक लेखों, भाषणों, वक्तव्यों, साक्षात्कारों एवं चर्चाओं को शामिल किया जाये ताकि उन्हीं के शब्दों में उनकी समझ लोगों तक पहुँचे।

उपर्युक्त आधार पर जब हमने मोर्चे के कार्यालय व नियोगी के सहयोगियों, परिवारजनों, मित्रों व मजदूर साथियों से जानकारियाँ बटोरनी शुरू की तो जल्द ही यह स्पष्ट होने लगा कि यह काम उतना सरल नहीं होगा जितना कि शुरू में दिखा था। नियोगी के जीवन, व्यक्तित्व, अनुभव एवं विचारों के बारे में अलग-अलग लोगों की समझ व जानकारियाँ हमेशा एक-सी नहीं थीं -- कई जगहों पर उनके बीच विरोधाभास भी था। यह समस्या सबसे अधिक तो नियोगी के सन् 1977 के पूर्व के जीवन व कामों के बारे में थी। उस समय नियोगी को अपेक्षाकृत बहुत कम लोग जानते थे। मार्च 1977 से दल्ली राजहरा के आंदोलन की शुरूआत के बाद तो नियोगी एकदम राष्ट्रीय पटल पर आ गये और उनके कामों का ब्योरा कई जगहों पर दर्ज होने लगा। तब भी हैरत की बात तो यह थी कि विगत चौदह वर्षों में किये गये उनके काम का विवरण तक कहीं व्यवस्थित रूप से उपलब्ध नहीं था, बहुत कुछ उनके साथियों की याद में गड्ड-मड्ड हो रहा था। समाचारपत्रों व पत्रिकाओं में छपे सैकड़ों लेख भी कई महत्वपूर्ण बिंदुओं

कहाँ क्या मिलेगा ?

● चित्रमय श्रद्धांजलि : विष्णु चिंचालकर 'गुरु जी' / 6 ● समर्पण / 7 ● सम्पादकीय आभार / 8-9 ● इस पुस्तक के बारे में / 9-10 ● कहाँ क्या मिलेगा ? / 11-15 ● चित्रों, कोलाजों एवं नक्शों की सूची / 16 ● भूमिका / 17-21 ● संक्षेपाक्षरों की सूची / 22

खंड एक : जीवन यात्रा

● खंड परिचय / 24-25 ● धीरेश से शंकर और शंकर से छत्तीसगढ़ का जन-नायक : शशि मौर्य व अनिल सद्गोपाल / 26-39 ● नियोगी की जेल-यात्रा (तालिका) : प्रस्तुति — अनिल सद्गोपाल / 40-41 ● सारा जेल हैरान है (कविता) : भारत डोगरा / 42

खंड दो : नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़

● खंड परिचय / 44-45 ● छत्तीसगढ़ के मुक्ति के खातिर . . . . (गीत) : फागूराम यादव / 46 ● छत्तीसगढ़ का संक्षिप्त परिचय : संकलन एवं प्रस्तुति — अनिल सद्गोपाल / 47-55 ● छत्तीसगढ़ की अस्मिता : हीरालाल शुक्ल / 55-59 ● असमान विकास से आहत छत्तीसगढ़ : रामशरण जोशी / 60-63 ● 'छोटे और सुंदर छत्तीसगढ़' की ओर . . . (दस्तावेज) : छमुमो / 63-65 ● विकास या विनाश ? (दस्तावेज) : छमुमो / 65-67 ● नये छत्तीसगढ़ की माँग एक जनवादी माँग है (दस्तावेज) : छमुमो / 67 ● छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का नजरिया (दस्तावेज) : छमुमो / 68 ● हमार सपना के छत्तीसगढ़ (कविता) : छमुमो / 69 ● ऐसा होगा नये भारत का नया छत्तीसगढ़ : छबिलाल साहू / 71-72 ● छत्तीसगढ़ का निर्माण-गीत (गीत) : श्याम बहादुर 'नम्र' / 72-73 ● नये भारत का सपना : अनिल सद्गोपाल / 74-78

खंड तीन : नियोगी की कलम से — निबंध

● खंड परिचय / 80 ● मार्क्सवाद के मूल सूत्र / 81-88 ● मृत्यु-समुंदर के किनारे तुम लोग अमर रहोगे / 89-91 ● सर्वहारा वर्ग के आंदोलन पर / 92-93 ● लोकतांत्रिक आंदोलन बनाम जनवादी लोकतांत्रिक आंदोलन / 94-95 ● नेतृत्व के सवाल पर / 95-98 ● कामरेड कुसुमबाई अब नहीं रहीं / 98-100 ● किरंदुल के अग्निगर्भ से / 100-115 ● 2-3 जून शहीद दिवस-शपथ दिवस / 115-119 ● विभागीयकरण खदान मजदूरों के बच्चों को बोझ की जगह राष्ट्र की सम्पदा बना देता है / 120-121 ● आज की पीढ़ी और वीर नारायण सिंह की वसीयत / 122-132 ● लुटेरा राज खत्म करना है / 133-134 ● छत्तीसगढ़ और राष्ट्रीयता का प्रश्न / 135-142 ● मुक्ति-कामियों के प्रेरणास्रोत — वीर नारायण सिंह / 143-144 ● खदानें, मशीनीकरण एवं लोग / 145-154 ● मजदूरी, काम एवं रहन-सहन की परिस्थितियाँ / 155-161 ● आज बी. एन. सी. एवं ग्लूकोज का मजदूर आंदोलन आजादी के संघर्ष के समतुल्य है / 162-164 ● शिक्षा कैसी हो ? / 164-166 ● आखिर दल्ली राजहरा की लोहा खदानों की समस्या क्या है ? / 167-175 ● वैकल्पिक औद्योगिक नीति (चर्चा के लिए ड्राफ्ट) / 175-181 ● मशीनीकरण की वेदी पर जनता की कुर्बानी हमें मंजूर नहीं / 181-183 ● राष्ट्रीय कृषि नीति के दिशाबोध पर्चे पर प्रतिक्रिया / 184-188 ● छात्र राजनीति में एक नयी रोशनी चाहिए / 188-190 ● शिक्षा नीति एवं छात्र वर्ग की भूमिका / 191-193 ● भारत के ट्रेड यूनियन आंदोलन की समस्याएँ / 194-205 ● भिलाई : एक सबक / 205-212 ● जरूरत है संसदीय प्रणाली में जन आकांक्षाओं के अनुरूप से तीव्रतर सच्चा जनवाद लाने की / 212-217 ● चौराहे पर खड़े देश को कौन दिशा देगा ? / 217-222 ● हमारा पर्यावरण / 223-236

387-388 ● आंदोलन से उपजी उत्पादकता (दस्तावेज) : कनक राय, पी. सरावणन / 388-389 ● छमुमो के नेताओं की गिरफ्तारी पर दो बयान : पी. एन. हक्सर, आचार्य जे. बी. कृपलानी / 389-391 ● नियोगीजी कौन होता है ? : राजेन्द्र कुमार सायल / 392 ● प्रधान मंत्री को लिखे पत्र (दस्तावेज) : शंकर गुहा नियोगी / 393-396 ● देशज और स्वावलम्बी तकनालाजी की ओर : गणेशराम चौधरी / 397-399 ● अर्द्ध-मशीनीकरण — देशप्रेमी तकनालाजी की मिसाल : अनिल सद्गोपाल / 399-400 ● मशीनीकरण के खिलाफ एक लड़ाई : गणेशराम चौधरी व पुण्यब्रत गुण / 401-409 ● पूर्ण मशीनीकरण किस कीमत पर ? (दस्तावेज) : शंकर गुहा नियोगी / 409-413 ● शराब की लत छुड़ायी संगठन ने : अमन कुमार नम्र व अनिल सद्गोपाल / 414-420 ● छत्तीसगढ़ी आल्हा गीत के अंश : फागूराम यादव / 420-421 ● वे नाराज क्यूँ ? : मणिमाला / 421 ● 'स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करो' आंदोलन (दस्तावेज) : छमुमो / 422 ● दल्ली राजहरा का जन स्वास्थ्य आंदोलन : शहीद अस्पताल से एक सामूहिक लेख / 423-428 ● खर्चा कहाँ से आता है ? : शैवाल जाना / 428 ● मजदूर आंदोलन में महिलाओं की भूमिका : लीलाबाई व सुधा भारद्वाज / 428-431 ● स्कूली शिक्षा और जन शिक्षण : इलीना सेन / 431-436 ● . . . . और फूट्या अंकुर नयी संस्कृति का : श्याम बोहरे व अनिल सद्गोपाल / 437-438 ● नवाँ अंजोर और भिलाई स्टील प्लांट : रामलाल विश्वकर्मा / 438-439 ● स्वास्थ्य बर गा संघर्ष करबो (गीत) : फागूराम यादव / 439 ● शराबी मइया रे . . . (गीत) : फागूराम यादव / 439 ● मोर भारत मा मशीनीकरण . . . बरबादी रे (गीत) : फागूराम यादव / 440 ● नारी कोली नर से परदा ह्याव घर से (गीत) : रामलखन / 441 ● कैइसे कानून बनायेस सरकार बाबू . . . (गीत) : कौशल्याबाई / 441-442 ● कबले जुल्मी अत्याचारिया चलबे करी ? (गीत) : मधुसूदन विश्वकर्मा / 442 ● बहिनी हो . . . . (गीत) : जामबाई वर्मा / 443 ● पर्चे-पोस्टरों के आइने में नियोगी और आंदोलन : मणिमाला / 443-448 ● जन शिक्षण सामग्री की बानगी (दस्तावेज) 1. हमर सपना 2. नेल्सन मंडेला को लाल जोहार : छमुमो / 449-451 ● ऐसे शुरू हुआ भिलाई आंदोलन : राकेश दीवान / 451-453 ● छत्तीसगढ़ी आल्हा गीत के अंश : फागूराम यादव / 453 ● भिलाई आंदोलन का माँग पत्र (दस्तावेज) : छमुमो / 454 ● जीने लायक वेतन : अनिल सद्गोपाल / 455 ● भिलाई नरसंहार : राजिम केतवास / 456-458 ● राष्ट्रीय प्रक्रिया की ओर कदम (दस्तावेज) : राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा / 459-461 ● आजादी का असली मतलब क्या है ? (दस्तावेज) : शंकर गुहा नियोगी / 462-464 ● लाल-हरे झंडे की सफलता की कहानी : प्रस्तुति — अनिल सद्गोपाल / 465-472 ● शहीद अमर है : हरेन्द्र नाथ चट्टोपाध्याय / 472

खंड नौ : नियोगी की शहादत

● खंड परिचय / 474 ● अब ये लोग गोली चलायेंगे : राकेश दीवान / 475-477 ● राष्ट्रपति से अपील जो बेअसर साबित हुई (दस्तावेज) : छमुमो / 477-479 ● सुश्री आशा गुहा नियोगी की रिपोर्ट और उसमें इंगित उद्योगपति / 480 ● शहादत की पृष्ठभूमि और उसके मायने (दस्तावेज) : नागरिक समिति / 482-484 ● संवेदना और एकजुटता का सैलाब : राकेश दीवान / 485-487 ● छत्तीसगढ़ी आल्हा गीत के अंश : फागूराम यादव / 487 ● रास्ता दिखाती शहादत : अनिल सद्गोपाल / 488 ● शहादत की कसम (दस्तावेज) : छमुमो / 488

खंड दस : विरासत का प्रश्न

● खंड परिचय / 490-491 ● छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की प्रेस विज्ञप्ति से उद्धृत कुछ अंश (दस्तावेज) / 491 ● विरासत का अर्थ समझाता जन आंदोलन : राकेश दीवान / 492-496 ● विरासत का अर्थ समझाते मजदूर : अनिल घमड़िया, सुनीलम् / 496 ● आंदोलन के लिए

का कोई काम नहीं करते थे : कुमारसिंह साहू / 603-604 ● नियोगीजी ने मेरी जान बचायी : भक्तिपद घोष / 604-605 ● खाना पकाने में भी द्वंद्वात्मक भौतिकवाद : अमित सेनगुप्ता / 605-607 ● दस हजार साल के लिए रुक नहीं सकते : आयेशा हेब्ले / 608 ● नियोगी के रूप में भगत सिंह फिर पैदा हो चुका है : स्वामी अग्निवेश / 609-610 ● सपना टूटता नहीं : शैवाल जाना / 610-613 ● जनता से जुड़ते ही बंदूक दिख जाता है : अनिल सद्गोपाल / 613-615 ● जिसका सपना मर गया, समझो वह इंसान भी मर गया : सुरेश कुमार / 616 ● मैं स्वयं को पारदर्शी रखना चाहता हूँ : राजेन्द्र हरदेनिया / 617 ● अथक सागर की तरह बनो, कामरेड ! : राकेश शुक्ला / 618-619 ● बड़े-बड़े सपने हम सबने मिल-जुलकर देखे : पी. वी. राजगोपाल / 619-620 ● नियोगी काकू : रफ़ी सेनगुप्ता / 621 ● महिलाओं की लड़ाई में पुरुषों की भागीदारी क्यों नहीं ? : सरिता शर्मा / 621-622 ● नेल्सन मंडेला की रिहाई धूम-धाम से मनायी : अनूप सिंह / 622-624 ● प्रसंगों के आइने से : अनुराग सिंह / 624-625 ● खुद मौत भी उनके होठों की मुस्कान मिटा न सकी : महाश्वेता देवी, मदन दत्त / 625-629 ● जिंदा रहना है तो करना है, नहीं तो मरना है : निरंजन लाल यादव / 629-631 ● शवयात्रा नहीं, विजय यात्रा : श्याम बहादुर ' नम्र ' / 631-632

खंड तेरह : शहादत से अंकुरित कविताएँ

● खंड परिचय / 634 ● सच्चा योगी : हरि ठाकुर / 635 ● उसकी आवाज बाकी है : इश्तियाक / 635-636 ● एक अभेद्य दीवार : सुरेश सलिल / 636 ● विचार नहीं मरता : श्याम बहादुर ' नम्र ' / 637 ● तुम्हें याद करेगा : कल्पना घोष / 637-638 ● शंकर मर नहीं सकता : दिलीप बागची / 638 ● कल रात जब मैं सो रहा था . . . . : अमित सेनगुप्ता / 639 ● सुंदर दुनिया की खातिर : अनिल सद्गोपाल / 640-641 ● तुम्हें क्रांतिकारी सलाम : अमित भटनागर / 641-642 ● स्वप्नद्रष्टा : रक्षा शुक्ला / 642-643 ● नर्मदा के तट से : बाबा आमटे / 643-644

खंड चौदह : नियोगी — एक नयी राजनैतिक धारा

● खंड परिचय / 646 ● वामपंथ की तीनों धाराओं से अलग, एक चौथी धारा : ए. के. राय / 647-651 ● जिसने जनता के पैरों के लिए जूते बनाना सीखा : अमित सेनगुप्ता / 651-655 ● संघर्ष-निर्माण इंसान के दो पैरों की तरह : गणेशराम चौधरी / 655-656 ● संघर्ष और निर्माण : अनिल सद्गोपाल / 656-659

बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का निर्लज्ज स्वरूप

● राजीव गांधी की हत्या क्यूँ ? : शंकर गुहा नियोगी / 661-666

नियोगी के शब्दों में

● नियोगी की रचनाओं से चंद उद्धरण : प्रस्तुति — अमित सेनगुप्ता व अनिल सद्गोपाल / 667-671

उपसंहार

● नयी चुनौतियों की ओर . . . / 672-673

परिशिष्ट

● शहीद शंकर गुहा नियोगी द्वारा लिखे गये लेखों की सूची / 674 ● छत्तीसगढ़ में तहसीलों की जिलेवार सूची (संदर्भ : पृ. 48 पर प्रस्तुत नक्शा) / 675 ● लेखकों एवं अन्य सहयोगियों का परिचय / 676-681

भूमिका

जब भारत में ब्रिटिश राज खत्म हुआ, तब यह माना गया था कि भारत पर किसी भी विदेशी सत्ता का आधिपत्य नहीं रह गया है। अब यह देश भारतवासियों की आकांक्षाओं, आशाओं, अनुभवों, परम्पराओं, संस्कृतियों और क्षमताओं के अनुरूप विकास करेगा। इसी तरह जब भारत का संविधान बना, तब यह माना गया कि भारत की शासन व्यवस्था जनता के द्वारा, जनता के लिए और जनता की होगी। लेकिन पिछले 45 वर्षों के अनुभव यह बताते हैं कि उपर्युक्त मान्यता और यथार्थ की दिशा एक-दूसरे के बिल्कुल विपरीत रही है। सन् 1947 के बाद शुरू की गयी विकास की प्रक्रिया से एक ओर देश में [illegible] बढ़ी और दूसरी ओर देश विदेशी कर्ज के चक्रव्यूह में बुरी तरह फँस गया। आज हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था अधिकांश जनता को जीने का अधिकार देने में भी अक्षम सिद्ध हो रही है और लोकतंत्र का अर्थ केवल जनता द्वारा चुनाव के समय वोट डालना रह गया है। मेहनतकश जनता के विचारों व अनुभवों के लिए न तो विकास प्रक्रिया में कोई स्थान मिल सका है और न ही शासन व्यवस्था में।

सच तो यह है कि एक आजाद देश की अवधारणा को ही लेकर हमारे कई शीर्ष नेताओं में भ्रम था और यह भ्रम आजादी की लड़ाई के वक्त से ही बना हुआ था। हमारे अनेक नेता पश्चिमी सभ्यता, लोकतंत्र और विकास से अभिभूत थे और उसी नकल का भारत चाहते थे। वे भारत को भारत नहीं, इंग्लैंड और अमरीका का प्रतिरूप बनाना चाहते थे। इस बीच [illegible] कांग्रेस के आंदोलन के अंदर और बाहर अनेक संगठन और राष्ट्रीय-स्तर के नेता थे जो भारत की सांस्कृतिक [illegible] अर्थतंत्र और यहाँ की पुरानी ग्राम-आधारित लोकतांत्रिक व न्यायिक व्यवस्था के [illegible] रहे थे। वे लोग भारतीय परिवेश के अनुरूप आजाद भारत बनाना चाहते थे। लेकिन कांग्रेस के सत्ता में आने के बाद इन सब को दरकिनार कर दिया गया। इस प्रकार शासन व्यवस्था [illegible] नेताओं व नौकरशाहों के हाथ में चली गयी। परिणाम यह हुआ कि [illegible] भारत में भी गुलाम भारत की प्रशासनिक व शैक्षणिक व्यवस्था ज्यों-की-त्यों कायम रह गयी। फर्क मात्र इतना रहा कि ऊँची कुर्सियों पर यहाँ के नेतागण बैठे, जो पश्चिमी सभ्यता की मानसिक गुलामी से मुक्त नहीं हो पाये थे। इसलिए उन्होंने विकास की दिशा को पश्चिमी औद्योगीकरण एवं मान्यताओं की तरफ मोड़ दिया।

सन् 1947 के बाद निर्वाचित प्रतिनिधियों ने लोक-कल्याणकारी शासन व्यवस्था [illegible] और मिश्रित अर्थव्यवस्था लागू की। एक ओर सोवियत आर्थिक व्यवस्था की [illegible] के रूप में सार्वजनिक क्षेत्र में भाखड़ा-नांगल जैसे बड़े बाँध और भिलाई इस्पात संयंत्र जैसे [illegible] का निर्माण हुआ, जिन्हें भारत के नये औद्योगिक तीर्थ और मंदिर कहा गया। दूसरी ओर [illegible] औद्योगिक घरानों को निजी क्षेत्र में विशाल उद्योग लगाने की छूट दी गयी। सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों में औद्योगीकरण का प्रमुख आधार हमारी धरती से [illegible] हुई [illegible] था। यह माना गया कि विकास की इस प्रक्रिया से हमारा देश तेजी से आगे बढ़ेगा और इस [illegible] प्राकृतिक सम्पदा का दोहन कर विकसित देशों की दौड़ में आगे निकल जायेगा। विकास की यह प्रक्रिया '[illegible]' सिद्धांत पर शुरू की गयी थी। इस सिद्धांत के अनुसार विकास का रस [illegible] तक पहुँचकर [illegible] रिसकर आयेगा।

[illegible] के सिद्धांत पर आधारित विकास की इस प्रक्रिया में भारत सरकार [illegible] द्वारा मध्य प्रदेश के दक्षिण-पूर्वी भाग (छत्तीसगढ़ क्षेत्र) के दुर्ग जिले में भिलाई [illegible] किया गया। इस कारखाने की स्थापना होते ही छत्तीसगढ़ भारत के विकास के [illegible] पर दिखायी पड़ने लगा। केवल इस्पात कारखाने के इर्द-गिर्द ही नहीं, परन्तु पूरे छत्तीसगढ़ में अनेक [illegible] औद्योगिक प्रतिष्ठानों का जाल बिछ गया। कहा गया था कि इस औद्योगीकरण से छत्तीसगढ़ के लोगों

नियोगी मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा में विश्वास करते थे। उन्होंने तीनों धाराओं के साम्यवादी दलों में और उनसे सम्बद्ध आंदोलनों में भाग लिया। इस अनुभव से उन्होंने सीखा कि जब तक मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा को छत्तीसगढ़ की माटी से जोड़कर वहाँ की सांस्कृतिक विरासत के परिप्रेक्ष्य में न उतारा जाये, तब तक न्यायपूर्ण समाज रचना का रास्ता स्पष्ट नहीं हो पायेगा। अतः नियोगी ने छत्तीसगढ़ की परिस्थिति का बारीकी से अध्ययन किया। उन्होंने छत्तीसगढ़ की जनता की क्षमताओं को पहचाना, उनकी आशाओं, आकाँक्षाओं, परम्पराओं और संस्कृति को समझा तथा उनके अनुभवों को आत्मसात किया।

नियोगी ने देखा कि मेहनतकश जनता दो हिस्सों में बँटी हुई थी — एक ओर स्थायी औद्योगिक मजदूर और दूसरी ओर अस्थायी ठेका मजदूर, गरीब किसान, आदिवासी, बेरोजगार युवा आदि। औद्योगिक प्रतिष्ठानों के स्थायी व बेहतर वेतन पाने वाले मजदूर ज्यादातर छत्तीसगढ़ के बाहर से आये थे। शायद इसी कारण से, संगठित होने के बावजूद, उनकी छत्तीसगढ़ के विकास में अपेक्षाकृत कम रुचि थी। उनका नेतृत्व कर रही केंद्रीय ट्रेड यूनियनें भी उन्हें वेतन-बोनस के दायरे से बाहर निकलने और स्थानीय विकास के प्रश्नों से जुड़ने की दिशा नहीं दे पा रही थीं। किंतु आपात्काल के अंतिम दौर में दल्ली राजहरा की लौह अयस्क खदानों के लगभग दस हजार ठेका मजदूर इस विसंगति को पहचानने लगे थे। वे स्थापित केंद्रीय ट्रेड यूनियनों के स्थानीय नेतृत्व के मैनेजमेंट-परस्त और मजदूर-विरोधी चरित्र के खिलाफ अपनी आवाज बुलंद करने लगे थे। उन्हें अब भिलाई इस्पात कारखाने के स्थायी कर्मचारियों की तुलना में अपना दोयम दर्जा मंजूर नहीं था। उनके लिए मैनेजमेंट का ठेका मजदूरों के प्रति भेदभावपूर्ण रवैया प्रतिष्ठा का प्रश्न बन चुका था। उनकी लड़ाई अब केवल आर्थिक मुद्दों तक सीमित नहीं रह गयी थी — यह उनकी अस्मिता और प्रतिष्ठा की लड़ाई का रूप ले चुकी थी। ऐसी परिस्थिति में जब नियोगी आपात्काल के बाद जेल से छूटे तो उन्होंने तुरंत ठेका मजदूरों की भावनाओं को समझ लिया और उनकी लड़ाई से जुड़ गये। आपात्काल के पूर्व के वर्षों में उन्होंने मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा को छत्तीसगढ़ की माटी से जोड़कर जो दृष्टि पायी थी, अब उसी के सहारे उन्होंने ठेका मजदूरों के संघर्ष को दिशा देना शुरू किया।

सन् 1977 में लड़ी गयी ' फाल बैक वेजेस ' की लड़ाई के दो परिणाम हुए। एक ओर तो खदानों में उत्पादन की प्रक्रिया पर मजदूरों का पहली बार आंशिक नियंत्रण स्थापित हुआ, वहीं दूसरी ओर उनकी औसत दैनिक आय में तेजी से वृद्धि हुई। लेकिन ऊपर से थोपी गयी और सरकारी ठेके से बिकने वाली शराब की संस्कृति ने मजदूरों की गाढ़ी कमाई ठेकेदारों को वापस पहुँचाना शुरू कर दिया। इसके जवाब में नियोगी ने शराबबंदी का अभियान चलाया जिसमें उन्होंने मजदूरों के परिवारों को, विशेषकर महिलाओं को, शामिल किया। शराबबंदी अभियान नियोगी के लिए वर्ग संघर्ष का एक धारदार हथियार बन गया। इस तरह उन्होंने संघर्ष को संगठन-निर्माण और सांस्कृतिक पुनर्जागरण की प्रक्रिया में ढाला और भोगवादी संस्कृति के विरुद्ध जेहाद छेड़ दिया। इस क्रम में आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक, हर क्षेत्र में, सम्यक रूप से ' निर्माण के लिए संघर्ष ' और ' संघर्ष के लिए निर्माण ' की प्रक्रिया शुरू हुई।

कतिपय लोगों ने यह भ्रांति फैलायी है कि विकल्प के निर्माण का काम राजसत्ता प्राप्त करने के बाद ही किया जा सकता है। नियोगी ने इस मान्यता को तोड़ा और संघर्ष और निर्माण को साथ-साथ चलाने का प्रयोग शुरू किया। दल्ली राजहरा आंदोलन उभरने के पूर्व सत्तर के दशक के शुरू की एक घटना है। उस समय भिलाई इस्पात कारखाने की दानीटोला क्वार्ट्जाइट खदान में नियोगी मजदूरी करते थे। वहाँ की कैंटीन में 15 पैसे में बगैर दूध की घटिया चाय मिलती थी। नियोगी ने अचानक एक दिन दूध वाली, अच्छी चाय बनाकर 5 पैसे में बेचनी शुरू कर दी। इससे मजदूर समझ गये कि कैंटीन वाला उनसे अत्यधिक मुनाफा कमा रहा था और उन्होंने कम कीमत की अच्छी चाय की माँग उठाकर [illegible]

में उत्पादन बढ़ाकर दिखाया। अपने संघर्षों के दौरान उन्होंने उत्पादकता की मात्रा और गुणवत्ता में कमी नहीं आने दी। इसलिए वे अर्द्ध-मशीनीकरण की बात करते थे — मशीन और मानव शक्ति के बीच संतुलन की बात। एक ओर बड़ी मशीनों के विरुद्ध शांतिपूर्ण जुझारू संघर्ष और दूसरी ओर मशीनों की तुलना में उत्पादकता और गुणवत्ता बनाये रखना, उनके ' संघर्ष और निर्माण ' की विचारधारा को और भी अधिक स्पष्ट करता है।

निःसंदेह, छत्तीसगढ़ नियोगी के प्रयोगों की कर्मभूमि था, लेकिन एक शोषणविहीन नये भारत का सपना उनके मानस को हमेशा आलोड़ित करता रहता था। इसीलिए उन्होंने भारत के अन्य देशभक्त और जनवादी संगठनों के साथ मिलकर राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा बनाने की प्रक्रिया शुरू की थी। इसी दृष्टि से आगे चलकर उन्होंने भोपाल गैस पीड़ितों के संघर्ष, मेरठ की साम्प्रदायिक सद्भावना यात्रा और ' नर्मदा बचाओ आंदोलन ' में भी सक्रिय भागीदारी की और छत्तीसगढ़ क्षेत्र के अनेक जन-संगठनों के साथ मिलकर एक समानधर्मी मंच की नींव डाली।

छत्तीसगढ़ के उद्योगपतियों ने उनकी बर्बरतापूर्ण तरीके से हत्या करवा दी। लेकिन उनकी हत्या के बाद भी छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा द्वारा शांतिपूर्ण, जुझारू तरीके से चलाये गये अनुशासित आंदोलन ने यह सिद्ध कर दिया कि नियोगी एक विचारधारा के रूप में जिंदा हैं।

आज देश नयी आर्थिक नीति के तहत पुनः महाशक्तियों का उपनिवेश बनने की गलत दिशा में बढ़ रहा है। राजनैतिक दल चुनाव के दलदल में फँस कर दिशाहीन हो रहे हैं। मजदूर संगठन अर्थवाद के चक्रव्यूह को नहीं तोड़ पा रहे हैं। साम्प्रदायिक, कट्टरपंथी और उग्रवादी ताकतें देश की एकता एवं आम जनता के हित को गम्भीर चुनौती दे रही हैं। ऐसे अवसर पर नियोगी का ' संघर्ष और निर्माण ' का राजनैतिक दर्शन एक आशा की किरण लेकर सही दिशा ढूँढने में अवश्य सहायक होगा।

इस पुस्तक में नियोगी के व्यक्तित्व, विचार एवं काम को समझने के लिए उनके लेखों, भाषणों, साक्षात्कारों, पत्रों, वक्तव्यों और कविताओं को प्रस्तुत किया गया है। इनमें से कई प्रस्तुतियाँ पहली बार प्रकाशित हो रही हैं। नियोगी के विचारों से दिशा मिलेगी और उनके व्यक्तित्व से प्रेरणा। इसलिए उनकी जीवनी और परिवारजनों, मित्रों और सहयोगियों के निजी संस्मरण भी इस पुस्तक में प्रकाशित किये जा रहे हैं। नियोगी के विचार व काम को अन्य दृष्टियों से भी समझा जा सके, इसलिए विभिन्न ट्रेड यूनियन नेताओं, राजनैतिक कार्यकर्ताओं, समाजकर्मियों, पत्रकारों, समाज विज्ञानियों, वैज्ञानिकों और अन्य बुद्धिजीवियों के दृष्टिकोण दिये जा रहे हैं। नियोगी की शहादत से उपजी कुछ कविताएँ भी यहाँ शामिल की गयी हैं। इसके अलावा छत्तीसगढ़ की परिस्थिति, छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा व उसके विभिन्न संगठनों एवं नियोगी के नेतृत्व में चले जन आंदोलन पर शोधपूर्ण लेख व अन्य सहायक सामग्री, आँकड़ों, मूल दस्तावेजों एवं तथ्यात्मक टिप्पणियों को भी पुस्तक में पर्याप्त स्थान दिया गया है। अंतिम खंड चौदह में ' संघर्ष और निर्माण ' के दर्शन को समझने के लिए विशेष लेख शामिल किये गये हैं। पाठकों की सुविधा की दृष्टि से आवश्यकतानुसार सम्पादकों की ओर से परिचयात्मक टिप्पणियों, व्याख्यात्मक वाली पादटीपों (फ़ुटनोटों) एवं पुस्तक के विभिन्न हिस्सों को आपस में गूँथने वाले प्रति-संदर्भों का भी समावेश किया गया है।

हम आशा करते हैं कि यह पुस्तक नियोगी के विचारों और काम को समझने में पाठकों की मदद करेगी और साथ-साथ देश की मेहनतकश जनता को एक न्यायप्रिय, आत्मनिर्भर व शोषणविहीन भारत के नवनिर्माण के लिए प्रेरित करेगी।

अनिल सद्गोपाल ● श्याम बहादुर ' नम्र '

सम्पादकद्वय

शहीद दिवस,
3 जून 1993

1.

है। शासक वर्ग के सोच का सटीक पूर्वानुमान लगाने में वे कितने माहिर थे, यह भी हम देख सकते हैं। कठिन-से-कठिन परिस्थितियों में बिना घबराये उचित कदम उठाने की नियोगी में अद्‌भुत क्षमता थी। उनकी हत्या के कुछ सप्ताह पूर्व जब उनके कुछ मित्रों ने उनकी सुरक्षा के उपायों का सुझाव दिया तो वे हँसकर बोले, " राजीव गांधी जैसे व्यक्ति की कड़ी सुरक्षा भी उन्हें न बचा सकी तो मैं कैसे बच जाऊँगा ? " अपने मारे जाने का पूरा अहसास होनें के बावजूद भिलाई आंदोलन पूर्व-नियोजित ढंग से चलता रहा।

ऐसी क्षमताओं वाला नियोगी आखिर कैसे बना ? जाहिर है कि ये सब गुण और विचार आसमान से नहीं टपके। इनका विकास उस सामाजिक यथार्थ और भौतिक परिस्थिति के धरातल पर ही हुआ होगा जिसके सम्पर्क में वे विशेषकर अपने बचपन एवं युवाकाल में आये होंगे। समाज, राजनीति और परिवार की किन-किन धाराओं व घटनाओं का नियोगी के जीवन पर क्या-क्या प्रभाव पड़ा, उन्होंने किस परिस्थिति में क्या सीखा और किस प्रकार भिलाई स्टील प्लांट का एक आम अप्रेंटिस छत्तीसगढ़ का जन-नायक और भारत के नवनिर्माण का क्रांतिकारी स्वप्नद्रष्टा बन गया, यह सब जानने-समझने के लिए हमें उनकी जीवन यात्रा में झाँकना होगा।

नियोगी के जीवन के दो स्पष्ट हिस्से हैं। पहला, आपात्‌काल के दौरान मीसा में गिरफ्तार होने तक और दूसरा, मीसा से रिहाई पर दल्ली राजहरा में खदान मजदूरों के आंदोलन से जुड़ जाने के बाद। दूसरा हिस्सा उनका सार्वजनिक रूप से जाना-पहचाना जीवन है जिसका लगभग अधिकांश घटनाक्रम कहीं-न-कहीं दर्ज है। इसके विपरीत उनके जीवन का पहला हिस्सा उनके जानने वाले लोगों की धुंधली हो रही यादों और किंवदंतियों में खोया हुआ है। इसको प्रस्तुत करने में हमें कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है; कई विरोधाभासी जानकारियों, फिसलते तथ्यों, बयानों और तिथियों का मूल्यांकन करना पड़ा है। जो हमने यहाँ प्रस्तुत किया है उसके बारे में हमारा यह कदापि दावा नहीं है कि कल कोई हमारी किसी जानकारी को गलत सिद्ध नहीं कर देगा। परंतु उपलब्ध रिकार्डों के आधार पर इससे अधिक विश्वसनीय चित्र बनाना हमारे लिए सम्भव नहीं था। इस प्रयास में हमने खंड बारह में दिये गये नियोगी के परिवारजनों, मित्रों व सहयोगियों के बहुत सारे संस्मरणों का सहारा लिया है, विशेष तौर से उन संस्मरणों का जिन्हें ' अनुष्टुप ' द्वारा प्रकाशित बंगला पुस्तक, ' संघर्ष औ' निर्माण ' के सम्पादकों ने अथक परिश्रम से व्यवस्थित शोध करके दर्ज किया है। इसके अलावा हम नियोगी के वृद्ध पिता श्री हेरम्ब कुमार गुहा नियोगी (जलपाईगुड़ी), नियोगी की छोटी बहिन सुश्री शीला गुहा राय (कलकत्ता) एवं उनकी पत्नी सुश्री आशा गुहा नियोगी (दल्ली राजहरा) के विशेष रूप से आभारी हैं जिन्होंने नियोगी के प्रारम्भिक जीवन की बहुत सारी अंतरंग बारीकियों से हमें परिचित कराया। इसी सिलसिले में हम छमुमो के अध्यक्ष श्री जनकलाल ठाकुर, छमुमो व सी. एम. एस. एस. के उपाध्यक्ष श्री गणेशराम चौधरी, सी. एम. एस. एस. के महामंत्री श्री छबिलाल साहू एवं महिला मुक्ति मोर्चा की उपाध्यक्षा सुश्री लीलाबाई के योगदान का विशेष उल्लेख करना चाहेंगे जिन्होंने मार्च-जून 1977 की अवधि में मीसा से रिहा हुए नियोगी के दल्ली राजहरा के आंदोलन में जुड़ने की प्रक्रिया और उसके बाद उनकी प्रारम्भिक भूमिका के बारे में अपना आँखों देखा हाल हमें सुनाया है। इस जानकारी के सहारे हम नियोगी के जीवन और आंदोलन के एक महत्वपूर्ण मोड़ के बारे में अब तक मौखिक परम्परा में जी रहे इतिहास को लिखित रूप दे पाये हैं। ❑

कमजोर आर्थिक स्थिति को नजदीकी से जाना। शराब और जुआ किस प्रकार मजदूर के परिवार को और भी बेबस बना देता है, यह देखने का मौका भी उसे यहीं मिला। चिनकुड़ी कोलियारी के अग्निकांड में बड़ी संख्या में मजदूरों को मरते देखकर धीरेश विचलित हो गया और उसके मन में इन लोगों के लिए कुछ करने की इच्छा जागी। उसने यह भी महसूस किया कि समाज-व्यवस्था का आर्थिक-राजनैतिक ढाँचा किस प्रकार एक गरीब मजबूर व्यक्ति को और अधिक गरीब तथा अमीर को और अधिक अमीर बनाता है। उसने यहीं वर्गभेद को प्रत्यक्ष रूप से देखा, जाना और समझा। अपने ताऊजी के कड़े अनुशासन से धीरेश हमेशा सहम कर रहता था। अपनी छुट्टियाँ बिताने वह अपने माँ-बाप के पास आसाम चला जाया करता था।

इसी बीच आसाम के दंगों में हेरम्ब कुमार की सब सम्पत्ति नष्ट हो गयी और उनकी आर्थिक हालत दयनीय बन गयी। तब उन्होंने किसी प्रकार सन् 1958 में अपने परिवार के लिए एक मकान जलपाईगुड़ी (पश्चिम बंगाल) में बनवा दिया। वे स्वयं तो आसाम में ही ठेकेदारी करते रहे पर कल्याणी और बच्चे जलपाईगुड़ी में बस गये। साकतोरिया में मैट्रिक की पढ़ाई खत्म करने के बाद धीरेश भी सन् 1959 में अपनी माँ व भाई-बहनों के पास जलपाईगुड़ी चला आया। यहाँ पर उसने आनंदचंद्र कालेज में इंटरमीडिएट (विज्ञान) की पढ़ाई अगले दो वर्षों में पूरी की। इसके बाद सन् 1961 में अपने चचेरे भाई अरुण के साथ बी. एस. सी. और पॉलिटेक्निक में प्रवेश लिया।

इसी दौर में धीरेश का परिचय पश्चिम बंगाल में उभर रहे जन आंदोलन से हुआ। आजादी के बाद के कांग्रेसी राज की नीतियों से गरीब मेहनतकश जनता के मोहभंग होने की शुरूआत हो चुकी थी। उन्हीं दिनों में पश्चिम बंगाल के 'खाद्य आंदोलन' के आंदोलनकारियों पर कलकत्ता के राजमार्ग पर पुलिस के गोली चालन में अनेक लोग मारे गये। इसके विरोध का ज्वार सारे पश्चिम बंगाल को झकझोर रहा था। वैसे भी शुरू से ही उत्तरी बंगाल के कम्युनिस्ट आंदोलन में जलपाईगुड़ी की विशेष भूमिका रही है। इस माहौल से धीरेश का संवेदनशील मानस अछूता कैसे रह सकता था? वह पूरी निष्ठा के साथ वामपंथी छात्र आंदोलन से जुड़ गया और 'ऑल इंडिया स्टूडेंट्स फ़ेडरेशन' (भाकपा का छात्र संगठन) का सक्रिय सदस्य बन गया। जलपाईगुड़ी में दो वर्षों का यह समय धीरेश के जीवन को दिशा देने की दृष्टि से महत्वपूर्ण साबित हुआ।[1]

धीरेश के विचारों पर 19वीं सदी के बंगाल के नवजागरण आंदोलन (बंगाल रेनेसाँ) एवं स्वाधीनता संग्राम में शहीदों की कुर्बानियों का गहरा असर पड़ा। इसी से विकसित हुआ उसका मानवता व देश के प्रति अगाध प्रेम जिसके साथ बाद में मार्क्सवादी वैज्ञानिक चिंतन ने जुड़कर उसके छात्र जीवन को दिशा देनी शुरू कर दी।[1]

बंगाल में उस समय ऐसा माहौल था कि बड़ी तादाद में युवाओं ने रूस व चीन की क्रांति एवं वियतनाम के मुक्ति युद्ध और अपने देश के भारत छोड़ो आंदोलन, नाविक विद्रोह, तेलंगाना एवं तेभागा के किसान संघर्षों के इतिहास से शिक्षा ली थी। धीरेश भी इसी माहौल का अंग था।[1]

पढ़ाई के इस काल में धीरेश ने छोटी-छोटी अनेक गतिविधियाँ कीं। उसने साक्षरता की

---

[1]. पैराग्राफ छमुमो की लोक साहित्य परिषद् द्वारा प्रकाशित (सितम्बर 1992) एवं श्री पूर्णेन्दु बसु की पुस्तिका, 'जमीन पर खड़े रहकर जिन्होंने छुआ आसमान', पर आधारित हैं।

को उसकी माँ का देहांत हो गया। माँ के न रहने का धीरेश के मन पर गहरा असर हुआ और उसका मन जलपाईगुड़ी से उखड़ गया। दो-तीन माह बाद वह पढ़ाई बीच में ही छोड़कर रोजगार व जीवन की दिशा की तलाश में अपने मामा के पास भिलाई (जिला दुर्ग, म. प्र.) चला आया। मामा भिलाई स्टील प्लांट में फोरमैन के पद पर कार्यरत थे। उन्होंने धीरेश को कोक ओवन प्लांट में अप्रेंटिस बनवा दिया। 19-20 वर्ष की आयु में कुशल श्रमिक का प्रशिक्षण पाकर धीरेश ने सन् 1962 से 1968 तक भिलाई स्टील प्लांट में काम किया। यहीं काम करते हुए उसने बी. एस. सी. व ए. एम. आई. ई.[1] के कोर्स में प्रवेश लिया। इंजीनियरिंग और विज्ञान के प्रति उसका गहरा रुझान शुरू से ही साफ दिखता है। बाद में जब उसने भिलाई स्टील प्लांट के तकनीकशाहों की विदेशी पूँजी से प्रभावित, खदानों के पूर्ण मशीनीकरण की नीति के विकल्प में अर्द्ध-मशीनीकरण का रचनात्मक प्रस्ताव दिया तो उसकी इन विषयों पर मजदूर हितों की रक्षा के लिए पकड़ जोरदार ढंग से कारगर साबित हुई। यह दीगर बात है कि राजनैतिक व सांगठनिक कामों में व्यस्त रहने के कारण बी. एस. सी. व ए. एम. आई. ई. पाठ्यक्रमों का काफी बड़ा अंश सफलतापूर्वक पूरा करने के बावजूद धीरेश अंतिम परीक्षा में बैठ नहीं पाया। शायद तब तक उसने इन डिग्रियों के महत्व को ही नकार दिया हो। परंतु सत्तर के दशक के अंत और अस्सी के दशक की शुरूआत में खदान मशीनीकरण की बहस के दौरान उसने जिस तकनीकी ज्ञान व सामाजिक दृष्टि का परिचय दिया वह इन औपचारिक परीक्षाओं की उपयोगिता पर ही प्रश्न चिह्न खड़े कर देता है।

भिलाई स्टील प्लांट में काम की शुरूआत के कुछ ही समय बाद धीरेश ने 'कोक ओवन (या ब्लास्ट फर्नेस) एक्शन कमेटी' गठित की जिसके माध्यम से मजदूरों के हकों की लड़ाई लड़ी। सन् 1964 में भारत की कम्युनिस्ट पार्टी के विभाजन के बाद वे मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी (सी. पी. एम.) की भिलाई इकाई में सक्रिय हुए। उसी वर्ष भिलाई स्टील प्लांट में हड़ताल हुई जिसमें धीरेश की अहम भूमिका रही। इससे पहले धीरेश व उनके साथियों ने मिलकर [illegible] (माकपा का मजदूर संगठन) के सम्मेलन के समय 'वियतनाम दिवस' मनाने का निश्चय किया जिसके लिए कलकत्ते से पोस्टर मँगवाये गये और एक नाटक मंडली भी। सन् 1967 के विधान सभा चुनाव में सी. पी. एम. ने पहली बार भिलाई क्षेत्र में अपना उम्मीदवार खड़ा किया। इस निर्णय के पीछे भी धीरेश सक्रिय रहे। नक्सलबाड़ी आंदोलन से प्रभावित होकर वे सी. पी. आई. (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) के गठन के उद्देश्य से खड़ी की गयी 'ऑल इंडिया को-ऑर्डिनेशन कमेटी ऑफ कम्युनिस्ट रेवोल्यूशनरीज़' से जुड़ गये। मजदूरों को संगठित करने की उनकी जुझारू शैली को उस समय के स्थापित यूनियन नेताओं ने मान्यता नहीं दी। यही प्रतिक्रिया स्थापित यूनियन नेतृत्व की दस साल बाद दल्ली राजहरा के आंदोलन में भी दिखी। अब तक अपनी क्रांतिकारी राजनीति के कारण वे पुलिस की नजरों में आ चुके थे। इन सब गतिविधियों से घबराकर स्टील प्लांट के मैनेजमेंट ने सन् 1968 में उन पर कोक ओवन-ब्लास्ट फर्नेस में तोड़-फोड़ का षड्यंत्र करने का निराधार आरोप लगाकर नौकरी से निकाल दिया, परंतु उनको उलझाकर रखने के उद्देश्य से भिलाई का एक बूचड़खाना चलाने का काम सौंपने की पेशकश की। पर इस तरह धीरेश जैसे तूफानी व्यक्तित्व को बाँधना सम्भव नहीं था।

[1] 'एसोसिएटेड मेम्बरशिप ऑफ इंस्टीट्यूशन ऑफ इंजीनियर्स' का सर्टिफिकेट स्तर का तकनीकी कोर्स।

इस समय वे रेडीमेड कपड़े का धंधा करने के बहाने गाँव-गाँव में संगठन बनाने का काम करते थे। भिलाई में भी अपने साथियों के साथ पैम्फलेट व पोस्टरों के जरिये उनका राजनैतिक प्रचार कार्य और बैठकों का सिलसिला जारी रहता था। पुलिस फिर से उनके पीछे पड़ गयीं थी। सन् 1970-71 के दौरान कभी उनकी दूसरी बार गिरफ्तारी हुई और उन्हें एक साल से कुछ कम अर्से तक जगदलपुर जेल में रखा गया। वहीं से उन्होंने अपने पिता को पत्र लिखा जिसमें उन्होंने जेल में अपनी तबियत खराब होने का जिक्र करते हुए अनुरोध किया कि उन्हें चालीस रुपये, दो कुर्ते और दो पाजामे भिजवा दें। इसी पत्र में उन्होंने आगे लिखा,

> "....तुम्हारा आदर्श मेरे सामने है, उसी के अनुसार मैंने अपना रास्ता चुन लिया है। मुझे दिल से आशीर्वाद दो।"[1]

जेल से निकलने के बाद सन् 1971-72 में कभी पुलिस से बचने के लिए वे जलपाईगुड़ी के धीरेश से छत्तीसगढ़ के शंकरलाल ठाकुर बन गये और भूमिगत हो गये। अगले पाँच वर्ष शंकर के जीवन में विशेष रूप से संघर्षमय रहे। छत्तीसगढ़ और उसके लोगों को जानने-पहचानने के उद्देश्य से उन्हें 'घुमंतू' का जीवन बिताना पड़ा। उन्हें कई बार पत्ते उबालकर पेट भरना पड़ता था। यही समय था जब वे बस्तर और महाराष्ट्र के सीमावर्ती वन क्षेत्र में आदिवासियों के बीच रहे। शायद इसी समय उन्होंने गोंडी सीखना शुरू किया होगा जिसमें बाद में उन्होंने कविताएँ भी लिखीं (देखिये 'आओ चलें साथ-साथ', पृ. 263)। इस दौरान शंकर ने तरह-तरह के काम उठाये जिसमें उनका उद्देश्य रोजी-रोटी कमाना, लोगों से सम्पर्क बनाना और परिस्थिति को समझना, सब मिला-जुला रहा होगा। उन्होंने बस्तर के जंगलों में मजदूरी की, दुर्ग जिले के गाँवों में मछली पकड़ने व बेचने का धंधा किया, दुर्ग जिले के ही डोंडी लोहारा क्षेत्र के केरी-जुंगेरा गाँव में खेत मजदूरी की, राजनांदगाँव जिले के गाँवों में बकरियाँ चरायीं और भिलाई-दुर्ग तक लाकर बेचीं। जब वे बकरी बेचने भिलाई जाते तो उस बहाने अपने राजनैतिक साथियों के साथ बैठकें भी कर लेते थे। धीरे-धीरे वे ग्रामीण अंचलों में लोगों के दुःख-दर्दों से भी जुड़ते गये और कई स्थानों पर संगठन खड़ा करके संघर्षों की शुरूआत की। इसी दौरान राजनांदगाँव जिले में मोंगरा बाँध बनने की योजना से 100 गाँव डूबने का मामला सामने आया जिसमें विस्थापित होने वाले हजारों आदिवासियों के पुनर्वास के लिए कोई उचित प्रावधान न था। शंकर ने इस बाँध के विरोध में राजनांदगाँव जिले के बड़े मुंजल, छोटे मुंजल, पेंदल-कोही, घुघुआ एवं धुमका (वर्तमान गढ़चिरौली, महाराष्ट्र) के आदिवासियों को संगठित किया और उनके गाँवों को डूबने से बचवाया। हाल में इस योजना को शासन ने बीस वर्ष बाद फिर से जीवित करने की कोशिश की है और वहाँ के आदिवासी शंकर द्वारा दी गयी प्रेरणा के सहारे इसका दृढ़ता से प्रतिरोध कर रहे हैं। इसी प्रकार सन् 1973-74 में दानीटोला क्वार्ट्ज़ाइट खदान के पास दुर्ग जिले के ही दहियान गाँव में तालाब बनवाने और बाद में सरकार से उसकी मजदूरी वसूलने का संघर्ष आज भी ऐतिहासिक रूप में जाना जाता है। इस आंदोलन में शंकर ने जन पहल पर तालाब खोदने का विकल्प पेश किया। यह सच है कि मोंगरा और दहियान के संघर्षों से शंकर ने जन आंदोलन खड़ा करने के प्रारम्भिक पाठ सीखे होंगे।

---

[1] छोटी बहन शीला गुहा राय की याददाश्त के आधार पर।

धीरेश (शंकर) किशोरावस्था में

धीरेश (शंकर) अपने पिता के साथ

नियोगीजी, पत्नी आशा और उनके तीनों बच्चे—
क्रांति, जीत (एक अन्य बच्चे के साथ) और मुक्ति

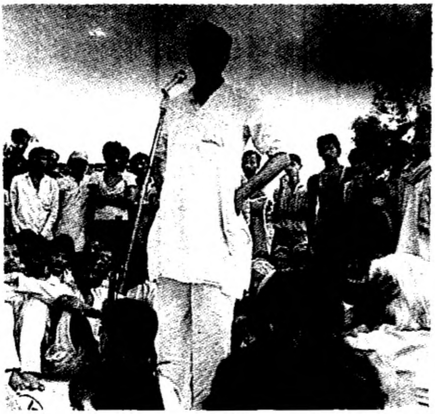

(ऊपर) नियोगीजी भाषण देते हुए; **(नीचे)** विधान सभा चुनाव (1990)में छमुओं के तेरह उम्मीदवारों के लिए आयोजित शपथ समारोह में नियोगीजी और छमुमो अध्यक्ष जनक लाल ठाकुर (बायें से पहली कुर्सी पर); सामने रखे चित्र क्रमशः भगतसिंह, वीर नारायण सिंह और नेल्सन मंडेला के

अब तक वे पाँच बार गिरफ्तार हो चुके थे। हर बार पुलिस हिरासत में उनको खूब यातनाएँ दी गयीं, जैसा कि उन दिनों नक्सली होने के शक में गिरफ्तार हुए हर युवा के साथ होता था। जगदलपुर की दो गिरफ्तारियों की याद करते हुए उन्होंने वर्षों बाद अपने एक मित्र को बताया कि उन्हें पुलिस 'मुर्गा' बनाकर पंखे से उल्टा करके टाँग देती थी और फिर तलुओं पर बेंत से मारा जाता था। परंतु जून 1977 की गिरफ्तारी तक उनकी पहचान एक लोकप्रिय नेता के रूप में होने लगी थी जिसके कारण उनको यातना देने की हिमाकत फिर पुलिस कभी नहीं कर सकी।

दल्ली राजहरा — एक नया मोड़

आपात्काल के अंतिम दौर में (फरवरी 1977 में) राजहरा की मजदूर बस्तियों में तूफान उठ रहा था। अभी शंकर जेल में ही थे। लौह अयस्क खदानों में कार्यरत लगभग दस हजार खदान मजदूरों ने बी. एस. पी. के स्थायी (विभागीयकृत) और ठेका मजदूरों को समान बोनस देने के मुद्दे पर एटक और इंटक के मैनेजमेंट-परस्त और अवसरवादी स्थानीय नेतृत्व के खिलाफ खुलकर विद्रोह कर दिया था। दरअसल, प्रश्न मात्र बोनस का नहीं था। प्रश्न था एटक-इंटक के स्थानीय नेतृत्व के चरित्र का। साथ में प्रश्न मजदूरों की प्रतिष्ठा का भी था, चूंकि बी. एस. पी. प्रबंधन द्वारा विभागीयकृत मजदूरों की तुलना में ठेका मजदूरों को हर मामले में दोयम दर्जे का मजदूर माना जाता था। 3 मार्च 1977 की प्रातः से ही सब महिला व पुरुष मजदूर राजहरा के लाल मैदान में हड़ताल पर जमा हो गये। खदानों में उत्पादन थम गया। वहाँ कुछ ही दिनों में स्वतःस्फूर्त संगठन [1] बनने की एक ऐतिहासिक प्रक्रिया की नींव पड़ चुकी थी, हालाँकि रणनीति और भावी दिशा अस्पष्ट थी। लाल मैदान के उस खुले मंच पर स्थापित ट्रेड यूनियनों के अनेक नेतागण मजदूरों की कसौटी पर एक के बाद एक धराशायी हो चुके थे। एक विश्वसनीय नेतृत्व और झंडे की तलाश चल रही थी। हड़ताल के इक्कीसवें दिन, यानी 23 मार्च को, एक तरफ मैनेजमेंट, प्रशासन व ठेकेदार एवं दूसरी ओर श्री बंशीलाल साहू के नेतृत्व में मजदूर प्रतिनिधिमंडल के बीच समझौता हुआ। इस समझौते में मजदूरों ने एटक और इंटक नेतृत्व द्वारा किये गये निर्णयों को ठुकराकर उससे अपनी स्वतंत्रता जाहिर की। मैनेजमेंट द्वारा ठेका मजदूरों के अपनी अलग यूनियन गठित करने के फैसले को मान्यता देनी पड़ी। 24 मार्च को विजयी मजदूर काम पर लौटे। इसी दरम्यान श्री बंशीलाल साहू और उनके मुखिया साथियों के पास खबर पहुँची कि शंकर जेल से छूट गये हैं। तत्काल 40-50 मुखिया लोगों का एक प्रतिनिधिमंडल श्री बंशीलाल साहू की अगुवाई में दानीटोला पहुँचा।[2] मजदूरों ने शंकर से राजहरा आकर आंदोलन की मदद करने का अनुरोध किया। राजहरा की स्थिति की जबर्दस्त सम्भावनाओं को समझकर उन्होंने साथ देने का मन बना लिया और वे अगले ही दिन, यानी 25 मार्च को, राजहरा पहुंच गये। जब वे राजहरा पहुंचे तब वे जेल से मिली आधी बाँहवाली कमीज और घुटनों तक

---

[1] यह संगठन स्वतःस्फूर्त इसी अर्थ में था कि इसमें नेतृत्व व दिशा उभरने की प्रक्रिया आंतरिक थी, यानी बाहरी नेतृत्व के बगैर हुई थी।

[2] इस दल में जनकलाल ठाकुर नाम का एक साधारण-सा युवा ट्रांसपोर्ट मजदूर भी शामिल था। उसने लाल मैदान में पहली बार लोगों को बटोरने, चिट्ठियाँ बाँटने जैसी छोटी-मोटी जिम्मेदारियाँ सँभालना शुरू किया था। बाद में जनकलालजी छमुमो के अध्यक्ष बने।

मुक्ति मोर्चा बने।

नियोगी की दृष्टि में मजदूरों का विकास तभी सम्भव हो सकता है जब आंदोलन सिर्फ आर्थिक माँगों तक ही सीमित न रह जाये, वरन् मजदूर के जीवन की समग्रता से सरोकार रखे। वैसे भी इस आंदोलन की नींव राजनैतिक मुद्दों पर खड़ी हुई, यानी यूनियन नेतृत्व के चरित्र एवं मजदूर वर्ग की प्रतिष्ठा के प्रश्नों पर। इस सोच का ही परिणाम था कि आम यूनियनों से अलग हटकर सी. एम. एस. एस. के आंदोलन ने मजदूरों के जीवन को उनके उत्पादन-स्थल से लेकर चूल्हा-चौके एवं बस्ती की चौपाल तक समग्रता के साथ एक सूत्र में बाँध दिया। शुरू से ही नियोगी का कहना था कि यह यूनियन सिर्फ आठ घंटों के लिए नहीं, वरन चौबीस घंटों के लिए है। सन् 1978 में ही सी. एम. एस. एस. के सत्रह विभाग बनाये गये जिनमें लोक संस्कृति से लेकर खेल-कूद व स्वास्थ्य कार्यक्रमों तक के लिए प्रावधान रखा गया (पूरी सूची के लिए देखिये पृ. 377)। इस मजबूत आधारशिला पर सम्भव हुआ एक ऐसा ट्रेड यूनियन आंदोलन खड़ा करना जो अर्थवाद के दलदल में कभी नहीं फँसा, वरन् जिसने पूरे छत्तीसगढ़ अंचल की शोषित जनता के जीवन को झंकृत किया।

नियोगी के विचार में मजदूरों के जीवन को लोक संस्कृति से जोड़ना आवश्यक था, विशेषकर छत्तीसगढ़ की राष्ट्रीयता के आंदोलन को विकसित करने के लिए। अतः नियोगी ने मजदूर आंदोलन में सन् 1857 के शहीद वीर नारायण सिंह का प्रेरणादायक इतिहास जोड़ा। 19 दिसम्बर 1979 से इस दिन को हर वर्ष शहीद दिवस के रूप में मनाने की शुरुआत हुई। पहली बार इसे रायपुर में मनाया गया। सन् 1983 से 1986 तक ' नवाँ अंजोर ' सांस्कृतिक मंडली सक्रिय रही जिसने लोक शैली में ' संघर्ष और निर्माण ' का संदेश छत्तीसगढ़ भर में फैलाया। शुरू के संघर्षों के केंद्र में खदान मजदूरों की कार्य परिस्थितियाँ सुधरवाने, ' फाल बैक वेजेस ' स्कीम लागू करवाने और उनका विभागीयकरण करवाने जैसे लक्ष्य थे। सी. एम. एस. एस. की दृष्टि में ' फाल बैक वेजेस ' स्कीम लागू होने से खदानों के उत्पादन की लगाम, कम-से-कम आंशिक रूप में, मजदूरों के हाथ में आ गयी, और इस मामले में मैनेजमेंट-ठेकेदार की साँठ-गाँठ व मनमानी पर रोक लगी। जैसे-जैसे आंदोलन आगे बढ़ा, वैसे-वैसे शराबबंदी अभियान, खदानों के पूर्ण मशीनीकरण का विरोध एवं अर्द्ध-मशीनीकरण के विकल्प के लिए संघर्ष, किसानों की समस्याएँ , स्वास्थ्य, स्कूली शिक्षा और पर्यावरण व विकास के मुद्दे महत्वपूर्ण बनते चले गये। हालाँकि यह सब सम्भव हुआ मजदूरों की सामूहिक चेतना और ताकत के आधार पर, किंतु ट्रेड यूनियन आंदोलन को ' आठ घंटे से चौबीस घंटे ' का बनाने में नियोगी की ' संघर्ष और निर्माण ' की समझ की अहम भूमिका रही।

नियोगी के बचपन में प्रकृति के प्रति जो गहरा प्रेम मुखरित हुआ था वह आंदोलन में कई तरह से झलका। मजदूरों ने यूनियन दफ्तर के पीछे छत्तीसगढ़ और देश के विभिन्न इलाकों से पेड़-पौधे लाकर एक छोटा, सुंदर-सा जंगल लगाया। उसमें साँभर जैसे जानवर भी पाले। पर्यावरण व विकास से जुड़े मुद्दे उठाना छमुमो का एक महत्वपूर्ण पहलू बन गया। आज भी यूनियन दफ्तर की दीवाल पर यदि आप नजर डालें तो छत्तीसगढ़ के दूर-दराज गाँवों से इकट्ठी की गयीं कलाकृतियाँ और हस्तकला के नमूने दिखेंगे। आपको बताया जायेगा कि इनमें से अधिकांश स्वयं नियोगी बटोरकर लाये थे। उनका उद्देश्य खदान मजदूरों में छत्तीसगढ़ी कला

1990-91 में भिलाई और कुम्हारी (दुर्ग जिला), उरला (रायपुर जिला) एवं टेडेसरा (राजनांदगाँव जिला) के हजारों मजदूरों ने लाल-हरे झंडे को अपनाकर नवधनाढ्य उद्योगपतियों और उनको संरक्षण देने वाली प्रदेश सरकार व स्थानीय पुलिस को झकझोर कर रख दिया।

जिस नियोगी को तीन गोलीकांड, अनेक जेल-यात्राएँ और बिकी हुई यूनियनों के माफिया गुंडे-गिरोह कभी रोक नहीं सके, वही नियोगी अब भिलाई के धन-कुबेरों के दरवाजे पर स्वयं दस्तक दे रहे थे। मजदूरों की वर्ग-चेतना के फैलते हुए दायरे और उनकी संगठित ताकत के सहारे नियोगी छत्तीसगढ़ में औद्योगिक प्रगति के नाम पर चलायी जा रही शोषण की प्रक्रिया और विकास की जन-विरोधी नीतियों को चुनौती दे रहे थे। यदि बात मात्र इतनी ही होती तो भी ये पूँजीवादी ताकतें शायद नियोगी को जिंदा रहने देतीं। पर नियोगी न्यायपूर्ण छत्तीसगढ़ के लिए चल रहे आंदोलन के फलस्वरूप मजदूरों के दिलों में बन रही बेहतर समाज की छवियों को ' संघर्ष और निर्माण ' की रचनात्मक राजनीति के द्वारा ठोस रूप भी देते चले जा रहे थे। छमुमो के जुलूसों, धरनों और सत्याग्रहों से कहीं अधिक खतरनाक साबित हो रहे थे दल्ली राजहरा के शहीद अस्पताल, शहीद स्कूल और शहीद गैरेज। उद्योगपति और प्रशासन यह तो जानते थे कि यूनियनों के झंडों-डंडों से कैसे निपटा जाये पर वे यह नहीं जानते थे कि उन मजदूरों का क्या करें जो नयी आर्थिक और औद्योगिक नीतियों के पीछे छिपी शोषक एवं साम्राज्यवादी प्रक्रियाओं को पहचानने लगे थे, जो अपने जंगल और पर्यावरण की स्वयं रक्षा करने लगे थे, जो भोपाल गैस कांड के बाद यूनियन कार्बाइड की एवरेडी बैटरी का बहिष्कार करने लगे थे या नर्मदा पर बन रहे सरदार सरोवर बाँध के विरोध में दिसम्बर 1990 में आयोजित बड़वानी से बाँधस्थल तक की ' संघर्ष यात्रा ' में हिस्सेदारी करने लगे थे। शासक वर्ग उस मजदूर संगठन से कैसे निपटे जो पूरे छत्तीसगढ़ अंचल के जन संगठनों को अगस्त 1990 से एक मंच पर इकट्ठा करने की प्रक्रिया चला रहा था और ' नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़ ' बनाने का सपना गढ़ रहा था एवं छत्तीसगढ़ की विपुल प्राकृतिक सम्पदा के पूँजीवादी दोहन के लिए बनायी गयी विश्व बैंक-समर्थित शोषणकारी योजनाओं का डटकर विरोध कर रहा था। उस संगठन का सामना कैसे किया जाये जो मजदूरों को अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से लिये गये कर्ज के संदर्भ में ' आयातित तकनालाजी ' के खिलाफ ' देशप्रेमी तकनालाजी ' का पाठ सिखा रहा था।

भिलाई की लड़ाई

इस पृष्ठभूमि के साथ नियोगी और उनके संकल्पशील साथी भिलाई में एक दीर्घकालीन, बहुआयामी, मजदूर आंदोलन की नींव डाल रहे थे। उद्योगपति यह जान चुके थे कि छमुमो ने भिलाई में भी मजदूरों का अस्पताल बनाने के लिए जमीन खरीद ली है। वे यह देख रहे थे कि मजदूरों को न्याय दिलवाने के लिए भिलाई की बस्ती-बस्ती में गैर-मजदूर परिवारों की महिलाएँ भी संगठित हो रही हैं। यूनियनें तो कारखानों में गठित हो रही थीं, पर जन-संगठन की इकाइयों का ताना-बाना बुना जा रहा था भिलाई की बस्तियों में। नियोगी के ही शब्दों में ' छोटी-छोटी नदियाँ मिलकर महानदी ' बना रही थीं। भिलाई इंडस्ट्रीज़ एसोसिएशन की घोषणा के बावजूद ' भिलाई तेजी से दल्ली राजहरा बनता जा रहा था '। विश्व बैंक की नीतियों के रास्ते तंग होते चले जा रहे थे।

लौटने से पहले वे एक दिन के लिए होशंगाबाद जिले के बनखेड़ी-पिपरिया क्षेत्र में भी गये जहाँ दस दिन पूर्व वनकर्मियों, पुलिस और स्थानीय गुंडों ने मिलकर हरिजन-आदिवासियों की निर्मम पिटाई की थी। वहाँ हरिजन-आदिवासियों के बीच काम कर रहे 'समता संगठन' को उस लड़ाई के लिए अपना समर्थन देते हुए वे भिलाई पहुँचे। 21 सितम्बर को उन्होंने दल्ली राजहरा में एक पूर्व-नियोजित बैठक में भाग लिया जिसमें देश भर के अनेक मजदूर संगठनों ने हिस्सेदारी की थी। राष्ट्रीय स्तर पर मजदूरों का एक संयुक्त अखबार निकालने की चर्चा हो रही थी। भोपाल-होशंगाबाद की यात्रा में नियोगी अक्तूबर माह से प्रदेश की भाजपा सरकार की जन-विरोधी नीतियों के खिलाफ प्रदेश भर के संगठनों को जोड़कर एक संयुक्त अभियान शुरू करने की योजना बनवाकर आये थे। उनके जीवन का अंतिम माह भी सदा की भांति आस्था से परिपूर्ण, विकल्प खड़ा करने के लिए प्रयत्नशील और आशावादी भविष्य की तैयारी के लिए समर्पित रहा।

अपनी हत्या की साजिश की जानकारी के बावजूद निश्चिंत नियोगी दिल्ली यात्रा से लौटकर अपने अंतिम सप्ताह में अपने परिवार समेत दल्ली राजहरा छोड़कर भिलाई में बस जाने की बात कर रहे थे और साथ-साथ जोर-शोर से कुछ दिन बाद गांधी जयंती पर रायपुर में एक विशाल रैली आयोजित करने की तैयारियाँ कर रहे थे। लेकिन जिन ताकतों के लिए नियोगी खतरा बन चुके थे उन्हें अब उनका अस्तित्व ही मंजूर नहीं था।

उन दिनों हत्या की साजिश की खबरों से सचेत होकर नियोगी के एक डाक्टर साथी कोशिश कर रहे थे कि भिलाई के उनके हुडको कालोनी के क्वार्टर की खिड़की में लोहे की एक मजबूत जाली लगवा दी जाये। दल्ली राजहरा के एक बढ़ई को 27 सितम्बर की सुबह पैसा भी दे दिया गया था। उसी शाम को नियोगी दो अक्तूबर की रैली की तैयारी के सिलसिले में रायपुर गये। वहाँ अपने तीन मित्रों के साथ उन्होंने रात्रि का भोजन भी किया। राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर की कई समस्याओं पर इन मित्रों के साथ विचार-विमर्श भी हुआ।

रात 12 बजे नियोगी रायपुर से भिलाई के लिए यूनियन की गाड़ी में रवाना हुए। अपने कमरे में किताब पढ़ते-पढ़ते उनकी आँख लग गयी। बिजली भी जलती रह गयी। उस समय घर में उनके अलावा केवल यूनियन का ड्राइवर बहलराम साहू था। तड़के लगभग पौने चार बजे उसी खुली खिड़की से उन पर एक-के-बाद-एक छह गोलियाँ चलायी गयीं। 'मा गो' की चीख सुनकर बहलराम दौड़कर आया तो नियोगी को खून से लथपथ पाया। उनके सिरहाने लेनिन की 'ऑन ट्रेड यूनियन्स' ('ट्रेड यूनियनों पर') नामक किताब खुली हुई पड़ी थी। कुछ ही देर बाद नजदीक के सेक्टर-9 अस्पताल में नियोगी को मृत घोषित कर दिया गया।

यह विडम्बना ही है कि लगभग तीस वर्ष पहले छत्तीसगढ़ की जिस इस्पात नगरी भिलाई में नियोगी ने जलपाईगुड़ी से आकर एक अप्रेंटिस के रूप में अपने जीवन में नयी दिशा की तलाश शुरू की थी, पूरे छत्तीसगढ़ अंचल में एक संघर्षमय, प्रेरणादायक जीवन बिताने के बाद उन्होंने उसी इस्पात नगरी के सेक्टर-9 अस्पताल से दुनिया से विदा ली।

लाल जोहार !

नियोगी की जेल-यात्रा [1, 2]

(तालिका पिछले पृष्ठ से जारी)

क्र.	गिरफ्तारी की तारीख	वर्ष	अवधि	घटना संदर्भ	अभियोग/धारा	कहाँ रखा ?	तत्कालीन मुख्य मंत्री	राज्य में सत्तारूढ़ पार्टी
9.	1 मार्च	1987	36 घंटे	' आंदोलन के दस साल ' समारोह	पुराने प्रकरणों में अदालत की पेशियों में अनुपस्थिति	राजनांदगाँव जेल	श्री मोतीलाल वोरा	कांग्रेस (इ)
10.	1 अगस्त	1989	दो दिन	पूर्ण मशीनीकरण के खिलाफ संघर्ष में अनशन	?	डोंडी लोहारा का सरकारी अस्पताल (अनशन तुड़वाने हेतु)	श्री मोतीलाल वोरा	कांग्रेस (इ)
11	4 फरवरी	1991	दो माह	भिलाई मजदूर आंदोलन	5-9 साल पुराने प्रकरणों में अदालत की पेशियों में अनुपस्थिति	दुर्ग जेल	श्री सुंदरलाल पटवा	भाजपा

कुल समय जेल में (अनुमानित) – लगभग 36 माह।

सन् 1968-91 के दौरान सक्रिय राजनीति से जुड़े जीवनकाल का जेल में बीता अंश – 1/8 हिस्सा या 12 % (लगभग)।

---

[1] यह तालिका इस पुस्तक में प्रस्तुत संस्मरणों, नियोगी के अपने लेखन में दी गयी जानकारी एवं विभिन्न जाँच रपटों पर आधारित है। प्रश्न चिह्न वहाँ लगे हैं जहाँ हम कोई विश्वसनीय जानकारी ढूँढ नहीं पाये। हमें उम्मीद है कि इस तालिका को देखकर पाठकगण खाली स्थानों को भरने एवं त्रुटियों को सुधारने हेतु जानकारी / दस्तावेज भेजेंगे। — सं.

[2] संकलन एवं प्रस्तुति डॉ. अनिल सद्गोपाल द्वारा।

नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़

पृ. 138-140)। हालाँकि विगत कई दशकों से भारत में चल रहे विभिन्न राष्ट्रीयता आंदोलनों ने इस समस्या को रेखांकित किया है, पर हम इस प्रश्न को समझने का कोई देशप्रेमी और जनवादी नजरिया भारत की जनता के सामने नहीं रख पाये हैं। हाल के वर्षों में यही प्रश्न केवल तीसरी दुनिया के देशों में ही नहीं, वरन् सोवियत संघ के विघटन के बाद उसके कई पूर्व के गणतंत्रों और यूरोप के कई देशों पर भी मंडराने लगा है। विश्व परिदृश्य में यह परिवर्तन हमें बाध्य कर रहा है कि हम भारत की ब्रिटिश साम्राज्यवाद द्वारा प्रदत्त इस संकीर्ण परिभाषा को छोड़ें और भारत के नवनिर्माण का एक नया देशप्रेमी, जनवादी परिप्रेक्ष्य बनायें। हमें उम्मीद है कि इस खंड में दी गयी सामग्री एक नये परिप्रेक्ष्य की ओर बढ़ने में मददगार होगी।

हमने छत्तीसगढ़ से सम्बंधित जानकारी व नक्शों से शुरू करके छत्तीसगढ़ के पिछड़ेपन एवं गरीबी, विकास नीति की आलोचना, विकास के विकल्प की खोज, राष्ट्रीयता के प्रश्न पर छमुमो का नजरिया, इस पर उसके देशप्रेमी, जनवादी दृष्टिकोण आदि विषयों पर सिलसिलेवार सामग्री पेश की है। इन सब विचारों, नजरियों और तथ्यों को समेटते हुए इस खंड के अंतिम लेख में नियोगी का 'नये भारत का सपना' चित्रित किया है।

❑

वीर नारायण सिंह के नेतृत्व में सोनाखान के आदिवासियों का ब्रिटिश फौज के खिलाफ कूच (1 दिसम्बर 1857)

भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में छत्तीसगढ़ के मजदूर-किसानों का योगदान

छत्तीसगढ़ का संक्षिप्त परिचय

संकलन एवं प्रस्तुति : अनिल सद्गोपाल

1.	**नाम कहाँ से आया ?**	– 'छत्तीस गढ़ों' यानी 'छत्तीस किलों' का अंचल; इस शब्द का सर्वप्रथम उपयोग एक लोक कवि द्वारा सन् 1487 में।
2.	**ऐतिहासिक संदर्भ**	– पूर्व का दक्षिण कोसल इलाका; इसे रतनपुर राज्य, दंडकारण्य या गोंडवाना के नामों से भी पुकारा गया।
3.	**भौगोलिक परिस्थिति**	– मध्य प्रदेश के दक्षिण-पूर्व के सात जिले।[1]
4.	**वर्तमान सम्भाग और जिले**	– बिलासपुर सम्भाग : बिलासपुर, रायगढ़, सरगुजा रायपुर सम्भाग : रायपुर, राजनांदगाँव, दुर्ग बस्तर सम्भाग : बस्तर
5.	**कुल गाँव संख्या**	– 19,658
6.	**क्षेत्रफल**	– 1 लाख 35 हजार वर्ग कि. मी. (52,650 वर्ग मील); पुर्तगाल, दक्षिण कोरिया, नेदरलैंड या श्री लंका से बड़ा क्षेत्रफल।
7.	**आबादी**	– 1 करोड़ 76 लाख (सन् 1991 की जनगणना) 1 करोड़ 40 लाख (सन् 1981 की जनगणना)
8.	**भूगोल**	– दो क्षेत्रों में विभाजित – क) मैदानी छत्तीसगढ़ या समतल भूमि ('धान का कटोरा') और ख) पहाड़ी छत्तीसगढ़ या ऊँची समतल भूमि (खनिजों और जंगलों से भरपूर)।

---

[1] म. प्र. सरकार ने हाल में प्रस्तावित किया है कि इन सात जिलों को सन् 1993-94 में सोलह नये जिलों में पुनर्गठित किया जाये।

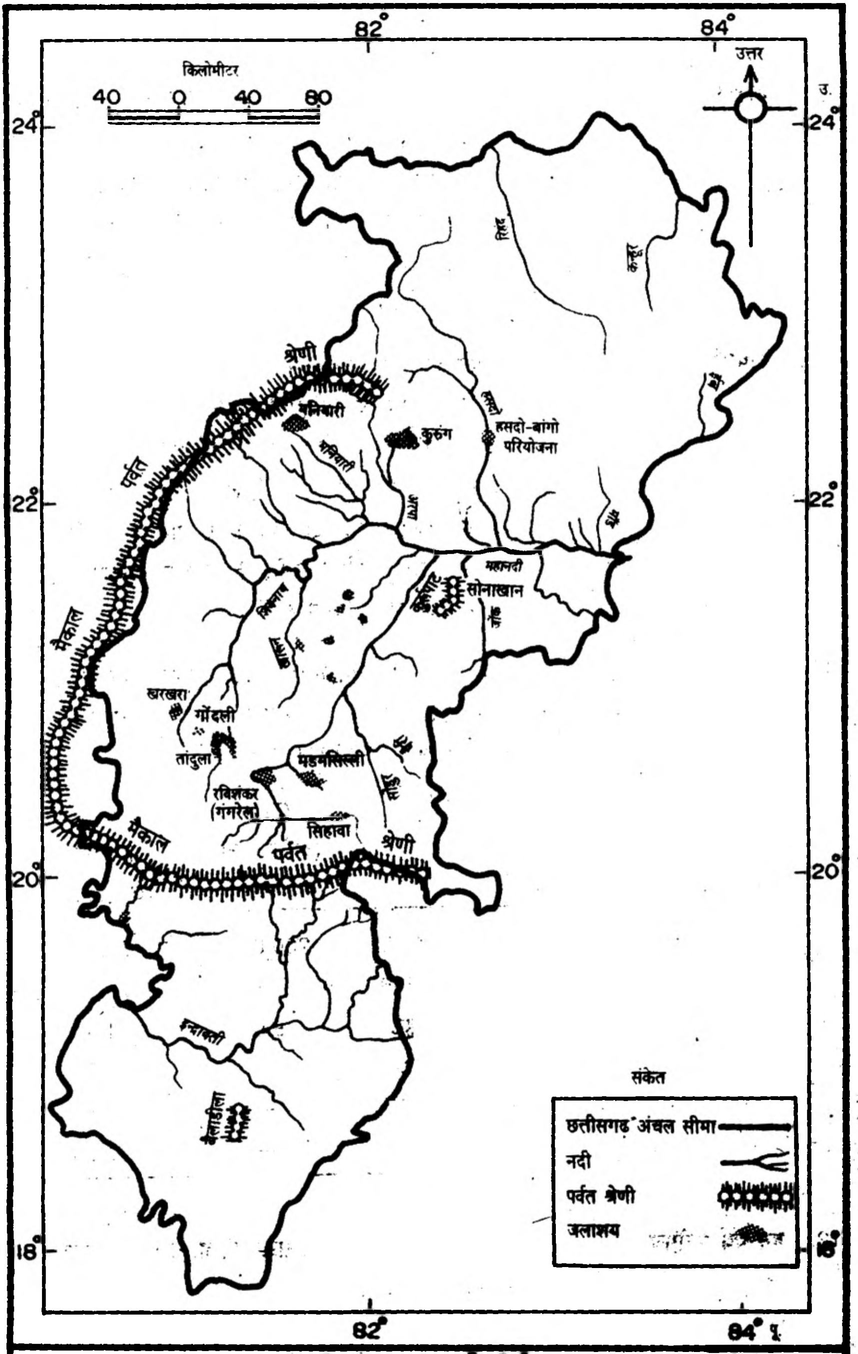

82°
84°
किलोमीटर
40 0 40 80
उत्तर
24°
22°
20°
18°
श्रेणी
पर्वत
मैकाल
मनियारी
हसदो-बांगो
परियोजना
महानदी
सोनाखान
खरखरा
गोंदली
तांदुला
रविशंकर
(गंगरेल)
मडमसिल्ली
सिहावा
पर्वत
श्रेणी
मैकाल
बैलाडिला
संकेत
छत्तीसगढ़ अंचल सीमा
नदी
पर्वत श्रेणी
जलाशय

छत्तीसगढ़ : भौगोलिक

13. **वन क्षेत्र** —

जिला	कुल भौगोलिक क्षेत्र में वन क्षेत्र (%)	प्रति हजार जनसंख्या पर वन क्षेत्र (हजार हेक्टेयर में)
रायपुर	36.5	0.25
दुर्ग	11.4	0.05[1]
राजनांदगाँव	35.2	0.33
बिलासपुर	39.4	0.26
सरगुजा	49.4	0.66
रायगढ़	31.0	0.27
बस्तर	54.0	1.15
छत्तीसगढ़	36.9	0.29
म. प्र.	31.7	0.27

14. **जिलेवार जनसंख्या का घनत्व (व्यक्ति / वर्ग कि.मी.)** — रायपुर (145), दुर्ग (221), राजनांदगाँव (105), बिलासपुर (148), सरगुजा (73), रायगढ़ (112), बस्तर (47), म. प्र. (118), अखिल भारत (208)।

15. **कुल जनसंख्या में ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत** — रायपुर (82.8), दुर्ग (68.2), राजनांदगाँव (87.6), बिलासपुर (86.2), सरगुजा (91.3), रायगढ़ (91.6), बस्तर (96.0), म. प्र. (79.7), अखिल भारत (76.7)।

16. **कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति (हरिजन) व अनुसूचित जनजाति (आदिवासी) का प्रतिशत** —

जिला	अ. जा. (%)	अ. ज. जा. (%)	कुल (%)
रायपुर	13.8	18.6	32.4
दुर्ग	11.8	12.6	24.4
राजनांदगाँव	9.4	25.3	34.7
बिलासपुर	17.3	23.4	40.7
सरगुजा	5.2	54.8	60.0
रायगढ़	10.7	45.5	56.2
बस्तर	5.5	67.7	73.2
म. प्र.	14.1	23.0	37.1
अखिल भारत	15.8	7.8	23.6

17. **आबाद ग्रामों में विद्युतीकृत ग्रामों का प्रतिशत (1985-86)** — रायपुर (47.0), दुर्ग (59.8), राजनांदगाँव (46.3), बिलासपुर (47.2), सरगुजा (49.1), रायगढ़ (35.6), बस्तर (7.3)[2], छत्तीसगढ़ (47.0), म. प्र. (57.1)।

---

[1] बेतरतीब औद्योगीकरण के कारण जंगल कटने का परिणाम।

[2] सन् 1981 का आँकड़ा।

(तालिका पिछले पृष्ठ से जारी)

	नाम	उत्पाद	वार्षिक उत्पादन क्षमता
12.	बिलासपुर स्पिनिंग मिल्स, बिलासपुर	धागा	25,000 स्पिंडल्स
13.	डी.एम. केमिकल्स, कुम्हारी, जि. दुर्ग	सुपरफास्फेट	61,000 टन
14.	बी.ई.सी. फर्टिलाइजर्स, बिलासपुर	सुपरफास्फेट	66,000 टन
15.	बुक बॉण्ड पेपर मिल्स, चाम्पा	कागज	10,000 टन
16.	भिलाई रिफ्रेक्टरीज़, भिलाई	फायरक्ले, सिलिका	11,000 टन
17.	बैलाडीला परियोजना, बस्तर (एन. एम. डी. सी.)	लौह अयस्क	–

छत्तीसगढ़ क्षेत्र में 100 से अधिक इस्पात-आधारित औद्योगिक इकाइयाँ हैं, जैसे 'मिनी' स्टील प्लांट, कास्टिंग्स, फाउंडरीज़, री-रोलिंग कारखाने। इनमें से कुछ प्रमुख इकाइयाँ हैं – रायपुर एलायज़ एंड स्टील्स, रायपुर; भिलाई इंजीनियरिंग कार्पो., भिलाई; बीके स्टील कास्टिंग्स, भिलाई; सिम्पलेक्स उद्योग समूह, उरला, टेडेसरा एवं भिलाई; एलाइड स्टील्स लि., रायपुर; हिम्मत स्टील फाउंडरी, कुम्हारी; भिलाई वायर्स लि., भिलाई।

शराब बनाने के दो बड़े कारखाने हैं – केडिया डिस्टिलरीज़, भिलाई एवं छत्तीसगढ़ डिस्टिलरीज़, कुम्हारी (जि. दुर्ग)।

धान मिल्स यहाँ के प्रमुख कृषि उद्योग एवं आरा मशीनें प्रमुख वन-आधारित उद्योग हैं।

लगभग एक दर्जन साल्वेंट एक्सट्रैक्शन प्लांट में से प्रमुख हैं – म. प्र. आयल एक्सट्रेक्शन्स, रायपुर; मार्कफेड साल्वेंट एक्सट्रेक्शन प्लांट, दुर्ग; बस्तर आयल मिल्स; साव उद्योग, रायपुर।

आक्सीजन एवं गैस कारखाने – एशियाटिक आक्सीजन एवं पंकज आक्सीजन, रायपुर; ऋषि गैसेज़, बिलासपुर।

मिनी सीमेंट प्लांट – जय बजरंग सीमेंट प्लांट, दिनेश सीमेंट, काल्कर प्रोडक्ट्स, [illegible] सीमेंट।

कोरबा, जिला बिलासपुर, में म. प्र. विद्युत मंडल के 4 पावर हाऊस (कुल क्षमता – 1,170 मेगावाट) और राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम का 630 मेगावाट क्षमता का एक सुपर थर्मल पावर प्लांट स्थापित हैं। इसके अतिरिक्त राज्य क्षेत्र में दो ऊर्जा परियोजनाएँ (कुल क्षमता – 330 मेगावाट) और केंद्रीय क्षेत्र में दो परियोजनाएँ (कुल क्षमता – 4,200 मेगावाट) निर्माणाधीन हैं। भविष्य में तीन और परियोजनाएँ (1,000 मेगावाट क्षमता की) क्रमशः बिलासपुर, रायगढ़ और सरगुजा जिलों में प्रस्तावित हैं।

23. औद्योगिक अभिरचना	— कृषि-आधारित उद्योग	—	41%
	वनोपज-आधारित उद्योग	—	39%
	खनिज-आधारित उद्योग	—	6%
	विविध	—	14%
24. प्रस्तावित औद्योगिक पूंजी निवेश	— 178 अरब रुपये।		

(स्रोत सामग्री— 1. 'तरक्की का सिलसिला', म. प्र. शासन, सितम्बर 1985 ;
2. 'छत्तीसगढ़ क्षेत्र के विकास संकेतक', छत्तीसगढ़ विकास प्राधिकरण, म. प्र., नवम्बर 1986 ;
3. स्मारिका, 'प्राकृतिक संसाधन उपयोग एवं पर्यावरणीय आकलन' पर अखिल भारतीय परिचर्चा, भू-विज्ञान विभाग, रविशंकर विश्वविद्यालय, रायपुर, दिसम्बर 1989 ;
4. भारत की जनगणना रपट, 1981 एवं 1991)

छत्तीसगढ़ की अस्मिता

हीरालाल शुक्ल

लेखक छत्तीसगढ़ के सांस्कृतिक इतिहास के ख्याति-प्राप्त विद्वान हैं। हमारे विशेष आग्रह पर उन्होंने छत्तीसगढ़ की अस्मिता और छत्तीसगढ़ियों के मन में दबे-छिपे 'अस्वीकृति के स्वरों' (विद्रोह) के सांस्कृतिक और ऐतिहासिक आधारों को अभिव्यक्त किया है। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया है कि सामाजिक असमानता के विरुद्ध नारा दे रही छत्तीसगढ़ी मनीषा किस प्रकार भारतीय संस्कृति के [illegible] अनुप्राणित होती रही है। शायद इसी ऐतिहासिक यथार्थ ने नियोगी को 'पृथक छत्तीसगढ़' के नारे की जगह 'नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़' जैसा क्रांतिकारी नारा गढ़ने का आधार दिया। यही महत्व है इस लेख का जिसके कारण हम इसे इसकी कमी-बेशी पर कुछ अधिक कुछ और 'भारतीय' [illegible] के [illegible] पेश कर रहे हैं।

इन चारों वर्गों के लोगों के जीवन स्तर, पहनावे तथा सामाजिक रीति-रिवाजों में समानता है, जो **एकात्म छत्तीसगढ़ी चेतना** का वाचक (सूचक) है। किंतु जातीय चेतना के रूप में इन्होंने अपनी विशिष्टता बनाये रखी है। उदाहरण के लिए कमार तथा सतनामी में अंतर अधिक है, जबकि बैगा और रावत में कम। ये सुस्पष्ट दिखने वाले भेद आर्थिक या भौतिक कारणों से पैदा हुए हैं, किंतु मानसिक संरचना लगभग समान है।

प्रश्न यह नहीं है कि किसमें कितनी समानता या असमानता है ? प्रश्न यह भी नहीं है कि किसने क्या दिया और क्या लिया ? प्रश्न यह है कि यहाँ के निवासी हीनता क्यों महसूस करते हैं ? सोने की ईंट के घर में होते हुए लोगों को उसका भान न हो ! वे चिथड़ों में घूमें ? इससे भी बड़ा एक सवाल यह भी है कि छत्तीसगढ़ी अपने अतीत से अनभिज्ञ होते गये। गोस्वामी तुलसीदास के समान अपने ही भाइयों को गँवार कहने लगे–

गोंड गँवार तुरुक्कन राजा यवन महा महिपाल।
साम न दाम न भेद कलि केवल दंड कराल।। (दोहावली)

जबकि छत्तीसगढ़ की माटी ' भुजा उठाकर ' कहावतों के माध्यम से गोंडों से ही अपनी अस्मिता जोड़ती है–

ए आय छत्तीसगढ़ देस, जिहाँ गोंड नरेस।
तरी गोरसी ऊपर खाट, लगे हे चोंगी के ठाट।।

छत्तीसगढ़ की छवि पर बात करते समय इसे भुलाया नहीं जा सकता।

एक ओर जहाँ पुरानी छवियों का संविलयन[1] होता था, नयी स्वतंत्र छवियाँ भी उभरती रहीं। ये छत्तीसगढ़ में छत्तीसगढ़ी परम्परा से उपजीं। इसी तरह अनेक पंथ उपजे, जिनमें कबीर पंथ, सतनाम पंथ, रामनामी पंथ, ईसाई पंथ, मोहलीदेवी पंथ, बिहारीदास पंथ आदि प्रमुख हैं। दीर्घकाल तक इनकी छवियाँ स्वतंत्र रही हैं और आज भी हैं, परंतु इन सबने छत्तीसगढ़ की मिट्टी की ' बास ' है।

छत्तीसगढ़ का इतिहास अनेक राज्यों और साम्राज्यों का उल्लेख करता है, जिनमें वाकाटक, गुप्त, नल, शरभपुरीय, पांडु, नाग, माढ़िया, गोंड, कलचुरि, चालुक्य, सोमवंशी आदि की गौरवशाली परम्पराएँ हैं। सिंघनपुर, रामगढ़, गुंजी, किरारी, सिरपुर, मल्हार, पाली, भोरमदेव, चम्पारन, दंतेवाड़ा, चित्रकूट, डोंगरगढ़, बालसारी, दामाखेड़ा, तुरतुरिया, सिहावा, राजिम, कुलेश्वर आदि क्षेत्र यहाँ की सांस्कृतिक पहचान बताते हैं। इनमें से अनेक की स्वतंत्र छवि भी है। ऐसा भी समय था जब छत्तीसगढ़ के भिन्न-भिन्न अंचलों में अलग-अलग छवियों का अस्तित्व था। सांस्कृतिक भावभूमि में सामान्य एकता के कारण इन विभिन्न छवियों ने छत्तीसगढ़ी भावना के विकास में अवरोध उत्पन्न नहीं किया। नारायणसिंह, वामनराव, ठाकुर छेदीलाल, ठाकुर प्यारेलाल सिंह, खूबचंद बघेल या भंजदेव आदि के कारण समय-समय पर स्वतंत्र छवियाँ पनपती रहीं, पर छत्तीसगढ़ी की भावना भी पुष्ट होती रही।

गुलामी की अवधि में छत्तीसगढ़ की छवि में एक बदलाव आया। छत्तीसगढ़ की दो छवियाँ उस समय लोक जीवन में सुस्पष्ट थीं। पहली छवि थी आत्मसंतोष या आत्मरति[2] की–

---

[1] विलीन हो जाना या समा जाना।

[2] अपने-आप में आसक्त होना या डूबे रहना।

में 'कूटस्विचन'[1] की परिस्थितियों से जुड़कर तदाकार हो जाती है। इसके लोकनृत्य — राउत नृत्य, डंडा नृत्य, करमा नृत्य, गेड़ी नृत्य, देवार नृत्य, सुग्गा नृत्य, गौरा नृत्य, झूमर नृत्य, तथा नाचा इत्यादि — समूचे अंचल की साझी विरासत हैं और सभी का गोंडी कविता के अनुसार एक ही भाव है — 'चरैवेति' यानी साथ-साथ चलते चलो —

वाट रे सँगी वाट रे वाट। सबोय मीले मास वाट।।

अथवा सतरी लोकगायक के अनुसार — ऐ हिंडतो वीता झपके-झपके पौंय बढ़ाउन जा (ऐ चलने वाले, जल्दी-जल्दी पैर बढ़ाये जा)।

भविष्य की ओर डगर बढ़ाते हुए सनातन की खोज छत्तीसगढ़ी मनीषा से जुड़ी हुई है, किंतु कट्टरवाद यहाँ के पंथों में कभी नहीं रहा। छत्तीसगढ़ के अनेक पंथों ने सामाजिक असमानता के विरुद्ध विद्रोह का नारा दिया और अन्याय से लड़ने का एक नया मुहावरा विकसित किया, किंतु इसके मूल में कहीं-न-कहीं परम्परा का समर्थन था। यही कारण है कि सतनामपंथ के आदर्श गीता के त्रिगुण के सिद्धांत के बहुत करीब हैं, तो बस्तर की 'छेले' (नरबलि) अथर्ववेद के मंत्रों से अनुप्राणित रही है। इन परम्पराओं ने एक ओर सामाजिक तनावों को कम किया, तो दूसरी ओर सामाजिक सामरस्य उत्पन्न करने में सहायता दी।

परिवेश में अनुकूलन, समन्वयन, और सांस्कृतिक विविधता के सहअस्तित्व की स्वीकृति की प्रवृत्ति ने छत्तीसगढ़ को विविध छवियाँ प्रदान कीं। देश में राष्ट्रीयता के उत्कर्ष की स्थिति में 'छत्तीसगढ़ीयता' सदैव संकुचित होती गयी और उसके क्षीण होने पर 'पृथक छत्तीसगढ़' का नारा लगता रहा। 'छत्तीसगढ़ी' का प्रश्न जब अस्मिता से जुड़ता है तो इतिहास-दृष्टि, परम्पराबोध, समग्र जीवन-दृष्टि, वैज्ञानिक विवेक आदि अवधारणाओं से जूझना पड़ता है। किंतु संस्कृति की परख में राजनीतिक अस्त्र का उपयोग अनुचित होगा। शायद पश्चिम के अनुकरण से हम सांस्कृतिक अराजकता से जुड़ते जा रहे हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए। इतिहास गवाह है कि कोई भी समाज अपनी परम्परागत संस्कृति को भुलाकर भविष्य की ओर प्रगति के कदम नहीं बढ़ा सकता। पर इसका मतलब यह भी नहीं है कि संस्कृति को 'ड्राइंगरूम' में रखकर उसे निर्जीव कर डाला जाये। [illegible] की [illegible] प्रमाणित करती है कि वर्तमान की चुनौती में [illegible] भूमिका अदा कर सकती है। 'छत्तीसगढ़ की अस्मिता' की चर्चा करते समय इस मुख्य बात को भूल जाने का परिणाम बहुत घातक होगा।

(मूल लेख के कुछ अंश।)

---

[1] अंग्रेजी के 'कोड स्विचिंग' शब्द का हिन्दी रूप जिसका यही अर्थ है — एक भाषा के संकेतों (कोड) का किसी अन्य भाषा के संकेतों में रूपांतरण।

जन शिक्षण पोस्टर (छमुमो)

पानी नहीं, तो न पीओ
टी.वी. देख-देख कर जीओ

वो ऐसा दिखायेंगे टी.वी. का कमाल, कि [illegible]

वन नीति एवं दूरदर्शन कार्यक्रमों से उभरती विकास की तस्वीर

शहरों में चल रहे भवन-निर्माण कार्यों में लग जाते हैं। या फिर फरीदाबाद, महरौली जैसे क्षेत्रों की खदानों में बंधुआ-मजदूर बनकर जिंदगी गुजार देते हैं, और किसी दिन खदान में दब-कर या तपेदिक का शिकार हो कर मर जाते हैं। देश में 'धान का कटोरा' के नाम से विख्यात छत्तीसगढ़ में ही ये लोग भूखे-प्यासे दम तोड़ डालते हैं। भुखमरी से बचने के लिए आदिवासी-हरिजन औरतें औद्योगिक एवं शहरी क्षेत्रों में शहरी बाबुओं के उपभोग की वस्तु बनने के लिए तैयार हो जाती हैं। इन आदिवासी युवतियों के माध्यम से बाहरी तत्व यहाँ के आर्थिक साधनों का भी खूब दोहन कर रहे थे। यह एक सच्चाई है कि ठेकेदारों ने बेशकीमती सागौन का झाड़ पाँच-पाँच रुपये में खरीदा है। यह एक अलग दर्दभरी गाथा है। ❑

('प्रतिपक्ष', नवम्बर 1991, में प्रकाशित 'बिहारी श्रमिक मानवता के बेजोड़ रणनीतिज्ञ' लेख का उद्धृत अंश साभार।)

दस्तावेज

'छोटे और सुंदर छत्तीसगढ़' की ओर

'नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़' की अवधारणा के अभिन्न अंग के क्रम में उभरा है छत्तीसगढ़ के विकास की प्राथमिकताओं और दिशा का सवाल। "छोटा और सुंदर छत्तीसगढ़' यानी 'हमारे सपनों का छत्तीसगढ़' कैसा होगा? छमुमो ने इस सवाल का उत्तर ढूंढने का एक व्यवस्थित प्रयास सन् 1986-87 से शुरू कर दिया था। इस प्रयास के क्रम में ही नियोगी ने वैकल्पिक औद्योगिक नीति और कृषि नीति पर अपने प्रारम्भिक विचार लिखे थे (देखिये खंड तीन, पृ. 175-181 व 184-188)। इसी तारतम्य में अब हम प्रस्तुत कर रहे हैं छमुमो द्वारा रायपुर में सितम्बर 1989 में आयोजित एक सम्मेलन के बाद प्रसारित प्रेस विज्ञप्ति जिसमें छमुमो से जुड़े 500 प्रतिनिधियों ने विकास के विकल्प की दिशा को परिभाषित करने की एक सामूहिक कोशिश की है। इसको नियोगी द्वारा लिखे गये ऊपर संदर्भित पर्चों के साथ जोड़कर देखने से ही 'छोटे और सुंदर छत्तीसगढ़' का एक उभरता हुआ चित्र हम देख सकेंगे।

का अत्याचार आदिवासियों को झेलना पड़ता है। छत्तीसगढ़ में वनों के दोहन से अर्जित अरबों रुपयों को सरकार ने ऊपर ही ऊपर उड़ा दिया और उसे आदिवासियों के विकास कार्यों में इस्तेमाल नहीं किया। हम विदेशी प्रजाति के पेड़ों (जैसे चीड़ या पाइन) के रोपण एवं अंधाधुंध जंगल कटाई का विरोध करते हैं। वन क्षेत्र में रहने वालों के लिए उनकी आवासीय एवं जलाऊ लकड़ी को मुफ्त उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

छत्तीसगढ़ में जल के सभी साधनों का उद्योगों के लिए उपयोग किया जा रहा है, जिसका हम तीव्र विरोध करते हैं। गंगरेल, तांदुला, गोंदली, खरखरा, अरपा नदी का जल, इन सब पर किसानों के अधिकार की प्राथमिकता को हम स्वीकार करते हैं। उद्योगों द्वारा नदी-नालों के जल प्रदूषण की रोकथाम की जाये।

दूरदर्शन (टी. वी.) या रेडियो आज सत्ता पक्ष का भोंपू बन चुका है। छत्तीसगढ़ में कला के विकास एवं प्रसार के लिए इसका उपयोग होना चाहिए। नेता दर्शन नहीं, लोक संस्कृति का दर्शन होना चाहिए । गोंडी, हल्बी, एवं छत्तीसगढ़ी भाषाओं में प्राथमिक शिक्षा दी जानी चाहिए। बम्बई सिनेमा की ढिसुम-ढिसुम संस्कृति पर रोक लगानी चाहिए। ❑

(मूल का संक्षिप्त स्वरूप ; छमुमो के सौजन्य से।)

<u>दस्तावेज</u>

विकास या विनाश ?

छमुमो ने 28 मार्च 1992 को भिलाई आंदोलन पर अपना समग्र दृष्टिकोण एक पुस्तिका के माध्यम से प्रसारित किया जिसमें देश में अपनायी गयी विकास नीति पर भी प्रश्न उठाये और उसका विकल्प खोजने की जरूरत पर जोर दिया। उसी पुस्तिका के कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत हैं।

आजादी के बाद पैंतालीस साल में देश में बहुत सारे उद्योग बने लेकिन जनता की क्रय क्षमता नहीं बढ़ी। गाँवों और शहरों का समान विकास नहीं हुआ। बहुत ज्यादा संख्या में छत्तीसगढ़ के नौजवानों को उद्योग में नौकरी नहीं मिली। **औद्योगिक विकास के साथ कृषि विकास का सम्बंध नहीं रहा।** बल्कि कृषि को खत्म कर, पर्यावरण को प्रदूषित कर, विकास के नाम पर विनाश को लाया गया। . . . . . . **नयी औद्योगिक नीति के तहत लाखों मजदूरों की छँटनी हो रही है, हजारों कारखानों को बंद किया जा रहा है।** गाँवों में काम के दिन बढ़ाने का कोई प्रयास

नहीं है। इस स्थिति के खिलाफ गाँव-गाँव से लड़ाई का बिगुल फूँकना होगा। ग्रामीण जनता ही ग्रामीण विकास की राह तय करेगी। सिर्फ इतना ही नहीं, गाँव के विकास के साथ संतुलित उद्योग क्या होंगे, कहाँ उद्योग लगाया जायेगा – इस पर भी गाँव के मेहनतकशों को सोचना होगा, माँग उठानी होगी। . . . . . . जब तक छत्तीसगढ़ के मजदूर और किसान, श्रम पुत्र व भूमि पुत्र, एक-दूसरे के हित में एकजुट नहीं होंगे, तब तक एक सुंदर जीवन के लिए संघर्ष शुरू नहीं होगा।

आपने सुना होगा कि छत्तीसगढ़ क्षेत्र में 170 अरब रुपये के उद्योग लगाये जायेंगे। अच्छी बात है, उद्योग तो लगने ही चाहिए। लेकिन भिलाई में औद्योगीकरण का फल तो हम भुगत चुके हैं। इसलिए उद्योग की स्थापना के पहले ही हमें आवाज उठानी होगी कि उद्योग ऐसा हो जिससे गाँव का विकास हो सके। ऐसे उद्योग हों जिनमें गाँव के बेरोजगार नौजवानों को ज्यादा से ज्यादा संख्या में नौकरी मिल सके। ऐसे उद्योग हों जिनसे देश आत्मनिर्भर हो सके। उद्योगों के लिए अगर 170 अरब रुपये हों तो ग्रामीण विकास के लिए भी 170 अरब। पैसे कम पड़ने पर उद्योग व कृषि में बराबर बाँटा जाये। गाँव-गाँव में सिंचाई की व्यवस्था हो जिससे कृषि उत्पादन बढ़े, किसानों की क्रय क्षमता बढ़े। हरित क्रांति के सर्वनाशी, विदेशों पर निर्भर रास्ते पर नहीं, **देशज पद्धति से देशज तकनालाजी द्वारा कृषि का विकास हो।** . . . . . .

❑

(मूल पुस्तिका से उद्धृत अंश ; छमुमो के सौजन्य से।)

<u>दस्तावेज</u>

नये छत्तीसगढ़ की माँग एक जनवादी माँग है

जनता छत्तीसगढ़ का विकास चाहती है। छोटे राज्य मात्र के बन जाने से विकास होगा, यह आज की राजनैतिक परिस्थितियों में निश्चित नहीं है। जब जनता का व्यापक हिस्सा छत्तीसगढ़ राज्य की माँग करे तो यह एक जनवादी माँग बन जाती है। इस माँग को पूरा होना चाहिए। आज यहाँ का पूँजीपति वर्ग भी एक पृथक छत्तीसगढ़ राज्य की माँग कर रहा है। किसानों द्वारा भी एक नये छत्तीसगढ़ की माँग जोर पकड़ रही है। इसलिए , मजदूर वर्ग का कर्तव्य है कि वह इस सवाल को लेकर गम्भीर रूप से सक्रिय हो। **जब तक यह आंदोलन जनता को आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मुक्ति की एक निश्चित दिशा में संचालित नहीं करता, तब तक यह उग्रजातिवाद या पृथकतावाद के गड्ढे में गिरकर बहुत नुकसान पहुँचा सकता है।** क्षेत्र के विकास कार्य में क्षेत्रीय जनता की हिस्सेदारी ही विकास की गारंटी है।

❑

(छमुमो द्वारा प्रसारित ' दिशा, लक्ष्य और कार्यक्रम ' पुस्तिका से उद्धृत।)

हमार सपना के छत्तीसगढ़

जहाँ सब ला पीये के पानी मिलही,
जहाँ हर खेत में सिंचाई के साधन होही,
जहाँ हर हाथ ला काम मिलही,
जहाँ किसान ला पैदावार के सही कीमत मिलही,
जहाँ हर गाँव में अस्पताल होही,
जहाँ हर लइका के सही पढ़ाई बर स्कूल होही,
जहाँ सब ला भुइयाँ अऊ घर मिलही,
जहाँ गरीबी, शोषण और पूँजीवाद नइ होही,

अइसन छत्तीसगढ़ कब बनही ?
जब किसान मजदूर के छत्तीसगढ़ में राज होही।

अइसन छत्तीसगढ़ बनायबर संघर्षरत हावे,
छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा

(छमुमो के सौजन्य से।)

ऐसा होगा नये भारत का नया छत्तीसगढ़

छबिलाल साहू

31 अक्तूबर 1984 को जब तत्कालीन प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी की हत्या हुई तब शाम को राजहरा में यह खबर पहुँची कि उनकी हत्या उन्हीं के एक अंगरक्षक द्वारा की गयी, जो कि सिख था। सारे देश में इस खबर के फैलते ही सिखों के विरुद्ध हिंसा का नंगा नाच शुरू हो गया। राजहरा के आसपास के इलाके, मसलन रायपुर, बिलासपुर, दुर्ग, भिलाई, राजनांदगाँव, भानुप्रतापपुर, बालोद आदि भी इससे अछूते नहीं रहे। राजहरा में भी हिंसा फैलने की सम्भावना थी, क्योंकि यहाँ विभिन्न कांग्रेसी संगठनों (इंटक, युवा कांग्रेस) ने सिखों के विरुद्ध नारेबाजी आदि शुरू कर दी थी।

परंतु नियोगीजी ने तुरंत हम समस्त साथियों की मीटिंग बुलायी जिसके बाद हम सी. एम. एस. एस. के कार्यकर्ता राजहरा में शांति बनाये रखने व सिखों की रक्षा के लिए पूरे शहर में गश्त देने लगे। सबसे पहले हम गुरुद्वारा गये जहाँ आतंकित सिख परिवार इकट्ठे हुए थे। हमने उन्हें सुरक्षा का पूर्ण आश्वासन दिया व गुरुद्वारे के पीछे की मजदूर बस्ती के अपने साथियों को सचेत किया।

इसी बीच नियोगीजी को मध्य प्रदेश मंत्रिमंडल के एक तत्कालीन वरिष्ठ सदस्य ने फोन करके आग्रह किया, " नियोगीजी, आप सिर्फ एक बार हाँ भर बोल दीजिये, हम राजहरा के सिखों से बदला ले लेंगे। क्या आप भूल गये हैं कि यही सिख कुछ साल पहले आपको मारने के लिए तलवार लेकर घूम रहे थे और सी. एम. एस. एस. का नामोनिशान मिटा देने की बात कर रहे थे ?"[1] तब नियोगीजी ने कहा, " हमारा उनसे सिद्धांत का लड़ाई हुआ था, कोई व्यक्तिगत दुश्मनी नहीं था। "

राजहरा के खदान ठेकेदार सरदार अत्तरसिंह ने भी नियोगीजी से बात की। नियोगीजी ने कहा, " आप परवाह मत करो, राजहरा में ऐसा कभी नहीं होगा। यह मारकाट दिल्ली में हो रहा है। मगर यह दल्ली है। " जब नियोगीजी ने यह कहा उस समय सरदार अत्तरसिंह से हमारा ' फाल बैक वेजेस ' को लेकर संघर्ष चल रहा था।

सबेरा होते ही नियोगीजी ने आस-पास के इलाकों में शांति बनाये रखने के उद्देश्य से हमारे साथियों को नादिया, राजनांदगाँव, चांदीडोंगरी, हिर्री, भानुप्रतापपुर आदि जगहों पर स्वयं के लिखे पत्रों के साथ भेजा।

---

[1] यहाँ संदर्भ शराबबंदी अभियान के दिनों का था जब स्थानीय प्रमुख शराब ठेकेदार सरदार गुलबीर सिंह भाटिया और उनके साथियों ने सी. एम. एस. एस. को अपना दुश्मन मान लिया था (देखिये पृ. 414-420)।

नया छत्तीसगढ़ हमको बनाना है, बनायेंगे।
नया भारत . . . . ।

बड़े बाँधों से कोई गाँव विस्थापित नहीं होंगे।
कोई शोषक नहीं होगा, कोई शोषित नहीं होंगे।
जहाँ भी होंगी दीवारें विषमता की, ढहायेंगे।
नया छत्तीसगढ़ हमको बनाना है, बनायेंगे।
नया भारत . . . . ।

हरापन जंगलों का फिर से वापस लौट आयेगा।
जो वनवासी है, उस पर फिर नया अधिकार पायेगा।
हरी चादर से धरती को दुबारा हम सजायेंगे।
नया छत्तीसगढ़ हमको बनाना है, बनायेंगे।
नया भारत . . . . ।

हवा में ताजगी होगी, गगन गंदा नहीं होगा।
धुएँ से चाँद या सूरज, कोई मंदा नहीं होगा।
प्रदूषण के नरक से, सारी नदियों को छुड़ायेंगे।
नया छत्तीसगढ़ हमको बनाना है, बनायेंगे।
नया भारत . . . . ।

जहाँ पर जाति-धर्मों का कोई दंगा नहीं होगा।
कोई भूखा नहीं होगा, कोई नंगा नहीं होगा।
नशाखोरी के सौदागर, जहाँ पर घुस न पायेंगे।
नया छत्तीसगढ़ हमको बनाना है, बनायेंगे।
नया भारत . . . . ।

हमारी बोलियाँ, इस देश की भाषा कहलायेंगी,
कि जिनसे होके, अपनी दूर तक आवाज जायेगी।
ये सपने हैं, मगर इनको बनाकर सच दिखायेंगे।
नया छत्तीसगढ़ हमको बनाना है, बनायेंगे।
नया भारत . . . . ।

रायपुर ,
4 अक्तूबर 1989

बुर्जुआ शक्तियों द्वारा चलाये जा रहे 'पृथक छत्तीसगढ़' के अभियान से बुनियादी तौर पर भिन्न है। नियोगी ने सन् 1981 में ही एक लेख के माध्यम से यह चेतावनी दी थी कि इस तरह का दिशाहीन अभियान अवसरवादी और देशद्रोही तत्वों के हाथ में एक हथियार बन सकता है और आसानी से 'अंधराष्ट्रवाद' में बदल सकता है (देखिये पृ. 138, 142)। कुछ ऐसी ही ताकतों ने 'छत्तीसगढ़ियों के लिए छत्तीसगढ़' का नारा देकर एक राष्ट्रीय जन समुदाय को दूसरे राष्ट्रीय जन समुदाय से लड़वाने की कुचेष्टा भी की थी। सत्तर और अस्सी के दशकों में इस संकीर्ण व उग्रजातिवाद के कई उदाहरण भारत के विभिन्न अंचलों में उभर रहे थे जहाँ 'राष्ट्रीयता' और आंचलिक अस्मिता के नाम पर स्थानीय बहुसंख्यक जन समुदाय और वहाँ अन्य अंचलों से रोजगार के लिए आये मजदूरों के बीच तनाव पैदा किये गये। आज से बीस वर्ष पहले इसी समाज-विरोधी प्रक्रिया के बल पर शिवसेना ने बम्बई में अपनी जड़ें जमायी थीं। इस प्रकार मजदूर को मजदूर से लड़वा कर पूँजीवादी ताकतों ने आम जनता के न्याय के लिए चल रहे संघर्षों को कमजोर बनाया। इसीलिए नियोगी ने 'नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़' का क्रांतिकारी नारा दिया और लिखा, "मजदूर वर्ग का यह कर्त्तव्य है कि वह इस विषय में सक्रिय भाग ले। अगर एक स्पष्ट दिशा में इस अभियान को नहीं चलाया जाता और इसे लोगों के मुक्ति-संघर्ष के प्रश्न के साथ जोड़ा नहीं जाता तो यह गलत दिशाओं में भटक सकता है। उग्र अंधराष्ट्रवाद पूरे अभियान को नुकसान पहुँचा सकता है।" (देखिये पृ. 138)

'नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़' के नारे को साकार रूप देने के लिए और मजदूर-किसानों को इस भावना से जोड़ने के लिए नियोगी के नेतृत्व में छमुमो ने कई महत्वपूर्ण कदम उठाये। इन्हें समझना जरूरी है। दरअसल, पृथकतावादी-विघटनकारी नारों के कोलाहल से हटकर नियोगी ने ताजी हवा के जो झोंके दिये वे अवधारणा और दिशा के स्तर पर क्रांतिकारी सिद्ध हुए हैं। हम यहाँ इनका संक्षेप में उल्लेख करेंगे –

1) सांस्कृतिक अस्मिता के सवाल को छत्तीसगढ़ की सम्पदा की लूट और शोषणकारी विकास प्रक्रिया से जोड़ना।

2) छत्तीसगढ़ में असमान विकास, अर्द्ध-सामंती ग्रामीण अर्थव्यवस्था के जरिये शोषण और बहुराष्ट्रीय पूँजी से नियंत्रित औद्योगीकरण जैसी प्रक्रियाएँ चलती रही हैं। इनके लिए जिम्मेवार ताकतों को नियोगी ने वैज्ञानिक चिंतन के सहारे पहचाना और संघर्षशील जनता के फोकस में लगातार रखा। इन्हें 'छत्तीसगढ़ के दुश्मन' के रूप में भी प्रतिपादित किया (देखिये पृ. 68)।

3) इस आंदोलन को मजदूर वर्ग के नेतृत्व में चलाना और इसके साथ जनता की समस्त शोषित जमातों को, विशेषकर छोटे किसानों और बेरोजगारों को, संघर्ष में सक्रिय रूप से जोड़ना।

4) आंदोलन की शुरूआत में ही 'छत्तीसगढ़ी कौन है ?' प्रश्न को उठाना और इसके उत्तर को हमेशा ध्यान में रखकर आगे बढ़ना। छमुमो का उत्तर देखिये, "छत्तीसगढ़ी वह है जो छत्तीसगढ़ के भौगोलिक क्षेत्र में ईमानदारी से मेहनत-मजदूरी कर अपना जीवन निर्वाह

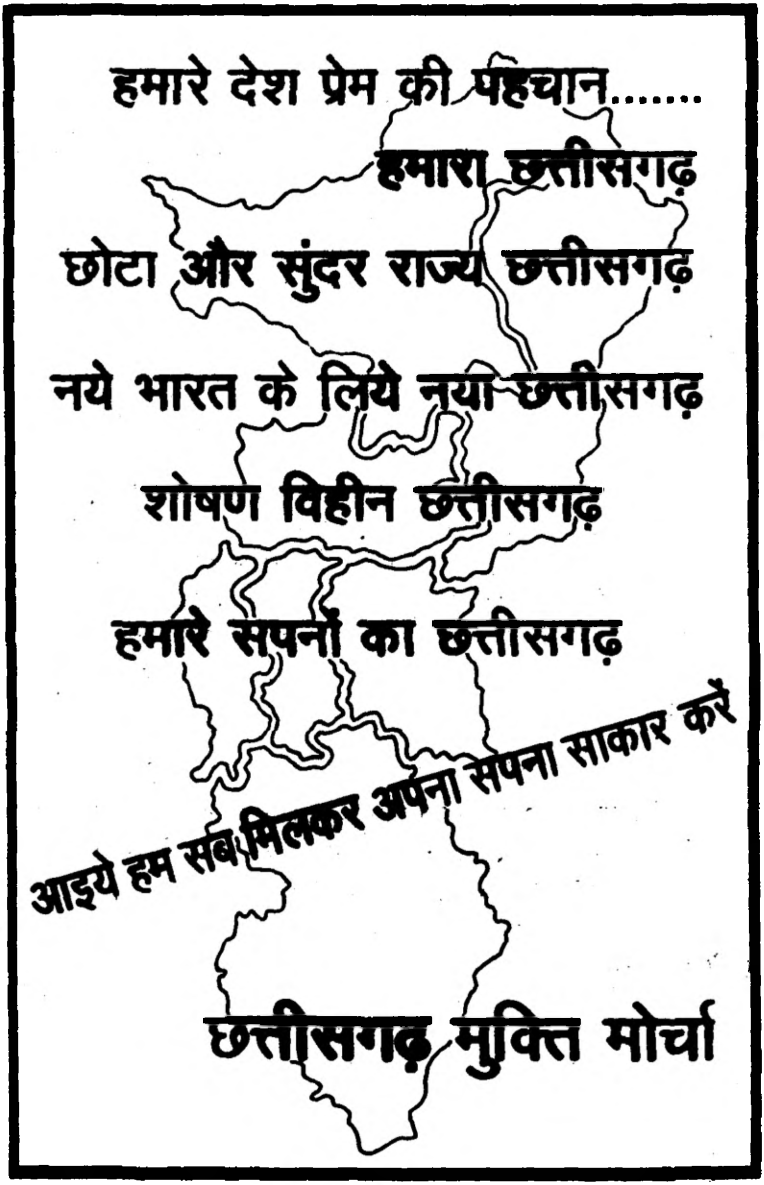

हमारे देशप्रेम की पहचान . . . . .

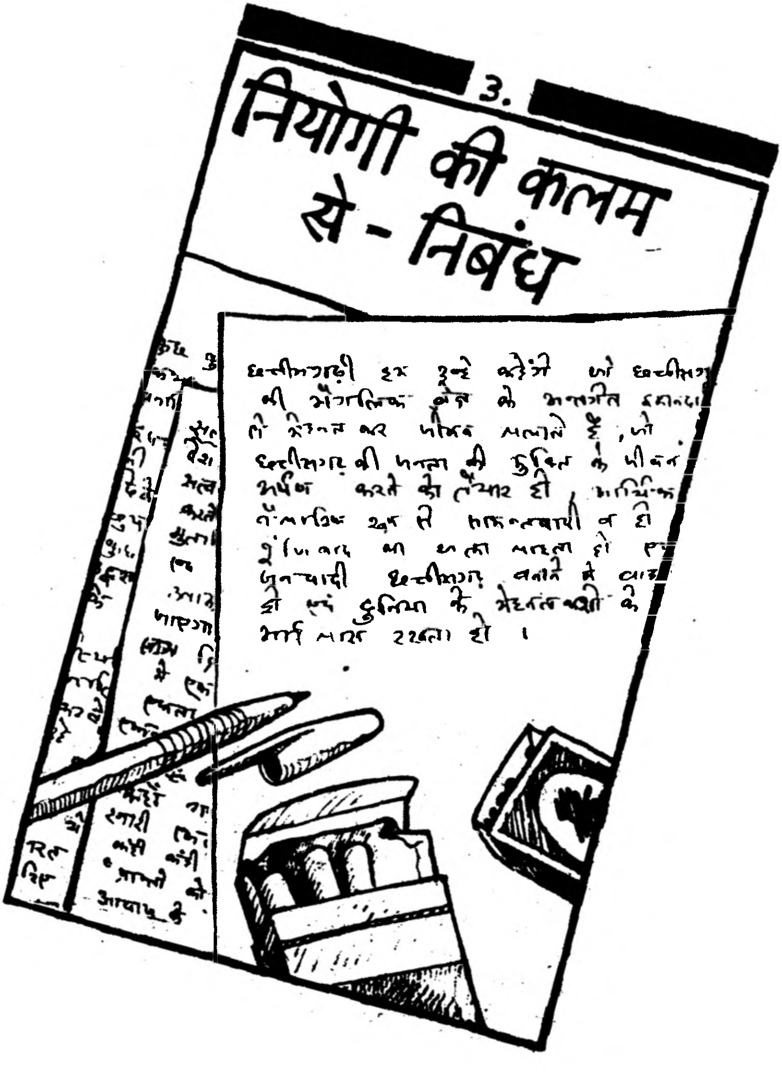
3.
नियोगी की कलम से - निबंध

खंड सम्पादन — हरि जोशी

एक सृजनात्मक आंदोलनकारी और विलक्षण राजनैतिक विचारक होने के नाते नियोगी ने उतना नहीं लिखा जितना कि उनसे लोग अपेक्षा रखते थे। यह बात खासतौर पर इसलिए दुःखद है चूँकि उनके पास कहने को बहुत कुछ था; जनता के बीच काम करने के समृद्ध अनुभवों का खजाना था। इसके अलावा उनके लेखों का इस पुस्तक के लिए सम्पादन करते वक्त हम उनकी सहज लेखन शैली और शक्तिशाली अभिव्यक्ति से बेहद प्रभावित हुए। उन्होंने जो कुछ भी लिखा उसका प्रमुख लक्ष्य अपने और आंदोलन के विचार व अनुभव मेहनतकश जनता तक पहुँचाना था। अतः गूढ़-से-गूढ़ विषयों को भी इतने दिलचस्प ढंग से, छोटे-छोटे उदाहरणों से और सरल भाषा में पेश किया है कि हर इंसान उन्हें आत्मसात कर सके। भाषा (हिन्दी) पर भी उनकी जबर्दस्त पकड़ दिखती है जिसे उनका बंगाली एवं छत्तीसगढ़ी लहजा और भी अधिक प्रभावशाली बना देता है। कहीं-कहीं हमने उनके निबंधों को पूरे हिन्दी भाषी इलाके में और अहिन्दी क्षेत्रों के हिन्दी पाठकों के भी बीच ग्राह्य बनाने के लिए बंगाली एवं छत्तीसगढ़ी लहजे का हिन्दी रूपांतरण किया है, हालाँकि हमारा अपना मानना है कि अपने मूलरूप में उनकी अभिव्यक्ति दिल और दिमाग दोनों को ज्यादा छूती है।

उनका अधिकांश लेखन आंदोलन के संदर्भ में था, आंदोलन से ही उपजा था और आंदोलन की जरूरतें पूरी करने के लिए था। जहाँ एक ओर यह उनके लेखन की ताकत है, वहीं दूसरी ओर उसकी सीमा भी। सीमा इसलिए कि उन्होंने जिस गहराई से सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक प्रक्रियाओं व व्यवस्था का विश्लेषण किया था, उस समझ को यदि वे व्यापक संदर्भ में लागू करने के लिए समय निकाल पाते तो काफी मदद मिलती। ऐसा उन्होंने अपने जीवन के अंतिम महीनों में करना शुरू किया था। उनके ऐसे प्रयासों को हम ' जरूरत है संसदीय प्रणाली में जन आकाँक्षाओं के अमृत से सींचकर सच्चा जनवाद लाने की ' और ' चौराहे पर खड़े देश को कौन दिशा देगा ? ' शीर्षक लेखों में देख सकते हैं (क्रमशः पृ. 212-217 व 217-222)। इसी क्रम में उनके तीसरे लेख ' राजीव गांधी की हत्या क्यूँ ? ' की समसामयिक सार्थकता और उसमें व्यक्त राजनैतिक पूर्वानुमान की अद्‌भुत दृष्टि को देखते हुए इसे अलग से प्रस्तुत किया गया है (देखिये पृ. 661-666)। परंतु यह याद रखना होगा कि आंदोलन से जुड़े उनके लेखन में भी राष्ट्रीयता एवं राष्ट्रीय एकता, विकास की दिशा, तकनालाजी का सामाजिक चरित्र, ट्रेड यूनियन आंदोलन की सीमाएँ व सम्भावनाएँ, पर्यावरण का प्रश्न, और छात्र वर्ग की भूमिका जैसे विषयों पर उनका विश्लेषण व्यापक राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय महत्व का है। बाद के खंडों में प्रस्तुत उनके भाषणों, बयानों एवं साक्षात्कारों को इस खंड के निबंधों के साथ जोड़कर देखने से ही नियोगी के विचारों का पूरा कैनवास हमारे सामने बन सकेगा।

हमने केवल सहूलियत की दृष्टि से नियोगी के लेखों को उनके वर्षानुक्रम में पेश किया है, विचारों के क्रम से नहीं।

❑

दरअसल, सवाल केवल छत्तीसगढ़ का नहीं है, न ही सवाल केवल मजदूर, किसान व अन्य शोषित तबकों के विकास का है। 'नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़' आंदोलन के दौरान जो नयी अवधारणाएँ, नये सिद्धांत और 'संघर्ष और निर्माण' का दर्शन उभरा है, उन्हें हमें एक सूत्र में पिरोकर देखना होगा। यह करने पर समूचे भारत के पुनर्गठन की नयी दिशा भी दिखने लगेगी – चाहे मुद्दा पंजाब या कश्मीर का हो, असम या बोडोलैंड का हो, झारखंड या उत्तराखंड का हो। विभिन्न राष्ट्रीयताओं का देशप्रेमी प्ररिप्रेक्ष्य में समतामूलक विकास और शोषणविहीन, जनवादी व लोकतांत्रिक व्यवस्था का निर्माण इस दिशा की कसौटियाँ हैं। नियोगी के लिए यह बात कितनी बुनियादी थी यह इससे स्पष्ट होगा कि उनके अनुसार तकनालाजी भी दो प्रकार की होती है – देशप्रेमी तकनालाजी और देशद्रोही तकनालाजी – पहली किस्म की तकनालाजी वह है जो समाज में व्याप्त शोषण को सीमित करने में मदद देती है, और दूसरी किस्म की तकनालाजी शोषण को बढ़ावा देती है। 'देशप्रेमी' और 'देशद्रोही' अवधारणाओं को आगे बढ़ाने में नियोगी का यह सोच अनूठा है।

'नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़' की अवधारणा भारत की मौजूदा हालात में कितनी प्रासंगिक है, इसे प्रसिद्ध लेखक व विकासोन्मुखी पत्रकारिता से जुड़े भारत डोगरा ने सटीक ढंग से पेश किया है,

> "आज जब देश में विभिन्न पृथकतावादी व विघटनकारी शक्तियाँ सिर उठा रही हैं, नियोगीजी ने समय की माँग को समझते हुए आंदोलन का ऐसा नमूना पेश किया जिसके जरिये **एक शोषित पिछड़े इलाके के गरीब लोगों को बिना किसी अलगाववादी या विघटनकारी विचारों या शक्तियों को प्रोत्साहन दिये सामाजिक-आर्थिक बदलाव के लिए संगठित किया जा सकता है।** इस आंदोलन के दौरान अपने इलाके (छत्तीसगढ़) के प्रति लोगों के प्रेम व सम्मान और देश के लिए उनकी भावनाओं के बीच कभी कोई अंतर्विरोध पैदा नहीं हुआ।"

(इंडियन एक्सप्रेस, अक्तूबर 1991, से साभार उद्धृत व अनूदित।)

यही शहीद शंकर गुहा नियोगी का नये भारत का सपना था जिसका ऐतिहासिक मॉडल आज़ भी छत्तीसगढ़ की माटी पर उसके मजदूर-किसानों के 'संघर्ष और निर्माण' में जीवित है और पूरे भारत की जनता के लिए मिसाल बनकर खड़ा है।

❑

(सितम्बर 1992)

करता है, जो छत्तीसगढ़ की मुक्ति के लिए समर्पित है, जो सामंती शोषण नहीं करता . . . . . . छत्तीसगढ़ के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में श्रद्धा के साथ हाथ बँटाता हो।" (देखिये पृ. 68)। इससे भी अधिक महत्व का सिद्धांत छमुमो ने 'छत्तीसगढ़ के दुश्मन' की व्याख्या करते हुए प्रस्तुत किया है। इसके अनुसार, "सामंतवादी (मालगुजार, साहूकार), अर्द्ध-सामंतवादी (ठेकेदार एवं दलाल नौकरशाह) प्रवृत्ति के लोग छत्तीसगढ़ी जनता के दुश्मन हैं, भले ही वे छत्तीसगढ़ में पैदा हुए हों और छत्तीसगढ़ी बोलते हों।" इस व्याख्या से नियोगी ने भारत में उग्र जातिवाद, अंधराष्ट्रवाद या संकीर्ण धर्मांधता की तर्ज पर चल रहे विभिन्न अंचलों की राष्ट्रीयता के आंदोलनों को जनवादी मोड़ दिया है। इसी व्याख्या में नियोगी ने 'भूमि पुत्र' और 'श्रम पुत्र' की अवधारणा जोड़ी और इसके सहारे राष्ट्रीयता के सवाल पर मजदूर वर्ग के दृष्टिकोण को प्रतिपादित किया। इससे छत्तीसगढ़ी एवं गैर-छत्तीसगढ़ी मेहनतकश लोग संघर्ष के एक ही मंच पर शामिल हुए। भिलाई की मजदूर एकता इसका सबूत है जहाँ अलग-अलग प्रदेशों से आये मजदूर छत्तीसगढ़ी मजदूरों के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर नये छत्तीसगढ़ के निर्माण के लिए न केवल संघर्षरत हुए, वरन् उन्होंने बार-बार अपनी कुर्बानी भी दी। भिलाई में 1 जुलाई 1992 को हुआ निर्मम गोलीकांड ऐसी ही कुर्बानी की मिसाल है (शहीदों की सूची के लिए देखिये पृ. 472)।

5) राष्ट्रीयता का विकास क्यों रुका हुआ है ? राष्ट्रीयता की पहचान क्या है ? राष्ट्रीयता का एक बेहतर समाज बनाने के उद्देश्य से क्या सम्बंध है ? राष्ट्रीयता के विकास का रास्ता क्या होगा और इसकी सम्भावना क्या है ? इन सब प्रश्नों पर अब तक के अनुभव, वर्तमान परिस्थिति और भविष्य की कल्पना को जिस प्रकार समेटते हुए नियोगी ने छत्तीसगढ़ियों के स्वशासन के जनवादी अधिकार का सवाल प्रस्तुत किया है, उससे पूरे आंदोलन को एक सार्थक दिशा मिली है। इस वैज्ञानिक सामाजिक चिंतन में एक और प्रश्न अभिन्न रूप से जुड़ गया — यह प्रश्न है विकास की वैकल्पिक धारा का। इससे मानव जीवन का कोई पहलू अछूता नहीं रहा, चाहे वह शिक्षा या स्वास्थ्य का हो, विज्ञान-तकनालाजी या पर्यावरण का हो, ऊर्जा या जंगल के अधिकार का हो, खनिज और जल के उपभोग का हो, या फिर जीवन-मूल्यों या उपभोक्तावादी अपसंस्कृति का हो। इन सब पहलुओं पर विकल्प को तलाशते हुए ही हम 'हमार सपना के छत्तीसगढ़' का निर्माण कर पायेंगे।

6) 'नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़' का आंदोलन न केवल मजदूर वर्ग के नेतृत्व में चलेगा, बल्कि इसकी सफलता के लिए 'संघर्ष और निर्माण' के दर्शन को भी आत्मसात करना जरूरी होगा। जब मजदूर वर्ग छत्तीसगढ़ के विकास की लड़ाई को आगे बढ़ायेगा तो उसके दिल में बेहतर समाज की एक कल्पना भी जागेगी। उस कल्पना को मजदूर वर्ग केवल अमूर्त स्तर पर टिकाकर नहीं रख सकता है जब तक कि वह उसे कुछ मूर्त रूप न दे दे। यही 'निर्माण' है जो मजदूर की कल्पना को आगे बढ़ाता है जिससे उसे संघर्ष के अगले कदम की प्रेरणा मिलती है। इस प्रकार 'संघर्ष और निर्माण' एक ही प्रक्रिया के दो आयाम बन कर उभरते हैं। राष्ट्रीयता के विकास का यह दर्शन नियोगी का इस ओर एक ऐतिहासिक योगदान है (विस्तृत व्याख्या के लिए देखिये पृ. 653 व 655-659)।

नये भारत का सपना

अनिल सद्गोपाल

19 दिसम्बर 1979 छत्तीसगढ़ के इतिहास में एक महत्वपूर्ण दिन है। इस दिन छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ की पहल पर एक नयी परम्परा की शुरूआत हुई — सन् 1857 के क्रांतिकारी शहीद वीर नारायण सिंह का शहादत दिवस मनाने की। सन् 1856-57 के दौरान वर्तमान रायपुर जिले के सोनाखान इलाके में आदिवासी किसान नारायण सिंह ने अंग्रेजी साम्राज्यवाद के संरक्षण में ढाये जा रहे सामंतवादी जुल्म के खिलाफ किसानों को संगठित करके हथियारबंद संघर्ष छेड़ दिया। सी. एम. एस. एस. ने इस संघर्ष को जनता के सामने छत्तीसगढ़ के सर्वप्रथम मुक्ति संग्राम के रूप में पेश करके छत्तीसगढ़ की अस्मिता के प्रश्न को एक नयी दिशा दी। तब तक शासक वर्ग के इशारों पर लिखे गये इतिहास में अंग्रेज और भारतीय सवर्ण इतिहासकारों ने नारायण सिंह के इस बलिदान का कहीं उल्लेख करना भी उचित नहीं समझा था। अंततः नारायण सिंह की शहादत के 122 वर्षों बाद एक मजदूर संगठन ने यह स्थापित किया कि छत्तीसगढ़ का इतिहास भी देशप्रेमी शहादत से सींचा हुआ था।

इसके फलस्वरूप एक ओर तो छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक अस्मिता उजागर हुई, वहीं दूसरी ओर यह प्रश्न छत्तीसगढ़ के शोषण के मुद्दे से जुड़ गया। वीर नारायण सिंह को ऐसे सामंतवादी जुल्म के खिलाफ लड़ना पड़ा था जिसे अंग्रेजी साम्राज्यवाद का समर्थन प्राप्त था। इस इतिहास से नियोगी ने शिक्षा ली। उन्होंने आह्वान किया कि छत्तीसगढ़ की सम्पदा की जो लूट भारत का पूँजीपति शासक वर्ग सामंती ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सहारे कर रहा है, उसके खिलाफ मजदूर वर्ग को आगे आकर छत्तीसगढ़ की समस्त शोषित जनता को संगठित करना होगा। यह भी गौरतलब है कि भारत का शासक वर्ग छत्तीसगढ़ के विपुल खनिज एवं वनीय संसाधनों पर नियंत्रण करने के लिए विश्व की साम्राज्यवादी ताकतों और बहुराष्ट्रीय पूँजी द्वारा लादे गये आर्थिक सम्बंधों को छत्तीसगढ़ के औद्योगीकरण पर थोप रहा है। अतः छत्तीसगढ़ के मजदूर वर्ग को विश्व साम्राज्यवाद के खिलाफ भी संघर्ष चलाना होगा। तभी छत्तीसगढ़ का समतामूलक विकास सम्भव होगा जिसके जरिये हम सब एक न्यायप्रिय शोषणविहीन समाज की ओर बढ़ सकेंगे। नियोगी ने एक 'छोटे और सुंदर छत्तीसगढ़' का सपना मजदूरों के सामने प्रस्तुत करके उन्हें इस दिशा में प्रेरित किया (देखिये इसी खंड में 'हमार सपना के छत्तीसगढ़' शीर्षक की कविता, पृ. 69)।

इस मायने में छमुमो ने छत्तीसगढ़ के लिए जो संघर्ष चलाया है वह कुछ पूँजीवादी और

मैं स्वयं राजनांदगाँव गया, परंतु तब तक वहाँ पर शराब ठेकेदार सरदार सुरजीत सिंह भाटिया के पुत्र को मार डाला गया था। वहाँ मैंने राजनांदगाँव कपड़ा मजदूर संघ के साथियों को नियोगीजी के पत्र के बारे में बताया। नियोगीजी ने पत्र में लिखा था, " कांग्रेस की इस लड़ाई में हम उनका साथ नहीं देंगे। हमारी लड़ाई दूसरी है। हमारी सिख समुदाय से कोई लड़ाई नहीं है। " मैंने भी मीटिंग में कहा, " इंदिरा गांधी की हत्या की सजा सिर्फ उनके हत्यारों को ही मिलनी चाहिए। सारे सिख समुदाय को क्यों दोषी माना जाये ?" जय स्तम्भ चौक के पास एक जन सभा हुई जिसमें कहा गया, " इंदिरा जी को मारने वाले व्यक्ति विशेष को दंड मिलना चाहिए, पूरी कौम को नहीं। " इसके बाद वहाँ कोई दुःखद घटना नहीं हुई।

इस बीच राजहरा में सिखों के सुरक्षित होने की खबर आस-पास के इलाकों में फैल चुकी थी। इसके कारण रायपुर, बिलासपुर, दुर्ग आदि से सिख लोग राजहरा आने लगे। कई तो मुंडन कराकर व दाढ़ी बनवाकर आये। जबलपुर तक के सिख यहाँ शरण लेने आये। इस तरह उन दिनों दल्ली राजहरा सिखों के लिए शरणस्थली बना रहा।

❑

(अमन कुमार नम्र द्वारा लिये गये साक्षात्कार पर आधारित।)

छत्तीसगढ़ का निर्माण-गीत

श्याम बहादुर ' नम्र '

छमुमो की 2 अक्तूबर 1989 को रायपुर में आयोजित विशाल रैली में नियोगी के भाषण में उठाये गये मुद्दों के आधार पर और उन्हीं के आग्रह पर लिखा गया समूह गीत। — *स.*

नया छत्तीसगढ़ हमको बनाना है, बनायेंगे।
नया भारत हमें ही तो बनाना है, बनायेंगे।

गरीबों, देशभक्तों की, दलालों पर फतह होगी।
लुटेरों के लिए जिसमें, न कोई भी जगह होगी।
उन्हीं का राज होगा, जो कि मेहनत से कमायेंगे।

जन शिक्षण पोस्टर (छमुमो)

पूँजीपतियों की जागीर नहीं .....

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का नजरिया

छत्तीसगढ़ी कौन ?

1. छत्तीसगढ़ी वह है जो छत्तीसगढ़ के भौगोलिक क्षेत्र में ईमानदारी से मेहनत-मजदूरी कर अपना जीवन निर्वाह करता है।
2. जो छत्तीसगढ़ की मुक्ति के लिए समर्पित है।
3. जो सामंती शोषण नहीं करता।
4. जो पूँजीवादी व्यवस्था का अंत चाहता हो।
5. जो छत्तीसगढ़ का जनवादी विकास चाहता हो।
6. जो अंतर्राष्ट्रीय सर्वहारा से भाईचारा रखता हो।
7. ऐसा व्यक्ति जो परम्परागत रूप से छत्तीसगढ़ के भू-भाग का निवासी रहा हो, पर अब कमाने-खाने के लिए दूसरे प्रांत में बस गया हो और जो शोषण न करता हो।
8. **अन्य राष्ट्रीयताओं के जनसमुदाय** में से वे व्यक्ति जो कि छत्तीसगढ़ के औद्योगिक क्षेत्र में ईमानदारी और मेहनत से अपनी जीविका निर्वाह करते हों, साथ ही यहाँ स्थायी रूप से बसने का इरादा रखते हों और छत्तीसगढ़ के आर्थिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक विकास में श्रद्धा के साथ हाथ बँटाते हों।

छत्तीसगढ़ के दुश्मन

सामंतवादी (मालगुजार, साहूकार) और अर्द्ध-सामंतवादी (ठेकेदार एवं दलाल नौकरशाह) प्रवृत्ति के लोग छत्तीसगढ़ी जनता के दुश्मन हैं, **भले ही वे छत्तीसगढ़ में पैदा हुए हों और छत्तीसगढ़ी बोलते हों।**

छत्तीसगढ़ के पिछड़ेपन के कारण

क) औपनिवेशिक ताकतों द्वारा थोपा गया आर्थिक ढाँचा, औद्योगिक नीति एवं अंधाधुंध मशीनीकरण।

ख) सामंती ग्रामीण अर्थनीति एवं अर्द्ध-सामंती ठेकेदारी पद्धति।

ग) भूमि से कम उत्पादकता।

(छमुमो द्वारा प्रसारित ' दिशा, लक्ष्य और कार्यक्रम ' पुस्तिका से उद्धृत।)

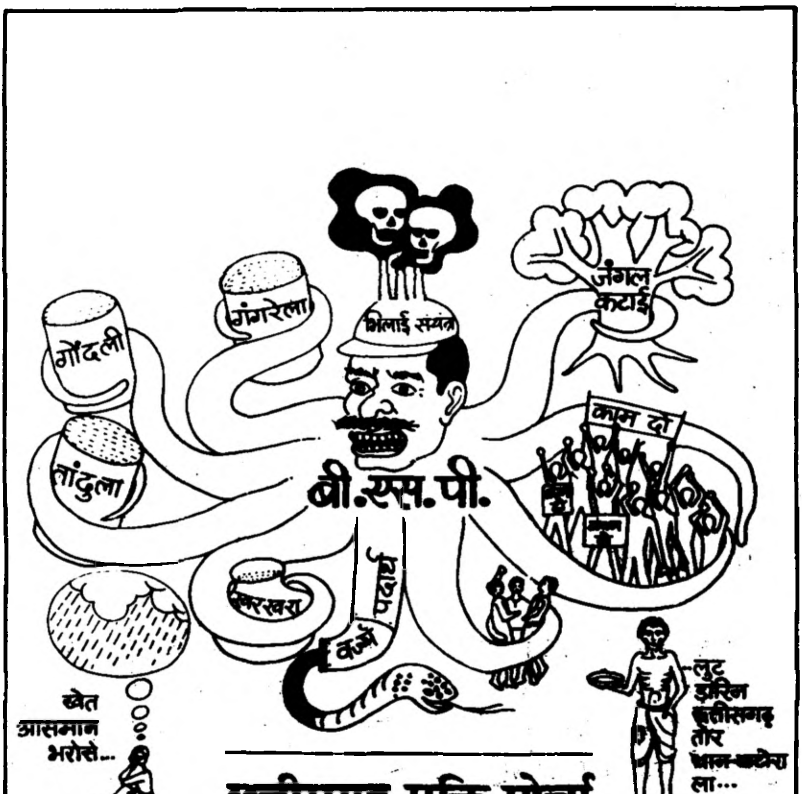

भिलाई स्टील प्लांट और छत्तीसगढ़ का पिछड़ापन

छत्तीसगढ़ के विकास के प्रति उदासीन यहाँ के राजनेताओं ने चुनाव की राजनीति को ही अपना लक्ष्य बना रखा है जिसके कारण इस अंचल की जन समस्याओं को कोई भी राजनैतिक दल आज नहीं उठा रहा है। सिद्धांतविहीन लहर राजनीति की कड़ी आलोचना करते हुए छत्तीसगढ़ के विकास की एक वैकल्पिक रूपरेखा तैयार करने की दिशा में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा से सम्बंधित लगभग 30 जन संगठनों के करीब 500 प्रतिनिधियों ने आज रायपुर के सिंधु भवन में ' छत्तीसगढ़ के विकास के लिए विकल्प की तलाश ' विषय पर आयोजित विचार गोष्ठी व सम्मेलन में भाग लिया। . . . . . . सम्मेलन में इस तथ्य को स्वीकारा गया कि वामपंथी हो या दक्षिणपंथी, किसी भी राजनैतिक दल ने आज तक छत्तीसगढ़ के विकास पर कोई भी ठोस नीति या कार्यक्रम नहीं पेश किया है। ' पृथक छत्तीसगढ़ ' का नारा बुलंद करने वालों ने भी आज तक विश्लेषण के आधार पर यह नहीं बताया है कि छत्तीसगढ़ का शोषण कैसे हो रहा है, न ही शोषण बंद करने का कोई कार्यक्रम जनता के सामने पेश किया है। इस सम्मेलन में यह निर्णय लिया गया है कि छत्तीसगढ़ के विकास पर एक दस्तावेज तैयार किया जायेगा जिसे प्रजातांत्रिक तरीके से जनता के बीच चर्चा का विषय बनाया जायेगा।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा उद्योग के वर्तमान विकास में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और विदेशी पूँजी के बढ़ते हुए दबाव पर चिंता व्यक्त करता है जिसने छत्तीसगढ़ के जन-जीवन को हर स्तर पर प्रभावित कर रखा है। यूनियन कार्बाइड जैसे खूँखार पूँजीपति पर अंकुश लगाने के लिए जन आंदोलन ही एक मात्र रास्ता है, ऐसा विचार मोर्चे का है। अगर इन विदेशी पूँजीपतियों पर अंकुश न लगाया गया तो देशी पूँजी का विकास असम्भव है। देशी पूँजी के विकास से ही देश की मेहनतकश जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उद्योग का विकास हो सकता है। ऐसा करने से ही देश में काश्तकारी (खेती) और कुटीर उद्योग से जुड़े तमाम मेहनतकश परिवारों, जैसे कुम्हार, लोहार, बुनकर, मैन्युअल खदानों में जुड़े मजदूरों आदि, के जीवन और रोजगार की रक्षा की जा सकती है। उद्योगों में मजदूरों की हिस्सेदारी महज एक बकवास होगी जब तक कि गुप्त मतदान के जरिये मजदूर यूनियनों को मान्यता न दी जाये। उत्पादन की वस्तुओं का बाजार, कच्चे माल के स्रोत और आर्थिक मुद्दों पर भी मजदूर संगठनों की हिस्सेदारी होनी चाहिए ताकि इन साधनों पर सब का नियंत्रण हो सके।

कृषि के क्षेत्र में आज यह बात तय हो चुकी है कि हरित क्रांति एक भ्रम था जिससे किसान कर्ज से नष्ट हो गये और जमीन रासायनिक खाद व जहरीली दवाई से नष्ट हो गयी। बड़े बाँधों के निर्माण से खेतों को पानी मिलना तो दरकिनार रहा, उलटे करोड़ों आदिवासी परिवार उजाड़ दिये गये।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की मान्यता है कि छोटे बाँधों के जरिये जैसे स्टॉप डैम, नलकूप आदि के विकास के साथ इस अंचल में तांदुला, खरखरा, नंदिनी और गंगरेल का पानी भिलाई इस्पात संयंत्र जैसे महाउद्योगों को न देकर किसानों के उपयोग के लिए रखा जाये। किसानों के ऊपर दर्शाये गये सभी कर्जों को परिदान कर देना चाहिए और भविष्य में ऐसी परिस्थिति निर्माण न की जाये कि किसान कर्ज से दब जाये। इसके लिए उपज की सही कीमत की नीति बनायी जाये।

मौजूदा वन कानून ही वन के विनाश का कारण है। इस कानून के तहत वन कर्मचारियों

ऐसा नहीं है कि छत्तीसगढ़ में कृषक व सामंती उत्पादन-सम्बंध नहीं हैं। बल्कि, यह कहना चाहिए कि इन जिलों में भी राजे-रजवाड़े रहे हैं। आदिवासी-बहुल क्षेत्रों में गैर-आदिवासी नरेश रहे हैं। बस्तर, सरगुजा, जशपुर जैसे आदिवासी-बहुल क्षेत्रों के नरेश गैर-आदिवासी थे। अर्द्ध-आदिवासी एवं हरिजन व पिछड़ी जाति क्षेत्रों की भी यही स्थिति है। इस सम्बंध में काँकेर, राजनांदगाँव, शक्ति, बैकुंठपुर जैसे ठिकानों का उदाहरण दिया जा सकता है। जिन नरेशों को आदिवासी श्रेणी में रखा भी जाता है, वे राजपूत या क्षत्रिय कहलाने में अधिक गर्व महसूस करते हैं। लेकिन, विधानसभा और लोकसभा में पहुँचने के लिए गोंड-आदिवासी श्रेणी में शुमार होना उनकी राजनैतिक मजबूरी है। सामंती-व्यवस्था से प्रभावित इन क्षेत्रों में एक स्थायी कृषक समाज जरूर विकसित हुआ है। इस समाज की विश्व-दृष्टि और भीतरी आदिवासी क्षेत्रों के समाज की विश्व-दृष्टि में गहरा अंतर है। लेकिन, एक बुनियादी समानता भी है। दोनों ही उत्पीड़न एवं शोषण के शिकार हैं। दोनों ही समाज बहुआयामी 'विलगन-प्रक्रिया' से पीड़ित हैं। दोनों ही समाजों में बाहरी व्यक्तियों ने जमीन, जोरू और झाड़ का जम कर दोहन किया है। भू-लूट हुई है। उड़ीसा, रायपुर, राजस्थान और आंध्र प्रदेश के ठेकेदारों ने वनों की कटाई की है। मारवाड़ियों ने जमीन के साथ-साथ धान, कोदों-कुटकी और लघु वन-उत्पादों को लूटा है। उन्होंने छत्तीसगढ़ के बड़े कस्बों से लेकर वन-ग्रामों तक ऋणग्रस्तता फैलायी है।

छत्तीसगढ़ के क्षेत्रों में आधुनिक नौकरशाही और विकास-जाल के पहुँचने के बाद उत्पीड़न-शोषण की प्रक्रिया और तेज, गहरी और पेचीदा हो गयी। जिले के आलाअफसर से लेकर पटवारी व हवलदार तक ठेकेदार व व्यापारियों के साथ मिलकर आदिवासी मानवता के शोषण में जुट गये। जब भिलाई, बैलाडीला, कोरबा आदि क्षेत्रों में औद्योगीकरण की शुरुआत हुई तो स्थितियाँ बद से बदतर बनती चली गयीं। औद्योगीकरण की छत्रछाया में पहुँची ठेकेदारी प्रथा ने दर्दनाक [illegible] आदिवासियों पर कहर ढाना शुरू किया। नये पंजाबी, आंध्रप्रदेशी, मारवाड़ी ठेकेदारों ने आदिवासी-हरिजन-पिछड़े वर्गों के श्रम का जमकर दोहन शुरू कर दिया। भिलाई, दुर्ग, रायपुर, जगदलपुर, बिलासपुर, रायगढ़, कोरबा आदि शहरी क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था पर [illegible] पंजाबी, सिंधी और मारवाड़ी हावी हो गये। इन बाहरी तत्वों ने जहाँ शहरों में भूमिहीन एवं साधनहीन आदिवासी-हरिजनों के श्रम की लूट [illegible] में भी आदिवासी [illegible] के [illegible] आर्थिक आधारों को हस्तगत करके छोड़ा। पाठकों को जानकर [illegible] कि दो[illegible] ठेठ भीतरी गाँवों जैसे गीदम, दंतेवाड़ा, [illegible], [illegible] आदि में जोधपुर, बीकानेर, लुधियाना, कन्नौज, कानपुर आदि [illegible] और राजपूत व्यापारियों, ठेकेदारों और भूस्वामियों की घुसपैठ [illegible]। [illegible] शोषक तत्वों ने कालांतर में शहरों में पहुँचकर होटल और दुकानें खोल ली हैं। आदिवासी क्षेत्रों में जो थोड़ा बहुत 'सरप्लस' निर्मित भी हुआ, इन बाहरी तत्वों ने उसे [illegible] कर शहरों में निवेशित कर दिया। इस प्रकार छत्तीसगढ़ भूमि के असली वारिस आधुनिक समाज की [illegible] सिवाय कुछ नहीं बन सके।

इसी छत्तीसगढ़ के हजारों श्रमिक प्रति वर्ष अपने गाँवों से उत्तर की ओर रोजगार की तलाश में पलायन करते हैं। अनेक छत्तीसगढ़िया मजदूर, मजदूर-ठेकेदारों के साथ लेह तक पहुँच जाते हैं। सीमांत-सड़कों के निर्माण में वे जुट जाते हैं। लेकिन, अत्यधिक शीत का शिकार होकर वे दम तोड़ देते हैं, क्योंकि छत्तीसगढ़ एक बेहद गर्म इलाका है। ये मजदूर दिल्ली सहित विभिन्न

असमान विकास से आहत छत्तीसगढ़

रामशरण जोशी

छत्तीसगढ़ में कई सामाजिक-आर्थिक व्यवस्थाएँ एक साथ जीती हैं लेकिन विकास की दृष्टि से इन व्यवस्थाओं में गम्भीर विषमता और विरोधाभास भी है। एक तरफ पूर्व सामंती एवं आदिम कृषि व्यवस्था है, दूसरी तरफ अत्यन्त विकसित औद्योगिक व्यवस्था है। एक ओर लेन-देन पर टिकी मुद्राहीन अर्थव्यवस्था है, दूसरी ओर आधुनिक मुद्रा-आधारित सशक्त उपभोक्तावादी अर्थव्यवस्था है। इन विषमतावादी विकास अवस्थाओं के बीच भयानक अंतर्विरोध हैं। इन अंतर्विरोधों और उनकी पृष्ठभूमि की पड़ताल किये बिना छत्तीसगढ़ तथा नियोगी की रणनीति को नहीं समझा जा सकता।

छत्तीसगढ़ के सातों जिलों का ज्यादातर हिस्सा पूर्व-औद्योगिक युग से गुजर रहा है। बिलासपुर, रायपुर और दुर्ग में औद्योगीकरण के कुछ टापू जरूर दिखाई देते हैं। बस्तर के बैलाडीला क्षेत्र में भी सघन स्तर का औद्योगीकरण हुआ है। पर इन चंद टापुओं ने छत्तीसगढ़ के उत्पादन-सम्बंधों में कोई गुणात्मक बदलाव को जन्म नहीं दिया है। बल्कि, दुर्ग, भिलाई और दल्ली राजहरा (नियोगी की कर्मस्थली) से सटा बस्तर तो किन्हीं अर्थों में पूर्व-कृषक व सामंती अवस्था में साँस ले रहा है। बस्तर के एक बड़े भू-भाग अबूझमाड़ में आज भी 'शिफ्टिंग-कल्टीवेशन' (झूम-खेती) होती है। इस क्षेत्र के हजारों अबूझमाड़िया आदिवासी एक स्थान से दूसरे स्थान खेती करते रहते हैं। स्थान बदल-बदल कर खेती करने का नतीजा यह निकलता है कि समाज में 'सरप्लस-निर्माण'[1] की रफ्तार बेहद धीमी रहती है। वैसे, सभी जिलों के भीतरी क्षेत्रों में भी, 'सरप्लस-निर्माण' की रफ्तार मध्य प्रदेश के अन्य क्षेत्रों (मालवा, महाकोशल, विंध्याचल) की तुलना में काफी धीमी है क्योंकि, बस्तर, बिलासपुर, सरगुजा, रायगढ़, रायपुर आदि जिलों के भीतरी क्षेत्रों में 'वस्तु-विनिमय अर्थव्यवस्था'[2] प्रचलित है। इस अर्थव्यवस्था से 'सरप्लस-निर्माण' की गति तेज नहीं होती। बल्कि, सामाजिक गतिशीलता भी बुरी तरह से प्रभावित रहती है। उसका विस्तार नहीं हो पाता है। समाज के द्वंद्व भी धारदार नहीं हो पाते हैं, बल्कि आर्थिक अंतर्विरोध भी कुंद रहते हैं। ऐसे समाजों में सांस्कृतिक अंतर्विरोध प्रथम स्थान पर होते हैं।

---

[1] पूँजीवादी उत्पादन में श्रम-क्रिया के फलस्वरूप अतिरिक्त-मूल्य का निर्माण। यानी, जब पैदावार के उत्पादन में खर्च हुए तत्व (उत्पादन के साधन और श्रम-शक्ति) के मूल्य से पैदावार का मूल्य अधिक हो और इन दोनों के अंतर — अतिरिक्त-मूल्य — का पूँजीवादी रूपांतरण हो।

[2] वस्तुओं के आदान-प्रदान पर आधारित व्यापार-व्यवस्था, जिसमें मुद्रा का उपयोग नहीं होता।

आज के बासी काल के साग। अपने घर में काके लाज।।

इसी के तहत ' छत्तीसगढ़ का खेड़ा, मथुरा का पेड़ा ' बन गया और छत्तीसगढ़ की पहचान ' बासी '[1] खाने वाले के रूप में होने लगी — ' तीरथ म कासी, छत्तीसगढ़ म बासी '। दूसरी छवि दमन और अपमान की थी, जिसको लोकजीवन ने ' हाना ' (कहावत) के माध्यम से व्यक्त किया —

पहिले जूता पीछे बात। तब आवै छत्तीसगढ़ हाथ।।

सम्भवतः यह प्रदत्त छवि[2] थी। शासक दल का नजरिया था।

शासक पक्ष की समूची वैचारिक शक्ति ने छत्तीसगढ़ियों में एक नकारात्मक चेतना को अनुप्राणित किया था और स्वामिभक्ति, बासी व कर्तव्यनिष्ठा के गुणों की अत्यधिक प्रशंसा करते हुए इनमें और भी अधिक हीन विचारों को जन्म दिया। तभी तो वे अपनी अधीनता को न केवल सह्य[3] अपितु स्पृहणीय[4] मानने के लिए प्रोत्साहित हुए थे। इस प्रकार की वैचारिक शक्ति और उससे मिलती-जुलती प्रक्रिया ने छत्तीसगढ़ियों को दूरी के प्रति संवेदनशील बना दिया था। इसलिए वे अपने पिछड़ेपन को अपना अस्तित्व मानकर चुपचाप बैठ गये। किंतु तभी ' उलटा-पुलटा ' की स्थिति आती है और हीनता की भावना से जनता उबरने का प्रयत्न करती है और विद्रोह करने के लिए तैयार होती है। छत्तीसगढ़ की जनता के ' अस्वीकृति के स्वरों ' से यहाँ का औपनिवेशिक इतिहास भरा पड़ा है। यह विद्रोह की चेतना थी जो भेदभाव के कारण जन्मी थी और जिसका मूल स्वर था — प्राधिकार की प्रतीक सभी वस्तुओं का विनाश।

विद्रोह ही एक मात्र ऐसा आधार नहीं है जिससे छत्तीसगढ़ आत्मछवि बनाता है। ब्रिटिश उपनिवेश के समय उसकी यह आत्मछवि उन लोगों के द्वारा थोपी जा रही थी, जो अपने वर्ग, जाति और आधिकारिक स्थिति से इस पर शक्ति का इस्तेमाल कर रहे थे। संक्षेप में, यहाँ का आम आदमी अपनी सामाजिक स्थिति के आधार पर अपनी योग्यताओं और गुणों से परिचित नहीं हुआ, अपितु अपने से बड़े लोगों के उपहास के कारण उसे समभिबोध हुआ — ' पेट के भरदे पीठ के भरदे, मन के भरेया कोन ' — यह हल्बी लोकगीत इसी चेतना की ओर संकेत करता है।

छत्तीसगढ़ की संस्कृति ने लौकिक संस्कृतियों से आविच्छिन्नता[5] का भाव रखा है जो महान भारतीय संस्कृति से अविरल अनुप्राणित होती रहती है। यहाँ ऊपरी तौर पर तीन भाषा परिवारों के दर्शन होते हैं, किंतु तीनों एक दूसरे से कहीं-न-कहीं जुड़े हुए हैं। छत्तीसगढ़ी एक आह्लादपूर्ण तथा अनाग्रह विभाषा[6] है। तकनीकी तौर पर यह पूर्वी हिन्दी की एक बोली है — राम की भाषा, अवधी की सहोदरा। यह सरिया बनकर कभी उड़िया से मिल जाती है, तो हल्बी में परिणित होकर मराठी के साथ द्रविड़ बोलियों और अंततः तेलुगु में निमज्जित[7] हो जाती है। नागपुरी के रूप में इसका मिलन मुंडा भाषाओं से होता है। छत्तीसगढ़ी समूचे छत्तीसगढ़

---

[1] रात का पका हुआ चावल जो छत्तीसगढ़ी लोग सुबह खाने के लिए हंडिया में पानी में डुबाकर रख देते हैं। [2] किसी अन्य के द्वारा दी हुई। [3] जिसे आसानी से सहा जाये। [4] प्राप्त करने योग्य या वांछनीय। [5] सांस्कृतिक क्रियाकलापों से पनपी संस्कृति से जुड़ाव। [6] मधुरता एवं सरलता लिए हुए विशिष्ट भाषा। [7] डूब जाना या मिल जाना।

छत्तीसगढ़ के प्राचीनतम पूर्वज मुंडा, द्रविड़ तथा आर्य हैं, किंतु उन सबमें एकरसता है —

गँवई गाँव में सब एके, एगा —

कोनो गोंड कोनो बाम्हन, कोनो ठलहा कोनो कमिया।

मुंडा ऑस्ट्रिक समूह के हैं जो 3,000 ईसा पूर्व छत्तीसगढ़ में आये। गदबा, मुंडा, खड़िया, कोरबा, बिरहोड़, नगेसिया, सौंता, माझी, मवासी, मझवार आदि जनजातियों के रूप में अंकित ये समूह आर्थिक-प्राविधिक[1] विकास के विभिन्न स्तरों पर हैं — आखेटक[2]-खाद्य संकलन[3] स्तर, आरम्भिक कृषि स्तर तथा नवपाषाणयुग का विकसित कृषि स्तर। उनकी सामाजिक संरचना क्रमशः जटिल होती जा रही है।

छत्तीसगढ़ के आदिम कबीलों में दूसरा क्रम द्रविड़-भाषी कबीलों का है, जो 2,800 ईसा पूर्व में सिंधु नदी के तट से आये थे। इनके अग्रज ब्राहुई आज भी आदिम स्थिति में पाकिस्तान के अनेक जिलों में रहते हैं। इस कबीले की अनेक शाखाएँ यहाँ फैल गयीं, जिन्हें ओराँव, गोंड तथा धुर्वा या पर्जा नामों से सम्बोधित किया जाता है। इन्होंने लिंगों की संस्कृति और घोटुल की संरचना से न केवल शिव को महादेव रूप दिया, अपितु संस्कृत नाटकों के मंचन हेतु उन्मुक्त 'थियेटरों' का घोटुलों के रूप में विकास भी किया। इनकी अनेक शाखाएँ-प्रशाखाएँ कालांतर में विकसित हुईं। कृषि की एक विशिष्ट प्रणाली के विकास और कपड़ा बुनने की कला में निखार देने का श्रेय इन्हें मिलना चाहिए। तीसरा कबीला 800 ईसा पूर्व में आया और उसने मैदानी क्षेत्र में अपनी संस्कृति विकसित की। बाद में तीनों में परस्पर मिलन की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई, किंतु अधिकतर ने जनजातीय संस्कृतियों के रूप में अपना अस्तित्व बनाये रखा।

जातीय संरचना की प्रक्रिया में कालांतर से छत्तीसगढ़ में चार वर्गों का उदय हुआ। प्रथम वर्ग के अंतर्गत वे आरण्यक जनजातियाँ[4] हैं, जिनमें बिंझवार, भूमिया, बैगा, कमार तथा अबूझमाड़िया शामिल हैं। आज भी बाहरी दुनिया से ये असम्पृक्त (अछूती) हैं। द्वितीय वर्ग के अंतर्गत वे आटविक जनजातियाँ[5] हैं जो सुदूर इतिहास में कभी शासक थीं। इनमें गोंड, माड़िया, हल्बा तथा धनवार गिनी जा सकती हैं। बस्तर में 'सात माड़िया राजघरानों' के अभिलेखीय प्रमाण विद्यमान हैं — जित्वा यः पटुसप्तमाड़ियानृपान्। इनमें से अनेक अब मैदानी भागों में बस गये हैं और सामान्य खेतिहरों-सा जीवन बिताते हैं। कवर सातगढ़ जमींदारी के शासक थे, तो कोरबा कोरबा के जमींदार। धनवार एक धनुर्धर कौम थी, जो आखेट (शिकार) पर नियंत्रण के कारण कृषि से जुड़ गयी। तीसरे वर्ग के अंतर्गत वे प्रसंग किस्म के चारण हैं जिन्हें आज हम बंजारा, बसदेवा, देवार, ओझा, भीरा तथा परधान आदि के नामों से जानते हैं। ये देश की 'वाचिक परम्परा'[6] के साक्षी हैं और इन्हीं के माध्यम से संस्कृत-पुराण 'आदिवासी पुराणों' में उतर गये। चतुर्थ वर्ग के अंतर्गत छत्तीसगढ़ की शेष जातियाँ आती हैं, जिनमें सतनामी, तेली, कुर्मी, अहीर या राउत, पनका तथा भरेवा आदि का उल्लेख किया जा सकता है। आखेटक (शिकारी), मत्स्यजीवी (मछुआरे), भोजनसंग्रही तथा खानाबदोश किस्म के लोगों में आक्रामकता या स्वयंस्फूर्तता[7] मिलती है, जबकि खेतिहर लोग अपने समूह के साथ अनुकूलता प्रकट करने के साथ सीधे-सादे हैं।

---

[1] तकनीकी या यांत्रिक [2] शिकार पर निर्भरता। [3] भोजन-सामग्री एकत्र करने पर निर्भरता।

[4] वन-केंद्रित जीवन बिताने वाली आदिवासी या वनवासी जनजातियाँ।

[5] वे आदिवासी या वनवासी जनजातियाँ जो या तो स्वयं शासक थीं या शासन-सत्ता से जुड़ी हुई थीं।

[6] पढ़कर सुनाने-समझाने की परम्परा। [7] स्वतःस्फूर्त होने का भाव।

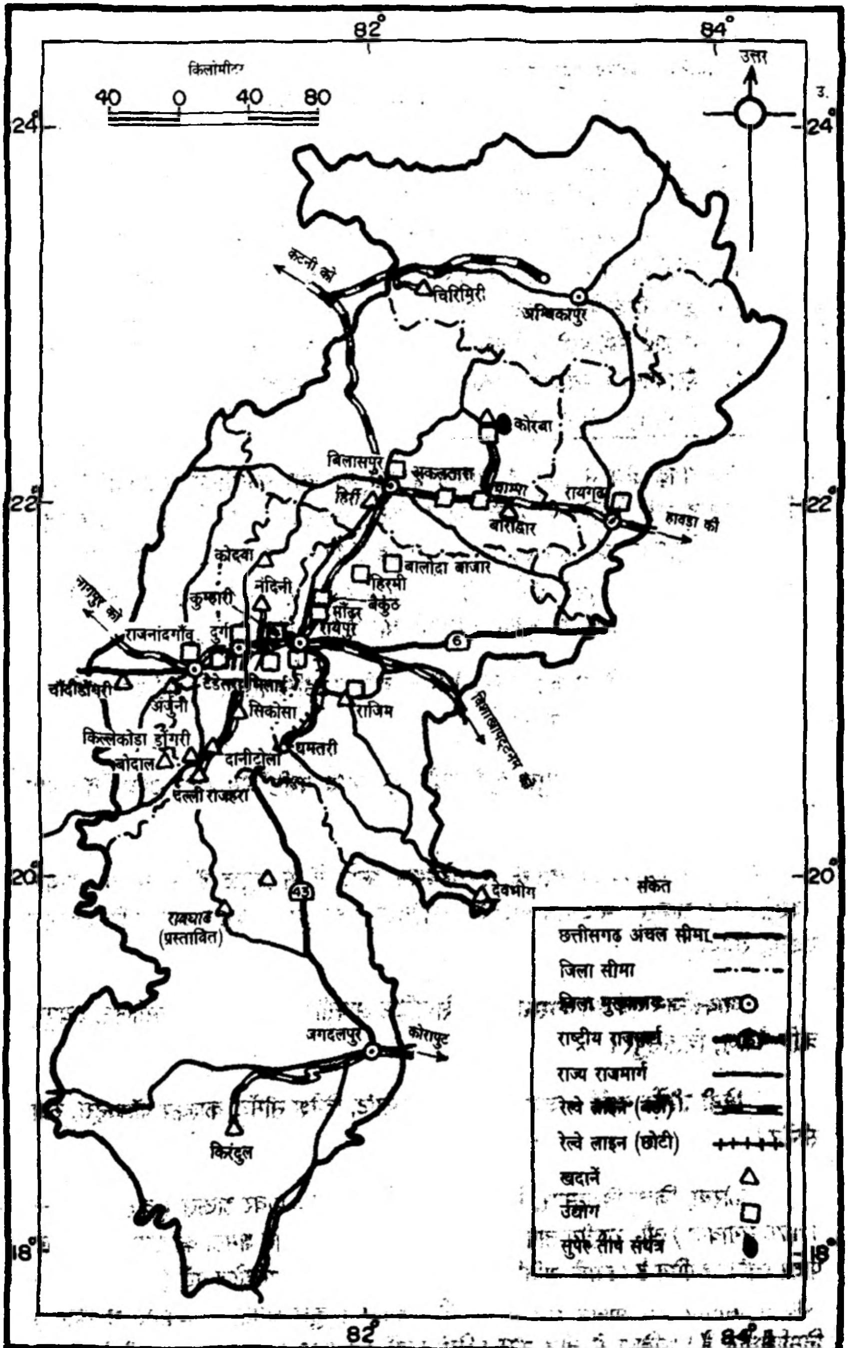

छत्तीसगढ़ : परिवहन, खदानें एवं उद्योग

18. **प्रति लाख जनसंख्या पर शासकीय ऐलोपैथिक चिकित्सालयों में शैयाओं की संख्या**[1] — रायपुर (43.9), दुर्ग (21.9), राजनांदगाँव (26.9), बिलासपुर (24.8), सरगुजा (30.0), रायगढ़ (23.2), म. प्र. (41.3), अखिल भारत (51.4)।

19. **प्रति व्यक्ति व्यापारिक बैंकों द्वारा ऋण वितरण (रु.) : दिसम्बर 1983 तक**[1] — रायपुर (226), दुर्ग (245), राजनांदगाँव (109), बिलासपुर (130), सरगुजा (67), रायगढ़ (77), म. प्र. (227), अखिल भारत (592)।

20. **फसलें** — धान प्रमुख फसल जो कुल बोये हुए क्षेत्र की 76.9% भूमि पर उगायी जाती है। कोदों, गेहूँ, मक्का, ज्वार, बाजरा इस क्षेत्र की अन्य फसलें हैं। दालें बोये हुए क्षेत्र की 22% भूमि पर उगायी जाती हैं — तिवड़ा इनमें प्रमुख है। बोये हुए क्षेत्र की 8.6% भूमि पर तेलबीज उगाये जाते हैं जिनमें तिल प्रमुख है।

21. **सिंचाई** — मुख्यतः वर्षा पर आधारित; बोये हुए क्षेत्र की मात्र 12% भूमि सिंचित।

22. **उद्योग** —

नाम	उत्पाद	वार्षिक उत्पादन क्षमता
1. भिलाई स्टील प्लांट, भिलाई	इस्पात व इस्पात के अन्य उत्पाद	40 लाख टन
2. भारत अल्युमिनियम क., कोरबा	अल्युमिनियम	2.2 लाख टन
3. ए. सी. सी. सीमेंट प्लांट, जामुल (भिलाई)	सीमेंट	4 लाख टन
4. सी. सी. आई. सीमेंट प्लांट, माँढर	सीमेंट	4 लाख टन
5. सी. सी. आई. सीमेंट प्लांट, अकलतारा	सीमेंट	4 लाख टन
6. सेन्चुरी सीमेंट प्लांट, बैकुंठ	सीमेंट	8 लाख टन
7. रेमंड सीमेंट वर्क्स, बिलासपुर	सीमेंट	4 लाख टन
8. मोदी सीमेंट प्लांट, बालोदा बाजार	सीमेंट	10 लाख टन
9. बी. एन. कॉटन मिल्स, राजनांदगाँव	कपड़ा	30,180 स्पिंडल्स
10. रायगढ़ जूट मिल्स, रायगढ़	जूट	14,000 टन
11. दक्षिण-पूर्व रेलवे वैगन रिपेयर वर्कशाप, रायपुर		

(तालिका अगले पृष्ठ पर जारी)

[1] बस्तर-सम्बंधी आँकड़े उपलब्ध नहीं।

9. **नदियाँ** — महानदी, शिवनाथ, बैनगंगा, हसदो, जोंक, खारून, माँड, अरपा, शबरी, इंद्रावती, शंखिनी, डंकिनी, गोदावरी आदि। छत्तीसगढ़ का पानी मुख्यतः तीन नदियों के माध्यम से बंगाल की खाड़ी में जाता है — महानदी (58.5% क्षेत्र), गोदावरी (28% क्षेत्र) व सोन (13.4% क्षेत्र)।

10. **भाषाएँ** — काफी बड़े भू-भाग में छत्तीसगढ़ी प्रमुख भाषा है; अन्य अंचलों में विभिन्न आदिवासी समुदायों द्वारा हल्बी, गोंडी एवं उराँव बोली जाती है। बस्तर के दक्षिणी अंचल में तेलगू एवं उड़ीसा के सीमावर्ती क्षेत्र में उड़िया प्रचलित है। सारे इलाके में हिन्दी कामचलाऊ भाषा है, हालाँकि इसका उपयोग शहरों में ही होता है। सरकारी दफ्तरों और कचहरी की भाषा हिन्दी है।

11. **खनिज** — लौह अयस्क, कोयला, चूना पत्थर, डोलोमाइट, क्वार्ट्जाइट, ताँबा, यूरेनियम, टिन, बॉक्साइट, फेल्सपार, कोरंडम, मेंगनीज़ आदि के विशाल भण्डार।

खनिज	सम्पदा (करोड़ टन)	उत्पादन (लाख टन) वर्ष 1998
1. कोयला	200.0	180.0
2. लौह अयस्क	40.0	78.0
3. डोलोमाइट	8.6	4.9
4. बॉक्साइट	4.1	0.7
5. चूना पत्थर	—	1.1
6. फायर क्ले	—	0.6

12. **वन एवं वनोपज** — सागौन, साल, महुआ, तेंदू, सरई, साजा, बीजा एवं बाँस के बड़े व सघन जंगल।

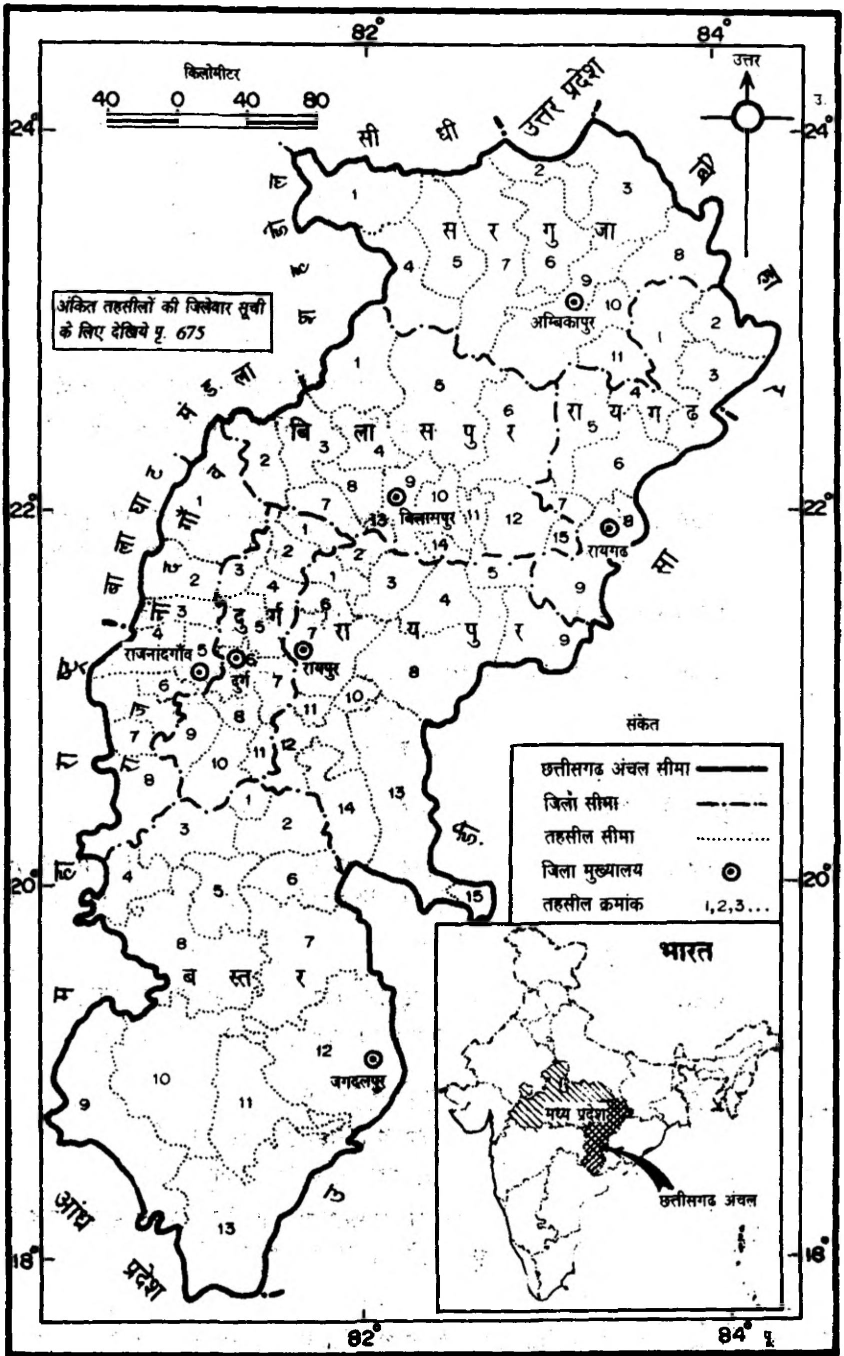

छत्तीसगढ़ : प्रशासनिक

छत्तीसगढ़ के मुक्ति के खातिर . . . .

फागूराम यादव

जन संगठन, जन आंदोलन, जन युद्ध के रस्ता मा आघू बढ़ो
छत्तीसगढ़ के मुक्ति के खातिर, संगी एही जतन करो।

छत्तीसगढ़ के वीर बहादुर इही बात बताये गा,
किसान अऊ मजदूर संगवारी के हित के खातिर कहाये गा,
ये भुँइया के हम सब बेटा, ये माटी के रक्षा करो।
छत्तीसगढ़ के मुक्ति के खातिर . . . . ।

ये भुँइया के मालिक हावे इहाँ के मजदूर किसान हा गा,
तेकर बेटा सरहद मा लड़त हे, देश के उही जवान हे गा,
अत्याचार शोषण ला भगाबो, कदम कदम सब बढ़ते चलो।
छत्तीसगढ़ के मुक्ति के खातिर . . . . ।

शोषणवादी कालाबाजारी भगाये के रस्ता हावे गा,
बन्नेच बात बतायो संगी जब सबके मन भावे गा,
गाँव-गाँव मा मोर संगवारी पहिली तुम संगठन करो।
छत्तीसगढ़ के मुक्ति के खातिर . . . . ।

एकता के ताकत भारी होये हर माँग पूरा करथे,
वीर नारायण सिंह ठाकुर हा एकर बर कोशिश करथे,
एकता ला मजबूत बनाके सब अधिकार लेते चलो।
छत्तीसगढ़ के मुक्ति के खातिर . . . . ।

❑

(छमुमो के सौजन्य से।)

‘ शोषकों की जागीर नहीं, छत्तीसगढ़ हमारा है ’, ‘ हमारे देशप्रेम की पहचान . . . . हमारा छत्तीसगढ़ ’ और ‘ नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़ ’, इन तीन बुलंद और सार्थक नारों को सुनकर शासक-शोषक वर्ग घबराहट से कॉंपने लगता है। इसके विपरीत शोषित, पीड़ित जनता के दिल में आता है अपार आनंद, मन में आते हैं नये समाज के सपने। साथ में अपनी राष्ट्रीयता की पहचान प्रतिपादित करने की आकांक्षा प्रबल हो उठती है। राष्ट्रीयता के सवाल पर जनमानस को व्यापक सामाजिक हित में आंदोलित करने में नियोगी के ये तीन नारे सचमुच अनूठे हैं।

इन नारों के साथ नियोगी ने विकास की दिशा और प्राथमिकताओं का सवाल भी जोड़ दिया। असली बात छत्तीसगढ़ को अलग राज्य का दर्जा देने की नहीं थी, वरन् एक ‘ छोटा और सुंदर राज्य छत्तीसगढ़ ’ और ‘ शोषणविहीन छत्तीसगढ़ ’ बनाने की थी। इसीलिए नियोगी ने राष्ट्रीयता के स्वशासन का अधिकार हासिल करने के संघर्ष में मजदूर वर्ग की नेतृत्वकारी भूमिका को आवश्यक माना। इस संघर्ष में उनकी ‘ श्रम पुत्र ’ (मजदूर) और ‘ भूमि पुत्र ’ (किसान) की संयुक्त भूमिका की अवधारणा एक विशेष उपलब्धि है। नियोगी ने राष्ट्रीयता के विकास की लड़ाई को ‘ संघर्ष और निर्माण ’ के दर्शन के साथ जोड़कर भारत के नवनिर्माण के प्रश्न को एक नया आयाम दिया है। और साथ में देशप्रेम की एक नयी परिभाषा दी है, जो पूरी तीसरी दुनिया में उठ रहे राष्ट्रीयता के संघर्षों को समताप्रेमी, न्यायशील और जनवादी परिप्रेक्ष्य में ढालने का रास्ता दिखाती है।

इस परिप्रेक्ष्य में नियोगी के उपर्युक्त तीनों नारे, उनका ‘ छोटा और सुंदर राज्य छत्तीसगढ़ ’ का सपना और ‘ संघर्ष और निर्माण ’ का दर्शन भारत के विभिन्न अंचलों में राष्ट्रीयता के विकास के लिए चल रहे संघर्षों को एक [illegible] नयी रोशनी [illegible] हैं। इसी में छिपा है कश्मीर, पंजाब, झारखंड, बोडोलैंड, गोरखालैंड, [illegible] आदि प्रश्नों का लोकतांत्रिक देशप्रेमी समाधान। इसी के गर्भ में से हम देश में सुलगायी गयी साम्प्रदायिक आग को बुझाने और उसकी जगह जनवादी एकजुटता स्थापित करने का [illegible] रास्ता भी खोज सकते हैं। यही है नियोगी का नये भारत का सपना।

इस खंड में और आगे के खंडों में भी [illegible] शब्द का उपयोग इसके मौजूदा राजनैतिक अर्थ में किया गया है। इसे [illegible] अथवा [illegible] का पर्यायवाची मानना भूल होगी। वर्तमान उपयोग में यह शब्द एक ऐसे जनसमुदाय को परिभाषित करता है जिसकी कोई विशिष्ट ऐतिहासिक और सांस्कृतिक पहचान हो और जो [illegible] पर (किंतु जरूरी नहीं) किसी अंचल विशेष से जुड़ा हो। इन अर्थों में भारत अनेक [illegible] है। अंधराष्ट्रवाद की दृष्टि से ऐसी अवधारणा का जिक्र भी करना भारत की एकता के लिए खतरा माना जाता रहा है। इस खंड में इसी संकीर्ण नजरिये को चुनौती दी गयी है।

खंड तीन में नियोगी ने अपने ‘ छत्तीसगढ़ और राष्ट्रीयता का प्रश्न ’ शीर्षक के लेख में स्पष्ट किया है कि यह संकीर्ण दृष्टि हमें ब्रिटिश साम्राज्यवाद से विरासत में मिली है (देखिये

सारा जेल हैरान है

'समकालीन तीसरी दुनिया' के सौजन्य से

भारत डोगरा

नियोगी को अपने अल्प जीवनकाल में एक हजार दिनों से अधिक जेल में यातनापूर्ण जीवन जीना पड़ा था। एक बार जब वे भयंकर उत्पीड़न झेलते हुए बेहद अकेले पड़ गये थे, उस समय का वर्णन करती है यह कविता। — स.

जी हाँ,
सारा जेल हैरान है।
जेलर से खूँखार अपराधी तक,
सब यह गुत्थी सुलझाने को
परेशान हैं
कि आखिर वह कौन सी वजह है
वह कौन सी उमंग है,
कौन सी ताकत है वह,
जिसके बल पर
वह कैदी
अंधेरी कोठरी में रहकर,
जहाँ गर्मी और पसीने में,
गंदगी और बेहाली में,
उसके बाल नोचे गये,
नाखून उखाड़े गये,
निरंतर तड़पाया गया,
रातों जगाया गया,
यह सब झेलकर भी मुस्कराता है,
मीठे बोल बोलता है तो
जोश से नारा भी लगाता है,
उल्लासित होकर, प्रफुल्लित होकर।
कहाँ से मिला यह उल्लास ?
कहाँ से मिली यह ताजगी ?
समझ न पाये हैं जेलर,
समझ न पाये हैं अपराधी।

रहस्य जानता है सिर्फ अमलू चौकीदार,
जिसने एक छोटा-सा मुचड़ा कागज
चुपके से कैदी को थमा दिया था,
जो इतना छोटा था
कि आसानी से गुम जाता,
जो इतना मुचड़ा था
कि आसानी से मिट जाता।
पर उस पर जो अक्षर लिखे गये,
उनके कारण जियेगा वह हजारों साल,
जिन्हें लिखा था
बंगाल के एक गाँव में बसे
एक बूढ़े बाप ने,
लड़खड़ाते हाथों से,
फीकी स्याही से,
जिस पर चंद आँसू भी
ढुलक गये थे।
लिखा था बस इतना
कि अच्छा लगता,
जो बुढ़ापे में
इस बूढ़ी लाठी का सहारा बनते।
पर इतना पवित्र विश्वास है,
तुम्हारी स्वर्गवासिनी माँ की सौगंध
कि जहाँ तुम हो, जो कर रहे हो,
वह इससे भी जरूरी है।
□

(छमुमो के सौजन्य से।)

नियोगी की जेल-यात्रा [1,2]

क्र.	गिरफ्तारी की तारीख	वर्ष	अवधि	घटना संदर्भ	अभियोग/धारा	कहाँ रखा ?	तत्कालीन मुख्य मंत्री	राज्य में सत्तारूढ़ पार्टी
1.	?	1968	कुछ सप्ताह / माह ?	'स्फुलिंग' पत्रिका का प्रकाशन, नक्सलवादी राजनीति में सक्रियता	संदेहास्पद गतिविधियाँ	जगदलपुर जेल	श्री गोविंद नारायण सिंह	संयुक्त विधायक दल
2.	?	1970-71	बारह महीने से कुछ कम	गाँवों में संगठन बनाने के प्रयास, भिलाई में राजनैतिक गतिविधियाँ	निरोधक नजरबंदी अधिनियम (पी. डी. एक्ट)	जगदलपुर जेल	श्री श्यामाचरण शुक्ल	कांग्रेस
3.	?	1971-72	दो-तीन महीने	– वही –	?	दुर्ग जेल	श्री श्यामाचरण शुक्ल	कांग्रेस
4.	?	1974	तीन महीने	– वही –	?	रायपुर सेंट्रल जेल	श्री प्रकाशचंद्र सेठी	कांग्रेस
5.	?	1975-77	तेरह महीने	आपातकाल	मीसा	रायपुर सेंट्रल जेल	श्री प्रकाशचंद्र सेठी	कांग्रेस
6.	2 जून	1977	एक माह पाँच दिन	खदान मजदूरों की माँगों पर आंदोलन	151 अप. प्र. सं.	दुर्ग व बालोद जेल	राष्ट्रपति शासन	जनता पार्टी (केंद्र में)
7.	11 फरवरी	1981	एक माह नौ दिन	शराब माफिया के साथ टकराव एवं राजनैतिक रूप से खतरा बन जाना	राष्ट्रीय सुरक्षा कानून	सागर व जबलपुर जेल	श्री अर्जुन सिंह	कांग्रेस (इ)
8.	31 अगस्त	1984	एक माह बारह दिन	राजनांदगांव कपड़ा मजदूर संघ का आंदोलन	307, 188 आई. पी. सी.	रायपुर सेंट्रल जेल	श्री अर्जुन सिंह	कांग्रेस (इ)

(तालिका अगले पृष्ठ पर जारी)

सन् 1991 शुरू होते-होते भिलाई के उद्योगपतियों ने प्रशासन के परोक्ष संरक्षण में नियोगी को निष्प्रभावी बनाने का व्यवस्थित अभियान चालू कर दिया था। यह सब एक पूर्व-नियोजित योजना के तहत था, जैसा कि उस दस्तावेज से साबित होता है जो सी. बी. आई. ने भिलाई के एक प्रमुख उद्योगपति के घर से बरामद किया है। इस योजना के अनुसार, जिस मजदूर ने लाल-हरे झंडे की यूनियन की सदस्यता ग्रहण की उसे मात्र मौखिक आदेशों पर नौकरी से निकाल दिया गया, मजदूर कार्यकर्त्ताओं को माफिया गिरोहों से पिटवाया गया, कुछेक नेताओं की हत्या भी करवायी गयी और लाल-हरे झंडे की किसी भी यूनियन से बात करने से इंकार कर दिया गया। नियोगी के खिलाफ अफवाहों और चरित्रहनन का अभियान भी चलाया गया। पर इससे भी जब नियोगी का नेतृत्व कमजोर नहीं पड़ा तो 4 फरवरी 1991 को 5 से 9 साल तक पुराने मामलों का बहाना लेकर उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। परंतु 3 अप्रैल 1991 को हाईकोर्ट के आदेश पर नियोगी को रिहा करना पड़ा। जब यह चाल भी विफल हो गयी तो जुलाई 1991 में दुर्ग जिला कलेक्टर ने नियोगी को दुर्ग और सीमावर्ती चार जिलों से जिलाबदर करने का नोटिस जारी कर दिया। म. प्र. हाईकोर्ट ने इस नोटिस के क्रियान्वयन पर भी रोक लगा दी। तब तक उद्योगपतियों के पैसों पर पल रहे माफिया तत्वों द्वारा बनायी जा रही हत्या की योजनाओं के सम्बंध में नियोगी को दो पत्र आ चुके थे। नियोगी को यह स्पष्ट हो चुका था कि उनकी हत्या की पूरी तैयारी हो चुकी है। परंतु इसके कारण न तो भिलाई आंदोलन का कोई कदम पीछे हटा और ना ही कोई कार्यक्रम बदला गया।

दिसम्बर 1990 में नियोगी अपने छोटे भाई मृणाल की शादी में जलपाईगुड़ी गये थे। वहाँ करीब 20-22 साल के बाद उनकी भेंट अपने एक अन्य भाई प्रणब से हुई जिसने उन्हें एक छोटा-सा टेप रिकार्डर भेंट किया। इस टेप रिकार्डर पर उन्होंने अपनी सबसे छोटी बहन पांचोली का एक गाना भी वहीं रिकार्ड किया। बाद में, शायद अगस्त 1991 में, अपनी हत्या की साजिश का पूर्वानुमान हो जाने पर उन्होंने इसी टेप रिकार्डर पर उसी कैसेट में अपना एक 'अंतिम संदेश' राजहरा में रिकार्ड किया जिसमें उन्होंने साजिश करने वाले उद्योगपतियों, गुंडों और पुलिस अफसरों के नाम उजागर किये। इस संदेश का एक हिस्सा उनके अपने साथियों के प्रति भी था जिसमें उन्होंने संगठन की भावी दिशा के बारे में कई सटीक बातें कही थीं (संदेश की प्रति के लिए देखिये पृ. 304-305)।

जीवन का अंतिम माह

सितम्बर 1991 में नियोगी लगभग 250 मजदूर साथियों के साथ दिल्ली आये। यह उनका भारतीय संविधान में दिये गये लोकतांत्रिक अधिकारों और न्यायपूर्ण समाज बनाने के वायदों की सीमाओं को भली-भांति परख लेने का फिर एक प्रयास था। उन्होंने लगभग पचास हजार हस्ताक्षरों वाला एक ज्ञापन राष्ट्रपति को सौंपकर उद्योगपतियों की गैर-कानूनी हरकतों एवं हिंसक गतिविधियों पर रोक लगाने की माँग की। ऐसे ही ज्ञापन उन्होंने प्रधान मंत्री, विपक्ष के भाजपा नेता श्री लालकृष्ण आडवाणी, पूर्व प्रधान मंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह एवं अन्य नेताओं को भी सौंपे। लौटती यात्रा में उन्होंने अपनी बात म. प्र. के तत्कालीन मुख्य मंत्री श्री पटवा तक पहुँचाने की कोशिश की, परंतु मुख्य मंत्री के पास नियोगी से मिलने का समय न था। भिलाई

की समृद्ध परम्पराओं के प्रति प्यार पैदा करना था। ऐसी गहरी सांस्कृतिक संवेदना निःसंदेह एक ट्रेड यूनियन नेता के काम में अनूठा आयाम है।

निजी जीवन की छवियाँ

अस्सी के दशक की शुरूआत तक नियोगी तीन बच्चों — क्रांति, जीत व मुक्ति — के पिता बन चुके थे। नियोगी को जलपाईगुड़ी और पश्चिम बंगाल के अन्य शहरों में रह रहे अपने पिता या भाई-बहनों से मिलने-जुलने का मौका बहुत ही कम मिलता था। परंतु जब कभी भी वे उनसे मिलने गये अथवा उनमें से कोई दल्ली राजहरा आया तब नियोगी ने एक आम व्यक्ति की तरह बीते दिनों की याद की और उनके साथ घूमे-फिरे। अपने बच्चों की पढ़ाई-लिखाई के लिए अपनी सारी व्यस्तताओं व तनावों के बावजूद समय लगाना उन्हें बहुत भाता था। उनके लिए वे जहाँ कहीं भी जाते, वहाँ से विभिन्न ब्रांडों की माचिस की डिबियाँ बटोरना नहीं भूलते थे। व्यस्त बैठकों के बीच उन्हें, किसी के हाथ में कोई नयी ब्रांड की माचिस देखकर, अनायास ही अपनी माचिस से उसे बदलते देख उनके राजनैतिक सहकर्मी अचरज में पड़ जाते थे। एक प्रसिद्ध ब्रांड की सिगरेट पीने की उनकी आदत तो सार्वजनिक तौर पर जानी-पहचानी थी। उनसे मिलने जो भी यूनियन दफ्तर जाता वह उनके ' लाल चाय ' और बीड़ी वाले स्वागत के बगैर लौट नहीं सकता था। बड़े-बड़े आंदोलनों के बीच अपने साथियों की निजी समस्याओं के प्रति उनका गहरा सरोकार उनकी सहज प्रवृत्ति का अंग था। उनके घर में छत्तीसगढ़ी ही बोली जाती थी। उनका व आशाजी का जीवन ठीक उसी प्रकार के उतार-चढ़ावों एवं प्यार और तनावों से भरा रहता था, जैसा कि किसी भी पति-पत्नी का होता है। कुल मिलाकर वे धरती से जुड़े हुए आम लोगों में से ही एक इंसान थे — मुड़ा-तुड़ा पाजामा व फटा-पुराना कुर्ता पहने एक इंसान जिसने समाज और परिस्थितियों से निरंतर वैज्ञानिक व मानवीय सबक सीखते हुए अपनी क्षमताओं और सूझ-बूझ को अद्‌भुत ढंग से विकसित कर लिया था। अपने मित्रों व सहकर्मियों के बीच उनकी आम छवि बीड़ी सुलगाते और लाल चाय सुड़कते, बेंच पर बैठे इंसान की थी जिसकी उपस्थिति आपको कभी यह अहसास नहीं कराती थी कि आप छत्तीसगढ़ के एक विलक्षण जन-नायक के साथ हैं। यह आभास तभी होता था जब गप-शप के बीच वे सहज ही गहराई और विद्वता से परिपूर्ण कोई विचार व्यक्त करके हमें छत्तीसगढ़ की ' शहीदों के खून से सिंचित ' (उन्हीं के शब्द) मिट्टी में तपे हुए अपने जीवन के रस से सराबोर कर देते थे।

आंदोलन का फैलाव

नियोगी की जुझारू संघर्ष शैली और मजदूर व सामाजिक हित की संतुलित नीति से आकर्षित होकर दूर-दराज के किसान-मजदूरों ने उनका सहयोग और मार्गदर्शन माँगना शुरू किया। इसी तारतम्य में अस्सी के दशक में धीरे-धीरे राजनांदगाँव की बी. एन. सी. मिल्स के कपड़ा मजदूर, ग्राम नादिया (राजनांदगाँव जिला) के कबीरपंथी मठ के महंत से पीड़ित किसान, बालोद की राईस मिल्स के मजदूर, मेघनगर (झाबुआ, म. प्र.) और महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र के खदान मजदूर और रायपुर जिले के महासमुंद-सरायपाली क्षेत्र के मुक्त हुए बंधुआ मजदूर, सब लाल-हरे झंडे के तले इकट्ठे होते चले गये। इसी कड़ी में मार्च 1990 से भिलाई औद्योगिक क्षेत्र के छोटे-बड़े अनेक निजी कारखानों के ठेका मजदूर व कारीगरों का जुड़ना शुरू हुआ। सन्

की चड्डी में ही थे। उनके पास कुर्ता-पाजामा तक न था। शीघ्र ही इस स्वतःस्फूर्त संगठन की एक औपचारिक समिति बनायी गयी जिसे अप्रैल 1977 में रजिस्ट्रेशन के समय 'छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ' (सी. एम. एस. एस.) नाम दिया गया। इस रजिस्ट्रेशन को करवाने नियोगी स्वयं इन्दौर गये जहाँ रजिस्ट्रार का दफ्तर था। मई 1977 तक समान बोनस के मुद्दे के साथ, आने वाली बरसात के पहले मजदूरों की झोपड़ियों की मरम्मत हेतु भत्ते और खदानों में काम न दिये जाने पर 'आयडिल वेजेस' (बाद में 'फाल बैक वेजेस') के मामले भी जुड़ चुके थे। इन मुद्दों को लेकर सी. एम. एस. एस. ने एक जुझारू संघर्ष छेड़ दिया। बी. एस. पी. और ठेकेदारों के साथ मई के अंत तक एक समझौता भी हुआ। परंतु एक जून को जब समझौते के अनुसार मजदूर भुगतान लेने गये तो उनका स्वागत कैशियर की जगह बंदूकधारी पुलिस ने किया। इससे पूरी बस्ती में उत्तेजना फैल गयी और उसी दिन नियोगी के नेतृत्व में एक विशाल रैली निकली।

बरसों से शोषित और दबे हुए मजदूरों की यह बढ़ती हुई हिम्मत देखकर बी. एस. पी. के नौकरशाहों, ठेकेदारों और स्थापित यूनियन नेताओं की तिकड़ी के छक्के छूट गये। इस घबराहट में जिला प्रशासन पर दबाव डलवाकर नियोगी को मजदूरों के बीच से हटा देने का फैसला करवाया गया। दो जून की रात को यूनियन के झोपड़ीनुमा आफिस के बाहर अपने साथियों के साथ सो रहे नियोगी को धोखे से गिरफ्तार कर लिया गया जिसका हजारों मजदूरों ने तुरंत डटकर विरोध किया। उन पर नियंत्रण करने के लिए पुलिस ने एक बार उसी रात को और दूसरी बार अगली सुबह गोलियाँ चलायीं। यह छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ के आंदोलन में पहला गोलीकांड था जिसमें एक महिला मजदूर नेत्री (अनुसुइया बाई) व एक बच्चे (सुदामा) सहित ग्यारह मजदूर साथी शहीद हुए। इस गोलीकांड ने दल्ली राजहरा के इस नवजात आंदोलन को अचानक राष्ट्रीय पटल पर ला खड़ा किया।

गोलीकांड के बाद पीछे हटने की जगह आंदोलन और तेज हो गया और नियोगी के जेल से छूटने के पहले ही मैनेजमेंट ने मजदूरों की माँगों पर अमल करना शुरू कर दिया। उनके जेल से छूटने के बाद यूनियन का प्रभाव तेजी के साथ दानीटोला की क्वार्ट्ज़ाइट खदानों और नंदिनी की चूना-पत्थर खदानों से होता हुआ हिर्री और बारद्वार (जिला बिलासपुर) की डोलोमाइट खदानों तक फैल गया। सितम्बर-नवम्बर 1977 में राजहरा, दानीटोला और हिर्री के खदान मजदूरों की 56 दिन की हड़ताल और उसमें मजदूरों की विजय के बाद तो पूरे खदान क्षेत्र में लाल-हरे झंडे का नेतृत्व स्थापित हो गया।

सन् 1978 में नियोगी अपने परिवार सहित दानीटोला से दल्ली राजहरा आ गये और यूनियन के साथियों की मदद से वहीं मजदूर बस्ती में उनके जैसा ही मकान बनाकर रहने लगे।

'संघर्ष और निर्माण' का सूत्रपात

शुरू से ही नियोगी के दिमाग में दो बातें एकदम साफ थीं। पहला, आंदोलन में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी होना आवश्यक है। दूसरा, मजदूर संगठन की अगुवाई में किसानों और खेतिहर मजदूरों को भी संगठित करना होगा। उनका मानना था कि ऐसा करने पर ही शोषणविहीन छत्तीसगढ़ बनाने का मजबूत आधार बन सकेगा। इस समझ और सी. एम. एस. एस. के काम के आधार पर सन् 1978-79 के दौरान छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा (छमुमो) एवं उसके तहत महिला

नियोगीजी विभिन्न मुद्राओं में

नियोगीजी के पिता के साथ आशा और तीनों बच्चे
(बायें से दायें) मुक्ति, क्रांति और जीत; 1989

नियोगीजी अपनी चचेरी बहनों और उनके बच्चों के
साथ कलकत्ता में; बड़ी-बेटी क्रांति उनके दायें बैठी हुई

सन् 1971-72 में कभी शंकर काम खोजते-खोजते दानीटोला खदान पहुँचे। एक छोटे ठेकेदार के यहाँ उन्हें खदान में क्वार्ट्ज़ाइट पत्थर तोड़ने का काम मिल गया। वहीं उन्होंने ठेकेदार का हिसाब-किताब रखने का भी काम किया। बीच-बीच में उनका दुर्ग और राजनांदगाँव जिलों के गाँवों में घूमना, अध्ययन करना और लोगों को संगठन बनाने के लिए प्रेरित करने का काम भी चलता रहा। इसी दौरान उन्होंने छत्तीसगढ़ी भाषा सीखना शुरू किया। अब तक शंकर छत्तीसगढ़ की जनता और वहाँ की संस्कृति में इतना घुल-मिल गये थे कि पुलिस के लिए भी उनमें और स्थानीय लोगों में फर्क पहचान पाना असम्भव-सा हो गया था।

इन दिनों पुलिस उन्हें लगातार खोजती रहती थी। सन् 1972 में कभी (शायद अप्रैल-मई में) उनके पिता को खबर मिली कि शंकर को चेचक हो गया है। उन्होंने अपने छोटे बेटे स्वराज (जो बम्बई के नेवल डॉकयार्ड में अप्रेंटिस था) को लिखा कि वह शंकर को घर लिवा लाये। स्वराज बम्बई से भिलाई आया व बहुत मुश्किल से शंकर को खोज निकाला। उन्हें साथ लेकर स्वराज अपनी चचेरी बहन के घर कलकत्ता पहुँचा। कुछ दिन पूर्व ही ताऊ मन्मथनाथ जी का देहांत हुआ था। अभी इन दोनों भाइयों ने घर में पाँव रखा ही था कि पुलिस आ धमकी। किसी तरह चचेरी बहन की मदद से शंकर घर से भाग निकले, पर स्वराज की पुलिस ने खूब पिटाई की। रात भर सड़कों पर भटकने के बाद अगली सुबह शंकर स्वराज के साथ पिता से मिलने जलपाईगुड़ी चले गये। जिस दिन वहाँ पहुँचे, वहाँ भी पुलिस आ गयी। पर पिता ने शंकर को पुलिस से मिलवा दिया और पुलिस रोज आकर उनकी रिपोर्ट लेती रही। उस बार शंकर दो माह तक पिता के पास रहे। उनकी छोटी बहन शीला बताती हैं कि तब सबने उन पर बहुत दबाव डाला कि वे शादी कर लें। पर वे कहते रहे कि वे एक मध्यमवर्गीय लड़की की माँग पूरी नहीं कर पायेंगे। तो उनके पिता ने उनसे शीला की शादी के लिए पैसा माँगा। पैसा तो वे नहीं दे सके, किंतु वापस लौटकर उन्होंने शीला के लिए बस्तर जिले के किसी गाँव से लकड़ी का कुछ फर्नीचर बनवाकर भिजवा दिया। उसके बाद एक लम्बे अर्से के लिए उनका परिवार से सम्पर्क टूट गया।

सन् 1971-75 के बीच शंकर ने दानीटोला खदान में काम करते हुए वहाँ के मजदूरों को एटक के झंडे के तहत संगठित किया। एटक के ही कार्यकर्ता के रूप में शंकर ने राजहरा में एच. एस. सी. एल. (एक सार्वजनिक उपक्रम) के मजदूरों को भी संगठित किया। और दानीटोला से ही शुरू हुआ उनका खदान मजदूरों और खदानों में चल रही उत्पादन एवं शोषण-प्रक्रिया के साथ वह लम्बा रिश्ता, जो उनके जीवन के अंत तक उनका प्रमुख सरोकार बना रहा। उन दिनों उनका दल्ली राजहरा के कुछ राजनैतिक साथियों के साथ चर्चाओं और अध्ययन का सिलसिला शुरू हो चुका था। दानीटोला के मजदूरों की समस्याओं को लेकर उन्हें राजहरा आना-जाना पड़ता था। आपातकाल घोषित होने तक शंकर की उस इलाके में एक जुझारू, ईमानदार यूनियन कार्यकर्ता की छवि बन चुकी थी।

दानीटोला में काम करते समय शंकर का परिचय एक खदान मजदूर सियाराम की बेटी आशा से हुआ जो आगे जाकर विवाह में बदल गया। शादी के चौदह-पंद्रह महीने बाद ही आपातकाल के दौरान शंकर मीसा के तहत गिरफ्तार कर लिये गये। तब आशाजी गर्भवती थीं। तेरह महीने के बाद जब शंकर जेल से छूटे तब तक वे एक बेटी (क्रांति) के पिता बन चुके थे।

नौकरी से निकाल दिये जाने के बाद धीरेश और अधिक तेजी से राजनैतिक काम करने लगे। सन् 1968 में ही भिलाई के बोरिया कांड में हिन्दू-मुस्लिम दंगों के खिलाफ अभियान में उन्होंने सक्रिय हिस्सेदारी की। इसी दौरान कुछ साथियों के साथ मिलकर उन्होंने 'स्फुलिंग' (चिंगारी) नामक एक साप्ताहिक पत्रिका का हिन्दी में प्रकाशन शुरू किया। लगभग सात-आठ महीने तक यह पत्रिका नियमित रूप से निकलती रही, फिर बंद करनी पड़ी। 'स्फुलिंग' में सरकार व मैनेजमेंट की मजदूर-विरोधी नीतियों का पर्दाफाश किया जाता था।

सन् 1968-69 में धीरेश ने अपने एक वरिष्ठ राजनैतिक साथी के साथ मिलकर छत्तीसगढ़ की स्थिति का मूल्यांकन करते हुए एक छोटी-सी पुस्तिका तैयार की। इसमें उन्होंने छत्तीसगढ़ के पिछड़ेपन, शोषण और असमान विकास के मुद्दों पर जानकारी दी व राष्ट्रीयता के प्रश्न को उठाया। इस पुस्तिका पर सरकार ने प्रतिबंध लगा दिया (देखिये पृ. 571)। पर इससे उनकी उस लम्बी विचार-यात्रा की शुरूआत हो गयी जिसने कई वर्षों तक तराशे जाने के बाद अस्सी के दशक के उत्तरार्ध में राष्ट्रीयता के प्रश्न को 'नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़' के जनप्रिय नारे के रूप में प्रस्तुत किया। आज उनका यह विचार 'पृथक छत्तीसगढ़' की थोथी, दिशाहीन एवं अवसरवादी राजनीति से एकदम अलग परिभाषा लेकर खड़ा है। इस नारे में मजदूर वर्ग की अगुवाई में एक शोषणविहीन, न्यायशील छत्तीसगढ़ के निर्माण की देशप्रेमी और सामाजिक हित की भावना झलकती है (देखिये खंड दो एवं नियोगी का लेख, पृ. 135-142)।

सन् 1968-69 का ही समय था जब धीरेश अपनी मित्र मंडली के साथ पोस्टर चिपकाने, पैम्फलेट बाँटने जैसे कामों में जुटे रहते थे। इसके साथ ही राजनैतिक प्रचार कार्य के लिए नुक्कड़ नाटकों में भी हिस्सा लेते थे। इन कारणों से पुलिस ने उनको नक्सलपंथी राजनीति से जुड़े होने के आरोप में गिरफ्तार कर लिया। सम्भवतः यह उनकी पहली जेल-यात्रा थी।

सन् 1969 में धीरेश सी. पी. आई. (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) पार्टी में शामिल हो गये। परंतु अपनी स्वतंत्र एवं आलोचनात्मक दृष्टि के कारण पार्टी की नीति पर वे प्रश्न भी उठाते रहे। अंततः पार्टी में जनसंगठनों पर लगे प्रतिबंध के मुद्दे पर उनका मतभेद उभरकर आ गया और वे गैर-लोकतांत्रिक ढंग से पार्टी से निकाल दिये गये (मुद्दे की व्याख्या के लिए देखिये पृ. 528-529)। उनकी गतिविधियों को पार्टी-विरोधी करार देकर उनका तत्कालीन सी. पी. आई. (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) पार्टी के बंगला मुखपत्र 'देशव्रती' में भी जिक्र हुआ। इससे धीरेश बहुत निरुत्साहित हुए। परंतु उद्देश्य के प्रति अपनी निष्ठा एवं पैनी समझ के कारण उन्होंने इस परिस्थिति में भी अपने लिए नया रास्ता चुन लिया। उन्होंने और उनसे सहमत कुछ मित्रों ने अनौपचारिक तरीके से मिलकर काम करना शुरू किया। उनकी एक बैठक में यह निर्णय लिया गया कि धीरेश गाँव-गाँव जाकर संगठन बनाने का काम करेंगे और उनके साथी भिलाई में अपने क्वार्टर छोड़कर मजदूर बस्तियों में रहने लगेंगे।

छत्तीसगढ़ की मिट्टी से एकाकार

इस निर्णय के तहत धीरेश ने छत्तीसगढ़ के ग्रामीण अंचलों में घूमना-फिरना और वहाँ का अध्ययन करना शुरू किया। इसी दौर में उन्होंने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के बुनियादी सिद्धांतों का छत्तीसगढ़ और पूरे भारत के सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ में अर्थ भी खोजना शुरू किया।

कक्षाएँ चलायीं, नाटक लिखे व खेले, साथ में दोस्तों को भी जोड़ता रहा। कालेज में पढ़ते समय धीरेश द्वारा लिखित एक नाटक खेला गया जिसका विषय था — सेठ-साहूकारों द्वारा गरीबों का शोषण। कालेज जीवन में वह छायानृत्य भी करता था। धीरेश को वे गाने अधिक पसंद आते थे जिनमें अमीर-गरीब का जिक्र होता था, शोषण के विरोध की बातें होती थीं। अपने मित्रों के साथ वह अक्सर समाज सेवा करने की चर्चा करता था।

धीरेश को अखबार की कतरनों की अल्बम तैयार करने का शौक था। एक ऐसी अल्बम में क्रांतिकारियों के चित्र भी लगा रखे थे जिनके ऊपर उसने रवीन्द्रनाथ ठाकुर की प्रसिद्ध कविता की एक पंक्ति लिख रखी थी —

'मॉरोन सागोर पारे तोमुरा ऑमोर'

(मृत्यु-सागर के किनारे तुम सब अमर हो)

सत्रह वर्षों के बाद जब दल्ली राजहरा में जून 1977 के गोलीकांड में ग्यारह मजदूर साथी शहीद हुए तो उनकी याद में नियोगी ने संगठन के अखबार 'साप्ताहिक मितान' में इसी पंक्ति को शीर्षक बनाकर शहीद साथियों के जीवन पर श्रृंखलाबद्ध लेख लिखे (देखिये पृ. 89-91)।

धीरेश ने स्कूल में अपने सहपाठियों के साथ मिलकर अपने हाथ से लिखकर एक पुस्तिका बनायी जिसका बंगला में 'इमारत' नाम रखा। तब तक धीरेश को कई बंगला और हिन्दी फिल्में देखने का मौका मिल चुका था। उन फिल्मों में महानगरीय पश्चिमी जीवन की जो सतही छवि उभरती है वह धीरेश द्वारा 'इमारत' पुस्तिका में लिखी एक कविता 'बीसवीं सदी में आकर' में दिखायी देती है (देखिये पृ. 249-250)।

धीरेश को जलपाईगुड़ी में एक पुस्तकालय खड़ा करने की धुन सवार हुई। उसने और उसके दोस्तों ने मिलकर चंदा बटोरा। साथ ही अपने-अपने घरों से चावल इकट्ठे किये, फिर उन्हें बाजार में बेचा और उन पैसों से पुस्तकालय खड़ा किया। उसका नाम 'अरविंद अंचल पाठागार' रखा गया। इस पुस्तकालय में कैरमबोर्ड जैसे 'इंडोरगेम्स' खेलने का इंतजाम भी था। वर्षों बाद दल्ली राजहरा में मजदूरों के प्रयास से शहीद अस्पताल, स्कूल व पुस्तकालय बनवाने की उसकी 'निर्माण' की दृष्टि के बीज जलपाईगुड़ी के इस छोटे से पुस्तकालय में देखे जा सकते हैं। यह पुस्तकालय आज भी वहीं है, पर सरकार ने उसका अधिग्रहण कर लिया है।

मार्क्स, एंगल्स, लेनिन, स्तालिन, माओ-त्से-तुंग, हो-ची-मिन्ह, स्वामी विवेकानंद, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, खुदीराम बोस, सरदार भगत सिंह और सुभाषचंद्र बोस जैसे देशभक्त और क्रांतिकारी नेताओं और विचारकों का उसके जीवन पर विशेष प्रभाव था। उसके प्रिय कवियों में माइकल मधुसूदन दत्त, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, काजी नजरूल इस्लाम और सुकांत भट्टाचार्य प्रमुख थे। सन् 1961 में रवीन्द्रनाथ की शताब्दी मनायी गयी। इसी उपलक्ष्य में उनकी प्रसिद्ध रचनावली के तेरह खंड प्रकाशित हुए जिनकी कीमत उस समय 75 रुपये थी। यह पढ़ने का धीरेश को इतना शौक था कि जब पिता ने रचनावली खरीदने के लिए पैसे देने से इंकार कर दिया तो धीरेश ने अपने हाथ की अँगूठी बेचकर वह रचनावली खरीदी।

भिलाई में नये जीवन की शुरुआत

धीरेश सबसे बड़ा था — उससे छोटे चार भाई व दो बहनें हैं। 28 अक्

धीरेश से शंकर और शंकर से छत्तीसगढ़ का जन-नायक

शशि मौर्य ● अनिल सद्गोपाल

विश्व द्वितीय महायुद्ध के त्रासदायक दौर से गुजर रहा था और भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन अपने निर्णायक मोड़ पर खड़ा था। चालीस के दशक के उन शुरूआती वर्षों में आसाम के नौगाँव जिले के ग्राम जमुनामुख में बंगाली मध्यमवर्गीय पृष्ठभूमि के एक परिवार के मुखिया श्री हेरम्ब कुमार गुहा नियोगी छुट-पुट ठेकेदारी का काम करते थे। हेरम्ब कुमार का परिवार वर्तमान बंगलादेश के अपने मूल मैमनसिंह जिले को छोड़कर बरसों पहले आसाम के इस दूरस्थ गाँव में आकर बस चुका था। महानगरों से इस दूरी के बावजूद देश की हलचल की मुख्य धारा से हेरम्ब कुमार कटे हुए नहीं थे। नेताजी सुभाषचंद्र बोस की आई. एन. ए. फौज ने कोहिमा तक (जहाँ से नौगाँव छलाँग भर ही था) आकर दस्तक दी थी। ब्रिटिश साम्राज्यवाद की दहलीज के अंदर पैर रखने का साहस करने वाले सुभाषचंद्र के आदर्शों की हेरम्ब कुमार के ऊपर गहरी छाप पड़ी थी। वे स्वयं भी स्वतंत्रता आंदोलन एवं स्थानीय सामाजिक कामों में सक्रिय हुए, कांग्रेस के जिलाध्यक्ष बने, आसाम में पार्टी के राज्य-स्तरीय संगठक के रूप में उनकी पहचान थी और कांग्रेस के कई शीर्ष नेताओं का उनके यहाँ आना-जाना था।

होनहार बिरवान के होत चिकने पात

बंगला सन् 1349, प्रथम अश्विन [1], यानी 18 सितम्बर 1942 को हेरम्ब कुमार की पत्नी कल्याणी ने अपनी माँ के यहाँ – अविभाजित बंगाल के जिला दिनाजपुर के ग्राम बालूवाड़ी के पास – एक अस्पताल में अपनी पहली संतान (पुत्र) को जन्म दिया। उसका नाम धीरेश कुमार रखा गया। बाद में हेरम्ब कुमार अपनी पत्नी व बेटे को जमुनामुख ले आये। धीरेश की प्राथमिक शिक्षा यहीं पूरी हुई। आगे की पढ़ाई के लिए वहाँ बंगला माध्यम का स्कूल नहीं था। अतः उसे उसके ताऊ मन्मथनाथ गुहा नियोगी के पास पश्चिम बंगाल के ज़िला बर्दवान में साकतोरिया (दिशेरगढ़ में), आसनसोल के निकट, भेज दिया गया। मन्मथनाथ जी वहाँ ' बंगाल कोल इंडिया लि. ' में इंजीनियर के एक उच्च पद पर कार्यरत थे। धीरेश ने छठवीं कक्षा से मैट्रिक तक की पढ़ाई वहीं रहकर की। वहाँ अपनी चचेरी बहनों व भाइयों के प्रति उसके मन में गहरा लगाव पैदा हुआ जो अंत तक बना रहा। यहीं रहते हुए उसने कविता लिखना शुरू किया व प्रकृति के प्रति उसका प्रेम भी यहीं मुखरित हुआ। यहीं उसने ' बंगाल कोल ' के मजदूरों की

[1] जन्म की यह तारीख श्री हेरम्ब कुमार गुहा नियोगी द्वारा लिखे एक पत्र में दी गयी जानकारी पर आधारित है।

दल्ली राजहरा, 2 जून 1977 — छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ (सी. एम. एस. एस.) के नेतृत्व में ‘ फाल बैक वेजेस ’ और झोपड़ी मरम्मत भत्ते की माँगों को लेकर संघर्ष तेज हो चुका था। दो जून की रात को यूनियन दफ्तर के बाहर मजदूर साथियों के बीच सो रहे नियोगी को पुलिस ने धोखे से गिरफ्तार कर लिया। पुलिस उन्हें जीप में राजहरा से बालोद ले जा रही थी। रास्ते में सुनसान जंगल से गुजरते हुए एक पुलिसवाले ने नियोगी से कहा, “ भलेमानस आदमी हो। फालतू जेल में परेशान होओगे। जाओ, भाग जाओ। फिर इस इलाके में न आना।” नियोगी ने एक क्षण की भी देरी किये बगैर उस पुलिसवाले की बंदूक की नली अपने सीने पर लगाकर चुनौती दी, “ मारना है तो सीधे सीने पर गोली चलाओ, ‘ एन्काउंटर ’ के नाम पर पीठ पर पीछे से नहीं ! ” पुलिस ने उन्हें सुरक्षित बालोद थाने पहुँचा दिया।

* * *

दल्ली राजहरा, 31 अक्तूबर 1984 — प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी की हत्या के कुछ ही घंटों बाद देश भर से सिख-विरोधी दंगों के भड़कने की खबरें आने लगी थीं। नियोगी ने तत्काल यूनियन पदाधिकारियों और मुखिया लोगों को इकट्ठा किया। वहाँ फैसला हुआ कि श्रीमती गांधी की हत्या के लिए पूरी सिख कौम को जिम्मेदार मानना गलत है। इससे साम्प्रदायिकता को बढ़ावा मिलेगा और देश की एकता कमजोर होगी। अतः उसी रात से यूनियन ने दल्ली राजहरा के सिख परिवारों की रक्षा करनी शुरू कर दी, जबकि इनमें शराब के वे सिख ठेकेदार भी शामिल थे जिन्होंने कुछ वर्ष पूर्व शराबबंदी अभियान की सफलता को देखकर नियोगी को मरवाने की धमकियाँ दी थीं। अगले कुछ दिनों तक, जब आस-पास के सभी शहरों में सिखों पर अमानवीय अत्याचार हो रहे थे, दल्ली राजहरा उनके लिए शरणस्थली बना रहा।

यूनियन के छत्तीसगढ़ी मजदूरों ने दिखा दिया कि ‘ नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़ ’ कैसा होगा ?

दुर्ग, 9 अगस्त 1991 — जुलाई 1991 के अंतिम सप्ताह में दुर्ग कलेक्टर ने नियोगी को दुर्ग और उससे लगे हुए चार सीमावर्ती जिलों से जिलाबदर करने का नोटिस जारी कर दिया था। इस नोटिस [illegible] नियोगी [illegible] आपत्ति [illegible] खबर मिली कि उक्त नोटिस [illegible] हाईकोर्ट में लगी [illegible] मिल गया है। उस दिन कलेक्टर [illegible] की गाड़ी [illegible] मित्र ने पूछा, “ अब ये लोग क्या करेंगे ? ” नियोगी का [illegible] ये लोग गोली चलायेंगे ! ”

28 सितम्बर 1991 को तड़के यह गोली चला दी गयी।

* * *

उपरोक्त तीनों प्रसंगों से नियोगी की प्रखर राजनैतिक समझ, सामाजिक निष्ठा, त्वरित बुद्धि व साहस और, उससे भी अधिक, उनके अंदर की मानवीय संवेदना का स्पष्ट परिचय मिलता

संक्षेपाक्षरों की सूची

1. आई. एन. ए. — सुभाषचंद्र बोस के नेतृत्व में गठित 'आजाद हिन्द फौज'।
2. आई. पी. एफ. — इंडियन पीपुल्स फ्रंट।
3. इंटक — इंडियन नेशनल ट्रेड यूनियन कांग्रेस (कांग्रेस-इ पार्टी से सम्बद्ध मजदूर संगठन)।
4. इफ्टू — इंडियन फेडरेशन ऑफ ट्रेड यूनियन्स (एम. एल. पार्टी के कुछ घटकों से सम्बद्ध मजदूर संगठन)।
5. ए. आई. सी. पी. — ऑल इंडिया कम्युनिस्ट पार्टी (संस्थापक – श्री श्रीपाद अमृत डांगे)।
6. एच. ई. सी. — हेवी इंजीनियरिंग कार्पोरेशन लि. (भारत सरकार का उपक्रम)।
7. एच. एस. सी. एल. — हिन्दुस्तान स्टीलवर्क्स कंस्ट्रक्शन लि. (भारत सरकार का उपक्रम)।
8. एटक — ऑल इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस (भाकपा से सम्बद्ध मजदूर संगठन)।
9. एन. एम. डी. सी. — नेशनल मिनरल डेवलपमेंट कार्पोरेशन लि. (भारत सरकार का उपक्रम)।
10. एम. एम. टी. सी. — दी मिनरल्स एंड मेटल्स ट्रेडिंग कार्पोरेशन ऑफ इंडिया लि. (भारत सरकार का उपक्रम)।
11. एम. एम. डब्ल्यू. यू. — मेटल एंड माईन्स वर्कर्स यूनियन (इंटक से सम्बद्ध)।
12. एम. एल. / सी. पी. आई. (एम-एल) — कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (मार्क्सिस्ट-लेनिनिस्ट)।
13. एस. के. एम. एस. — संयुक्त खदान मजदूर संघ (एटक से सम्बद्ध)।
14. छमुमो — छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा।
15. टी. यू. सी. आई. — ट्रेड यूनियन सेंटर ऑफ इंडिया (एम. एल. पार्टी के एक घटक से सम्बद्ध मजदूर संगठन)।
16. डी. के. एम. एस. एस. — दल्ली खदान मजदूर सहकारी समिति, दल्ली राजहरा।
17. पी. यू. डी. आर. — पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स, नयी दिल्ली।
18. पी. यू. सी. एल. — पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज (लोक स्वतंत्रता संगठन)।
19. बी. एन. सी. मिल्स — बंगाल-नागपुर कॉटन मिल्स, राजनांदगाँव।
20. बी. एस. पी. — भिलाई स्टील प्लांट ('सेल' की एक इकाई)।
21. भाकपा — भारत की कम्युनिस्ट पार्टी यानी सी. पी. आई.।
22. भाजपा — भारतीय जनता पार्टी।
23. मा. ले. — भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) यानी सी. पी. आई. (एम-एल)।
24. माकपा — भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) यानी सी. पी. आई. (एम)।
25. रासुका — राष्ट्रीय सुरक्षा कानून।
26. स. — इस पुस्तक के सम्पादकद्वय यानी दोनों सम्पादक।
27. सी. आई. एल. — कोल इंडिया लि. (भारत सरकार का उपक्रम)।
28. सी. एम. एस. एस. — छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ (छमुमो से सम्बद्ध)।
29. सी. पी. आई. — कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया यानी भाकपा।
30. सी. पी. एम. / सी. पी. आई. (एम) — कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (मार्क्सिस्ट) यानी माकपा।
31. सी. बी. आई. — सेंट्रल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टीगेशन (भारत सरकार का एक विभाग) यानी केंद्रीय जाँच ब्यूरो।
32. सीटू — सेंटर ऑफ इंडियन ट्रेड यूनियन्स (माकपा से सम्बद्ध मजदूर संगठन)।
33. सेल — स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लि. (भारत सरकार का उपक्रम)।

कर दी। यह घटना बहुत छोटी-सी थी, लेकिन विकल्प के निर्माण की दृष्टि से महत्वपूर्ण थी।

इसी तरह सन् 1973-74 में दानीटोला के पास के दहियान गाँव में एक तालाब की खुदाई के लिए शासन के भ्रष्ट अधिकारी पैसा मंजूर करने में देरी कर रहे थे। नियोगी ने गाँव वालों को तालाब का फायदा समझाकर उनसे तालाब खुदवाया और धरना देकर शासन से उन्हें मजदूरी दिलवायी। इसी प्रक्रिया से अस्सी के दशक में डौंडी लोहारा क्षेत्र में एक पुल का निर्माण करके 35 गाँवों के अंचल को उप-तहसील से जोड़ा गया। जंगल की लड़ाई में उन्होंने जंगल लगाने का भी काम किया। शिक्षा के लिए मजदूरों को अपने प्राथमिक स्कूल खड़ा करने के लिए प्रेरित किया। ' स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करो ' आंदोलन में शहीद अस्पताल का निर्माण जन-विकल्प की एक अद्भुत मिसाल है। बेरोजगारी फैलाने वाली, खदानों के पूर्ण मशीनीकरण की योजना को रुकवाने के लिए मजदूर संगठन द्वारा निर्मित अर्द्ध-मशीनीकरण का विकल्प तो देशप्रेमी तकनालाजी की नियोगी की अवधारणा का मूर्त रूप है। इसी तरह बाहरी भोगवादी संस्कृति और भाषा के प्रश्न पर नियोगी ने विकल्प का रास्ता चुना और लोक संस्कृति और लोक साहित्य को अपने संघर्ष से जोड़ा। पूँजीवादी इतिहासकारों ने छत्तीसगढ़ की अस्मिता को दबाकर रखा था। नियोगी ने सन् 1856-57 के विद्रोही आदिवासी किसान वीर नारायण सिंह में छत्तीसगढ़ की अस्मिता को पहचाना और उनके द्वारा अंग्रेजों तथा उनके दलालों के विरुद्ध जनहित में किये गये वीरतापूर्ण संघर्ष को इतिहास के गर्त से बाहर निकालकर उजागर किया। संघर्ष-निर्माण की नींव पर इस तरह खड़े किये गये जन-विकल्पों की ताकत के सामने उन पर ' सुधारवादी ' होने के लगाये गये तमाम दकियानूसी आरोप निरर्थक हो गये।

विकास की प्रक्रिया के दो पहलुओं पर नियोगी जोर देते थे। पहला, यह कि विकास जनता की भागीदारी और हित की दृष्टि से हो और दूसरा, यह कि विकास की योजना देशभक्तिपूर्ण हो। विकास की प्रक्रिया विदेशी कम्पनियों की लूट का जरिया न बने। वे विकास और पर्यावरण के बीच का संतुलन भी कायम रखना चाहते थे। आर्थिक विकास के साथ-साथ सांस्कृतिक और सामाजिक विकास के संतुलन को बनाये रखना उनकी दृष्टि में महत्वपूर्ण था। नियोगी विकास की प्रक्रिया में क्षेत्रीय संतुलन बनाये रखने के पक्ष में थे। राष्ट्र हित के नाम पर वे किसी भी क्षेत्र को ' आंतरिक उपनिवेश ' बनाकर उसका शोषण करने के खिलाफ थे। इसलिए वे राष्ट्रीयताओं का सवाल बहुत महत्वपूर्ण मानते थे। वे छत्तीसगढ़ में भात के सवाल के साथ-साथ यहाँ की संस्कृति, साहित्य, भाषा, कला, स्वास्थ्य और शिक्षा के सवाल को भी प्रमुखता देते थे। वे मानते थे कि छत्तीसगढ़ का विकास छत्तीसगढ़ की जनता के अनुभवों, क्षमताओं, परम्पराओं और आकांक्षाओं को ध्यान में रखकर उनकी भागीदारी से ही किया जा सकता है। जिसे छत्तीसगढ़ की संस्कृति, परम्परा, पर्यावरण और जनता से प्यार है, वही छत्तीसगढ़ के विकास में मदद दे सकता है। जो छत्तीसगढ़ को लूटने आये हैं, उनसे छत्तीसगढ़ को मुक्त कराकर मेहनतकश जनता के हाथ में सौंपना होगा। उनका नारा था —

" पूँजीपतियों की जागीर नहीं, छत्तीसगढ़ हमारा है। "

नियोगी की मान्यता थी कि किसी भी देश का विकास उसकी राष्ट्रीयताओं के विकास से ही सम्भव है। राष्ट्रीयतायें मजबूत होंगी, तभी देश मजबूत होगा। इसीलिए वे ' नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़ ' की बात करते थे।

नियोगी भारत की वर्तमान औद्योगिक नीति को विदेशी, साम्राज्यवादी और उनके दलाल पूँजीपतियों को भारत की सम्पदा लूटने की खुली छूट देने की नीति मानते थे। उनकी दृष्टि में यह देशद्रोही औद्योगिक नीति है। वे कहते थे कि हमारी औद्योगिक नीति महाशक्तियों के दबाव से मुक्त और देशप्रेम से सिंचित होनी चाहिए। नियोगी मशीनीकरण के विरुद्ध नहीं थे, लेकिन ऐसा मशीनीकरण जो एक ओर हमें विदेशी पूँजी का गुलाम बनाये और दूसरी ओर बेरोजगारी पैदा करे व विषमता बढ़ाये, उसका वे विरोध करते थे। लेकिन जहाँ उन्होंने मशीनों का विरोध किया, वहीं उनके संगठनों ने मशीनों की तुलना

को रोजगार मिलेगा, कृषि का विकास होगा और छत्तीसगढ़ एक सम्पन्न क्षेत्र के रूप में विकसित होगा।

पहले छत्तीसगढ़ हरे-भरे जंगलों से भरा हुआ एक कृषि-प्रधान क्षेत्र था। यहाँ धान की इतनी अच्छी खेती होती थी कि इसे 'धान का कटोरा' कहा जाता था। लेकिन औद्योगिक विकास शुरू होते ही छत्तीसगढ़ की कृषि और पर्यावरण दोनों पर उलटा असर पड़ने लगा। खेती के लिए बनाये गये पुराने बाँधों व जलाशयों का पानी बड़े उद्योग पीने लगे। खदान, सड़क, रेल की पटरी, बिजली की लाइनें तथा अन्य औद्योगिक गतिविधियों के लिए जंगलों का सफाया हुआ जिससे पर्यावरण पर बुरा असर पड़ा। छत्तीसगढ़ में सूखा पड़ने लगा। सिंचाई के अभाव में खेत प्यासे रहने लगे। धान का कटोरा खाली होने लगा। इस तरह खेती और वन-उपज के सहारे रोजी-रोटी कमाने वाली जनता को मजबूरी में कम मजदूरी पर औद्योगिक प्रतिष्ठानों तथा औद्योगिक नगरों के गृह निर्माण में ठेकेदारों के साथ कड़ी मेहनत करनी पड़ी। औद्योगिक प्रतिष्ठनों के लिए खोदी जाने वाली खदानें भी ठेकेदारों को दी गयीं जिन्होंने छत्तीसगढ़ी जनता का जमकर शोषण किया। जिन उद्योगों में छत्तीसगढ़ी जनता को रोजगार देने का वायदा किया गया था, उनमें बड़ी संख्या में बाहर के लोग भर्ती किये गये चूँकि स्थानीय लोग इन नये कामों में प्रशिक्षित नहीं थे। भिलाई इस्पात कारखाने में अधिकांश मजदूर छत्तीसगढ़ के बाहर से लिये गये। बमुश्किल 10% रोजगार छत्तीसगढ़ी मजदूरों को मिला। इतना ही नहीं, धीरे-धीरे खदानों और निर्माण कार्यों में बड़ी स्वचालित मशीनों का उपयोग शुरू हुआ। इससे छत्तीसगढ़ की जनता का रहा-सहा रोजगार भी जाता रहा। उसके पास रोजी-रोटी के लिए देश के अधिक विकसित अंचलों की ओर पलायन के अतिरिक्त कोई चारा नहीं बचा। भूख से पीड़ित छत्तीसगढ़ी मजदूर बड़ी संख्या में भात के लिए पंजाब और हरियाणा के सम्पन्न किसानों की हरित क्रांति में अथवा बड़े नगरों के भवन निर्माण में कम मजदूरी पर अपनी हड्डियाँ गलाने के लिए पलायन करने लगे। जो इस्पात कारखाना यहाँ की जनता को रोजगार देने के नाम पर बनाया गया था, उसके प्रबंधक रोजगार माँगने पर आज जवाब देते हैं कि हमारा काम इस्पात पैदा करना है, रोजगार देना नहीं।

छत्तीसगढ़ में औद्योगिक विकास ने जनता को जिस तरह रोजी-रोटी के लिए दर-बदर भटकने को मजबूर किया है, उससे यहाँ और अधिक औद्योगिक विकास के नाम से ही जनता आतंकित होने लगी है। नयी आर्थिक नीति के तहत छत्तीसगढ़ में 170 अरब रुपये की लागत पर औद्योगीकरण की विशाल योजना बनायी जा रही है जिसकी खबर से ही छत्तीसगढ़ी जनता में असुरक्षा की भावना व्याप्त होने लगी है।

छत्तीसगढ़ समेत पूरे देश का कमोबेश यही हाल है। पश्चिमी विकास की भोंडी नकल ने देश को विदेशी कर्ज में आकंठ डुबो दिया है। विषमता और बेरोजगारी बढ़ती जा रही है। इससे अपराध बढ़ रहे हैं, भ्रष्टाचार फैल रहा है। क्षेत्रीय विषमता भी बढ़ी है जिसके कारण पृथकतावादी, हिंसक आंदोलनों को बढ़ावा मिला है और देश की अखंडता खतरे में पड़ गयी है। आज भी देश की जनता के अनुभवों और क्षमताओं का इस्तेमाल न करके और जन-साधारण की जरूरतों को प्राथमिकता न देकर, सत्ताधारी लोग अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से और अधिक कर्ज लेकर वर्तमान राष्ट्रीय संकट को टालने का प्रयास कर रहे हैं। निहित स्वार्थ की राजनीति ने हमारे नेताओं को इतना अंधा बना दिया है कि वर्तमान विकास प्रक्रिया की दिशा की समीक्षा तक करने की न उनमें इच्छा रह गयी है और न साहस रहा है।

लेकिन जहाँ एक ओर छत्तीसगढ़ में निहित पूँजीवादी स्वार्थों द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का बेतहाशा दोहन और मानव शक्ति का अमानवीय शोषण चल रहा था, वहीं विषमता के गर्भ से मुक्ति की चाह का अंकुर भी फूट रहा था। तमाम राजनैतिक दलों और मजदूर संगठनों की दिशाहीनता के बावजूद छत्तीसगढ़ में 'संघर्ष और निर्माण' की राजनीति का भ्रूण फूट रहा था। शंकर गुहा नियोगी ने मुक्ति की चाह के इस अंकुर को पहचाना और उसे 'संघर्ष और निर्माण' के तत्वों से पोषण देकर एक विशाल वृक्ष का रूप देने का प्रयास किया। यह पुस्तक नियोगी के 'संघर्ष और निर्माण' के अनूठे राजनैतिक दर्शन को पाठकों तक पहुँचाने का एक प्रयास है।

चित्रों, कोलाजों एवं नक्शों की सूची

विवरण | **पृ. संख्या**

क) रेखाचित्र, पोस्टर चित्र आदि

1. वन नीति एवं दूरदर्शन कार्यक्रमों से उभरती विकास की तस्वीर (पोस्टर) 61
2. भिलाई स्टील प्लांट और छत्तीसगढ़ का पिछड़ापन (पोस्टर) 66
3. पूँजीपतियों की जागीर नहीं . . . . . (पोस्टर) 70
4. हमारे देशप्रेम की पहचान . . . . . (पोस्टर) 77
5. छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के अंग (रेखाचित्र) 380
6. शराबबंदी अभियान (पोस्टर) 417
7. पर्चे-पोस्टरों की बानगी (कोलाज) 448
8. विभिन्न लेखकों द्वारा फ़ोकस किये गये आंदोलन के पहलू (रेखाचित्र) 507

ख) नक्शे

1. छत्तीसगढ़ – प्रशासनिक 48
2. छत्तीसगढ़ – भौगोलिक 49
3. छत्तीसगढ़ – परिवहन, खदानें और उद्योग 54
4. आंदोलन का फैलाव 362
5. आंदोलन में शामिल जन समुदाय 363

ग) नियोगी की लिखावट में

1. ' छत्तीसगढ़ और राष्ट्रीयता का प्रश्न ' लेख का एक अंश (खंड चित्र)
2. ' मार्क्सवाद के मूल सूत्र ' लेख के कुछ अंश (1971) 82
3. ' सर्वहारा वर्ग के आंदोलन पर ' शीर्षक की टीप (1977) 92
4. शहीद वीर नारायण सिंह के इतिहास की शोध यात्रा – डायरी के कुछ पन्ने (1979) 125
5. जेल डायरी से ' सूरज ' कविता का अंश (1991) 237 (खंड चित्र)
6. गोंडी, छत्तीसगढ़ी, बंगला एवं अंग्रेजी कविताएँ 262
7. अपनी हत्या की साजिश का पूर्वाभास – डायरी के कुछ पन्ने (1991) 481

घ) खंड चित्र

खंड एक से चौदह तक 23, 43, 79, 237, 265, 273, 307, 347, 473, 489, 505, 561, 633, 645

च) छायाचित्र (फोटोग्राफ)

1. नियोगी : बचपन, परिवार और विभिन्न मुद्राओं में (चार पृष्ठ) पृ. 32 के सामने
2. मशीनीकरण और उसके खिलाफ लड़ाई; जुलूस और सभाएँ (चार पृष्ठ) पृ. 192 के सामने
3. नियोगी का चित्र 267
4. गतिविधियाँ और जन विकल्पों का निर्माण (चार पृष्ठ) पृ. 384 के सामने
5. नियोगी का चित्र 553
6. जून 1977 की शहादत; भिलाई गोलीकांड; नियोगी के अंतिम दर्शन और उनकी विजय यात्रा (चार पृष्ठ) पृ. 576 के सामने
7. नियोगी का चित्र 660

नेता निमित्त मात्र हैं : राहुल बनर्जी व चित्तरूपा पालित / 497-499 ● विरासत के मायने डायरी के पन्नों से : अनिल सद्गोपाल / 500-502 ● नियोगी जो व्यक्ति थे . . . / 502 ● समुद्र में उठती लहरों पर झाग : नागभूषण पटनायक / 503 ● मजदूर, जेल और तितली (कविता) : भारत डोगरा / 504

खंड ग्यारह : मूल्यांकन और दिशा

● खंड परिचय / 506 ● तलवार की धार पर चलने वाला नेता : हरि ठाकुर / 508-510 ● बिना हथियार के डरा दिया हथियारबंद व्यवस्था को : मणिमाला / 510-511 ● संघर्ष का कुशल सारथी : सीताराम शास्त्री / 511-513 ● बिखरी श्रमिक मानवता के बेजोड़ रफूगीरिया : रामशरण जोशी / 513-515 ● घुप अंधकार में दीया : भारत डोगरा / 516-517 ● शोषित होने की प्रवृत्ति के खिलाफ भी . . . : वागीश कुमार झा / 518 ● वृहत आयाम में नियोगी : रजनी कोठारी / 519-521 ● जर्जर राजनीति में नवजागरण का भगीरथ : निखिल चक्रवर्ती / 522-525 ● बदलते परिप्रेक्ष्य की चुनौती : कैलाश सत्यार्थी / 525-526 ● नियोगी व्यक्ति नहीं, धारा है : ओमप्रकाश रावल / 526-528 ● शहादत से सिंचित दो पौधे, दो सबक : त्रिवेणी प्र. सिंह / 528-529 ● क्रांतिकारी पार्टी की जरूरत और नियोगी : कुमार नितिन / 530-532 ● छत्तीसगढ़ के धरातल पर मार्क्सवाद-लेनिनवाद : अनिल धमड़िया / 532-534 ● जनता की सूझ-बूझ और उसका चित्रकार : दुनू राय / 535-537 ● सुंदर दुनिया का सपना देखता एक जन विज्ञानी : अ. प्र. शुक्ल / 537-538 ● सही विकास के लिए संघर्ष : मेधा पाटकर / 539-541 ● नयी आर्थिक नीति से जूझता छत्तीसगढ़ आंदोलन : मुकुल / 542-547 ● क्रांति के बाद का आभास कराता आंदोलन : बिनायक सेन / 547-549 ● पीछे छूटते सवाल, उभरती नयी परिभाषाएँ : अनिल नौरिया / 549-552 ● जमीन पर खड़े रहकर जिसने छुआ आसमान : पूर्णेन्दु बसु / 554-560

खंड बारह : नियोगी यादों में

● खंड परिचय / 562 ● मेरा बाच्चू, मेहनतकशों की आँखों का तारा : हेरम्ब कुमार गुहा नियोगी / 563-565 ● बाच्चू दा, सदा हमारे मन में रहेंगे : चिन्मयी बसु / 566-567 ● हमारे गुहा साब औरों से अलग थे : मोहन सिंह / 567-568 ● अपने बारे में कुछ कहना उन्हें पसंद नहीं था : नीलरतन घोषाल / 568-570 ● राष्ट्रीयता की समस्या हमेशा उनके दिमाग में रही : बी. एस. यदु / 570-572 ● पाँच पैसे में अच्छी चाय : मेहता कुमार कौशिक / 572-573 ● गाँव-गाँव में पैदल घूमा करते थे : परसादी / 573-574 ● मुझे माँ की तरह मानते थे : सरस्वतीबाई / 574 ● उन्होंने किराने की दुकान खोली : गिरवर / 575 ● वे अपनों जैसे बन गये : दुखुराम / 576 ● मैंने उन्हें टंगिया लेकर खदेड़ा था : सियाराम / 576-577 ● मैंने उन्हें नौकरी दी : शंकरलाल कावरा / 577 ● वे नहीं हैं, ऐसा मैं सोच भी नहीं सकती : आशा गुहा नियोगी / 578-582 ● बाबू से मैंने बहुत कुछ सीखा : क्रांति गुहा नियोगी / 582-584 ● वह नेता नहीं, मजदूर मालूम पड़ता था : रमेश नैय्यर / 584-586 ● रमता जोगी बहता पानी : मधुकर खेर / 586-587 ● कमांड चाहते हो, तो कमांड दो : गाजी एम. अंसार / 587-588 ● वे कभी भी अकेले फैसला नहीं करते थे : जनकलाल ठाकुर / 589-591 ● उत्पादन संबंधों से मेहनतकश तबकों प्रतिष्ठित हुई : गणेशराम चौधरी / 591-593 ● हमने उन्हें कभी बाहरी समझा ही नहीं : छबिलाल साहू / 594 ● वे हमेशा महिलाओं को आगे लाने की बात करते थे : लीलाबाई / 595-596 ● 'मा गो' चीख सुनकर मेरी नींद खुली : बहलराम साहू / 596-597 ● फिर भी शंकर की जिंदगी में कुछ नहीं बदला : जॉर्ज फर्नाण्डिस / 597-598 ● एक कामरेड की कहानी : राजेन्द्र कुमार सायल / 598-600 ● आखिरी हैंड शेक : राजेन्द्र कुमार सायल / 600 ● मजदूर राजनीति की शायद एक सीमा है : रामविलास / 601-602 ● वे मेरे बिना आफिस

खंड चार : नियोगी की कलम से — कविताएँ

● खंड परिचय / 238-241 ● जय छत्तीसगढ़ / 242-243 ● प्रतिरोधक पुकार / 243 ● जागो ओ सोनेवालो ! / 244 ● वरना ! / 245 ● मैं यहाँ जेल में हूँ / 246 ● किसान का डर / 246-247 ● आपात्‌काल का मोर्चा / 247 ● गजब है आँख दिखाना / 248 ● वोट की चिंता / 248 ● बीसवीं सदी में आकर / 249-250 ● शांति, क्रांति और विकास / 250 ● एम. डी. साहब के दफ्तर में / 251-252 ● इस बार / 253 ● जनता आपको चाहती नहीं / 253-254 ● तीन कविताएँ / 254 ● कुर्बानी के रास्ते पर / 254 ● सूरज / 255 ● जहाँ धरती है प्यासी / 255 ● जिन्होंने दिखाया हमें रास्ता / 256 ● तूफान के आगे खड़े हो तुम / 257-258 ● आकाशवाणी / 258 ● आज तो हम / 259 ● निशाचर / 260 ● तब तक / 260 ● इस देश में / 261 ● आओ चलें साथ-साथ / 263 ● सितार के सात तार / 264 ● शुरूआत की सुबह / 264

खंड पाँच : नियोगी की कलम से — चिट्ठी-पत्री

● खंड परिचय / 266 ● पुराने दिनों की याद / 268-270

खंड छह : नियोगी की जबान से — भाषण एवं बयान

● खंड परिचय / 272 ● भिलाई के मजदूरों से अपील / 273-274 ● उत्पादन संघर्ष के साथ वर्ग संघर्ष भी जरूरी / 274 ● क्रांतिकारी ट्रेड यूनियन की जरूरत पर / 275 ● लाल-हरा झंडा इतिहास के कदमों पर / 275-280 ● विचारधारा का दिवालियापन / 281-282 ● जीवन की मृत्यु पर विजय / 282-295 ● रामलाल की जीवन-गाथा / 295-297 ● सामाजिक-आर्थिक न्याय के लिए एकता यात्रा / 297-298 ● अंतिम आदमी की बात / 299-303 ● अंतिम संदेश / 304-305 ● 'उठ खड़े होना . . . दो बूँद आँसू टपका देना' व अन्य बयान / 306

खंड सात : नियोगी की जबान से — साक्षात्कार एवं चर्चा

● खंड परिचय / 308 ● नैतिक हथियार सबसे बड़ा है : पंकज शर्मा / 309-314 ● भारत में मजदूर संगठन और औद्योगिक रिश्ते : वॉल्टर फर्नान्डिस / 314-318 ● मार्क्सवाद एक सृजनात्मक विज्ञान है : कुशलदेव नाथ / 319-322 ● शांति उपाय है, क्रांति दृष्टिकोण है, विकास उद्‌देश्य है : श्याम बहादुर 'नम्र' / 322-324 ● इंसान और जंगल के रिश्ते फिर से जीवित : बिमलेन्दु मजुमदार / 324-325 ● मजदूर संगठन, समाज परिवर्तन की दिशा में काम करें : हरि ठाकुर / 326-327 ● संघर्ष से निकलती है जन कविता : पुष्यमित्र गुप्त / 327-328 ● छत्तीसगढ़ के मजदूरों के पास नेतृत्व की कमी नहीं : अनिल शुक्ल / 329-336 ● आंदोलन में वारिस तो पूरी पीढ़ी होती है : अनिल चमड़िया / 336-338 ● हम उस भाषा में बोलेंगे, जो भाषा सरकार समझती है : अमित प्रकाश / 338-346 ● बुद्धिजीवियों की भूमिका पर : राकेश दीवान / 346

खंड आठ : जन आंदोलन एवं संगठन

● खंड परिचय / 348 ● मिल-जुल के मयोसन शोषण ला टारबो . . . (गीत) : फागूराम यादव / 349-350 ● मजदूर वर्ग की प्रतिष्ठा की लड़ाई : गणेशराम चौधरी / 351-353 ● संघर्ष और निर्माण की कहानी : प्रस्तुति — अनिल सद्‌गोपाल / 354-374 ● लाल-हरे झंडे के संगठन : प्रस्तुति — हरि जोशी व अनिल सद्‌गोपाल / 374-383 ● छमुमो और चुनाव (दस्तावेज) : छमुमो / 384-386 ● उद्योग हित बनाम मजदूर हित (दस्तावेज) : सत्याराम गुप्ता /

पर एक-दूसरे की भ्रांतियों को दोहराते ही नजर आ रहे थे। सवाल केवल तथ्यों का ही नहीं था। हमने पाया कि नियोगी के विभिन्न कामों की व्याख्या, उनके विचार व दर्शन को लेकर, छमुमो से जुड़े हुए उनके साथियों के मानस में भी अलग-अलग छवियाँ बनी हुई थीं। जहाँ एक ओर यह स्थिति एक गतिशील आंदोलन के लिए स्वाभाविक थी, वहीं दूसरी ओर इसने हमारी जिम्मेदारी कई गुना बढ़ा दी।

चूँकि आंदोलन के इतिहास, चरित्र व दायरे को लेकर उससे जुड़े हुए लोगों के बीच आज भी बहस जारी है, अतः हमने निर्णय किया कि यह पुस्तक यथासम्भव बहस के बिंदुओं पर मूल दस्तावेज व आँकड़े भी प्रस्तुत करेगी ताकि वे नियोगी को समझने का वस्तुनिष्ठ आधार बन सकें, बहस को ठोस धरातल पर टिका सकें। ऐसे दस्तावेजों व आँकड़ों को बटोरने, उनकी प्रमाणिकता की जाँच-पड़ताल करने और उनका सही ऐतिहासिक व सामाजिक-राजनैतिक संदर्भ खोजने का काम हमारे सामने निरंतर चुनौती बना रहा।

इन सब कारणों से पुस्तक की पांडुलिपि को विभिन्न चरणों में देखकर कई मित्रों ने यह टिप्पणी की कि यह पुस्तक तो एक शोध ग्रंथ बनती चली जा रही है। यह कहाँ तक आंदोलन के साथियों के लिए उपयोगी या दिलचस्प होगी, इसको लेकर इन मित्रों ने शंकाएँ भी व्यक्त कीं। परंतु दो कारणों से हमें लगा कि पुस्तक के इस उभरते हुए स्वरूप को हम बरकरार रखना चाहेंगे। पहला, हमारा यह मानना है कि छमुमो के आंदोलन ने मजदूर साथियों में भी जानने-समझने की जबर्दस्त जिज्ञासा व बौद्धिक क्षमता पैदा की है। यह आवश्यक है कि उनको मूल जानकारियाँ, आँकड़े व दस्तावेज उपलब्ध हों, ताकि उनकी व्याख्या और आकलन वे स्वयं करें, न कि उसके लिए हमेशा किसी और पर निर्भर रहें। दूसरा, नियोगी की शहादत के बाद उनके काम व विचारों को वैज्ञानिक ढंग से समझने के लिए जो प्रयास चल रहे हैं, उनके लिए एक ठोस आधार पेश करना, इस पुस्तक की जिम्मेदारी है। यह करते-करते यदि पुस्तक कुछ हद तक एक संदर्भ ग्रंथ की भी शक्ल अख्तियार कर लेती है और कुछ पाठकों के लिए पुस्तक के वे अंश अपेक्षाकृत कम दिलचस्प हो जाते हैं, तो भी आज की स्थिति में यह समझौता आंदोलन के लिए उपयोगी होगा। फिर भी हमने आम पाठक को ध्यान में रखते हुए संदर्भ ग्रंथ और रोचक विवरण की विधाओं के बीच एक संतुलन बनाये रखने की कोशिश की है।

एक बात साफ करना जरूरी है कि यह पुस्तक 'छमुमो की ओर से' नहीं लिखी गयी है, यह 'छमुमो के लिए' लिखी गयी है। अतः छमुमो केवल उस सामग्री के लिए जिम्मेदार है जो उसके सौजन्य से हमें प्राप्त हुई है। शेष सभी सामग्री के लिए उसको पेश करने वाले लेखकों को और अंततः हमें ही जिम्मेदार माना जाये।

शहीद दिवस / 3 जून 1993 — सम्पादकद्वय

पुस्तक में विभिन्न स्थानों पर सम्पादकीय दृष्टि से (लेखकीय नहीं) किसी महत्वपूर्ण विचार-बिंदु को उभारने के लिए शब्दों / वाक्यांशों / वाक्यों को मोटे अक्षरों में प्रस्तुत किया गया है।

इसी प्रकार रचनाओं के शुरू में तिरछे अक्षरों में दी गयीं परिचयात्मक टिप्पणियाँ, कोष्ठकों में दिये गये पृष्ठ संख्याओं के प्रति-संदर्भ एवं पृष्ठों के अंत में प्रस्तुत फुटनोट या पाददीपें (सिवाय पृ. 195 पर दी गयी पाददीप के) भी सम्पादकों की ओर से हैं।

पुस्तक के खंड तीन, छह, सात एवं आठ में दी गयीं नियोगी की रचनाओं व अन्य कुछ लेखों से विभिन्न विषयों पर चंद उद्धरण पृ. 667-671 पर प्रस्तुत हैं जो नियोगी के ही शब्दों में उनके सोच की दिशा का संकेत देते हैं। — *सम्पादकद्वय*

सम्पादकीय आभार

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा (छमुमो) जैसे परिपक्व जन आंदोलन को भागीदारी, सामूहिकता व लोकतांत्रिक आदान-प्रदान के बगैर प्रस्तुत करना असम्भव तो होता ही, उचित भी नहीं होता। अतः पुस्तक की तैयारी में व्यापक भागीदारी रही, अनेक लोगों के सुझाव शामिल किये गये, उनकी आलोचनाओं व शंकाओं के लिए सदा गुंजाइश बनी रही। कई लोगों ने व्यक्तिगत नुकसान सह कर भी अपना योगदान दिया, उन्हें उसके लिए न किसी पारिश्रमिक की दरकार थी, न ही किसी श्रेय की। वे एक ऐतिहासिक आंदोलन के प्रति मात्र अपना कर्त्तव्य निभा रहे थे। हम उनको धन्यवाद देने का दुःस्साहस नहीं करेंगे।

इस काम के दौरान सम्पादन टीम अपने-आप ही उभरती चली गयी (देखिये पृ. 5)। इसके अलावा किसी ने अनुवाद किया, किसी ने चित्र बनाये, किसी ने प्रूफ रीडिंग की और किसी ने भागा-दौड़ी की। अनेक दौर में किये गये ' प्रूफ रीडिंग ' के दुरूह काम में अलीराजपुर (जिला झाबुआ, म. प्र.) से सुश्री जयश्री भालेराव व श्री अमित भटनागर, भिलाई (म. प्र.) से सुश्री सुधा भारद्वाज एवं नयी दिल्ली के श्री प्रभात कुमार बसंत, श्री सलिल मिश्रा व सुश्री विजयश्री ने उत्साहपूर्वक हाथ बँटाया। बंगला सामग्री का हिन्दी में अनुवाद करने में श्री भक्तिपद घोष (दल्ली राजहरा, म. प्र.), सुश्री उत्पला दास (अम्बिकापुर, म. प्र.), सुश्री चित्तरूपा पालित (अलीराजपुर, म. प्र.), सुश्री टुलटुल विश्वास (भोपाल), डॉ. अमिताभ मुखर्जी (दिल्ली) एवं डॉ. विजय बहादुर सिंह (विदिशा, म. प्र.) ने सहयोग दिया। इसी प्रकार अंग्रेजी सामग्री का हिन्दी अनुवाद श्री हरि ठाकुर (रायपुर, म. प्र.), श्री ध्रुव नारायण (दिल्ली), श्री श्याम बोहरे (भोपाल), डॉ. राजीव लोचन (दल्ली राजहरा, म. प्र.) एवं सुश्री कंचन सिन्हा (लखनऊ) के योगदान से सम्पन्न हुआ। गोंडी सामग्री का हिन्दी अनुवाद प्रो. हीरालाल शुक्ल (भोपाल) ने किया है। पांडुलिपि की तैयारी के दौरान कामकाज प्रबंध की बहु-स्तरीय जिम्मेदारी श्री देवतादीन मिश्र (पिपरिया, म. प्र.) ने सँभाली। पांडुलिपि की लेज़र टाइपसेटिंग करने एवं उसकी अंतहीन हो गयी ' प्रूफ करेक्शनों ' व बार-बार किये गये सम्पादकीय संशोधनों को निपटाने की साल भर लम्बी पेचीदा प्रक्रिया के दौरान असीम धीरज बनाये रखने के लिए हम ' चित्रांकन ग्राफ़िक्स ' और विशेष तौर पर उनके अनुभवी कम्प्यूटर आपरेटर श्री बुद्धिराम के आभारी रहेंगे। ऐन मौके पर चित्रकारी करके व कोलाज बनाकर युवा कलाकार श्री निक्की थॉमस ने अमूल्य योगदान दिया।

नियोगी की कई पुरानी रचनाओं की पांडुलिपियाँ उपलब्ध कराने के लिए हम उनके पुराने सहयोगी श्री गाज़ी एम. अंसार के कृतज्ञ हैं। नियोगी की बेटी क्रांति ने घर में पड़े हुए कई डिब्बों और संदूकचियों में से छाँट-छाँटकर दुर्लभ पांडुलिपियाँ व डायरियाँ हमें सौंपकर हम पर गहरा विश्वास जताया है।

हम विशेष रूप से कलकत्ता के प्रकाशक ' अनुष्टुप ' और उनके सम्पादकद्वय सर्वश्री पूर्णेन्दु बसु व शंकर सन्याल का उल्लेख करना चाहेंगे जिन्होंने हमें उनकी बंगला पुस्तक ' संघर्ष औ' निर्माण ' से सामग्री का उपयोग करने की अनुमति दी। हम उन सभी समाचार पत्रों, पत्रिकाओं आदि के प्रकाशकों के प्रति भी आभारी हैं जहाँ से हमने सामग्री उद्धृत करके इस पुस्तक में शामिल की है।

उन लेखकों के हम विशेष रूप से आभारी हैं जिन्होंने इस पुस्तक के लिए न केवल लेख लिखने का परिश्रम किया, बल्कि हमें उनके लेखों में काट-छाँट करने की पूरी छूट भी दी। पुस्तक में दोहराव से बचने की कोशिश में यदि हमने उनके लेखन के साथ कहीं अन्याय कर दिया है तो हमें विश्वास है कि वे अपनी पूरी उदारता के साथ हमें क्षमा करेंगे।

हालाँकि पांडुलिपि तैयार करने में अधिकांश काम लोगों ने निःशुल्क किया, तब भी पुस्तक तैयार होने की प्रक्रिया में साल भर लगा और काफी पैसा खर्च हुआ। इस खर्च के लिए हमने दिल्ली, बम्बई,

मार्क्सवाद के मूल सूत्र

यह लेख नियोगी ने सन् 1971 के आस-पास एक लोकप्रिय बंगला पुस्तिका से प्रेरित होकर लिखा था। इसका उन्हीं के द्वारा संशोधित रूप यहाँ प्रस्तुत है। 20-21 वर्ष पूर्व की उनकी हस्तलिखित पांडुलिपि भी उनके पुराने कागजातों से प्राप्त हुई है। हम नमूने के तौर पर पांडुलिपि के कुछ दिलचस्प अंश नियोगी की लिखावट में ही इस लेख के साथ प्रस्तुत कर रहे हैं। अप्रैल 1991 में जब छमुमो की लोक साहित्य परिषद् ने इस लेख को एक पुस्तिका के रूप में प्रकाशित करना चाहा तो नियोगी ने स्वयं ही इसकी भूमिका लिख दी। – स.

भूमिका

मार्क्सवाद एक वैज्ञानिक विचारधारा है। यह विचारधारा विज्ञान के सिद्धांत पर आधारित होकर सामाजिक-आर्थिक-सांस्कृतिक-राजनैतिक स्थिति का द्वंद्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवादी नियमों से विचार-विश्लेषण करती है एवं भविष्य के लिए एक नयी स्वप्निल समाज-व्यवस्था की कल्पना करती है। यह कल्पना शरद के आसमान में श्वेत बादलों की तरह दिशाहीन या अपने स्रोत से अलग-थलग एक कल्पना-विलास नहीं है। यह एक ऐसी कल्पना है जिस कल्पना को सँजोकर करोड़ों लोग काँटों से भरी हुई सड़क पर चलते हुए खून से शरीर के अंगों को भिगो देते हैं और सारी कठिनाइयों को दूर करते हुए अपनी मंजिल तय करते हैं।

यह कल्पना वैज्ञानिक चिंतन पर आधारित कल्पना है। यह कल्पना शीत की ठंड में काँपते हुए आषाढ़ की दक्षिण-पश्चिम मानसूनी हवा की कल्पना है, जो दक्षिण के समुद्र की कोख से पैदा होने वाली है और फिर एक दिन उसका काले रंग का व्यापक रूप विशाल भारत भूमि में एक जैव-रासायनिक परिवर्तन के उत्साह के साथ रूपांतर का नया आवेश सृष्टि करने वाला है।

अट्ठारहवीं-उन्नीसवीं सदियों की रोमांचक औद्योगिक क्रांति के दिनों में जिन महान वैज्ञानिकों ने 'संयोग से नये आविष्कार' की धारणा को चकनाचूर कर वैज्ञानिक आधार पर नया सोच ढूँढ़ निकाला, उनमें कार्ल मार्क्स प्रमुख थे। कार्ल मार्क्स के मार्क्सवाद ने परिवर्तनशील दुनिया की असीम समय रेखा पर एक लम्बी दूरी तक दिशा-निर्देशक के रूप में अपना स्थान बना लिया।

मार्क्सवाद ने पूँजीवाद का विश्लेषण उसके जन्म-लग्न से शुरू नहीं किया, बल्कि मार्क्सवाद की दूरबीनी आँखों ने सामंतवाद व उसके पूर्व की मानव सभ्यता के आदिम समय तक अपनी नजरें निर्दिष्ट कीं। फिर पूँजीवादी विकास की धारा को देखते हुए विकास की भावी

धारा का अनुमान लगाया, जैसे कि सप्तर्षि का अनुसरण कर ध्रुव तारे तक पहुँचा जाता है। यह अनुमान सामाजिक कार्यकर्ताओं के दिल में भविष्य के समाज का स्वप्न बनकर ' मानव ओजस्विता ' को बार-बार प्रेरित करता रहेगा ताकि वह मार्क्सवाद के आधार पर एक नयी शोषणविहीन सुख-शांतिमय समाज व्यवस्था को जन्म दे सके।

* * *

देश में सामाजिक बदलाव व क्रांति के नारे लगाने वाली पार्टियों की कमी नहीं है। करीब-करीब सभी राजनैतिक दल एक शोषणविहीन समाज व्यवस्था को अपना लक्ष्य बताते हैं। इनमें से बहुत सारे दल इस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा पर चलने का दावा करते हैं। अगर लक्ष्य, विचारधारा व रास्ता एक हैं, तो फिर अलग-अलग पार्टियाँ क्यों ? आम जनता यह बात समझ नहीं पाती। समझने का तरीका भी मालूम नहीं रहने के कारण वे तंग होते, भटक जाते और आखिर में चुप हो जाते हैं।

लेकिन चुपचाप रहने से तो हल नहीं निकलेगा। दिन-ब-दिन भुखमरी बढ़ रही है, बेरोजगारों की फौज बढ़ रही है, महँगाई आसमान छूती जा रही है। क्या करें ? सोचना पड़ता है, सही रास्ता क्या है ? किस रास्ते से मुक्ति मिलेगी ?

लेकिन सही रास्ता ढूँढने का उपाय क्या है ?

मान लीजिये, एक नारियल है। आपने नारियल को हाथ में लेकर देखा, आपको लगा इसका वजन 300 ग्राम है। आपकी पत्नी ने देखा, उनके विचार में उस नारियल का वजन 250 ग्राम है। आपके भाई को लगा वजन 275 ग्राम होगा। आपके दोस्त बोले कि नहीं, वजन 325 ग्राम ही है। सच कौन बोल रहा है ? कैसे पता चलेगा ? तराजू से वजन लिया गया तो नारियल का वजन 200 ग्राम निकला।

तराजू का इस्तेमाल करना ही तौलने का वैज्ञानिक तरीका है।

यही बात समाज विज्ञान में और राजनीति में भी लागू होती है। सही और गलत, सच और झूठ में फर्क करने का भी एक तराजू , यानी वैज्ञानिक तरीका होता है। यह तराजू मार्क्सवाद-लेनिनवाद का तराजू है।

दुनिया में विभिन्न प्रकार की घटनाएँ होती रहती हैं और होती रहेंगी। हम घटनाओं का विश्लेषण नहीं कर पाते, इसलिए निराश होते हैं। अगर हमारे पास मार्क्सवाद-लेनिनवाद का तराजू हो तो हम निराश होंये ही नहीं, बल्कि समस्याओं का हल निकाल सकेंगे।

आप कहेंगे कि हमारे देश में इतने सारे बड़े-बड़े नेता हैं, क्या उन्हें मार्क्सवाद-लेनिनवाद के बारे में पता नहीं है ? उनको पता है या नहीं, इसका भी पता चलेगा मार्क्सवाद-लेनिनवाद के तराजू से।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद को समझने के लिए हमें द्वंद्वात्मक एवं ऐतिहासिक भौतिकवाद को समझना पड़ेगा। मार्क्सवाद वैज्ञानिक वस्तुवादी दर्शन है।

वस्तु क्या है ? जिस चीज को हम देखते हैं, छू सकते हैं, या अनुभव कर सकते हैं, वही वस्तु है। यानी जिसका अस्तित्व है, वही वस्तु है।

मार्क्सवादी वस्तुवादियों का सिद्धांत है कि वस्तु से ही विचार पैदा होता है। भाववादियों

जिसका अस्तित्व है, वही वस्तु है। गीली मिट्टी वस्तु है। गीली मिट्टी को आप दल सकते हैं, मल सकते हैं, आप हाथ की शक्ति से उसको चूर-चूर कर सकते हैं। उसी गीली मिट्टी को आप ईंट के साँचे में डालकर, दिन भर धूप में सूखने दीजिये। शाम को अगर आपको उसे तोड़ने के लिए कहा जाये तो आप सबेरे से ज्यादा ताकत लगाकर ही उसे तोड़ पायेंगे। क्योंकि दिन भर धूप और मिट्टी के संघर्ष के द्वंद्वात्मक नियम से गीली मिट्टी ने सूखी मिट्टी बनकर ज्यादा ताकत संचय कर ली है। अगर उसी सूखी मिट्टी को रात भर कोयले की आग में जलाया जाये तो आग और सूखी मिट्टी की लड़ाई में मिट्टी और ताकतवर बनकर पक्की ईंट बन जाती है। ईंट को तोड़ने की कोशिश करें, खाली हाथ से आप शायद ही तोड़ पायेंगे। गीली मिट्टी से सूखी मिट्टी एवं सूखी मिट्टी से ईंट बनने का गुण मिट्टी में ही है, लेकिन धूप और आग के द्वंद्व ने इस गुण को विकसित किया है।

जन्म के समय हम सभी का वजन 3-4 किलोग्राम से ज्यादा नहीं था, लेकिन आज हम 40 से 60 किलोग्राम के हैं। यह कैसे सम्भव हुआ ? पैदा होते ही हम श्वास लेना शुरू करते हैं, हाथ-पैर हिलाते रहते हैं। सुस्ती लगती है और भूख भी। हम खाना खाते हैं, कभी सो जाते हैं। हमारे अंदरूनी व बाहरी द्वंद्व चलते रहते हैं, हमारा रूपांतर होता रहता है — बचपन से यौवन, यौवन से बुढ़ापा। जब तक हम द्वंद्व यानी लड़ाई कर सकते हैं, तब तक हम जिंदा रहते हैं। जब हम और संघर्ष नहीं कर सकेंगे तब हम मर जायेंगे। यानी जिंदा आदमी मृत आदमी में रूपांतरित हो जायेगा।

कुछ और सरल उदाहरण देखें। आपके हाथ की चमड़ी और पैर की चमड़ी में कुछ फर्क है या नहीं ? पैर की चमड़ी हाथ की चमड़ी से मोटी होती है, क्योंकि उसे हर वक्त जमीन के साथ, जूते के साथ संघर्ष करना पड़ता है। कलम चलाने वाले बाबू और घन चलाने वाले मजदूर के हाथों में फर्क है या नहीं ? रहेगा ही। इसी प्रकार हमारी दाढ़ी एवं सिर के बालों में भी फर्क होता है। दाढ़ी का बाल रोज ब्लेड या छुरे के साथ लड़ाई में ताकतवर यानी मोटा होता है। इन सब उदाहरणों में विकास का असली गुण मांस, चमड़ी व बाल में ही है, लेकिन बाहरी द्वंद्व ने अंदरूनी द्वंद्व के ऊपर प्रभाव जमाया और उसके विकास में सहायता की। तो निष्कर्ष यह निकला कि विकास को समझने के लिए हमें दोनों प्रकार के द्वंद्वों को जरूरत के मुताबिक महत्व देना होगा। दोनों संघर्षों को एक बनाकर गड़बड़ करने से नहीं चलेगा। यह वस्तुवादी शिक्षा का मार्क्सवादी वैज्ञानिक सिद्धांत है।

इस शिक्षा को कोई मानता है, कोई नहीं मानता है। जो मार्क्सवाद को नहीं मानता, क्या उसके हाथ की चमड़ी और पैर की चमड़ी में फर्क नहीं होगा ? सिर के बाल और दाढ़ी के बाल में फर्क नहीं होगा ? जरूर होगा। किसी के मानने या न मानने पर विज्ञान निर्भर नहीं करता। किसी के मानने या न मानने से सच को कोई फर्क नहीं पड़ता।

हमारे देश के कई राजनेता मार्क्स की शिक्षा को नहीं मानते हैं। वे कहते हैं कि मार्क्सवाद विदेशी विचारधारा है, हमारे देश में यह लागू नहीं हो सकती। लेकिन विज्ञान का कोई देश नहीं होता। वैज्ञानिक सच सभी देशों में लागू होता है।

आइये, हम वस्तुवादी दृष्टिकोण से राजनैतिक सवालों पर चर्चा करें। हम जिस समाज व्यवस्था में गुजर-बसर कर रहे हैं, वह वस्तु है, क्योंकि इसका अस्तित्व है। इस समाज में व्यवस्था

सन् 1967 की 20 जून को भिलाई इस्पात कारखाने के एक मजदूर को सिक्योरिटी के जवान बिना कारण बेरहमी से अधमरा होने तक पीटते रहे। चालीस हजार मजदूर संगठित होकर जनरल मैनेजर से इसका जवाब माँगने गये। मजदूरों के ऊपर भयंकर लाठी चार्ज किया गया। गुस्से में आकर मजदूरों ने भी एक-दो बसें जला दीं। लेकिन इसके लिए जिम्मेदार कौन था ?

रायपुर के विद्यार्थियों ने अपनी 17-सूत्री माँगों को लेकर शांतिपूर्ण जुलूस निकाला। आंदोलन को कुचलने के लिए पुलिस ने भयंकर अत्याचार किया। लूटमार, मारपीट, के अलावा नागरिकों के घरों में घुसकर बहू-बेटियों के साथ बलात्कार तक किया गया। क्या इसके जवाब में नागरिक चुप बैठे रहेंगे ?

अन्याय के खिलाफ, दमन के खिलाफ, जनता की हिंसा भड़क उठना अस्वाभाविक नहीं है। जब तक एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग को दबाया जायेगा तब तक यह सब वर्ग संघर्ष के चालू नियम से ही होता रहेगा। हमें ख्याल रखना चाहिए कि बिना कारण कोई भी घटना नहीं होती और शोषण ही जनता की हिंसात्मक कार्यवाही का मुख्य कारण है। इसलिए जिन लोगों ने शोषण का बंदोबस्त टिका कर रखा है, वे ही इस सब के लिए जिम्मेदार हैं।

मार्क्सवाद के विरोधी कहते हैं – मार्क्सवाद विदेशी विचारधारा है, यह भारत में लागू नहीं हो सकती।

भारत के वैज्ञानिक जगदीशचंद्र बसु ने दुनिया में पहली बार यह सिद्ध किया कि पेड़-पौधों में भी जीवन होता है। जगदीशचंद्र बसु तो भारतीय थे, तो क्या यह सच रूस, जर्मनी, चीन आदि में लागू नहीं होगा ? कागज का आविष्कार चीन देश में हुआ, तो क्या हम कागज पर नहीं लिखेंगे ? मार्क्सवादी, मार्क्सवाद-लेनिनवाद एवं माओ-त्से-तुंग के विचार को मानते हैं, क्योंकि यह समाज विज्ञान का सच है।

उदाहरण के लिए भारत के पहले नम्बर के दलाल-पूँजीपति बिड़ला और उसके कारखानों में कार्यरत हजारों मजदूरों को लें। ये दो अलग वर्ग के हैं। बिड़ला शोषक वर्ग का है, मजदूर शोषित वर्ग में हैं। पूँजीवादी समाज में अवश्य ही दो विरोधी वर्गों का अस्तित्व रहता है। द्वंद्वात्मक नियम, यानी संघर्ष के नियम के अनुसार दो वर्गों के बीच वर्ग संघर्ष अनिवार्य है। कार्ल मार्क्स के सिद्धांत पर चलने वाले लोग यह जानते हैं कि एक दिन मजदूर वर्ग पूँजीपति वर्ग को हटा कर राजसत्ता पर बैठेगा यानी मजदूर राज का निर्माण होगा, समाजवाद का विकास होगा। हमारे देश के कुछ नेता अहिंसा को परम धर्म बताते हैं। लेकिन समाज में दो विरोधी वर्गों की अवस्था ही निरंतर हिंसा की सृष्टि कर रही है। जनता को अहिंसावादी बनने की सलाह देना विज्ञान पर आधारित नहीं है। जब तक पूँजीपति की नाजायज हिंसा रहेगी तब तक जनता यह सलाह नहीं सुनेगी।

लेनिन हमें शिक्षा देते हैं कि जनता विभिन्न वर्गों में बँटी हुई है और हर वर्ग उनकी राजनैतिक पार्टियों द्वारा संचालित होता है। कोई भी पार्टी या उसका नेता वर्ग से परे नहीं होता। फलाँ नेता अच्छा और फलाँ नेता खराब – मार्क्सवादी लोग इस ढंग से विचार नहीं करते, वे इस पर वर्ग-दृष्टिकोण से विचार करते हैं। हमें मजदूर और किसान वर्ग के नेता को मानना चाहिए एवं दूसरे वर्ग के नेता का हमें विरोध करना चाहिए। हमारे देश में शोषक वर्ग की संख्या 5 प्रतिशत

मृत्यु-समुंदर के किनारे तुम लोग अमर रहोगे

इस लेख का शीर्षक श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की एक प्रसिद्ध बंगला कविता के शीर्षक 'मॉरोन सागोर पारे तोमूरा ऑमोर' का हिन्दी रूपांतरण है। नियोगी की किशोर अवस्था की डायरियों में लगायी हुई स्वतंत्रता संग्राम के शहीदों पर प्रकाशित सामग्री की कतरनों के साथ उक्त बंगला शीर्षक देखने को मिला है। जून 1977 के गोलीकांड के ग्यारह शहीदों पर नियोगी ने एक श्रृंखला 'साप्ताहिक मितान' में निकाली थी। इसकी दो किश्तें उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं। — स.

<u>पहली किश्त</u>

शहीद सुदामा

निर्मम कत्लेआम के इतिहास में राजहरा माईन्स के ट्रांसपोर्ट मजदूर श्री श्रीराम का 12-वर्षीय पुत्र शहीद सुदामा दल्ली राजहरा के मजदूरों के दिलोदिमाग में एक अनोखे बलिदान की यादगार और प्रेरणात्मक तारा बनकर आंदोलन की हर घड़ी में कुर्बानी की आवश्यकता को ताजा कर रहा है और करता रहेगा। दल्ली राजहरा की कोन्डेकसा प्राथमिक शाला की हर परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने वाले होनहार गरीब छात्र स्वर्गीय सुदामा ने दस हजार मजदूरों के अधिकार हासिल करने की लड़ाई में अपनी जिम्मेदारी पूरी की। जालिम जिलाधीश रमेश सक्सेना के क्रूर पुलिस वालों की अंधाधुंध गोली ने 12-वर्षीय सुदामा को भी निशाना बनाया। पुलिस की बंदूक से निकली हुई गोलियों ने स्वर्गीय सुदामा के पेट को चीरते हुए उसे दल्ली राजहरा की लोहा-पत्थर से भरपूर धरती में मौत की नींद सुला दिया। धराशायी होने के बावजूद भी उस लड़ाकू बालक के चेहरे पर निर्भीकता की लहर थी। उस बालक के चेहरे पर भय का चिह्न तक नहीं उभरा। यह एक अनोखा दृष्टांत है — इतनी कम उम्र में अंधाधुंध गोली से न डरते हुए मजदूर वर्ग के संघर्ष में वीरतापूर्वक मैदान में डटे रहने का अदम्य साहस प्रदर्शित करने का — जो इतिहास में शायद ही कहीं मिलेगा।

लौह अयस्क खदान के मजदूरों की जीवन-मृत्यु की लड़ाई के विरुद्ध दमन और अत्याचार का किस हद तक प्रयोग किया गया, यह उसका एक जीता-जागता उदाहरण है। सुदामा के जीवन को समाप्त होते देखकर भी उसके गरीब मेहनतकश माँ-बाप के दिल में जरा सी भी ठेस नहीं पहुँची, बल्कि अपने पुत्र की कुर्बानी की राह पर चलकर ही मजदूर-किसान राज कायम करने के लिए व्यापक संघर्ष में तमाम मजदूरों के साथ उन्होंने आंदोलन में भाग लिया तथा समस्त

पूरे छत्तीसगढ़ के मजदूरों को व्यापक एकता एवं एक-के-बाद-एक लगातार संघर्ष की आवश्यकता को तमाम मजदूरों को दिखाते हुए स्वर्गीय पुनऊराम ने सी. एम. एस. एस. दफ्तर के सामने उस काली रात्रि में अपनी जान की आहुति दी और अंतिम साँस समाप्त होने के पूर्व तक राजहरा के 10,000 मजदूरों को संघर्ष के जरिये माँगों को हासिल करने के लिए आगाह किया।

पैंतीस वर्ष पूर्व स्वर्गीय पुनऊराम ने बालोद तहसील के मनौद ग्राम में गरीब किसान परिवार में जन्म लिया था। गरीबी और साहूकारी अत्याचार तथा दमन के खिलाफ स्वर्गीय पुनऊराम के दिल में आग भभक रही थी। दमन और अत्याचार की यादों को अपने दिल की गहराई में समेटते हुए वे दल्ली राजहरा पहुँचे। दल्ली राजहरा में रेल्वे में माल चढ़ाने व खाली करने की नौकरी में 5 वर्ष तक कार्य करते रहे तथा अपने परिवार के जीवनयापन के लिए अपनी कठिन मेहनत को बेचते रहे। इसके बाद वे के. एम. एस. एस. समिति के अंतर्गत रेजिंग मजदूर के रूप में काम करने लगे। अपनी धर्मपत्नी हेमीनबाई एवं एक चार-वर्षीय मासूम बच्चे के साथ कमरतोड़ महँगाई को झेलते हुए राजहरा के मजदूरों के संघर्षपूर्ण आंदोलन में भी प्रबल योगदान देते रहे और तब तक मजदूरों के अधिकार की रक्षा के लिए मैदान में डटे रहे जब तक कि निष्ठुर जिलाधीश रमेश सक्सेना की पुलिस की गोली ने उस गरीब मजदूर की जबान को हमेशा के लिए बंद नहीं कर दिया।

आज स्वर्गीय पुनऊराम के संघर्ष की अमर एवं तरोताजा कहानी राजहरा के मेहनतकश वर्ग की जबान तक सीमित नहीं रही, बल्कि पूरे छत्तीसगढ़ के गरीबों के दिलों में भी एक शानदार दीपस्तम्भ बनकर रोशनी को दुनिया में फैला रही है।

शहीद डेहरलाल

राजहरा गोलीकांड में शहीद हुए मजदूर साथी डेहरलाल ग्राम भरदाकला (जिला दुर्ग) के निवासी श्री मायाराम के इकलौते पुत्र थे। मेहनत करने वालों का प्रतिनिधित्व करने वाले स्वर्गीय श्री डेहरलाल 26-वर्षीय नवयुवक थे। वे महामाया माईन्स में चलने वाली ट्रांसपोर्ट कम्पनी में हेल्पर के पद पर कार्यरत थे। उनकी शादी 25-वर्षीया श्रीमती लीलाबाई के साथ हुई थी। दल्ली राजहरा के मजदूरों का शोषण और ठेकेदारों का बढ़ता हुआ अत्याचार श्री डेहरलाल के दिल में तूफान पैदा कर रहा था। राजहरा के खदान मजदूर अपने अधिकारों को हासिल करने के लिए जो आंदोलन चला रहे थे उसमें स्वर्गीय डेहरलाल भी हर वक्त अपना योगदान देते हुए एक मजदूर का फर्ज पूरी तरह निभा रहे थे। 3 जून 1977 को दिन-दहाड़े राजहरा माईन्स के मजदूरों की हत्या करने की साजिश के घेरे में श्री डेहरलाल को भी निर्दयी जिलाधीश ने अपनी बंदूक की गोली का निशाना बनाया। संघर्ष के द्वारा शोषण समाप्त करने और मजदूरों की माँगें हासिल करने के लिए अपनी छाती में पुलिस की गोलियाँ झेलते हुए श्री डेहरलाल राजहरा की पवित्र धरती में समा गये। अंतिम साँस लेने से पहले और बाद में भी श्री डेहरलाल छत्तीसगढ़ के मजदूर-किसानों के दिलों में संघर्ष की राह पर पूरी ताकत और फौलादी एकता के साथ चलने की प्रेरणा दे गये।

❑

(सी .एम. एस. एस. के मुखपत्र ' साप्ताहिक मितान ', 23 सितम्बर एवं 25 अक्तूबर 1977, के अंकों से साभार।)

सर्वहारा वर्ग के आंदोलन पर

सन् 1977 में एक दिन काले बादलों से घिरी रात में लगभग 2 बजे नियोगी अपने युवा साथी अंसार के साथ दल्ली राजहरा के लाल मैदान से घूमते हुए पुराने बाजार तक पहुँचे और वहाँ सड़क के किनारे पड़ी एक खाट पर बैठ गये। फिर उन्होंने अचानक अंसार के झोले में से उसकी नोटबुक और कलम निकालकर ये विचार लिख दिये। — स.

दुनिया में आज तक का इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास है। सर्वहारा वर्ग जिस दिन से जन्मा, उसने उसी समय से एक-के-बाद-एक संघर्ष में भाग लिया है और आज भी प्रति दिन संघर्ष में भाग लेते जा रहा है।

इन लड़ाइयों में भाग लेकर सर्वहारा वर्ग ने अपने पक्ष में बहुत से कानून बनवा लिये हैं।

इसलिए कानून की किताबों में सर्वहारा वर्ग के पक्ष में अनेक कानून देखने को मिलते हैं, जो कि पूर्व की लड़ाइयों के फल हैं।

फिर भी आज तक ऐसे बहुत से कानून हैं, जो सिर्फ पुस्तकों की शोभा बढ़ाने के लिए ही हैं, वास्तव में जिनका पालन नहीं किया जाता है।

राजहरा के वर्तमान आंदोलन उसी प्रकार के कुछ ट्रेड यूनियन अधिकार पाने के लिए शुरू किये गये थे। उदाहरणार्थ,

1. ग्रेच्युइटी, 2. मेडिकल सुविधाएँ, 3. प्राविडेंट फंड (सी. पी. एफ.) का नियमितीकरण एवं 4. सन् 1971 में संसद में पारित बिल (ठेकेदारी प्रथा का उन्मूलन) के अनुसार विभागीयकरण।

संचालन

जनता ही शक्ति का उद्गम है एवं जनता में है असीम संगठन शक्ति। साधारण श्रमिक वर्ग की संगठन शक्ति पर भरोसा करके ही एवं अंतिम पंक्ति में खड़े श्रमिकों में जागृति पैदा करके ही आंदोलन चलाया गया है।

दूसरा — यदि आर्थिक आंदोलन के साथ राजनैतिक आंदोलन भी जोड़ दिया जाये और इसी आंदोलन को व्यापक रूप से जनता के बीच फैला दिया जाये, तो इससे आंदोलन में गति आ जाती है।

इस दृष्टिकोण से भी आंदोलन चलाया जाता है।

(सामने के पृष्ठ पर दिया हुआ नियोगी की लिखावट में नोट गाज़ी एम. अंसार की नोटबुक से साभार।)

होते रहते हैं। आम जनता सामान्यतः शांतिवादी होती है। जनता आंदोलन करती है, प्रजातांत्रिक हक की रक्षा के लिए बैनट एवं बुलेट के सामने छाती फुलाकर निहत्थी खड़ी रहती है। **परंतु शांति आखिर तक बनी रहेगी या नहीं, यह निर्भर करता है राजसत्ता के प्रतिनिधियों, अभिजात वर्ग एवं नौकरशाहों की विवेचना के ऊपर।** कोई भी जनप्रिय आंदोलन तभी हो सकता है जब उसकी माँग सही हो। **सही माँग को ठुकराना व जनता का दमन करना, अगर राजसत्ता के प्रतिनिधियों का लक्ष्य है तो अशांति और हिंसा का राज कायम होता है।** कानूनी हिंसा जनजीवन को त्रस्त करती है, साथ ही नागरिक भय और शंका से भी बंध जाता है। जनवादी लोकतांत्रिक संघर्ष के नेतृत्व में राजसत्ता की हिंसा सूक्ष्म रूप से अंतर्निहित रहती है, इसलिए प्रतिरोध करने की तत्परता भी साधारण रूप से आ जाती है। नाजायज हिंसा के बदले जायज हिंसा अपना मार्ग प्रशस्त करती है। लोकतांत्रिक संघर्ष मुख्यतः रोजी-रोटी की माँग को लेकर, प्रजातांत्रिक अधिकार को लेकर, विभिन्न राजनैतिक समस्याओं को लेकर या दमन और अत्याचार के खिलाफ होता है। इन संघर्षों में से सभी में हम भाग लेते हैं और कुछ में पूर्ण विजय प्राप्त करते हैं तथा अन्य संघर्षों में आंशिक सफलता ही हाथ लगती है। इन संघर्षों का असली लाभ हमारे संगठनों को होता है। एकता मजबूत होती है। हर क्षेत्र में एकता का सूत्रपात होता है, संगठन का जुझारूपन बढ़ता है और प्रतिक्रियावादी शासक वर्ग का चेहरा बेनकाब होता है।

जनवादी लोकतांत्रिक संघर्ष में किसान अपना अधिकार हासिल करता है और अधिकार की रक्षा करते-करते शक्ति संचित करता है। यह शक्ति ग्रामीण क्षेत्रों में गुणात्मक परिवर्तन लाने के लिए सहायक सिद्ध होती है। आज राजहरा के संघर्ष का जो गुणात्मक विकास हुआ है वह विरोधियों के मुँह पर कालिख पोतकर लगातार संख्या में वृद्धि की ओर अग्रसर है और इसने दूसरे क्षेत्र की खदानों में भी लोकतांत्रिक संघर्ष की हवा फैला दी है। आज इस लोकतांत्रिक संघर्ष को पहले से नया रूप देकर कार्यकर्ताओं को चाहिए कि वे ग्रामीण क्षेत्रों में जाकर जनवादी लोकतांत्रिक संघर्ष में कूद पड़ें एवं धीरे-धीरे इन संघर्षों में व्यापक किसान जनता को नेतृत्व दें। इस जनवादी लोकतांत्रिक संघर्ष का मुख्य स्वरूप होगा — सामंतवादी एवं साहूकारों द्वारा अन्यायपूर्ण कब्जा की हुई जमीन गरीब और भूमिहीन किसानों में वितरित करना एवं सरकारी कर्मचारियों (पटवारी, जंगल एवं पुलिस आदि विभागों के कर्मचारियों) के अत्याचार का प्रतिरोध करना आदि।

□

(सी. एम. एस. एस. के मुखपत्र 'साप्ताहिक मितान', 23 सितम्बर 1977, से साभार।)

नेतृत्व के सवाल पर

सुभाषचंद्र बोस को नेताजी सुभाषचंद्र बोस के नाम से पुकारा जाता था। अंग्रेज साम्राज्यवादियों के खिलाफ संघर्ष में भारत की जनता अपने नेताओं को प्यार और इज्जत के साथ याद करती

करके एक नयी राजसत्ता का निर्माण करना। इस सत्ता में मजदूर वर्ग का ही दबदबा रहेगा। इसलिए किसान-मजदूर वर्ग के नेता को अपने भावी कार्यक्रम के प्रति पूर्ण रूप से जागरूक होना जरूरी है।

संशोधनवाद से घृणा करो

संशोधनवादी वह है जो मजदूर वर्ग के नेतृत्व में पूंजीपति वर्ग की विचारधारा लेकर घुसपैठ करता है। वह छुपा हुआ पूंजीपति वर्ग का नेतृत्व मजदूरों की एकता की शक्ति को वर्ग संघर्ष के रास्ते पर न ले जाकर वर्ग समझौते के रास्ते पर ले जाता है। इस प्रकार से यह मजदूर वर्ग की पीठ में चाकू भोंकता है। ये संशोधनवादी हमेशा दुश्मन की ताकत को बढ़ा-चढ़ाकर देखते हैं।

वामपंथी भटकाव से बचो

मजदूरों के नेतृत्व को वामपंथी भटकाव से भी बचना चाहिए। वामपंथी भटकाव वह है जो दुश्मन की ताकत को बिलकुल छोटा करके देखता है। स्वयं की ताकत पर ज्यादा भरोसा करता है, आम जनता के प्रति भरोसा नहीं करता है। हमेशा जनता से एक कदम आगे चलने की नीति अपनाता है जो दीवार से सिर टकराने जैसा है।

मजदूर-किसान के सही नेतृत्व को चाहिए कि वह संशोधनवाद एवं वामपंथी अवसरवाद से बचकर रहे एवं सही आकलन करके सही नीति अपनाये। मजदूर वर्ग के नेतृत्व को चाहिए कि वह सामान्य एवं विशेष इन दोनों स्थितियों का सही तालमेल रखे। उदाहरणतः, पूंजीपति वर्ग आमतौर पर मजदूर-किसान का शोषण करता है। नेतृत्व को यह जानना चाहिए कि वह शोषण के किस पहलू पर पहले आवाज उठायेगा। शोषण पर आधारित व्यवस्था सामान्य है एवं जिस समस्या को लेकर आंदोलन होगा वह है विशेष।

किसान-मजदूर के सही नेतृत्व को निम्नलिखित आचरण विधि पर अमल करना चाहिए :

1. नम्रता से बोलो।
2. सार्वजनिक पैसे को व्यक्तिगत हित में व्यय मत करो।
3. जनता से मामूली सी भी वस्तु मत लो।
4. अगर जनता से कोई भी वस्तु ली है तो उसे सही ढंग से वापस करो।
5. किसी का नुकसान मत करो। अगर नुकसान हो गया हो तो उसका मुआवजा करो।
6. महिलाओं के प्रति इज्जत से पेश आओ।
7. जनता के लिए जियो एवं जनता के लिए मरो।
8. किसी भी कुर्बानी से मत डरो।
9. एक साधारण मजदूर जैसा जीवन बिताओ।
10. जो कुछ भी करो, व्यापक जनता के हित के लिए करो।

किसान-मजदूरों के नेतृत्व को [illegible]

- बैलाडीला की रक्त-रंजित पहाड़ियों से छत्तीसगढ़ में जनयुद्ध की शुरुआत।
- दल्ली राजहरा के खूनी नाटक की नयी कड़ी — किरंदुल कांड।
- आगजनी, हत्या और सामूहिक बलात्कार।
- संशोधनवादियों की नपुंसक राजनीति।
- छँटनी रोकी जा सकती है।

रायपुर से 297 किलोमीटर दूर जगदलपुर और जगदलपुर से 120 किलोमीटर दूर किरंदुल इलाका। आज से 15 वर्ष पूर्व जंगल और काली पहाड़ियों की गोद में एक प्राचीनतम सभ्य समाज की परम्परा और उसके गौरव की निशानी आदिमजाति अपनी जिंदगी जी रही थी, अपनी मस्ती और अपनी मादकता के साथ। यहाँ अपनी प्रेमिका को पाने के लिए जब प्रेमी गाता था —

कि करिट इ नुनि बाईया
मन्न देश इलके नुनि ....

तब इस लोकगीत से जंगल झूम जाता था। मगर आज वह पूरा इलाका, पूरा जंगल दहशत, गुस्से और नफरत की आग में जल रहा है क्योंकि अपना हक मांगने वालों को मौत का तोहफा मिला है, अपनी इज्जत की रोटी कमाने वाली छत्तीसगढ़ी महिलाओं को सामूहिक बलात्कार का शिकार बनाया गया है और नयी जिंदगी के सपने देखने वाले बच्चों को उनकी झोपड़ी में आग लगाकर राख कर दिया गया है।

अंग्रेजों के जलियाँवाला बाग हत्याकांड को भी शरमा देने वाला खूनी नाटक किरंदुल-गोलीबारी के नाम से मशहूर है जिससे छत्तीसगढ़ के नये जनयुद्ध की भूमिका बन रही है।

वहाँ भयंकर आगजनी से दस हजार छत्तीसगढ़ी संतानें बेघरबार हुई हैं। आज वहाँ लोहा-लक्कड़ की घर-घर, मर-मर आवाज की जगह ठेकेदारों के अत्याचार से पीड़ितों की दर्दनाक आवाज, जगह-जगह मानव रक्त के निशान, सामूहिक बलात्कार से पीड़ित महिलाओं का आर्तनाद, हर जगह डाकिनी, योगिनी, राक्षसों के नाटकीय कार्यक्रम, इतिहास को स्तब्ध करते हैं।

बैलाडीला में संशोधनवादी नेतृत्व ने खदान मजदूरों की लौहदृढ़ एकता को ध्वस्त कर दिया। खदान की डिपाजिट न. 14 एवं डिपाजिट न. 5 (जो अभी अभी चालू हुई है) में मशीनीकरण से खनन कार्य होता है। इस कार्य में जुड़े हुए मजदूर भारत के विभिन्न प्रांतों से आये हुए हैं। इसके विपरीत मैन्युअल माईन्स (खदान) के मजदूर प्रायः दुर्ग, बिलासपुर, रायपुर, एवं राजनांदगाँव जिलों के छत्तीसगढ़ी लोग ही हैं। कुछ गंजाम एवं कालाहांडी जिलों के उड़िया मजदूर हैं। गाँवों के ये भूमिहीन एवं गरीब किसान, गरीबी, अकाल व सूखे के कारण गाँव से भागकर नौकरी की तलाश में भटकते-भटकते यहाँ पर आये और लगभग सात-आठ साल से कार्यरत थे।

मालिक

यहाँ दो प्रकार के मालिक हैं। एक नेशनल मिनरल डेवलपमेंट कार्पोरेशन (एन. एम.

ने कम-से-कम 70 मामूली आदमियों को ठेकेदार की पदवी देकर मजदूरों को गुलामी की जंजीर में बाँध रखा है। यह पदवीधारी ठेकेदार लोग अपने मजदूरों को अलग दफाई बनाकर रहने देते हैं और खुद भी उसी दफाई में रहकर मजदूरों के ऊपर चौबीसों घंटे निगरानी रखते हैं। विभिन्न सामाजिक कारणों के बहाने बनाकर मजदूरों को आपस में लड़वाकर खुद मजा लेते हैं। बैलाडीला की मजदूर बस्तियाँ इन ठेकेदारों के नाम से जानी जाती हैं जैसे प्रभु कैम्प, मजराम कैम्प, मिश्रा कैम्प आदि।

काम के घंटे

बैलाडीला में महान 'मई दिवस' की खबर आज तक नहीं पहुँची है। खदान के मजदूर शीत, ग्रीष्म एवं बरसात के तीनों कालों में सबेरे 6 बजे से शाम 6 बजे तक 12 घंटे की शिफ्ट में काम करते हैं। आने व जाने के समय को लेकर इनको काम के लिए 16 घंटे व्यस्त रहना पड़ता है। दिन-रात के शेष आठ घंटे खाना पकाने, नहाने, खाना खाने एवं सोने के लिए रहते हैं। काम के समय के बाद मजदूरों को आपसी मेल-मुलाकातों, मनोरंजन आदि के लिए थोड़ा-सा भी समय नहीं मिल पाता।

मजदूरी की दरें

बैलाडीला और राजहरा में मिलने वाली मजदूरी का तुलनात्मक विवरण निम्नानुसार है —

	बैलाडीला में (रु.)	राजहरा में (रु.)
लौह अयस्क का रेजिंग एवं ट्रांसपोर्टिंग खर्च (लोडिंग-अनलोडिंग मिलाकर)	3.20 प्रति टन	6.00 प्रति टन
दैनिक रोजी वाले मजदूर	3.00 प्रति दिन	12.00 प्रति दिन

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि बैलाडीला का मजदूर 12 घंटे की मेहनत के बाद मात्र 3 रु. ही कमा सकता है। यहाँ 'आयरन ओर वेज बोर्ड' या दूसरे किसी भी प्रकार के वेज बोर्ड की सिफारिश लागू नहीं है। यहाँ किसी भी प्रकार के न्यूनतम वेतन नियम लागू नहीं हैं। 'फाल बैक वेजेस' का तो प्रश्न ही नहीं उठता। छुट्टी का पैसा, मेटरनिटी बेनिफिट (जचकी का पैसा) आदि का तमाम पैसा ठेकेदारों की तिजोरी से निकलता ही नहीं। चिकित्सा का भी बंदोबस्त नहीं होता। बोनस जहाँ 200 रु. मिलना चाहिए, वहाँ 20-25 रु. में ही निपटारा कर दिया जाता है। भ्रष्टाचार शब्द एन. एम. डी. सी. की आचार संहिता में स्थान पा गया है।

मजदूर भूख से तड़पता है। परंतु एन. एम. डी. सी. वालों का कहना है कि नोट यहाँ हवा में उड़ते हैं, जितना हो सके उतना बीनो और झोली भरो। सबके सब अफसर ठेकेदारों से मिले हुए हैं। प्रोजेक्ट इंजीनियर श्री कामला तो पहले कोयला खदान में बोरा कम्पनी के ही मैनेजर थे।

जनवरी 1978 तक का आय-व्यय का हिसाब (करोड़ रुपयों में)

आय (रु.)		व्यय (रु.)	
विदेशी मुद्रा	309.00	रेल्वे खर्च	42.00
जहाज किराया	37.00	परियोजना व्यय	35.50
निर्यात कर	35.00	स्थापना खर्च	4.00
रेल्वे किराया	174.00		81.50
राज्य शासन को रायल्टी	7.50		
मजदूर कल्याण कोष	1.10	शुद्ध लाभ	482.10
योग	563.60	योग	563.60

मशीनीकरण के बाबत एटक के बड़े नेताओं की कार्यवाई

रूसी सामाजिक साम्राज्यवाद की दलाल एटक के नेताओं ने सोवियत रूस के इशारे पर, जब इंदिरा गांधी के जमाने में कोन्डे प्लांट (दल्ली) एवं डिपाजिट न. 5 (बैलाडीला) के मशीनीकरण का प्रस्ताव सामने आया एवं उस पर अमल होने लगा, तब विदेशियों के पैर चाटने वाले एटक के शीर्षस्थ नेताओं — बागी-श्रीवास्तव प्रभृति — ने मजदूरों की छँटनी के बारे में लिखित समझौता कर लिया था और अब मजदूरों की छँटनी होने लगी तब मजदूरों को धोखा देने के लिए भूख हड़ताल का ढोंग रचा। ठेकेदारों से छँटनी का पैसा माँगा और अपने को निर्दोष बताने के लिए भाषणबाजी कर मजदूरों को गुमराह करते रहे।

सोवियत रूस की पूंजी का वर्ग-चरित्र

सोवियत रूस की पूंजी जब से इस देश में आनी चालू हुई तब से संशोधनवादी डांगे गुट एवं नव-संशोधनवादी नामजद नेतृत्व ने ढिंढोरा पीटना चालू किया कि सोवियत पूंजी प्रगतिशील पूंजी है। इस पूंजी के रहते भारत की आजादी सुरक्षित रहेगी। यह पूंजी देश की आजादी का कवच होगी।

परन्तु सोवियत पूंजी ने भारत की प्रतिक्रियावादी नौकरशाही और दलाल पूंजी के साथ साँठ-गाँठ की, यह बात छुपायी गयी है। खेमका एंड कम्पनी भारत के 75 दलाल पूंजी घरानों में से एक है।

सोवियत रूस इस खेमका एंड कम्पनी के द्वारा भारत में तमाम माईन्स को भारी मशीन बेचता है। दल्ली के कोन्डे प्लांट एवं बैलाडीला के डिपाजिट न. 5 में जो भी मशीन आयी है, उन्हें सोवियत रूस ने खेमका कम्पनी के द्वारा बेचकर अपना सामाजिक साम्राज्यवादी चेहरा बेनकाब किया है।

नेतृत्व की गलतियाँ

1. खदान मजदूरों में से मजबूत समझदार कार्यकर्ता तैयार न कर पाना।
2. अशोक माइनिंग वाले मजदूरों के चले जाने पर आंदोलन पर पुनर्विचार न कर पाना।
3. छँटनी से काफी दिन पहले से (कम-से-कम तीन महीना) ही आंदोलन शुरू न करना।
4. आदिवासी किसानों को इस आंदोलन में न समेट पाना।
5. जानते हुए भी इंद्रजीत सिंह संशोधनवादी गद्दार नेतृत्व से अलग न हो पाये।
6. एस. के. एम. एस. के अंदर के घूसखोर, मालिक-परस्त नेताओं के प्रति इंद्रजीत सिंह उदार थे। उन्होंने इनका डटकर विरोध नहीं किया था।
7. एस. के. एम. एस. के पदाधिकारियों एवं कार्यकारिणी में खदान एवं लोडिंग मजदूरों को स्थान न दे पाना।
8. प्रजातांत्रिक आंदोलन के बारे में वर्तमान परिस्थिति के मुताबिक असली तजुर्बा न होना।
9. मजदूरों में राजनैतिक चेतना का अभाव।

5 अप्रैल : छत्तीसगढ़ के इतिहास का काला दिन

5 अप्रैल 1978 – मजदूर तीन हिस्सों में बँटे थे। जनरल मैनेजर के आफिस के सामने आधे मजदूर धरना दे रहे थे। कुछ मजदूर बंकर पर पहरा दे रहे थे और बाकी मजदूर अपनी झोपड़ियों में चले गये थे। 2 अप्रैल को श्री चंचना, बीरा कम्पनी के मैनेजर, खान, सिद्दीकी, जोशी, कुछ पेटी ठेकेदार एवं पुलिस अधिकारी तथा एन. एम. डी. सी. के उच्च अधिकारियों की बैठक हुई। श्री चंचना का कहना था कि जब तक आंदोलन में हिंसा नहीं आयेगी तब तक मजदूर का पल्ला भारी रहेगा। मजदूरों को सताओ, तब मजदूर हिंसा पर उतारू होंगे और तब पुलिस के जवान भी अपनी ताकत बता सकेंगे। श्री चंचना का हथकंडा मान लिया गया। खान-सिद्दीकी की जोड़ी कैम्प में आकर लाल झंडा मजदूरों के खिलाफ घृणा फैलाने का काम करने लगी। तिरंगा झंडे वालों ने एक लाल झंडा मजदूर मुखिया को तीन दिन तक घर में बंद रखा। उस मजदूर मुखिया का खाना-पीना, टट्टी-पेशाब आदि बंद कर दिया गया।

सिक्यूरिटी फोर्स के जवान तो आधा पशु होते ही हैं। इनको बताया गया कि जवान महिलाओं की छेड़छाड़ चालू करो। सिक्यूरिटी के जवान महिलाओं पर कूद पड़े एवं बरामदा पर ही महिलाओं की छाती दबाना तथा बलात्कार करने का सिलसिला जारी किया। मजदूर बौखला उठे। इंसपेक्टर शर्मा का काम था – इंद्रजीत को खोजना। इस बहाने वह किसी के भी घर में घुस जाता था और विरोध करने पर धक्का-मुक्की एवं चाँटे से स्वागत करता था। अत्याचार एवं पाशविक दमन से मजदूर त्रस्त हो रहे थे। उनके अंदर नाजायज हिंसा का जायज हिंसा से प्रतिरोध करने की भावना बनती गयी। परंतु ढोंगी के चेले तो हिंसा शब्द से डर जाते हैं। प्रतिरोध की लाइन न बनाकर उन्होंने हाथ-पैर ढीला कर मजदूरों को मार खाने के लिए मजबूर किया और पुलिस एवं सिक्यूरिटी वालों की पाशविकता को बढ़ावा दिया।

बहुत से मजदूर मुखियाओं एवं कुछ पुलिस जवानों का कहना है कि अगर शुरू से ही मजदूर तगड़ा विरोध करते तो शायद हिंसा को रोका जा सकता था।

मुख्यमंत्री सखलेचा बोलते हैं

"बलात्कार नहीं हुआ है।" — जेलनबाई पचेड़ा गाँव वाली का डाक्टरी मुलाहिजा करके सखलेचा जी को खबर भेजी जाये। अनूपा की एक 18 साल की युवती पर कम-से-कम 10-12 पशुओं ने बलात्कार किया। उसके बाप ने रोते-रोते अपनी इकलौती बेटी के साथ बैलाडीला छोड़ दिया। सखलेचा जी, खबर लीजिये।

3 अप्रैल 1978 तक एक पाँच-छह साल के बच्चे की अधजली लाश झोपड़ी में तथा कैम्प में मौजूद थी जिसे उस रात को हटाया गया। इस बात का मैं खुद गवाह हूँ। कम-से-कम 3,500 मजदूरों की झोपड़ियाँ आग में जलकर राख में परिवर्तित हो गयीं। इनमें कम-से-कम दस हजार लोग रहते थे। [illegible] के साथ इस अत्याचार एवं दमन की तुलना की जा सकती है।

छत्तीसगढ़ के दो केंद्रीय केबिनेट मंत्रियों के दो तोहफे

छत्तीसगढ़ की एक करोड़ जनता के लिए केंद्रीय शासन ने दो केबिनेट मंत्री यहाँ से लिये हैं। दोनों की तरफ से एक-एक तोहफा क्रमशः दल्ली राजहरा एवं बैलाडीला को मिल चुका है। अब एक केंद्रीय राज्यमंत्री एवं प्रादेशिक मंत्री नये हुए हैं। क्या पाँच साल पूरा होने तक सबकी तरफ से एक-एक तोहफा और मिल जायेगा?

वर्तमान परिस्थिति

गोलीकांड के बाद काफी दिन बीत गये हैं। देश भर में धिक्कार हो रहा है। विभिन्न पार्टियों के नेतागण नालंदा के ध्वस्त स्तूप की भांति किरंदुल पर्यटन पर आ रहे हैं। परंतु कोई भी वर्तमान आतंक के वातावरण को हटाने के लिए कदम नहीं उठा रहे हैं।

आज भी उतना ही आतंक जमा हुआ है। रोज-ब-रोज एक-दो मजदूर गिरफ्तार किये जा रहे हैं। पुलिस एवं सिक्यूरिटी के लोग पेट्रोलिंग कर रहे हैं। मजदूरों के छोटे-छोटे नेताओं को भी गिरफ्तारी का डर दिखाकर भगाया जा रहा है। [illegible] के खिलाफ बोलनेवाले मजदूरों को काम से निकाला जा रहा है। पुलिस के जवान शराब पीकर महिलाओं के साथ अश्लील व्यवहार कर रहे हैं। पुराने छत्तीसगढ़ी मजदूरों को हटाकर नये उड़िया, गंजामी मजदूर भरती किये जा रहे हैं। मामूली इलाज कर गोली से घायल मजदूरों को छुट्टी दी जा रही है। लोग भूखे मर रहे हैं। एस. के. एम. एस. के नेताओं के दर्शन नहीं हो रहे हैं। कहाँ गये वे क्रांतिकारी युवक नक्सलाइट? और कहाँ गया जन युद्ध का वह नारा जिसकी टंकार से बैलाडीला की पहाड़ियाँ खून से लाल हो गयी हैं।

छँटनी रोकी जा सकती है

मशीनीकरण [illegible]

सैद्धांतिक रूप से जनता पार्टी सरकार ने यह मान लिया है कि देश में जो बेरोजगारी की समस्या है, उसका हल निकाला जायेगा। चुनावी घोषणा पत्र में यह बताया गया था कि पूरे

जमीन-आसमान का फर्क है। उन देशों में हमारे देश जैसी न तो बेरोजगारों की फ़ौज मौजूद है, न ही दो-तीन टन पत्थर फोड़ने जैसे काम के बारे में बात करना तो दूर रहा, सोचा भी नहीं जाता है। परंतु हमारे देश का मजदूर वर्ग इतना मेहनती है कि यह सब काम आसानी से करता है। जहाँ तक क्वालिटी का सवाल है, अर्द्ध-मशीनीकरण पद्धति में क्वालिटी पर भी ध्यान दिया जा सकता है।

हम सरकारी अर्थवाद को दावे के साथ बता सकते हैं कि अगर बैलाडीला डिपाजिट न. 5 एवं दल्ली राजहरा के कोन्डे प्लांट का पूर्ण मशीनीकरण न करके अर्द्ध-मशीनीकरण किया जाये तो –

1. सस्ती कीमत में लौह अयस्क का उत्पादन हो सकता है।
2. लौह अयस्क की क्वालिटी भी इस्पात संयंत्र की आज की जरूरतों के अनुरूप हो सकती है।
3. प्लांट बनाने में जितना खर्च हुआ है, वह खर्च अल्प समय में वसूल हो सकता है।
4. काम में लगे हजारों मजदूरों को स्थायी रूप से काम देकर छँटनी के भय से बचा सकते हैं।

इसके बारे में हम निम्न प्रस्ताव सरकार के सामने रखते हैं और विशेषज्ञों से हिसाब कर इस पद्धति के बारे में राय देने के लिए अनुरोध करते हैं।–

उदाहरण के रूप में यहाँ सिर्फ दल्ली राजहरा के ही बारे में उल्लेख किया जा रहा है, जो कि बैलाडीला के डिपाजिट न. 5 पर भी लागू हो सकता है।

दल्ली राजहरा का स्वचालित कोन्डे प्लांट चालू होने पर उस प्लांट में सिर्फ दो सौ आदमियों की जरूरत रहेगी। परंतु दल्ली राजहरा, झरनदल्ली व मयूरपानी की पहाड़ियों में 8,000 मजदूर काम कर रहे हैं। यानी कोन्डे प्लांट चालू होते ही 8,000 मजदूर बेरोजगार हो जायेंगे। परंतु अगर इस कोन्डे प्लांट में अर्द्ध-मशीनीकरण पद्धति लागू की जाये तो 8,000 मजदूरों की नौकरी बचायी जा सकती है एवं पूर्ण मशीनीकरण की तुलना में और भी अधिक सस्ती कीमत में और अच्छी क्वालिटी का माल लिया जा सकता है एवं साथ-साथ कोन्डे प्लांट का भी उपयोग हो सकता है।

कोन्डे प्लांट को अगर पूर्ण मशीनीकरण के सिद्धांत पर चलाया जाये तो राजहरा प्लांट[1] के समान 'वैज्ञानिक माइनिंग' के अनुरूप निम्नलिखित ढंग से काम होने का प्रस्ताव है – 1. प्रॉस्पेक्टिंग का काम, 2. क्वालिटी ब्लाकिंग, 3. शावेल चलाने लायक प्रशस्त सड़क, 4. ब्लाक प्रीपरेशन, 5. ड्रिलिंग – उरल 61 एवं एस. बी. एस. एच. मशीनों से, 6. ब्लास्टिंग,

---

[1] राजहरा खदान सन् 1960 से ही सोवियत तकनीकी सलाह पर पूर्ण मशीनीकरण के सिद्धांत पर चलायी जा रही है, जबकि दल्ली समूह की खदानें (मयूरपानी, कोन्डे, झरनदल्ली आदि) 'मेन्युअल मेथड' [illegible] के सिद्धांत पर चलती रही हैं। बी. एस. पी. आपातकाल से ही इस कोशिश में रहा है कि इन खदानों का भी पूर्ण मशीनीकरण कर दिया जाये जिसके तहत सन् 1978-79 में 'कोन्डे प्लांट' ([illegible] भी कहा गया) लगाने का प्रस्ताव विचाराधीन था। सी. एम. एस. एस. ने इसी के विकल्प में अर्द्ध-मशीनीकरण का प्रस्ताव सामने रखा और इसके लिए संघर्ष किया।

इस पद्धति (अर्द्ध-मशीनीकरण) में लौह अयस्क की दर में पूर्ण मशीनीकरण की तुलना में 25 प्रतिशत उत्पादन लागत में कटौती हो सकती है। इस दावे के लिए तर्क –

1. ऊपर बतायी गयी सड़क व ड्रिलिंग मशीन की उत्पादन कीमत में उल्लेखनीय कटौती होगी।
2. आज जहाँ मैन्युअल खदान में मजदूर अयस्क की रेजिंग के बाद सॉर्टिंग, स्क्रीनिंग एवं स्टैकिंग करते हैं, वहाँ मजदूर सिर्फ 100 मि.मी. साईज़ में रेजिंग एवं स्टैकिंग करेंगे। इससे मजदूर पहले से अधिक माल का उत्पादन कर पायेगा जिससे अयस्क की कीमत में कमी होगी।
3. 'पीस-रेटेड'[1] मजदूर के रख-रखाव का खर्च नहीं है, जबकि शावेल के रख-रखाव का खर्च करीब 82 लाख रुपया है।

   अगर रेजिंग मजदूर का काम शावेल एवं 'जॉ क्रशर' से लिया जाता है, तो सिर्फ शावेल के नाम पर सालाना निम्नानुसार खर्च होता है–

सालाना खर्च प्रति पावर शावेल (1978)

बाजार में एक पावर शावेल की कीमत–रु. 45 लाख

	विवरण		रु. (लाख में)
क)	ब्याज	–	4.50
ख)	घिसाई (डिप्रीसिएशन)	–	4.50
ग)	रिप्लेसमेंट, डेवलपमेंट खर्च	–	2.00
घ)	बिजली खर्च (रु. 50/- प्रति घंटे की दर से)	–	1.08
च)	लुब्रीकेशन खर्च	–	0.28
छ)	अफसरों एवं कुशल मजदूरों पर खर्च	–	4.00
	योग	–	16.36

दल्ली माईन्स के लिए 5 शावेल की आवश्यकता है। इसलिए 5 शावेल का सालाना खर्च लगभग रु. 81.80 लाख होगा।

इतने खर्च में दस हजार 'पीस रेटेड' मजदूरों की रोजी-रोटी का प्रबंध हो सकता है।[2]

4. अर्द्ध-मशीनीकरण में ड्रिलिंग खर्च में भी बचत होगी–

पूर्ण मशीनीकृत पद्धति		अर्द्ध-मशीनीकृत पद्धति	
विवरण	रु.	विवरण	रु.
क) प्रति मीटर ड्रिलिंग खर्च – उरल 61 / एस.बी.एस.एच. मशीनों से	111.00	क) जैक हेमर ड्रिलिंग – प्रति मीटर खर्च	4.30
ख) प्रति टन खर्च	3.70	ख) प्रति टन खर्च	1.50

[1] वह मजदूर जिसकी मजदूरी का भुगतान उसके द्वारा किये गये दैनिक उत्पादन के हिसाब से किया जाता है।

[2] इस खर्च में पावर शावेल के लिए होने वाले उपरोक्त सालाना खर्च के अलावा 'जॉ क्रशर' का सालाना खर्च भी जोड़ना होगा जो मशीनीकृत खनन का अभिन्न हिस्सा है।

किया गया है। परंतु पिछली सरकार ने इसका इस तरह उपयोग किया कि वह जनता पर एक बर्बर हमला था। जनता ने भी उसका प्रतिरोध किया और इमर्जैंसी व इंदिरा सरकार दोनों को उखाड़ फेंका। बैलाडीला में मशीनीकरण के फलस्वरूप छँटनी हुई और इतना बड़ा आंदोलन और गोलीकांड हुआ। इसमें जनता और उत्पादन दोनों का नुकसान हुआ। **अतः जनता के हित का पूरा-पूरा ध्यान रखकर और जनता को साथ में लेकर ही उत्पादन व्यवस्था में परिवर्तन लाया जा सकता है।**

❑

(छमुमो के सौजन्य से।)

2-3 जून शहीद दिवस – शपथ दिवस

आपात्काल के अत्याचारों एवं तानाशाही घुटन को खत्म करने के संकल्प से गठित जनता पार्टी सरकार को केंद्र में बने हुए अभी तीन माह भी नहीं बीते थे। मध्य प्रदेश में राष्ट्रपति शासन लागू था। 2 जून 1977 की रात को और फिर 3 जून को पूर्वान्ह में दुर्ग जिला पुलिस ने नवगठित सी. एम. एस. एस. के हजारों मजदूरों पर अंधाधुंध गोलियाँ चलायीं। यह जनता पार्टी सरकार का पहला गोलीकांड था, बाद में तो ऐसे कांड देश के कई हिस्सों में हुए। एक साल बाद यूनियन ने 2-3 जून को 'शहीद दिवस – शपथ दिवस' मनाकर अपने 11 शहीद साथियों को श्रद्धांजलि दी। उसी अवसर पर नियोगी ने निम्नलिखित लेख प्रसारित किया था।

— स.

एक इंसान के जीवन के समान ही समाज का भी जन्म होता है, समाज जवान होता है, वृद्ध होता है एवं पुराने समाज की मृत्यु के बाद नया समाज उसका स्थान लेता है। आज के भारत का आधा सामंतवादी, आधा औपनिवेशिक समाज प्रौढ़त्व से गुजर रहा है। इस समाज का और विकास वर्तमान ढाँचे के अंतर्गत सम्भव नहीं है।

यथास्थितिवादी इस समाज को किसी भी हालत में टिका कर रखना चाहते हैं। दलाल-पूँजीपति, सामंतवादी आदि लुटेरे वर्ग के लोग यथास्थितिवादी हैं।

क्रांतिकारी इस समाज में गुणात्मक परिवर्तन लाना चाहता है जिस परिवर्तन से समाज में विकास का दरवाजा खुल जाता है। यह विकास उत्पादन के विकास के साथ-साथ जनजीवन में आर्थिक, सांस्कृतिक व राजनैतिक विकास लाता है।

भारत के वर्तमान अर्द्ध-सामंतवादी, अर्द्ध-औपनिवेशिक समाज के खात्मे के युग में लुटेरा

लाने वाले आश्वासन देकर तैमूरलंग के सिंहासन पर आसीन हुई थी। नयी जनता सरकार का वर्ग चरित्र कांग्रेसी सरकार के जैसे ही सामंतवादी, दलाल नौकरशाही पूँजी का था। दमन, अत्याचार में भी वह इंदिरा तानाशाही से कुछ कम नहीं थी, यह बात सिद्ध हुई 2 जून की काली रात एवं 3 जून की भरी दोपहरी में। लिखित एग्रीमेंट को न मानकर ठेकेदार भाग खड़े हुए एवं शासन के निर्मम हथियार बंदूक को आगे बढ़ा दिया गया। तत्कालीन कलेक्टर रमेश सक्सेना ने वर्दीधारी हथियारबंद गुंडों को नेतृत्व दिया। 2 जून की रात के अंधेरे में मजदूर नेता को गिरफ्तार करने का बहाना बनाकर सात मजदूरों को धराशायी किया, जिसमें महिला नेत्री अनुसूइया बाई एवं बालक सुदामा भी शामिल थे। छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ का मैदान ऐतिहासिक संघर्ष एवं बलिदान के मैदान के रूप में परिवर्तित हो गया। 10-12 हजार मजदूरों ने मजदूर नेता की मुक्ति की माँग को लेकर हत्यारी पुलिस वाहिनी को घेर लिया एवं जहाँ शहीद मजदूरों की लाशों को इज्जत के साथ यूनियन का झंडा ओढ़ा दिया गया, वहीं कसाइयों को नंगा कर गरम मुरम के ऊपर सुला दिया। निष्ठुर शासन तंत्र के खिलाफ असीमित घृणा आँसुओं में रूपांतरित हुई और आँसू खूँखार गुस्से में बदल गये।

3 जून को दोपहर 12 बजे फिर कई बार गोली चली, 4 मजदूर साथियों ने शहीद का दर्जा प्राप्त किया। जनता सरकार का वर्ग चरित्र पहली बार भारत की जनता के सामने बेनकाब हुआ। कुल 11 साथी शहीद हुए, अनेक लोग घायल हुए।

ठेकेदार, बी. एस. पी. मैनेजमेंट एवं शासन ने सोचा था कि गोली चलाकर मजदूरों की एकता तोड़ देंगे परंतु लुटेरों का सपना सफल नहीं हुआ। मजदूरों ने कर्फ्यु, 144 धारा झेलते हुए 18 दिन हड़ताल में बिता दिये। मजदूरों का जीवन संघर्ष, दृढ़-प्रतिज्ञ भावना एवं महान संघर्षशील एकता के सामने, प्रतिक्रियावादियों ने घुटने टेक दिये। हक प्राप्ति के संघर्ष में पूर्ण विजय प्राप्त हुई।

छत्तीसगढ़ की जमीन में शहीदों के खून से क्रांति का बीज बोया गया है। अब छत्तीसगढ़ की संतान ने अपने अधिकारों को पहचान लिया है। छत्तीसगढ़ की धरती सोने जैसा धान पैदा करती है, धरती के नीचे लोहा पत्थर, चूना पत्थर, टिन, कोयला, यूरेनियम, डोलोमाइट, सोपस्टोन, क्वार्ट्ज़ाइट आदि कीमती खनिज भरा हुआ है, जंगल में सरई, सागौन, शीशम, बाँस आदि सम्पदा भरी हुई है, फिर भी इस धरती का बेटा भूखा क्यों रहेगा ? सेठ, बनिया, मालगुजार, ठेकेदार एवं अफसर के चक्र को उसने बहुत दिनों तक बर्दाश्त किया, अब और नहीं। 2 जून 1977 को जन युद्ध का बिगुल बज गया है। मुक्ति चाहिए, शोषण से मुक्ति, दमन से मुक्ति, अत्याचार से मुक्ति !

खदान मजदूर ने शहीदों की छाती से चुहते हुए लहू से टीका लिया है, खदान मजदूर की आँखों में सपना है मुक्त छत्तीसगढ़ का, नये छत्तीसगढ़ का, जनवादी लोकतांत्रिक छत्तीसगढ़ का एवं समाजवादी भारत के निर्माण का। खदान मजदूर आज शपथ लेता है, किसानों को मित्र बनाने की, व्यापक किसान समुदाय को नेतृत्व देने की।

नया छत्तीसगढ़ अब दूर नहीं !

किसी हथियार के कहीं गुंडागर्दी करे तो सिर्फ 5 आदमी भी उसकी अच्छी मरम्मत कर सकते हैं। परंतु वही एक गुंडा कोई घातक हथियार रखे तो उस हथियार के आतंक से 500 आम आदमी डर जाते हैं और उसकी गुंडागर्दी चलती रहती है। मुट्ठी भर शोषक वर्ग शोषण, अत्याचार, उत्पीड़न आदि करता है। मजदूर-किसान वर्ग, पुलिस आदि के नहीं रहने पर उनका चुन-चुनकर सफाया कर सकता है। उनका सफाया न हो एवं उनकी लूट-खसोट जारी रहे, इसलिए ही पूँजीपतियों ने पुलिस-फौज आदि का बंदोबस्त कर रखा है। नहीं तो, जनता का थोड़ा गुस्सा ही उन्हें भस्म कर सकता है।

अगर यह बात सच है कि पूँजीपतियों एवं सामंतवादियों के राज में आतंक एवं लूट-खसोट बराबर चलती रहेगी तो मजदूर, किसान, बुद्धिजीवी एवं अन्य शोषित वर्ग के साथियों को इस बात पर काफी ध्यान देना चाहिए कि हम आतंक और शोषण का मुकाबला कैसे करें ? बंदूक का मुकाबला कैसे करें ? क्या इसी तरह बार-बार हजारों निहत्थे मजदूरों को बंदूक के सामने झोंका जायेगा ? **क्या हर एक गोलीकांड के बाद शोषक वर्ग को कोसकर, शहीदों की लिस्ट बनाकर पूजा करने से हमारी जिम्मेदारी खत्म हो जाती है ? नहीं ! बिलकुल नहीं !**

आज परिवर्तन का युग है। किसान, मजदूर, बुद्धिजीवी एवं अन्य शोषित वर्गों के लोग एक गुणात्मक परिवर्तन की प्रसव वेदना एवं आवश्यकता अनुभव कर रहे हैं। हमारे देश में इस गुणात्मक परिवर्तन का दूसरा नाम है — 'हमारे देश की क्रांति'। आज तमाम क्रांतिकारी वर्ग को क्रांति के काम तेज करने की प्रक्रिया में जुटना पड़ेगा तभी देश की मुक्ति होगी। तभी मजदूर-किसानों की छाती से लहू नहीं टपकेगा। एक नयी राजसत्ता का निर्माण होगा, असीम सुख-शांति एवं खुशहाल समाज व्यवस्था की स्थापना होगी।

परंतु यदि क्रांति करना है तो एक सशक्त क्रांतिकारी पार्टी होना अनिवार्य है। एक सही मार्क्सवादी-लेनिनवादी वैज्ञानिक सिद्धांत के आधार पर सही पार्टी ही क्रांति को नेतृत्व दे सकती है। और एक सफल क्रांति के बाद ही मजदूर-किसानों की छाती से कभी लहू नहीं टपकेगा। ❑

(छमुमो की लोक साहित्य परिषद् के सौजन्य से।)

नहीं दिया जाता है। परिणामस्वरूप खदानों की स्थिति बदतर होती चली जाती है। और उत्पादन घटकर एकदम कम हो जाता है।

सहकारी समितियाँ

मजदूरों को ठेकेदारी व्यवस्था पसंद नहीं आयी। संगठित मजदूरों के आंदोलन को दिग्भ्रमित करने की दृष्टि से समाज विज्ञान के शब्दकोष से एक मधुर शब्द ढूँढ़ा गया — 'सहकारी समितियाँ'। सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में गैर-समाजवादी, फासीवादी तथा औपनिवेशिक प्रक्रियाओं पर आधारित सहकारी समितियों का तथाकथित समाजवादी ढाँचा लागू किया जाने लगा। परिणाम वही हुआ जो रेगिस्तान में धान की फसल बोने पर होता है। ठेकेदारी व्यवस्था कागजों पर समाप्त कर दी गयी, परंतु वास्तविकता में यह कुछ नहीं था, वरन् 'नयी बोतल में पुरानी शराब' ही पेश की गयी थी। सहकारी समितियों के नाम पर वही पुराने तौर-तरीके जारी रहे। ठेकेदार का अस्तित्व समाप्त हो गया परंतु मजदूरों के बीच ठेकेदारी व्यवस्था कुछ निहित स्वार्थों द्वारा लगातार चलायी जाती रही। मजदूरों की दशा बदतर होती चली गयी। मुनाफा कमाने के बजाय समितियाँ घाटे में चलने लगीं और इन घाटों को खून और पसीना बहाते हुए मजदूरों की कमाई से पाटा गया। बहरहाल, एक 'उपलब्धि' यह हुई कि सहकारी समितियों के इन घपलों के कारण समाजवादी प्रयोगों के बारे में संदेह उत्पन्न करने वाले पूँजीवादी षड्यंत्र सहकारी समितियों के सहारे पूर्णतया सफल हुए।

विभागीयकरण

यह मजदूरों द्वारा चलाये जाने वाले सतत संघर्षों का परिणाम है। ठेकेदारी व्यवस्था तथा सहकारी समितियों का अभिशाप अभी भी दल्ली की लौह अयस्क की खदानों पर छाया की तरह पीछे पड़ा है। वहाँ के मजदूर विजय के अगले कदम अर्थात् विभागीयकरण के लिए संघर्ष कर रहे हैं। विभागीयकरण मजदूरों को इतना प्रिय क्यों है ? क्योंकि,

1. यह प्रतिष्ठा तथा स्थायी भविष्य से जुड़ा है। उसी इस्पात संयंत्र के लिए लगातार काम करने के बावजूद ठेका व सहकारी समितियों के मजदूरों को संयंत्र के अन्य नियमित कर्मचारियों की भाँति स्थायित्व का अधिकार नहीं है। वे हीन-भावना से ग्रस्त हैं। विभागीयकरण होने से इस्पात संयंत्र के एक कर्मचारी के रूप में मजदूर को एक स्थायी भविष्य तथा यथोचित प्रतिष्ठा मिल सकेगी।
2. ठेकेदार तथा सहकारी समितियों द्वारा किये जाने वाला आर्थिक शोषण सदा के लिए समाप्त हो जायेगा।
3. विभागीयकरण हो जाने पर भिलाई इस्पात संयंत्र मजदूरों तथा उनके परिवारों के लिए स्वास्थ्य सुविधाओं, बच्चों की शिक्षा आदि का उत्तरदायित्व लेगा।

आज तक वंचित मजदूर वर्ग को जब सब सुविधाएँ मिलने लगेंगी तो खदान मजदूरों के बच्चों की नयी पीढ़ी बोझ बनने की जगह निःसंदेह राष्ट्र की सम्पदा बन सकेगी। ❑

(मूल अंग्रेजी से कंचन सिन्हा द्वारा अनूदित; भिलाई स्टील प्लांट के एक प्रकाशन 'ए न्यू विस्टा — डिपार्टमेंटलाइजेशन ऑफ हिर्री डोलोमाइट माईन्स', जून 1978, से साभार।)

थी। हमें ऐसा प्रतीत हुआ जैसे इस क्षेत्र में पत्थरों की वर्षा हुई है। हमारी दृष्टि जहाँ भी गयी उस ओर पत्थर-ही-पत्थर दृष्टिगोचर हुए। जहाँ देखो पत्थर-ही-पत्थर, छोटे-बड़े, मझोले पत्थर पड़े दिखे। हमें ऐसा लगा कि वीर नारायण सिंह की आवाज गूँज रही है – " ठहरो ! देखो जो पत्थर तुम पड़े हुए देख रहे हो, उन्हीं पत्थरों से हमने संघर्ष शुरू किया था – 125 साल पहले जमाखोर एवं अंग्रेजी साम्राज्यवाद के खिलाफ। आज भी वही शोषक वर्ग मौजूद है। देखते क्या हो, उठाओ पत्थर, हमारा अधूरा संघर्ष, पूर्ण विजय की मंजिल तक ले जाने की जिम्मेदारी तुम पर है। भूलो मत नौजवान, नया जमाना बनाने की जिम्मेदारी तुम पर है। "

हम गिंडोला गाँव को पार कर सोनाखान के लिए अग्रसर हुए। रास्ते में हम उस महान क्रांतिकारी वीर को अपने साथ महसूस करते रहे। हमें ऐसा लगा जैसे उस क्षेत्र की हवा, झाड़, झरिया, क्रांतिवीर के महान संग्राम के मूक दर्शक, आज अचानक महाकोलाहल कर इतिहास की गाथाएँ सुनाने के लिए तत्पर हैं। छत्तीसगढ़ के अन्य जंगलों से सोनाखान का जंगल भिन्न नहीं है। वहाँ भी सागौन, बीजा, कर्रा, सेन्हा, बेल, आँवला आदि वृक्ष हैं। बीच में एक वनग्राम अर्जुनी है। अर्जुनी पहुँचकर पहली बार हमने शहीद वीर नारायण के नाम से आम किसानों से पूछताछ की। एक गरीब किसान से मैंने पूछा, " नारायण सिंह का नाम सुने हो का जी ?" इस पर उस गरीब किसान ने अपनी मद्धिम आवाज में उत्तर दिया, " हम नई जानन। "

मैंने फिर पूछा, " देश बर परान निछावर करइया महान लड़ाकू नेता के नाम नई सुने हव तुमन ? " उत्तर मिला, " अरे, वोहर तो वीर नारायण सिंह रिहिस हावे, वो हा। " उस इलाके में नारायण सिंह को लोग वीर नारायण सिंह के नाम से ही जानते हैं। फिर मैंने जहाँ-जहाँ भी वीर नारायण सिंह के बारे में पूछ-ताछ की सब जगह काफी भीड़ जमा हो जाती थी। लोगों के मन में मैंने एक नया उत्साह देखा। वो सब, कुछ-न-कुछ बोलने को तत्पर थे, वीर नारायण सिंह के संग्राम के बारे में कहना चाहते थे। वे इतिहास के बारे में अशिक्षित होने के कारण अनभिज्ञ थे और अधिक बोल नहीं सके, परंतु भीड़ में खड़े लोगों की मूक आँखें देखने से ऐसा लगा जैसे वीर नारायण सिंह के इतिहास के पन्ने पलटते चले जा रहे हैं। उन पन्नों में वीर नारायण सिंह की कुर्बानी की गाथा हमें पढ़ने को मिली। आदिवासी किसानों की आँखें जैसे जल-जल कर अंगारे हो रही हैं – एक क्रांति का इतिहास – सामंतवाद एवं अंग्रेज साम्राज्यवाद के खिलाफ एक जीवन-प्रण संग्राम की वीरगाथा।

सबेरे आठ बजे हम सोनाखान पहुँचे। गाँव के आम किसान उस समय खेत-खलिहान चले गये थे । एक-दो आदमी चलते-फिरते नजर आये। उन्हें बुलाकर हमने उनसे पूछा, " वीर नारायण सिंह के बारे में हम जानकारी लेने आये हैं, क्या आप लोग हमें बता सकते हैं ?" उनमें से एक ने कहा, " क्यों नहीं, जरूर बतायेंगे। " और, फिर इस बीच वहाँ पर लोग एकत्रित होने लगे। मैंने देखा वही भीड़, वही आँखें। गाँव के लोग हमें वीर नारायण सिंह का जहाँ घर था, वहाँ ले गये। आज वहाँ पर सोनाखान के जमींदार का महल नहीं है, किंतु वहाँ पर निशानी के रूप में खंडहर बचा हुआ है। कुर्रूपाट पहाड़ के नीचे जंगल से लगा हुआ माई घर का खंडहर लम्बाई में दस हाथ एवं चौड़ाई में छह हाथ है। बाजू में नीम और इमली के पुराने वृक्ष हैं, जो आज भी खड़े हुए अपनी टहनियों को हिला-हिला कर हवाओं के द्वारा वीर नारायण सिंह का संदेश सुना रहे हैं। माई घर के पूरब में पंद्रह हाथ की दूरी पर वीर नारायण सिंह जमींदार के

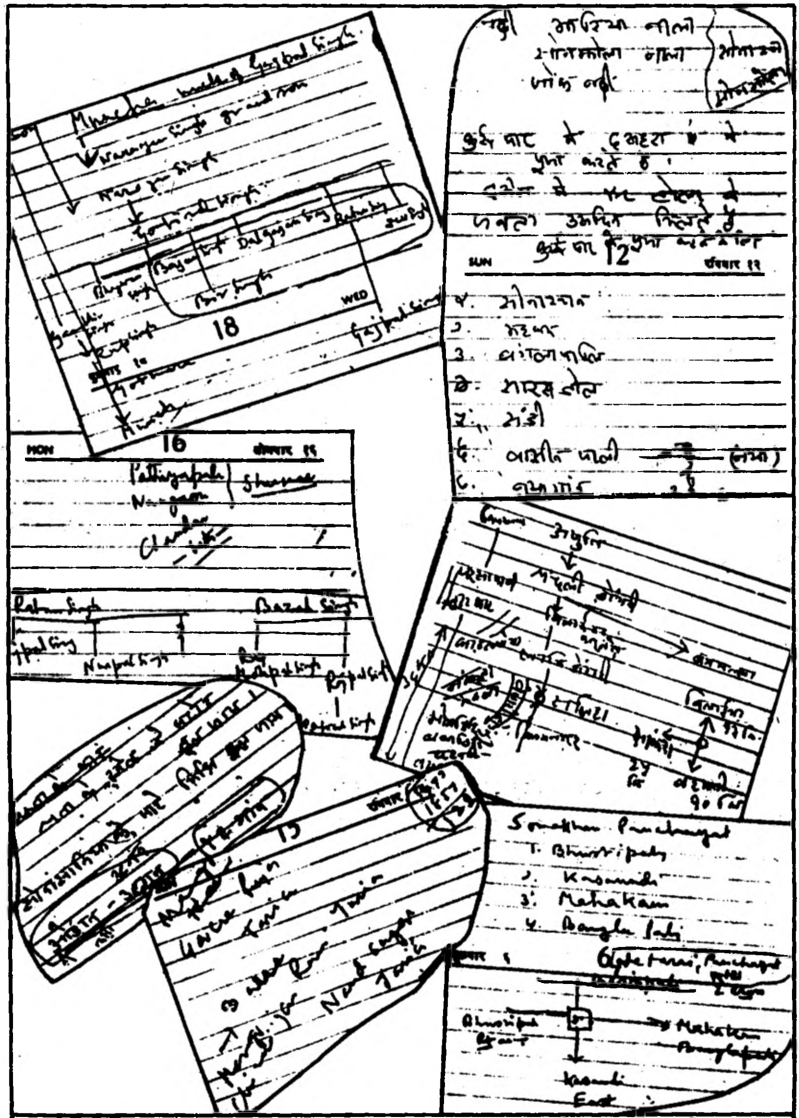

शहीद वीर नारायण सिंह के इतिहास की शोध यात्रा (1979)

हैं। वही साहूकार परिवार के लोग आज भी राजसत्ता पर कब्जा किए हुए हैं। इस परिवार के लोगों ने वीर नारायण सिंह का नाम मिटा देने की जी-तोड़ कोशिशें कीं। गाँव के लोगों ने साहूकार परिवार के अत्याचारों से पीड़ित होकर फिर नारायण सिंह को याद किया। कुछ लोग ददरिया के सुर में गुनगुनाने लगे —

चना के खेत मा बटोर ढुल जाय। सोनाखानिया के मारे मिसिर ढुल जाय।।

गाना गाने वालों को मिश्र परिवार के लोगों ने डरा-धमका कर रोक दिया। नारायण सिंह से सम्बंधित गाना गाने से उन्हें मना कर दिया गया है। आम जनता को उनके संघर्ष की कहानी बताने पर रोक लगा दी गयी। फिर भी सोनाखान के बहादुर आज भी सामंतशाही मशीनरी के लिए एक चुनौती के रूप में खड़े हैं।

शोषक वर्ग आज भी सोनाखानियों की याद से काँप उठता है। सन् 1967 में उत्तरी बंगाल की नक्सलबाड़ी में जब बसंत की जोरदार गूँज उठी, यहाँ शोषक वर्ग काँप उठा। सोनाखान के बाजू में जाँजगीर क्षेत्र आदिवासी, हरिजनों का इलाका है। कुछ करना चाहिए , आग फिर भड़क सकती है। अभी से सँभालो। क्षेत्र में पानी की माँग पुरानी है। परंतु नहीं, सोनाखान में नहीं। बहुत बार ग्रामवासियों की तरफ से माँग करने के बावजूद भी एक बाँध के लिए सरकार ने दो लाख रुपया पास नहीं किया। नारायण सिंह के गाँव से आज भी बदला लिया जा रहा है। परंतु बाकी क्षेत्र में पानी के बंदोबस्त के लिए प्लान बनाये जा चुके हैं। अनुमानित लागत 10 करोड़ की, जोंक नदी की डाईवर्शन स्कीम बनी। काम भी सन् 1970 से चालू है। " अभी तक डाईवर्शन क्यों नहीं बन पाया ?", मैंने अर्जुनी के एक ओवरसियर साहब से पूछा। उन्होंने कहा, " समूचे देश में लोग चुनाव के लिए व्यस्त हैं। इसलिए काम रुका हुआ है और दो-तीन साल लग जायेगा।" इसके पश्चात् मैंने गाँव के व्यक्तियों से पूछा, " इतने दिनों से डाईवर्शन स्कीम क्यों नहीं बन पायी ?" गाँव के लोग बोले, " जानवर की आड़ लेकर बगुले चर जाते हैं।"

यहाँ डाईवर्शन की आड़ लेकर एस. डी. ओ., ओवरसियर चर-खा रहे हैं। " तिवारी साहब यही काम करावत-करावत लाखों के पूँजी कमा डारिस। कौन का करे सकही, कुछु बोलो तो काम ले निकाल देथे। "

मैंने पूछा कि क्यों अब तुम्हें जानवर मारने की इजाजत नहीं है ? तो उन्होंने कहा कि जानवर नहीं मार सकते। नारायण सिंह के जमाने में जानवर मारने की कोई मनाही नहीं थी। नारायण सिंह खुद शिकार खेलते थे, पूरी बस्ती के लोग हाँका में जाते थे। शिकार में जो भी प्राप्त होता था, उसमें हाँका में जाने वाले व्यक्तियों का बराबर का हिस्सा होता था। भाटा जमीन में कोदो कुटकी, खेराही (एक प्रकार का साँवा) जाति का अनाज आदि होता था। उड़द भी खूब होता था। नाला के बहाव वाले खेतों में धान की खेती की जाती थी। आदिवासी खेत में काम करते थे , और अनाज उत्पादन करते थे। गाय, भैंस, बकरी आदि जानवरों का पालन-पोषण करते थे।

" वीर नारायण सिंह की जरूरत है क्या ?", मेरे इस प्रश्न पर गाँव वालों की आँखों में एक नयी चमक उठी और कहने लगे, " हाँ, अब हमन ला वीर नारायण सिंह बने बर लगही। हमन एक्को दिन वीर नारायण सिंह बन जाबो।" जंगल में एक पंछी फड़फड़ाते हुए बोल

वर्गों के चलते अनाज गायब होने लगा। सूखे की आड़ लेकर साहूकार वर्ग भयंकर शोषण करते थे। महाजन (साहूकार) वर्ग के आते ही गाँव-गाँव में अकाल पड़ने लगे एवं गरीब किसान भूख से तड़पने लगे। कसडोल का मिश्र परिवार भी महाजन परिवार था। महानदी के किनारे बसे कस्बे (जैसे ग्राम कसडोल) चारों तरफ से हरे-भरे थे। ऊपरी भाग के मेहनती हरिजन (सतनामी) किसान जमीन में मेहनत कर सोना जैसा धान उगा रहे थे। दूसरी तरफ जंगली क्षेत्र में भोले-भाले कँवर, गोंड, बिंझवार, धनवार आदि आदिवासी जंगल की उपज और खेत-खलिहान के धान आदि पर जिंदा थे। दुर्गम होने के बावजूद भी महाजन मिश्र परिवार के लोगों ने इस क्षेत्र को खूब पसंद किया था। उन्होंने महाजनी धंधा जोर-शोर से शुरू किया। ब्राह्मण होने के नाते इस परिवार को स्वीकृति मिली। इससे शोषण जाल फैलाने में इनको काफी मदद मिली। उपज होते ही मिश्र के आदमी सस्ती कीमत में अनाज खरीद लिया करते थे। इन्होंने ब्याज का धंधा चालू किया। बैल-बर्तन एवं जमीन-जायदाद भी गिरवी रखकर चक्रवृद्धि ब्याज के धंधे के जरिये यह परिवार बहुत जल्द ही इस क्षेत्र में अव्वल नम्बर का शोषक बन गया।

सन् 1856 में उस क्षेत्र में भयंकर सूखे के कारण अकाल पड़ा। जंगल के जानवर भी सूखा पड़ने से जंगल छोड़कर भाग गये। पहाड़ी क्षेत्र में कंदमूल भी मिलना दूभर हो गया। सोनाखान राज के लोग अनाज के बिना त्राहि-त्राहि करने लगे। सोनाखान में नारायण सिंह की बैठक में सब एकत्रित हुए और सब एक आवाज में बोल उठे, " कैसे करें ? गाँव छोड़कर भाग जायें या दूसरा रास्ता भी है ? " छत्तीसगढ़ पर अंग्रेजों का कब्जा तीन साल पहले से चल रहा था। अंग्रेज कमिश्नर इलियेट ओर स्मिथ थे। कसडोल के मिश्र परिवार के ऊपर अंग्रेजों की कृपा दृष्टि थी। सोनाखान की बैठक में तय हुआ कि कसडोल के महाजन मिश्र परिवार से कर्ज में अनाज माँगा जाये। कुछ ब्याज भी दिया जायेगा। वैसे बताया गया कि मिश्र परिवार के लोगों के मुँह से अकाल की समस्या देखते ही पानी निकल रहा था। अकाल की स्थिति में ज्यादा ब्याज व अधिक मुनाफे के लालच में, मिश्र परिवार ने नारायण सिंह की बात पर अनाज देने से साफ इंकार कर दिया। कोई हल नहीं निकला। महाजन के कोठे में रखा अनाज सूखने लगा और इधर जनता का पेट भी बिना अन्न के सूखता रहा।

सोनाखान स्थित नारायण सिंह की बैठक में गाँव-गाँव के मुखिया जुटते गये। बातचीत चलती रही। नारायण सिंह बोले, " नहीं, भूख से कोई आदमी नहीं मरेगा, भले ही लड़ाई के मैदान में जूझते हुए प्राण क्यों न चले जायें। " नारायण सिंह ने उपस्थित लोगों से पूछा, " क्यों, तुम लोग लड़ने को तैयार हो या नहीं ? " जवाब में उपस्थित लोग एक स्वर में बोल पड़े, " लड़बोन-लड़बोन ", और यह आवाज इतनी तेज थी कि सारे पहाड़ी इलाकों में तथा जंगलों में यही आवाज गूँजने लगी तथा गाँव-गाँव में पहुँचने लगी। लोग सोनाखान पहुँचने लगे। कुर्रूपाट में नारायण सिंह का डेरा था। कुर्रूपाट का पानी पीकर सरदारों ने शपथ ली कि अब हम साहूकारों को सहन नहीं करेंगे। साहूकारों की कोठी के अनाज में आदिवासी किसानों की मेहनत का खून लगा हुआ है। लहू-पसीने की कमाई से पैदा हुआ अनाज महाजन की कोठी में भरा हुआ रहेगा और हम भूख से तड़पते रहेंगे, यह कभी नहीं हो सकता।

नारायण सिंह की आवाज कुर्रूपाट व आसपास के क्षेत्र में गूँजने लगी। " लड़ेंगे कि नहीं ? ", एक बार फिर नारायण सिंह ने मुखिया साथियों से पूछा। सभी एक आवाज में चिल्ला

नारायण सिंह की फौज की बंदूक गरजती रही, तब तक अंग्रेज फौज की टुकड़ी को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा। " और बंदूकें नहीं हैं ?", मैंने गजपाल सिंह से प्रश्न किया। गजपाल सिंह उत्तर में बोले, " कोई-कोई गाँव में होगी। कुछ बंदूक की नली को तो बैलगाड़ी के एक्सिल के काम में भी लगाया गया है। " सहदेव ने फिर प्रश्न किया, " बताइये लड़ाई की खबर। " लड़ाई के नाम से हमारे साथ बैठे ग्रामवासियों की भीड़ की आँखें फिर चमक उठीं। एक आदिवासी अधेड़ व्यक्ति (कँवर) बोल उठा, " मैं बताऊँगा लड़ाई की कहानी। विभीषण बिना रावण को हराना मुश्किल था, उसी प्रकार जमींदार घरानों ने नारायण सिंह को दगा दिया। किसान युद्ध की पीठ में चाकू भोंका, एक मात्र सम्बलपुर के क्रांतिकारी सुरेन्द्र साय को छोड़कर बाकी सभी जमींदारों ने अंग्रेजों का साथ दिया। नारायण सिंह के सगे बहनोई ने भी। "

" देवरी के जमींदार ने नारायण सिंह के सगे बहनोई होने के बावजूद भी अंग्रेजों का साथ दिया था। बिलासपुर के जमींदार ने फौज भेजकर अंग्रेजों की मदद की। भटगाँव एवं बिलाईगढ़ के जमींदारों ने भी अंग्रेजों की विभिन्न प्रकार से मदद की। नारायण सिंह एवं किसान युद्ध के दुश्मन ज्यादा ताकतवर नहीं थे। परंतु जमींदारों के विश्वासघात के कारण ही इतने बड़े संघर्ष को पराजय झेलनी पड़ी। इस विश्वासघात का माकूल जवाब दिया गोविन्द सिंह ने। वर्तमान उड़ीसा में सम्बलपुर के महान क्रांतिकारी वीर सुरेन्द्र साय के मार्गदर्शन एवं फौजी सहायता से बलवान होकर वीर बाप के बेटे गोविन्द सिंह ने गद्दारी का बदला लिया। देवरी के जमींदार महाराज साय की गर्दन तलवार के एक वार से काट दी। "

मैंने फिर पूछा, " क्या नारायण सिंह के साथ कसडोल के ब्राह्मणों की कोई व्यक्तिगत दुश्मनी थी ?" गजपाल सिंह बोले, " कौन जानता है, क्या था ? पर उनकी बात बिलकुल सत्य है कि अकाल पीड़ित किसानों के लिए अनाज दिलाने हेतु संघर्ष में पहले उन्होंने नेतृत्व दिया था। जेल तोड़ने के पश्चात वीर नारायण सिंह ने सिपाही गदर के समय अंग्रेजों का राज खत्म करने का विचार ठान लिया था। साथ-साथ साहूकार वर्ग के खिलाफ, तीव्र घृणा के कारण, कोटगढ़ एवं खरौद जाकर मिश्र परिवार के लोगों को खत्म कर नये संघर्ष की शुरूआत की थी । सिर्फ बच गयी थी मिश्र परिवार की एक गर्भवती महिला और साथ में उसका एक पुत्र। "

साथी सहदेव ने फिर पूछा, " कुर्रूपाट की आखिरी लड़ाई का क्या हुआ ?" उदास होकर मुन्चु बोले, " अंग्रेज सिपाहियों के साथ लड़ते-लड़ते वीर नारायण सिंह का गोला-बारूद खत्म हो गया। आधुनिक शस्त्रों के साथ देहाती शस्त्रों का मुकाबला न हो सका। वीर नारायण सिंह पकड़े गये। उनको पकड़ कर एक साथी के साथ अंग्रेज लोग उनके ही कबरे घोड़े पर बैठाकर उन्हें रायपुर ले गये। सोनाखान गाँव को जनशून्य बना दिया गया। नारायण सिंह के परिवार के लोग, गोविन्द सिंह की ससुराल के गाँव, वर्तमान उड़ीसा के पदमपुर, की तरफ निकल पड़े। अर्जुनी, चंदली डोंगरी होकर पूरे परिवार ने बिलाईगढ़ के जंगल का रास्ता पकड़ा। लामी डोंगरी, सलिहा, विजय नगर, परसापानी, फिर ठरखाट डोंगरी पार कर काठ खलीया डोंगरी, मझला डोंगरी, बेलारी डोंगरी पार किया। फिर बसना की सड़क पकड़ी, फिर और दो पहाड़ फाग डोंगरी और रंगमतिया डोंगरी होते हुए बाम्हन डोंगरी के पास गोलमर्रा के पास डेरा डाला। गोलमर्रा उस समय फुलझर जमींदारी में आता था। बिंझवार जमींदार परिवार का दुःख देखकर फुलझर जमींदार ने उन्हें गोलमर्रा में गुज़र-बसर करने के लिए ' माफी ज़मीन ' के रूप में जीने-खाने लायक ज़मीन

लुटेरा राज खत्म करना है [1]

नियोगी की अपनी लिखावट में नीचे दिया गया लेख मिला है। इसकी बंगला-प्रभावित हिन्दी को हमने बिना सुधारे छोड़ दिया है। इसकी तारीख पता नहीं चल सकी, पर अनुमानित समय सन् 1980-81 का है। मार्क्सवादी सोच को सरल शब्दों में प्रस्तुत करने की नियोगी की क्षमता का यह एक अच्छा उदाहरण है। — स.

दुनिया बहुत आगे बढ़ गयी है। दुनिया के तमाम फायदे भले आदमी लोगों के लिए हैं। भले आदमी हवाई जहाज में चढ़कर दिल्ली-कलकत्ता घूमते हैं। रंग-बिरंग का बढ़िया खाना खाते हैं। सुंदर-सुंदर कपड़े पहनते हैं। उनके लड़के मोटरगाड़ी में चढ़कर स्कूल जाते हैं। उनके घर की लड़कियाँ बढ़िया साड़ियाँ पहनकर फुर-फुर उड़ती हैं। पर ये लोग बिल्कुल मेहनत नहीं करते हैं। नौकर खाना पकाता है। नौकर कपड़ा काँचता (धोता) है। एक ग्लास पानी भी नौकर के भरोसे पीते हैं।

जब आदमी जन्म लेता है, तब माँ के पेट से धन-दौलत लेकर पैदा नहीं होता है। भले आदमी के पास इतनी दौलत आयी कहाँ से ? बिना मेहनत के उनके पास इतना पैसा कहाँ से आया ? यह समझने के लिए बनिया लोगों को देखिये। जब देश से आया था, तब लोटा धर कर आया था। आज तो पूरे छत्तीसगढ़ के मालिक ये ही लोग हैं — बड़ा-बड़ा पक्का मकान, ट्रक, टेलीविजन, गाड़ी, बैंक में बहुत पैसा जमा कर लिया है। खदान का ठेका, तेंदूपत्ता का ठेका, बड़ी-बड़ी दुकान जमा लिया है। लोटे वाले आदमी 10-20 साल में कैसे इतने पैसों के मालिक बन गये हैं ? और हम आप दिनभर मेहनत करने के बाद भी दिनोंदिन गरीब होते जा रहे हैं। इस बात को थोड़ा सोचिये। इसी का नाम राजनीति है। राजनीति का मतलब है — लुटेरा और मेहनतकश वर्ग के बीच रिश्ता (यानी संघर्ष)।

आज हमें एकता बनाकर लुटेरा लोगों के साथ लड़ना होगा। जंगल के शेर की आदत है खून पीने की, लुटेरा वर्ग भी शेर जैसा है। वह हमेशा मेहनती लोगों की खून-पसीने की कमाई लूटता है। इनकी आदत कभी नहीं बदलेगी।

अगर जनता एकजुट होकर हिम्मत के साथ लड़ना चालू करती है तो पैंट-कुर्ता पहनने वाले शेर भागेंगे। ये सब मिट्टी के शेर बन जायेंगे। मिट्टी के बने हुए शेर का कोई दम नहीं है। उसी प्रकार ये आदमी शेर का भी कोई दम नहीं है। जैसे हम लोग खेत में ' डरावनी ' रखते हैं जिसमें एक फटा कपड़ा उड़ता है — चिड़िया डर कर सामने नहीं आती है। परंतु उसमें कोई दम नहीं है। वह दिखाने के लिए डरावनी है। इसलिए आज हमें हिम्मत करके एकजुट होकर लड़ना होगा।

---

[1] इस लेख का एक संशोधित रूप ' छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा बुलेटिन ', क्र. 3, 17 जनवरी 1981, में प्रकाशित हुआ था।

छत्तीसगढ़ और राष्ट्रीयता का प्रश्न [1]

यह लेख पहली बार अंग्रेजी में 'आंध्र प्रदेश रेडिकल स्टूडेंट्स यूनियन' द्वारा 22-23 अगस्त 1981 को 'भारत में राष्ट्रीयता का प्रश्न' विषय पर मद्रास में आयोजित एक अखिल भारतीय परिचर्चा में प्रस्तुत किया गया था। इसका प्रथम प्रकाशन जुलाई 1982 में हैदराबाद से प्रकाशित पुस्तक 'नेशनलिटी क्वश्चन इन इंडिया' में हुआ। इसका हिन्दी रूपांतरण पहली बार छमुमो की लोक साहित्य परिषद् द्वारा नवम्बर 1991 में प्रसारित किया गया।

— स.

मध्य प्रदेश राज्य में छत्तीसगढ़ की सीमाओं का विस्तार 18 से 24 डिग्री अक्षांश तक तथा 80 से 84 डिग्री देशांतर तक है। इसका क्षेत्रफल 52,650 वर्ग मील है। आबादी करीब एक करोड़ 25 लाख है। छत्तीसगढ़ में सात जिले शामिल हैं – रायपुर, दुर्ग, बिलासपुर, बस्तर, सरगुजा, रायगढ़ और राजनांदगाँव। पुराने जमाने में यह इलाका दक्षिण-कोशल के नाम से जाना जाता था और इसे रतनपुर राज, दंडकारण्य, गोंडवाना आदि नामों से भी पुकारा जाता था। ऐतिहासिक सूत्रों के अनुसार, इस इलाके के लिए छत्तीसगढ़ शब्द का प्रयोग सबसे पहले सन् 1487 में एक लोक कवि की रचनाओं में किया गया है।

इलाका और लोग

भौगोलिक रूप से छत्तीसगढ़ दो क्षेत्रों में विभाजित है – मैदानी छत्तीसगढ़ और पहाड़ी छत्तीसगढ़।

छत्तीसगढ़ का इलाका प्राकृतिक सम्पदा से भरपूर है। इसकी जमीन का एक बड़ा हिस्सा धान की खेती के लिए उपयुक्त है। छत्तीसगढ़ की भूमि में लौह अयस्क, कोयला, चूना-पत्थर, डोलोमाइट, क्वार्ट्ज़ाइट, ताँबा, यूरेनियम, टिन, बॉक्साइट, फेल्सपार, मैंगनीज़ आदि खनिजों के विशाल भंडार हैं। यहाँ सागौन, साल, महुआ, तेंदू, साजा, बीजा तथा अन्य उपयोगी लकड़ी वाले पेड़ों के बड़े-बड़े जंगल हैं। शिवनाथ, महानदी और अरपा नदियों में बारहों महीने पानी रहता है।

छत्तीसगढ़ के विशाल इलाके में अपनी एक सुस्पष्ट पहचान वाले लोग रहते हैं। इसके बावजूद कि वे विभिन्न भाषाएँ बोलते हैं, उनकी अपनी एक विशिष्ट संस्कृति है, जो उनको अपने क्षेत्र एवं जन के विकास के लिए प्रेरित करती है। यहाँ के लोग एक लम्बे अरसे से सामंती अर्थव्यवस्था से बंधे रहे हैं।

---

[1] यहाँ 'राष्ट्रीयता' शब्द का उपयोग भारत के किसी ऐसे जन समुदाय के संदर्भ में किया गया है जिसकी अपनी एक विशिष्ट ऐतिहासिक और सांस्कृतिक पहचान हो। इस मायने में इसे 'राष्ट्र' अथवा 'राष्ट्रीय' शब्दों में अंतर्निहित अवधारणाओं के पर्याय के रूप में नहीं, वरन् पूरक के रूप में देखना उपयुक्त होगा। नियोगी ने राष्ट्रीयता के प्रश्न को देखने का एक देशप्रेमी और जनवादी नजरिया दिया है (इस लेख के साथ खंड दो भी देखिये)। — स.

स्थापित किये गये, जिनमें भिलाई इस्पात संयंत्र, कोरबा अल्युमिनियम संयंत्र, ताप बिजली घर और सीमेंट कारखाने आदि प्रमुख हैं।

छत्तीसगढ़ की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति

खनिजों, वनों एवं उपजाऊ जमीन के विपुल संसाधनों की मौजूदगी के बावजूद छत्तीसगढ़ के लोग बहुत ही गरीब हैं। लाखों लोगों के लिए दो जून पेटभर खाना आज भी एक सपना है। कुपोषण, अशिक्षा और बीमारियों से यह इलाका पीड़ित है। आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से छत्तीसगढ़ की जनता को तीन भागों में बाँटा जा सकता है –

1. आधुनिक उद्योग-समूहों के इर्द-गिर्द विकसित शहरी इलाकों में रहने वाले लोग।
2. पहाड़ों एवं जंगलों के बीच रहने वाले आदिवासी।
3. खेती के मैदानी इलाकों में रहने वाले किसान।

1. **औद्योगिक क्षेत्र** – विदेशी पूँजी (सार्वजनिक क्षेत्र) और कुछ बड़े भारतीय पूँजीपतियों की पूँजी (निजी क्षेत्र) से स्थापित विराट आधुनिक कल-कारखानों के इर्द-गिर्द एक नये प्रकार की शहरी सभ्यता का विकास हुआ है। इन शहरी इलाकों को दो भागों में बाँटा जा सकता है –

क) आधुनिक सुविधाओं से भरपूर शहरी इलाके।

ख) शहरी झोपड़-पट्टियाँ।

भिलाई की इस्पात नगरी, कोरबा की अल्युमिनियम नगरी, जामुल का सीमेंट शहर, अकलतरा, मांढर आदि तथा छत्तीसगढ़ की तथाकथित सांस्कृतिक राजधानी रायपुर, छत्तीसगढ़ के इन आधुनिक औद्योगिक शहरों में प्रमुख हैं। इन शहरों में रहने वालों में से 90% लोग भारत के विभिन्न राज्यों से आये हुए लोग हैं और बाकी 10% लोग छत्तीसगढ़ के मूल बाशिंदे हैं। शहरों की झोपड़-पट्टियों में छत्तीसगढ़ियों के अलावा पड़ोसी राज्यों – उड़ीसा, आंध्र प्रदेश और महाराष्ट्र – से आये हुए आप्रवासी मजदूर रहते हैं।

2. **पहाड़ों और जंगलों में छितराये हुए** गाँवों में रहने वाले मुख्यतः आदिवासी हैं। इनमें से 10 प्रतिशत भूमिहीन हैं, 75 प्रतिशत छोटे किसान हैं, 12 प्रतिशत मझोले किसान हैं और 3 प्रतिशत धनी किसान हैं। इन इलाकों की जमीन बहुत कम उपजाऊ है।

3. **मैदानी इलाकों** में कुर्मी, कलार, तेली, आदिवासी और हरिजन रहते हैं। इनमें से 30 प्रतिशत भूमिहीन हैं, 40 प्रतिशत छोटे किसान हैं, 20 प्रतिशत मध्यम किसान हैं, 8 प्रतिशत धनी किसान हैं, और 2 प्रतिशत गैर-मौजूद मालगुजार (जमींदार) हैं। भूमि की उर्वरता मध्यम स्तर से लेकर उत्कृष्ट स्तर तक है। खेती की जमीन का केवल 12 प्रतिशत सिंचित है।

व्यवसायी वर्ग में से अधिकांश लोग छत्तीसगढ़ के बाहर से आये हुए लोग हैं। गाँवों में महाजनी का धंधा मारवाड़ी लोग करते हैं और शहरी इलाकों में सूदखोर मुख्यतः पंजाबी लोग हैं।

जहाँ तक रोजगार का सवाल है, आदिवासी एवं अन्य गरीब लोग खदानों में काम करते हैं। लेकिन हाल के दिनों में ' समाजवादी ' सोवियत संघ से प्राप्त पूँजी और मशीनों की मदद से मशीनीकरण तेजी से बढ़ रहा है और उससे गरीबों के लिए रोजगार की सम्भावनाएँ घटती

के सीमित हितों से आगे निकल गया और सामाजिक मुक्ति के दीर्घकालीन जन-संघर्ष से जुड़ गया, तब साम्राज्यवादी लोग घबरा गये। उन्होंने सवाल रखा, " क्या भारतीय राष्ट्र जैसी कोई चीज है भी ? क्या एक उपमहाद्वीप जैसे विशाल इलाके में बिखरे हुए और असंख्य जातियों, भाषाओं, समुदायों और संस्कृतियों में बँटे हुए लोग कभी भी एक राष्ट्र में एकताबद्ध हो सकते हैं ? क्या यह बात सच नहीं है कि भारत की एक मात्र एकता अंग्रेज प्रशासन द्वारा कृत्रिम ढंग से थोपी गयी झूठी एकता ही है ? " सन् 1888 में सर जॉन स्ट्राची ने गम्भीरतापूर्वक इस बात की घोषणा की थी, " भारत नाम की कोई चीज नहीं है और कभी होगी भी नहीं। "[1]

'इंगलैंड का विस्तार' में सर जॉन सेली हमें बताते हैं, " भारत को एक राष्ट्र के रूप में मानने का विचार जिस मूल भ्रांत-धारणा पर आधारित है वह राजनीति विज्ञान के खिलाफ है। 'भारत' किसी राजनैतिक स्वरूप का नाम नहीं है, बल्कि यूरोप और अफ्रीका के समान इसका केवल एक भौगोलिक अर्थ है। यह किसी राष्ट्रीय या भाषाई समूह के समरूप नहीं है, बल्कि इसमें कई राष्ट्र और भाषाई समूह हैं। "

सन् 1930 में साइमन कमीशन की रिपोर्ट ने भारतीय जनता की विविधता का खास तौर पर उल्लेख किया और इस आधार पर उसने भारत के स्वाधीनता संघर्ष के मूल मुद्दों पर संदेह प्रकट किया। इस रिपोर्ट में राष्ट्रीय आंदोलन को इस प्रकार प्रस्तुत किया गया, " भारत की विशाल जनता उसके एक छोटे से हिस्से की इच्छाओं से प्रभावित होती है। " 222 भाषाओं, हिन्दू एवं मुस्लिम हितों में परस्पर मूलभूत विरोध आदि का हवाला देते हुए इस 'विशाल जनता में नस्लों एवं धर्मों के जमघट' के रंजनापूर्ण परिदृश्य को चित्रित किया गया। चर्चिल ने दावा किया कि यदि अंग्रेज भारत छोड़कर चले जाते हैं तो हत्याओं और अन्य उपद्रवों की चीख-चिल्लाहटों से वातावरण गूँज उठेगा। विभिन्न राष्ट्रीय अस्मिताओं की मौजूदगी के आधार पर अंग्रेज साम्राज्यवादियों ने भारत के स्वाधीनता संघर्ष का विरोध किया था।

इसके जवाब में हमारे बुर्जुआ नेताओं ने एक भावात्मक एवं आदर्शमूलक एकता पर जोर दिया। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने 'विविधता में एक महान एकता' ('विविधेर माझे मिलानो महान') की बात कही और उन्होंने दावा किया कि तमाम नस्लें, जैसे शक, हूण, पठान, मुगल आदि एक समुदाय में एकताबद्ध हैं ('एक देहे होलो लीन')। कुछ बुर्जुआ नेता साम्राज्यवादियों के दावों से प्रभावित हुए थे, जैसे सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी और मोतीलाल नेहरू।

उस समय, बुर्जुआ नेता भारतीय राष्ट्र की भिन्न-भिन्न सांस्कृतिक अस्मिताओं के ताने-बाने में अंतर्निहित एकता की अवधारणा को कोई वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान नहीं कर पाये या शायद जानबूझ कर इस चीज को दबा दिया गया हो। सन् 1921 की जनगणना रिपोर्ट के आधार पर कुछ कम्युनिस्टों ने इस बात पर जोर दिया कि वर्ग हित ही राष्ट्रीय एकता का एक मात्र सही आधार है। उन्होंने इसके लिए जमशेदपुर का उदाहरण दिया, जहाँ उत्पादन के आधुनिक माहौल में सभी प्रजातियाँ एवं राष्ट्रीयताओं के लोग मिल-जुलकर काम करते हैं, और कोई भी अपने बगल में काम करने वाले व्यक्ति की राष्ट्रीयता या प्रजातीय अस्मिता पर ध्यान नहीं देता है। केवल वर्ग संघर्ष पर जोर देकर उन्होंने भारत में कृषि अर्थव्यवस्था की प्रधानता और भारतीय किसानों की चेतना की प्रकृति की उपेक्षा की। भले ही जमशेदपुर में वर्ग दृष्टिकोण

[1] इंडियाः इट्स एडमिनिस्ट्रेशन एंड प्रोग्रेस

मजदूर वर्ग भी उनकी मदद के लिए इस लड़ाई में शामिल होगा। राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग और निम्न-पूँजीपति वर्ग, और कुछ नहीं तो, इसलिए इस संघर्ष में शामिल होगा कि किसानों की क्रय-शक्ति का बढ़ना उनके अपने हित में है; कम-से-कम वे इसका विरोध तो नहीं करेंगे।

2. छत्तीसगढ़ का मजदूर वर्ग अनेक सफल संघर्षों से हासिल अपने अनुभव को लेकर इस आंदोलन को सफल नेतृत्व देने की क्षमता रखता है। आदिवासी किसान समुदाय हमारे लाल-हरे झंडे का काफी सम्मान करता है। इसलिए इसके नेतृत्व को काफी महत्व मिलेगा।

3. आनंदमार्गियों और जमींदारों द्वारा दिया गया 'छत्तीसगढ़ियों के लिए छत्तीसगढ़' का नारा बेअसर साबित हुआ है। **इस अभियान में एक राष्ट्रीय समूह दूसरे राष्ट्रीय समूह के खिलाफ नहीं लड़ेगा।**

4. विभिन्न वर्गों के लोग अपने-अपने वर्ग हितों एवं वर्ग चेतना के आधार पर एकताबद्ध होंगे। इसलिए विभिन्न राष्ट्रीय समूहों के बीच शांतिपूर्ण सम्बंध रहेगा, जबकि विभिन्न समूहों के हितों को साधने के लिए संघर्ष जारी रहेगा।

5. ट्रेड यूनियनों के क्रांतिकारी कार्यक्रम, शराबखोरी का बहिष्कार, किसान एवं भूमि के प्रश्न, वन-उत्पाद की कीमतों का प्रश्न, शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवाओं का प्रश्न, हर प्रकार के दमन के खिलाफ संघर्ष, विशेषकर महिलाओं के उत्पीड़न के खिलाफ संघर्ष आदि इस आंदोलन में शामिल रहेंगे। **चूंकि मजदूर वर्ग यह देखेगा कि ये संघर्ष उनके खुद के हित में हैं, इसलिए न केवल मजदूर वर्ग इस आंदोलन में शामिल होगा, बल्कि वह उसे निःस्वार्थ नेतृत्व भी प्रदान करेगा।**

6. **हम सामंतवाद से छलांग लगाकर समाजवाद तक नहीं पहुँच सकते।** हम पूँजीवाद की प्रक्रिया में से गुजरते हुए समाजवाद में केवल संक्रमण की एक प्रक्रिया को शुरू कर सकते हैं। लेकिन इतिहास से लिये गये सबकों को ध्यान में रखते हुए इस प्रक्रिया को ग्रामीण इलाकों में मजदूर वर्ग के नेतृत्व में बड़ी सावधानी से चलाना होगा।

7. मजदूर वर्ग इससे संतुष्ट होकर चुप नहीं रहेगा और एक कदम आगे बढ़ायेगा और को-आपरेटिव सोसायटियों (वर्तमान सोसायटियों की तर्ज पर नहीं) और ऐसी अन्य संस्थाओं का गठन करेगा और तेजी से समाजवादी अर्थव्यवस्था और समाज की दिशा में बढ़ेगा।

8. राष्ट्रीय अस्मिता के इस अभियान में सर्वहारा अपने दोस्तों को खोज निकालेगा और अपने दुश्मनों के खिलाफ एकजुट होकर लड़ेगा।

मुक्ति-कामियों के प्रेरणास्रोत — वीर नारायण सिंह

किसी भी जाति के विकास की यात्रा, उसमें कायम स्वाभिमान, वैज्ञानिक उत्पादन पद्धति, आर्थिक स्वावलम्बन एवं पूर्वजों के शौर्य तथा बलिदानों के इतिहास का सम्बल थाम कर चलती है। कार्ल मार्क्स ने कहा था कि दुनिया का आज तक का इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास है। इस संघर्ष में दास तथा मालिक, सामंतों तथा किसानों, राष्ट्रवादी तथा पूँजीवादी और मेहनतकश व शोषक वर्ग का टकराव निरंतर चलता रहा है। इस टकराव में कुछ ऐसी विभूतियाँ उभरती हैं, जो अपने साहस एवं बलिदान की अटूट भावना से संघर्षशील वर्ग की अगुवाई करती हैं। छत्तीसगढ़ के इतिहास में वीर नारायण सिंह भी ऐसी ही विभूति थे। यद्यपि सत्ता और व्यवस्था के साथ जुड़े हुए पत्रकारों ने उन्हें मात्र एक लुटेरे के रूप में पेश करना चाहा, लेकिन इन आडम्बरों का आवरण और मिथ्या प्रचार की चकाचौंध हकीकत को ज्यादा देर तक ढक कर न रख सकी। आज यह स्पष्ट है कि वीर नारायण सिंह छत्तीसगढ़ के मुक्ति संग्राम के महानतम सेनानी थे।

अंग्रेजों के शासन से पहले छत्तीसगढ़ पर भोसलों का आधिपत्य था। पूर्वी छत्तीसगढ़ का उड़ीसा की सीमा से लगा हुआ सोनाखान का आदिवासी क्षेत्र बड़ा स्वाभिमानी और स्वातंत्र्य-प्रिय रहा है। उसने भोसलों की सत्ता को स्वीकार नहीं किया। निरंतर संघर्ष के द्वारा वे लोग अपनी स्वतंत्रता को कायम रखते रहे।

सन् 1819 में जब अंग्रेजों का राज सोनाखान के इर्द-गिर्द फैल गया, तब अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए सोनाखान में फिर से एक प्रतिशोध की चिनगारी भड़की। अंग्रेजों ने जितनी बार सोनाखान को अपने स्वामित्व में लाने का प्रयास किया, उतनी बार सोनाखान के स्वाभिमानी बागियों के स्वर उभरे। संघर्ष की इसी पृष्ठभूमि में सोनाखान के जमींदार परिवार में नारायण सिंह के संस्कार ढलते रहे। अपनी तरुणाई में ही वे न केवल सोनाखान बल्कि 70 अन्य आदिवासी ग्रामों के बहादुर नेता के रूप में प्रसिद्ध होने लगे। अंग्रेजी शासन काल में साहूकार वर्ग का प्रभुत्व बढ़ रहा था, झूठ का राज्य चल रहा था, जमाखोरी और शोषण की बुनियाद पर खड़े साहूकार वर्ग के प्रति जन-असंतोष भी था। यह असंतोष गाँव-गाँव में उफन रहा था। सन् 1856 में जब छत्तीसगढ़ भीषण अकाल की चपेट में आया तो चारों तरफ त्राहि-त्राहि मच गयी। लोग अपने गाँव और अपना वतन छोड़कर बाहर जाने को मजबूर हो गये। जमाखोरों और शोषकों का नंगा नाच होने लगा। अकाल मौतों का एक अटूट सिलसिला शुरू हो गया। भूख से दम तोड़ते हुए बाल-वृद्ध, नर-नारी और आकाश में मंडराती हुई गिद्धों और चीलों की टोलियाँ एक सामान्य दृश्य बन गये। इसके बावजूद किसी तरह की राहत के स्थान पर जब अंग्रेज सत्ताधारियों ने आतंक और दमन का सहारा लिया तो वीर नारायण सिंह की आत्मा कराह उठी। उन्होंने पलायन कर रहे आदिवासियों से कहा कि गाँव मत छोड़ो, अपना संगठन बनाओ और अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए हथियार उठाओ।

भूख से होने वाली अकाल मौतों को टालने के लिए वीर नारायण सिंह ने कहा कि जमाखोरों के कब्जे में पड़े हुए खाद्यान्न के भंडारों को लूट लो। इस स्थिति में अंग्रेज सत्ताधारी सामंतवादियों की मदद के लिए आगे बढ़े। उस समय के कसडोल के महाजन मिश्र

खदानें, मशीनीकरण एवं लोग

यह लेख नियोगी ने 12 नवम्बर 1983 को पीपुल्स यूनियन फ़ॉर डेमोक्रेटिक राईट्स (पी. यू. डी. आर.) द्वारा नयी दिल्ली में आयोजित एक परिचर्चा हेतु तैयार किया था। बाद में यह नयी दिल्ली से ही प्रकाशित 'दी अदर साइड' पत्रिका के फरवरी 1984 के अंक में छपा था। खदानों के पूर्ण मशीनीकरण के विकल्प — अर्द्ध-मशीनीकरण — के लिए जो संघर्ष सी. एम. एस. एस. ने सन् 1978-79 से शुरू किया था, उससे केवल भारत की ही नहीं वरन् पूरी तीसरी दुनिया के देशों की तकनालाजी नीति के संदर्भ में बुनियादी सवाल खड़े हो गये थे। पी. यू. डी. आर. की परिचर्चा ने छत्तीसगढ़ के इस क्रांतिकारी संघर्ष को दल्ली राजहरा की पहाड़ियों से निकालकर राष्ट्र के पटल पर रखने में एक महत्वपूर्ण योगदान दिया था। मूल अंग्रेजी में लिखे गये इस लेख का हिन्दी अनुवाद पहली बार प्रस्तुत किया जा रहा है।

— स.

मशीनीकरण का मुद्दा एक तरफ औद्योगिक उत्पादन के प्रश्न से घनिष्ठता से जुड़ा है और दूसरी तरफ संगठित औद्योगिक कामगारों की संख्या के प्रश्न से और इस प्रकार बेरोजगारी के प्रश्न से भी। अतः यह मुद्दा देश के सामने बुनियादी मुद्दों में से एक है। इतने महत्वपूर्ण मुद्दे पर परिचर्चा आयोजित करने के लिए पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स बधाई का पात्र है।

महात्मा गांधी ने कहा था, " जब काम की जरूरत को देखते हुए कामगारों की कमी हो, तब मशीनीकरण अच्छाई है। पर जब काम को देखते हुए कामगारों की अधिकता हो तब वह एक बुराई है। "

महात्मा गांधी ने यह बात तब कही थी, जब देश की जनसंख्या 30 करोड़ थी। आज यह संख्या 80 करोड़ की आबादी में से मात्र गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले लोगों की संख्या से भी कम है। सिर्फ बेरोजगारों की ही संख्या दस करोड़ से अधिक है।

महात्मा गांधी ने यह बात ऐसे समय कही थी, जब भारत में कुटीर उद्योग आज की तरह पूरी तौर पर नष्ट नहीं कर दिये गये थे।

गांधीजी का यह मत यदि उस वक्त महत्वपूर्ण था, तो आज यह दुगुना महत्वपूर्ण है। क्योंकि आज, आजादी के 38 साल बाद, देश ऐसे दोराहे पर खड़ा है जहाँ उसे या तो किसी एक रास्ते को साफ-साफ चुनना पड़ेगा एवं उसे अपने उद्देश्य और इरादे साफ तौर पर तय करने पड़ेंगे। अब लोगों को ज्यादा समय तक आश्वासन के भरोसे धोखे में नहीं रखा जा सकेगा। वे अब अपने दुःख के लाचार आँसुओं को जाया नहीं होने देंगे; उनके दिलों में गहराई से पैठी हुई घृणा व आक्रोश की आग जल रही है। उनमें एक आमूल-चूल परिवर्तन के लिए गहरी इच्छा है। जो भी रास्ता अब हम चुनेंगे, वह आम लोगों का भला करनेवाला ही होना चाहिए।

भारत में खनन उद्योग, औद्योगिक कामगारों के एक बड़े हिस्से को रोजगार देता है, पर

अर्द्ध-मशीनीकरण की योजना में बदला गया, जिसके तहत अयस्क खनन (रेजिंग) का काम मजदूरों द्वारा किया जाता है और इसके आगे की प्रक्रिया मशीनों के द्वारा होती है। पर इसे सिर्फ प्रयोग बतौर ही स्वीकार किया गया। यह एक ऐतिहासिक, उपयोगी और सफल प्रयोग रहा, पर इसे अभी स्वीकारा नहीं गया है।

यह प्रयोग मौजूदा राष्ट्रीय संदर्भ में खनन की इन बुनियादी प्रक्रियाओं के बारे में एक नये सिरे से सोचने के लिए मार्ग प्रशस्त कर सकता था। पुनर्चिंतन का यह मौका खो देने के कारणों का हमें विश्लेषण करना होगा और उसे जनता के सामने खोलकर रखना ही होगा।

दल्ली की अर्द्ध-मशीनीकृत खदानों के अयस्क उत्पादन में मजदूर इतने ज्यादा सफल हुए हैं कि कुल उत्पादन का मात्र 30 प्रतिशत ही मशीनीकृत प्रक्रिया द्वारा खपाया जा पा रहा है। मजदूरों की उत्पादन शक्ति ने मशीनों को हार मानने के लिए बाध्य कर दिया है।

हमारे अनुभव से उभरने वाले मुद्दे

जो भी हो, हमने जब भी दल्ली में अर्द्ध-मशीनीकरण की सफलता को मान्यता देने एवं इसको एक स्थायी रूप देने की माँग की, साथ ही ठेका मजदूरी प्रथा को खत्म कर मजदूरों के विभागीयकरण का मुद्दा उठाया, तब सरकार और मैनेजमेंट ने ढेर सारे सवाल खड़े कर दिये।

इनमें से एक मुद्दा है उत्पादन लागत का। चलिये, इसलिए भारत सरकार के इस्पात एवं खदान विभाग के ही द्वारा पेश किये गये उत्पादन लागत के एक तुलनात्मक अध्ययन पर नजर डाल ली जाये। सन् 1979 में उन्होंने लौह अयस्क के निर्यात में मुनाफे की सम्भावना का अध्ययन करने के लिए विशेषज्ञों की एक कमेटी बिठायी। उस रिपोर्ट में से एक तालिका यहाँ दी जा रही है।

तालिका क्र. 1

उत्पादन की प्रति टन लागत (1978-79)

मानवीकृत खदान (निजी खदानें)			मशीनीकृत खदान (नेशनल मिनरल डेवलपमेंट कार्पो.)		
क्र.	विवरण	रु.	क्र.	विवरण	रु.
1.	खनन लागत	18.50	1.	मशीन चलाने की लागत	39.73
2.	परिवहन (अधिकतम 28.1, न्यूनतम 16.0)	22.42	2.	घिसाई एवं ब्याज	66.99
3.	प्रशासकीय खर्च	5.09	3.	ढुलाई और बिक्री खर्च	0.57
4.	कर	4.00	4.	कर	4.00
	कुल लागत	50.01		कुल लागत	111.29
	बिक्री कीमत — वसूली (अधिकतम)	38.97		बिक्री कीमत — वसूली (अधिकतम — 34.60, न्यूनतम — 30.43)	32.50
	हानि (–) या लाभ (+)	(–) 11.04		हानि (–) या लाभ (+)	(–) 78.79

(स्रोत — इस्पात एवं खदान विभाग, भारत सरकार।)

पर हमारे अर्द्ध-शिक्षित 'अभिमन्यु' मशीनीकरण नीति की भूल-भुलैया से बाहर निकलने का रास्ता ही नहीं ढूँढ़ पा रहे हैं। इसलिए अब हम नीति निर्धारण का महत्वपूर्ण मामला उनके हाथों में नहीं छोड़ सकते। अतः ज्यादा टिकाऊ विकल्प हेतु दबाव पैदा करने के लिए हमें जनसमर्थन जुटाना ही होगा।

मशीनों को तीसरी दुनिया के मत्थे मढ़ना

यह सभी के लिए एक खुला सत्य है कि हमारे देश में गांधी के दर्शन को नकारते हुए जब भी खदानों का मशीनीकरण हुआ है, वह किसी दूसरे देश की बैसाखियों के सहारे उसके साथ किसी विशेष अनुबंध के तहत ही हुआ है। विकसित देशों ने – चाहे वे इंग्लैंड, पश्चिम जर्मनी, अमेरिका या जापान जैसे पूँजीवादी देश हों या सोवियत संघ या पोलैंड जैसे समाजवादी देश हों – हमें खदानों के मशीनीकरण हेतु मशीनें उपलब्ध करायी हैं। और यह सब हमेशा कुछ विशेष शर्तों के तहत हुआ है।

मशीन बेचने वाले देश पहले मशीन विकसित कर लेते हैं। फिर जब वे आम तरीकों से मशीनें बेचने में असफल हो जाते हैं, तब वे विकासशील देशों पर नजर डालते हैं। उन्हें अचानक विकासशील देशों की गरीबी से सहानुभूति होने लगती है। घड़ियाली आँसू बहाते हुए, वे किसी विशेष अनुबंध के तहत अपनी मशीनों के लिए बाजार तैयार कर लेते हैं। उन्हें इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि हकीकत में विकासशील देशों को उस मशीन की कोई जरूरत है भी या नहीं।

इसी तरह अभी हाल ही में पंद्रह सौ करोड़ रुपये की मशीनें कोयला खदानों के लिए खरीदी गयी हैं। इसी तरीके से दल्ली, किरीबुरु, मेघाहतुबुरु, कुद्रेमुख और बैलाडीला की खदानों का निरर्थक मशीनीकरण किया गया है। इससे इन खदानों के उत्पादन में कोई बढ़ोतरी नहीं हुई है, वरन् उत्पादन की गुणवत्ता घटी है।

इस दृष्टि से कोयला खदानों का उदाहरण उपयोगी होगा –

तालिका क्र. 4

राष्ट्रीय कोयला उत्पादन (लाख टन में)

(1970-80)

व्यापक मशीनीकरण के पहले	
1970-71	724.5
1971-72	724.2
1972-73	777.1
1973-74	781.7
1974-75	884.1
1975-76	997.9
1976-77	1,010.4
व्यापक मशीनीकरण के बाद	
1977-78	1,010.0
1978-79	1,019.5
1979-80 (सम्भावित)	1,040.0

अर्थव्यवस्था को मजबूत बना सकती है। मशीनें तभी लगायी जानी चाहिए जब वे हमारे देश की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जरूरतों के अनुकूल हों।

हमारी खनिज और धातु नीति पर एक नजर

इस तथ्य के बावजूद कि हमारे देश में लौह अयस्क के विशाल भंडार मौजूद हैं, हमारे देश का इस्पात उत्पादन मात्र 86 लाख टन है। पर हमारी खदानों में अयस्क उत्पादन की योजना प्रायः निर्यात की जरूरतों को मद्देनजर रख कर बनायी गयी है। सिर्फ एक औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था में ही कच्चे माल को मुख्य रूप से निर्यात के लिए पैदा करने की नीति अपनायी जा सकती है। यह नीति हमारी अर्थव्यवस्था को कमजोर कर रही है और इससे भी अधिक उल्लेखनीय बात यह है कि आनेवाली पीढ़ियों के प्रति हमारी जिम्मेदारी की कमी दर्शाती है।

हमारे खनिज और धातु आयात-निर्यात के आँकड़ों पर नजर डालने पर यह बात साफ हो जायेगी। स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लि. (' सेल ') के गोदाम निर्यात-योग्य गुणवत्ता के इस्पात से भरे पड़े हैं। निर्यात-योग्य गुणवत्ता के इस्पात और पिग-आयरन का उत्पादन 50 प्रतिशत से भी ज्यादा घटा दिया गया है। चाहे जो भी कारण हों, इस वर्ष हम 3.9 लाख टन पिग-आयरन अमेरिका से आयात कर रहे हैं (देशबंधु, 28 सितम्बर 1983)।

इस वर्ष, कोयले के आयात हेतु एक नये समझौते पर करार हुआ है। इसके अनुसार हम पोलैंड से अंतर्राष्ट्रीय बाजार की दर से दस डालर प्रति टन ज्यादा कीमत पर कोयले का आयात करेंगे। लौह अयस्क के निर्यात के आँकड़े और भी ज्यादा चौंकाने वाले हैं, जो नीचे तालिका क्र. 5, 6 (पृ. 152) एवं 7 (पृ. 154) में दिये गये हैं –

तालिका क्र. 5

प्रति टन लौह अयस्क के निर्यात पर होने वाला खर्च

विवरण	रु.
एन. एम. डी. सी. को भुगतान	31.98
रेल भाड़ा	61.38
बंदरगाह को भुगतान	19.77
सरकार को भुगतान	14.75
एन. एम. डी. सी. का घाटा	19.67
बंदरगाह प्रशासन का घाटा	22.13
योग	169.68
<u>वापसी</u>	
करों से योगदान	14.75
रेल विभाग का मुनाफा	11.05
कुल खर्च	**143.88**

लगा देते हैं। जब हम इन ठेका मजदूरों के लिए स्थायी रोजगार की माँग करते हैं, तब हमारी बात अनसुनी कर दी जाती है। हमें बताया जाता है कि लागत बहुत बढ़ जायेगी और यह प्रक्रिया घाटे की होगी।

ये ठेका मजदूर अंधेरी झुग्गी-बस्तियों में रहते हैं, जिनमें शौचालय, पानी या इलाज जैसी सामान्य मानवीय सुविधाओं का सर्वथा अभाव होता है। दिनभर काम करने के बाद भी उन्हें परिवार समेत भूखा सोने के लिए मजबूर होना पड़ता है।

हमें पूछना है, क्या ये ठेका मजदूर हमारे देश की संतानें नहीं हैं ? अगर एक छोटा लड़का अपने बाप के बगीचे में कुछ घंटे काम करता है और उसके बाद अपने बाप से कुछ पैसे माँगता है, तो उसका बाप उसे सहर्ष कुछ अतिरिक्त भी पैसे दे देगा, चूँकि उसे पता होता है कि यह पैसा उसके अपने ही परिवार के हित में खर्च होगा। एक सच्चा देशभक्त पूँजीपति भी यही करेगा। उसकी रुचि अपने देश में ही आंतरिक बाजार बढ़ाने में होगी। **पर जहाँ मशीन कौशल का प्रतीक हो और श्रम कौशल की कमी का प्रतीक हो, वहाँ अर्थनीति की नींव इस प्रकार के शोषण पर ही टिकी होगी।**

अंत में

उद्योगों का विकास, पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। परंतु हमारे देश की नौकरशाही सामंती मूल्यों में जकड़ी हुई है। यही कारण है कि नौकरशाही राष्ट्रीय हित, मजदूरों की सुरक्षा और इसी तरह के अन्य मुद्दों को ध्यान में रखे बगैर काम करती है।

एक उदाहरण से यह बात साफ हो जायेगी। शकरपुर कोलियारी में अग्निकांड के लिए एक प्रशासकीय अधिकारी दोषी पाया गया। 'खदान सुरक्षा के महानिदेशक' ने खदान बंद कर दी। फलस्वरूप 1.8 करोड़ टन कोयला और छह करोड़ रुपये की मशीनें नष्ट हो गयीं। पर सम्बंधित अधिकारी की साकतोरिया मुख्यालय में जनरल मैनेजर (सुरक्षा) के पद पर पदोन्नति हो गयी (कल्याण राय : बिज़नेस स्टैंडर्ड, 20 अक्तूबर 1979) !

मैं यह मानता हूँ कि जिस तरह से हमारी खदानों का मशीनीकरण किया जा रहा है, वह एकदम गैर-जिम्मेदाराना प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया से अमीर और गरीब के बीच की दूरी और बढ़ जायेगी। **यह प्रक्रिया हमें समता की ओर नहीं, वरन् गैर-बराबरी की ओर ले जायेगी; आत्मनिर्भरता की ओर नहीं वरन् दूसरों पर निर्भरता की ओर, एक खुशहाल समाज की ओर नहीं बल्कि एक दुःखी समाज की ओर ले जायेगी।**

हमारा यह दृढ़ संकल्प है कि किसी भी नये कदम को लोगों की वास्तविक परिस्थितियों के आधार पर उठाना चाहिए। अगर मशीनीकरण आज लोगों में छँटनी और भुखमरी को और आगे बढ़ाता है तो यह कदम गलत होगा। उदाहरण के लिए , बैलाडीला या कोयला खदानों में मशीनीकरण के कारण बड़े पैमाने पर लोगों को बेरोजगार बनाया गया और पुलिस ने उन पर गोलियाँ चलायीं। इससे लोगों को और उनकी उत्पादन प्रक्रिया, दोनों को नुकसान होता है। अतः लोगों के असली हितों को लगातार ध्यान में रखकर और लोगों को साथ में लेकर ही उत्पादन प्रक्रिया में किसी परिवर्तन को लागू किया जा सकता है।

❑

(पी. यू. डी. आर. के सौजन्य से ; मूल अंग्रेजी से अनूदित ।)

मजदूरी, काम एवं रहन-सहन की परिस्थितियाँ

नवम्बर 1983 में हिन्द मजदूर सभा द्वारा स्थापित एशियन वर्कर्स डेवलपमेंट इंस्टीट्यूट, राउरकेला, की ओर से एक परिचर्चा का आयोजन किया गया था। इस परिचर्चा का विषय 'सदान मजदूरों की मजदूरी, कार्यदशाएँ एवं रहन-सहन की परिस्थितियाँ' था। इस परिचर्चा के लिए नियोगी ने विशेष रूप से अंग्रेजी में एक सैद्धांतिक पर्चा तैयार किया था। परंतु ऐन मौके पर उनकी गाड़ी छूट गयी और वह पर्चा कभी भी प्रस्तुत नहीं हो सका। इस पुस्तक की तैयारी के दौरान उनके पुराने कागजातों के बीच इस पर्चे की एक प्रति अनायास मिल गयी। इसका हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत है। सैद्धांतिक पर्चे की अपेक्षित दुरूहता के बावजूद पाठकगण इसमें व्याप्त 'सैद्धांतिक सौंदर्य' से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते, भले ही इसके लिए उन्हें कुछ अतिरिक्त दिमागी कसरत क्यों न करनी पड़े। — स.

मजदूरी की अवधारणा पूँजीवादी समाज के तंत्र की एक केंद्रीय अवधारणा है। इस व्यवस्था के तहत मजदूरी, उत्पाद के मूल्य का वह हिस्सा है जिसे उत्पादन में लगे मजदूर को उसकी श्रम शक्ति का पुनर्निर्माण करने व उसको बरकरार रखने के लिए दिया जाता है। मजदूरी किसी भी तरह से मजदूर द्वारा सम्पन्न कार्य का कुल मूल्य नहीं होती। पूँजीवादी व्यवस्था के तहत मजदूरी का निर्धारण विभिन्न कारकों के ताने-बाने के ऊपर निर्भर करता है। उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं : श्रम की आपूर्ति व माँग के बीच का समीकरण; उत्पाद की आपूर्ति व माँग के बीच का समीकरण, जो आज बढ़ते हुए क्रम में अंतर्राष्ट्रीय बाजार पर निर्भर बनता जा रहा है; और इसके साथ ही मजदूर वर्ग की संगठित ताकत।

यदि इस सैद्धांतिक रचना की सीमाओं को स्वीकार भी लिया जाये, तो भी हमें मजदूरी की अवधारणा के सम्बंध में राज्य के मौजूदा कानूनों के तहत काफी उलझन दिखायी देती है। उदाहरण के लिए, अगर मौजूदा तीनों कानूनों (अर्थात् मजदूरी भुगतान कानून, न्यूनतम मजदूरी कानून और बोनस भुगतान कानून) की तुलना करें तो हमें मजदूरी की तीन अलग-अलग परिभाषाएँ मिलेंगी। बहरहाल, उन सबमें एक सामान्य बिंदु भी है। वह यह है कि मजदूरी न सिर्फ नियोजक (मालिक) व कर्मचारी के बीच हुए 'घोषित' अनुबंध पर निर्भर है, बल्कि उनके बीच के 'अंतर्निहित' अनुबंध पर भी निर्भर करती है। फिर मजदूरी में वह राशि भी शामिल है जिसे नियोजक प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तरीके से मजदूरों को देता है। हम इन बिंदुओं पर आगे चल कर विस्तार से चर्चा करेंगे।

अंतर्निहित अनुबंध

अगर कोई नियोजक किसी काम को कराना चाहता है तो वह किस प्रकार के अंतर्निहित अनुबंध करता है? मसलन, किसी बनिये द्वारा दुकान में मदद के लिए एक मददगार रखने या

मजदूर के जीवन स्तर से करते हैं तो हमें दोनों के बीच बहुत बड़े अंतर दिखायी देते हैं। ये अंतर सिर्फ 'प्रत्यक्ष मजदूरी' यानी वेतन के बीच फर्क की वजह से नहीं हैं। भिलाई इस्पात कारखाने का 'नियमित' मजदूर वेतन की बनिस्बत 'अप्रत्यक्ष मजदूरी' के जरिये कहीं ज्यादा कमाता है। इनमें शामिल हैं — स्वास्थ्य सुविधा, शिक्षा, आवास, सड़कें, को-आपरेटिव सोसायटियाँ, वाहन भत्ता, पर्यटन के लिए आर्थिक सहायता, अर्जित अवकाश, अंशदायी भविष्य निधि, पेंशन, आदि-आदि। सवाल यह है कि भिलाई इस्पात कारखाना अपने 'नियमित मजदूरों' को ये सुविधाएँ देने की जरूरत क्यों महसूस करता है ? इनमें से ज्यादातर सुविधाओं की गारंटी तो भारतीय संविधान के नीति-निर्देशक तत्वों के तहत सभी नागरिकों के लिए दी ही गयी है। वास्तव में, ब्रिटेन जैसे उदार पूँजीवादी देशों में भी ये तमाम सुविधाएँ सभी नागरिकों को उपलब्ध हैं। असल में भिलाई इस्पात कारखाना जानता है कि भारत में ये सुविधाएँ नागरिकों को मात्र कागज पर ही दी जाती हैं। इसीलिए भिलाई इस्पात कारखाने को सामान्य जीवन के लिए जरूरी इन बुनियादी सुविधाओं को अपने मजदूरों को उपलब्ध कराने के लिए विशेष प्रावधान करने की जरूरत पड़ती है।

हमारी मान्यता है कि इन सुविधाओं के प्रावधानों को मजदूरी की अवधारणा में शामिल किया जाना चाहिए। ऐसा न सिर्फ नियमित मजदूरों के साथ किये गये 'घोषित' अनुबंधों के तहत होना चाहिए, बल्कि इन्हें उन 'अंतर्निहित' अनुबंधों में भी शामिल किया जाना चाहिए, जिनकी हमने ऊपर चर्चा की है। बहरहाल, इसकी 'स्वीकृति' के लिए भी संघर्ष करना होगा। ऐसे संघर्ष के लिए इन मुद्दों को जनसमुदाय तक ले जाना होगा और उन्हें बताना पड़ेगा कि कैसे उनके साथ धोखा-धड़ी की जा रही है।

न्यूनतम मजदूरी : क्यों और कैसे ?

हमारी यह समझ है कि मौजूदा भारतीय सामाजिक व्यवस्था के तहत '**प्रत्येक से उसकी क्षमता के अनुसार और प्रत्येक को उसकी जरूरत के अनुसार**' का नारा उछालना कल्पनावादी बात होगी। हम मानते हैं कि आज हमें अपने आपको '**प्रत्येक को उसके काम के अनुसार**' के नारे तक सीमित करना होगा। फिर भी किसको कितना दिया जाये, इसके लिए जरूरतों पर नजर दौड़ानी पड़ेगी। न्यूनतम मजदूरी कानून लागू करके राज्य ने भी इस दायित्व को स्वीकार किया है। इस कानून का निर्माण यह दिखलाता है कि मजदूरी के निर्धारण के सवाल को सिर्फ श्रम बाजार के समीकरणों पर नहीं छोड़ा जा सकता, बल्कि राज्य को प्रत्यक्षतः हस्तक्षेप करना पड़ेगा ताकि एक न्यूनतम जीवन स्तर सुनिश्चित किया जा सके।

फिर भी, भारत में तमाम अन्य सुधारात्मक उपायों की तरह यह भी महज कागजी बना हुआ है। न्यूनतम मजदूरी की जरूरत को स्वीकार करने के बाद राज्य खुद ही इस स्वीकृति को विभिन्न तरीकों से निरर्थक बनाने की कोशिश करता है। इस क्रम में वह ऐसी औद्योगिक व कृषि नीतियाँ तय करता है, जिनके परिणामस्वरूप बेरोजगारी बढ़ती है ; मसलन, मशीनीकरण की नीति। ऐसा ही एक दूसरा उपाय है, न्यूनतम मजदूरी के निर्धारण के लिए ऐसे आंकड़े तय किया जाना जिनका मौजूदा सामाजिक व आर्थिक असलियत से कोई रिश्ता नहीं होता। महाराष्ट्र में न्यूनतम मजदूरी का निर्धारण जिस प्रकार से होता है उसके एक दिलचस्प विश्लेषण से यह बात साफ हो जाती है।

हमारे अपने अनुभवों से यही साबित होता है कि इस समस्या के कई पहलू हैं। उनमें से कुछ पर विस्तार से चर्चा करने की जरूरत है।

सबसे पहले हम इस सवाल पर गौर करेंगे कि मजदूर और मजदूर संगठन काम की परिस्थितियों को किस हद तक नियंत्रित कर सकते हैं। यह किसी स्थान व काल विशेष में सीधे मजदूर आंदोलन के जुझारूपन पर निर्भर करता है। प्रबंधन में मजदूरों द्वारा नियंत्रण की अवधारणा, प्रबंधन में मजदूरों की भागीदारी की उस अवधारणा से काफी अलग है, जिसकी चर्चा सार्वजनिक प्रतिष्ठानों के प्रचार साहित्य में अक्सर होती है। एक तरफ मजदूर अपनी संगठित ताकत के आधार पर माँगें रखते हैं और दूसरी तरफ प्रबंधन अपने जी-हुजूरिये ट्रेड यूनियनों के गुर्गों को लेकर ' वर्क्स कमेटी ' के निर्माण के जरिये इन संघर्षों की धार को कुंद करने की कोशिश करता है। सुरक्षा उपायों की पर्याप्तता और उत्पादन के मामलों में प्रबंधन को उसकी जिम्मेदारी से छुटकारा दिलाने में वर्क्स कमेटियों की भूमिका को प्रकाश में लाया जाना चाहिए।

एक दूसरा महत्वपूर्ण बिंदु, जिस पर यहाँ जोर देने की जरूरत है, वह यह है कि उत्पादन-कार्य की कुछ पद्धतियाँ विशेष रूप से जोखिम की सम्भावनाओं से भरी रहती हैं। मसलन, दल्ली राजहरा की खदानों से लौह अयस्क को रेल तक ले जाने का काम ट्रकों द्वारा किया जाता है और माल की ढुलाई के काम में लगे मजदूरों को ' खेप ' की प्रति दिन संख्या के अनुसार मजदूरी दी जाती है। इस स्थिति में ट्रक चालकों व मजदूरों के ऊपर काफी दबाव रहता है कि वे ज्यादा-से-ज्यादा खेप लगायें ताकि ज्यादा कमा सकें। इस क्रम में वे सुरक्षा कानूनों का उल्लंघन करते हैं, खतरनाक तरीके से ट्रक चलाते हैं, भीड़-भाड़ के वक्त अयस्क को सड़क के किनारे ही लापरवाही से पटक देते हैं। इससे जाहिर है कि मजदूरों और आम लोगों के लिए काफी खतरा बना रहता है। इस अनुभव से यही सीखा जा सकता है कि ' पीस रेटेड '[1] काम ' के मामले में भी अधिकतम काम के परिमाण की कोई सीमा होनी चाहिए। ' पीस रेटेड ' काम के मानकों को तय करने के क्रम में सामाजिक परिस्थिति के सभी पहलुओं पर समुचित ध्यान दिया जाना चाहिए।

ज्यादातर सार्वजनिक प्रतिष्ठानों में कार्य-स्थल के वर्तमान संयोजन के चलते मजदूर काम की प्रक्रिया से बहुत ज्यादा अलगाव महसूस करते हैं। मजदूरों में काम के प्रति जुड़ाव का अभाव, प्रबंधन द्वारा मजदूरों के साथ ऐसा बर्ताव मानो वे बस काम [illegible] सबका औद्योगिक वातावरण पर काफी बुरा प्रभाव पड़ता है। मजदूर काम के घंटों के दौरान अपने आपको कैदी महसूस करते हैं और पाली की समाप्ति के बाद आजाद। इस मुक्ति को अभिव्यक्त करने का कोई रचनात्मक जरिया न होने की वजह से वे अक्सर शराब की ओर मुड़ जाते हैं और ' शुभचिंतक ' राज्य की ओर से शराब की खुलेआम बिक्री की पूरी व्यवस्था की जाती है।

जहरीले रसायनों के इस्तेमाल और खतरनाक उत्पादन प्रक्रिया के चलते और वायु व ध्वनि प्रदूषण से स्वास्थ्य के लिए पैदा होने वाले खतरे और भी अधिक स्पष्ट हैं। हमें निश्चित तौर पर इन प्रत्यक्ष खतरों के खिलाफ लड़ना चाहिए, लेकिन स्वस्थ कार्य-परिस्थितियों के लिए हमारी लड़ाई को वृहत्तर परिप्रेक्ष्य में रखकर देखने की जरूरत है। इस परिप्रेक्ष्य का [illegible] है — उत्पादन प्रक्रिया में रचनात्मकता व आनंद की [illegible]

[1] वह पद्धति जिसमें मजदूरी का भुगतान उत्पादन के परिमाण के अनुसार किया जाता है।

औद्योगिक नगर में लगे पोस्टरों व होर्डिंगों में देखा जा सकता है।

भयावह मुद्रास्फीति के चलते असल मजदूरी व जीवन स्तर में लगातार गिरावट आ रही है। इसे निम्नलिखित तालिका की मदद से समझा जा सकता है :

(क)	**निर्वाह-व्यय सूचकांक** [1]		
	(1961 = 100)		
	1981		
	औद्योगिक मजदूर	—	541
	शारीरिक श्रम न करने वाले शहरी कार्मिक	—	479
	खेतिहर मजदूर	—	521
(ख)	**थोक-भाव सूचकांक** [2]		
	(1970-71 = 100)		
	खाद्य सामग्री	—	417
	अन्य सामग्रियाँ	—	298

इसमें सबसे बुरी तरह प्रभावित होने वाली श्रेणी अनियमित मजदूरों की है। **इनके पसीने व मेहनत के बल पर नियमित मजदूरों का भरण-पोषण होता है।**

निष्कर्ष

हमारा निष्कर्ष है कि मजदूरों की मजदूरी, काम व रहन-सहन की परिस्थितियों को तीन अलग-अलग असम्बद्ध खानों में नहीं बाँटा जा सकता। वे एक-दूसरे से स्वाभाविक रूप से अंतर्सम्बंधित हैं। मजदूरों का जीवन इन तीनों के बीच जीवंत आदान-प्रदान के ऊपर निर्भर है। यह राजसत्ता और राजकीय मशीनरी व इजारेदार पूँजीवादी ताकतें ही हैं जो इन तीनों को अलग-अलग करके इन पर सौदा करती हैं। वे मजदूर वर्ग की हर श्रेणी के लिए मजदूरी, काम व रहन-सहन की परिस्थितियों के अलग-अलग मानदंड तय करती हैं। वे सदा एक की कीमत पर दूसरे के साथ मोल-तोल करती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि कुछ निर्णायक कार्य-क्षेत्रों या उन क्षेत्रों में, जहाँ जुझारू आंदोलन हुए हैं, मजदूरों का जीवन-स्तर कमोबेश स्थिर हो गया है। **यह स्थायित्व उसी इलाके के असंगठित मजदूरों व किसानों की कीमत पर हासिल किया गया है।** . . . .

(आगे की पांडुलिपि उपलब्ध नहीं हो सकी है।)

❑

(मूल अंग्रेजी से ध्रुव नारायण द्वारा किये गये अनुवाद का परिमार्जित स्वरूप; नियोगी के घर से क्रांति गुहा नियोगी के सौजन्य से।)

[1] ' कॉस्ट ऑफ लिविंग इन्डेक्स '। [2] ' होलसेल प्राइस इन्डेक्स '।

के नारे ने विदेशों से मशीन मँगाने की प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया है। परंतु जरूरी उत्पादन प्राप्त करने के लिए मशीन उपयोगी सिद्ध नहीं हुई। मैन्युअल खदान खुलने पर हजारों की संख्या में मजदूर कार्य में जुट गये। मैनेजमेंट की मशीन-परस्त नीति के कारण मैन्युअल खदान के मजदूरों को ठेकेदारों की मेहरबानी के ऊपर छोड़ दिया गया। मजदूर लुटता गया। स्थायी-अस्थायी मजदूरों में फर्क लगातार बढ़ता गया।

आखिर इस फर्क ने जंजीर तोड़ने के स्वतःस्फूर्त चिंतन को विकसित किया। छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ यूनियन बनी। यूनियन के नेतृत्व ने सचेतन रूप से आर्थिक माँगों के लिए आंदोलन का नेतृत्व करते हुए, छत्तीसगढ़ के मेहनतकशों के ऊपर गुलामी की जंजीर तोड़ने की स्वतःस्फूर्त भावना को संगठित रूप देना चाहा। गुलामी की जंजीर क्या है ?

यह एक गुलाम व्यवस्था है। गुलाम व्यवस्था में देश की आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक बागडोर मुट्ठी भर देशी-विदेशी पूँजीपतियों के हाथ में रहती है।

आर्थिक लूट बेलगाम चलती है। उत्पादन के साधनों पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कब्जा रहता है। देश का अंदरूनी बाजार संकुचित रहता है। आत्मनिर्भर अर्थनीति नहीं बन पाती है। पूँजी का केंद्रीकरण होता जाता है।

राजनैतिक रूप से जनवाद को कुचल दिया जाता है। तानाशाही प्रक्रिया हावी रहती है। फौज या पुलिस बल के सहारे ही राज्य चलता है। सांस्कृतिक रूप से रूढ़ीवादी विचार, सेक्स, शराब के जरिये सांस्कृतिक हमला जारी रहता है। अपसंस्कृति का निर्माण होता है। अंधविश्वास को पनाह मिलती है। एकता, संघर्ष एवं वैज्ञानिक चिंतन का पग-पग पर विरोध होता रहता है।

इन परिस्थितियों में बी. एन. सी. मिल्स एवं ग्लूकोज के मजदूरों ने लाल-हरा झंडा अपने कंधों पर थामा है। सन् 1984 से मुक्ति-संघर्ष कदम-कदम बढ़ते जा रहा है। भागीदारी आंदोलन मजदूरों की संगठन शक्ति की एक विजय थी। सन् 1984 के जुलाई-दिसम्बर में हुआ संघर्ष एक परिपक्व मजदूर आंदोलन की विजय थी।

निलम्बन एवं सेवा मुक्ति का हथियार लेकर मैनेजमेंट, सरकार एवं दलालों ने मिलकर फिर सन् 1985 के सितम्बर महीने से हमला शुरू किया। ये लाल-हरा झंडे की विजय के फल को मिटा देना चाहते थे। मजदूरों ने संघर्ष का बिगुल फूँका एवं असहयोग का हथियार लेकर मैनेजमेंट की निलम्बन एवं सेवा मुक्ति के हथियार का मुकाबला किया। आज भी यह मुकाबला जारी है।

क्या इस संघर्ष को हम विजय की मंजिल तक नहीं पहुँचायेंगे ?

क्या हम मजदूरों की आजादी की लड़ाई को आधी छोड़ कर गुलामी की जंजीर को मंजूर कर लेंगे ?

यह आज का विचार है — 'हम होंगे कामयाब एक दिन।' कामयाबी की मंजिल तक पहुँचने के लिए हर गाँव, मुहल्लों के मजदूर साथी, भाई-चारा के रिश्ते को मजबूत करें।

यह संघर्ष हमारे भविष्य के ऊपर असर करेगा। हमारे भविष्य के साथ जुड़ा है हमारे परिवार का भविष्य। इसलिए इस संघर्ष में विजय के लिए हमारे परिवारजनों को भी हिस्सा लेना होगा।

"जंजीर ढीला बाँधो नहीं, जंजीर तोड़ डालो।"

को अमल में लाने के लिए पुनर्विचार करना चाहिए। मगर कमीशन के अन्य सदस्यों ने इस माँग को ठुकरा दिया। फलस्वरूप डॉ. सद्गोपाल ने कमीशन की औपचारिक एवं नाटकीय कार्य-पद्धति के विरोध में अपना इस्तीफा दे दिया। कई कमीशन बिठाये गये, कई सुझाव व प्रस्ताव पारित किये गये। मगर हम सब प्राथमिक शिक्षा से विश्वविद्यालय स्तर तक की शिक्षा की दयनीय स्थिति से अपरिचित नहीं हैं और आज फिर हम सब यहाँ इकट्ठा हुए हैं। एक नयी शिक्षा नीति ढूँढने हेतु, चर्चा के लिए चलो, शुरूआत करें।

मेरे विचार में शिक्षा एक ऐसा महत्वपूर्ण क्षेत्र है, जिससे भारत की 80 करोड़ जनता अपने लिए एक बेहतर, खुशहाली से भरपूर, मानवीय और सृजनशील समाज स्थापित कर सकेगी। ऐसा समाज स्थापित करने हेतु ये बात बहुत जरूरी है कि सही विचार से जनता अवगत रहे। ये सही विचार क्या हैं ?

ये विचार, ऐसे विचार हों जिनसे भारत की 80 करोड़ जनता की सृजनशक्ति-क्षमता का दोहन हो। सही विचार कहाँ से आयें ? सन् 1963 में माओ-त्से-तुंग से यह सवाल पूछा गया था, " सही विचार कहाँ से आते हैं ? क्या ये आसमान से टपकते हैं ? क्या ये दिमाग के अंदर मौजूद रहते हैं ?" " नहीं, सही विचार सामाजिक काम से आते हैं और सिर्फ उसी से आते हैं। " सही विचार तीन प्रकार के सामाजिक काम से आते हैं –

1. उत्पादन के लिए संघर्ष, 2. वर्ग संघर्ष एवं 3. वैज्ञानिक प्रयोग।

मनुष्य का सोच उसके सामाजिक अस्तित्व पर निर्भर है। **अगुवा वर्ग के सही सिद्धांत को जब आम जनता आत्मसात कर लेती है, तब ये विचार एक भौतिक ताकत का रूप धारण कर लेते हैं जो समाज को, दुनिया को बदलते हैं।**

वर्ग संघर्ष की बात को छोड़िये, मैंने कहा था कि मैं सरकार की नीति पर चर्चा करने आया हूँ, न कि क्रांति का उपदेश देने। मैं बाकी दो मुद्दों को यहाँ उठाऊँगा। उत्पादन के लिए संघर्ष एवं वैज्ञानिक प्रयोग, हम किस तरह इन दो बातों को वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में लागू कर सकते हैं।

उत्पादन के लिए संघर्ष – भारत की करोड़ों आम जनता जिसमें युवा व बच्चे भी शामिल हैं, सभी ' उत्पादन के लिए संघर्ष ' में जुटे हैं। सिर्फ ऊँचे वर्ग के चंद लोग रोजी-रोटी की समस्या से कोसों दूर हैं। दुर्भाग्य यह है कि शैक्षणिक संस्थाओं में इसी वर्ग का वर्चस्व है और जैसा रवीन्द्रनाथ टैगोर ने कहा, " ये लोग अपने ही देश में विदेशी जैसे रहते हैं। " इन ' विदेशी ' लोगों के प्रभाव के कारण ही ' उत्पादन के लिए संघर्ष ' का महत्व खत्म हो जाता है और ' काम के लिए शिक्षा ' जैसी अर्थहीन और ढोंगी चीज बन जाती है। ' काम के लिए शिक्षा ' जैसा विचार इस बात को प्रतिबिम्बित करता है कि आज की शिक्षा व्यवस्था जनता के आम जीवन से किस हद तक कटी हुई है। यह विचार कि उत्पादन प्रक्रिया को शिक्षा व्यवस्था का एक अंग बनके रहना है, यह कोई नया विचार नहीं, बल्कि एक प्राचीन विचार है। यही विचार हमारी गुरु-शिष्य परम्परा का आधार है। इसी विचार को नयी तालीम व्यवस्था के अटूट अंग के रूप में शामिल किया गया था। महात्मा गांधी इस बारे में बहुत साफ थे। 30 अक्तूबर 1937 के ' हरिजन ' में उन्होंने लिखा था, " मैं काम को प्राथमिकता न देते हुए, शारीरिक श्रम द्वारा शिक्षा को प्राथमिकता देता हूँ। सभी शिक्षा, चाहे वो पत्र व्यवहार, इतिहास, भूगोल हो या गणित, विज्ञान

26 वर्षों से भिलाई इस्पात संयंत्र की लौह अयस्क की जरूरत की पूर्ति की है, वह आज बेजोड़ है। उन मजदूरों द्वारा उत्पादित लौह अयस्क निम्न मान का है, यह कहना उनके प्रति अपमान करना है।

ख) जापान के तकनीकी ज्ञान एवं शोध उच्च स्तर के हैं, यह सभी स्वीकार करेंगे। बैलाडीला की मैन्युअल लोहा खदानों के उत्पादन से वर्षों तक जापान के इस्पात कारखाने चलते रहे। जापान की तकनालाजी पर प्रतिकूल असर नहीं देखा गया।

ग) दल्ली राजहरा के लौह खदानों से विगत वर्षों में दुर्गापुर, बोकारो व राउरकेला के इस्पात संयंत्रों को माल भेजा जाता रहा है। मैन्युअल खदानों का अयस्क उन इस्पात कारखानों की जरूरत की पूर्ति भी कर चुका है। सभी जगह दल्ली का माल अच्छा माना जाता है।

घ) सवाल यह भी है कि जो मैनेजमेंट चिल्लाता है कि मैन्युअल खदानों के निम्न स्तर के अयस्क से उनकी धमन भट्‌टी को नुकसान पहुँच रहा है, उनकी अपनी लगन धमन भट्‌टी के प्रति कितनी है ? नियमानुसार हर आठ घंटे के शिफ्ट में दो बार धमन भट्‌टी को सुखाना जरूरी है। पर आजकल भिलाई में यह नहीं हो रहा है क्योंकि कोक कोयला महँगा है। उसकी बचत करना है। खुद की गैर-जिम्मेदारी से धमन भट्‌टी को नुकसान पहुँचाना और फिर उसका दोष खदान के तथाकथित ' अकुशल ' मजदूरों पर डालना, यह बेईमानी नहीं तो क्या है ?

2. **उत्पादन लागत** — अब हम आते हैं उत्पादन की लागत वाली बात पर।

वर्तमान में दल्ली माईन्स अर्द्ध-मशीनीकृत (सेमी-मेकेनाइज़्ड) पद्धति से चल रही है। यहाँ मजदूर हाथों से उत्खनन (रेजिंग) व लोडिंग करते हैं। केवल क्रशिंग, मशीनों द्वारा होती है।

वर्तमान दल्ली अर्द्ध-मशीनीकृत माईन्स के कुल औसत उत्पादन के मुताबिक प्रति टन रेजिंग एवं लोडिंग खर्च रु. 16/- प्रति टन होता है। उत्पादन बढ़ाकर लागत कम की जा सकती है। अगर उत्पादन बीस लाख टन हो तो रु. 12.50 प्रति टन के नीचे उत्पादन खर्च सम्भव है। जबकि वर्तमान में मजदूरों को रु. 7/- प्रति टन रेजिंग एवं रु. 3/- प्रति टन लोडिंग रेट दिया जाता है जिस पर अन्य खर्च रु. 2/- प्रति टन यानी 7+3+2 = कुल रु. 12/- प्रति टन से अधिक खर्च नहीं होना चाहिए।

भारत सरकार के अपने आँकड़ों के अनुसार भी मैन्युअल माइनिंग, मशीनीकृत माइनिंग से सस्ती पड़ती है।

(इसी खंड में पूर्व में प्रस्तुत ' खदानें, मशीनीकरण और लोग ' शीर्षक के लेख में पृ. 147 व 148 पर क्रमशः तालिका क्र. 1 और 2 देखिये, जो मूल लेख में यहाँ पुनः प्रस्तुत की गयी थीं। दोहराव से बचने के लिए इन्हें यहाँ से निकाल दिया गया है। — स.)

दल्ली माईन्स को मशीनीकृत करने के खर्च का ब्यौरा इस प्रकार होगा —

हमारा विश्लेषण

सिर्फ सवाल एवं जवाब से मामला स्पष्ट नहीं होता है। समस्या की गहराई तक पहुँचने के लिए बुनियादी मुद्दों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है। पाठकों के विचार के लिए हम गुणवत्ता (क्वालिटी) एवं उत्पादन लागत का एक विश्लेषण प्रस्तुत करते हैं।

गुणवत्ता (क्वालिटी) — लौह अयस्क की क्वालिटी क्या होनी चाहिए ?

लौह अयस्क की खपत मूलतः इस्पात कारखानों की धमन भट्टियों में होती है। धमन भट्टियों में तरल लौह उत्पादन करने के लिए जिस गुणवत्ता की आवश्यकता है, वही लौह अयस्क गुणवत्ता में ठीक माना जाता है। लौह अयस्क की गुणवत्ता का स्तर बनाकर रखने की जिम्मेदारी मैनेजमेंट की होती है। मैनेजमेंट की मजदूर-विरोधी नीति के कारण, दीर्घकालीन प्लानिंग के अभाव में एवं भ्रष्टाचारी व्यवस्था के चलते आज गुणवत्ता स्तर बिगड़ने का सवाल पैदा हो रहा है। लौह अयस्क में कितने प्रतिशत लोहा है, वह गुणवत्ता का एक आवश्यक मापदंड है। राजहरा की खदानों में जहाँ 64 प्रतिशत से ऊपर लोहे की मात्रा मिलती है, वहीं दल्ली की पहाड़ियों में 59 प्रतिशत से 64 प्रतिशत तक लोहा रहता है। प्राकृतिक नियम के अनुसार सारे इलाके में लोहे की मात्रा का एक ही स्तर रहना असम्भव है। यह मात्रा ' ब्लेन्डिंग ' के जरिये तय की जाना चाहिए।

1. राजहरा खदान समूह में एक खदान आरीडोंगरी माईन्स है जहाँ लोहे की मात्रा 64 से लेकर 70 प्रतिशत तक थी। मैनेजमेंट की गलत नीति के कारण उसी खदान से अधिक-से-अधिक उत्पादन कर आज आरीडोंगरी खदान में लौह अयस्क का उत्खनन बंद कर देना पड़ा है। आरीडोंगरी माईन्स के लौह अयस्क का उत्खनन दीर्घकालीन ' ब्लेन्डिंग ' की उपयोगिता को मद्देनजर रखते हुए कभी भी नहीं किया गया। वह भी दिन आने वाला है जब आरीडोंगरी इलाके के बच्चों को किताबों में पढ़ना पड़ेगा कि हमारे यहाँ कभी अच्छी किस्म का लौह अयस्क उपलब्ध था।

2. माइनिंग का सबसे पहला कार्य ड्रिलिंग का कार्य होता है। उपयुक्त इलाकों में ड्रिलिंग एवं ब्लास्टिंग करने पर ही उपयुक्त प्रकार का अयस्क उपलब्ध हो सकेगा। आज एक साल से ' वेगन ड्रिल ' मशीन लाकर बेकार रखी गयी है। मैनेजमेंट द्वारा इन मशीनों का उपयोग न करने से उपयुक्त ड्रिलिंग नहीं हो पा रही है, जिससे उत्पादन की गुणवत्ता में प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। दूसरी तरफ मजदूरों के लिए उत्पादन करने में भी रुकावट पैदा की जा रही है, जिससे मजदूरों के लिए रोजी-मजदूरी की एक समस्या पैदा हो रही है। मैनेजमेंट का लक्ष्य यह है कि मजदूरों को कम रोजी प्राप्त हो, चाहे उत्पादन की गुणवत्ता भले ही बिगड़ जाये।

3. ओव्हरबर्डन[1] के उत्खनन का रेट अधिक है, वहीं लौह अयस्क के उत्खनन का रेट कम है। इसलिए मैनेजमेंट के लोग ओव्हरबर्डन को लौह अयस्क के नाम पर ' सेजी ' (खदान में भंडारित अयस्क) या बंकर में अनलोड कराते हैं। ओव्हरबर्डन में क्ले, क्वार्ट्जाइट,

[1] नीचे दबे हुए लौह अयस्क के भंडार के ऊपर मिट्टी-पत्थर की मोटी तह जिसे हटाये बगैर लौह पत्थर का उत्खनन सम्भव नहीं है।

पर अनुभव हो रहा है। देश में जब प्रगतिशील विचार का अभाव होता है, तब नौकरशाही ढाँचा ही सर्वशक्तिमान बन जाता है। नौकरशाही का एक मात्र सिद्धांत यह है कि 'साहब हमेशा सही होता है' ('बॉस इज़ ऑल्वेज़ राइट')।

प्रधान मंत्री राजीव गांधी ने कम्प्यूटर युग को लाने के विचार हाल ही में व्यक्त किये हैं। यह सुनते ही कोयला, टेक्सटाइल, रेल, इस्पात एवं अन्य सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों के नौकरशाह, विदेशों में बिताये हुए अपने-अपने विद्यार्थी जीवन को याद कर कम्प्यूटर एवं मशीनों के नये-नये सपने देखने में तल्लीन हो गये। श्रीमती इंदिरा गांधी के जमाने में उच्च-पदस्थ नौकरशाह अपने आफिस की दीवालों पर उत्पादन एवं उत्पादकता के आँकड़े अंकित करने लगे थे। अब राजीव युग में उच्च-पदस्थ नौकरशाहों के कमरों के श्यामपट पर सिर्फ मजदूर, महिला मजदूर एवं 'स्वेच्छा से निवृत्त' मजदूरों की संख्या अंकित होने लगी है। मशीन या कम्प्यूटर क्यों? इस सवाल पर उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री नारायण दत्त तिवारी द्वारा बताया गया है, "अब तो कम्प्यूटर का युग है। हाल में कम्प्यूटर का चमत्कार होगा।" आम के झाड़ में एक साथ आम, कटहल, नींबू एवं धान पैदा होगा!

हमारे देश के नौकरशाहों ने भी उसी प्रकार सपने देखने शुरू कर दिये हैं। "आहा! कितना मजा आयेगा! कारखाना चलता रहेगा, उत्पादन होगा, परंतु मजदूर नहीं रहेगा, कम्प्यूटर सब काम कर डालेगा।" हमारे प्रधान मंत्री तो क्रांति लाने की बात कर रहे हैं, परंतु यह क्रांति चुपचाप आयेगी। क्रांति का नारा देने वालों का गला दबा दिया जायेगा। कम्प्यूटर या मशीन पता नहीं कब आकर उत्पादन में जुटेगी, परंतु आज से ही नौकरशाह मजदूरों को दुश्मन करार देकर युद्ध-स्तर पर मजदूरों की संख्या कम करने के काम में जुट गये हैं।

"नया जमाना आयेगा, कम्प्यूटर कमायेगा।
नौकरशाह खायेगा, मेहनतकश सोयेगा।"

यह चिंतन आज खतरनाक रूप से पनपता जा रहा है, जिसके नतीजे में देश एक खौफनाक भविष्य की ओर बढ़ते जा रहा है।

हमारे सुझाव एवं प्रतिवेदन

देश की नीति निर्धारण करने वाले एवं नीति को अमल में लाने वाले नौकरशाहों से हम निवेदन करते हैं कि 'सिर दर्द के इलाज में सिर को काट डालने' की नीति साफ-सुथरी बुद्धि का परिचय नहीं देती है। देश तभी आगे बढ़ सकता है, जब देश अपने पैर पर खड़ा होकर चले। आत्मनिर्भर अर्थनीति की बुनियाद देश की जनता की क्रय शक्ति में वृद्धि के ऊपर निर्भर है। क्रय शक्ति तभी बढ़ सकती है, जब लोगों को रोजगार मिले। बेरोजगारी की समस्या दूर हो। आज जब देश में दस करोड़ से अधिक लोग बेरोजगार हैं, उस समय मशीन लगाकर रोजगार की सम्भावना को नष्ट करना मूर्खतापूर्ण ही नहीं, देशहित के प्रतिकूल है। भारत की आयात-निर्यात नीति सुधारने पर उत्पादन की लागत कम हो सकती है। हम एक तरफ अंतर्राष्ट्रीय बाजार की कीमत से 10 डालर प्रति टन से अधिक कीमत देकर पोलैंड से कोयला मँगाते हैं। दूसरी तरफ भारत सरकार के आँकड़े लौह अयस्क के निर्यात के बारे में चौंकाने वाली खबर पेश करते हैं।

(देखिये, इस खंड में 'खदानें, मशीनीकरण और लोग' शीर्षक के लेख में पृ. 151, 152

उपसंहार

ड्रिलिंग विभाग के विभागीयकरण के बाद भिलाई इस्पात संयंत्र ने इस एक मात्र विभाग में उत्पादन खर्च में कटौती की, परंतु मैनेजमेंट अब तक उत्खनन की समस्याओं का हल नहीं खोजना चाहता। इससे मजदूरों में यह शंका पैदा होती है कि क्या मैनेजमेंट उत्पादन खर्च कम करने के बारे में हकीकत में विचार कर रहा है ? संयंत्र की शुरूआत से अब तक पाँच करोड़ टन लौह अयस्क का उत्पादन हो चुका है, जिससे तीन करोड़ टन इस्पात उत्पादित हुआ है। इसे भिलाई इस्पात संयंत्र ने 14 हजार करोड़ रुपये में बेचा है। क्या 14 से 18 साल तक कार्यरत खदान मजदूरों के लिए भिलाई इस्पात संयंत्र के मैनेजमेंट ने कुछ लाख रुपये भी खर्च किये हैं ? . . . . . .

(इसके बाद की पांडुलिपि उपलब्ध नहीं हो सकी है।)

❑

(नियोगी के घर से क्रांति गुहा नियोगी के सौजन्य से।)

वैकल्पिक औद्योगिक नीति

(चर्चा के लिए ड्राफ्ट)

सन् 1987-88 से छमुमो ने अन्य संगठनों के साथ मिलकर एक वैकल्पिक विकास नीति की रूपरेखा बनाने की शुरूआत की। उसकी पहल पर पहली बैठक कानपुर में कुछ यूनियनों व अन्य संगठनों के साथ हुई। दूसरी बैठक सहारनपुर में हुई जहाँ नियोगी की ओर से छमुमो के साथी अनूप सिंह ने चर्चा हेतु वैकल्पिक औद्योगिक नीति पर निम्नलिखित पर्चा पेश किया। इसी क्रम में नियोगी ने वैकल्पिक कृषि नीति पर भी अपने विचार लिखे जो इसी खंड में ' राष्ट्रीय कृषि नीति के दिशाबोध पर्चे पर प्रतिक्रिया ' शीर्षक के लेख (पृ. 184-188) में प्रस्तुत हैं। — *स.*

प्रस्तावना

1. 18 वीं शताब्दी की औद्योगिक क्रांति ने यूरोपीय और अमेरिकी देशों को विकसित क्षेत्र में परिवर्तित किया था। औद्योगिक क्रांति के समय इन देशों में जनता ने स्वाभिमान की भावना से ओत-प्रोत हो अपने-अपने राष्ट्रों के लिए एक स्वावलम्बन की अर्थनीति पर अमल किया। भले ही पूँजीपति जैसे स्वार्थी वर्ग का नेतृत्व हावी रहा, फिर भी

व्यापक चर्चा कर जानकारी हासिल करके ही हम अपनी उद्योग की नयी नीति तय कर सकते हैं। इसके लिए उत्साही साथियों को हाथ बँटाना होगा।

फिर भी कुछ मुद्दे सूर्य की रोशनी से भी अधिक साफ हैं कि इस देश के अधिकांश उद्योगों पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ एवं अन्य विकसित देशों की पूँजी इस कदर हावी हैं कि हमारी पूरी अर्थव्यवस्था विकलांग हो चुकी है। इसके फलस्वरूप उत्पन्न आर्थिक अनिश्चितता, राजनैतिक अस्थिरता प्रति दिन के अखबारों से झलकती ही है। हमारे देश के राजनीतिज्ञों ने 'विकसित देशों को खुश करो और सुखी हो जाओ' की नीति को अपना रखा है। इसी रोशनी में अब हम कुछ उद्योगों को देखते हैं।

अंडा उद्योग — बाजार से हम 70-75 पैसे में एक अंडा खरीदते हैं। यहाँ यह अंडा पास के किसी मुर्गी फार्म से आता है। अपने देश की मुर्गी और अपने ही देश का अंडा, मजे से हम इसे 'स्वदेशी माल' समझकर खा लेते हैं। लेकिन अपनी इस मुर्गी व अंडे के बीच कितनी विदेशी पूँजी घुसी है और उसका कितना नियंत्रण है, उससे हम बेखबर हैं।

जो चूजे मुर्गी बनते हैं, वे विदेश से आते हैं। कम्पनी पहले से आर्डर लेती है और समय से एक दिन पहले चूजे हवाई अड्डे पर आते हैं। हिन्दुस्तान के तमाम मुर्गी फार्मों के चूजे इस तरह विदेश से आते हैं। यही नहीं, उनका मुर्गीदाना भी ये ही कम्पनियाँ बनाती हैं और ये ही उन्हें वैक्सीन, दवाइयाँ आदि उपलब्ध कराती हैं। इस तरह से पूरा धंधा इन्हीं विदेशियों के कब्जे में है। मुर्गी-अंडे का यह धंधा बाहर से भले छोटा लगता हो लेकिन फाइजर जैसी बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ इस धंधे पर छायी हैं। विदेशी कम्पनियाँ चाहें तो हमें एक दिन में अंडे के लिए मोहताज कर सकती हैं।

यह एक उदाहरण मात्र था, जिससे हम अंदाज लगा सकते हैं कि भारत की अर्थव्यवस्था में, उद्योग में विदेशियों की घुसपैठ कितनी व्यापक व गहरी है।

इस्पात उद्योग — किसी भी अर्थव्यवस्था के सबसे महत्वपूर्ण उद्योगों में से एक इस्पात उद्योग है। सरकार भी उसे उद्योग की रीढ़ मानकर सन् 1950-55 से ही इस्पात उद्योग के विकास के नारे लगाती आ रही है और विकास से उसका मतलब है — विदेशी पूँजी, विदेशी [illegible] रूस, इंग्लैंड व जर्मनी की सहायता से भिलाई, बोकारो, दुर्गापुर एवं राउरकेला जैसे बड़े-बड़े इस्पात नगर तैयार हुए। लेकिन ये बड़े-बड़े नगर व उससे भी बड़ी-बड़ी विदेशी 'सहायता' [illegible] तक देश की जरूरत पूरी कर पाये?

1. आज देश को कितने इस्पात की जरूरत है?
2. देश की इस्पात उत्पादन की कितनी क्षमता है?
3. आज कुल कितना उत्पादन हो रहा है?

दस्तूर आयोग की योजना के अनुसार 21वीं सदी से पहले हमारे देश को 10 करोड़ टन का लक्ष्य पूरा करना चाहिए। आज हम 21वीं सदी का दरवाजा तो खटखटा रहे हैं (कुछ पायलट तो शायद उसमें उड़ान भी भर रहे हों)। लेकिन हमारे इस्पात का उत्पादन [illegible] लाख टन पर ही टहल रहा है, यानी प्रस्तावित लक्ष्य का 1/10 रास्ता भी तय [illegible]।

हम क्यों जरूरत का उत्पादन नहीं कर पा रहे हैं? क्या हमारे यहाँ खनिज लोहे की कमी है? क्या ऊर्जा के लिए कोयला नहीं है या फिर बनाने वाले हाथों की कमी है?

है 'ओनली विमल'। जहाँ कुछ वर्ष पहले सिंथेटिक कपड़े का उत्पादन एक या दो प्रतिशत था, आज करीब 25 प्रतिशत हो गया है और पूँजीपति सूती छोड़कर सिंथेटिक कपड़ा बनाने की होड़ में लग रहे हैं।

यही चलता रहा तो क्या होगा कपास पैदा करने वाले किसानों का, जिनकी पैदा की हुई कपास सारे देश का तन ढकती है ? क्या होगा, उन लाखों-लाख हाथों का जो कपड़ा उत्पादन कर जनता की जरूरत पूरी करते रहे हैं ? और कहाँ जायेगी वो गरीब जनता जो सस्ता सूती कपड़ा पहनकर अपने तन को ढकती है ? सुनते थे कि अपना माल बेचने के लिए अंग्रेजों ने ढाका, मुर्शिदाबाद, सूरत, बनारस व देश के अन्य बुनकरों के अँगूठे कटवा दिये थे। क्या आज भी बुनकरों के हाथ नहीं काटे जा रहे हैं ?

ऐय्याशी उद्योग — एक उद्योग है जिसने आजकल बहुत हलचल मचा रखी है, वह है 21वीं सदी वालों का उद्योग — 'ऐय्याशी उद्योग'। इसमें आते हैं टी. वी., मारुति, हीरो होंडा, और कम्प्यूटर। देश का अधिकाधिक धन इन वस्तुओं पर खर्च किया जा रहा है और बाजार में तो मानो ये वस्तुएँ छा गयी हैं। किसी गाँव में पीने का पानी नहीं हो पर वहाँ भी टी. वी. मिलने की काफी सम्भावना है।

पर इनमें से किस वस्तु का उत्पादन अपने देश में होता है ? इन सबका उत्पादन विदेशों में होता है। यहाँ तो उनको केवल जोड़ा (असेम्बल किया) जाता है और नामकरण होता है, जैसे सुजुकी का मारुति। फिर इससे उत्पन्न निर्भरता का लाभ विदेशी किस तरह उठाते हैं ? जब मारुति की कीमत 50 हजार थी उस समय खराब होने पर जापान से दरवाजा भर मँगाने से 14 हजार रुपये कीमत चुकानी पड़ती थी।

आज जो कम्प्यूटर खरीदते हैं, पाँच साल बाद उसका स्पेयर पार्ट भी नहीं मिलेगा। कहेंगे, तकनालाजी पुरानी पड़ गयी है। एक छोटा पेंच खराब हो जाये तो नया कम्प्यूटर खरीदो।

कितनी बार हम विदेशियों की फालतू मशीनें, पिछड़ी तकनालाजी खरीदते रहेंगे ? क्या किसी भी एक उद्योग में हम भी उच्च तकनालाजी को आगे बढ़ाकर अपने पैरों पर खड़े हो पाये हैं ? क्या एक भी उद्योग में देश की जनता स्वाभिमान से कह सकती है कि यह हमने बनायी है, हमने आगे बढ़ायी है ? हमारी नीति '[illegible]' न होकर '[illegible]' रही है। लेकिन भिखारी बनकर किसी ने कभी विकास नहीं किया।

दवा उद्योग — पहली बात तो यह कि कुल दवाइयाँ जो बाजार में आती हैं, उनमें से 10 प्रतिशत ही जरूरत की दवाइयाँ हैं। 'हाथी कमिशन' के अनुसार सिर्फ 117 दवाइयाँ हमारे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन की आवश्यक दवाओं की सूची में 200 दवाइयाँ हैं। पड़ोसी बंगला देश में स्वास्थ्य आंदोलन के बाद सरकार ने 292 दवाओं को प्रयोजनीय माना है। पर हमारे देश में 45 हजार से भी अधिक नाम की दवाइयाँ बिक रही हैं।

85 प्रतिशत उत्पादन एवं वितरण फालतू दवाइयों का होता है, जिनका स्वास्थ्य से कोई सम्बन्ध नहीं, क्यों ?

1. जीवन रक्षक व जरूरी दवाओं पर तो नियमानुसार 55 प्रतिशत से अधिक मुनाफा नहीं ले सकते हैं। कानूनी रूप से रोक है।

तो महँगे सिंथेटिक कपड़े को क्यों बढ़ावा दिया जा रहा है ?

3. देश में कपड़े के लिए पर्याप्त कपास होता है, बुनने के लिए पर्याप्त हाथ हैं, तो अरबों रुपया विदेशों को देकर सिंथेटिक माल क्यों मँगाया जा रहा है ? इससे विदेश में सिंथेटिक पैदा करने वालों और देश में उनकी दलाली करने वालों की कम्पनियों को बेशक फायदा होता है, लेकिन देश में कपास पैदा करने वालों का क्या होगा ? कपड़ा बुनने वाले हाथों का क्या होगा ? सस्ता सूती कपड़ा पहनने वाली जनता का क्या होगा ? स्वदेशी उत्पादन का क्या होगा ?

क्या आपके पास ' स्वदेशी उत्पादनोन्मुखी ' नीति है, जिससे देश के सभी नागरिक उत्पादन प्रक्रिया से जुड़कर विकास में हाथ बँटा सकें ?

❑

(छमुमो के सौजन्य से।)

मशीनीकरण की वेदी पर जनता की कुर्बानी हमें मंजूर नहीं

यह लेख नियोगी ने सन् 1989 में दल्ली खदान समूह के मशीनीकरण के दूसरे चरण के खिलाफ हुए संघर्ष के दौरान लिखा था (देखिये खंड आठ में ' मशीनीकरण के खिलाफ एक लड़ाई ' शीर्षक का लेख, पृ. 401-409)। इस लेख को नियोगी ने छमुमो के अध्यक्ष का. जनकलाल ठाकुर एवं छत्तीसगढ़ प्रगतिशील युवा संघ के साथी अनूप सिंह के साथ मिलकर ' सामाजिक चिंतन व अध्ययन ' के लिए प्रसारित किया था।

भिलाई इस्पात संयंत्र का मैनेजमेंट दल्ली-राजहरा की लोहा खदानों में पूर्ण मशीनीकरण के लिए जोर लगा रहा है, जिससे गत 20 वर्षों से कार्यरत मजदूरों में, राजहरा नगरी में एवं आसपास के क्षेत्र के समस्त आदिवासियों में अनिश्चितता व आशंका की लहर दौड़ गयी है। वे आतंकित हैं कि इससे –

1. निकट भविष्य में 7,000 मजदूरों की छँटनी होगी।
2. दल्ली राजहरा की नगरी उजड़ जायेगी।

राजहरा की जनसंख्या एवं आदिवासी क्षेत्रों के व्यापक हिस्से की आर्थिक गतिविधियाँ इन मजदूरों पर निर्भर हैं। इसलिए मैनेजमेंट की मशीनीकरण की नीति कामयाब होने से राजहरा की वर्तमान जनसंख्या 1 लाख 20 हजार से घटकर सिर्फ 20 हजार रह जायेगी व क्षेत्र का

डी. सी. को 482.10 करोड़ रुपये का शुद्ध लाभ हुआ, जबकि मशीनीकरण के बाद एन. एम. डी. सी. लगातार घाटे में जा रहा है। कोयला खदानों में सन् 1975-76 तक मशीनीकरण ज्यादा नहीं हुआ था, हम 10 करोड़ टन कोयले का उत्पादन कर रहे थे, क्वालिटी भी अच्छी थी और कीमत भी कम। मशीनीकरण के बाद आलम यह है कि कोयले की कीमत ताबड़-तोड़ बढ़ी है, 70 हजार मजदूरों की छँटनी हुई और क्वालिटी भी गिरी है। अपना भिलाई भी आज आयातित कोयले पर निर्भर है। 'आधुनिकीकरण' के नाम पर कोयला खदानों में 4,500 करोड़ रुपये से अधिक खर्चा हुआ। क्यों ? क्यों मशीनीकरण का नारा इतनी जोरों से बुलंद किया जा रहा है ? क्या 2-4 बीके कम्पनियों को करोड़ों का मुनाफा देने के लिए ?

अन्य देशों में, इस्पात उद्योग में उत्पादन-लागत का 35 प्रतिशत मजदूरों में देय होता है, जबकि हमारे देश में मजदूरी का हिस्सा मात्र 8 प्रतिशत है। दल्ली राजहरा में मजदूर संख्या में कटौती और भी हास्यास्पद है जहाँ कि अयस्क की गुणवत्ता सर्वोत्तम है और उत्पादन लागत भी अपेक्षाकृत कम।

अभी तक सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा मशीनीकरण की वेदी पर हजारों मजदूरों की बलि दी गयी है जिसमें —

1. बैलाडीला में 10 हजार मजदूरों की छँटनी;
2. नन्दिनी की मैन्युअल खदान बंद की जहाँ 1,200 मजदूर कार्यरत थे;
3. हिर्री डोलोमाइट खदान में 2,700 मजदूरों की जगह आज सिर्फ 800 मजदूर कार्यरत हैं;
4. बी. एस. पी. की कटनी की 'फायर क्ले' खदान बंद कर दी गयी है जिसमें 800 मजदूर कार्यरत थे;
5. बी. एस. पी. की आरीडोंगरी खदान में मशीनीकरण के कारण 500 मजदूरों की नौकरी समाप्त हुई;
6. राजहरा में लोडिंग-साइडिंग का काम बंद होने से 1,000 मजदूरों के काम की जगह समाप्त हुई;
7. राउरकेला स्टील प्लांट की बाराद्वार खदान बंद होने के कारण 2,200 मजदूरों की नौकरी समाप्त हुई; एवं
8. भिलाई इस्पात संयंत्र में 10,000 मजदूरों की रिक्त जगह की पूर्ति नहीं की गयी।

इस प्रकार विगत 5 वर्षों में 27,600 मजदूरों की जगह खत्म हुई। अगर इन स्थलों में नयी भर्ती से इन स्थलों की पूर्ति की जाती तो छत्तीसगढ़ के लाखों लोगों का पलायन रोका जा सकता था।

गांधीजी ने इन बातों को समझकर, बुनकर लोगों में गहरी दिलचस्पी ली थी जिसके कारण आज भी हथकरघा या हैंडलूम उद्योग सरकारी संरक्षण में टिका हुआ है। आज खदान उद्योग में भी इसी प्रकार हस्तक्षेप की आवश्यकता है क्योंकि परम्परागत खदान आज भी कम उत्पादन लागत में उत्कृष्ट गुणवत्ता का अयस्क उत्पादित करती है। अगर यह कदम नहीं उठाया गया तो खदानों में मशीनीकरण की नीति एक देशद्रोही नीति सिद्ध होगी। ☐

(सी. एम. एस. एस. के सौजन्य से।)

कल्पना कीजिये ! जब इन साठ करोड़ लोगों के पास तेल, कपड़ा, कम्बल, घर, रेडियो, साइकिल, चीनी, साबुन इत्यादि खरीदने के लिए पैसा होगा, तब क्या इससे बाजार का विस्फोटक फैलाव नहीं होगा, खासकर कृषि-आधारित बाजार का ?

कल्पना कीजिये कि ये साठ करोड़ लोग अपने अस्तित्व की चिंता से मुक्त होकर ' नव-निर्माण ' और ' ज्यादा उत्पादन ' में जुटे हुए हों, तो क्या उत्पादक शक्तियों का विस्फोटक विकास नहीं होगा ?

हमारा सुझाव है कि आम भारतीय की क्रय-शक्ति को बढ़ाना कृषि और सम्बंधित नीतियों के निरूपण का केंद्र बिंदु बन जाना चाहिए।

2. धान उपजाने वाले इलाकों के लिए नीति

क) हरित क्रांति : एक अधूरा सपना – वैज्ञानिक व तकनीकी विकास के क्षेत्र में भारत ने औपनिवेशिक काल से लेकर अब तक काफी लम्बा सफर तय किया है। लेकिन इतनी प्रगति के बावजूद हम कुल कृषि-योग्य भूमि के महज 10-12 प्रतिशत में सिंचाई मुहय्या करा पाये हैं, जिसके सिर्फ आधे भाग में ही धान पैदा किया जाता है, जो अधिकांश भारतीय जनता का मुख्य भोजन है। इस प्रकार धान की पैदावार वाली भूमि का महज 5-6 प्रतिशत हिस्सा ही हरित क्रांति से लाभान्वित हुआ है।

हरित क्रांति, कृषि विकास का मॉडल है और विदर्भ, छत्तीसगढ़, झारखंड, तेलंगाना और उड़ीसा के पश्चिमी भागों में इसकी तर्ज पर सिंचाई की सुविधाओं की माँग बड़े जोर-शोर से की जाती रही है। लेकिन हमारे वर्तमान संसाधनों को देखते हुए इन इलाकों में पंजाब व हरियाणा जैसी सिंचाई सुविधाएँ उपलब्ध कराना सम्भव नहीं है। इस तरह देश के इन विशाल अंचलों के लिए ' हरित क्रांति ' एक अधूरे सपने की तरह है।

ख) डॉ. रिछारिया का चिंतन रास्ता दिखाता है – प्रख्यात कृषि वैज्ञानिक डॉ. रिछारिया ने यह स्थापित किया है कि भारत के पास चावल की 2,500 से भी ज्यादा किस्मों का विपुल भंडार है जिनमें से कुछ असिंचित इलाकों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं।

उनके शोध को राष्ट्रीय कृषि नीति में शामिल करके हम उपर्युक्त असिंचित धान-उत्पादक इलाकों की समस्या का तत्काल समाधान कर सकते हैं। इससे उत्पादकता के साथ-साथ क्रय-शक्ति में भी बढ़ोतरी होगी।

3. वन-क्षेत्रों एवं आदिवासी अंचलों के लिए कृषि नीति

क) कृषि – वन-क्षेत्रों में, जहाँ ज्यादातर आदिवासी आबादी रहती है, आम तौर पर मोटे अनाज की पैदावार होती है, मसलन, कोदो, कुटकी और ज्वार। लेकिन जहाँ आदिवासी रहते हैं वहाँ की भूमि बहुत उपजाऊ है और मक्का, सरसों और अन्य तिलहन जैसी नयी फसलों की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। ये नकदी फसलों का काम करेंगी और इस तरह आदिवासियों की क्रय-शक्ति बढ़ सकेगी। तौल में हेराफेरी करके और सरकार द्वारा निर्धारित

कम्पनियों और टाटा, बिड़ला, अम्बानी जैसे बड़े घरानों का एकाधिपत्य है।

एक प्रारम्भिक अध्ययन के मुताबिक छत्तीसगढ़ से बाहर को होने वाले 500 करोड़ रुपये के सालाना बहाव (प्रति ब्लाक औसतन 3 या 4 करोड़ रुपये के हिसाब से) को रोका जा सकता है। अगर यह पूँजी बाहर न जाये तो इलाके की उत्पादन शक्ति में जबर्दस्त वृद्धि होगी।

ग) सार्वजनिक वितरण प्रणाली – 'जय जवान, जय किसान' नारे के तहत सभी ग्रामीण / कृषि सैनिकों, पुरुषों व महिलाओं, को मोटे कपड़े के दो जोड़ी वस्त्र हर साल मुफ्त या न्यूनतम दर पर दिये जाने चाहिए। पर्याप्त मात्रा में चावल 2 रुपये प्रति किलो की दर से उपलब्ध कराया जाना चाहिए। इस मकसद की पूर्ति के लिए एक नयी सार्वजनिक वितरण प्रणाली विकसित की जाये, जो पिछले पैराग्राफ में सुझायी गयी ब्लाक-स्तरीय उत्पादन इकाइयों के साथ सम्बद्ध हो।

घ) आबादी का गैर-खेतिहर क्षेत्रों की ओर विचलन – आपके पर्चे में कृषि-आश्रित आबादी के अनुपात को 70 से 50 फीसदी तक घटाने के लक्ष्य को रेखांकित किया गया है। लेकिन छत्तीसगढ़ में हमें उल्टी प्रक्रिया देखने को मिलती है।

इस इलाके में कोयला, लोहा, चूना-पत्थर, डोलोमाइट, यूरेनियम आदि खनिजों के विशाल भंडार हैं। साथ ही, एक विकसित मैन्युअल (मानवीकृत) खदान उद्योग भी है। लेकिन हमारे 'दूरदर्शी' नेता भारी लागत के मशीनीकरण से इसे बरबाद कर रहे हैं और पिछले 15 सालों में 27 हजार मजदूरों को खदानों से खेती की ओर लौटने के लिए मजबूर होना पड़ा है। इनमें बैलाडीला लौह अयस्क खदानों के 10 हजार मजदूर, राजहरा लौह अयस्क खदानों के 5 हजार मजदूर, चिरिमिरी के 10 हजार कोयला खनिक और हिर्री डोलोमाइट खदान के 1 हजार मजदूर शामिल हैं।

राष्ट्रीय कृषि नीति के तहत संकीर्ण निहित स्वार्थों के ऐसे 'नीति-विरोधी' कदमों पर रोक लगायी जानी चाहिए और गैर-खेतिहर क्षेत्रों की ओर बढ़ने के लक्ष्य को हासिल करने के लिए छत्तीसगढ़ में मैन्युअल खदानों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इसके पक्ष में एक दूसरी बात यह है कि इसमें कम पूँजी निवेश की जरूरत होती है।

5. नव-औपनिवेशिकता के खिलाफ लड़ाई का समय

हम मानते हैं कि आपका काम काफी कठिन है और संकीर्ण निहित स्वार्थ और 'बड़े' बहुराष्ट्रीय स्वार्थ ऐसे प्रयास में बाधा डालने की हर सम्भव कोशिश करेंगे। आपने सही मौके पर सटीक ढंग से याद किया है कि 'महात्मा गांधी अपनी आर्थिक मान्यताओं के लिए अपने राजनैतिक उत्तराधिकारियों तक से लड़ने को संकल्पशील थे' और गांधी जी के 'स्वतंत्रता,

भारत में ' स्टूडेंट्स फ़ेडरेशन ' नामक संस्था बनाकर छात्र आंदोलन को अंग्रेज साम्राज्यवाद-विरोधी-आंदोलन के साथ जोड़कर एक नया जोश पैदा किया था।

आज यह निश्चित है कि, कांग्रेसी कुशासन देश को प्रगति का रास्ता दिखाने में असफल रहा है। दिशाहीनता सारे देश में छा गयी है। देशवासियों के सामने भविष्य अनिश्चित है। दिशाहीनता भ्रष्टाचार की जननी है, इसलिए न्यायालय से लेकर गाँव के मुखिया तक सर्वत्र भ्रष्टाचार का बोलबाला है। सवाल साफ है कि सही दिशा कौन देगा ?

कौन हिम्मत के साथ नाव को बहाव के खिलाफ चलाकर सही लक्ष्य पर पहुँचायेगा ? छात्र एवं नवयुवकों को इसका जवाब ढूँढ़ना होगा। पहल करनी होगी और रास्ते की कठिनाइयों को झेलते हुए दीर्घकालीन तथा अल्पकालीन कार्यक्रमों के जरिये अपनी मंजिल तय करनी होगी। यह जनवादी पद्धति से, व्यापक किसान-मजदूरों के साथ एकात्म होकर ही सम्भव हो सकता है।

जापान एक छोटा सा देश है। जापान की प्राकृतिक सम्पदा छत्तीसगढ़ की तुलना में नहीं के बराबर है। फिर भी जापान ने सिर्फ एशियाई देशों में ही नहीं, बल्कि सारी दुनिया में अपनी प्रगति का झंडा बुलंद किया। 80 करोड़ का देश भारत आज किसी भी मायने में जापान के मुकाबले में खड़ा नहीं हो सकता है। भारत में जहाँ 40 करोड़ नवयुवक अपने अनिश्चित जीवन से डगमगा रहे हैं, वहाँ कैमरून जैसा छोटा-सा देश फुटबाल में बाजी मार सकता है। कितना दुर्भाग्य है हमारा !

जब दो वियतनाम एक हो रहे हैं, दो कोरिया एक हो जाने की तमन्ना लेकर आगे बढ़ रहे हैं, बर्लिन की दीवार टूटकर दो जर्मनी को एक बना रही है, उस समय भारत में वर्तमान राजनैतिक अस्थिरता के माहौल में मौका पाकर खौफ की राजनीति करने वालों ने हिन्दू और मुसलमान कहकर, हरिजन और सवर्ण कहकर, गरीब-से-गरीब को लड़ाने की साजिश शुरू की है। इसे आज हमें गम्भीरता से लेना होगा।

सारे भारत में विदर्भ, छत्तीसगढ़, झारखंड, पश्चिम उड़ीसा एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश सबसे पिछड़े हुए इलाके हैं। इन इलाकों के नेतागण वहाँ की जनता को दब्बू बनाकर रखने में जुटे हुए हैं। इन क्षेत्रों के अधिकांश नेता, जो कुकर्मों में लगे हुए हैं, किसी पार्टी विशेष के नहीं हैं, ये सभी पार्टियों के उच्च पदों पर आसीन हैं। ये सब ' चोर-चोर मौसेरे भाई ' हैं।

हम छत्तीसगढ़ के छात्र एवं नवयुवक कम-से-कम अपने छत्तीसगढ़ के विनाश के खिलाफ आवाज उठा सकते हैं। लोहा-पत्थर, चूना-पत्थर, यूरेनियम, कोरंडम, टिन, क्वार्ट्‌जाइट, फ्लोराइट, डोलोमाइट, ताँबे और कोयले के विशाल भंडार के बावजूद छत्तीसगढ़ के युवक बेरोजगारी की दासता को क्यों मंजूर करेंगे ? महानदी की अपार जलराशि, अरपा, इंद्रावती, शिवनाथ क्या छत्तीसगढ़ की कृषि-योग्य भूमि को सिंचित करने के लिए काफी नहीं हैं ? फिर भी प्रति वर्ष छत्तीसगढ़ के गाँवों के नवयुवक अपनी जन्मभूमि छोड़कर कब तक परदेश पलायन करते रहेंगे ? गाँव से नवयुवक भाग कर शहर की ओर या नौकरी के लालच में दलालों के चक्कर में फँसकर कब तक अपने को लुटाते रहेंगे ? शहर के तथाकथित टेक्नोक्रेट, ब्यूरोक्रेट और अनैतिक, गैरकानूनी धंधा करने वाले नवधनाढ्य वर्ग के पुत्र अपने धन और पहुँच का फायदा उठाकर पूरे समाज को कलुषित कर रहे हैं। छात्र जगत भी इनकी हरकतों के कारण अपराधीकरण के माहौल से मुक्त नहीं हो पाया है। हर राजनैतिक व्यक्ति के कब्जे में तथाकथित कुछ छात्र नेता रहते हैं, जो प्रशासन की नजर के सामने ही हत्या, बलात्कार जैसे घिनौने कार्यों

शिक्षा नीति एवं छात्र वर्ग की भूमिका

नियोगी ने यह लेख छत्तीसगढ़ स्टूडेंट्स फेडरेशन द्वारा अगस्त 1990 में प्रकाशित पुस्तिका ' सुबह की तलाश ' के लिए लिखा था। — स.

भारत में प्रचलित शिक्षा नीति हमेशा से चर्चित रही है। विभिन्न छात्र संगठनों, राजनेताओं, शिक्षाविदों एवं बुद्धिजीवियों ने इस शिक्षा नीति एवं व्यवस्था पर व्यापक टीका-टिप्पणी की है। प्रत्यक्ष रूप से राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनी, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान परिषद्, प्रांतीय शिक्षा अनुसंधान परिषद्, डी. आई. ई. टी.[1], दून स्कूल की शैली के नवोदय विद्यालय भी बनाये जाते रहे हैं। पर शिक्षा के मूलभूत ढाँचे में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के 43 वर्षों बाद भी हम यह सोचने को मजबूर हैं कि कदाचित् हमारी शिक्षा नीति की कमजोरी ही भारत में अनिश्चितता के इस वातावरण को बनाने के लिए जिम्मेदार है।

मुट्ठी भर गोरे शोषकों की मानसिकता से ओत-प्रोत, उनकी प्रशासनिक क्षमता को बढ़ाने के उद्देश्य से प्रेरित, शासक एवं शासितों के मध्य सेतु का कार्य करने के लिए सन् 1813 में लार्ड मेकाले ने बाबुओं (क्लर्क) का एक वर्ग बनाने के उद्देश्य से आज की शिक्षा नीति को बनाया था। पुरानी जंग खायी मशीन पर रंग-रोगन लगाने की तरह हमारी शिक्षा नीति ने भी कई जामे बदले, पर इसका हुलिया न बदला। अगर ऐसा न होता तो —

1. वर्तमान शोषण-ग्रस्त समाज अब तक अपरिवर्तित न रहता;
2. हर शिक्षित व्यक्ति वर्तमान व्यवस्था की काल-सापेक्ष प्रासंगिकता छोड़कर इस व्यवस्था की प्रशंसा का तोता-रटंत न रटता;
3. शिक्षितों का सुविधाभोगी वर्ग वृहत्तर समाज से स्वयं को काटकर अल्पसंख्यक वर्ग की तरह व्यवहार न करता;
4. उत्पादक कार्यों से कटकर स्वयं शिक्षित वर्ग आम जनता से पृथक न होता;
5. व्यवस्था-संचालन के सुविधार्थ बनाया गया दब्बू वर्ग उपनिवेश की समाप्ति के 43 वर्ष बाद भी औपनिवेशिक मानसिकता से ग्रस्त न होता; एवं
6. देश की जन-कल्याणमूलक भूमिका के विज्ञापन पर किये जाने वाले व्यय से भी कम खर्च शिक्षा हेतु न किया जाता।

वर्तमान शिक्षा नीति पूर्व पददलित देश की आवश्यकता एवं जनता की आकांक्षा की पूर्ति कर पाने में अक्षम है। इसका जीवंत उदाहरण देखिये : 150 वर्षों में विश्वविद्यालयों की संख्या में 150 गुनी वृद्धि भले ही हुई हो, पर इतने वर्षों तक जीव विज्ञान में सैकड़ों वैज्ञानिक (?) बनाकर भी हमारा देश एक छोटे से जीव मच्छर को अपनी गिरफ्त में न ले सका। मलेरिया, एनसेफेलाइटिस आदि प्राणघातक रोगों के मूल में यही मच्छर है। कई जटिल बीमारियों के लक्षण,

---

[1] राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986, के तहत शिक्षक प्रशिक्षण, शैक्षिक नवाचार आदि कार्यों हेतु नव-प्रवर्तित 'जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान' (डिस्ट्रिक्ट इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन एंड ट्रेनिंग)।

कारण एवं उपचार जानने वाले चिकित्सा विद्यार्थी को आमतौर पर होने वाली उल्टी-टट्टी की बीमारी में जीवन रक्षा करने वाले नमक-शक्कर के घोल की जानकारी नहीं दी जाती। तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में सर्वाधिक प्रतिस्पर्धा सिविल इंजीनियरिंग में दाखिले के लिए होती है, ताकि पी. डब्ल्यू. डी. या सिंचाई विभाग में बह रही 'विकास की गंगा' में डुबकी लगाने का मौका मिले। सच और झूठ, आवश्यक और अनावश्यक, न्याय और अन्याय में फर्क कर सकने की क्षमता को ही इस शिक्षा व्यवस्था ने कुंठित कर दिया है। यही कारण है कि एक बलात्कारी, डकैत या कार्यकर्ता, तीनों के प्रति कानून व्यवस्था समभाव रखती है – कार्यकर्ता को वकील भले न मिले, पर बलात्कारियों, डकैतों, अपराधियों को अच्छे वकीलों की सेवाएँ सहज उपलब्ध होती हैं।

ग्रामीण एवं शहरी नागरिक सुविधाओं के बीच बढ़ती हुई खाई हमारी शिक्षा व्यवस्था पर भी लागू होती है। एक ओर शहरी 'इंडिया' के स्कूलों में प्राप्त आधुनिक सुविधाओं से सज्जित प्रयोगशालाएँ एवं उच्च-सम्मान-प्राप्त शिक्षक तथा महाविद्यालयों में विदेशों से आये अतिथि प्राध्यापकों की भीड़ है (जैसे कि दिल्ली के जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में), हर एक छात्र पर हजारों रुपये प्रति माह व्यय होता है। वहीं ग्रामीण 'भारत' में गरीब बच्चों की 5 कक्षाओं के लिए 2 कमरे हैं तथा कई बार मात्र एक शिक्षक उपलब्ध है। ऐसी हालत में शहरी छात्रों के मुकाबले ग्रामीण अंचल के छात्रों का किसी भी प्रतियोगिता में टिकना लगभग असम्भव हो जाता है। इस दौड़ में मध्यमवर्गीय परिवारों के छात्र भी मेधावी होने के बावजूद आर्थिक सीमाओं के कारण सफल नहीं हो पाते। फलतः इस शिक्षा पद्धति से निराशों की जमात ही पैदा होती है। अति अल्प संख्या में लोग अपने मन के अनुकूल काम पर जा पाते हैं। शारीरिक श्रम एवं उपयोगिता की ओर से विमुख इस शिक्षा पद्धति के कारण शिक्षित बेकार (बुद्धिजीवी) होकर एक सामाजिक बोझ बन जाते हैं। समाज के लिए अनुपयोगी, स्वयं को बेकार मानने वालों की यह फौज चंद असामाजिक तत्वों तथा स्वार्थी राजनेताओं के चंगुल में पड़कर अराजकता के वातावरण में उग्रता प्रदान करती है।

छत्तीसगढ़ के संदर्भ में भी उपरोक्त तथ्य समान रूप से लागू होते हैं, बल्कि छत्तीसगढ़ की हालत तो अन्य क्षेत्रों से बदतर है, क्योंकि यहाँ शहर और गाँव के बीच फर्क की खाई और भी अधिक गहरी है। गाँवों में शोषण कर रहे लोग भी स्वयं शहरी शोषण का शिकार हैं, क्योंकि शहरों की शिक्षा, व्यापार और राजनीति पर स्वार्थी तत्व ही हावी हैं।

आज जबकि अन्य प्रांतों में छात्र राजनीति में विकास की मुख्य धारा से जुड़ने की जी-तोड़ कोशिश जारी है, वहाँ छत्तीसगढ़ में आज भी सचेत छात्र संगठन न होने के कारण छात्रों की राजनीति का अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। इन कठपुतले छात्र नेताओं के नियंत्रण की बागडोर कहीं और से नियंत्रित होती है। यही कारण है कि इस पर नियंत्रण की प्रतिस्पर्धा में जो तामझाम और खर्च होता है, वह विधानसभा के चुनाव से किसी तरह कम नहीं है।

हमें भी दुनिया के पददलितों, छात्रों के कदम-से-कदम मिलाकर चलना होगा। हमें भी भारत के अगुवा छात्र वर्ग के कंधे-से-कंधा मिलाकर चलना होगा। इतिहास के पन्नों से हमें यह शिक्षा मिलती है कि विद्यार्थी स्वयं पुस्तकों एवं पुस्तकालयों से शिक्षित होता है एवं किसानों, मजदूरों तक अपनी शिक्षा तथा [illegible] ज्ञान का प्रकाश पहुँचाता है। जब देश की जनता

में लिप्त रहते हैं। सफेद कुर्ता उन्हें यह अधिकार दिला देता है कि वे बेरोकटोक अपनी आवारागर्दी चला सकें। इनमें से दो-चार हमारे प्रदेश की राजनैतिक बागडोर भी सँभाल लेते हैं, कई तो मंत्री भी बन जाते हैं।

इन परिस्थितियों में छत्तीसगढ़ के छात्र आंदोलन में एक बुनियादी परिवर्तन की आवश्यकता है। छात्र राजनीति की बागडोर किसी भी हालत में नवधनाढ्य वर्ग के हाथ में नहीं जानी चाहिए। मूल्यों पर आधारित वैज्ञानिक सिद्धांत से लैस होकर, नैतिकता का मान अनवरत बढ़ाते हुए , व्यापक जन समुदाय की आशा-आकाँक्षाओं को मूर्त रूप देने के लिए छात्र एवं युवा शक्ति को तत्पर रहना होगा।

बहुत से लोग अन्याय करना पसंद नहीं करते हैं। अनैतिक कार्य करने से हिचकिचाते हैं। अपराध के रास्ते से दूर रहते हैं। यह अच्छी प्रवृत्ति है। किंतु बहुत से लोग अन्याय सहने के आदी रहते हैं। अन्याय करने वालों के खिलाफ आवाज नहीं उठाते हैं। 'कौन झमेले में पड़ेगा ', कहकर अन्यायकारी शक्तियों को बेरोकटोक अनैतिक एवं अपराध-मूलक कार्य चलाने का मौका देते हैं। यह अत्यंत खराब बात है। **अन्याय करना एवं अन्याय को सहना दोनों ही गलत प्रवृत्तियाँ हैं।** छात्र एवं नवयुवक वर्ग को अन्याय सहने की प्रवृत्ति से घृणा करनी चाहिए। अन्याय करने वालों के खिलाफ आवाज उठानी चाहिए।

छत्तीसगढ़ की वर्तमान पीढ़ी के छात्र एवं नवयुवकों से छत्तीसगढ़ की जनता बहुत कुछ उम्मीद करती है। छत्तीसगढ़ की जनता आज व्यवस्था में बुनियादी परिवर्तन की चाह लेकर छटपटा रही है। एक ' सुजलाम् सुफलाम् . . . . . सस्य श्यामलाम् ' छत्तीसगढ़ का सपना हम सबके दिल में है। ' सर्वे भवन्तु सुखिना, सर्वे भवन्तु निरामयाः ' की समतावादी विचारधारा के इतिहास को वैज्ञानिक समाजवादी सिद्धांत से जोड़कर नये छत्तीसगढ़ का निर्माण करना होगा। छात्र एवं नवयुवक वर्ग लहरों की तरह आगे बढ़ेंगे। इंद्रावती, ईब, अरपा, महानदी, शिवनाथ मिलकर एक अभूतपूर्व कल्लोच्छ्वास और एक महाकल्लोल की सृष्टि करेंगी। फिर वनांचल से लेकर शहरांचल तक नवयुवक अर्जुन की तरह गांडीव पकड़कर छत्तीसगढ़ के शोषकों के किले को ध्वस्त करके धरती में मिला देंगे। नयी पीढ़ी से यही उम्मीद है।

❑

(छत्तीसगढ़ स्टूडेंट्स फ़ेडरेशन के सौजन्य से।)

स्वदेशी और स्वावलम्बन ' के जनप्रिय नारे के तहत राष्ट्रीय उत्थान के लिए नव-औपनिवेशिक तौर-तरीकों के खिलाफ लड़ाई का बिगुल बजाया है। हम छत्तीसगढ़ की जनता की ओर से आपके साथ हैं और हमें पूरा विश्वास है कि तमाम देशभक्त लोग इस महान दायित्व को उठाने के लिए आगे आयेंगे।

❑

(मूल अंग्रेजी से ध्रुव नारायण द्वारा अनूदित ; छमुमो के सौजन्य से।)

छात्र राजनीति में एक नयी रोशनी चाहिए

नियोगी ने यह लेख छत्तीसगढ़ स्टूडेंट्स फ़ेडरेशन द्वारा अगस्त 1990 में प्रकाशित पुस्तिका ' सुबह की तलाश ' के लिए लिखा था। — स.

दुनिया का इतिहास हमें यह शिक्षा देता है कि देश के नायक जब दिशाहीनता से ग्रसित होते हैं, तब एक अराजकता की स्थिति पनपती है। आज देश में बेरोजगारी से हाहाकार मचा हुआ है, महँगाई मध्यमवर्गीय परिवारों का गला घोंटने पर उतारू है। इस समय देश की बागडोर एक जागरूक एवं सृजनशील समूह की संवेदनशील पहल से सँभाली जानी चाहिए।

छात्र एवं नवयुवक ही आज ऐसा समूह है, जिसे दृढ़ इच्छा-शक्ति के साथ देश के परिवर्तनवादी आंदोलन को नेतृत्व देना होगा। नवयुवकों की नस-नस में सात समुंदर की लहरों जैसे खून तरंगित है। ये ऐसी कौम है जो जात-पात, भेद-भाव, ऊँच-नीच के फर्क को तोड़कर समानता लाने की सद्भावना से भरपूर है। इसीलिए तो दुनिया के सारे महापुरुष अपने छात्र जीवन से ही ' वसुधैव कुटुम्बकम् ' के सिद्धांत से ओत-प्रोत होकर सामाजिक कार्यों में जुटे रहे। छात्र एवं नवयुवकों ने सन् 1917 की ऐतिहासिक अक्तूबर क्रांति को विजय की मंजिल तक पहुँचाने के लिए सारी शक्ति लगा दी थी। चीन, यूरोप एवं लैटिन अमेरिका के देशों में भी, अतीत एवं वर्तमान में तमाम जनवादी आंदोलनों में ये ही जान फूँकते रहे हैं। आज के समय में दुनिया के लोकप्रिय नेता नेल्सन मंडेला की पुत्री, एक खिलता हुआ फूल, जिंजी मंडेला दक्षिण अफ्रीका के नवयुवक-नवयुवतियों के दिलों में देशप्रेम की प्रेरणा भरने में अगुवाई कर रही हैं।

भारत की आजादी का इतिहास भी यह साक्ष्य देता है कि 19 वर्ष का बालक शहीद खुदीराम बोस, 22 वर्ष का नवयुवक भगत सिंह और सैकड़ों क्रांतिकारियों ने अपना तप्त खून गुलामी की जंजीरें तोड़ने में अर्पित किया था। नेताजी सुभाषचंद्र बोस, जवाहरलाल नेहरू ने

कीमत से कम कीमत देकर आदिवासियों को धोखा देने वाले बिचौलियों को इन इलाकों से निर्वासित कर देना चाहिए। इसके बदले राष्ट्रीय कृषि नीति को एक विकेंद्रित अधो-संरचना (इन्फ्रास्ट्रक्चर) का निर्माण करना चाहिए।

ख) वनोपज — वनवासियों की आर्थिक गतिविधि कृषि उपज एवं वनोपज के खाने-पाने पर आधारित एक विकसित व्यवस्था है। लेकिन आज इन विशाल इलाकों की परम्परागत आर्थिक गतिविधि बिचौलियों के शोषण का शिकार बन चुकी है और हमारे आर्थिक नेतृत्व की उपेक्षा की वजह से बदहाल है।

राष्ट्रीय कृषि नीति के तहत इन वनोपजों को कृषि उपज का दर्जा दिया जाना चाहिए और इस बात की व्यवस्था की जानी चाहिए कि इन उत्पादों पर स्थानीय आबादी का स्वामित्व हो और उसे लेन-देन की बेहतर शर्तें उपलब्ध हों। इसे ' संग्रहण गतिविधि ' से ' उत्पादन गतिविधि ' में रूपांतरित किया जाना चाहिए।

4. छत्तीसगढ़ के लिए मॉडल

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा और उसके सहयोगी स्वयंसेवी संगठनों का नजरिया आपके पर्चे में दिये गये सुझावों के काफी समान है। इस मौके पर हम आपको 14 साल के अपने अध्ययन व काम के अनुभवों से परिचित कराना चाहेंगे।

क) जल प्रबंध — छत्तीसगढ़ के 14,000 गाँवों में उपलब्ध 2,000 उपयुक्त स्थानों पर छोटे-छोटे बाँध और छोटी-छोटी उद्वहन (लिफ्ट) सिंचाई परियोजनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए। ऐसी परियोजनाओं के जरिये 100 करोड़ रुपये की लागत से 6 लाख एकड़ कृषि-योग्य भूमि में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध करायी जा सकती है। 2 से 4 साल की छोटी अवधि में ही तैयार हो जाने के कारण ये परियोजनाएँ आर्थिक रूप से काफी कारगर बन जाती हैं। इस बात का अनुभव के तहत स्वयंसेवी संगठनों द्वारा निर्मित ' कुसुमकसा लघु सिंचाई परियोजना ' व कुछ अन्य परियोजनाओं की सफलता ने पर्याप्त सबूत दे दिया है।

ख) ग्रामीण रोजगार — ग्रामीण क्षेत्र से पूँजी को बाहर जाने से रोकने और साथ-साथ ग्रामीण आबादी के लिए रोजगार पैदा करने के लिए ब्लाक-स्तर पर कपड़ा, साबुन, लोहे के औजार, जूते आदि उपभोक्ता सामग्री की उत्पादन इकाइयाँ स्थापित की जानी चाहिए। उन्नत किस्म की परम्परागत दक्षताओं का इस्तेमाल किया जाना चाहिए।

परम्परागत दस्तकारों की निपुणताओं को बढ़ावा देकर न सिर्फ उपभोक्ता सामग्रियों की स्थानीय जरूरत को पूरा किया जा सकता है, बल्कि प्रशिक्षण व विविधीकरण (डायवर्सीफिकेशन) के बाद शहरी क्षेत्रों और विदेशों तक से बड़े पैमाने पर वित्त हासिल किया जा सकेगा। इन गतिविधियों में भाग लेने से स्थानीय व्यापारियों को भी फायदा होगा। आज उपभोक्ता सामग्री के उत्पादन क्षेत्र पर हिन्दुस्तान लीवर व बाटा जैसी बहुराष्ट्रीय

राष्ट्रीय कृषि नीति के दिशाबोध पर्चे पर प्रतिक्रिया

राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने सुप्रसिद्ध किसान नेता श्री शरद जोशी की अध्यक्षता में गठित 'कृषि की स्थायी परामर्शदात्री समिति' को राष्ट्रीय कृषि नीति तैयार करने का काम सौंपा। जुलाई 1990 में इस समिति की ओर से नियोगी को कृषि नीति-सम्बंधी एक दिशाबोध पर्चा टिप्पणियों हेतु भेजा गया। समिति के संलग्न पत्र में कहा गया था, "राष्ट्रीय कृषि नीति को देश की पूरी सामाजिक-आर्थिक संरचना के संदर्भ में कृषि की भूमिका को परिभाषित करना चाहिए एवं अपने दायरे को खाद्य सामग्री की आपूर्ति अथवा मात्र उत्पादन या उत्पादकता बढ़ाने के दायरे में सीमित नहीं कर लेना चाहिए।" आगे इसी पत्र में समिति ने कहा, "कृषि के मामले में अब तक जो कुछ भी हुआ है उसके बारे में उनके (समिति के) नजरिये को शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन, प्रशासन, प्रतिरक्षा, उद्योगों के वितरण, कानून और राजनैतिक संस्कृति के बारे में आजादी के उपरांत बने विकास के मॉडल को जोड़कर व्यापक बनाया जा सकता है, ताकि शहरी क्षेत्रों के प्रति पक्षपाती दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित हो सके।" नियोगी ने समिति के दिशाबोध पर्चे पर उसी माह विस्तृत टिप्पणी भेजी। इस पत्रनुमा टिप्पणी को हम निबंधों के इस खंड में शामिल कर रहे हैं। इसे इसी खंड के 'वैकल्पिक औद्योगिक नीति' शीर्षक के लेख (पृ. 175-181) से जोड़कर देखना उपयोगी होगा। — स.

राष्ट्र निर्माण के लिए तमाम देशभक्त व जनवादी ताकतों के आपस में जुड़ने का यह उम्दा मौका है। एक ताजा और राष्ट्रवादी दृष्टिकोण अपनाने के लिए हमारी बधाई जरूर स्वीकारें। पर्चे में साधारणतः भारत के कृषि क्षेत्र की वास्तविकता और भूमिका को काफी सटीक तरीके से पेश किया गया है। पर हम इस चर्चा में योगदान देने की दृष्टि से आपका ध्यान उन बुनियादी बातों की ओर दिलाना चाहेंगे जो पूर्णतः छूट गयी हैं एवं कुछ अन्य बातों को भी रेखांकित करना चाहेंगे। ये बिंदु इस प्रकार हैं —

1. आम भारतीय की क्रय-शक्ति को बढ़ाने के लिए शंखनाद की जरूरत है

साठ करोड़ नंगे-भूखे लोग, जिनकी क्रय-शक्ति शून्य है, हमारे देश की कठोर वास्तविकता है। यदि वे पिछड़े रह जायेंगे तो देश पिछड़ेगा, और यदि वे आगे बढ़ेंगे तो देश आगे बढ़ेगा।

लेकिन दुर्भाग्य से हमारे देश के नेतृत्व ने कभी भी इस नग्न सच्चाई से आँखें मिलाने तक का साहस नहीं किया है और समाधान के लिए अपनी खुर्दबीनें विश्व बैंक मुख्यालय के कम्प्यूटर-बोर्डों पर टिकाये रखी हैं।

आर्थिक-सामाजिक ढाँचा डाँवाडोल हो जायेगा।

अपार वन सम्पदा, खनिज सम्पदा एवं समृद्ध उपजाऊ भूमि होने के बावजूद छत्तीसगढ़ एक पिछड़ा हुआ क्षेत्र है। इसके मुख्य कारण हैं :

1. गैर-जिम्मेदार वन नीति – जिससे ठेकेदारों व अफसरों द्वारा जंगल की अंधाधुंध कटाई जारी है।

2. खदानों में भर्ती नीति – खदानों में मशीनीकरण कर परम्परागत मजदूरों को हटाकर बाहरी क्षेत्र के मजदूरों को प्राथमिकता देना व परम्परागत रूप से कार्यरत मजदूरों को हटाना, जैसे शहडोल व बिलासपुर की कोयला खदानों में बिहार की कोयला खदानों के सरप्लस मजदूरों की भर्ती करना और बैलाडीला में 10 हजार मजदूरों की छँटनी कर पूरा काम मशीनों से करवाना।

3. नदियों के पानी का उद्योगों के लिए ही खपत करना – छोटे-बड़े सभी नदी-नाले, गंगरेल, गोंदली, खरखरा या तांदुला में जाकर मिलते हैं और इन पर बने बाँधों का पानी भिलाई इस्पात संयंत्र के लिए रिजर्व है। किसानों के सूखते हुए खेतों को भी यह पानी नहीं मिलता है।

इन नीतियों के कारण छत्तीसगढ़ के गरीबों की छत्तीसगढ़ में जगह नहीं है। हर वर्ष लाखों लोग पलायन कर रहे हैं, क्षेत्र की क्रय-क्षमता में बढ़ोतरी नहीं हुई है, शहर व गाँव के बीच खाई तेजी से बढ़ती जा रही है। इन परिस्थितियों को मद्देनजर रखते हुए ही भिलाई इस्पात संयंत्र की नीतियों का अवलोकन किया जाना चाहिए –

गत 20 वर्षों में, बीके, बी. ई. सी., सिम्पलेक्स और केडिया लखपति से अरबपति बन गये, आयातित कुशल मजदूरों के बेटे-बेटियाँ, मंत्री-अफसरों के पुत्र-पुत्रियाँ संयंत्र में नौकरी के हकदार हो गये। पर छत्तीसगढ़ के निवासियों को भिलाई में नौकरी नहीं। भिलाई का उत्पादन 25 लाख टन से बढ़कर 42 लाख टन होने पर भी मजदूर संख्या में 10 हजार की कटौती ! सिर्फ मैन्युअल खदानों में ही छत्तीसगढ़ी मजदूर कार्यरत थे, अब बीके कम्पनी को ठेका देकर उन मजदूरों को भी नौकरी से हटाने का प्रयास जारी है।

विकास के नाम पर 'मशीन' को मान्यता देने की कोशिश में हैं भिलाई के तकनीकशाह ! लेकिन इसके लिए कोई वैज्ञानिक तर्क इनके पास नहीं है। फिर भी 'सर्वसाधन-सम्पन्न' मैनेजमेंट अपने साधन के बल पर, झूठ व आतंक की राजनीति का सहारा लेकर अपनी नीति को लागू कराना चाहते हैं।

यहाँ की जनता ने क्षेत्र के 'औद्योगिक विकास' के लिए खुशी से अपनी खनिज सम्पदा दी है। सिंचाई के काम में आने वाला नदियों का पानी कारखानों को दिया है। 'औद्योगिक विकास' की बलिवेदी पर अपनी जमीन, जंगल, भट्टियाँ व घरों की भेंट चढ़ायी है, पर हमारे बच्चों के लिए रोजगार भी नहीं ? आज छत्तीसगढ़ की जनता पूछती है कि इस कुर्बानी के बदले हमें क्या मिला ?

पिछले 15 बरसों से अब तक 1,000 करोड़ रुपये 'आधुनिकीकरण' के नाम पर फूँक चुके हैं जिसका उद्योग को कोई फायदा नहीं हुआ। इस दौरान इस्पात की कीमत में जरूर हजारों रुपये प्रति टन की वृद्धि हुई है। दूसरी ओर खदानों में जहाँ मशीनीकरण किया गया, लौह अयस्क की कीमत में कोई विशेष बढ़ोतरी नहीं हुई है। बैलाडीला में मशीनीकरण से पहले एन. एम.

2. पर टॉनिक, कफ-सीरप व अन्य फालतू दवाओं पर कितना ही मुनाफा लेने की छूट है।

बहुराष्ट्रीय कम्पनी ग्लैक्सो जैसी कुछ कम्पनियाँ तो ऐसी हैं जो एक भी काम की दवा नहीं बनातीं। केवल टॉनिक या बेबी फूड बनाती हैं और प्रसिद्ध हैं दवा कम्पनी के नाम से।

दूसरी बात यह है कि देश में कुल 6 हजार से अधिक दवा कम्पनियाँ हैं। लेकिन चंद गिनी-चुनी विदेशी कम्पनियों के हाथ में 80 प्रतिशत से अधिक धंधा है। फाइज़र, पार्क एंड डेविस, हेक्स्ट और रोश जैसी बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ पूरी तरह से भारत में छायी हुई हैं। इन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के लूट का हिसाब देखिये — जर्मन कम्पनी 'रोश' ने नींद की दवा लिब्रियम आयात की, तो उसका दाम 5,555 रुपये प्रति किलो तय किया। उसी समय दिल्ली की एक छोटी कम्पनी ने इस दवा का आयात किया था — 312 रुपये प्रति किलो की दर से। अब आप लोग प्रतिशत निकालते रहिये !

इस्पात उद्योग के मजदूर या एक देशप्रेमी नागरिक के नाते हमारे मन में क्या सवाल उठते हैं —

1. जब जरूरत का सारा पिग-आयरन यहाँ अपने देश में पैदा हो सकता है तो क्यों हम उसे जापान या अमेरिका से आयात करते हैं ? क्यों पिग-आयरन कास्टिंग मशीनों में छँटनी कर उत्पादन घटाया जा रहा है ?
2. बड़ी-बड़ी रूसी मशीनें लगाकर अरबों रुपये इन मशीनों पर खर्च करके भी उत्पादन के लक्ष्य में हम बहुत पीछे हैं, जबकि ये बड़ी-बड़ी मशीनें लाखों को उत्पादन प्रक्रिया से हटाती हैं। जब आज तक खरीदी गयी विदेशी तकनालाजी के कारण हमारी विदेशों पर निर्भरता बढ़ती ही गयी है तो फिर नयी-नयी मशीनें लाने की क्या तुक है ? फिर से विदेशी तकनालाजी माँगने से पहले, वर्तमान क्षमता से 'स्वदेशी उत्पादन' क्यों नहीं करते ?
3. खुद पैदा करने के बजाय मँगाने की ओर ध्यान क्यों जाता है ? 'उत्पादनोन्मुखी' होने से देश का विकास होगा या 'हाथ फैलाओन्मुखी' होने से ?
4. जब 'स्वदेशी उत्पादनोन्मुखी' होकर देश की जनता को रोजगार मिल सकता है, देश की जनता को उत्पादन प्रक्रिया में जुड़ने का अधिकार मिल सकता है, तब 'स्वदेशी उत्पादनोन्मुखी' जन-बाहुल्य नीति क्यों नहीं अपनायी जाती है ?
5. जनता खुद उत्पादन से जुड़कर स्वाभिमानपूर्वक जीविका कमाये, इस स्थिति से वंचित करके उन्हें बेरोजगार करने व सरकारी दान व दया पर आश्रित करने की [illegible] तो नहीं है ?

कपड़ा उद्योग के एक मजदूर या एक देशप्रेमी नागरिक होने के नाते [illegible] से मैं पूछना चाहता हूँ, क्या उत्पादन के घटने से आपके दिल पर कुछ असर होता है ? तो आप क्या कदम सुझा रहे हैं जिससे फिर से पूरा उत्पादन हो ?

1. उत्पादन में कमी के साथ-साथ लाखों श्रमिकों को उत्पादन की प्रक्रिया में हिस्सा लेने से वंचित किया जा रहा है। क्या कोई भी देश व्यापक जनता को उत्पादन से दूर रख कर तरक्की कर सकता है ?
2. जब 30 प्रतिशत जनता एक मीटर सूती कपड़ा भी मुश्किल से खरीद सकती है,

इस्पात उद्योग का एक और दिलचस्प किस्सा सुनिये। पिछले कुछ वर्षों से सेल (स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लि.) ने अमेरिका व जापान से पिग-आयरन खरीदना शुरू किया है। क्यों ?

क्या हम इतना पिग-आयरन उत्पादन करने की क्षमता नहीं रखते ? देश की पिग-आयरन उत्पादन करने की वर्तमान क्षमता कितनी है ? और आज पिग-आयरन का कितना उत्पादन हो रहा है ? पिग-आयरन की कास्टिंग मशीनों में छँटनी कर उत्पादन कम क्यों कर रहे हैं ? विदेशों से मँगाने की जगह अपने ही देश में उत्पादन क्यों नहीं कर रहे ?

कुछ लोग ये कहने की हिमाकत करते हैं कि विदेशी पिग-आयरन सस्ता पड़ता है। किसी भी देशप्रेमी नागरिक से पूछिये 'उत्पादन करना' घाटे का सौदा है या 'आयात करना' ? जापान हमसे खनिज लोहा खरीदकर उसका पिग-आयरन बनाकर हमें ही बेचता है। क्या यह अंग्रेजी राज की तरह नहीं है, जब वे हमसे कपास खरीदते थे और उसका कपड़ा बनाकर हमें ही बेचते थे ?

जो उत्पादन यहाँ पर होता भी है, उस पर हमारा कितना नियंत्रण है ? सन् 1955 में विदेशी मशीनें व उच्च तकनालाजी लायी गयी और उस पर खर्च किये थे — अरबों-अरब रुपये। अब सरकार कहती है कि ये मशीनें, वह तकनालाजी पुरानी पड़ गयी है। नयी मशीनें मँगवानी पड़ेंगी। क्या गारंटी है कि ये मशीनें भी 5-10 साल में पुरानी नहीं पड़ जायेंगी ?

सच्चाई तो यह है कि छोटे-से-छोटे सुधार एवं विस्तार के लिए हमें विदेशियों का मुँह ताकना पड़ता है और ये ही हमारी इस्पात नीति तय करते हैं।

कपड़ा उद्योग — यह देश का सबसे पुराना उद्योग है और हमारे सभी बड़े-बड़े पूँजीपति इसी उद्योग के सहारे पनपे हैं।

सन् 1960-62 में प्रति व्यक्ति 17 मीटर कपड़े का उत्पादन होता था, लेकिन आज प्रति व्यक्ति 13 मीटर कपड़े का उत्पादन हो रहा है। जहाँ पहले क्षमता का 90 प्रतिशत उत्पादन होता था, आज 60 प्रतिशत भी मुश्किल से होता है — कहते हैं कपड़ा उद्योग में मंदा चल रहा है। ये मंदा किसे कहते हैं ? जब उत्पादन इतना अधिक हो कि कपड़े की माँग ही नहीं रहे, कपड़ा जरूरत से ज्यादा उत्पादित हो, या मिलें ही उत्पादन एकदम बंद कर दें। यानी, जब आज 17 मीटर की जगह प्रति व्यक्ति 13 मीटर कपड़े का उत्पादन हो रहा है, 30 प्रतिशत लोगों को एक मीटर कपड़ा भी नसीब नहीं है और वे कहते हैं कि कपड़ा जरूरत से ज्यादा पैदा हो रहा है, उसमें मंदा है !

ऐसा क्यों ? क्योंकि आज कल 'ओनली विमल' चल रहा है। सूती कपड़े के बजाय सिंथेटिक कपड़ा चल रहा है। यह 'सिंथेटिक' क्या है और 'ओनली विमल' क्या है ?

अपने खेत में जो कपास होती है उसके धागे से कपड़ा बनता है। अपने देश की कपास, अपने देश के कारखाने, अपने देश के टेक्सटाइल इंजीनियर, डिजाइनर और अपने देश का कपड़ा। पर अब क्या धंधा चल रहा है — विदेशों में तैयार किसी पदार्थ का धागा खरीदो, विदेशी डिजाइनरों की बुद्धि का डिजाइन लो, किसी विदेशी दलाल की कम्पनी में उसका कपड़ा बनवाओ और 'ओनली विमल' के नाम से टी. वी. पर प्रचार करो। विदेशी धागे से बने कपड़े को सिंथेटिक कहते हैं और विदेशियों की दलाली कर अरबों रुपये कमानेवाली कम्पनियों में से एक का नाम

अन्य वर्ग और विशेष रूप से मजदूर वर्ग ने भी औद्योगिक विकास की प्रक्रिया में सहर्ष हाथ बँटाया था। बदलाव की हवा इन देशों में तेजी से बहने लगी और यह औद्योगिक क्रांति साहित्य, संस्कृति, जीवन स्तर, कृषि आदि पर भी प्रतिबिम्बित हुई। विकास के नये-नये दरवाजे खुले।

2. जबकि सन् 1917 की अक्तूबर क्रांति एक सामाजिक, राजनैतिक क्रांति थी। इस क्रांति के जरिये मजदूर वर्ग ने पूँजीपति वर्ग से राजसत्ता छीन ली। क्रांति से कृषि, स्वास्थ्य, संस्कृति आदि के साथ-साथ औद्योगिक विकास में भी एक गुणात्मक परिवर्तन आया।

3. क) क्रांति की ज्वाला ने समाज के सभी क्षेत्रों, कृषि, स्वास्थ्य, शिक्षा, उद्योग व संस्कृति को ऊर्जा दी और एक संतुलित सामाजिक विकास के रास्ते पर आगे बढ़ाया। जबकि औद्योगिक क्रांति के बाद असंतुलित, अपंग विकास हुआ जिसमें उद्योग तो विकसित हुए, लेकिन संस्कृति जैसे महत्वपूर्ण सामाजिक पहलुओं में पिछड़ापन रहा। यही अपंगता ट्यूमर की तरह बढ़ती गयी और इसने साम्राज्यवाद का रूप लिया।

ख) शुरू के संतुलित विकास के बाद रूस भी पूँजीवादी देशों की होड़ में शामिल हुआ और वहाँ असंतुलित ढंग से उद्योग के विकास पर जोर रहा। समाजवादी संस्कृति, दुनिया के मेहनतकशों से भाईचारा आदि पहलू गौण हो गये। इस असंतुलित विकास से नये समाज की आशाओं पर पानी फिर गया।

4. औद्योगिक विकास की उपरोक्त दो धाराओं का विश्लेषण कर, इतिहास से शिक्षा लेकर हमें अपनी औद्योगिक नीति तय करनी चाहिए।

5. हमारी औद्योगिक नीति का मूल आधार होगा --

क) महाशक्तियों के दबाव से मुक्त होकर अपनी औद्योगिक नीति तय करना।

ख) भारत को एक आत्मनिर्भर देश बनाने के लिए विभिन्न राष्ट्रीयताओं में आत्मनिर्भर अर्थनीति की स्थापना हो।

ग) पारम्परिक उद्योगों के विकास में बाधाओं को हटाया जाये।

घ) औद्योगिक विकास के साथ-साथ तीव्र गति से संस्कृति, कृषि, स्वास्थ्य, शिक्षा व सामाजिक जीवन के अन्य पहलुओं का विकास भी निश्चित कर लेना चाहिए।

च) बड़े उद्योग, छोटे उद्योग, जंगल काटकर उद्योग की स्थापना या जंगल के लिए उद्योग को रोकना, आधुनिकीकरण करना या न करना या किस हद तक करना आदि सवालों पर संतुलित विकास व सामाजिक जरूरत के नजरिये से ही प्राथमिकता तय करनी होगी और लागू करने के समय लचीलापन होना चाहिए।

छ) जब तक नयी औद्योगिक नीति पूर्ण रूप से लागू न हो तब तक वर्तमान औद्योगिक नीति पर आम बहस कर उसकी बखिया उधेड़नी चाहिए।

उद्योग की वर्तमान हालत

हमारे देश में उद्योग के विकास की प्रक्रिया एवं विभिन्न उद्योगों की वर्तमान हालत पर

व 154 पर क्रमशः तालिका क्र. 5, 6 एवं 7, जिनका सारांश मूल लेख में यहाँ प्रस्तुत किया गया था। – स.)

इन आँकड़ों के अनुसार हमारा देश 144 रुपये प्रति टन के हिसाब से अयस्क उत्पादन करके 52 रुपये प्रति टन का घाटा सहकर विदेशी पूँजीपतियों के साथ व्यापार कर सकता है, पर मजदूरों के लिए घाटा सहने की बात नौकरशाह सोच ही नहीं सकते। इसलिए वे बार-बार विदेशी मशीन आयात करने की नीति के ऊपर ही अडिग रहते हैं। दल्ली मेकेनाइज़्ड माईन्स का मेन शाफ्ट बार-बार टूटता रहा। नौकरशाही हवाई जहाज भेजकर सोवियत संघ से शाफ्ट मँगाती रही। आखिर में भिलाई की मशीन शॉप में ही स्थायी सुधार हो पाया। विदेशी मशीन के लिए हम पानी की तरह पैसा बहा सकते हैं, परंतु मजदूरों को पैसा देने में नौकरशाह सिहर उठते हैं। भिलाई की आई. बी. एम. कम्पनी की कम्प्यूटर मशीनें पुरानी होने पर नये पुर्जों की आवश्यकता हो रही है। आई. बी. एम. कम्पनी कहती है कि पुर्जे उपलब्ध नहीं हैं, आप नयी मशीनें ले लीजिये। हजार रुपये के पुर्जे के कारण करोड़ों रुपये की मशीनें खरीदनी होंगी।

लोहे की खदानों के बारे में स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लि. (सेल) या भिलाई इस्पात संयंत्र के मैनेजिंग डायरेक्टर की मशीनीकरण की नीति मजदूर कभी भी बर्दाश्त नहीं करेंगे। अपनी मौत को कौन आराम से मान लेगा! इसीलिए समय का तकाजा है कि मैनेजमेंट वास्तविकता के आधार पर विचार कर अपनी नीतियाँ तैयार करे। यह सुनिश्चित है कि कुछ महीनों में ही भिलाई इस्पात संयंत्र की सातवीं धमन भट्ठी उत्पादन के लिए तैयार हो जायेगी। सातवीं धमन भट्ठी से उत्पादन शुरू करने पर भिलाई इस्पात संयंत्र 42 लाख टन तरल लोहे का उत्पादन करने लगेगा। 42 लाख टन तरल लोहे के उत्पादन के लिए 70 लाख टन लौह अयस्क की जरूरत होगी। दल्ली एवं राजहरा मशीनीकृत खदानें सिर्फ 20+20 = 40 लाख टन अयस्क का ही उत्पादन दे सकती हैं। बाकी 30 लाख टन अयस्क के लिए मैन्युअल खदान के मजदूर ही काम में आयेंगे। इस हालत में मजदूरों की छँटनी की बात सोचना एक बचकाना हरकत के सिवाय दूसरा कुछ भी नहीं हो सकता। वर्तमान परिस्थिति में उत्पादन का खर्च कम करने के निम्नलिखित सुझाव पेश किये जाते हैं जिन पर अमल करने पर सच में उत्पादन खर्च में कुछ कमी हो सकती है –

1. ठेकेदारी प्रथा समाप्त कर सारे मजदूरों का विभागीयकरण किया जाये, जिससे ठेकेदारों को दिये गये मुनाफे की रकम में कटौती हो सकती है।

2. दल्ली मेकेनाइज़्ड माईन्स के उत्पादन में वृद्धि करने का प्रयोग किया जाये। मशीनीकृत लोडिंग के लिए करोड़ों रुपये बरबाद न करके एक 'स्क्रबर' एवं 'क्लासिफायर' लगाकर 'वाशरी' की उत्पादन क्षमता बढ़ायी जाये। दल्ली मेकेनाइज़्ड माईन्स से काफी मात्रा में 'फाइन्स' पैदा कर दूसरे इस्पात कारखानों को भी भेजा जा सकता है। दल्ली माईन्स के 'फाइन्स' की अन्य इस्पात कारखानों में भी माँग रहती है। उत्पादन बढ़ने पर, उत्पादन के खर्च में कमी आयेगी एवं अर्द्ध-मशीनीकरण पद्धति कामयाबी के साथ चल सकेगी।

3. दल्ली से महामाया तक रेल्वे लाइन बनाने पर महामाया एवं दुलकी के लौह अयस्क की परिवहन दर में 25/- रुपये प्रति टन की कटौती हो सकेगी।

4. 'ब्लू डस्ट' के स्टॉक का अलग स्टॉक यार्ड बनाया जाये एवं 'ड्राई फाइन्स ब्लेन्डिंग' में उसकी मात्रा बढ़ायी जाये।

मुरम या साधारण मिट्टी रहती है। अगर ओव्हरबर्डन को अयस्क मानकर बंकर में चार्ज किया जाता है तो लोहे की मात्रा में कैसे सुधार हो सकेगा, या 'वाशरी' में स्लरी की मात्रा कैसे घट सकेगी, यह भी विचारणीय है।

4. 'ब्लू डस्ट' जिसमें लोहे की मात्रा 64 से 70 प्रतिशत तक है, वह 'ब्लू डस्ट', 'अनरेटेड फाइन्स' के नाम से कचरे के रूप में फेंक दी जाती है। यह भी मजदूरों को कम रोजी देने की भावना से प्रेरित है।

5. 'अंडर-साइज' एवं 'ओव्हर-साइज' लोहा पत्थर, मैन्युअल खदान की एक समस्या है। मैनेजमेंट, 'अंडर-साइज' एवं 'ओव्हर-साइज' अयस्क उत्पादित होने पर मजदूरों की रोजी-रोटी काटने की 'पेनल्टी स्कीम' लागू कर निम्न मान के अयस्क को भी स्वीकार करता है। इसमें भी मजदूरों की रोजी काटने की भावना ही प्रमुख है, **जबकि क्वालिटी के अयस्क से समझौता नहीं होना चाहिए या स्वीकारा नहीं जाना चाहिए।** इस प्रकार मैनेजमेंट खुद निम्न मान की क्वालिटी के लिए जिम्मेदार है, जबकि वह समय-समय पर अपनी जिम्मेदारी मजदूरों के ऊपर थोपने की कोशिश जारी रखता है।

उत्पादन की लागत — वर्तमान मैनेजिंग डायरेक्टर श्री संगमेश्वरन उत्पादन की लागत कम करने के लिए अपनी मंशा को इस प्रकार प्रचारित करते जा रहे हैं कि गोबल्स[1] का प्रचार भी मात खा जाता है। एक झूठ को दस बार बोलने पर वह भी सच जैसा लगता है। मैनेजिंग डायरेक्टर मैन्युअल खदानों के मजदूरों से छुटकारा पाने के लिए, इसी प्रकार झूठ का पहाड़ खड़ा कर रहे हैं।

दल्ली राजहरा की लोहा खदान भिलाई इस्पात संयंत्र की जरूरत के लिए है। यह लोहा खदान अपने-आप में स्वतंत्र खदान समूह नहीं है। इस्पात कारखाने के उत्पादन खर्च में लौह अयस्क का उत्पादन खर्च भी शामिल रहता है। इस्पात कारखाने के कुल उत्पादन खर्च एवं लौह अयस्क के उत्पादन खर्च के अनुपात पर एक नजर डालने से पता चलेगा कि दस हजार खदान मजदूरों को बेरोजगार कर खदान में उत्पादन खर्च में कमी लाने का तर्क कितना गलत है। यह कोई साधारण व्यक्ति भी समझ जायेगा।

भिलाई इस्पात कारखाने का कुल वार्षिक उत्पादन खर्च लगभग 1,250 करोड़ रुपया होता है। लोहा खदान का कुल वार्षिक उत्पादन खर्च 40 करोड़ रुपये के नीचे होता है। खर्च का 97 प्रतिशत इस्पात कारखाने के अन्य मुद्दों पर एवं 3 प्रतिशत लौह अयस्क निकालने पर होता है। अब इस 3 प्रतिशत में दस हजार मजदूरों की छँटनी करने पर मैनेजिंग डायरेक्टर इस्पात की उत्पादन लागत में कितनी बचत कर सकेंगे? क्या बिना कीमत के लौह अयस्क इस्पात कारखानों में पहुँच जायेगा? अगर कुछ लाख रुपये ही बचत में आते हैं तो दस हजार मजदूरों का रोजगार बंद करने की इच्छा क्या देश के हित में होगी? इस प्रकार उत्पादन खर्च कम करने के सम्बंध में मैनेजमेंट के तथाकथित तर्क मजदूर-विरोधी एवं मशीनीकरण की अंधी नीति की जयमाला पहनने को छोड़कर और कुछ भी नहीं है।

समस्याएँ तो नौकरशाही ढाँचे में हैं — आज देश में सृजनशील विचार का अभाव हर स्तर

[1] हिटलर की सरकार में प्रचार मंत्री।

तालिका क्र. 1

एक स्वचालित शावेल का बाजार मूल्य — रु. 1.25 करोड़
(एक करोड़ पच्चीस लाख रुपये)

प्रति शावेल वार्षिक खर्च		रु. (लाखों में)
1.	ब्याज	22.0
2.	घिसाई	12.0
3.	रिप्लेसमेंट/डेवलपमेंट	4.0
4.	बिजली खपत	3.0
5.	लुब्रीकेशन	1.0
6.	आफिसर्स एवं कुशल मजदूर खर्च	8.0
	कुल खर्च	50.0

दल्ली माईन्स में रेजिंग एवं लोडिंग कार्य के लिए पाँच शावेल मशीनों की आवश्यकता है, जिससे प्रति वर्ष ढाई करोड़ रुपये की उत्पादन लागत होगी।

शावेल मशीन उपयोग में लाने पर डम्पर की भी आवश्यकता होगी।

डम्पर के लिए विशेष सड़क की आवश्यकता होगी एवं अन्य एकमुश्त लागत भी अधिक होगी। यह सब बी. एस. पी. के हिसाब में नहीं लाया गया है।

ऊपर दर्शाये गये आँकड़े सिद्ध करते हैं कि मशीनीकृत व्यवस्था एक खर्चीली व्यवस्था है। मैनेजिंग डायरेक्टर का यह कथन कि पूर्ण मशीनीकरण करने पर उत्पादन लागत में कमी आयेगी, सरासर धोखेबाजी है।

3. **अयस्क का स्टॉक** — वर्तमान समय में 25 से 30 लाख टन लौह अयस्क खदानों में जमा पड़ा हुआ है, यह एक सच्चाई है। इस लौह अयस्क का स्टॉक बनने के पीछे कारण यह है कि विश्वव्यापी इस्पात बाजार में मंदी की स्थिति के कारण इस्पात की माँग कम हो गयी थी। हम अपनी गलत इस्पात नीति के कारण पिछले वर्षों में अपने इस्पात कारखानों का उत्पादन घटाकर अमरीकी इस्पात और पिग-आयरन लगातार खरीदते रहे हैं। भिलाई का इस्पात उत्पादन जहाँ 20.5 लाख टन प्रति वर्ष होना चाहिए था, वहाँ गत चार वर्षों में मात्र 15 लाख टन प्रति वर्ष इस्पात ही उत्पादन करते रहे हैं। खदान के मजदूरों ने अयस्क का उत्पादन घटने नहीं दिया। इस्पात कारखाने में कम खपत के कारण लौह अयस्क का कुछ स्टॉक बन गया। परंतु सातवीं धमन भट्ठी चालू होने पर (जो कि कुछ महीनों में चालू होने की उम्मीद है), यह स्टॉक कुछ महीनों में खप जायेगा। आश्चर्य की बात यह है कि सरकार अधिक उत्पादन का ढिंढोरा पीटती है, भिलाई की सड़कों के किनारे बड़े-बड़े पोस्टर लगाकर अधिक उत्पादन के लिए मैनेजमेंट की ओर से अपना लक्ष्य प्रचारित किया जाता है। परंतु जब खदान मजदूर लगन के साथ परिश्रम कर अधिक उत्पादन करते हैं तब मजदूरों की छँटनी करने का इरादा मैनेजमेंट द्वारा किया जाता है। यह वास्तव में दुर्भाग्यजनक है।

भिलाई इस्पात संयंत्र की लोहा खदानों में कार्य प्रक्रिया वर्तमान में इस प्रकार है : खदान का एक हिस्सा, यानी राजहरा माईन्स पूर्ण रूप से मशीनीकृत है। यहाँ का माल स्वचालित शावेलों द्वारा निकाला जाता है, और राजहरा क्रशिंग प्लांट में फोड़ा और धोया जाता है। दल्ली, झरनदल्ली, कोकान, मयूरपानी, महामाया, आरीडोंगरी, ये सब मैन्युअल खदानें हैं, जहाँ मजदूर अपना पसीना बहाकर लोहा पत्थर फोड़ते हैं। इन खदानों के माल का कुछ हिस्सा ट्रकों द्वारा दल्ली राजहरा रेल्वे साइडिंग में आता है। वहाँ उन्हें रेल्वे वैगन में डाला जाता है। कुछ माल को कोन्डेकसा स्थित दल्ली क्रशिंग प्लांट के बंकर में डाला जाता है, जहाँ वह मशीनीकृत प्रक्रिया से धुलता है, फोड़ा जाता है और छाना जाता है।

भिलाई इस्पात संयंत्र की योजना थी कि मैन्युअल खदानों में भी मशीनीकृत प्रक्रिया अपनायी जाये। दल्ली (या कोन्डे) क्रशिंग प्लांट में दल्ली, झरनदल्ली, मयूरपानी आदि खदानों का मशीन से निकाला जाने वाला माल डाला जाये। परंतु ऐसा होने से मैन्युअल खदानों के 8,000 मजदूर, जो कि ठेकेदारी प्रणाली के अंतर्गत काम करते हैं, बेरोजगार हो जायेंगे, क्योंकि हाथ से लोहा पत्थर फोड़ने वाले ठेका मजदूर व सिर पर ढोकर ट्रकों में लोहा पत्थर लादने वाले ठेका ट्रांसपोर्ट मजदूर, ये सब ' अकुशल ' हैं। कीमती मशीनों पर बी. एस. पी. केवल अपने स्थायी कुशल मजदूरों को ही लेती है। इस समय दल्ली समूह की मैन्युअल खदानों में ' अकुशल ' मजदूर लौह अयस्क पैदा करते हैं, जबकि राजहरा में केवल कुशल मजदूर काम करते हैं।

सन् 1977 से दल्ली राजहरा की सशक्त मजदूर यूनियन, छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ, ने इस श्रम-विरोधी योजना को अपनी संगठित शक्ति के बल पर रोक रखा है। परंतु बी. एस. पी. मैनेजमेंट ने भी अपना मशीनीकरण का प्रयास जारी रखा है एवं हर मौके पर कोशिश करता है कि ' अकुशल ' मजदूरों को खदानों से भगाया जाये।

मैनेजमेंट का तर्क

1. श्री संगमेश्वरन तर्क प्रस्तुत करते हैं कि मैन्युअल खदानों के उत्पादन की गुणवत्ता निम्न-स्तरीय रहती है, जो कि धमन भट्टी (ब्लास्ट फर्नेस) के लिए उपयुक्त नहीं है।
2. मैनेजिंग डायरेक्टर ने यह भी मत प्रकट किया है कि मैन्युअल खदानों के माल की उत्पादन लागत मशीनीकृत खदान की उत्पादन लागत से अधिक है, इसलिए सिर्फ मशीनीकृत खदान से ही लौह अयस्क का उत्पादन किया जाये।
3. उन्होंने यह भी तर्क प्रस्तुत किया है कि खदानों का उत्पादन पिछले वर्षों में अधिक होने के कारण 30 करोड़ रुपये का लौह अयस्क जमा पड़ा है, जिसकी खपत नहीं हो पा रही है।

यूनियन द्वारा तर्क का जवाब

1. **अयस्क की गुणवत्ता** (लोहा पत्थर की क्वालिटी) – मैनेजमेंट का यह तर्क कितना खोखला है, यह पिछले इतिहास पर नज़र डालने से साफ हो जाता है :

क) भिलाई इस्पात संयंत्र, 26 वर्षों से मैन्युअल खदानों के माल की खपत करते आया है, जिससे अब तक इसने देश के हर इस्पात संयंत्र की तुलना में अधिक उत्पादन एवं अधिक मुनाफा दिया है। मैन्युअल खदानों के मजदूरों ने जिस प्रकार लगन के साथ

हो, सभी शारीरिक श्रम द्वारा होनी चहिए।" वर्तमान शिक्षा व्यवस्था अशिक्षित पढ़े-लिखे लोगों को जन्म देती है। अशिक्षित विशेषज्ञों में हमें वनस्पति विज्ञान के ऐसे शिक्षक मिलते हैं जो बीज, फल-फूल के बारे में सब कुछ जानते हैं, मगर पेड़ और जंगलों के बारे में कुछ नहीं जानते। ऐसे इंजीनियर मिलते हैं जो लकड़ी में रन्दा नहीं चला सकते, लोहा नहीं मोड़ सकते, बोल्ट नहीं कस सकते। ऐसे जीव विज्ञान के शिक्षक हैं जो यह नहीं जानते कि किस तरह मच्छरों को नियंत्रित करें और मलेरिया पर काबू कर सकें। ऐसे आँकड़े विशेषज्ञ और कम्प्यूटर विशेषज्ञ हैं जो हर सम्भावनाओं का हिसाब कर लेते हैं, मगर सच और झूठ में अंतर नहीं कर पाते। हमारे पास ऐसे डाक्टर हैं जो मरीज को प्यार नहीं करते, ऐसे शिक्षक हैं जो पाठशाला नहीं जाते, ऐसे वकील हैं जो सच्चाई से दूर भागते हैं। इन सभी अंतर्द्वंद्वों का मूल कारण है कि शिक्षा और उत्पादन के बीच कोई तालमेल नहीं है। इस समस्या का निराकरण तभी सम्भव है जब शिक्षा व्यवस्था में 'उत्पादन के लिए संघर्ष' शामिल हो, मगर यह काम आसान नहीं है। इस काम को वर्तमान व्यवस्था के स्कूल और कालेज पर आधारित शिक्षा के ढाँचे में करना सम्भव नहीं है। क्या हम इस चुनौती को मोल लेने के लिए सचमुच में तैयार हैं ? क्या हम हमारे उद्देश्य के प्रति गम्भीर हैं या नहीं ? इस सवाल का हमें जवाब देना होगा।

वैज्ञानिक प्रयोग – यह शिक्षा से सम्बंधित दूसरा मुद्दा है जिस पर मैं विस्तार से बताना चाहूँगा। यह मुद्दा पिछले मुद्दों से जुड़ा है। **मनुष्य की समझ वस्तुस्थिति में परिवर्तन लाने की प्रक्रिया से बनती है। 'उत्पादन के लिए संघर्ष' हमें वस्तुस्थिति के करीब ले जाता है। 'वैज्ञानिक प्रयोग' हमें वस्तुस्थिति बदलना सिखाता है।**

जब हम वैज्ञानिक प्रयोग के बारे में बोलते हैं तो कई लोग इससे प्रयोगशाला में टेस्टट्यूब इत्यादि के साथ काम करना समझते हैं। मगर वैज्ञानिक दृष्टिकोण हर स्तर पर और हर विषय में अपनाया जा सकता है। वैज्ञानिक प्रयोग में दो बातें हैं – तथ्यों को परखना और निराकरण (निष्कर्ष) पर पहुँचना। यह प्रक्रिया तोता-रटंत जैसी शिक्षा पद्धति को खत्म करती है और साथ-साथ 'स्थापित लोगों' पर अंधविश्वास को भी खत्म करती है। वैज्ञानिक प्रयोग लोगों में आत्मविश्वास पैदा करता है और सत्य को परखने के लिए उनकी अपनी क्षमता को विकसित करता है।

मैं वैज्ञानिक प्रयोग के सम्बंध में दो उदाहरण पेश करना चाहूँगा। पिछले दस बरस से 'किशोर भारती' (होशंगाबाद का संगठन) के शिक्षकों का एक समूह प्रयोगों के जरिये विज्ञान शिक्षा देने हेतु एक नयी पद्धति माध्यमिक शाला के स्तर पर विकसित करने के लिए प्रयासरत है। इन्होंने सरकारी पाठशाला के बच्चों से कई प्रयोग करवाकर वैज्ञानिक सिद्धांतों को खोज निकालने की पद्धति विकसित की है। इस पद्धति में इतनी सफलता मिली कि 'एकलव्य' नामक एक अलग संस्था स्थापित करके वैज्ञानिक पद्धति से स्कूल के सभी विषयों को पढ़ाने हेतु खोज शुरू हुई है। . . . . . .

(इसके आगे पांडुलिपि का अंश उपलब्ध नहीं है।)

❑

(नियोगी के घर से क्रांति गुहा नियोगी के सौजन्य से।)

यह नारा बुलंद करते हुए हम अपने परिवारजनों को साथ लेकर संघर्ष में एक नयी मिसाल कायम करेंगे।

हर एक मुहल्ले एवं गाँव के मजदूर साथी तैयार हो जाओ। हिम्मत के साथ आगे बढ़ो।

" विजय की मंजिल प्राप्त करके ही हम दम लेंगे। "

❑

(नियोगी के घर से क्रांति गुहा नियोगी के सौजन्य से।)

शिक्षा कैसी हो ?

यद्यपि नियोगी की स्कूली शिक्षा के प्रसार एवं गुणात्मक सुधार में गहरी रुचि थी, लेकिन वे इस दिशा में ट्रेड यूनियन संघर्षों की व्यस्तता के कारण मनचाहा समय नहीं दे पाये। इसके बावजूद उनकी प्रेरणा से राजहरा के मजदूरों ने जनशक्ति पर आधारित जो स्कूल गठित किये, उनसे शिक्षा के ढाँचे में वांछनीय परिवर्तनों के संकेत स्पष्ट नजर आ रहे हैं। शिक्षा के स्वरूप पर नियोगी के एकमात्र लेख की एक आधी-अधूरी प्रति हमें उनके पुराने कागजातों से प्राप्त हुई है। इसका लेखन काल सन् 1985 के आस-पास का रहा होगा। इसे हम बिना सजाये-संवारे पेश कर रहे हैं। — स.

(इसके पहले की पांडुलिपि का अंश उपलब्ध नहीं है।)

.... रवीन्द्रनाथ टैगोर ने रूस की चिट्ठी में भारत के पढ़े-लिखे शिक्षित वर्गों के लिए कहा है, " हम अपने देश में ही विदेशी जैसे हैं। " स्वतंत्रता संग्राम के दौरान कांग्रेस पार्टी ने हरिपुरा अधिवेशन में शिक्षा नीति के सम्बंध में एक चार्टर बनाकर ' हिन्दुस्तानी नयी तालीम संघ ' बनाया। ' हिन्दुस्तानी नयी तालीम संघ ' के अध्यक्ष शिक्षा के क्षेत्र में विख्यात विशेषज्ञ डॉ. ज़ाकिर हुसैन थे। आज वह नयी तालीम, भारतीय शिक्षा के इतिहास में एक भूला हुआ अध्याय है। स्वतंत्रता के बाद शिक्षा के सम्बंध में कोठारी कमीशन बैठाया गया। उस कमीशन ने जो सुझाव दिये वे सब रिपोर्ट के पन्नों में ही दबकर रह गये।

हाल ही में सन् 1983-84 में शिक्षा के क्षेत्र में एक और कमीशन का गठन हुआ — ' नेशनल कमीशन ऑन टीचर्स ' यानी ' राष्ट्रीय शिक्षक आयोग '। मध्य प्रदेश से एक प्रतिनिधि डॉ. अनिल सद्गोपाल जो शिक्षा के क्षेत्र में एक विख्यात विशेषज्ञ हैं, उस कमीशन के सदस्य थे। डॉ. सद्गोपाल ने एक माँग की कि वर्तमान कमीशन को कोठारी कमीशन के सुझावों

आज बी. एन. सी.[1] एवं ग्लूकोज़[2] का मजदूर आंदोलन आजादी के संघर्ष के समतुल्य है

सन् 1984 में लाल-हरे झंडे के तले राजनांदगाँव कपड़ा मजदूर संघ का गठन हुआ जिसके नेतृत्व में बी. एन. सी. मिल्स के मजदूरों ने जुझारू व सफल संघर्ष चलाया। बाद में लाल-हरे झंडे के ही तले 'ग्लूकोज़ मिल' के मजदूर भी संगठित हुए। इसी संदर्भ में नियोगी द्वारा लिखा यह लेख यहाँ प्रस्तुत है। — स.

दुनिया का मेहनतकश वर्ग आर्थिक-राजनैतिक एवं सामाजिक रूप से गुलामी की जंजीर में बँधा हुआ है। जंजीर तोड़ने की इच्छा एक स्वतः स्फूर्त इच्छा है। यह इच्छा व्यवस्था-रूपी संगठन के दायरे में आकर दमित हो जाती है। व्यवस्था एक समय अपने बचाव के लिए ही मेहनतकशों का आंशिक दुःख मिटाने की गुंजाइश पैदा कर स्थिरता को सुनिश्चित करती है।

परिवर्तन की दुनिया में समय महत्वपूर्ण है। समय की गति के साथ-साथ कुछ परिवर्तन भी होता रहता है। इस परिवर्तन में भौतिक स्थिति का बदलाव मेहनतकशों के चिंतन एवं भावना में भी परिवर्तन लाता है। यह परिवर्तन शासक वर्ग कभी-कभी सचेतन रूप से करता है।

"आहा हा, जंजीर कस कर बाँधी गयी है।"

"थोड़ा ढीला बाँधो।"

जंजीर ढीली बाँधने पर मेहनतकशों को 'सहूलियत का आराम' प्राप्त होता है। बहुतों को 'मुक्ति मिली है', यह महसूस होता है। फिर भी जंजीर तोड़ने की इच्छा बरकरार रहती है, क्योंकि यह इच्छा द्वंद्वात्मक भौतिकवाद के सिद्धांत पर आधारित है, जो कि दुनिया में लागू प्राकृतिक नियमों से तालमेल रखता हुआ सामाजिक दर्शन है।

परंतु जंजीर तोड़ना चाहने वालों को भी जंजीर ढीली होने से नाखुशी नहीं होती है। कभी-कभी 'जंजीर ढीली हो' के लिए संघर्ष से ही 'जंजीर तोड़ी जाये' विचार पैदा होता है। दल्ली राजहरा की आर्थिक माँगों के लिए आंदोलन का अगर विश्लेषण करें तो यह बात गलत नहीं होगी।

आर्थिक माँगों के लिए संघर्ष से जहाँ छत्तीसगढ़ के मेहनतकशों में शोषण की जंजीर को तोड़ने की भावना विकसित हुई है, वहाँ रोजमर्रा की इज्जत के लिए संघर्ष ने इस भावना को ताकतवर बनाया है।

दल्ली राजहरा का छत्तीसगढ़ के खान उद्योग के नक्शे में एक महत्वपूर्ण स्थान है। यहाँ प्रति वर्ष 50 से 60 लाख टन लौह अयस्क उत्खनित होता है। देश में 'उत्पादकता बढ़ाओ'

---

[1] नेशनल टेक्सटाइल कार्पोरेशन (मध्य प्रदेश) लि. (भारत सरकार का उपक्रम) द्वारा संचालित बंगाल-नागपुर कॉटन मिल्स, राजनांदगाँव।

[2] राजाराम मेज़ प्रॉडक्ट्स, राजनांदगाँव (स्टार्च, ग्लूकोज़ एवं डेक्सट्रोज़ बनाने वाली फैक्ट्री); बोलचाल में इसका प्रचलित नाम ग्लूकोज़ फैक्ट्री है।

न सिर्फ औद्योगिक क्षेत्र का सामाजिक परिवेश, बल्कि उत्पादकता भी प्रभावित होती है। नियमित मजदूरों के लिए प्रोत्साहन बोनस और पीस रेटेड काम जैसी योजनाओं की घोषणा के जरिये प्रबंधन भी इसे अपनी अनकही स्वीकृति देता है।

उत्पादन के मौजूदा सामाजिक स्वरूप के तहत कतिपय संरचनात्मक कारक काम की शोषणकारी परिस्थितियों को स्थापित प्रणालियों का रूप प्रदान करते हैं। मौजूदा व्यवस्था में अंतर्निहित ये प्रणालीगत कारक काम की परिस्थितियों के ऊपर मजदूरों व उनके संगठनों की नियंत्रण क्षमता को निष्प्रभावी बना देते हैं। उदाहरणार्थ, 'माईन्स सुरक्षा के महानिदेशक' (डी. जी. एम. एस.) के नियमों के अनुसार खदानों में बेंच की निर्धारित ऊँचाई 6 मीटर होनी चाहिए। लेकिन राउरकेला इस्पात कारखाने की बाराद्वार डोलोमाइट खदान के मजदूरों को 15 मीटर की या उससे भी अधिक बेंच ऊँचाई पर काम करना पड़ता है। इसके अलावा उनकी सेवा शर्तें ऐसी हैं कि विरोध करने पर नौकरी छूटने का खतरा खड़ा हो जाता है। शिकायत करने पर राजसत्ता मजदूरों के लिए बिना कोई वैकल्पिक रोजगार की व्यवस्था किये ऐसी असुरक्षित खदानों को बंद कर देती है। दिल्ली की पत्थर खदानों के असंगठित मजदूरों के साथ ऐसा ही हुआ। मजबूरन उन्हें फिर से गैर-कानूनी रूप से उन्हीं खदानों में कहीं ज्यादा खतरनाक परिस्थितियों में जान को जोखिम में डालते हुए काम करना पड़ रहा है।

इसके अलावा मजदूरों की सुरक्षा व काम की परिस्थितियों के बारे में मौजूदा उपाय आम तौर पर पूर्णतः अपर्याप्त होते हैं। मसलन, कार्य-स्थल पर प्रति मजदूर पानी की निर्धारित मात्रा को 2 लीटर तय किया गया है, जो पीने के लिए भी नाकाफी है, नहाने-धोने की तो बात ही छोड़ दें। इसी प्रकार असंगठित खदानों में सुरक्षित ड्रिलिंग और ब्लास्टिंग की अक्सर कोई व्यवस्था नहीं होती। अगर जरूरी होता है तो काम को पूरा करने के लिए पहले पत्थरों को गर्म किया जाता है और फिर उन्हें ठंडा किया जाता है या सब्बल की मदद से छेद बना कर उसमें बारूद भर कर ब्लास्टिंग की जाती है। इसे प्रायः अप्रशिक्षित लोगों द्वारा कराया जाता है।

ऐसी परिस्थितियाँ 'सेल' (भारतीय इस्पात प्राधिकरण) की अपनी बंधक खदानों में भी मौजूद हैं। फिर असंगठित क्षेत्र की खदानों के हालात का केवल अंदाजा ही लगाया जा सकता है।

रहन-सहन की परिस्थितियाँ

काम और रहन-सहन की परिस्थितियों का विभाजन अपने-आप में ही कृत्रिम है, क्योंकि मज़दूर की ज़िंदगी एक होती है, वह दो भागों में विभाजित नहीं होती। अगर फिलहाल इस विभाजन को मान लिया जाये, तो हमें रहन-सहन की परिस्थितियों के सिलसिले में भी वैसे ही प्रणालीगत कारक निरंतर काम करते दिखते हैं।

मजदूरों की विभिन्न श्रेणियों के बीच पानी, सफाई, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धता के मामले में मौजूद भारी विषमताओं के अलावा एक अन्य पहलू है जिसे प्रायः नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है – मज़दूर के सांस्कृतिक जीवन पर लगातार हमला हो रहा है। न सिर्फ परम्परागत सांस्कृतिक स्वरूपों व संस्थाओं को मिटाया जा रहा है, वरन् उनकी जगह आधुनिक जीवन के नये सांस्कृतिक स्वरूपों को भी स्थापित नहीं किया जा रहा है। इस माहौल में सिर्फ एक घिसीपिटी व विकृत संस्कृति ही टिक और पनप सकती है, जैसा कि किसी भी

महाराष्ट्र में न्यूनतम मजदूरी का निर्धारण 'पेज कमेटी' की सिफारिशों के आधार पर किया जाता है। इस कमेटी के अनुसार, "न्यूनतम मजदूरी को निर्वाह-व्यय (कॉस्ट ऑफ लिविंग) से किसी-न-किसी रूप में जुड़ा होना चाहिए। मजदूरों को इतना मिलना चाहिए कि वे भोजन, आवास, कपड़ा, दवा-दारू और शिक्षा जैसी न्यूनतम जरूरतों को पूरा करने में सक्षम हों।" इतनी बात तो उचित ही जान पड़ती है। लेकिन पेज महाशय निर्वाह-व्यय के आकलन के लिए भोजन में मुख्य खाद्य पदार्थ की कीमत के आधार पर एक फार्मूले को ईजाद करते हैं। मुख्य खाद्य (इस मामले में ज्वार) की कीमत का आकलन जरूरी कैलोरी की एक निश्चित मात्रा के आधार पर किया गया है, जो भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद (आई. सी. एम. आर.) द्वारा निर्धारित न्यूनतम कैलोरी की मात्रा का एक अंश मात्र है। अगर हम आई. सी. एम. आर. की सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए स्वयं पेज महाशय द्वारा विकसित मानकों के आधार पर न्यूनतम मजदूरी तय करें, तब भी वह रोजाना रु. 12.10 बनती है, जबकि पेज महाशय के अनुसार उसे रु. 4.00 रोजाना होना चाहिए (निःसंदेह ये आँकड़े अब पुराने पड़ चुके हैं)।

मजदूरी : एक वैकल्पिक परिभाषा

उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि न तो 'घोषित' और 'अंतर्निहित' अनुबंधों के मसले को और न ही 'प्रत्यक्ष' और 'अप्रत्यक्ष' मजदूरी के मसले को, और यहाँ तक कि, न ही न्यूनतम मजदूरी के प्रश्न को, अपरिवर्तनशील अवधारणाएँ माना जा सकता है। ये तमाम अवधारणाएँ परिवर्तनशील हैं। एक ओर तो मजदूरों के संगठन व जुझारूपन के दबाव में, और दूसरी ओर, राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय पूँजीवाद की पाशविक शक्ति के प्रभाव में, इनमें लगातार बदलाव होता रहता है। इस कारण **मजदूर वर्ग 'मजदूरी' की ऐसी कोई स्थिर परिभाषा नहीं दे सकता, जो संघर्षों की प्रक्रिया से विलग हो।** पूँजीवाद के खिलाफ आर्थिक पक्ष की लड़ाई में मजदूरों का मौजूदा नारा होना चाहिए – 'एकताबद्ध होकर अपनी न्यायोचित माँगों के लिए संघर्ष करो।'

काम की परिस्थितियाँ

कहा जा सकता है कि काम की परिस्थितियों का अर्थ है वे भौतिक परिस्थितियाँ जिनके तहत मजदूर काम करता है। इस भौतिक परिस्थिति के दो पहलू हैं, मसलन –

1. **काम के भौतिक हालात** – इसके तहत हम काम में प्रयुक्त तकनीक, सुरक्षा उपायों और मजदूरों के स्वास्थ्य और मनोवैज्ञानिक हालात पर कार्य-स्थल के पर्यावरणीय प्रभावों को शामिल कर सकते हैं।
2. **काम का सामाजिक स्वरूप** – यह भौतिक परिस्थितियों का अनुपूरक है और आम तौर पर उन्हें निर्धारित करता है। रोजगार की शर्तें, अनुबंध और श्रम का बँटवारा (मसलन – गैंग, जोड़ा या अकेला; प्रत्यक्ष नियोजक उप-ठेकेदार है या सार्वजनिक प्रतिष्ठान), इन सबका काम के सामाजिक स्वरूप पर प्रभाव पड़ता है।

किसी प्रतिष्ठान की उत्पादकता (यानी प्रति घंटे प्रति व्यक्ति उत्पादन) अंततोगत्वा काम की भौतिक व सामाजिक परिस्थितियों के ऊपर निर्भर करती है।

धान की फसल की कटाई के लिए किसान द्वारा मजदूर लगाने या एक गैरेज उस्ताद द्वारा किसी हेल्पर को नट-बोल्ट कसने हेतु रखने, जैसे मामलों में यह एक साधारण सवाल लग सकता है। लेकिन जब हम भिलाई अथवा राउरकेला इस्पात कारखानों जैसे राज्य-नियंत्रित सार्वजनिक प्रतिष्ठानों के परिप्रेक्ष्य में इस सवाल पर गौर करते हैं तब यह सवाल जटिल हो जाता है।

भिलाई इस्पात कारखाने की स्थापना के पहले दुर्ग जिले का एक हिस्सा जंगल, तो दूसरा हिस्सा खेती की जमीन था। भिलाई इस्पात कारखाने ने जंगल व खेती की जमीन के एक बड़े भू-भाग पर कब्जा जमा लिया है। उसने खेतिहरों और आदिवासियों को बड़ी संख्या में जमीन, पानी व जंगल पर सदियों से स्थापित उनके पुश्तैनी अधिकारों से उन्हें बेदखल कर दिया है। इसके अलावा, उसने हजारों मजदूरों का बाहर से आयात किया। उनमें से कुछ को तथाकथित 'घोषित' करारनामों के तहत सीधे रोजगार दिया गया; वे ही नियमित मजदूर हैं। लेकिन उनकी बहुत बड़ी तादाद को ठेकेदारी प्रथा के तहत काम दिया गया (खदान, स्लैग डम्प, लघु उद्योग इत्यादि में)। भिलाई इस्पात कारखाने और इन मजदूरों के बीच एक 'अंतर्निहित' समझौता है, यह सच्चाई केवल उस वक्त स्वीकार की गयी जब ये मजदूर संगठित होने लगे और इसकी स्वीकृति के लिए लड़ने लगे। जहाँ ऐसी लड़ाइयाँ नहीं हुईं, वहाँ इसे मान्यता भी नहीं मिली। यह बात साफ-साफ समझ में तब आ जाती है, जब छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ से जुड़े मजदूरों की 6 वर्ष पहले की जिंदगी की तुलना आज के जीवन स्तर से की जाये या दल्ली राजहरा की लौह अयस्क खदानों में काम करने वाले मजदूरों के जीवन स्तर की तुलना भिलाई इस्पात कारखाने के स्लैग डम्प में काम करने वाले मजदूरों से की जाये या फिर दल्ली राजहरा के खदान मजदूरों और राउरकेला इस्पात कारखाने की बाराद्वार खदानों के मजदूरों के जीवन स्तरों की तुलना की जाये।

तीसरे प्रकार के मजदूर भी हैं, जिनके मामले में भिलाई इस्पात कारखाना किसी भी प्रकार के 'अंतर्निहित' अनुबंध की बात स्वीकार नहीं करता, यद्यपि उनका काम उसके संचालन के लिए निहायत जरूरी है। इनमें वैसे मजदूरों की विशाल फौज शामिल हैं जिनका काम सीधे भिलाई स्टील प्लांट के नियमित मजदूरों की श्रम शक्ति को बरकरार रखने और उसके पुनर्निर्माण को सुनिश्चित करने के लिए जरूरी हैं। इनमें स्थानीय किसान एवं मोची, नाई या गैरेज मिस्त्री जैसे छोटे कारीगर और घरेलू महिलाओं का समूह शामिल है। इन सबमें घरेलू महिलाओं का काम सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है, लेकिन वे ही पूर्णतः उपेक्षित भी हैं। इन सबके प्रति भी कोई नैतिक जिम्मेदारी है, इस बात के सबूत 'विशेष क्षेत्र विकास कानून' और गाँवों को गोद लिए जाने जैसे कदमों से मिलते हैं। हालाँकि, इन्हें ऐसे पेश किया जाता है मानो वह प्रतिष्ठान पूरे समुदाय के ऊपर कोई अहसान कर रहा हो। इन दायित्वों की अनुबंधात्मक प्रकृति भी संगठन व संघर्ष की प्रक्रिया के द्वारा ही उजागर होती है।

प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष मजदूरी

मजदूरी की मौजूदा कानूनी परिभाषाओं के अध्ययन से एक दूसरी अवधारणा सामने आती है। वह प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष मजदूरी की अवधारणा से सम्बंधित है। अगर आज हम भिलाई इस्पात कारखाने के 'नियमित' मजदूर के जीवन स्तर की तुलना 'ठेका' मजदूर या असंगठित

तालिका क्र. 7

निर्यात की लागत एवं निर्यात से आय का विवरण (1972-73 से 1978-79)

बैलाडीला अयस्क हेतु

वर्ष	आय (अमरीकी डालर)	आय (रुपये)	एन.एम.डी.सी. को भुगतान रु.	रेल्वे को भुगतान रु.	बंदरगाह को भुगतान रु.	निर्यात शुल्क रु.	कुल लागत रु.	लाभ (+)/ हानि (–) रु.
1972-73	9.73	77.84	23.28	35.00	9.00	10.75	78.03	(–) 0.19
1973-74	9.73/ 11.03	77.84/ 88.24	23.28	37.50	9.00	10.75	80.53	(–) 2.69/ (+) 7.71
1974-75	11.03/ 13.28	88.24/ 106.24	24.05/ 29.58	40.70/ 49.70	9.00	10.75	84.50/ 99.03	(+) 3.74/ (+) 7.21
1975-76	13.28/ 13.58	106.24/ 108.64	29.34	53.80	10.30	10.75	104.19	(+) 2.05/ (+) 4.45
1976-77	13.58/ 14.15	108.64/ 113.20	30.31	61.38	10.80/ 14.25	10.75	113.24/ 116.69	(–) 4.60/ (–) 3.49
1977-78	14.58	116.64	31.04	61.38	16.85	10.75	120.02	(–) 3.38
1978-79	15.33	122.64	33.98	61.38	19.71	10.75	125.82	(–) 3.18

तालिका क्र. 6

		हल्दिया (बेसिक ग्रेड)	पारादीप (बेसिक ग्रेड)	निम्न ग्रेड
1.	एक्स-प्लांट एफ.ओ.आर. प्रति टन कीमत	27.62	27.85	74.28
2.	विकास प्रोत्साहन खर्च	3.79	3.41	–
3.	रेल एवं सड़क परिवहन	34.70	61.15	3.90
4.	बंदरगाह एवं दुलाई खर्च	20.26	24.75	22.50
5.	अन्य खर्च	1.55	2.00	1.08
6.	निर्यात कर आदि	10.75	10.75	6.25
7.	अधिकार शुल्क (रायल्टी)	2.50	2.50	0.63
		101.17	132.41	108.64
	एम.एम.टी.सी. दलाली (4%)	4.05	5.22	4.34
	कुल खर्च	105.22	137.63	112.98
	बिक्री से आय	115.44	123.04	92.05

जबकि लौह अयस्क की औसत उत्पादन लागत रु. 140/- प्रति टन है, हमारी निर्यात कीमत रु. 92/- प्रति टन है। यह सिर्फ हमारे जैसे ' आजाद ' देश में ही सम्भव है। गोआ का सम्पूर्ण लौह अयस्क भंडार, जापान के मुनाफे के लिए छोड़ दिया गया है। दस साल बाद जब ये भंडार खत्म हो जायेंगे, तब गोआ की जनता की अगली पीढ़ी के लिए क्या बचेगा ?

हमारे देश में टिन का सबसे बड़ा भंडार मध्य प्रदेश के बस्तर जिले में है। मध्य प्रदेश शासन द्वारा संचालित मध्य प्रदेश राज्य खनन निगम को इस अयस्क के खनन की जिम्मेदारी दी गयी है। परंतु आज तक यह जिम्मेदारी पूरी नहीं की गयी है। सैकड़ों टन टिन अयस्क गैर-कानूनी रूप से हमारे देश से तस्करी द्वारा बाहर ले जाया जा रहा है। **इस गम्भीर अपराध के प्रति सरकार आँखें मूँदे बैठी है।**

भारत में मशीनीकरण और ठेका मजदूर

औद्योगिक विकास और ठेका मजदूरी प्रथा का अस्तित्व हमारे देश में जुड़वा भाइयों के समान है। जैसे-जैसे और मशीनें लगती जा रही हैं, वैसे-वैसे असंगठित ठेका मजदूरों की संख्या में दिन-प्रतिदिन बढ़ोतरी हो रही है।

ऊपर दिये गये अनेक उदाहरणों से यह सिद्ध होता है कि ये मशीनें और उनके साथ आने वाली तकनालाजी हमारी जरूरतों के अनुसार विकसित नहीं की गयी हैं। स्वाभाविक है कि हमारी नौकरशाही इस तरह की प्रत्यारोपित तकनालाजी की अभ्यस्त नहीं है। स्वचालित प्रणालियाँ हैं, पर हम उन्हें सही तरीके से चलाना नहीं जानते, न ही उनके पर्याप्त रख-रखाव के बारे में समुचित जानकारी है। अंततः, नौकरशाह अपनी कमियों को छुपाने के लिए ठेका मजदूर

इसके साथ ही हमें नयी मशीनों और अतिरिक्त कल-पुर्जों को विदेशों से मँगाते रहना पड़ता है और साथ ही इन विशेष अनुबंधों की सालगिरह सबसे नजदीक के पाँच सितारा होटल में मनानी पड़ती है।

एक और उदाहरण देखिये, इस बार कोल इंडिया लिमिटेड (सी. आई. एल.) से। हेवी इंजीनियरिंग कार्पोरेशन (एच. ई. सी.) का सोवियत संघ के सहयोग से शावेल मशीनें बनाने का करार है। हाल में सी. आई. एल. ने एच. ई. सी. को शावेल मशीनों का आर्डर देने के बजाय सीधे सोवियत संघ से 9.2 करोड़ रुपये के शावेल खरीद लिये और इधर एच. ई. सी. को अपनी मशीनें बेच न पाने के कारण इनका उत्पादन ही बंद कर देना पड़ा (इकनॉमिक टाईम्स, 25 नवम्बर 1979)।

हमारी उत्खनन (माइनिंग) नीति, हमारे विदेशी माई-बापों की बाजार नीति के अनुसार बदलती रहती है। साम्राज्यवादी देश किसी तयशुदा नीति के अंतर्गत अपना माल बेचकर मुनाफा कमाने से संतुष्ट नहीं होते हैं। **वे तकनालाजी में परिवर्तन करके और भी ज्यादा मुनाफे की ताक में रहते हैं और इस प्रकार किसी भी देश के अपनी मिट्टी से जुड़े हुए तकनीकी विकास और उत्पादन नीति को विकृत कर देते हैं।**

ये हमारे वही हितैषी हैं, जिन्होंने सी. एम. डी. ए. को पहले सन् 1974 में भूमिगत खनन की तकनीकों के लिए दिशा निर्देश दिये, फिर सन् 1975 में ' खुली खदानों ' के खनन (ओपन कास्ट माइनिंग) के लिए और सन् 1978 में एक बार फिर भूमिगत खनन की सम्भावनाओं के अध्ययन के लिए।

प्रसंगवश, यहाँ यह जिक्र कर दिया जाये कि भूमिगत खनन गर्मी और वायुमंडलीय दबाव की ऐसी परिस्थितियों में किया जाता है, जो इस तरह की तकनालाजी का निर्यात करने वाले सोवियत संघ और बुल्गारिया जैसे देशों में गैरकानूनी होंगी।

एक बार फिर कोल इंडिया लि. की ओर लौटते हैं। ऐसा कहा जाता है कि इस प्राधिकरण की विफलता के लिए जिम्मेदार कारक जरूरत से ज्यादा मानवशक्ति का होना है। फलस्वरूप हजारों महिलाओं की छँटनी कर दी गयी है। पचास हजार मजदूरों पर पहले ही ' फालतू स्टाफ ' का ठप्पा लगाया जा चुका है।

कुद्रेमुख लौह अयस्क खदान में अपनायी गयी तकनालाजी भी इसी प्रकार के तथ्यों को उजागर करती है। पेरु में मार्कोन कार्पोरेशन की खदानों के राष्ट्रीयकरण के बाद इस कार्पोरेशन को वही तकनालाजी भारत पर लादने का ख्याल आया और उसने इरान के शाह की मदद से इस तकनालाजी को कुद्रेमुख में लगवा दिया। अब शाह के साथ हुए करार का कोई अर्थ नहीं रह गया है। कुद्रेमुख का महत्व खत्म हो चुका है और देश 680 करोड़ रुपये का बोझ ढो रहा है।

यदि दल्ली राजहरा की दल्ली खदानों में अर्द्ध-मशीनीकरण की योजना को अपना लिया जाता है, और वह भी खदान मजदूरों के दबाव में आकर, तो सोवियत मशीनों की बिक्री किस प्रकार हो पायेगी ? सोवियत रूस और उसकी ही तरह मशीन निर्यात करने वाले अन्य देश किस प्रकार अपना माल तीसरी दुनिया के मत्थे मढ़ पायेंगे ?

मशीनों को इस प्रकार तीसरी दुनिया पर, विशेषकर भारत पर, लाद देने से इन देशों की अर्थव्यवस्था ही लड़खड़ाने लगी है। **केवल स्वावलम्बन पर आधारित अर्थनीति ही हमारी**

अब एक और तुलना पर नजर डालिये –

तालिका क्र. 2

प्रति टन उत्पादन लागत

क्र.	विवरण	मानवीकृत खनन रु.	'गैर-बंधक' मशीनीकृत खनन – लम्प्स (दैतारी) रु.
1.	उत्पादन लागत	15.54	55.18
2.	अधिकार शुल्क (रायल्टी) एवं उपकर	5.00	2.13
3.	ढुलाई की लागत	2.45	–
4.	रेलगाड़ी तक परिवहन	13.00	33.90
5.	हैंडलिंग एवं नमी क्षय (5%)	1.50	–
	कुल	37.45	91.21
	बिक्री – वसूली	35.30	78.75
	हानि (–) या लाभ (+)	(–) 2.15	(–) 12.46

(स्रोत – खनिज उद्योगों का महासंघ, नयी दिल्ली ; उड़ीसा खनन निगम।)

एक और तरकीब यह रही है कि अर्द्ध-मशीनीकरण की सफलता के दावे को नकारने के लिए , मशीनीकृत तकनालाजी की असफलता को उसमें कार्यरत मजदूरों के सिर मढ़ दिया जाता है। इसलिए कुछ मशीनीकृत खदानों के आँकड़ों पर नजर डाली जाये और उनकी सफलता या असफलता का अध्ययन किया जाये।

मौजूदा मशीनीकृत लौह अयस्क खदानों में मई 1978 से फरवरी 1979 के बीच उनकी उत्पादन क्षमता का कितना इस्तेमाल हुआ, उस पर एक नजर डाल ली जाये।

तालिका क्र. 3

कुछ लौह अयस्क खदानों में उनकी उत्पादन क्षमता का इस्तेमाल

(मई 1978 से फरवरी 1979 तक)

क्र.	खदान का नाम (1)	उत्पादन क्षमता (लाख टन में) (2)	उत्पादन (लाख टन में) (3)	स्तम्भ (3), स्तम्भ (2) के प्रतिशत के रूप में
1.	बैलाडीला-14	40.0	29.0	73
2.	बैलाडीला-5	49.0	34.0	69
3.	किरीबुरु	43.0	20.0	47
4.	बरसुआ	21.0	9.0	43
5.	काल्टा	9.0	2.0	22
6.	बोलानी	35.0	5.0	14
7.	दैतारी	15.0	7.5	50

क्या इस उद्योग का विकास राष्ट्रीय हितों के अनुकूल हुआ है ?

इस संदर्भ में इंग्लैंड, फ्रांस और अमेरिका जैसे औद्योगिकृत देशों के अनुभवों को ध्यान में रखना मेरे विचार से उपयोगी होगा। औद्योगिक क्रांति की शुरूआत में औद्योगिक कामगारों की घोर कमी थी। उपनिवेशों से गोरे, काले व भूरे कामगारों का आयात किया जाता था और उन्हें मशीनों को चलाने के लिए लगा दिया जाता था। परंतु, मशीनी तकनीक के विकास और स्वचालित तकनीक के बढ़ते इस्तेमाल ने आयातित कामगारों की इस फौज के एक बड़े अंश को फालतू बना दिया। आज इन्हीं देशों में बेरोजगारी की समस्या विकराल रूप धारण कर चुकी है। करोड़ों मजदूर बेरोजगार हैं। जातीय दंगे हो रहे हैं। इससे भी ज्यादा, मशीनें आमतौर पर काम के प्रति बेरुखी पैदा करके उन देशों के सांस्कृतिक जीवन को नुकसान पहुँचा रही हैं और इससे उनकी सभ्यता का ताना-बाना ही खतरे में पड़ गया है।

भारत में, मशीनीकरण की इस अंधी दौड़ में आज बड़ी संख्या में बेरोजगार पैदा हो रहे हैं, और इस तरह आने वाली पीढ़ियों के लिए बेरोजगारी को एक महामारी के रूप में छोड़ दिया गया है। हम ऐसे अंधे बड़े फासले में लगे हैं जिनका मकसद धन पैदा करना नहीं है, पर बेरोजगारी पैदा करना है।

दल्ली राजहरा का अनुभव

मैं पहले दल्ली राजहरा के अनुभव की बात करना चाहूँगा और फिर इस अनुभव से उपजे कुछ मुद्दों पर देश में खनन-सम्बंधी हालात के संदर्भ में बात करूँगा।

दल्ली राजहरा एक लौह अयस्क खदान शहर है। यह भारत के सबसे बड़े इस्पात संयंत्र, भिलाई इस्पात संयंत्र, की लौह अयस्क की कुल जरूरत पूरी करता है। दल्ली राजहरा में, सन् 1958 से राजहरा मशीनीकृत खदान चालू है। सन् 1977 में हमारी यूनियन बनने के बाद से ही दल्ली खदान को मशीनीकृत करने की तैयारी चल रही है। इसके फलस्वरूप खदान मशीनीकरण की समस्या यूनियन के पैदा होने के वक्त से ही एक दैत्याकार आकृति के रूप में खड़ी है जिससे हमें जिंदा रहने के लिए जूझना ही पड़ेगा।

यह मुद्दा हमें और ज्यादा साफ तौर से समझ में सन् 1978 में आया, जब मशीनीकरण के कारण बैलाडीला की खदान न. 5 में एक ही झटके में दस हजार मजदूरों को काम से निकाल दिया गया। हर प्रतिरोध कुचल दिया गया। 10,000 झोपड़ियाँ जला दी गयीं, कई महिलाओं के साथ बलात्कार किया गया, और मजदूरों पर गोलियाँ चलीं। मशीनीकरण ने 10,000 मजदूरों को भूख से लड़ने के लिए बाध्य कर दिया। यह हकीकत है कि उक्त मशीनें सोवियत संघ में बनायी गयी थीं और इस तरह समाजवादी प्रगतिशीलता का जामा ओढ़े हुई थीं, इन मजदूरों की त्रासदायक नियति में कोई फर्क नहीं पड़ा।

दल्ली राजहरा के मजदूरों ने बैलाडीला नरसंहार के खिलाफ अपनी वेदना और गुस्सा जाहिर करने के लिए हड़ताल की जिसमें हजारों मजदूरों ने चुनौतीपूर्ण घोषणा की कि वे बैलाडीला को दल्ली राजहरा की धरती पर कभी भी दोहराने नहीं देंगे।

अर्ध-मशीनीकरण — मजदूरों का विकल्प

अंततः संगठित मजदूरों की ताकत के आगे भिलाई इस्पात संयंत्र के मैनेजमेंट तथा इस्पात एवं खदान मंत्रालय को झुकना ही पड़ा। 20 अप्रैल 1979 का समझौता वैकल्पिक मशीनीकरण नीति के रास्ते पर मील का पत्थर है। दल्ली मशीनीकृत खदान की योजना को एक

परिवार को अंग्रेजों ने सीधा समर्थन और संरक्षण प्रदान किया। उसकी शिकायत पर वीर नारायण सिंह को गिरफ्तार करके जेल भेज दिया गया। वीर नारायण सिंह इस अंचल के प्रथम राजनैतिक बंदी थे।

सन् 1857 में जब मंगल पाण्डेय, रानी लक्ष्मीबाई, नानासाहब और तात्या टोपे देश में सैन्य विद्रोह की बागडोर सँभाल रहे थे, उस समय वीर नारायण सिंह रायपुर जेल में और पड़ोसी राज्य उड़ीसा के लोकनायक सुरेन्द्र साय हजारीबाग जेल में बंद थे। लगभग एक साथ ही दोनों जेल से भागे और आदिवासियों को संगठित कर संघर्ष की तैयारी करने लगे। वीर नारायण सिंह ने अंग्रेज साम्राज्यवादियों के खिलाफ सशस्त्र संघर्ष आरम्भ कर दिया। अनेक स्थानों पर उग्र झड़पें हुई और वीर नारायण सिंह की आदिवासी वाहिनी ने अंग्रेजों के दांत खट्टे कर दिये। परंतु पड़ोसी जमींदारों की गद्दारी के कारण अंततः वीर नारायण सिंह अंग्रेजों के हाथ पड़ गये।

अंग्रेज सेनापति स्मिथ ने वीर नारायण सिंह की गिरफ्तारी को अंग्रेज साम्राज्यवादियों की एक महान उपलब्धि निरूपित किया। अत्यंत क्रूरतापूर्वक वीर नारायण सिंह को रायपुर के मुख्य चौराहे पर आम जनता और सैनिकों की उपस्थिति में गोलियों से भून डाला गया। इस प्रकार छत्तीसगढ़ के प्रथम स्वतंत्रता सेनानी वीर नारायण सिंह की शहादत हुई।

इसी तरह की शहादतें अंततः 15 अगस्त 1947 को देश की आजादी का पैगाम लेकर आयीं। लेकिन उनकी शहादत को विस्मृत करने का षड्यंत्र आजादी के बाद भी चलता रहा। जहाँ सन् 1857 के सैन्य विद्रोह के अनेक सेनानियों का वर्णन बड़ी प्रमुखता के साथ किया जाता रहा, वहीं वीर नारायण सिंह को सदैव विस्मृत करने का प्रयास किया गया। अज्ञानी इतिहासकार छत्तीसगढ़ की इस धरती के प्रथम शहीद के प्रति भले ही अन्याय करते रहे, परंतु इस अंचल का मेहनतकश किसान और मजदूर हमेशा उनको परम आदर और सम्मान की दृष्टि से देखता रहा। छत्तीसगढ़ के प्रथम किसान युद्ध के अग्रदूत वीर नारायण सिंह को छत्तीसगढ़ अपना लोकनायक मानता है। 19 दिसम्बर 1857 को हुई उनकी शहादत की स्मृति में आज प्रत्येक वर्ष उसी दिन इस महान शहीद का स्मरण किया जाता है और हर साल लाखों किसान-मजदूर इस शहीद दिवस पर एकत्र होकर भारत माँ के इस महान सपूत को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

अमर शहीद वीर नारायण सिंह का लाल जोहार का नारा आज फिर छत्तीसगढ़ में गुंजित-अनुगुंजित हो रहा है। शायद इस उद्घोष की प्रतिध्वनियाँ छत्तीसगढ़ की साम्राज्यवादी और पूँजीवादी शोषक शक्तियों की नींद हराम कर रही हैं। वीर नारायण सिंह एक ज्योति स्तम्भ की तरह इस नये जमाने की नयी मंजिल का पथ प्रशस्त कर रहे हैं।

❑

(म. प्र. लोक स्वतंत्रता संगठन द्वारा प्रेस की स्वतंत्रता के मुद्दे पर रायपुर में सन् 1981 में आयोजित एक परिचर्चा के उपलक्ष्य में प्रकाशित स्मारिका से साभार।)

आज छत्तीसगढ़ के पिछड़ेपन के कारण ये हैं :

1. औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा ऊपर से लादे गये आर्थिक सम्बंध और मशीनीकरण।
2. सामंती ग्रामीण अर्थव्यवस्था।
3. भूमि की निम्न-स्तरीय उत्पादकता।

छत्तीसगढ़ी कौन है ?

इस अभियान को उग्र अंधराष्ट्रवाद में विकृत होने से बचाने के लिए अभियान की शुरूआत में ही ' छत्तीसगढ़ी कौन है ? ' प्रश्न का उत्तर देना होगा और इस उत्तर को हमेशा ध्यान में रखना होगा। छत्तीसगढ़ी वे हैं, जो छत्तीसगढ़ के भौगोलिक क्षेत्र में रहते हों और ईमानदारी से मेहनत करके अपनी आजीविका का अर्जन करते हों; जो छत्तीसगढ़ की जनता की स्वाधीनता के लिए अपने प्राण देने के लिए तैयार रहते हों; जो आर्थिक रूप से या अन्य किसी भी प्रकार से सामंती वर्ग की वैज्ञानिक परिभाषा के अंतर्गत नहीं आते हों; जो पूँजीवादी सम्बंधों का खात्मा चाहते हों; जो लोकतांत्रिक छत्तीसगढ़ के विकास में बाधा नहीं डालेंगे; और जो विश्व सर्वहारा के प्रति भाईचारा का भाव रखते हों (देखिये पृ. 68)।

सर्वहारा की मुक्ति के लिए क्रांति एक नितांत ऐतिहासिक जरूरत है। अन्य प्रगतिशील तत्व भी समाज व्यवस्था में गुणात्मक परिवर्तन के रूप में क्रांति को जरूरी महसूस करते हैं। राष्ट्रीयता के आत्म-निर्णय का संघर्ष इस गुणात्मक परिवर्तन की दिशा में एक कदम है।

हम छत्तीसगढ़ में कैसे काम करते हैं ?

छत्तीसगढ़ में हम वर्तमान समाज व्यवस्था के खिलाफ एक संघर्ष में जुटे हुए हैं। हम इस व्यवस्था में एक गुणात्मक परिवर्तन लाना चाहते हैं। लेकिन हमारी विकल्प की अवधारणा क्या है ? कुछ साथी कहेंगे, " व्यवहार में विकल्प तो बाद में आयेगा, अभी तो आप मेरा भाषण सुनिये। " हम ऐसा नहीं कहते। हमारा ख्याल है कि केवल सक्रिय कार्यक्रमों के माध्यम से हम अपने उद्देश्य को हासिल कर सकते हैं। इस कारण, हम अपने प्रत्येक कार्यक्रम को चलाने की प्रक्रिया में विकल्प को ढूंढ़ते हैं। हमारी वर्तमान समाज-व्यवस्था का विकल्प एक ऐसा समाज है, जो जनता के नेतृत्व में होगा और जो जनवादी लोकतांत्रिक क्रांति के माध्यम से हासिल होगा। राष्ट्रीय अस्मिता के लिए किया गया संघर्ष इस प्रयास में सभी प्रगतिशील तत्वों को पहचानने एवं एकताबद्ध करने में मदद करेगा। एक सच्ची समाजवादी व्यवस्था को कायम करना इस प्रक्रिया का अगला कदम होगा।

□

(छमुमो की लोक साहित्य परिषद् के सौजन्य से।)

लागू हो, पर दक्षिण बिहार के आदिवासी झारखंड के मसले को अधिक महत्व देते हैं। इस संदर्भ में यह विडम्बना की बात है कि उसी जमशेदपुर में पिछले दिनों बड़े पैमाने पर साम्प्रदायिक दंगे हुए।

राजसत्ता आज भी चर्चिल के शब्दों को दोहरा रही है

स्थायी सरकार की मरीचिका से लोगों को बहलाने की कोशिश में अस्थिरता के विकल्प का जो खतरा दिखाया जाता है, वह साइमन कमीशन के ही निष्कर्षों को प्रतिबिम्बित करता है। **केंद्रीय सत्ता को मजबूत करने की जो अपील की जाती है, वह चर्चिल की उस धमकी की याद दिलाती है कि साम्राज्यवादी ताकतों के यहाँ से हटने पर वातावरण मौत की चीत्कारों से गूँज उठेगा।** क्या आज भी भारत की एकता केंद्र द्वारा थोपी गयी एक कृत्रिम अवधारणा है ? यदि केंद्र थोड़ी सी भी ढिलाई कर दे तो क्या देश टुकड़ों-टुकड़ों में बँट जायेगा ? रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने विविधता में जिस एकता की बात कही थी, वह कहाँ है ? बीच-बीच में राज्यों की ओर से अधिक स्वायत्तता की माँग करती हुई हल्की-फुल्की पुकारें सुनायी पड़ती हैं। इन पुकारों के पक्ष में भी कोई ठोस तर्क नहीं दिये जाते हैं। वास्तविक समस्याओं को चतुरतापूर्वक छिपा लिया जाता है। क्यों हर कोई राष्ट्रीय एकता के प्रश्न पर साइमन कमीशन को गुरु मान बैठा है ? क्यों नहीं हम सुस्पष्ट भिन्न राष्ट्रीय अस्मिताओं के अस्तित्व को मान लेते हैं और क्यों नहीं हम सामंतवाद और उपनिवेशवाद के बड़े सवालों से निपटने के लिए राष्ट्रीय अस्मिता के प्रति वफादारी से उपजी ताकतों को एकजुट करने के काम को महत्व देते हैं ?

भारतीय जनता के विभिन्न राष्ट्रीय समूह भारत के विशाल भौगोलिक क्षेत्र के विभिन्न भागों में रहते हैं। अन्यान्य राष्ट्रीय ऐतिहासिक कारणों के चलते, इन राष्ट्रीय समूहों का विकास असमान ढंग से हुआ है। कुछ राष्ट्रीय समूहों के लोग आर्थिक एवं सामाजिक रूप से बहुत ही आगे बढ़े हुए हैं, और दूसरी तरफ अन्य कुछ राष्ट्रीय समूहों के लोग हर मामले में पिछड़े हुए हैं। छत्तीसगढ़ में हरिजनों एवं आदिवासियों की स्थिति औसत छत्तीसगढ़ी से कहीं अधिक बदतर है। आदिवासी और हरिजन आबादी का 60 से 65 प्रतिशत हैं। इन कारणों से, जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है, छत्तीसगढ़ कुल मिलाकर एक अत्यन्त पिछड़ा हुआ अंचल है।

छत्तीसगढ़ के लोगों को स्वशासन का अधिकार देना होगा

स्टालिन की शिक्षाओं के अनुसार, प्रत्येक राष्ट्रीय समूह को उसके लोगों की इच्छाओं के अनुरूप अपने भविष्य को गढ़ने का हक है। छत्तीसगढ़ी राष्ट्रीयता को राज्य के रूप में स्थापित किया जा सकता है –

1. निकट भविष्य में, छत्तीसगढ़ में राष्ट्रीय समुदाय के स्वशासन के अधिकार के लिए संघर्ष तेज होगा। इसका कारण यह है कि छत्तीसगढ़ की विशाल आबादी कृषि पर निर्भर है और किसान, खास करके आदिवासी किसान, विशिष्ट रूप से उत्पीड़ित और शोषित हैं। चूँकि भूमि की समस्या राष्ट्रीयता के प्रश्न और उसके लिए चलाये गये आंदोलन से घनिष्ठता से जुड़ी हुई है, इसलिए किसान समुदाय अपनी पूरी ताकत के साथ यह लड़ाई लड़ेगा। यह पूर्वानुमान हमारे ऐतिहासिक अनुभव पर आधारित है। इसलिए

छत्तीसगढ़ की परम्परागत कृषि एवं उद्योग के ये कुछ उदाहरण हैं –

1. लकड़ी पर नक्काशियाँ : इस क्षेत्र में खूबसूरती से नक्काशी किये गये काष्ठ-शिल्प यहाँ के काष्ठ शिल्पकारों की उन्नत कलाकारी के प्रमाण हैं।
2. आज भी इस इलाके में छितराये हुए स्लैग के भंडार इस बात की गवाही देते हैं कि यहाँ उन्नत धातुकर्म का प्रचलन था। अगरिया के नाम से ज्ञात एक आदिवासी जाति के लोग लोहा बनाते थे।
3. कोस्टा जाति के लोग कपड़ा बनाते थे।
4. कोलार जाति के लोग महुए के फूल से शराब बनाते थे।
5. छोटे-छोटे पहाड़ी नालों को बाँधकर प्राचीन पद्धतियों से खेती के लिए पानी का उपयोग किया जाता था।
6. कृषि में गोटा-पद्धति का प्रचलन था। इसके अनुसार सारा समुदाय मिलकर समुदाय के विभिन्न सदस्यों की खेती में सहयोग करता था, उसके बदले में जमीन का मालिक समुदाय को उस दिन सामिष भोजन कराता था।
7. सामूहिक रूप से लोग शिकार करने जाते थे और शिकार में मारे गये जानवरों को सहभागियों में समान रूप से बाँट दिया जाता था। कुत्तों को भी उनका समान हिस्सा दिया जाता था।
8. पलाश के पेड़ों पर लाख उपजायी जाती थी।
9. कोसा कीड़ों से रेशम का उत्पादन किया जाता था और उससे रेशम के कपड़े बनाये जाते थे।
10. भारी मात्रा में तिलहन और दलहन का उत्पादन होता था।

छत्तीसगढ़ी समाज में कला एवं संगीत के माध्यम से अभिव्यक्ति की अच्छी क्षमता है। विवाहों, पर्व-त्योहारों एवं ' ज्योत्सना रात्रि समावेशों ' जैसे अवसरों पर लोग मिल-जुलकर समूहगान करते हैं। छत्तीसगढ़ी स्त्री-पुरुष सुआ, रीलो, बीहा, फाग आदि विभिन्न नृत्यों से अपनी खुशियों को व्यक्त करते हैं। छत्तीसगढ़ के इलाके में ग्राम देवताओं तथा बुद्धदेव, दन्तेश्वरी, कंकालीन और महामाया जैसे देवी-देवताओं की आराधना की जाती है।

कलचुरी राजवंश एवं उसके बाद मराठों ने तथा अंत में अंग्रेजों ने छत्तीसगढ़ पर राज किया। सन् 1947 तक बस्तर, राजनांदगाँव, लोहारा, रायपुर, रतनपुर, बिलासपुर आदि के राजे-रजवाड़ों के माध्यम से इस इलाके में शासन चलाया जाता था। इन राज्यों ने अपने विशिष्ट सांस्कृतिक योगदानों से जन-जीवन को समृद्ध एवं प्रभावित किया। ब्राह्मणवादी संस्कृति केवल सरकारी प्रशासन में पायी जाती थी, लेकिन ग्रामीण संस्कृति में निर्वाचित बैगाओं का स्थान प्रमुख होता था।

छत्तीसगढ़ में बोली जाने वाली प्रमुख भाषाएँ और बोलियाँ हैं – छत्तीसगढ़ी, हल्बी, गोंडी और उराँव। इनके अलावा कुछ लोग मारिया आदि बोलियाँ भी बोलते हैं। शहरों में संवाद की भाषा हिन्दी है।

अंग्रेजी राज के वक्त केवल एक सूती कपड़ा मिल राजनांदगाँव में और एक जूट मिल रायगढ़ में थी। आजादी के बाद सोवियत एवं अन्य विदेशी पूँजी की मदद से कई सारे उद्योग

अगर हममें एकता न हो तो कोई भी दुश्मन आकर हमें तोड़ सकते हैं। एकठो कंचि (केवचि)[1] को देखो। एक बच्चा भी इसको तोड़ सकता है लेकिन जब एक गट्ठा कंचि (केवचि) आ जाती है तो इसको तोड़ना बहुत ही मुश्किल है। इसलिए एकताबद्ध रहना है।

दो बिल्लियों में एक रोटी को लेकर खूब झगड़ा हुआ। क्योंकि वे एक दूसरे पर विश्वास नहीं करती थीं। एक बोलती थी मैं बाँटूंगी, दूसरी बोलती थी मैं बाँटूंगी। रास्ते में एक बंदर मिला। बंदर ने पूछा, क्यों झगड़ा करती हो। बंदर बोला, " लाओ, मैं बाँट देता हूं। " बंदर ने रोटी के छोटे-बड़े दो हिस्सों में टुकड़े किये। फिर बराबर करने के बहाने से निकाल कर खाता गया। वैसी ही पूरी रोटी खा गया। वैसे ही हम जब कभी आपस में बिल्लियों की तरह लड़ते हैं, तब बंदर की तरह सरकारी पुलिस, वकील, शोषक वर्ग हमारे पैसे खा जाते हैं। इसलिए हमें आपस में नहीं लड़ना चाहिए। अगर लड़ना है तो लड़ो दुश्मनों के साथ।

दुनिया में लड़ाई दो प्रकार की होती है। एक न्याय के लिए लड़ाई, दूसरी अन्याय के लिए लड़ाई। जब कोई गुंडा डाकू जनता को मारता है तो वह अन्याय की लड़ाई है और जब जनता गुंडा-डाकू को मारती है तो वह न्याय की लड़ाई होती है। हम न्याय की लड़ाई में खुशी से भाग लेते हैं और अन्याय की लड़ाई का विरोध करते हैं।

लड़ने से ताकत कभी कम नहीं होती है, बल्कि ताकत बढ़ती है। एक सुखियार आदमी के हाथ और एक मजदूर के हाथ में क्या फर्क है ? मजदूर के हाथ घन चलाते हैं, टंगिया चलाते हैं, इसलिए मजबूत होते हैं। हमारे हाथ की चमड़ी और पैर की चमड़ी में फर्क होता है। पैर हमेशा जमीन में चलकर, जमीन के साथ लड़कर मजबूत होता है जबकि हाथ की चमड़ी नरम होती है। हम लड़कर ही लड़ाई सीखेंगे। **बच्चा पैदा होते ही चलना चालू नहीं करता है, धीरे-धीरे चलना चालू करता है। बहुत गिरता है, फिर चलना सीखता है। हम भी लड़ाई लड़ते-लड़ते मजबूत होंगे — लड़ाई सीखकर लुटेरा राज खत्म करेंगे।**

❑

(नियोगी के घर से कांति गुहा नियोगी के सौजन्य से।)

" यही वह शोषक वर्ग है जिसके हाथ में दो किस्म के हथियार रहते हैं। एक बंदूक की गोली और दूसरी शक्कर-सी मीठी लगने वाली बातों की गोली। शोषक वर्ग पूरी तरह सोच-समझकर दोनों गोलियाँ चलाता है। हमारे अनेक कामरेड बंदूक की गोली का तो मुकाबला कर सकते हैं लेकिन जब दुश्मन हमारे कामगार भाइयों से कहता है, ' आप महान हैं। आप बहुत अच्छे हैं ', तब हमरि कामरेडों की आँखों का गुस्सा पानी में बदल जाता है। दिल नरम हो जाता है। सिर झुक जाता है। मीठी बातों की गोली से दुश्मन हमारे कामरेडों को मार गिराता है। इसलिए सावधान रहना जरूरी है। "

❑

(' छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा बुलेटिन ', क्र. 3, 17 जनवरी 1981, में प्रकाशित उपरोक्त लेख के संशोधित रूप में से साभार उद्धृत।)

---

[1] ' कंचि ' का बंगला में और ' केवचि ' का छत्तीसगढ़ी में अर्थ है ' पौधे की नरम टहनी। ' पांडुलिपि से स्पष्ट नहीं है कि नियोगी ने किस शब्द का उपयोग किया है। शायद दोनों का ही।

दी।"

इसके बाद हमें मुन्चु और गजपाल सिंह को लेकर गोलमर्रा की ओर जाना था। सोना झरिया को पार कर बस्ती वालों से बिदा लेकर हम लोग क्रांतिवीर नारायण सिंह के गाँव सोनाखान से बिदा लिये।

चलते-चलते मैंने गजपाल सिंह से प्रश्न किया, "सोनाखान में कब से सोना पाया जाता है ?" गजपाल सिंह उत्तर में बोले, "यह भी तो बहुत दिन की बात है। अपनी वंशावली का एक कागज आपको गोलमर्रा में दिखाऊँगा, जिसमें लिखा है कि सोनाखान गाँव का पुरातन नाम सिंहगढ़ था। सिंहगढ़ से सिंहखान एवं वर्तमान में सोनाखान बना। वंशावली पत्र में यह भी है कि बिंझवार खानदान के दो राजपुत्र रोजगार की तलाश में देश भ्रमण करने निकले। पहले फुलझर उड़ीयान में रहे। उस समय रतनपुर के हैहय राजाओं की शान की बात सुनकर हैहय राज दरबार रतनपुर में गये। राजा बहादुर ने मुलाकात करने के बाद उन राजपुत्रों को नौकरी में रख लिया। प्रशन ठाकुर फुलझर में रह गये। बिशाही ठाकुर रतनपुर के हैहय राजा के साथ ही रहे। यह 1549 ईसवी की घटना है। बिशाही ठाकुर ने एक कटार से तीन बाघ मारे थे। गढ़मला के युद्ध में बहादुरी दिखायी थी, जिससे खुश होकर हैहय राजा ने बिशाही ठाकुर को लवन इलाके में जागीर दी। बिशाही ठाकुर के बाद लुकार बरिहा, फिर संघिराय बरिहा, फिर धनऊ बरिहा एवं माधो बरिहा हुए। जब माधो बरिहा ने लोहे की जंजीर को एक हाथ से तोड़ दिया तो हैहय राजा ने उन्हें एक तालुका दिया। उसके बाद 1663 ईसवी में इन्हें 84 गाँवों का दीवान बना दिया गया। फिर आते हैं — 6. बचन बरिहा, 7. मुरारी बरिहा, 8. सिंघराय बरिहा और 9. गजप्रताप बरिहा। ये सब 84 गाँवों के दीवान थे। इनको दीवान सम्बंधी गढ़ के नाम से जाना जाता था।

फिर आये 10. फत्तेसिंह दीवान, 11. चंद्रसाय दीवान, 12. रुद्रसाय दीवान, 13. दलसाय दीवान एवं 14. रामसाय दीवान। रामसाय दीवान वीर नारायण सिंह के पिता थे।[1] उन्होंने भी 'खैर-ख्वाही' के लिए अंग्रेजों के साथ लड़ाई की थी।

"सबब खालत फिरंगी घर पाये, तीन खून माफ पाये।"

रातों-रात सफर कर जब हम रायपुर पहुँचे तो सूर्योदय की लालिमा पूर्व गगन में उदित हो रही थी। सूरज की किरण जय स्तम्भ चौक के ऊपर पड़ी। इसी जय स्तम्भ के पास ही नारायण सिंह का उबलता हुआ गरम खून गिरा था, देश की मुक्ति के लिए। आज यह जनपथ है, रोज लाखों लोग आना-जाना करते हैं। क्या ये सब लोग शहीद वीर नारायण सिंह के खून से सिंचित कुर्बानी के रास्ते पर चल रहे हैं !

❑

(पी. एल. एल. एस. द्वारा प्रकाशित पुस्तिका, 'छत्तीसगढ़ के किसान युद्ध का पहला क्रांतिकारी शहीद — वीर नारायण सिंह', 19 दिसम्बर 1979, से साभार।)

---

[1] देखिये पृ. 128 जहाँ शहीद वीर नारायण सिंह के पिता का नाम 'रामराय' बताया गया है। श्री हरि ठाकुर के लेखन और ब्रिटिश रपटों में भी इसी नाम (रामराय) का उल्लेख है। रामराय ने भी सन् 1819 में अंग्रेजी सत्ता के खिलाफ सोनाखान में ही सशस्त्र संघर्ष किया था। — स.

उठे, " लड़बोन ! " और फिर जोश में आकर नारायण सिंह के नेतृत्व में लोग चल पड़े कसडोल की ओर। सन् 1856 का साल था। नारायण सिंह ने अपने कबरे घोड़े पर सवार होकर नेतृत्व सँभाला। लोगों के साथ नारायण सिंह कसडोल पहुँचे। फिर एक बार कसडोल के ब्राह्मणों से कर्ज के रूप में अनाज माँगा। मिश्र लोगों ने अँगूठा दिखा दिया। नारायण सिंह से अब सहा नहीं गया। कोठी के धान को नारायण सिंह ने जब्त कर लिया और ग्रामवासियों के बीच जरूरत के आधार पर बाँट दिया। सन् 1856 की यह घटना एक क्रांतिकारी घटना थी। आर्थिक माँगों पर अनाज के लिए संघर्ष की जो मिसाल छत्तीसगढ़ के दूर एवं दुर्गम गाँवों में नारायणसिंह ने शुरू की उसकी मिसाल इतिहास में दुर्लभ है।

यह था जनता के लिए, जनता द्वारा संग्राम, जिसका नेतृत्व दिया था सोनाखान के आदिवासी नेता वीर नारायण सिंह ने। नारायण सिंह ने अंग्रेज शासकों को बाद में खबर भी दे दी। व्यापारी मिश्र ने भी अपनी क्षति का पत्र डिप्टी कमिश्नर को भेजा।

अंग्रेज कमिश्नर इलियट ने व्यापारी का शिकायत पत्र प्राप्त होते ही एक फौज की टुकड़ी के साथ नारायण सिंह के नाम से वारंट भेज दिया। परंतु फौजी टुकड़ी धोखा देकर ही नारायण सिंह को रायपुर ले जाने में सफल हुई। सन् 1857 में सारे देश में सिपाही गदर की आग जल रही थी। बंगाल के बैरकपुर से आग की चिनगारी भड़की। झाँसी की रानी, तात्या टोपे, नाना साहेब आदि ने सिपाही गदर का नेतृत्व सँभाला। रायपुर जेल में बैठकर वीर नारायण सिंह का दिल भी इस गदर में भाग लेने के लिए , अंग्रेज साम्राज्यवाद को देश से भगाने के लिए आंदोलित हो उठा। वे मौका पाकर जेल से भाग निकले। फिर सोनाखान। सोनाखान का नाम इसलिए सोनाखान पड़ा क्योंकि सोनाखान की प्रवाहमान जोंक नदी एवं पहाड़ी नाले झरिया में सोने के कण मिलते हैं। सोनाखान, नारायण सिंह के स्वप्न का सोनाखान।

हम झरिया पार कर गजपाल सिंह के डेरा पहुँचे।

नारायण सिंह को अनाज लूटने के आरोप में बंदी बनाया गया था। सोनाखान चुप नहीं बैठा था। सोनाखान और 18 गाँव के आदिवासी किसान गुस्से से तमतमाते रहे। जब नारायण सिंह आ गये तो गाँव-गाँव के आदिवासी अपने नेता को देखकर खुशी में दृढ़ निश्चय के साथ फिर संगठित हुए। विद्रोह का नगाड़ा गाँव-गाँव में बजने लगा।

बैठक हुई। नारायण सिंह के नेतृत्व में लोगों ने अंग्रेज साम्राज्यवाद के खिलाफ फिर से संग्राम के लिए इरादा बनाया। सिपाही गदर के इतिहास में छत्तीसगढ़ भी जुड़ गया। छत्तीसगढ़ के इतिहास में आदिवासियों के टपकते खून का इतिहास, देश को मुक्त करने का इतिहास, मुक्ति संघर्ष की शुरूआत का इतिहास। अंग्रेज भी चुप नहीं बैठे। उन्होंने भी अपनी तैयारियाँ कीं। इतना बताकर गजपाल सिंह ने दम लिया।

गजपाल सिंह और मुन्नु इतने में गुड़ की बनी हुई लाल चाय लेकर आये। मुन्नु , नारायण सिंह के दूसरे लड़के गम्भीर सिंह का नाती है। अभी उमर करीब 60 साल है। मुन्नु जी ने हमें बताया कि कुछ पुराने कागजात उनके पास हैं। वो एक टूटी हुई लकड़ी की पेटी लेकर आये। पेटी में दीमक लगा हुआ था। हमने कुछ पुरानी चिट्ठियों की कापियाँ देखी। गजपाल सिंह तब तक एक भरमार बंदूकनुमा लोहे की नली लेकर आये। यह बंदूक थी . . . . . इन बंदूकों को लेकर वीर नारायण सिंह अंग्रेजों के साथ लड़ते रहे। कुर्रूपाट डोंगरी से चढ़कर जब तक वीर

उठा – टी-टी-टी-टी-टी . . . .

मिसिर तोर का गति हो ही। सरकार तोर का गति हो ही।।
वीर नारायण सिंह आही। वीर नारायण सिंह आही।।

अर्जुनी ग्राम पार कर आप भुसरीपाली जायेंगे। भुसरीपाली के बाद सोनाखान। आज सोनाखान में 40-45 परिवारों की एक बस्ती है – सामने कुर्लपाट डोंगरी और बाजू में जंगल। जंगल के बीच कल-कल बहती हुई जोंक नदी। जंगली जानवर आज भी हैं – सौंमर, चीतल, खरगोश, शेर, चीता, कोटरी और हाँ, यहाँ आपको मयूर भी मिलेंगे। सोनाखान के पालतू जानवर बाकी छत्तीसगढ़ के पालतू जानवरों से अच्छी नस्ल के हैं। जंगलों में दूर-दूर तक हरी-हरी घास नजर आती है।

नारायण सिंह के पूर्वज गोंड जाति के थे। बताया जाता है कि इनके पूर्वज सारंगढ़ के जमींदार के वंश के हैं। गोंडमारू के डर से इनके पूर्वजों ने गोंड से बिंझवार जाति में जाति परिवर्तन किया। उन दिनों दिल्ली में पठानों का राज्य था। वर्तमान महाराष्ट्र के चाँदा जिले से लेकर वर्तमान उड़ीसा, सम्बलपुर, कालाहांडी तक गोंडवाना में आता था। जबलपुर, मंडला का राजपरिवार गोंड वंश का था। पठान सेनापतियों ने चाँदा जिले के कुछ गोंड राजाओं पर हमला कर दिया, बाद में गोंड राजाओं ने धर्म-परिवर्तन कर इस्लाम धर्म अपना लिया। उनके राज्यों के शासन का भार धर्म-परिवर्तित गोंडों को वापिस कर दिया गया। मुसलमान बने हुए गोंड राजाओं के साथ गोंडवाना के अन्य गोंडों की खूब दुश्मनी चली। धर्म-परिवर्तित गोंड राजाओं ने उन दिनों खूब अत्याचार किये। धर्म-परिवर्तित गोंड राजा उन दिनों 'गोंडमारू' के नाम से विख्यात थे।

बताया जाता है कि नारायण सिंह के पूर्वज सारंगढ़ में आये 'विशाही ठाकुर', सोनाखान जमींदारी वंश के पूर्वज थे। फतेनारायण (नारायण सिंह के पितामह) के समय में अंग्रेजों का कब्जा नहीं हो पाया था। नारायण सिंह के पिता का नाम रामराय था। नारायण सिंह के पास करीब 70 गाँवों का कब्जा था। उन गाँवों के नाम इस प्रकार हैं –

1. उपरानी, 2. तिलाईपाली, 3. दलदली, 4. गिंडोला, 5. कासी पठार, 6. खोकसा (खोसरा), 7. महराजी, 8. महकोनी, 9. नरधा, 10. घोबरा, 11. जमड़ी, 12. अर्जुनी, 13. सूखापाली, 14. हरदी, 15. मंडला, 16. तेंदूदहरा, 17. गाढ़ाडिही, 18. सेहरजोर, 19. कासीबहरा, 20. घरजरा, 21. बाराद्वार, 22. बारानडिही, 23. सोनाडिही, 24. पचपेड़ी, 25. कोहिमदा, 26. दोरी, 27. कुरूमाटा, 28. तवाई, 29. किताली, 30. केरीचुवा, 31. परसकोल, 32. कोदोमाल, 33. धनोरा, 34. पुराईपाली, 35. देवगढ़, 36. तेंदुचुआ, 37. जमधा, 38. देवपुर (छोटा), 39. देवपुर (बड़ा), 40. नवागाँव, 41. सुफलामाटा, 42. कोर्रा, 43. नर्रा, 44. सराईपाली, 45. बघमला, 46. सिरमाल, 47. मलुवा (छोटा), 48. मलुवा (बड़ा), 49. चीता पंडरिया, इनको छोड़ बाकी 18 गाँव और, जिनका हम पहले उल्लेख कर चुके हैं वे भी सम्मिलित हैं।

अंग्रेजी साम्राज्यवाद देशी राजा व जमींदारों के ऊपर भरोसा नहीं कर पा रहा था। वही तमाम राजाओं को दुश्मन बनाना चाहता था। साम्राज्यवाद ने एक नयी चाल चली। एक नये देशद्रोही दलाल वर्ग को ढूँढ़ निकाला। यह वर्ग था महाजन वर्ग। साहूकारों ने अंग्रेजों की मेहरबानी से समूचे देश में अपना जाल बिछा दिया। जमाखोरी, ब्याज का धंधा आदि से ये साहूकार वर्ग के लोग दिन दुगुना रात चौगुना बढ़ते गये। पहले गाँव में अनाज जमा रहता था। परंतु इन साहूकार

भी बहुत से लोग कहते हैं कि उन्होंने अब भी वीर नारायण सिंह को कबरे घोड़े पर सवार होकर घूमते हुए देखा है। मैंने उन व्यक्तियों से पूछा, " क्या तुममें से किसी ने नारायण सिंह को घोड़े पर सवार देखा है।" " नहीं, हमन नई देखे हावन।" कुर्रूपाट डोंगरी वीर नारायण सिंह की गाथाओं का जिंदा इतिहास है। एक जगह पर सरकारी विभाग द्वारा कुछ खुदाई हुई है। " यहाँ मुरकुट्टी ढेंकी घलोक हावे।" " यह मुरकुट्टी ढेंकी क्या चीज है ?", मैंने पूछा। इस पर उस वृद्ध ने जवाब दिया, " वीर नारायण सिंह डरपोक आदमी को सहन नहीं करते थे। अगर कोई व्यक्ति क्रांतिकारी वीर के पास आकर रोना-गाना करता था कि मुझे फलाँ बदमाश साहूकार ने सताया है, तो वे नाराज हो जाते थे एवं मुरकुट्टी ढेंकी में उसे सजा देते थे। और अगर कोई आकर उनसे ये कहता कि मैंने फलाँ बदमाश को मार भगाया या किसी अंग्रेज अफसर को चाँटे रसीद किये हैं, तो ये सुनकर वीर नारायण सिंह खुश हो जाते और खुशी से उस आये हुए व्यक्ति की पीठ ठोंकते और इनाम भी देते थे।" आज भी दशहरे के दिन वीर नारायण सिंह पहाड़ी से आवाज देते हैं। ग्रामवासियों के दिल में आज भी वीर नारायण सिंह जिंदा हैं। विभिन्न प्रकार की किंवदंतियाँ प्रचलित हैं।

कुर्रूपाट से देखने पर गाँव एक तस्वीर जैसा नजर आता है। उत्तर-पूर्व दिशा में दो बड़े-बड़े तालाबों, राजासागर (4 एकड़) और रानीसागर (3 एकड़), में जल की लहरें अठखेलियाँ कर रही हैं। गाँव के दक्षिण में एक और तालाब नन्दसागर है। यह तालाब भी वीर नारायण सिंह ने खुदवाया था। इस तालाब के किनारे वीर नारायण सिंह ने खुद अपने हाथों से वृक्षारोपण किया था। आज भी हमें आम, नीम, आदि वृक्ष हरे-भरे नजर आते हैं। राजा इसी तालाब में नहाया करते थे।

आज यहाँ बस्ती बनी हुई है। पुरानी बस्ती वहाँ नहीं थी। बस्ती तालाब से लगी हुई थी। महकम बस्ती एवं सोनाखान बस्ती एक साथ लगी हुई थी। अंग्रेजों ने सन् 1857 के दिसम्बर महीने में इन्हीं दो बस्तियों के ऊपर हमला एवं अत्याचार किया था। यह इतिहास और वीर नारायण सिंह के वीरतापूर्ण संघर्ष का इतिहास, इतिहासकारों के विश्वासघात के बावजूद एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को मालूम होता रहा और यह सिलसिला शताब्दियों तक चलता रहेगा। अंग्रेजों ने इस बस्ती को तीनों ओर से घेरकर आग लगा दी थी और बस्ती के बच्चों को पकड़-पकड़ कर दहकते हुए अंगारों में डाल दिया था। अंधाधुंध गोली चला कर सैंकड़ों लोगों को मौत के घाट उतार दिया था तथा बलात्कार जैसे कुकर्म भी करने से नहीं चूके। बस्ती खाली हो गयी। गाँव के लोग दूर-दूर तक जंगल और पहाड़ों को पार करते हुए भाग खड़े हुए थे। परंतु गाँव के लोग उन अत्याचारों को महत्व नहीं देते हैं। वे वीर नारायण सिंह के संघर्ष को ही याद करते हैं। ग्रामवासियों के आँसू सूख गये हैं। आज की पीढ़ियों में भी वह दुःख, घृणा और गुस्से में परिवर्तित होकर रह गया है। फिर मौका आयेगा — फिर वीर नारायण सिंह आयेगा, फिर संघर्ष शुरू होगा एवं विजय के बाद वीर नारायण सिंह का राज कायम होगा — एक शोषणविहीन, अत्याचारविहीन नया राज। आज वहाँ अंग्रेजी साम्राज्यवाद नहीं है। अंग्रेजी साम्राज्यवाद के मुनीम, कसडोल के साहूकार परिवार, जिनके पास वीर नारायण सिंह अकाल के दिनों में गरीब किसानों के लिए अनाज माँगने गये थे, जिन साहूकारों के खिलाफ वीर नारायण सिंह ने संघर्ष किया था, वही मिश्र परिवार के लोग आज काले अंग्रेजों की तरह हैं। साम्राज्यवाद के मुनीम बनकर कांग्रेसी राज्य चला रहे

सोने, खाने, पकाने के कमरे हैं जो खंडहर के रूप में मौजूद हैं। इसकी लम्बाई पच्चीस हाथ, चौड़ाई छह हाथ है। बाजू में आम, इमली, कलमी के वृक्ष हैं। इसके पूरब में बैठक-घर के खंडहर की लम्बाई आठ हाथ एवं चौड़ाई छह हाथ है। बाजू में कसही वृक्ष है।

सोनाखान के जमींदार के महल का बस यही अवशेष है जो अब तक बचकर आज तक टिका हुआ है। "49 गाँव के जमींदार का यही महल था ?" मैंने गाँव वालों के विचार जानने हेतु उनसे पूछा। गाँव वाले तपाक से बोले, "वे शोषण नहीं करते थे। उनका रहन-सहन सीधा था। उनका घर बाँस का बना हुआ था, जिसे छत्तीसगढ़ी में 'मदरी' कहा जाता है। बाँस की दीवारों में मिट्टी की छबाई की गयी थी, छत खपरे की थी।" मैंने फिर गाँव के लोगों से प्रश्नों की बौछार शुरू कर दी, "क्या आपको 49 गाँवों के नाम मालूम हैं ? रानी का नाम मालूम है ? गाँव में कोई 100 वर्ष का वृद्ध व्यक्ति जीवित है ?" गाँव वाले बोले, "यह बात तो पुरानी हो गयी है। फिर भी कुछ खबर आपको फुलवाड़ी के जगपाल सिंह से प्राप्त हो सकती है।"

मैंने फिर प्रश्न किया, "इस पहाड़ का क्या नाम है ?" गाँव के पश्चिम में स्थित एक छोटा-सा पहाड़। पहाड़ का नाम कुर्रूपाट डोंगरी है। यह वही डोंगरी है जहाँ वीर नारायण सिंह कुर्रूपाट देवता की पूजा करते थे। कुर्रूपाट की महत्ता यह है कि वहाँ एक छोटी-सी जगह पर बारहों महीने पानी मिलेगा। पहाड़ी के ऊपर कुर्रूपाट के पास का वह स्थल बड़ा ही मनोरम, बड़ा सुंदर है। कुर्रूपाट, बिंझवार जमींदार के राज देवता हैं। गाँव वालों ने बताया कि आज भी दशहरे उत्सव के दिन पुराने 18 गाँव एवं नये बसे गाँव के लोग कुर्रूपाट में पूजा के लिए आते हैं। गाँवों के नाम इस प्रकार हैं – (1) सोनाखान, (2) महकम, (3) बंगलापाली, (4) सारसडोल, (5) संडी, (6) वासीनपाली, (7) नयागाँव, (8) देवतराई, (9) मिरगीढा, (10) पठियापाली (नया), (11) बिरकुली, (12) वनपिया, (13) चिखली, (14) सालिहामाट, (15) जोगीटिपा, (16) कोहाकुड़ा, (17) चनहार, (18) मुसरीपाली, (19) करौंदी एवं (20) शुक्लाभाठा। ये गाँव हैं – जिन गाँवों के आदिवासी किसान, नारायण सिंह की एक आवाज में जमा हो जाते थे। सन् 1856-57 की महान क्रांति के दिनों में इन्हीं 18 गाँवों के किसानों ने अत्याचार सहे थे एवं प्रतिरोध किया था। इन्हीं 18 गाँवों के किसानों का खून सोनाखान के विस्तृत भूखंड में चू-चू कर गिरता रहा। बहादुर किसानों ने एक आजाद सोनाखान का स्वप्न देखा था एवं शोषण, अत्याचारविहीन समाज व्यवस्था की कल्पना की थी। क्या आज उन 18 गाँवों के किसानों के स्वप्न साकार हो गये हैं ? क्या उन 18 गाँवों में एक शोषणविहीन समाज-व्यवस्था स्थापित हो गयी ? कुर्रूपाट के देवता के सामने दशहरे के दिन पूजा करते समय आज के किसान क्या एक शोषणविहीन समाज की स्थापना के लिए शपथ लेते हैं ? बहुत सारे सवाल मेरे दिमाग में घूमते रहे।

कुर्रूपाट से देखो तो सोनाखान की पूरी बस्ती दिखायी देती है। सोनाखान के चारों ओर पहाड़ी ही नजर आती है। कुर्रूपाट डोंगरी के पश्चिम में लगा हुआ है पहाड़ सुपकोण एवं बहेरा खोल (खोल जंगल), सामने पूरब की ओर बिलाईगढ़ वन-क्षेत्र, लामी डोंगरी, सराईपाली डोंगरी, काठखलीया डोंगरी, मँझला मंडला और अन्य छोटे-छोटे पहाड़। किंवदंतियाँ अनेकों हैं।

कुर्रूपाट डोंगरी में ही वीर नारायण सिंह ज्यादा समय रहते थे। उनके पास एक कबरा घोड़ा था। वे अक्सर घोड़े पर सवार होकर गाँव-गाँव घूमा करते थे। किसानों के दुःख-दर्द सुना करते थे, समस्याओं का हल बताते थे और उनकी यथाशक्ति मदद भी किया करते थे। आज

आज की पीढ़ी और वीर नारायण सिंह की वसीयत [1]

सन् 1979 में नियोगी और यूनियन के तत्कालीन अध्यक्ष सहदेव साहू शहीद वीर नारायण सिंह का इतिहास खोजने एक शोध-यात्रा पर निकले। वे जंगलों से पैदल गुजरते हुए रायपुर जिले की वर्तमान कसडोल तहसील के ग्राम सोनाखान (नारायण सिंह का गाँव) तक पहुँचे और रास्ते भर लोगों से जानकारी बटोरी। उस शोध-यात्रा का नियोगी द्वारा लिखित विवरण 19 दिसम्बर 1979 को यूनियन की ओर से रायपुर में आयोजित प्रथम शहीद वीर नारायण सिंह दिवस के उपलक्ष्य में जारी की गयी स्मारिका में छपा था। उसी स्मारिका में छत्तीसगढ़ के प्रसिद्ध कवि-लेखक श्री हरि ठाकुर एवं रविशंकर विश्वविद्यालय (रायपुर) के इतिहासवेत्ता डॉ. रमेन्द्र नाथ मिश्र के भी वीर नारायण सिंह पर लेख छपे थे। नियोगी का लेख यहाँ प्रस्तुत हैं जो इतिहास में शोध की एक उम्दा मिसाल है। — स.

सोनाखान के वीर शहीद, नारायण सिंह की जन्म-भूमि, कर्म-भूमि एवं वर्तमान में क्रांति की तीर्थ-भूमि, सोनाखान जाकर उनके परिवार से मुलाकात करने की जिम्मेदारी संस्था की ओर से मुझे एवं सहदेव साहू को सौंपी गयी। सोनाखान छत्तीसगढ़ के पूर्व की ओर वर्तमान में रायपुर जिले की तहसील बालोदा बाजार में स्थित है। जंगलों के बीच एक आदिवासी-बहुल गाँव है। कँवर, धनहार, बिंझवार एवं गोंड जाति के लोग इस बस्ती में रहते हैं। सोनाखान पंचायत भी है। सोनाखान पंचायत में भुसरीपाली, कसौंदी, महकम, बंगलापाली गाँव हैं।

हम लोग रायपुर से बालौदा बाजार के लिए रवाना हुए। बालौदा बाजार के बाद कसडोल जाना था। कसडोल जाने के लिए विशाल महानदी को पार करते हुए हमें परेशानियों का सामना करना पड़ा और इस तरह हम कसडोल पहुँचे। यह वही कसडोल है, जहाँ के व्यापारियों के विरुद्ध सन् 1856 में शहीद वीर नारायण सिंह ने घोर संघर्ष किया था। आज आजादी के 32 साल बाद भी वीर नारायण सिंह के परिवार के लोग नितांत गरीबी में दिन व्यतीत कर रहे हैं। परंतु वह व्यापारी घराना जिसने शहीद नारायण सिंह के सपनों को चकनाचूर करने के इरादे से वीर नारायण सिंह को कारागार में पहुँचा दिया था, आज भी कसडोल में गगनचुम्बी इमारत बनाकर इठला रहा है तथा गरीब किसानों का बेरहमी से शोषण कर रहा है। इस व्यापारी घराने के लोग आज कांग्रेसी सफेदपोश नेता बने हुए हैं।

सोनाखान जाने के लिए कसडोल होकर ही जाना होगा। हम अपनी यात्रा जारी रखते हुए सुनसान रास्ते से गुजरते हुए कसडोल से आगे निकल पड़े। सामने जोंक नदी मिली, जिसे पार कर हम दक्षिण की ओर चल पड़े। कुछ दूर जाने के पश्चात् जंगली क्षेत्र प्रारम्भ हुआ। अचानक एक स्थान पर हम चलते-चलते ठिठक कर रुक गये। हमने देखा कि वह जगह गिंडोला के पास

---

[1] सोनाखान की शोध-यात्रा के दौरान नियोगी द्वारा लिखी गयी डायरी की मदद से मूल लेख की कुछेक विरोधाभासी जानकारियों एवं गाँवों के नामों की अशुद्धियों को सुधारा गया है। — स.

विभागीयकरण खदान मजदूरों के बच्चों को बोझ की जगह राष्ट्र की सम्पदा बना देता है

भिलाई स्टील प्लांट ने 12 जून 1978 से अपनी हिर्री (जिला बिलासपुर) स्थित बंधक डोलोमाइट खदान के निजी ठेकेदारों व सहकारी समितियों के तहत कार्यरत 2,700 मजदूरों का विभागीयकरण (नियमितिकरण) करने का निर्णय लिया। ये मजदूर वर्षों से 'ओव्हरबर्डन' हटाने, ड्रिलिंग, रेजिंग, सॉर्टिंग, लोडिंग आदि विभिन्न कामों को ठेकेदारी प्रथा में कर रहे थे। इनका विभागीयकरण ट्रेड यूनियन आंदोलन की संघर्ष यात्रा में एक उल्लेखनीय मील-पत्थर माना जाता है। इस निर्णय के उपलक्ष्य में भिलाई स्टील प्लांट ने एक समारोह का आयोजन किया था। इस अवसर पर प्रबंधन ने एक स्मारिका जारी की थी जिसमें छपा नियोगी का लेख यहाँ प्रस्तुत है। — स.

भिलाई इस्पात संयंत्र के प्रबंधकों तथा सरकार को, हिर्री की डोलोमाइट खदानों का विभागीयकरण करने के लिए बधाई।

ठेकेदारी व्यवस्था।

इसके पहले यह खदान ठेकेदारी मजदूर व्यवस्था द्वारा संचालित होती थी, जिसके दो प्रमुख दुष्प्रभाव थे —

1. इससे मजदूर वर्ग का सामाजिक और आर्थिक स्तर नीचा बना रहता है, और
2. उत्पादन के वैज्ञानिक तरीके नहीं अपनाने से उत्पादन क्षमता बढ़ाने के लक्ष्यों के प्रति उदासीनता बनी रहती है। इस व्यवस्था में सामंतवाद के लक्षण दिखायी पड़ते हैं।

इस व्यवस्था ने मजदूरों का केवल दमन किया है, जिसमें केवल शोषण की ही प्रधानता है। इस व्यवस्था में एक लम्बे समय तक उलझे रहने के कारण मजदूर वर्ग इससे निराश हो चुका है।

मजदूरों और उनके परिवार वालों के लिए स्वास्थ्य सहायता की कोई व्यवस्था नहीं है। छुट्टियों के कोई नियम उन पर लागू नहीं होते थे। मजदूर महिलाओं को प्रसुति सम्बंधी सुविधाएँ कभी भी नहीं दी गयी थीं। कुल मिलाकर पूरी प्रबंध व्यवस्था घटिया थी। और इसमें से जो चीज प्रचुर मात्रा में मिलती थी वह थी — ठेकेदारों की निरंकुशता और दमन। बड़ा ठेकेदार, छोटे ठेकेदारों या सरदारों के माध्यम से मजदूरों की आवाज दबाने में समर्थ होता था। वह न केवल मजदूरों का आर्थिक शोषण करता था, वरन् उनको मध्ययुगीन सामंतवादी बंधनों से भी बाहर नहीं निकलने देता था। ठेकेदार का ठेका एक निश्चित अवधि के लिए ही होता है। इसी वजह से ठेकेदार ठेका-अवधि में न्यूनतम लागत और अधिकतम उत्पादन द्वारा अधिकतम मुनाफा कमाने में लगा रहता है। खदानों के विकास के लिए वैज्ञानिक खनन पद्धतियों को अपनाने की ओर कोई ध्यान

कब तक किसान-मजदूरों की छाती से लहू टपकता रहेगा ?

भारत के इतिहास में मजदूरों के ऊपर गोली चालन की यह पहली घटना नहीं है। इससे पहले भी इस देश की धरती पर अनेकों बार मजदूरों, किसानों का लहू टपकता रहा है। अंग्रेज साम्राज्यवादियों के जमाने में क्रांतिकारियों पर बार-बार गोली बरसायी गयी थी। कांग्रेसी राज में श्री जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में तेलंगाना के किसानों पर गोली चली। काकद्वीप की गर्भवती नारी अहिल्या को गोलियों से भून दिया गया। राजनांदगाँव के कपड़ा मिल के दो मजदूर नेताओं की हत्या भी बंदूक से नेहरू के जमाने में कर दी गयी। इंदिरा गांधी के शासनकाल में हजारों क्रांतिकारियों को नक्सलपंथी बताकर गोली से उड़ा दिया गया। तुर्कमान गेट, तेलंगाना, भोजपुर आदि में कई बार इंदिरा सरकार ने गोली चलवायी थी।

जनता पार्टी जेल में बनी थी। आम जनता को आशा थी कि यह सरकार बात-बात पर बंदूक नहीं चलवायेगी, परंतु अभी 3 महीने भी नहीं बीत पाये थे कि दल्ली राजहरा में गोली चलाकर इन कसाइयों ने अपना चेहरा उजागर कर दिया। फिर एक-के-बाद-एक गोलीकांड की घटना अखबारों में छपने लगी। शासन ने बोकारो में एच. एस. सी. एल. (एक सार्वजनिक उपक्रम) के मजदूरों पर, कानपुर की स्वदेशी कॉटन मिल के मजदूरों पर, बैलाडीला में खदान मजदूरों पर, भोजपुर में क्रांतिकारियों पर, बहरागुड़ा, छोटा नागपुर, संथाल परगना व अन्य कई जगहों के आदिवासियों पर और जमशेदपुर में अल्पसंख्यकों पर गोली चलाकर अपने हाथ खून से रंग लिये। पश्चिम बंगाल में सी. पी. एम. की सरकार ने भी गोली चलाकर यह बता दिया कि वह भी मजदूरों, किसानों की हत्या के मामले में किसी से पीछे नहीं है। आज नागालैंड में बागी नागाओं से निपटने के नाम पर, जनता सरकार ने पहाड़ी जातियों पर हत्या, बलात्कार आदि जुल्म का रिकार्ड कायम किया है, जिसके बारे में सुनकर ही सभ्य इंसानों का हृदय काँप उठता है।

इसलिए आज प्रश्न उठता है कि कब तक कानून और व्यवस्था के नाम पर हत्या, बलात्कार आदि अत्याचार बेरोकटोक चलते रहेंगे ? क्या इस अत्याचार, शोषण, उत्पीड़न और जोर-जुल्म का अंत कभी नहीं होगा ?

इन बातों को समझने के पहले राजसत्ता के बारे में सटीक धारणा बनानी होगी। राजसत्ता वह मशीनरी है जिससे किसी वर्ग विशेष द्वारा दूसरे वर्गों को दबाकर रखा जाता है। आज जेल, पुलिस, फौज वह संगठन बन गया है जो कानून की आड़ लेकर अपने अत्याचारों की सफलता से आतंक कायम रखता है और वही आतंक लुटेरों को लूट-खसोट का राज चलाने में सहायक बनता है। जनता को आतंकित करने की प्रक्रिया में 144 धारा जारी करना, कर्फ्यु लागू करना, अश्रुगैस छोड़ना, लाठी चार्ज करना और गोली चालन तथा आगजनी आदि होते हैं। इस आतंक को 'श्वेत आतंक' कहा जाता है। अगर यह आतंक कायम नहीं होता तो अपने देश में सामंतवादी दलाल-पूँजीपति वर्ग ने जो लूट-खसोट की धूम मचा रखी है वह सब नहीं चल पाता। पूँजीपति की लूट-खसोट सिर्फ 'श्वेत आतंक' के भरोसे ही चल सकती है।

पूँजीपति 'श्वेत आतंक' का प्रयोग क्यों करता है ? वह इसलिए कि पूँजीपति-सामंतवादी लुटेरों की संख्या, बाहुबल एवं उत्पादन में उनकी उपयोगिता इतनी कम है कि वे हमेशा अस्त्र बल से ही अपना बचाव एवं आक्रमण जारी रख सकते हैं। उदाहरण के तौर पर कोई गुंडा बगैर

वर्ग, क्रांतिकारी वर्ग को कुचलने के लिए जी-तोड़ कोशिश में जुटा हुआ है। इस कोशिश का एक प्रयास था — आपात्काल। इंदिराजी के नेतृत्व में आपात्काल लागू कर मजदूरों के तमाम अधिकार छीन लिये गये। बोनस का हक छीन लिया गया। जोर-जुल्म का राज कायम हुआ। दमन, अत्याचार प्रतिदिन की कहानी बन गये। दल्ली राजहरा के खदान मजदूर आपात्काल के आखिरी चरण में अत्याचार के प्रतिरोध में सड़क पर उतर आये।

बोनस की माँग को लेकर एक स्वतः स्फूर्त आंदोलन की शुरूआत हुई। 3 मार्च 1977 के बोनस आंदोलन ने खदान मजदूरों के दिलों में बंदोबस्त को तोड़कर आगे बढ़ने की प्रबल इच्छा का संचार किया। दलाल संशोधनवादी नेतृत्व को मजदूरों ने अस्वीकार किया, अफसरशाहों की तानाशाही के खिलाफ मजदूरों ने युद्ध छेड़ दिया।

जहाँ अत्याचार, वहाँ प्रतिरोध

आर्थिक दृष्टि से बोनस आंदोलन में मजदूर कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाये, फिर भी खदान मजदूरों ने इज्जत की लड़ाई में विजय प्राप्त की। उत्पादक शक्ति (मजदूर वर्ग) ने गैर-उत्पादक शक्तियों का मुकाबला किया। संघर्ष के बाद व्यापक एकता कायम हुई। संशोधनवादी यूनियनों, इंटक व एटक, में फँसे मजदूरों ने दोनों यूनियनें तोड़कर एक संगठन बनाकर महान एकता कायम की।

सी. पी. आई. एवं कांग्रेसी अपने संगठन टूटते देखकर परेशान हुए। दलाल यूनियनों के चक्कर से मजदूरों को मुक्त होते देखकर मैनेजमेंट बौखला उठा एवं शैतानों की साँठ-गाँठ का एक मंच तैयार हुआ। एटक-इंटक, मैनेजमेंट एवं अर्द्ध-सामंतवादी ठेकेदारों ने मिलकर ' सब ध्वंस करो, सब खत्म करो, सब जला डालो ' के साम्राज्यवादी तौर-तरीकों का इस्तेमाल करना शुरू किया। हर तरीके से मजदूरों को दबाने की यह नीति शैतानों ने अपनायी।

मजदूर इन दबावों के सामने दबे नहीं, अत्याचार के सामने झुके नहीं एवं अपने अधिकार प्राप्ति के संघर्ष में डटकर भाग लिया।

निर्मम ठेकेदारी, लूट-खसोट का जमाना पहले से ही जारी था। मजदूरों ने ठेकेदारी प्रथा पर हमला बोला। ठेकेदारी लूट-खसोट के हर पहलू पर एक के बाद एक तीव्रतम संघर्ष चलता रहा। बोनस की लड़ाई में आर्थिक विजय नहीं मिली तो क्या हुआ ? बाकी तमाम संघर्ष में एक के बाद एक विजय मिलती गयी। हर विजय से खदान मजदूरों का हौसला बुलंद होता गया। मजदूर तमाम कानूनी हकों को पहचानते गये। फाल बैक वेजेस एवं आवास सुधार की माँगों को लेकर फिर संघर्ष शुरू हुआ। तमाम वाद-विवाद, खुराफातियों की हर साजिश को चकनाचूर करते हुए मजदूर आगे बढ़े एवं आखिर 31 मई 1977 के ऐतिहासिक संघर्ष के बाद मजदूरों की विजय हुई। दुश्मनों ने घुटने टेक दिये। माँगों को सहायक श्रम आयुक्त के समक्ष लिखित रूप से स्वीकार कर लिया गया।

परंतु बाघ कभी घास नहीं खाता है। ठेकेदार दलाल, सी. पी. आई. एवं कांग्रेसी यूनियनों के साथ मिलकर फिर खुराफात करते रहे, लिखित रूप से माँग स्वीकार करने के बावजूद अमल में नहीं लाना चाहा। ' माँग पूरा नहीं करेंगे ', यह शासन को बताकर ठेकेदार नदारद हो गये।

केंद्र में जनता सरकार आपात्काल के बाद जनता को विभिन्न प्रकार के, मुँह में पानी

5. प्लांट कार्य क्षमता में वृद्धि एवं अधिक उत्पादन-लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है। **बीस लाख टन उत्पादन-लक्ष्य की जगह चौबीस लाख टन उत्पादन-लक्ष्य प्राप्त हो सकेगा।**
6. अगर प्लांट के आसपास एक छोटा-सा स्टैकिंग यार्ड एवं ब्लेंडिंग यार्ड बनाया जाये तो प्रति शिफ्ट काम के शुरू एवं आखिरी में जो ' एक + एक = दो घंटे ' का कार्य का नुकसान होता है, इस नुकसान की बचत हो सकती है। इससे प्रति वर्ष चालीस लाख टन अधिक उत्पादन हो सकेगा। दूसरा फायदा यह होगा कि प्लांट ब्रेक डाऊन, शट डाऊन आदि रहने पर टिप्पर ट्रकों को बेकार खड़े रहना नहीं पड़ेगा। अगर स्टैक यार्ड से प्लांट के बंकर तक लौह अयस्क को ले जाने हेतु डम्पर (प्रति डम्पर 15 लाख रुपये)-सह-रेल कन्वेयर सिस्टम लागू किया जाये तो उसमें भी उत्पादन की कीमत में घटाव हो सकेगा।
7. ' जॉ क्रशर ', शावेल, डम्पर आदि इस कोन्डे प्लांट के लिए खरीदे गये हैं, उनका भी सही उपयोग एवं उत्पादन कीमत में कटौती।

दल्ली एवं राजहरा मशीनीकृत (मेकेनाइज्ड) माईन्स से उत्पादित लौह अयस्क की उत्पादन कीमत को अलग-अलग न करके दोनों की औसत उत्पादन कीमत निकालनी चाहिए, क्योंकि राजहरा मशीनीकृत माईन्स काफी दिन पहले से ही उत्पादन में लगी हुई है। इसलिए राजहरा प्लांट के शावेल, क्रशर, डम्पर आदि का रीप्लेसमेंट का समय करीब-करीब आ गया है। दल्ली मशीनीकृत माईन्स के लिए खरीदे हुए जॉ क्रशर, शावेल आदि को अगर खपाया जाना है तो राजहरा मशीनीकृत माईन्स को सस्ती कीमत में यह सब कीमती मशीनरी मिल जायेगी जिससे उत्पादन कीमत में उल्लेखनीय कटौती होगी।

इस पद्धति में इस्पात संयंत्र के सिंटरिंग प्लांट एवं ब्लास्ट फर्नेस की जरूरत के मुताबिक अच्छी क्वालिटी एवं उचित साइज में लौह अयस्क भेजना सम्भव होगा एवं किसी भी प्रकार की छँटनी की सम्भावना नहीं रहेगी।

यह मानवता का प्रश्न भी है

जिन खदान मजदूरों ने कड़ी मेहनत से इस्पात संयंत्र के लिए करोड़ों टन लौह अयस्क की पूर्ति की, जिन खदान मजदूरों की बदौलत भिलाई इस्पात संयंत्र ने करोड़ों रुपयों का मुनाफा कमाया, करोड़ों रुपयों की विदेशी मुद्रा अर्जित की एवं जिन खदान मजदूरों के ही सहयोग से इस्पात संयंत्र के कुशल श्रमिकों ने इस्पात संयंत्र की कार्य कुशलता के विश्व रिकार्ड को पार किया, **उनकी छँटनी करना आज मानवीय दृष्टि से किसी भी हालत में शोभा नहीं देता है।** यह सम्पूर्ण देशवासियों की जिम्मेदारी है कि दस से अट्ठारह वर्षों से कार्यरत खदान मजदूरों के हाथों को बेरोजगार न होने दें एवं उनकी संतानों के भविष्य, काम की गारंटी छीन न लें। अर्द्ध-मशीनीकृत पद्धति में मानवीय मूल्यों की रक्षा करते हुए कम लागत पर बेहतर उत्पादन का लक्ष्य पाया जा सकता है।

हम यह कहना चाहते हैं कि कोई भी नया कदम जनता की स्थिति पर निर्भर होना चाहिए। मशीनीकरण से आज अगर यहाँ की जनता में छँटनी और भुखमरी आती है तो यह कदम गलत है। उदाहरण के लिए हम परिवार नियोजन लें। परिवार नियोजन जनता के हित में हो सकता है। दुनिया के कई देशों में — पूँजीवादी और साम्यवादी दोनों में — इसका उपयोग

7. एक्सकेवेटिंग – शावेल द्वारा, 8. ट्रांसपोर्टिंग – डम्पर[1] द्वारा, 9. 1,000 मि.मी. के बोल्डर का 'जॉ क्रशर' द्वारा क्रशिंग व साइजिंग, 10. कोन क्रशर के जरिये री-साइजिंग और 11. स्क्रीनिंग, सॉर्टिंग एवं वाशिंग।

इसी रूप से पूर्ण मशीनीकरण से काम होने का प्रस्ताव किया गया है। अर्द्ध-मशीनीकरण में पहले एवं दूसरे मुद्दे में कोई परिवर्तन नहीं होगा। तीसरे मुद्दे (सड़क) में अर्द्ध-मशीनीकरण में सिर्फ टिप्पर ट्रक[1] चलने लायक कम चौड़ाई की सड़क की जरूरत है। ब्लाक प्रीपरेशन में भी कोई परिवर्तन नहीं होगा। ड्रिलिंग में हेल्को एवं जैक हैमर ड्रिलिंग का प्रयोग किया जायेगा। शावेल एक्सकेवेटर की जगह पर खदान मजदूर रेजिंग का काम करेंगे तथा 100 मि.मी. तक साइजिंग करेंगे, किंतु मैन्युअल पद्धति के मुताबिक 'वेस्ट' एवं 'फाइन्स' को अलग-अलग न करके एक ही साथ स्टैकिंग करेंगे जिसकी ट्रांसपोर्ट मजदूर टिप्पर ट्रकों में ढुलाई कर प्लांट के आस-पास किसी जगह पर स्टैकिंग करेंगे। फिर लौह अयस्क (100 मि.मी.) 'फाइन्स' एवं 'वेस्ट' को डम्पर अथवा कन्वेयर के जरिये क्रशिंग प्लांट में डालकर कोन क्रशर से होते हुए स्क्रीनिंग, सॉर्टिंग एवं वाशिंग करने के बाद उसे इस्पात संयंत्र की जरूरत के मुताबिक भेजा जायेगा। इस पद्धति में 100 मि.मी. तक साइजिंग 'मैन्युअली' होने के कारण 'जॉ क्रशर' का प्रयोग नहीं करना पड़ेगा तथा 'मैन्युअली रेजिंग' किया हुआ 'फाइन्स' भी सिंटरिंग प्लांट के लिए इस्तेमाल किया जा सकेगा।

हमारे प्रस्ताव के मुताबिक –

1. मशीनीकरण के लिए शावेल-सड़क के बदले टिप्पर ट्रक चलने लायक सड़क बनाने में खर्च कम होगा।
2. पूर्ण मशीनीकृत पद्धति की [illegible] एल. डी. एस. एवं ड्रिलिंग मशीनों की जगह हेल्को एवं जैक हैमर ड्रिल का इस्तेमाल करने पर ड्रिलिंग मजदूरों की छँटनी तो रोकी जा सकेगी। साथ-साथ हेल्को ड्रिलिंग जिसकी कीमत स्पेयर पार्टस सहित 1,00,000/- रुपये है, वहीं [illegible] 61 [illegible] जैसी महँगी ड्रिलिंग मशीनों की जरूरत नहीं होगी।
3. 'जॉ क्रशर' एवं एक्सकेवेटर [illegible] नहीं करने पर रेजिंग काम में लगे हजारों मजदूरों की छँटनी को रोका जा सकेगा। इस पद्धति से खर्च में उल्लेखनीय कटौती, जो कि बाद में बताया जा रहा है, होगी।
4. डम्पर का इस्तेमाल न कर उसकी जगह टिप्पर ट्रक इस्तेमाल करने पर ट्रांसपोर्टिंग मजदूरों की छँटनी रोकी जा सकेगी। दूसरी बात, जो कुछ थोड़ा-बहुत डम्पर, डोजर, शावेल का इस्तेमाल होगा उसमें खदान में अभी कार्यरत ट्रक ड्राइवरों एवं हेल्परों को प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) देकर डम्पर ऑपरेटर, डोजर ऑपरेटर, शावेल ऑपरेटर, सीनियर शावेल एवं असिस्टेंट एक्सकेवेटर इंजीनियर आदि पदों पर नियुक्त किया जा सकेगा, जिससे ट्रक ड्राइवरों एवं हेल्परों की छँटनी रोकी जा सकेगी।
5. दल्ली या कोन्डे प्लांट को लौह अयस्क की सॉर्टिंग, स्क्रीनिंग, वाशिंग आदि के काम में लगाया जा सकेगा जिससे लौह अयस्क की क्वालिटी इस्पात संयंत्र की जरूरत के मुताबिक नियंत्रित की जा सकेगी।

---

[1] अर्द्ध-मशीनीकृत खदान में 5 टन क्षमता की टिप्पर ट्रकों के जरिये लौह अयस्क की ढुलाई प्रस्तावित की गयी है जबकि पूर्ण मशीनीकृत पद्धति में 50 टन क्षमता वाली भीमकाय डम्परों का उपयोग होता है।

हाथ को काम दिया जायेगा। यह बात सच है कि अगर वर्तमान सरकार देश में उत्पादन पद्धति में परिवर्तन कर उत्पादन बढ़ाने का कार्यक्रम नहीं लेती है तो न तो बाजार भाव पर रोकथाम लगा सकती है और न ही देश के करोड़ों बेरोजगारों के लिए खाने-पीने का प्रबंध कर पायेगी। देश की हालत और बदतर हो जायेगी। देश में करोड़ों लोगों के लिए रोजगार का प्रबंध करना तो दूर रहा, आज यह नौबत आ गयी है कि जिन लोगों के पास काम है उनको भी काम से वंचित करने का षड्यंत्र रचा जा रहा है। छँटनी रोकने एवं बेरोजगारी खत्म करने के लिए दो प्रमुख मुद्दों को स्वीकार करना होगा —

1. जनता की क्रय शक्ति को बढ़ाने के साथ-साथ उत्पादन को बढ़ावा देना होगा।
2. इस पिछड़े हुए देश में मशीनीकरण का उपयोग न करके, मनुष्य की श्रम-शक्ति का पर्याप्त उपयोग करना पड़ेगा।

जहाँ तक पहले मुद्दे का सवाल है, उत्पादन बढ़ाने के मामले में सरकार की तरफ से खूब जोर-शोर से प्रचार किया जाता है, परन्तु यह प्रचार जनता की आँखों में धूल झोंकने के बराबर है। सरकार का उत्पादन बढ़ाने के नारे का मतलब है कि मजदूर का उपयोग सिर्फ उत्पादन में ही होना चाहिए। उत्पादन की गुणवत्ता, उत्पादन की मात्रा, उत्पादन की खपत, उत्पादन का वितरण एवं उत्पादन में जुटे हुए मजदूरों के जीवन के बारे में सोचने का अधिकार सिर्फ पूँजीपति एवं शोषण-दमन की मशीन सरकार को ही है।

पूँजीपति यह चाहता है कि कम उत्पादन कर ज्यादा पैसा बटोरा जाये। इसलिए वह उत्पादन को बढ़ाता नहीं है। बल्कि भारत में, जहाँ पूँजीपति और शोषण-दमन की मशीन सरकार विदेशियों की मदद में लगी हुई है, वहाँ तो उत्पादन बढ़ाने का प्रश्न ही नहीं उठता है।

देश की राष्ट्रवादी पूँजी को चाहिए कि वह देश में आम जनता की क्रय क्षमता बढ़ाने के लिए निर्णायक रास्ते में चले एवं उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए ठोस कारगर कदम उठाये।

मशीनीकरण वाले क्या कहते हैं ?

1. मजदूरों की संख्या (श्रमिक योगदान) में कमी, एवं
2. उत्पादन की गुणवत्ता में सुधार।

जहाँ तक पहले हिस्से — श्रमिक योगदान यानी मानव संख्या — का प्रश्न है, हमारे जैसे गरीब देश में मशीनीकरण की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि इससे लाखों जन समुदाय के हाथ से काम छीन लेने जैसी कठोर बात सामने आयेगी। इसलिए मशीनीकरण का हर स्तर पर विरोध करना होगा। मशीनीकरण से लोग बेरोजगार होंगे। क्रय क्षमता और कम होगी। बेरोजगारों की संख्या में और बढ़ोतरी होगी जो असंतोष की आग में घी डालने के समान होगी।

जहाँ-जहाँ मशीनीकरण पद्धति चालू है वहाँ मशीनीकरण को अर्द्ध-मशीनीकरण (सेमी-मेकेनाइजेशन) में रूपांतरित करना होगा। जिन देशों में मशीनीकरण पद्धति चल रही है (जैसे सोवियत रूस, अमेरिका में), वहाँ की परिस्थिति और हमारे देश की परिस्थितियों में

5 अप्रैल को सबेरे 9:30 बजे इंसपेक्टर शर्मा इंद्रजीत को पकड़ने कैम्प के अंदर पहुँच गया। दो-चार हाथ भी लगाया। इंद्रजीत के साथ झड़प हुई। हजारों मजदूर शर्मा की बेअदबी देखकर स्तब्ध हो गये। फिर इतने दिनों का दुःख, घृणा एवं गुस्से का बाँध अचानक टूट पड़ा। जितने वर्दीधारी आये थे वे सब अपने-अपने पिता और पितामह को याद किये। कोमल सिंह हवलदार का काम तमाम हो गया। मजदूर बस्ती की महिलाओं को यह देखकर करुणा आयी। उन्होंने पुरुषों को मजबूर किया वर्दीधारियों को छोड़ देने के लिए। घड़े में पानी लाकर पिलाया। फिर दफाई (मजदूर बस्ती) से चले जाने को कहा। परंतु पशुओं ने मातृ-स्नेह की उदारता को बाद में उनके ऊपर पाशविक अत्याचार कर के बदला चुकाया। इस आजाद देश में पुलिस एवं फौज के जवानों को इस प्रकार की ही ट्रेनिंग मिलती है।

इन 'मातृभूमि के रक्षकों' के पास बंदूक तो जरूर है, परंतु मनोबल नहीं। भोले-भाले मजदूरों को हाथ ऊँचा करके बैठ जाने को कहा। मजदूरों ने वैसा ही किया। फिर चलायी गोली। बंकर के सामने पहरा देने के लिए चालीस मजदूर जा रहे थे। पुलिस ने घेर लिया। उनमें से सिर्फ बोधीलाल ही भाग पाया। बाकी वहीं पर ढेर हो गये, यह आँखों देखा हाल बताया कन्हैयालाल ने।

सरकार के बयान के मुताबिक सिर्फ एक ही महिला मारी गयी है। यह कहाँ तक सच है ? आग-बबूला हो उठा पंचू और कहा, "झूठा सरकार कहीं के।" फिर रोते-रोते बोला, "भैया, मैं खुद अपनी आँखों से देखा कि पुलिस वाले चार नौजवान औरतों को पकड़कर, [illegible] के पास बलात्कार करके सुस्त सोयी हुई आतंकित औरतों को गोली से उड़ा दिये।"

"सबेरे 4 बजे हम उनको देखने गये, जिसमें एक को पहचाना, वह [illegible] थी। फगनीबाई को बैलाडीला में कौन नहीं जानता। 19 साल की मोटियारी, गेहुँआ रंग, फूल जैसा सुंदर चेहरा। उसको दुबे ठेकेदार के मजदूरों ने मुखिया भी चुना था। अफसरों को [illegible] कड़ुवा-मीठा सुनाती थी। फगनीबाई की योनि पर बंदूक रखकर उड़ा दिया।" ओह ! कैसा वीभत्स ! बोलते-बोलते रो पड़ी उसकी एक पड़ोसी महिला।

शहीदों की लिस्ट में चार महिलाओं के नाम और मिले : 1. [illegible]बाई, 2. [illegible]बाई, 3. बुधियाबाई एवं 4. [illegible]बाई।

एन. एम. डी. सी. के एक आदमी युवक का कहना था कि जब वह कार्यु के दिन छिपते-छिपते घूम रहा था तब उसने देखा कि एक बुढ़िया के मृत शरीर को एक कुत्ता खा रहा था। फिर वह युवक वीभत्सता और देखने की हिम्मत नहीं कर पाया। पंचू ने बताया कि उसने उस बुढ़िया के ऊपर गोली चलाते देखा। एक नौजवान मजदूर बुढ़िया को गिरते देखकर उसे उठा रहा था तभी उस पर भी गोली लगी। बुढ़िया को छोड़कर थोड़ी दूर भागा। फिर वह [illegible] तो कभी नहीं उठा।

शहीदों के नाम जो अब तक हो सके वे इस प्रकार हैं : 1. [illegible]सिंह, 2. [illegible]पाल (एस० 6), 3. हरपाल (बालरेड्डी), 4. [illegible] ([illegible]), 5. [illegible]सिंह, 6. [illegible] वल्द [illegible]दास ([illegible]), शहीद की माँ ([illegible]बाई) भी घायल है, 7. [illegible] ([illegible]) मालूम ठेकेदार एवं 8. मनबोध वल्द बुधराज ([illegible]) मालूम ठेकेदार; शहीद की स्त्री भी घायल है।

'अशोक माइनिंग कम्पनी' को नया टेन्डर नहीं दिया गया। 31 मार्च 1978 तक इस कम्पनी का काम था। ठेकेदारों द्वारा यह खबर बताने पर मजदूरों में हलचल मच गयी। इस कम्पनी में करीब चार हजार मजदूर कार्यरत थे। मजदूर यूनियन के पास गये। इंटक के नेता श्री सिद्दीकी एवं श्री ए. पी. खान तो शोषण करने वाले नेता थे। इन लोगों ने एन. एम. डी. सी. मैनेजमेंट को साथ देने का वचन दिया। एटक के स्थानीय नेता श्री इंद्रजीत सिंह ने इस छँटनी का विरोध किया। इंद्रजीत सिंह ने बहुत ही प्रतिकूल स्थिति में रहकर आंदोलन की रूपरेखा बनायी थी। एक तो एस. के. एम. एस. के केंद्रीय नेतृत्व द्वारा इंदिरा गांधी के जमाने में प्लांट एवं छँटनी का समझौता करने से इंद्रजीत सिंह का दिल कमजोर हो गया था। दूसरा, एस. के. एम .एस. के स्थानीय नेतृत्व में एन. एम. डी. सी. से अच्छी तनखा पाने वालों की बहुलता के कारण आंदोलन में इंद्रजीत सिंह को अच्छा सहायक नहीं मिला था। श्री पांडे के ऊपर मजदूर भी भरोसा नहीं करते थे। सरकारी मैनेजमेंट एवं ठेकेदार के लोग भी पांडे से दबते या डरते नहीं थे। खदान मजदूरों में राजनैतिक चेतना का अभाव था एवं गाँव के किसान इस आंदोलन में सहयोगी नहीं बन पाये थे। इन प्रतिकूल परिस्थितियों में रहकर इंद्रजीत सिंह ने नेतृत्व सँभाला। मार्च 1978 की 7 तारीख को ठेकेदारों ने समझ लिया था कि अब नया ठेका नहीं मिल पायेगा। 8 तारीख को इंद्रजीत सिंह ने जुलूस निकाला। 9 तारीख को तिरंगा (इंटक) के नेता सिद्दीकी एवं खान ने एन. एम. डी. सी. मैनेजमेंट से मिलकर शासन और मैनेजमेंट का साथ देने का वचन दिया।

10 तारीख को मजदूरों ने क्रमिक भूख हड़ताल शुरू की। 11 तारीख से बोरा कम्पनी में हलचल हुई। बोरा कम्पनी के मजदूर भी समझ गये कि छँटनी की चपेट में वे भी आ सकते हैं। मजदूर छँटनी के नाम से आतंकित होते गये, उनके अंदर एकता एवं संघर्ष की भावना तेज होती गयी। एक लौहदृढ़ एकता बन गयी।

फिर भी एन. एम. डी. सी. वालों ने अशोक माइनिंग कम्पनी का ठेका नहीं बढ़ाया। क्रमिक हड़ताल करते-करते स्थानीय नेतृत्व हताश हो रहा था। एस. के. एम. एस. के ऊपरी नेतृत्व ने कोई भी मदद नहीं की। इंद्रजीत सिंह अकेला पड़ गया। 28 मार्च को इंद्रजीत सिंह ने सोचा कि आंदोलन तीव्र करना चाहिए। 29 तारीख को भूख हड़ताल खत्म कर दी गयी। अशोक माइनिंग कम्पनी के मजदूरों के ऊपर से ध्यान हटा दिया गया एवं बोरा कम्पनी में हड़ताल करायी गयी।

अशोक माइनिंग कम्पनी के अधिकांश मजदूरों ने फायनल पेमेंट ले लिया एवं चलते बने। इससे आंदोलन के सामर्थ्य पर प्रहार हुआ। इंद्रजीत छुप गये एवं छुप-छुप कर आंदोलन को नेतृत्व देते रहे। नेतृत्व सही रास्ता नहीं निकाल पाया। ठेकेदार, एन. एम. डी. सी. के नौकरशाहों एवं शासन ने नेतृत्व की इस असहाय अवस्था को समझा एवं निर्मम श्वेत आतंक के सहारे आंदोलन को कुचलना चाहा। फिर क्या पूछना था। वियतनाम की माई-लाई एवं अंग्रेजी जमाने के जलियाँवाला बाग हत्याकांड को भी मात करने वाला 5 अप्रैल का बैलाडीला का, वीभत्स अत्याचार का कलंकित इतिहास रचा गया। इस अत्याचार का वर्णन करने की शक्ति मेरी कलम में नहीं है। इसके लिए छत्तीसगढ़ के बुद्धिजीवियों को आगे बढ़ना पड़ेगा।

एन. एम. डी. सी. के वेलफेयर अफसर को मजदूरों के पेमेंट रजिस्टर पर दस्तखत करने के लिए पैसा मिलता है। माईन्स मैनेजर से लेकर फोरमैन तक मजदूरों के ऊपर अत्याचार एवं निर्मम शोषण देखकर भी कुछ नहीं बोलते क्योंकि उनकी जेबें ठेकेदारों के पैसों से भरी रहती हैं, आँखें सल्फी और विदेशी मदिरा के नशे से अधखुली रहती हैं और रातें नित्य नयी पीकी (आदिवासी बाला) मोटियारी के सानिध्य में रंगीन रहती हैं। इस ऐशो-आराम की दुनिया को और अधिक मधुर बनाने के लिए ठेकेदार मजदूर के ताजा खून में एक-एक सिक्का डुबोकर अपनी तिजोरी में भरता जाता है। कोयला खदान में इन्हीं एन. एम. डी. सी. वालों ने वेज बोर्ड की सिफारिशों को मान लिया है, परंतु यहाँ 'आयरन ओर वेज बोर्ड' मानने से इंकार कर दिया है। मजदूर आंदोलन का सामना न करना पड़े, इसलिए ठेकेदारी प्रथा से काम चलाया। फिर जब मजदूर संगठित हुए तब मशीनीकरण का रास्ता अपनाया। अभी-अभी डिपाजिट नं. 5 चालू कर 10 हजार मजदूरों की, जिनकी बदौलत इस देश ने करोड़ों रुपयों की विदेशी मुद्रा कमायी, छँटनी करने पर तुले हैं।

मशीनीकरण क्यों ?

देश में एक तरफ तो करोड़ों लोग पहले से ही बेरोजगार हैं। दूसरी ओर इंदिरा गांधी के जमाने से लगातार मशीनीकरण की प्रक्रिया शुरू है जिसकी चपेट में आकर लाखों आदमी सात-आठ साल काम करने के बाद आज बेरोजगार हो गये हैं एवं अब होने जा रहे हैं।

लोहे की खदानों का मशीनीकरण करने से क्या फायदा होगा ? मशीनीकृत (मेकेनाइज्ड) खदान के लोहे की दर हमेशा मैन्युअल खदान की दर से अधिक होती है। डिपाजिट न. 5 की उत्पादन लागत रु. 40/- प्रति टन, डिपाजिट न. 14 की रु. 33/- प्रति टन है, जबकि मैन्युअल खदानों में मात्र रु. 19/- प्रति टन है। फिर सरकार मशीनीकरण क्यों कर रही है ? इसका कारण है कि कुछ विदेशी राष्ट्रों के कारखानों में भारी मशीनें बन रही हैं जिनकी खपत होनी चाहिए। हमारे देश की नौकरशाही को घूस देकर विदेशियों ने हमारे यहाँ कल-पुर्जे तथा भारी मशीनें जबरन थोप दी हैं और देशद्रोही नौकरशाह, देश की अर्थनीति को चौपट कर विदेशियों की सेवा में लगे हुए हैं। जब तक देश के शहरों एवं गाँवों के लोग एक आवाज से मशीनीकरण का विरोध नहीं करेंगे तब तक इन देशद्रोहियों का राज चलता ही रहेगा। बैलाडीला में जो डिपाजिट न. 5 का मशीनीकरण किया गया है, दल्ली राजहरा में जो कोन्डे (दल्ली) प्लांट बनाया गया है, इसका विरोध छत्तीसगढ़ के कोने-कोने में एक आवाज से होना चाहिए। 309 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा कमाने वाले छत्तीसगढ़ी लोग अब दर-दर की ठोकरें खायेंगे।

बैलाडीला में कार्यरत मजदूरों ने जो छँटनी के शिकार हो गये हैं व होने जा रहे हैं, उन्होंने अब तक अरबों रुपयों की कमाई कर देश की समृद्धि में योगदान दिया है, जिसमें 309 करोड़ रुपये तो सिर्फ विदेशी मुद्रा ही है।

डी. सी.) के सरकारी नौकरशाह मालिक तथा दूसरे ठेकेदारी प्रथा के मातहत ठेकेदार।

ठेकेदार

संयोग की बात है कि मजदूर यहाँ के ठेकेदारों को कम्पनी के नाम से पुकारते हैं जो ईस्ट इंडिया कम्पनी की याद दिलाती है। तीन प्रमुख ठेकेदारों के मातहत 31 मार्च तक मैन्युअल माईन्स में काम चलाया जा रहा था। ये ठेकेदार हैं -- (1) बोरा कम्पनी (2) अशोक माइनिंग कम्पनी (3) मानोट कम्पनी। इन तीनों ठेकेदारों का थोड़ा सा परिचय बताना जरूरी है।

बोरा कम्पनी

यह धनबाद की कम्पनी है जो धनबाद कोयला खदान इलाकों के मजदूरों का वर्षों से शोषण करती रही है एवं आतंक का राज बना रखा है। कुछ महीने पहिले धनबाद कोयला खदान इलाके के लोकप्रिय मजदूर नेता शक्ति महतो की हत्या कराने में भी इसका हाथ था।

अशोक माइनिंग कम्पनी

इस कम्पनी के कर्णधार, छत्तीसगढ़ की तमाम खदानों के ठेकेदार बनने के पहले साहूकारी का धंधा करते थे। छत्तीसगढ़ में उद्योगों के विकास के साथ-ही-साथ इसके मालिक का विकास इतनी तीव्र गति से हुआ कि वह 'उँगली फूलकर केले का झाड़' बन गया। यही उदाहरण इस कम्पनी के लिए लागू होता है। दल्ली राजहरा में जो गोलीकांड हुआ उसमें इस कम्पनी का हाथ था।

मानोट कम्पनी

बनारसीदास मानोट इस कम्पनी का मालिक है। बैलाडीला में इस कम्पनी को लोग गुंडा कम्पनी के नाम से पुकारते हैं। इस कम्पनी के मालिक की गुंडागर्दी किसी भी आजाद एवं प्रजातांत्रिक देश में सम्भव नहीं है। खदानों में जाकर मजदूरों को मारना-पीटना दिन-प्रतिदिन की बात है। अगर कोई मजदूर अपने हक की बात करता है तो उसे कमरे में बंद करके अधमरा होने तक पीटा जाता है।

मजदूर यूनियन

यहाँ दो मजदूर यूनियनें हैं। एक इंटक की मेटल एंड माईन्स वर्कर्स यूनियन (एम. एम. डब्ल्यू. यू.) और दूसरी एटक की संयुक्त खदान मजदूर संघ (एस. के. एम. एस.)। इंटक यूनियन, कम्पनी एवं एन. एम. डी. सी. मैनेजमेंट की दलाल यूनियन है और एटक यूनियन संशोधनवादियों की यूनियन है।

मध्यकालीन ठेकेदारी प्रथा एवं मजदूरों की रोजी-रोटी

बोरा कम्पनी जिसका इस गोलीकांड के पीछे सबसे ज्यादा स्वार्थ सिद्ध हुआ, मध्यकालीन ठेकेदारी प्रथा का जाल बिछाकर जोर-जुल्म एवं शोषण का राज्य चला रही है। इस बोरा कम्पनी

के अंतिम दिनों में भी कुसुमबाई ठेकेदारों के प्रति, बी. एस. पी. के नौकरशाहों के प्रति, कसाई डाक्टरों के प्रति तीव्र घृणा करते हुए मौत की गोद में सो गयी। का. कुसुमबाई का सही व उचित इलाज भी नहीं हो पाया। राजहरा अस्पताल में कुसुमबाई को शव सड़ने तक तिरस्कृत रूप में रखा गया। जब कुसुमबाई को भिलाई अस्पताल भेजा गया तब बहुत देर हो चुकी थी।

कुसुमबाई की मृत्यु के बाद दस हजार मजदूरों ने जुलूस निकालकर अस्पताल के बंदोबस्त के खिलाफ प्रदर्शन किया। जुलूस देखने के लिए अस्पताल की नर्सें बाहर निकल आयीं और बेवकूफ की तरह हँस रही थीं। कुसुमबाई वैसी हँसी हँसने वाली को "बेवकूफ" कहा करती थी।

आज विश्वास नहीं होता कि कामरेड कुसुमबाई हमारे बीच नहीं है, लगता है कि कुसुमबाई मेरे पास ही खड़ी होकर पूछ रही है, "शंकर भैया, देश में मजदूर वर्ग का राज कब तक बन जाएगा?"

(सी. एम. एस. एस. के मुखपत्र "साप्ताहिक मितान", 22 दिसम्बर 1977, से साभार।)

किरंदुल के अग्निपथ से

नेशनल मिनरल्स डेवलपमेंट कार्पोरेशन (एक सार्वजनिक उपक्रम), जिला बस्तर (म.प्र.) के बैलाडीला क्षेत्र में लौह अयस्क का खनन करती है और बड़े पैमाने पर उत्पादन जापान को निर्यात करती है। 5 अप्रैल 1978 को एटक की स्थानीय यूनियन (संयुक्त खदान मजदूर संघ) के नेतृत्व में खदानों के मुख्यालय किरंदुल में छंटनी और मशीनीकरण का विरोध कर रहे हजारों मजदूरों पर पुलिस ने उनकी बस्तियों को घेरकर गोली चालन किया और बस्तियों को आग लगा दी। दो हजार झोपड़ियाँ जलकर राख हो गयीं। सरकारी आंकड़ों के अनुसार गोली चालन में [illegible] मजदूर मारे गये [illegible] जंगलों में कुछ दिनों [illegible] जुलाई 1978 में [illegible] पुलिस [illegible] मजदूरों तक पहुँचाने [illegible] नियोगी [illegible] अध्ययन करने गये। इसी अध्ययन के आधार पर 20 मई 1978 को [illegible] ने दल्ली राजहरा में निम्नलिखित लेख पुस्तिका के रूप में प्रकाशित किया। — सं.

तैयार रहना चाहिए। कभी-कभी पुलिस का निर्मम अत्याचार, लम्बी जेल यातनाएँ, भयंकर गरीबी आदि भी झेलना पड़ता है, परंतु नेताओं को रास्ते से ये सब रोड़े हटाते हुए कदम-कदम आगे बढ़ना चाहिए। **आज देश के लिए सही नेतृत्व की जरूरत है जो भूख, भ्रष्टाचार, शोषण, गरीबी एवं तानाशाही के खिलाफ संघर्ष में सही नेतृत्व दे सके एवं एक सुंदर शोषणविहीन भारत के निर्माण के लिए रचनात्मक कार्यक्रम अपनाये।**

□

(सी. एम. एस. एस. के मुखपत्र ' साप्ताहिक मितान ', 25 अक्तूबर 1977, से साभार।)

कामरेड कुसुमबाई अब नहीं रहीं

सी. एम. एस. एस. की जुझारू उपाध्यक्षा कामरेड कुसुमबाई की दिसम्बर 1977 में प्रसव पीड़ा के दौरान भिलाई स्टील प्लांट के राजहरा स्थित अस्पताल में मृत्यु हो गयी। इसका कारण वहाँ के डाक्टरों द्वारा उनकी गरीब व मजदूर पृष्ठभूमि के चलते बरती गयी लापरवाही था। इस घटना से उत्पन्न आक्रोश के माहौल में मजदूरों के दिल में एक अपना ' प्रसूति गृह ' बनाने का सोच पैदा हुआ जिसने बाद में शहीद अस्पताल का रूप लिया। नीचे प्रस्तुत लेख नियोगी ने अपनी कामरेड की याद में लिखा था। *स.*

छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ यूनियन दफ्तर के सामने हजारों मजदूर रो रहे थे। एक महिला चिल्ला-चिल्ला कर रोते-रोते बोल रही थी, " दल्ली के माटी के जठना माटी ओढ़ना, माटी ओढ़ के सुतगे, हजारों मजदूरों के अगवा। "

लाल-हरा झंडा ओढ़ के एक महिला चिर निद्रा में सोयी हुई थी। अपनी माता को मृत्यु शैय्या में सोयी देख 10-वर्षीय बालक रोते-रोते बेहोश होकर शव के चरणों पर गिर पड़ा। कामरेड कुसुमबाई का यह इकलौता पुत्र था। मैंने आखिरी बार कामरेड कुसुमबाई को उनकी झोपड़ी में देखा था, जब 57 ऐतिहासिक हड़ताली दिन आखिरी दौर से गुजर रहे थे। सी. एम. एस एस. की हड़ताल लम्बी होती जा रही थी। मैनेजमेंट उड़ीसा से लोहा-पत्थर लाकर भिलाई कारखाना चला रहा था, परंतु मजदूरों की जायज माँग को पूरा करके हड़ताल समाप्त करने की इच्छा नहीं थी। सी. एम. एस. एस. के पदाधिकारियों की एक आवश्यक बैठक कामरेड कुसुमबाई के घर पर ही बुलायी गयी थी। बैठक के बीच में कामरेड कुसुमबाई दूसरे साथियों के लिए बिना दूध की चाय बनाकर लायी और सबको चाय बाँटते-बाँटते बोली, " नहीं, अब नहीं, शांति-शांति बोलकर अब तुम लोग [illegible] मत खोजो। मजदूरों के पेट में आग जल रही है। शांति

थी। उनके पीछे मर-मिटने को तैयार रहती थी। राष्ट्रीय नेताओं के आह्वान पर लाखों लोग जेल की काल-कोठरियों की यातनाएँ सहते थे। उन दिनों नेता और नेतृत्व के प्रति आम जनता का भरोसा था।

कांग्रेसी जमाने में नेताजी शब्द के पीछे एक चर्बीयुक्त पेट वाले व्यक्ति का आकार सामने आता है जो कि सफेद खादी की धोती पहनता है, खादी का कुर्ता एवं एक गांधी टोपी लगाकर बाजार-हाट, कोर्ट, विधान सभा एवं लोक सभा में सदा व्यस्त नजर आता है। इन खादीधारियों का मुख्य काम अफसरशाही की चापलूसी करना, दिल्ली, भोपाल और लंदन में भाषण देना होता है। ये नेता साहब लोग मुख्य तौर पर जमींदार, साहूकार या व्यापारी वर्ग के होते हैं। चापलूसी करना उनका स्वभाव होता है। उनका तो यह सिद्धांत बन जाता है कि ' जिधर बम उधर हम। ' इन नेताओं के चक्कर में 30 साल बीत चुके हैं। जनता इन नेताओं से दिलोदिमाग से घृणा करती है । इसलिए आज नेता शब्द के प्रति ही नफरत की भावना पैदा हो गयी है। यह आम बात बन गयी है कि ' ज्यादा नेतागिरी मत करना। ' फिर भी नेता की जरूरत पड़ती है, नेता के बिना काम नहीं चलता, नेता ढूँढ़ना पड़ता है।

आज देश के हालात देखते हुए लोगों को यह बात समझ में आती है कि संघर्ष के बिना मुक्ति नहीं है। संघर्ष करने के लिए सही नेतृत्व की आवश्यकता पड़ती है। सही नेतृत्व आयेगा कहाँ से ? क्या आसमान से टपकेगा या उन खद्दरधारियों को पकड़ना पड़ेगा या कोई दूसरा आधार है ? इन सवालों का उत्तर पाने के लिए हमें नेता एवं नेतृत्व शब्दों का मतलब भी गहराई से समझना पड़ेगा। **नेता वह है जो सबसे ज्यादा वर्ग सचेतन है। नेता शब्द के पीछे वर्ग सचेतनता या वर्ग चेतना शब्द आ जाता है। नेता वर्ग के आधार पर ही होता है।** समाज में मुख्य तौर पर दो वर्ग हैं — एक शोषक वर्ग (जमींदार, साहूकार, दलाल पूँजीपति) एवं दूसरा शोषित वर्ग (मजदूर, किसान)। ऊपर जिन खद्दरधारी नेताओं की चर्चा हुई है, वे लोग शोषक वर्ग के नेता हैं। वर्तमान समाज व्यवस्था को टिकाकर रखना उनका ध्येय है। हमें शोषक वर्ग या लुटेरे वर्ग से मतलब नहीं, हमें मजदूर-किसान वर्ग को नेतृत्व देने के बारे में सोचना है।

मजदूर-किसानों का नेतृत्व, मजदूर-किसानों की पार्टी के लोगों से होता है, जो मजदूर-किसानों की राजनीति से जुड़ी होती है। पार्टी का मतलब है — इस वर्ग का हथियार। क्या लुटेरे वर्ग का नेता मजदूर-किसान वर्ग को नेतृत्व दे सकता है ? जी नहीं। लुटेरा वर्ग मजदूर-किसानों को धोखा देकर अपने साथ अवश्य रखता है, परंतु किसान-मजदूरों के हित के लिए नहीं, वरन् वह तो अपना उल्लू सीधा करने के लिए मजदूर-किसानों की खुशामद करता है। **मजदूर-किसान वर्ग का हित तभी सम्भव है जब किसान भाइयों की सही पार्टी बनेगी और उसका नेतृत्व मजदूर नेता कुर्बानी की भावना से ओत-प्रोत होकर सँभालेगा।** जनता को चाहिए कि वह लुटेरे वर्ग के नेतृत्व से घृणा करे और मजदूर वर्ग के नेतृत्व में भरोसा करे। मजदूर वर्ग को भी चाहिए कि वह व्यापक जनता का भरोसा-पात्र बनने के लिए निरंतर कोशिश जारी रखे एवं छत्तीसगढ़ और भारत की निपीड़ित, शोषित जनता के मुक्ति-संघर्ष में बहादुरी के साथ आगे बढ़े।

किसान-मजदूर वर्ग का ध्येय क्या है ?

किसान-मजदूर वर्ग का ध्येय है दलाल पूँजीपति एवं जमींदार वर्ग की राजसत्ता को खत्म

लोकतांत्रिक आंदोलन बनाम जनवादी लोकतांत्रिक आंदोलन

लाल-हरे झंडे के नेतृत्व में राजहरा में लोकतांत्रिक आंदोलन उच्चतम शिखर तक पहुँच गया है। जिस दिन लाल-हरे झंडे ने जन्म लिया उसी दिन से अपने रंग के अनुरूप ही उसने दो बातों पर गम्भीरता से विचार किया। शहीद हुए मजदूरों की छाती से रिसता हुआ लाल रक्त झंडे के ऊपरी भाग की शोभा बढ़ाता है। यह लाल रंग संकेत करता है कि ' कुर्बानी के रास्ते पर आगे बढ़ो ', हर क्षेत्र में मजदूर वर्ग का नेतृत्व प्रतिष्ठित करो। कुर्बानी और मजदूर वर्ग का सही नेतृत्व ही लोकतांत्रिक संघर्ष को उच्चतम अवस्था तक पहुँचा सकता है।

झंडे का दूसरा हिस्सा जनवादी लोकतांत्रिक संघर्ष की विचारधारा का वहन करता है। जनवादी लोकतांत्रिक संघर्ष किसान आंदोलन पर आधारित है। मजदूर वर्ग लोकतांत्रिक संघर्ष में भाग लेता है, अपने को मजबूत बनाता है एवं व्यापक जन समुदाय को नेतृत्व देने के काबिल बनता है, फिर जनवादी लोकतांत्रिक आंदोलन में कूद पड़ता है। वह किसान-मजदूर एवं दूसरे प्रगतिवादी वर्गों का एक सशक्त मोर्चा स्थापित करता है।

लोकतांत्रिक आंदोलन मुख्यतः प्रतिक्रियावादी निष्ठुर ताकत के खिलाफ व्यापक एवं निहत्थी जनता का संगठित मोर्चेबंदी का संघर्ष होता है। **किसी भी राजसत्ता को समाप्त करने के लिए पहले उसे विचारधारात्मक रूप से समाप्त करना चाहिए, तत्पश्चात् राजनैतिक रूप से समाप्त किया जा सकता है।** लोकतांत्रिक आंदोलन के जरिये हम उसे विचारों के माध्यम से खत्म करते हैं, जबकि जनवादी लोकतांत्रिक संघर्ष में निहत्थी जनता के साथ-साथ किसानों की एक लड़ाकू वाहिनी काम करती है जो किसानों को प्राप्त हुए अधिकारों की रक्षा करती है। राजहरा का मजदूर आंदोलन, लोकतांत्रिक आंदोलन के माध्यम से गुजरते हुए उच्च शिखर तक पहुँच चुका है।

दूसरा है, अर्द्ध-सामंती ठेकेदार, साहूकार एवं दलाल नौकरशाही पूँजी या उसके रक्षक नौकरशाह। राजहरा में अर्द्ध-सामंती ठेकेदारों के विरुद्ध दस हजार मजदूरों की संग्रामी एकता संघर्षशील है। लोकतांत्रिक संघर्ष में शहर आदि के मजदूर, बुद्धिजीवी और व्यापक जन-समुदाय भाग लेता है। जनवादी लोकतांत्रिक संघर्ष, मजदूरों के नेतृत्व में संगठित किसान जनता की भूमि से सम्बंधित समस्याओं का निपटारा करने के लिए होता है। जनवादी लोकतांत्रिक संघर्ष में किसान सामंतवाद एवं सामंतवादी तौर-तरीके के खिलाफ जीवन-प्रण से संघर्ष करते हैं और धीरे-धीरे संघर्षरत कृषक सत्ता की तरफ अग्रसर होते हैं।

लोकतांत्रिक संघर्ष की एक अवस्था में शांति, अशांति एवं हिंसा को लेकर वाद-विवाद

नियोगी की लिखावट में

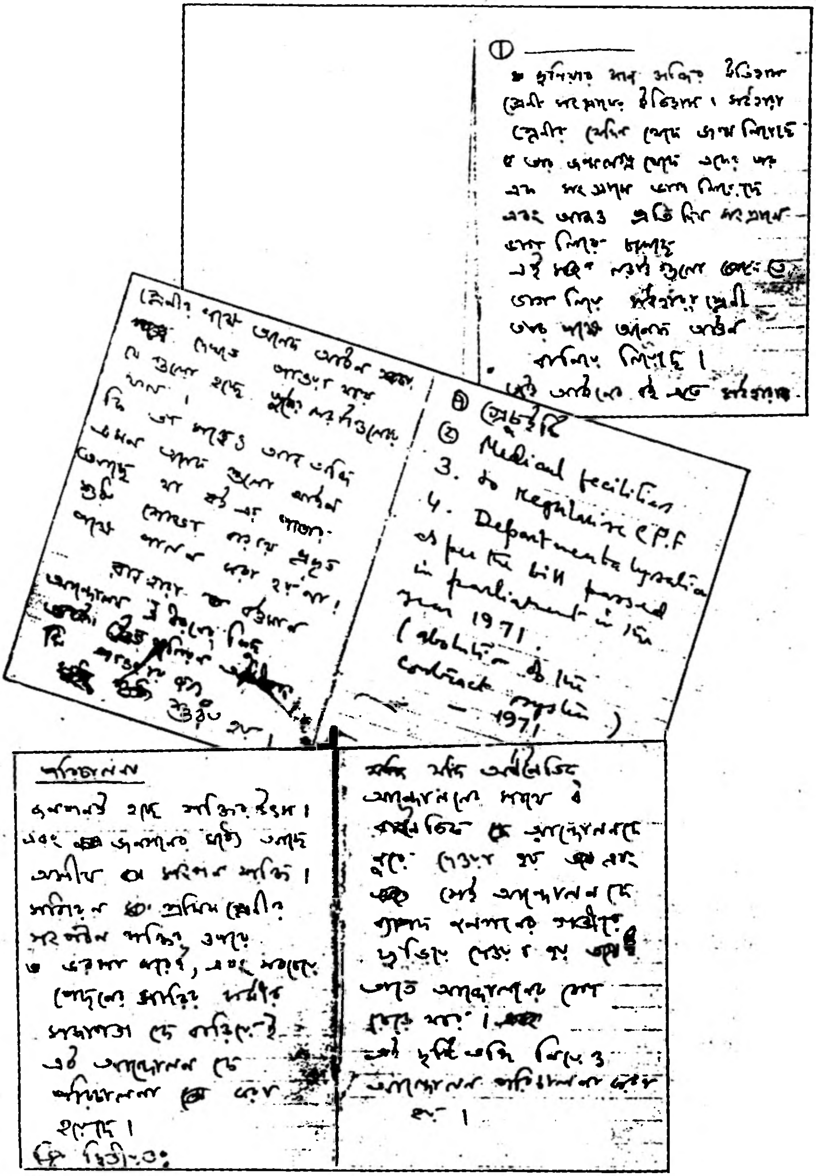

'सर्वहारा वर्ग के आंदोलन पर' शीर्षक की टीप (1977)

मजदूरों को ठेकेदारी अत्याचार के खिलाफ संघर्ष का नारा बुलंद करने में सहयोग प्रदान किया। शहीद सुदामा की अमर कहानी सिर्फ कहानी नहीं, बल्कि पूरे छत्तीसगढ़ के मेहनतकश मजदूर-किसान वर्ग के सामने एक अद्वितीय उदाहरण है।

दुर्ग जिले के अंतर्गत एक छोटे-से गाँव आरी में 12 वर्ष पहले गरीब मजदूर श्री श्रीराम के परिवार में शहीद सुदामा ने जन्म लिया था। 3 जून 1977 को दल्ली राजहरा गोलीकांड में रमेश सक्सेना की पुलिस की गोली ने उस बालक को मौत के घाट उतार दिया।

छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ के उपाध्यक्ष शहीद जगदीश

मेहनतकश मजदूरों के प्रेरणा-सितारा बनकर राजहरा माईन्स के लड़ाकू मजदूर स्वर्गीय जगदीश, मजदूर वर्ग के अधिकारों की रक्षा के लिए संघर्ष का रास्ता दिखा गये। 2 जून 1977 की रात के अंधेरे को चीरती हुई पुलिस की गोली 27-वर्षीय नौजवान जगदीश की छाती के आर-पार हो गयी। दल्ली राजहरा के मजदूर मार्च 1977 से जिस जुझारूपन के साथ आंदोलन चलाते आ रहे थे उस संघर्ष की हर घड़ी में स्वर्गीय जगदीश ने दिलोजान से भरपूर अगुवाई की। पूँजीपति ठेकेदारों के निर्मम शोषण के खिलाफ पिछले एक दशक से स्वर्गीय जगदीश के दिल में चिनगारी भड़क रही थी। और उन्होंने उस चिनगारी को अपने खून की नदी के रूप में बहाकर आग में बदल दिया। यह आग आज पूरे छत्तीसगढ़ के गरीब मजदूर-किसान को शोषणरहित छत्तीसगढ़ का निर्माण करने के लिए प्रोत्साहित कर रही है।

सत्ताइस वर्ष पूर्व स्वर्गीय जगदीश ने राजनांदगाँव जिले के छुईखदान ग्राम में गरीब मजदूर भगीरथी के परिवार में जन्म लिया। बचपन से ही वे अपने पेट की आग बुझाने के लिए मजदूरी करने लगे। दल्ली राजहरा की लौह अयस्क खदान में कमर्शियल ट्रांसपोर्ट कम्पनी में ट्रक मजदूर के रूप में कार्यरत थे। अपनी जिंदगी के अंतिम क्षणों तक राजहरा के मजदूरों की माँगों को हासिल करने के लिए हर समय अपने त्याग का अनोखा परिचय देने वाले स्वर्गीय जगदीश की एक तीन-वर्षीय पुत्री एवं दो छोटे भाई हैं। उनकी विधवा पत्नी श्रीमती हेमवती आज भी अपने स्वर्गीय पति के अमर संघर्ष की कहानी याद करती रहती हैं और मेहनतकश मजदूर वर्ग को कुर्बानी के रास्ते पर ही चलने की सलाह देती है।

छत्तीसगढ़ के किसान-मजदूर आंदोलन को मजबूत एवं व्यापक बनाने के लिए स्वर्गीय जगदीश ने अपनी जान को कुर्बानी की वेदी पर चढ़ाते हुए सर्वहारा वर्ग की लड़ाई में अहम भूमिका निभायी।

<u>दूसरी किश्त</u>

शहीद पुनऊराम

राजहरा माईन्स के मजदूर आंदोलन के इतिहास में स्वर्गीय पुनऊराम का नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा। राजहरा के मेहनतकश मजदूरों की लड़ाकू परम्परा को कायम रखते हुए स्वर्गीय पुनऊराम आज पूरे छत्तीसगढ़ में कुर्बानी के खून से सिंचे हुए लाल-हरे झंडे को आसमान की ऊँचाई तक फहरा कर चले गये। अत्याचार और दलाली के खिलाफ डटकर मोर्चेबंदी के लिए

एवं शोषित वर्ग की संख्या 95 प्रतिशत है। 5 प्रतिशत लोग इस समाज को बनाये रखना चाहते हैं और 95 प्रतिशत लोग इस समाज व्यवस्था को खत्म करना चाहते हैं। 5 प्रतिशत लोगों के साथ 95 प्रतिशत लोगों की लड़ाई ! फिर भी 5 प्रतिशत का, यानी पूँजीपति वर्ग का राज चल रहा है ! कैसे ?

मान लीजिये, आपके मोहल्ले में एक दुबला-पतला लड़का रहता है। दारासिंह के साथ उसकी कुश्ती प्रतियोगिता होने वाली है। दारासिंह सोचेगा, ' अरे, यह क्या लड़ेगा मेरे साथ, मैं तो इसे उठाकर फेंक दूँगा। ' अगर वही दुबला-पतला लड़का दारासिंह की तरफ चलते हुए झट से पिस्तौल निकाल लेता है तो क्या होगा ? दारासिंह कितना भी ताकतवर क्यों न हो, डर जायेगा। यह क्यों ? क्योंकि अब लड़ाई होगी दारासिंह के साथ दुबले-पतले उस लड़के और उसके हथियार की। आज की स्थिति कुछ ऐसी ही है। पूँजीपति वर्ग ने पिस्तौल के बल पर मजदूर वर्ग को दबाकर रखा है। पूँजीपति वर्ग का हथियार क्या है ? राष्ट्र व्यवस्था यानी शासन, पुलिस, मिलिटरी, अदालत, जेल आदि। 5 प्रतिशत लोग और उनका शासन ही 95 प्रतिशत जनता को लूट रहे हैं। शोषणमूलक समाज में शासन यानी राष्ट्र-तंत्र शोषणमूलक समाज के ढाँचे की ही रक्षा करता है। वह कभी शोषित वर्ग के हित में नहीं हो सकता है। जब तक शोषण रहेगा तब तक राष्ट्र-तंत्र शोषक वर्गों के हाथ में रहेगा।

आज दुनिया में बहुत सारे देशों में शोषणविहीन समाज बन चुका है। वहाँ के शोषित वर्ग यानी मजदूर-किसान, मध्यमवर्गीय, निम्न-मध्यमवर्गीय, छात्र-युवाओं के मोर्चे ने शोषणमूलक समाज को ध्वस्त कर दिया है एवं समाजवादी समाज की स्थापना की है।

हमारे देश के कम्युनिस्ट नामधारी कुछ गुट (सी. पी. आई., ए. आई. सी. पी., सी. पी. एम. आदि) कहते हैं कि आज की नयी परिस्थिति में वर्ग संघर्ष की जरूरत नहीं है। आज की परिस्थिति में शोषित वर्ग यानी मजदूर-किसान पहले से बहुत ज्यादा ताकतवर हो गया है। इसलिए आज वर्ग संघर्ष से नहीं, बल्कि शांति के रास्ते पर चलकर शोषित वर्ग, शोषक वर्ग को उखाड़ फेंकेंगे। ये लोग वर्ग संघर्ष के सिद्धांत को बदलकर वर्ग सह-अस्तित्व (वर्ग समझौता) के सिद्धांत का प्रचार कर रहे हैं।

परिस्थिति तो रोज बदल रही है और बदलेगी भी, इसलिए क्या वैज्ञानिक सिद्धांत भी बदल जायेगा ? बच्चा पैदा होगा पर माँ को प्रसव यंत्रणा नहीं होगी ? प्रसव के समय खून नहीं गिरेगा ? क्या लुटेरा शोषक वर्ग रहने पर भी लूट-खसोट नहीं होगी ? बदली हुई परिस्थिति को देखकर शेर का दिल परिवर्तन हो जायेगा, शेर खून पीना, मांस खाना छोड़कर घास खाना शुरू करेगा ? क्या मजेदार तत्व है इन कम्युनिस्ट नामधारी सुधारवादियों का।

जब तक वर्ग संघर्ष के सिलसिले में क्रांति नहीं होगी यानी लुटेरे वर्ग के हाथों से मजदूर-किसान वर्ग राजनैतिक सत्ता छीन नहीं लेगा, तब तक शोषक वर्ग शोषण जारी रखेगा ही। सबसे पहले जरूरी है लुटेरे वर्ग का सफाया करना। वर्ग संघर्ष का रास्ता ही शोषण-मुक्ति का एक मात्र रास्ता है। इस रास्ते पर चलने के लिए जनता को चाहिए मार्क्सवादी वैज्ञानिक वस्तुवादी विचारधारा।

□

(छमुमो की लोक साहित्य परिषद् के सौजन्य से।)

और अव्यवस्था है, इसलिए हम लोग रोज-ब-रोज संघर्ष कर रहे हैं। वर्तमान समाज व्यवस्था की बुनियाद शोषण है। इसलिए इस समाज व्यवस्था को शोषणवादी समाज व्यवस्था कहा जाता है। इस समाज के उपादान क्या हैं ? यहाँ मुख्यतः दो वर्ग हैं। एक शोषक वर्ग, जिसकी संख्या बहुत कम है और दूसरा शोषित वर्ग जिसकी संख्या बहुत ज्यादा है। वर्तमान व्यवस्था का उद्देश्य क्या है ? मुनाफा। एक वर्ग दूसरे वर्ग का शोषण कर मुनाफा कमाता है। शोषित वर्ग अपना खून-पसीना बहाकर उत्पादन करता है, लेकिन उत्पादन के साधनों के ऊपर उसका अधिकार नहीं रहता। शोषक वर्ग उत्पादन के साधनों का मालिक है, यह खुद मेहनत नहीं करता है। मेहनतकश जनता द्वारा पैदा किये गये सामानों से मुनाफा कमाने का हक इसको होता है और यह हकदार बन जाता है मेहनतकशों को मजदूरी देने का।

शोषित वर्ग अगर कठोर श्रम न करे, तो धान, गेहूँ, कोयला, लोहा आदि कोई भी चीज पैदा नहीं होगी, उसका मूल्य (कीमत) भी नहीं बनेगा, मालिक को भी मुनाफा कमाने का एवं मजदूरी देने का हक नहीं रहेगा। शोषक वर्ग (लुटेरा वर्ग) रोज-ब-रोज मजदूर-किसान वर्ग को जोंक जैसे चूस रहा है। शोषक और शोषित – इन दोनों वर्गों का अंदरूनी संघर्ष ही समाज को चला रहा है।

वर्तमान समाज में शोषक और शोषित, इन दोनों वर्गों के बीच सम्बंध क्या है ? आप और आपके कारखाने का मालिक दोनों ही पेंट पहनते हैं और कमर में बेल्ट बाँधते हैं। इन दोनों बेल्टों का सम्बंध क्या है ? आपके मालिक की बेल्ट का घेरा हर साल बढ़ता जायेगा क्योंकि हर साल मालिक का पेट मोटा होता जा रहा है। और आपकी बेल्ट का घेरा कम होता जायेगा, क्योंकि हर साल भुखमरी से आपका पेट कम होता जा रहा है। इस तरह ये दोनों बेल्टें एक-दूसरे से विपरीत स्थिति में हैं।

कार्ल मार्क्स हमें शिक्षा देते हैं कि शोषणमूलक समाज में दो विरोधी वर्ग रहते हैं। एक-दूसरे के विरोधी होने के कारण दोनों के बीच संघर्ष होना अनिवार्य है। वर्ग संघर्ष एक समय क्रांति में रूपांतरित होता है। एक वर्ग को राजसत्ता से हटाकर दूसरा वर्ग राजसत्ता पर कब्जा करता है। वर्तमान काल में यानी पूँजीवादी समाज में मजदूर वर्ग, वर्ग संघर्ष के रास्ते पर चलकर एक समय लुटेरे वर्ग को हटाकर राजसत्ता पर कब्जा करेगा, समाज को बदल डालेगा, एक शोषणविहीन समाज यानी असीम सुख-शांति वाला समाज बनायेगा। मजदूर वर्ग का राजसत्ता पर कब्जा करने का मतलब है – मजदूर वर्ग का अधिनायकत्व कायम करना। मजदूर वर्ग यदि दृढ़ निश्चयी होकर अपना अधिनायकत्व चलाता है, तभी शोषणविहीन समाज बन सकता है। मार्क्स की इस शिक्षा को मानने वाले को मार्क्सवादी कहा जाता है।

वर्तमान समाज वर्गों में बँटा हुआ है, मुख्यतः दो वर्ग हैं – शोषक और शोषित। ये दोनों वर्ग परस्पर विरोधी हैं। दोनों वर्गों के बीच द्वंद्व यानी वर्ग संघर्ष अनिवार्य है। वर्ग संघर्ष में बल का प्रयोग होता ही है, लेकिन बल प्रयोग के लिए जिम्मेदार कौन है ?

शोषक वर्ग अपने शोषण का बंदोबस्त बनाये रखने के लिए राष्ट्र व्यवस्था (कानून, अदालत, पुलिस, फौज आदि) का सहारा लेता है, दूसरे वर्ग के ऊपर दमन-उत्पीड़न चलाता है। जब शोषक वर्ग हिंसा व जुल्म चलाता है, तब शोषित जनता के पास अपने को बचाने के लिए बल प्रयोग के अलावा कोई रास्ता नहीं रहता है।

का विचार इसके विपरीत है – वे कहते हैं कि विचार से ही वस्तु पैदा होती है।

हवाई जहाज की उत्पत्ति के बारे में ही देखा जाये। भाववादी लोग (पूँजीवादी-सामंतवादी विचारधारा के लोग) कहते हैं कि पहले इंसान ने हवाई जहाज बनाने की बात सोची, फिर हवाई जहाज पैदा हुआ। मार्क्सवादी ने सवाल किया, "हवाई जहाज क्यों बनाया गया ? उड़ने के लिए, है न ? तो फिर उड़ने के बारे में सोच कहाँ से आया ?" आदमी रोज देखता है कि आसमान में बादल उड़ रहे हैं, हवा में पेड़ की पत्तियाँ उड़ रही हैं, पंछी उड़ रहे हैं। यह सब देखकर उसकी भी उड़ने की इच्छा हुई। हजारों प्रयासों के बाद हवाई जहाज बना।

लेकिन इतना कहने पर ही क्या भाववादी लोग वस्तुवादियों का कहना मान लेंगे ? नहीं भाई, वे इतनी जल्दी मानने वाले नहीं हैं।

और एक उदाहरण लें। अगर आपसे पूछा जाये, "भई, कौआ कैसा दिखायी देता है", तो आप हँसकर कहेंगे, "अरे, यह भी कोई सवाल है क्या ?" पर आपसे अगर पूछा जाये, "बताइये, अमेरिका का नाइटिंगेल पंछी कैसा दिखता है ?", तब आप बोल ही नहीं पायेंगे, क्योंकि आपने नाइटिंगेल पंछी देखा ही नहीं। ऐसे हजारों उदाहरणों से बताया जा सकता है कि वस्तु ही सोचने का आधार है।

मान लीजिये कि आप कोई अच्छा काम करके आ रहे हैं। दिल में खुशी और मन में उमंग है। अचानक आपके सामने एक बच्चा गाड़ी से दबकर मर गया। क्या इस घटना को देखने के बाद आपके दिल में खुशी रहेगी ? रह ही नहीं सकती। ऐसा क्यों ? बच्चा दबकर मरने से पहले खुशी-उमंग और दबकर मरने के बाद दुःख क्यों हुआ ? वस्तु ही आपके मन में सोच का परिवर्तन लायी है। भाववादी लोग इस वैज्ञानिक सत्य को स्वीकार नहीं करते हैं।

कार्ल मार्क्स के पहले भी भौतिकवादी लोग थे। लेकिन कार्ल मार्क्स ही वह पहले व्यक्ति थे जिन्होंने 'वस्तु ही विचार का आधार', इस वैज्ञानिक सिद्धांत का अविष्कार किया एवं उसे प्रतिष्ठित किया। उनके इस सिद्धांत को 'वैज्ञानिक वस्तुवाद' या 'वैज्ञानिक भौतिकवाद' कहा जाता है।

मार्क्स आगे कहते हैं कि वस्तु द्वंद्वात्मक नियम से (यानी संघर्ष के कारण) ही रूपांतरित होती है, ताकतवर बनती है और एकता बनाती है। उन्होंने यह भी कहा कि हर एक वस्तु के अंदर विपरीतधर्मी शक्तियाँ रहती हैं।

विपरीतधर्मी शक्तियाँ रहने के कारण वस्तु के अंदर द्वंद्व (संघर्ष) रहता है। वस्तु के बाहर भी द्वंद्व (संघर्ष) है। इस अंदरूनी और बाहरी शक्ति संघर्ष से ही वस्तु रूपांतरित होती है। वस्तु के विकास का मूल कारण है, वस्तु का अंदरूनी संघर्ष। पर बाहरी संघर्ष भी वस्तु के ऊपर विभिन्न प्रकार से प्रभाव जमाता है। इसीलिए वस्तु के विकास के बारे में सिर्फ उसके अंदरूनी मुख्य द्वंद्व पर ध्यान देना और उसके बाहरी द्वंद्व की स्थिति पर ध्यान न देना, एक भयंकर गलती होगी।

उदाहरण के लिए एक मुर्गी के अंडे को लीजिये। अंडे के अंदरूनी संघर्ष के कारण उससे बच्चा होने की सम्भावना है, लेकिन अंडे से बच्चा होने के लिए ताप की भी जरूरत है। एक टुकड़ा सफेद पत्थर के ऊपर ताप देने से मुर्गी का बच्चा नहीं निकलेगा। उसी प्रकार सिर्फ अंडा रहने से ही बच्चा नहीं होगा, जब तक उसमें ताप न दिया जाये।

कड़ी मेहनत के बीच
आराम के कुछ क्षण

दल्ली पहाड़ : मानवीकृत
या अर्द्ध-मशीनीकृत खदान

रेंजिग : लोहा-पत्थर
निकालते मजदूर (ऊपर);
5 टन टिप्पर ट्रकों में
लोहा-पत्थर की ढुलाई (नीचे)

सोवियत-निर्मित स्वचालित शावेल द्वारा रेंजिग; पीछे दो स्वचालित ड्रिलिंग मशीनें कार्यरत (ऊपर); शावेल द्वारा 50-टन डम्पर में ढुलाई (नीचे)

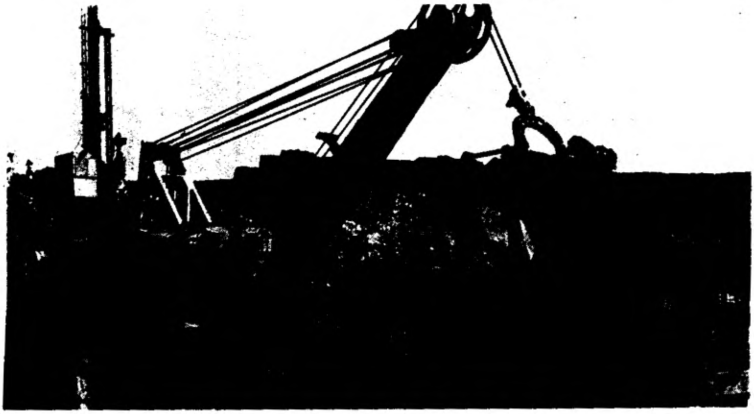

डम्पर द्वारा भीमकाय 'क्राशिग-स्क्रीनिग-वाशिग प्लांट' के बंकर (मुख) में उतराई (ऊपर); क्राशिग-स्क्रीनिग-वाशिग प्लांट (नीचे)

6 मई, 1989 : कोर्ट आदेश पर सशस्त्र पुलिस बल के में बी.के. कंपनी के 'मशीनीकरण चरण क्र. 2' जाते 170 मजदूर (पृ. 405)

भिलाई : महिला मजदूरों का जुलूस 1991

दल्ली राजहरा : पूरी तरह अनुशासित जुलूस

[illegible] ने पर नियोगीजी दल्ली राजहरा के [illegible]
[illegible] र्ष की होली मजदूरों [illegible] नियोगीजी [illegible]
[illegible] नाती (पृ. [illegible])

राजनैतिक दिशाहीनता का शिकार हो, उस समय छात्र-समाज जैसा क्रांतिकारी वर्ग ही समाज को गुणात्मक परिवर्तन की ओर प्रेरित करने के लिए कूद पड़ता है। हमारे देश की आजादी की लड़ाई में भी छात्र-समाज ने अपनी जिम्मेदारी निभाकर मिसाल कायम की। सन् 1917 की रूसी क्रांति, चीन में सामंत-साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष में भी छात्र-समाज की भूमिका स्वर्ण-अक्षरों में अंकित है। सन् 1968 के फ्रांसीसी छात्र आंदोलन ने तो एक विद्रोह का रूप ले लिया था, जिसमें लाखों मजदूरों-किसानों ने सक्रिय भागीदारी की थी।

आज भारत के विभिन्न प्रांतों में विशेषतः महाराष्ट्र, केरल, बंगाल, आंध्र, उत्तराखंड, पंजाब, झारखंड आदि क्षेत्रों के छात्र आंदोलन सामाजिक परिवर्तन हेतु अपनी जिम्मेदारी निभाने को संकल्पित हैं। असम में छात्र आंदोलन ने राज्य सरकार भी बनवायी तथा छात्र मुख्य मंत्री भी दिया। आज भी वहाँ का ' आसू ' मुद्दों की राजनीति से हटा नहीं है। छत्तीसगढ़ के छात्र आंदोलन में भी दिशा-प्रेरक के रूप में 70 के दशक का अंग्रेजी-विरोधी आंदोलन अथवा जगदलपुर में एक महिला के बलात्कार के विरोध में हुए आंदोलन हैं। चाम्पा में पेयजल की माँग को लेकर किये गये आंदोलन का नेतृत्व भी छात्रों ने किया जिसमें एक छात्र शहीद हो गया। व्यापक क्षेत्र में अलग-अलग होने वाले इन प्रयासों के बावजूद सम्यक दृष्टिकोण के अभाव में छत्तीसगढ़ का यह आंदोलन स्पष्ट दिशा दे पाने की स्थिति में न आ सका। कभी विन्दा कांड जैसी घटनाएँ या छात्र आंदोलनों के नेता डॉ. काम्बले जैसे लोगों की हरकतों से हमारे छत्तीसगढ़ में प्रगतिशील छात्र आंदोलन के स्वप्न को ठेस लगती है और कुछ बिखर सा जाता है।

' सबसे खतरनाक होता है हमारे सपनों का मर जाना '[1]

हमारे छत्तीसगढ़ के समस्त विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के छात्र-छात्राओं द्वारा वर्तमान परिस्थिति में छत्तीसगढ़ के विकास के प्रश्न पर चिंतन करना निहायत जरूरी है। हम कुंठाओं को हटाने एवं समाज को प्रतिष्ठित करने वाले एक ऐसे छात्र आंदोलन का सूत्रपात करें, जिससे छत्तीसगढ़ की मौजूदा समस्याएँ ही छत्तीसगढ़ के विकास का आधार बन सकें ; बेरोजगारी, भुखमरी, पलायन, अशिक्षा, कुस्वास्थ्य से ग्रस्त हमारे देशवासियों की मुक्ति की राह प्रशस्त कर सकें। ❑

(छत्तीसगढ़ स्टूडेंट्स फ़ेडरेशन के सौजन्य से।)

[1] अवतार सिंह पाश की कविता की एक पंक्ति।

को आगे बढ़ाता जाये, तभी छत्तीसगढ़ का मजदूर छत्तीसगढ़ के विकास के साथ अपना सम्बंध बना सकेगा, स्वार्थी पूँजीपति वर्ग के किराये का टट्टू बन कर नहीं नाचेगा, हर क्षेत्र में मजदूरों का दबदबा बन सकेगा।

छत्तीसगढ़ के औद्योगिक मजदूर गुणात्मक सामाजिक परिवर्तन में एक निर्णायक इस्पाती नेतृत्व देने में कामयाब हो सकते हैं।

विभिन्न उद्योगों में फौलादी ट्रेड यूनियन नेतृत्व का अभाव क्यों ?

1. देश की जनता विभिन्न वर्गों[1] और राष्ट्रीयताओं[2] में बँटी हुई है। हर वर्ग के अपने अलग वर्ग-हित होते हैं और विभिन्न राष्ट्रीयताओं के हित भी अलग होते हैं। **अब तक भारत में वैज्ञानिक पद्धति और विचारधारा के अनुसार विभिन्न शोषित वर्गों और विभिन्न राष्ट्रीयताओं वाली जनता के बीच एकता का आधार नहीं बनाया गया है।** इस कार्य में ट्रेड यूनियनों की विशेष भूमिका को भी नजरअंदाज किया गया है।

2. शोषक वर्ग अपनी बनायी व्यवस्था के जरिये ही जिंदा है। शोषण पर आधारित शोषक वर्ग की व्यवस्था को सिर्फ उस क्षेत्र विशेष की जनता की जरूरतों के मुताबिक क्षेत्र में उपलब्ध कच्चे माल का भरपूर उपयोग करते हुए एक नयी उत्पादन पद्धति के विकास के जरिये, उस क्षेत्र की जनशक्ति के बलबूते पर, वैकल्पिक व्यवस्था कायम करने के लिए किये गये संघर्ष के द्वारा ही ध्वस्त किया जा सकता है। ट्रेड यूनियनों ने इस विषय पर कभी भी सृजनात्मक शिक्षा देने के लिए सोचा ही नहीं।

3. कुछ वर्ग मौजूदा व्यवस्था को बनाये रखना चाहते हैं, बाकी वर्ग इस व्यवस्था को खत्म करना और नयी व्यवस्था को कायम करना चाहते हैं। इन परस्पर विरोधी वर्ग समूहों में जीत किसकी होगी ? किसकी बात चलेगी ? इसका साफ जवाब है कि जो वर्ग बुद्धि और भौतिक शक्ति में ज्यादा ताकतवर होगा, विजय उसी की होगी।

वर्तमान समय में निश्चित रूप से पूँजीपति वर्ग तथा सामंतवादी तत्व ही अधिक बुद्धिमान और शक्ति-सम्पन्न हैं। उनकी बुद्धि का मुकाबला करने के लिए हमें अपनी बुद्धि का विकास करना होगा। इसके लिए चार कार्य साथ-साथ जरूरी हैं — **वर्ग संघर्ष, उत्पादन संघर्ष, वैज्ञानिक प्रयोग और इतिहास का अध्ययन।** हमारी शक्ति के विकास के लिए हमें व्यापक जनता को जगाने का काम लगातार करना होगा।

आज का ट्रेड यूनियन आंदोलन केवल इस पद्धति का उपयोग ही नहीं करता, बल्कि उसे ये बातें नापसंद भी हैं।

जहाँ पूँजीपति वर्ग एवं हर प्रकार के साम्राज्यवादी, इतिहास की हर घटना और वस्तुगत परिस्थिति से सीख लेते हैं, वहीं आज भारत के ट्रेड यूनियनवादी लोग उसे दोहराने की सोचते हैं। यह तरीका अवैज्ञानिक है।

4. हमारे जैसे पिछड़े हुए देश में पूँजीपति वर्ग मजदूरों को ट्रेड यूनियन का अधिकार

---

[1] जैसे मजदूर, किसान, पूँजीपति, छोटा व्यवसायी, जमींदार वर्ग आदि।

[2] जैसे छत्तीसगढ़ी, उड़िया, मराठी, तेलगू, बंगाली, तमिल, बिहारी, पंजाबी, झारखंडी, उत्तराखंडी आदि। भारत में ऐसे लगभग 42 राष्ट्रीयता समुदाय हैं।

किसान और बेरोजगारों की फौज। इसी प्रक्रिया से शासक वर्ग मजदूरों को दो टुकड़ों में बाँटता है। अफसर और मैनेजमेंट के लोग करीब-करीब सभी बाहर के होते हैं। वे क्षेत्रीय विकास में कोई दिलचस्पी तो लेते ही नहीं, बल्कि वे जान-बूझकर क्षेत्र की प्रगति के लिए जरूरी संसाधनों को बरबाद कर देते हैं।

6. ट्रेड यूनियनों के कार्यक्रम भी अन्य राजनैतिक सिद्धांतों की तरह वैचारिक दिवालियापन के शिकार हैं। ट्रेड यूनियन मजदूरों का संगठन होता है। मजदूर वर्ग का वैज्ञानिक सिद्धांत उनको उस नये प्रकार की राजसत्ता कायम करने के लिए प्रेरित करता है, जो वर्तमान व्यवस्था की कब्र पर खड़ी की गयी हो। **यह सिद्धांत पुराने को तोड़ने और नये का निर्माण करने का राजनैतिक सिद्धांत है।** ट्रेड यूनियन से उम्मीद की जाती है कि वह इसी सिद्धांत की रोशनी में काम करेगी। परंतु वर्तमान व्यवस्था ऐसी ट्रेड यूनियन को स्वीकार नहीं कर सकती, जो उसी की कब्र खोदे। जब वर्तमान व्यवस्था पायेगी कि ट्रेड यूनियन का व्यवहार उसके खिलाफ है तो वह ट्रेड यूनियन कानून को ही समाप्त कर देगी। ट्रेड यूनियन रहेगी या नहीं रहेगी, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि ट्रेड यूनियन ने समाज की सबसे प्रतिक्रियावादी, घृणित शक्ति को अपना दुश्मन करार देकर बाकी वर्गों के साथ तालमेल का नया सैद्धांतिक आधार बनाया या नहीं, प्रतिक्रियावादियों के आपसी द्वंद्व को तेज करने में मदद कर और एक लचीली कार्य-पद्धति पर अमल करते हुए हर मामलों में अगुआ भूमिका स्वीकार की या नहीं, एक बुनियादी सामाजिक परिवर्तन के लिए मजदूर वर्ग को जागरूक किया या नहीं ।

आज की केंद्रीय ट्रेड यूनियनें इस दिशा में किसी भी प्रकार की नीति अपनाने के बदले, सिर्फ सरकार के राजनैतिक दबाव का इस्तेमाल करके मैनेजमेंट की मदद से ट्रेड यूनियन नाम की दुकानदारी चला रही हैं। चाहे बाहरी रूप कुछ भी हो, सभी केंद्रीय ट्रेड यूनियनें दलाली की चैम्पियनशिप हासिल करने की होड़ में लगी हुई हैं।

7. राजनैतिक 'पंडितों' की स्वेच्छाचारिता के कारण भी भारत में ट्रेड यूनियन आंदोलन सही ढंग से विकसित नहीं हो पाया है। अंग्रेजों के जमाने में 'एटक' यूनियन के कम्युनिस्ट हिस्से ने समाजवादी क्रांति की आवाज बुलंद करके, उग्रवादी लाइन चलाकर मजदूर आंदोलन का सर्वनाश किया (शोलापुर का इतिहास उल्लेखनीय है)। सन् 1946-47 में भी बी. टी. रणदिवे ने समाजवादी क्रांति कहकर तेलंगाना आंदोलन को गुमराह किया। एटक यूनियन का कांग्रेसी हिस्सा उधर उद्योगों में संघर्ष पनपने न देकर मालिक वर्ग की तरफदारी करता रहा। यही हिस्सा स्वतंत्रता के बाद इंटक यूनियन बनकर सरकारी ट्रेड यूनियन के रूप में सामने आया। आज कम्युनिस्ट पार्टियों की यूनियनें इंटक की 'दिलदार' भावना से ओत-प्रोत हो चुकी हैं। चारु मजुमदार के नेतृत्व में नक्सलवादी संघर्ष ने मजदूर वर्ग में नयी आशा का संचार किया था, लेकिन उन्होंने भी बाद में ट्रेड यूनियन में संशोधनवादी नेतृत्व के खिलाफ संघर्ष न कर 'ट्रेड यूनियन छोड़ दो' वाले पलायनवादी सिद्धांत की प्रतिष्ठा की।

इन स्वेच्छाचारी राजनैतिक पंडितों की कृपा से ट्रेड यूनियनें भारत की मेहनतकश जनता की इच्छा के मुताबिक अपने को कभी भी नहीं ढाल पायीं। जो आया वह पछताया और जो नहीं आया वह भी पछताया। आज भी हरेक ट्रेड यूनियन के सदस्य-मजदूर अपने व्यक्तिगत हित और अपने उद्योग के मजदूरों के हित को देश की तमाम जनता के हितों के साथ मिलाकर,

नौकरशाही या सिर्फ केंद्रीयता की पद्धति के साथ-साथ एक और भी कार्यशैली है जिसका खतरा नजर आता है। यह कार्यशैली है — ट्राट्स्कीवादियों का पथ। यह सिर्फ जनवादी प्रक्रिया को जरूरत से अधिक महत्व देने का पथ है। हालाँकि यह पद्धति भी जनवादी प्रक्रिया को सिर्फ रोजमर्रा के छोटे-मोटे मसलों में ही लागू करती है। रणनीति तो मानो किसी अदृश्य स्थान से आ धमकती है। प्रश्न उठने पर, संगठन के बड़े आकार का बहाना लेकर इसकी बात टाल दी जाती है। अंततः कार्य पद्धति में जो भी जनवादी प्रक्रिया का इस्तेमाल होता है, उससे 'जन' गायब हो जाता है, और केवल 'वाद' बचा रहता है। फिर 'वाद' को लेकर विवाद पैदा होता है। जितने सिर, उतने ही मत और उतने ही पथ। इस प्रकार बहु-केंद्रीयता से संगठन का शरीर कैंसर की बीमारी का घर बन जाता है। आज की कई सोशलिस्ट ट्रेड यूनियनों की ऐसी ही दयनीय स्थिति हो गयी है। हालाँकि इस प्रकार की ट्रेड यूनियनों को पूँजीपति अधिक महत्व देते हैं, लेकिन मजदूर वर्ग की एकता की भावना का फायदा उठाते हुए नौकरशाही वाले ट्रेड यूनियन अधिक कामयाब रहते हैं।

मात्र जनवादी केंद्रीयता की पद्धति ही ट्रेड यूनियन की सही पद्धति हो सकती है।

9. मजदूर वर्ग की सही राजनैतिक पार्टी के अभाव में तथा सही ट्रेड यूनियन के नहीं रहने से आज 'नेता' शब्द अपनी इज्जत-आबरू खो बैठा है। स्वार्थी, अनैतिक और उच्छृंखल जीवन जीने वाले असामाजिक तत्वों के झुंड और गुंडा प्रकृति के निर्दयी व्यक्ति जब माइक के सामने खड़े होकर लम्बी-चौड़ी हाँकने में माहिर होते हैं, दरोगा साहब से दोस्ती गाँठते हैं और पद-रूपी सिंहासन पर कब्जा रखने की शैली अख्तियार कर लेते हैं तथा देश व प्रांत की राजधानियों में नियमित सम्पर्क साधते हुए आम जनता को आश्वासनों के भँवरजाल में घुमाते रहते हैं, तब ऐसे व्यक्ति 'नेता' कहलाते हैं। ऐसे नेताओं से जनता दिलोदिमाग से नफरत करती है।

एक और प्रकार के नेता होते हैं। ये मार्क्स और लेनिन की किताबों के नाम जानते हैं, और समय-समय पर उन नामों को उद्धृत करते हुए अपनी विद्वत्ता को जाहिर करते रहते हैं। ये लोग अर्जी-अपील लिखने में माहिर होते हैं। ये उत्पादन से विमुख रहते हैं। ये लोग घरेलू झगड़ों की व्याख्या भी अंतर्राष्ट्रीय और ऐतिहासिक महत्व की घटनाओं की रोशनी में करने की कोशिश करते हैं। तर्क में ये लोग रातें गुजार देते हैं, जो कुछ कहते हैं वह करते नहीं और जो करते हैं वह कहते नहीं। वे ज्यादा माला-माल नहीं होते, फिर भी रंगीन जिंदगी जीने के शौकीन होते हैं। मजदूर इन नेताओं का विश्वास नहीं करते, ये नेता मजदूरों का विश्वास नहीं करते। ऐसे ही नेताओं से सुशोभित ट्रेड यूनियनों ने मजदूरों के जीवन को दूभर बना दिया है।

संगठन हो या आंदोलन, नेतृत्व का सवाल एक महत्वपूर्ण सवाल है। एक साधारण व्यक्ति के गलत विचारों या कार्यों से अधिक लोगों को नुकसान नहीं होता, परंतु नेतृत्व के गलत विचारों और कार्यों से लाखों-करोड़ों की जिंदगियाँ बुरी तरह प्रभावित होती हैं। इसीलिए नेतृत्व के बारे में सही जानकारी होना जरूरी है।

नेतृत्व को अपने वर्ग का सबसे अधिक वर्ग-चेतना से भरपूर अंश होना चाहिए। यह बात पूँजीपति वर्ग पर भी उतनी ही लागू होती है जितनी मजदूर वर्ग पर।

हो जाती है।

पूँजीवादी विचारों वाले अवसरवादियों ने मजदूर आंदोलन को गुमराह करने के लिए अर्थवाद को जारी किया है। इन अवसरवादियों को संशोधनवादी कहा जाता है। ये मजदूरों की वैज्ञानिक विचारधारा का विरोध करते हैं और पूँजीपतियों के बताये रास्ते पर मजदूरों को ले जाने की कोशिश करते हैं।

नतीजा यह हो रहा है कि आज देश में तमाम ट्रेड यूनियनों के सामने साल में एक बार बोनस की लड़ाई लड़ने और तीन या पाँच साल में एक बार वेतनमान बदलने की लड़ाई लड़ने के अलावा दूसरा कोई कार्यक्रम नहीं रह गया है। तमाम केंद्रीय ट्रेड यूनियनों का काम सिर्फ प्रमोशन के लिए सिफारिश करना या चार्जशीट का जवाब देने की दुकानदारी तक सीमित रह गया है।

उत्पादन की नीति का निर्धारण पूँजीपति करता है। इससे धड़ल्ले से मशीनीकरण का राक्षस मजदूरों की नौकरियों को खाये जा रहा है। राजनीति करने की जिम्मेदारी ठेकेदारों, शराब ठेकेदारों, मालगुजारों आदि शोषक वर्ग को सौंप दी गयी है।

संस्कृति का ठेका बम्बई के स्मगलर और अन्य काले पैसे के पूँजीपतियों को दे दिया गया है, जो ढुसुम-ढुसुम और नंगे नाच वाली कुसंस्कृति को जन संस्कृति बनाने में ओव्हर-टाईम कर रहे हैं।

शराब के नशे में पूरा देश बेहोश है, महिलाओं पर अत्याचार जारी है और इधर ट्रेड यूनियनों के पास सिर्फ एक ही कार्यक्रम है, 'बोनस दो, बोनस दो।' पैसा बढ़ता है, महँगाई और भी बढ़ती है, मजदूर की जेब खाली हो जाती है और सूदखोर के चंगुल में जा फँसता है। ठेकेदार पैसा बढ़ाता है और शराब ठेकेदार उसे लूट ले जाता है। घर की औरत मार खाती है, बच्चों को भूखे रहना पड़ता है और मजदूर झोपड़ियों में सदा सोया रह जाता है।

आज बैंक, जीवन बीमा, गोदी (डॉक) वगैरह उद्योगों में अर्थवाद इतनी मजबूत जड़ें जमा चुका है कि वहाँ मजदूरों के सामने अपने उद्योगों को छोड़कर दूसरे उद्योगों के मजदूरों के मामलों और संघर्षों के बारे में कोई विचार ही नहीं रहता है। इन उद्योगों में ट्रेड यूनियन का नेतृत्व मजदूरों को आत्म-केंद्रित और संवेदनहीन बना चुका है।

अर्थवाद के एक और प्रकार का नमूना रेल उद्योग में देखने को मिलता है। यहाँ हर मजदूर अपने विभाग के महत्व और विभाग की समस्या से ही घिरा रहता है। वहाँ जब गार्ड साहब हरी झंडी दिखाते हैं तब गैंगमैन अपनी लाल झंडी दिखाकर बैठ जाते हैं। वहाँ पर लाल-हरे को मिलाकर सारे रेल मजदूरों को संगठित करने का प्रयास आज नहीं किया जा रहा है। अल्प समय के लिए सन् 1974 की ऐतिहासिक रेल हड़ताल ने इस दिशा में एक उम्मीद को जन्म दिया था, जिसकी गाड़ी केंद्रीय यूनियनों के चक्कर में फिर पटरी से उतर गयी। इसके फलस्वरूप 146 स्वतंत्र यूनियनों को इस तरह तानाशाही हमलों का शिकार होना पड़ा और अभी तक वे फिर से खड़ी नहीं हो पायी हैं। इस्पात उद्योग में भी इस तरह का संशोधनवादी प्रयास जारी है। इसी कारण चार्जमैन, क्रेन आपरेटर, हर्थमैन आदि मजदूरों को अलग-अलग संगठनों में संगठित करने की कोशिश चल रही है। फिर भी स्टील प्लांट की इंटीग्रेटेड (समन्वित) उत्पादन व्यवस्था के कारण इन प्रयासों को मैनेजमेंट का पूर्ण समर्थन नहीं मिल पा रहा है।

उपर्युक्त लेख पहली बार अगस्त 1990 में छमुमो की 'लोक साहित्य परिषद्' द्वारा एक पुस्तिका के रूप में प्रकाशित किया गया था। नियोगी की हत्या के बाद उनके कागजातों में 'इस्पात ट्रेड यूनियन : नयी दिशा की तलाश' शीर्षक की एक पांडुलिपि प्राप्त हुई। खोजबीन के बाद पता चला है कि यह पांडुलिपि उस भाषण की है, जो नियोगी ने अक्तूबर 1982 में दल्ली राजहरा में 'अखिल भारतीय इस्पात समन्वय समिति' के तत्वावधान में आयोजित सम्मेलन में दिया था। ऊपर प्रकाशित लेख इसी भाषण पर आधारित है। फर्क केवल इतना है कि भाषण, इस्पात उद्योग की ट्रेड यूनियनों के संदर्भ में दिया गया था, जबकि यह लेख सभी प्रकार के उद्योगों की ट्रेड यूनियनों के संदर्भ में लिखा गया है। भाषण का यह पुनर्लेखन सन् 1984 में राजनांदगाँव के कपड़ा मजदूर आंदोलन के दौरान मजदूर शिक्षण की दृष्टि से किया गया था। भाषण के जो अंश उपर्युक्त लेख में शामिल नहीं किये गये थे, वे निम्नांकित हैं —

1. *'इस्पात और भारत' (भाषण का प्रारम्भिक अंश); एवं*
2. *'स्वास्थ्य और ट्रेड यूनियन', 'महिला और ट्रेड यूनियन' व 'हमारी कार्यशैली' (भाषण का अंतिम अंश)।*

नियोगी के विचारों की पूर्णता को ध्यान में रखते हुए हम इन अंशों को भी नीचे प्रस्तुत कर रहे हैं। — स.

इस्पात और भारत

भारत एक विशाल देश है। विभिन्न राष्ट्रीयताओं की सांस्कृतिक तथा आर्थिक विविधता इस देश की विशेषता है। 18वीं शताब्दी में सामंतवादी भारत पर औद्योगिक रूप से विकसित साम्राज्यवादी अंग्रेजी हुकूमत ने आसानी से कब्जा कर लिया था। तब से लगातार देश की जनता भूख, बेरोजगारी, निरक्षरता, बीमारी और कुसंस्कृति के अंधकार में छटपटाती रही है। यह सिलसिला आज भी जारी है।

देश के विकास के लिए इस्पात बहुत ही महत्वपूर्ण है। इस्पात के समुचित उत्पादन के बिना औद्योगीकरण तथा अन्य मामलों में विकास सम्भव नहीं है।

पिछली शताब्दी के अंत तक भारत में उपयोग में आने वाला अधिकांश इस्पात इंग्लैंड से आता था। रेल लाइन, पुल बनाने के लिए बीम, चैनल से लेकर छुरी, कैंची, रौंपी और बेलचा तक विदेश से आता था। भारत में सन् 1907 में टाटा ने पहला स्टील का कारखाना खोला। सस्ते मजदूरों और कच्चे माल से इस्पात का उत्पादन करके टाटा ने काफी मुनाफा बटोरा। अंग्रेज पूँजीपतियों ने भी मशीनें बेचकर तथा भारत में उत्पादन पर कर लगाकर ढेर सारा मुनाफा कमाया।

इस्पात उत्पादन में उच्च तकनीक और भारी पूँजी निवेश की जरूरत होती है। इसलिए आजादी के बाद सत्ता में आये हुए नये-नये पूँजीपतियों ने इस्पात उद्योग को सार्वजनिक क्षेत्र

ताकि मजदूरों के हितों को (यहाँ उनके स्वास्थ्य के हितों को) प्राथमिकता देते हुए उत्पादन की प्रक्रिया को निर्धारित किया जाये।

इस्पात उद्योग के अंदर काम से सम्बंधित कुछ उदाहरणों की चर्चा की जा सकती है, जैसे कोक ओवन के मजदूरों द्वारा साँस में ली गयी गैसों से उनके स्वास्थ्य को खतरे की सम्भावना; ब्लास्ट फर्नेस, रोलिंग मिल, एक्ज़ॉस्टर हाउस, गैस बूस्टर, पावर जनरेटर, स्टील मेल्टिंग शॉप आदि में गर्मी और शोर से मजदूरों के स्वास्थ्य को होने वाली क्षति का सवाल। खदानों में मजदूरों को पर्याप्त साफ ठंडा पानी और विश्राम स्थलों का सवाल प्रमुख मुद्दे हैं।

औद्योगिक दुर्घटनाओं के पूरे मसले पर भी मौलिक रूप से पुनर्विचार करने की तुरंत जरूरत है। कारखानों और खदानों में मजदूरों की सुरक्षा की स्थिति इतनी खराब है तथा इस कदर बदतर होती जा रही है कि वहाँ इन घातक तथा विकलांगकारी घटनाओं को ' दुर्घटना ' कहने से गलत मतलब निकलता है। ये घटनाएँ आकस्मिक नहीं हैं, बल्कि ये सचमुच में वास्तविक उत्पादन प्रक्रिया के भौतिक स्वरूप के साथ जुड़ी हुई अनिवार्यताएँ हैं।

विकलांग हुए मजदूरों को फिर से सामान्य जीवन में शामिल (रिहेबिलिटेट) करने और उनको वैकल्पिक रोजगार देने का सवाल अब ऐसा सवाल नहीं रह गया है कि उसे मालिकों की दया पर छोड़ दिया जाये। इस सवाल को मूलभूत माँगों में शामिल करना चाहिए और वह भी इस बात को सुनिश्चित करते हुए कि वैकल्पिक रोजगार ऐसा हो जो मजदूर को उसके पूर्व के रोजगार के तुल्य वेतन और जिम्मेदार पद भी दे सके।

दारू पीने से सम्बंधित शारीरिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक कारकों व नतीजों को साथ लेते हुए यह समग्र प्रश्न ट्रेड यूनियन चेतना के प्रधान बिंदुओं में से होना चाहिए।

ठेका मजदूर, इस्पात उद्योग के मजदूरों का एक अच्छा-खासा हिस्सा हैं। ठेका मजदूर व्यावहारिक रूप से इस्पात उद्योग की स्थायी जरूरत हैं। इनको स्थायी करने के सवाल की चर्चा अन्यत्र की जायेगी। लेकिन हमें इस सवाल को मौलिक रूप से उठाना चाहिए कि इन ठेका मजदूरों के लिए उचित मकान, स्कूल, चिकित्सा, सफाई, पानी आदि स्वस्थ जीवन हेतु तमाम जरूरी सुविधाओं को जुटाने की जिम्मेदारी प्रधान नियोजक (मालिक) की होनी चाहिए, जो यहाँ स्टील प्लांट मैनेजमेंट और सरकार दोनों हैं।

मजदूर वर्ग समाज परिवर्तन का हिरावल दस्ता है। इसलिए उसकी जिम्मेदारी है कि वह वैकल्पिक तथा अधिक प्रगतिशील सामाजिक प्रणालियों के विकास के लिए खोजबीन और प्रयोग करे। इसमें वैकल्पिक स्वास्थ्य प्रणाली भी शामिल है। इसके साथ-साथ यह भी जरूरी है कि मजदूर वर्ग उसके पास आज उपलब्ध संसाधनों और शक्ति पर आधारित वैकल्पिक मॉडलों को खड़ा करने की कोशिश करे। निश्चित ही यह एक बड़ा मसला है। फिर भी यह ऐसा मसला है कि मजदूर वर्ग के सर्वाधिक प्रगतिशील हिस्सों को इस पर ध्यान देना जरूरी है तथा इस मसले को तमाम ट्रेड यूनियनों के व्यापक सामाजिक परिप्रेक्ष्य का अंग बनाया जाना चाहिए।

महिला और ट्रेड यूनियन

आज जो ' महिलाओं का सवाल ' सामने आया है, वह समाजवादियों के लिए कोई नयी बात नहीं है। एंगेल्स उन प्रथम व्यक्तियों में से थे जिन्होंने इस सवाल का वैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण किया था। यह सवाल अब भी एक बहुत ही महत्वपूर्ण सवाल है तथा समाजवादी

प्रभावित करने वाले वर्गीय उत्पीड़न के इन दोनों और अन्य रूपों के खिलाफ संघर्ष के जरिये ऐसी सच्ची वर्ग-सचेत महिला कार्यकर्त्ता व महिला नेता उभर सकती हैं जो एक नये समाज के निर्माण के लिए ट्रेड यूनियन संघर्ष में पुरुषों के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर पूर्ण और समान भागीदार के रूप में अपना यथोचित स्थान ग्रहण करेंगी।

हमारी कार्यशैली

1. हम आर्थिक, सामाजिक व राजनैतिक संघर्षों में पूरी निष्ठा के साथ भाग लेते हैं। हम उत्पीड़न, शोषण और हर प्रकार के गलत कार्यों के खिलाफ स्वतःस्फूर्त संघर्षों में पूरे जुझारूपन के साथ भाग लेते हैं। हम मजदूरों की इच्छाओं के खिलाफ जाकर उनके संघर्षों को अवरुद्ध नहीं करते।
2. हम ट्रेड यूनियन मामलों में नौकरशाही तौर-तरीकों के जरिये मजदूर-कार्यकर्त्ताओं के उत्साह को कुंद नहीं करते। हम मजदूरों के विचारों का दमन करने की नीति की न सिर्फ भर्त्सना करते हैं, बल्कि उसके खिलाफ संघर्ष भी करते हैं।
3. हम संघर्ष में विजय के बाद ही दम लेते हैं। हम समझौते की कायर नीति का पूरे जोर-शोर से विरोध करते हैं।
4. हम मोल-तोल के नाम पर, प्रबंधन का पिछलग्गू बन जाने की नीति से घृणा करते हैं।
5. हम मानते हैं कि ट्रेड यूनियन का काम सिर्फ आर्थिक लड़ाइयाँ ही लड़ना नहीं है। इसीलिए हम अर्थवाद के दलदल में नहीं फँसते, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक व दूसरे तमाम रचनात्मक मुद्दों पर बहादुरी के साथ संघर्ष चलाते हैं।
6. सर्वहारा अंतर्राष्ट्रवाद के नाम पर साम्राज्यवादियों का एजेंट बन जाने की नीति से हम नफरत करते हैं। हम अपने देश में बुनियादी सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व राजनैतिक बदलाव लाने के लिए दृढ़-प्रतिज्ञ हैं।
7. अपने देश की विकास प्रक्रिया की विशेषताओं पर ध्यान केंद्रित करने के जरिये हम पिछड़ी राष्ट्रीयताओं की मुक्ति और जनता की जनवादी, लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था के तहत शोषणमुक्त समाज की स्थापना के प्रति अपनी प्रतिबद्धता जाहिर करते हैं।
8. उत्पादन के क्षेत्र में हम मालिकों की नीतियों का आँख मूँद कर समर्थन नहीं करते, बल्कि जरूरत के मुताबिक वैकल्पिक उत्पादन व्यवस्था के प्रसार और उसकी स्थापना के लिए पूरी ताकत के साथ संघर्ष करते हैं।
9. हम महिलाओं व पुरुषों के बीच भेदभाव नहीं करते, बल्कि संघर्ष व उत्पादन प्रक्रिया के जरिये महिलाओं को नेतृत्वकारी स्थानों पर लाने का प्रयास करते हैं।
10. हम मजदूर वर्ग के भीतर मौजूद सभी बुराइयों के खिलाफ दोस्ताना संघर्ष चलाते हैं। हम शिक्षा व बहस के जरिये इन बुराइयों को दूर करने की कोशिश करते हैं।
11. हमारा देश खेती पर आधारित है। इसलिए हम किसानों की समस्याओं को बहुत तरजीह देते हैं। हम किसानों को मजदूर वर्ग का नजदीकी दोस्त मानते हैं।
12. हम उन कार्यकर्त्ताओं की इज्जत करते हैं जो ईमानदार, बहादुर और सृजनशील हैं।

इसका मूल मकसद यही था।

फिर भिलाई स्टील प्लांट से फायदा किसको है ?

भिलाई के इर्द-गिर्द री-रोलिंग स्टील मिलें कुकुरमुत्तों की तरह उग आयी हैं और वे भिलाई स्टील प्लांट में व्याप्त चोरी व भ्रष्टाचार के चलते फल-फूल रही हैं। यह इसी पुरानी अवधारणा को बल प्रदान करता है कि भारत का सार्वजनिक क्षेत्र जनता की बलि चढ़ाकर निजी क्षेत्र के मुनाफे को बढ़ाने का नुस्खा मात्र है।

यहाँ पाँच प्रमुख उद्योगपति हैं, जो पिछले तीस सालों के भीतर अनुमानतः 1,000 करोड़ रुपये की सम्पत्ति के मालिक बन गये हैं। इनमें से प्रमुख हैं : सिम्प्लेक्स ग्रुप का मालिक शाह घराना, बी. ई. सी. का मालिक जैन घराना, छत्तीसगढ़ डिस्टिलरीज़ का मालिक केडिया घराना। भिलाई के ये नये टाटा-बिड़ला रातोंरात उभरे हैं। अगर ऐसा नहीं है तो फिर सिम्प्लेक्स ग्रुप के हीराभाई शाह द्वारा चीन के सहयोग से 1,000 करोड़ रुपये की लागत के साथ स्पंज आयरन फैक्टरी खोलने का मतलब क्या है ? यह सबको मालूम है कि हीराभाई ने जब सन् 1968 में भिलाई में अपना औद्योगिक जीवन शुरू किया था, तब उनके पास सिर्फ एक ड्रिल और एक लेथ मशीन थी। अर्जुन सिंह मंत्रीमंडल के दौरान भिलाई में केडिया परिवार आसवनी शराब घोटाला के चलते प्रख्यात हुआ। केडिया परिवार की सालाना आमदनी 36 करोड़ रुपये है। भिलाई के इन घरानों द्वारा पैसा कमाने के तौर-तरीकों के बारे में किसी अटकलबाजी की जरूरत नहीं है।

इन उद्योगों में कार्यरत मजदूरों की दुर्दशा

सिम्प्लेक्स ग्रुप के पास तीन जिलों में इंजीनियरिंग और कास्टिंग की सात इकाइयाँ हैं। जिस गति से इन औद्योगिक इकाइयों का फैलाव हुआ है उसे विकास-दर के सामान्य मानदंडों के आधार पर समझा नहीं जा सकता है। ये औद्योगिक इकाइयाँ भारत भर में स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लि. (सेल) द्वारा संचालित स्टील प्लांटों — मसलन भिलाई, राउरकेला, विशाखापत्तनम, दुर्गापुर और बोकारो — की प्रमुख आपूर्तिकर्त्ता हैं। इसके अलावा, उनके उत्पाद जापान व सोवियत संघ को निर्यात किये जाते हैं।

इतने बड़े कारोबार के बावजूद सिम्प्लेक्स ग्रुप में सिर्फ 105 स्थायी मजदूर काम करते हैं, जबकि उसके छत्तीसगढ़ स्थित कारखानों में कुल मिला कर 2,000 मजदूर काम करते हैं। यानी कि बाकी के 1,895 मजदूर अस्थायी और ठेका मजदूर हैं। मजदूरों को प्रबंधन की मर्जी पर रखा और निकाला जाता है। ठेकेदार ज्यादातर इलाके के ' गुंडे ' हैं, जिनमें से प्रत्येक के मातहत चार या पाँच मजदूर काम करते हैं। ठेका मजदूरों को रत्ती भर भी स्वतंत्रता नहीं है। ठेकेदार शोषण के खिलाफ आवाज उठाने वाले मजदूरों को ' ठीक ' करने के लिए गुंडों का खुला इस्तेमाल करते हैं। ये तमाम उद्योग इसी रणनीति पर अमल करते हैं।

यकीनन, मजदूरी काफी कम है !

भिलाई स्टील प्लांट के कर्मचारियों के ज्यादा वेतन व मजदूरी के चलते भिलाई में लगभग तमाम जरूरी चीजों का दाम बहुत ज्यादा है। तुलनात्मक रूप से समकक्ष उद्योगों के मजदूरों

कुछ उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं –

इस ट्रेड यूनियन के उपाध्यक्ष श्री रवीन्द्र शुक्ल और एक अन्य पदाधिकारी श्री जगदीश वर्मा पर लाठी व चाकू से हमला किया गया। पिछले एक महीने के दौरान यूनियन के अन्य चार सदस्यों पर भी घातक हमला किया गया। हिंसा के हाल के दौर में सायंकालीन अखबार 'भिलाई टाइम्स' के सम्पादक डॉ. देवी दास पर 11 दिसम्बर को उद्योगपतियों के गुंडों ने लाठी व चाकू से हमला किया। उनका दोष यही था कि उन्होंने आर. के. इंडस्ट्रीज़ में लगी आग की धोखाधड़ी का, जिसमें इस यूनियन के 15 सदस्यों को पुलिस ने झूठ-मूठ फँसा दिया था, पर्दाफाश करने का साहस किया था।

इस यूनियन के निर्माण के बाद से इससे जुड़े 700 मजदूरों की छँटनी कर दी गयी।[1] जिला प्रशासन द्वारा यूनियन की गतिविधियों पर गैर-कानूनी और मनमाने ढंग से प्रतिबंध लगाया जाना मजदूरों के जनतांत्रिक अधिकारों के हनन के नये मानदंड स्थापित कर रहा है। एक ओर जहाँ एटक जैसी दूसरी यूनियनों को भिलाई स्टील प्लांट के गेट पर धरना देने की इजाजत दी गयी, वहीं दूसरी ओर प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ के मजदूरों को हड़ताल के आरोप में धारा 144 के तहत गिरफ्तार कर लिया गया। छमुमो और 14 अन्य सामाजिक समूहों को इस साल जिला प्रशासन ने कानून व व्यवस्था की समस्या के नाम पर गांधी जयंती समारोह आयोजित करने की भी इजाजत नहीं दी। फलस्वरूप छत्तीसगढ़ के करीब एक लाख मजदूर-किसानों को भिलाई के पूर्व में 40 कि. मी. दूर जाकर रायपुर में राष्ट्रपिता का जन्मदिन मनाना पड़ा।

सरकार की साँठ-गाँठ

इन उद्योगपतियों के गुंडों के आतंक से पूरा इलाका त्रस्त है। लेकिन आज तक एक भी गुंडा पकड़ा नहीं गया, जबकि उन्होंने ट्रेड यूनियन के छह सदस्यों और एक पत्रकार पर कातिलाना हमले किये हैं। भारतीय जनता पार्टी की मध्य प्रदेश सरकार भिलाई के इन औद्योगिक घरानों के स्वार्थों की पूर्ति का साधन बनी हुई है, क्योंकि चुनाव के लिए पैसा वे ही देते हैं। मौजूदा सरकार के गुर्गे और उद्योगपति रोजाना एन. आर. घोषाल, जनकलाल ठाकुर और शंकर गुहा नियोगी जैसे ट्रेड यूनियन नेताओं के खिलाफ कठोर कार्रवाई की माँग कर रहे हैं। इन राजनैतिक दलालों की ढिठाई का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि उन्होंने खुलेआम इन नेताओं को राष्ट्रीय सुरक्षा कानून (रासुका) के तहत गिरफ्तार करने की माँग की है। उनकी गिरफ्तारी के लिए अनुकूल माहौल तैयार करने के लिए भाजपा सरकार ने दुर्ग जिले के तीन नागरिकों और रायपुर जिले के दो नागरिकों को पिछले पखवाड़े रासुका के तहत गिरफ्तार कर लिया। 'पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज़' ने इस कार्रवाई की तीव्र भर्त्सना की है।

सहायक श्रम आयुक्त (राज्य) ने समझौते के लिए अब तक पाँच मीटिंगें बुलायी हैं। लेकिन, इन उद्योगपतियों ने देश के तमाम जनतांत्रिक कायदे-कानूनों को नजरअंदाज करते हुए इस वैधानिक संस्था के हस्तक्षेप को स्वीकार करने से इंकार कर दिया।

---

[1] छमुमो द्वारा सहायक श्रम आयुक्त, रायपुर, को दी गयी जानकारी के अनुसार यह संख्या दिसम्बर 1991 तक बढ़कर 3,000 हो गयी और जून 1992 तक 4,200 हो गयी। – स.

बल पर देश की नीति, योजनाएँ लागू करने के लिए कानून बनाये जाते हैं। सरकार का मुख्य कार्यपालक ' प्रधान मंत्री ' सत्ताधारी राजनैतिक पार्टी के संसदीय दल द्वारा निर्वाचित होता है तथा उसके प्रति जिम्मेदार होता है। राष्ट्रपति प्रणाली में सरकार का मुख्य कार्यपालक ' राष्ट्रपति ' संसदीय दल के प्रति सीधा जिम्मेदार नहीं होता और देश की नीतियों, योजनाओं के कार्यपालन में उस व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों की भूमिका अहम होती है। दूसरे शब्दों में संसदीय व्यवस्था पार्टी-प्रधान होती है और राष्ट्रपति व्यवस्था व्यक्ति-प्रधान।

जब अर्थनीति एवं राजनीति में अस्थिरता एवं अनिश्चितता व्याप्त हो और व्यवस्था इन समस्याओं को हल कर पाने में असमर्थता महसूस कर रही हो, उस समय व्यक्ति-प्रधान प्रणाली पर जोर दिया जाता है, ताकि तमाम खराबियों, नीतियों की गड़बड़ियों व असफलताओं को एक व्यक्ति के मत्थे पर मढ़कर व्यवस्था निश्चिंत हो जाये। समय-समय पर तानाशाही हुकूमत लागू करने की सुविधा भी राष्ट्रपति प्रणाली में होती है। किंतु माँ न बन पाने पर यह जरूरी नहीं कि स्त्री बाँझ हो। बेशक वर्तमान संसदीय व्यवस्था चरमरा गयी है। किसी भी राजनैतिक पार्टी में न तो राष्ट्र की वर्तमान आर्थिक-सामाजिक समस्याओं को हल कर सुंदर भविष्य बनाने की कल्पना है और न इसकी इच्छाशक्ति ही। सम्पूर्ण देश में वैचारिक एवं राजनैतिक जड़ता व्याप्त है। सभी राजनैतिक पार्टियों के नेता से लेकर कार्यकर्ता तक हाथ-पर-हाथ धरे, हर पाँच साल में एक लहर के इंतजार में बैठे रहते हैं। ' गरीबी हटाओ ', ' इंदिरा लहर ', ' जनता लहर ', ' सहानुभूति लहर ' — ऐसी बहुत सी लहरें देश में व्याप्त इस राजनैतिक जड़ता को क्षणिक जीवन देती हैं। लहर के अभाव में नकारात्मक वोट संगठित नहीं हो पाते। समय-समय पर एक पार्टी के बहुमत का अभाव होता है और प्रलोभन, दलबदल, विभाजन आदि प्रवृत्तियों से संसदीय व्यवस्था संकटग्रस्त हो जाती है। इस संकट से उबरने के लिए अक्सर लोग कारणों की गहराई तक पहुँचने की इच्छा नहीं रखते, और संसदीय प्रणाली को ही कोसते रहते हैं। कुछ मूर्ख (राजनैतिक पंडित) सैनिक शासन प्रणाली की माँग कर स्वर्ग-सुख का अनुभव करते हैं। हमें इस राजनैतिक जड़ता को दूर करने के लिए कारणों की गहराई तक पहुँचकर सक्रियता और सृजनशीलता के जरिये, समस्याओं को दूर कर जनवादी प्रक्रिया में प्राण फूँकना होगा। गुलामी के खिलाफ संघर्ष के दिनों में हमारे तत्कालीन राजनेताओं के दिलो-दिमाग उन्हीं अंग्रेजों की पार्लियामेंट से प्रभावित थे, जिन्होंने हमें गुलाम बनाकर रखा था। यह सही है कि ब्रिटिश संसदीय प्रणाली ने सामंतवादी प्रवृत्तियों के खिलाफ पूँजीवादी जनवाद को प्रतिष्ठित कर एक प्रगतिशील भूमिका निभायी थी। ब्रिटिश पार्लियामेंट की अवधारणा से परिचित व प्रेरित राजनेताओं ने संसद को जनवाद का प्रतीक माना और भारत में संसदीय प्रणाली से राजकाज चलाने के लिए साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्ष छेड़ा। ' अंग्रेज भगाओ ' के नारे के साथ भविष्य की संसदीय प्रणाली के लिए जनाधार बनाने के विभिन्न कार्यक्रम उन्होंने लिये। हर एक राष्ट्रवादी आंदोलन (विदेशी कपड़ों की होली जलाकर) एवं बेकारी के खिलाफ संघर्ष से व्यापक जनाधार का निर्माण हुआ। महात्मा गांधी के नेतृत्व में अछूतों का मंदिर-प्रवेश, शराबबंदी, चरखा आंदोलन (परम्परागत उद्योगों को स्थायित्व देने का प्रतीक) आदि के साथ-साथ सामाजिक भेदभाव के खिलाफ जेहाद छेड़ा गया था। साम्यवादियों व समाजवादियों ने मजदूरी बढ़ाने एवं जमीन पर किसानों के मालिकाना हक के लिए आंदोलन किये — इससे भी संसदीय प्रणाली के लिए आवश्यक जनवादी चेतना का अंकुरण हुआ।

कम्पनियों के अजगर ने प्रवेश किया। मिश्रित अर्थनीति के नाम पर बनी लायसेंस व कर नीति में सिर्फ कालाधन ही पनप सकता था। इससे भ्रष्टाचार बढ़ता गया। उपनिवेशी खाद से सिंचित इस भ्रष्टाचार की नर्सरी में नवधनाढ्य वर्ग ने जन्म लिया।

राज्य की कार्यपालिका का आधार-स्तम्भ नौकरशाही ढाँचे को माना जाता है। हमारे देश में सन् 1947 से पहले के नौकरशाह विलायत के पूँजीवादी नौकरशाही ढाँचे से प्रभावित थे। इसलिए उनमें पूँजीवादी नैतिकता के गुण मौजूद थे। आजादी के बाद हमारा नौकरशाही ढाँचा भी अधोपतित हुआ एवं देशी सामंती संस्कार नौकरशाहों पर हावी हो गये। देशी सामंती संस्कार एवं उपनिवेशवादी अर्थनीति के योग ने एक अपंग राजनैतिक संस्कृति को जन्म दिया, जिसका फायदा नवधनाढ्य वर्ग ने उठाया। देश धीरे-धीरे दिशाहीनता से ग्रसित होता गया। **दिशाहीनता भ्रष्टाचार की जननी है। इसी कारण समूची व्यवस्था में भ्रष्टाचार हावी हो गया।** संसदीय प्रणाली भी उससे अछूती नहीं रह पायी। आजादी के पहले एवं उसके तत्काल बाद मुद्दों एवं नीतियों पर चर्चा करने की परम्परा बनी थी, वह समाप्त हो गयी। काले धन ने राजनीति में अपना खेल जमाना शुरू किया। अर्थनीति की दिशाहीनता से जिस काले धन का समावेश हुआ, उस काले धन को लेकर नवधनाढ्य वर्ग ने राजनीति में अपना सिक्का जमा लिया। आज की राजनीति में टाटा-बिड़ला की जितनी पकड़ है, अम्बानी-वाडिया का असर उससे कोई कम नहीं है। **'ईश्वर-अल्लाह तेरे नाम' आज उतना महत्वपूर्ण नहीं है, जितना कि अयोध्या का राम मंदिर।** उस जमाने में टाटा-बिड़ला के कैम्प में संसद सदस्य रहा करते थे। आज सिम्पलेक्स या केडिया भी अपनी-अपनी झोली में दो-चार संसद सदस्य रखते हैं।

राजनैतिक पार्टियों का संकट

राजनीति में इन नवधनाढ्यों की दखल से नैतिकता का पतन एवं राजनैतिक संस्थानों में जनवादी प्रक्रिया का तिरस्कार हुआ। हर पार्टी में बहु-केंद्रीयता कायम हुई। नवधनाढ्यों की तात्कालिक माँगों के लिए इसके गुटों द्वारा प्रदर्शित चरम अनुशासनहीनता, जिसने दलबदल-विधेयक को ही संदर्भहीन बना दिया, यह इसी बहु-केंद्रीयता का द्योतक है। इस अनुशासनहीन बहु-केंद्रीयता के कारण आज हर राजनैतिक पार्टी संकट में है और वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था चरमरा सी गयी है। व्यवस्था को तोड़ने का जो काम आज तक कम्युनिस्ट नहीं कर पाये, जाने-अनजाने हमारा अतिस्वार्थी नवधनाढ्य वर्ग उसे अंजाम दे रहा है। सहज ही हमारा ख्याल असम, पंजाब, कश्मीर की ओर चला जाता है।

जिस चंद्रशेखर ने नयी औद्योगिक नीति की खुली आलोचना की थी, प्रधान मंत्री बनने के बाद सबसे पहले उसी नयी औद्योगिक नीति के प्रति निष्ठा प्रकट कर उसे लागू करने की घोषणा की। जिस सुंदरलाल पटवा ने नर्मदा बाँध रोकने का आश्वासन देकर उस क्षेत्र में चुनाव जीता था, मुख्य मंत्री बनने के बाद पटवाजी उसी नर्मदा बाँध को बनवाने का दावा करते हैं। 'गरीबी हटाओ' से लेकर 'कर्ज माफी' तक सारे लुभावने नारे जनता को क्षणिक तसल्ली देकर वोट बैंक पक्का करने की नजर से ही लगाये जाते हैं।

वर्तमान संसदीय राजनीति की चरम दुर्गति तो तब होती है जब आर्थिक महत्व तथा राजनैतिक ढाँचे के सवाल को एक ओर ढकेल कर स्वर्ण मंदिर से अयोध्या तक तर्कहीन बात की जाती है। जनता में घोर निराशा व्याप्त है। संसदीय प्रणाली से विश्वास डगमगाने लगा है।

उपर्युक्त कार्यक्रम प्रस्तुत करते हुए इसी तारतम्य में नियोगी ने लिखा है कि क्योंकि 'गुलाम ही गुलामी की व्यवस्था खींचकर ले जा रहा है', इसलिए अगर इसी पर तसल्ली की जाये तो देश में अराजकता फैलना अवश्यंभावी है। अब समय आ चुका है कि 'देश के सबसे गरीब पर नजर रखते हुए' योजनाओं पर बल देना होगा, क्योंकि 'जनता ही निर्णायक है' और 'जनता की अस्मिता बरकरार रखने वाली अर्थनीति, राजनीति एवं संस्कृति स्थापित करने के लिए संसदीय, जनवादी प्रक्रिया की रूपरेखा तैयार करनी ही होगी।' — स.]

(छमुमो की लोक साहित्य परिषद् द्वारा दिसम्बर 1991 में प्रकाशित 'संशोधित द्वितीय संस्करण' से साभार।)

चौराहे पर खड़े देश को कौन दिशा देगा ?

भारत के वर्तमान राजनैतिक हालात का नियोगी मार्क्सवादी दृष्टिकोण से विश्लेषण किया करते थे। उनका विश्लेषण और उस पर आधारित पूर्वानुमान कितना सटीक होता था, यह उनके जून 1991 में प्रकाशित इस लेख से देखा जा सकता है। — स.

आखिर दसवीं लोकसभा के लिए चुनाव सम्पन्न हो ही गये। शायद आजाद भारत के इतिहास में पहली बार चुनाव प्रक्रिया को एक लम्बी निश्चितता-अनिश्चितता से गुजर कर आना पड़ा। इस बीच एक प्रखर दृढ़ संकल्प वाले महत्वाकांक्षी राष्ट्रपति के अभाव में आपात्‌काल का खतरा भी टल गया। अब अगले दो-चार दिनों में त्रिशंकु संसद की परिस्थिति को झेलते हुए एक सरकार अवश्य बन जायेगी। इस सरकार को स्थायी बनाने के लिए हर प्रकार की कोशिश भी जारी रहेगी, क्योंकि वर्तमान परिस्थिति में कोई भी राजनैतिक दल दुबारा चुनाव के नाम पर आम जनता के सामने जाने के लिए तैयार नहीं है।

सरकार बनने में समस्या

देश के कुछ बड़े औद्योगिक घराने व मझोले उद्योगपतियों ने यह सपना सँजोये रखा है कि कदाचित कांग्रेस और भाजपा गठबंधन से एक स्थायी सरकार बने, पर देश की वर्तमान राजनैतिक परिस्थिति शायद इनके सपने को साकार नहीं होने देगी। इस निर्वाचन से प्राप्त जनादेश भी इस विचार के प्रतिकूल है। नागपुर के भाजपा उम्मीदवार एवं पूर्व कांग्रेसी सांसद बनवारी लाल पुरोहित की करारी हार, वसंत साठे जैसे दिग्गजों की मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी से शिकस्त, राजधानी में आडवाणी जी जैसे दिग्गज की सीमांत विजय, उत्तर प्रदेश की राजनीति में कांग्रेस का मिट जाना एवं भाजपा तथा जद के दोनों ध्रुवों पर हो रहा ध्रुवीकरण, इस बात का संकेत देता है कि कांग्रेस को अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए यह जरूरी होगा कि वह अगला

मोर्चा, वाम मोर्चा व जनता दल की एकता बनी रहेगी। अब भाजपा को उत्तर प्रदेश में सरकार बनानी है। जनता दल मुख्य विरोधी की जिम्मेदारी उत्तर प्रदेश में लेगा। भाजपा के उत्तर प्रदेश की सत्ता में आने के बाद उसकी असफलता जनता दल में व्याप्त आतंक को कम करेगी, पर राष्ट्रीय मोर्चे-वाम मोर्चे में बिखराव की प्रक्रिया भी शायद वहीं से शुरू होगी।

क्या कांग्रेस टूटेगी ?

स्वतंत्र भारत में पहली बार उत्तर प्रदेश और बिहार के मतदाताओं ने कांग्रेस को पूरी तरह नकारा हैं। राजीव गांधी की मृत्यु से प्राप्त संवेदना मतों के बावजूद इन राज्यों में कांग्रेस को सीट तो नहीं ही मिली, बल्कि मतदाताओं के रुझान में आये धनात्मक परिवर्तन के बावजूद भी कांग्रेस अपनी उखड़ती जड़ों को न बचा सकी। जबकि हरियाणा तथा मध्य प्रदेश में कांग्रेस ने उल्लेखनीय कामयाबी हासिल की है। फिर भी इन प्रांतों की जीत के आधार पर वह निकट भविष्य में उत्तर प्रदेश व बिहार में अपनी पूर्व स्थिति पर पहुँच सकेगी, यह संदिग्ध है। निश्चित रूप से इस बार कांग्रेस की कमान सँभालने वाले लोग हिन्दी-भाषी क्षेत्र के नहीं होंगे। ऐसी स्थिति में कांग्रेस की कमान सँभालने वाले नये प्रधान मंत्री को कांग्रेस का वर्चस्व सम्पूर्ण भारत में बरकरार रखने के लिए हिन्दी-भाषी प्रदेशों – उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश एवं राजस्थान – की विशालकाय कृत्रिम संरचना पर ध्यान देना ही होगा, तभी ये हिन्दी भाषी राज्यों पर स्थायी रूप से वर्चस्व कायम रख सकेंगे। विकास की दृष्टि से इसका औचित्य भी है। छोटे राज्यों में हमेशा विकास दर तीव्र होती है। इनका प्रबंधन अपेक्षाकृत आसान होता है। कानून-व्यवस्था नियंत्रण की दृष्टि से भी छोटे राज्यों का निर्माण करना समय की महती आवश्यकता है।

अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य में परिवर्तन

सोवियत रूस के नेतृत्व वाले समाजवादी खेमे के पतन के बाद अमरीका, तृतीय विश्व पर हावी होने के लिए जी-तोड़ मेहनत कर रहा है। यह सर्वविदित्त है कि कांग्रेस में दोनों ही – रूसी एवं अमरीकी – खेमों के समर्थक मौजूद हैं। फिर भी कांग्रेस एक मध्यमार्गी दल है। क्या कांग्रेस का नया नेतृत्व अंतर्राष्ट्रीय राजनैतिक परिदृश्य में आये तूफान के दौरान कांग्रेसी जहाज को संतुलित रखकर आगे ले जा पायेगा या हवा का रुख ही इनका मार्ग निर्धारित करेगा ? वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में आये समुद्री तूफान जैसे प्रतिकूल वातावरण में नाव को वांछित मध्यमार्गी दिशा में चला पाना क्या सम्भव हो सकेगा ? वर्तमान संसद में राष्ट्रीय मोर्चा व वाम मोर्चा के सौ से अधिक सदस्यों की उपस्थिति इस मामले में सहायक सिद्ध हो सकती है।

वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय परिवेश में यह भी सिद्ध हो चुका है कि तृतीय विश्व में जहाँ-जहाँ अचानक दक्षिण पंथ की ओर झुकने की कोशिश की गयी, वहाँ जन आंदोलन प्रबल हुआ। निकारागुआ, फिलीपीन्स सहित लातिनी अमरीकी एवं अफ्रीकी देशों में हो रही वर्तमान हलचल इसका सबूत है।

ऐसी परिस्थिति में कांग्रेस के नेतृत्व के लिए होने वाली प्रारम्भिक खींचतान के बाद द्वितीय चरण में कांग्रेस दल अपनी स्थिति को सँभाल लेगा पर आज की स्थिति में कांग्रेस के टूटने की सम्भावना को पूरी तरह नकारा नहीं जा सकता।

जैसे अर्थशास्त्री से लेकर कांग्रेस के पूर्व नेतागणों तक ने मंजूरी दी थी एवं कम्युनिस्टों ने भी इसका स्वागत किया था। पूर्व में हमारे इस्पात कारखाने भारत में ही उपलब्ध कोयले पर निर्भर थे, और इस्पात कारखाने में ऊर्जा स्रोत के रूप में लिग्नाइट का उपयोग करने पर भी विचार चल रहा था। इंग्लैंड के लीड्स विश्वविद्यालय का टेक्सटाइल (वस्त्र) विभाग आज भारत के सूती मिलों को दिशा निर्देशन दे रहा है। आज से 200 वर्ष पूर्व हमारे ढाका के मलमल बनाने वाले कारीगरों का अँगूठा काटने वाले जिन अंग्रेजों ने पारम्परिक उद्योगों को संकट में डाला था, उन्हीं के वंशज आज नयी तकनालाजी की तलवार से हमारे लाखों बुनकरों एवं मिल मजदूरों का सिर काटने के लिए तलवार भाँज रहे हैं। इन नीतियों के चलते देश पर कर्ज का बोझ बढ़ता जा रहा है। मुद्रास्फीति ' घोषित-अघोषित ' अनिवार्यता बन गयी है और हम अपने देश की मूलभूत समस्याओं के निराकरण के लिए एक स्थायी सोच भी नहीं बना पा रहे हैं। इस सिलसिले में यह उल्लेखनीय है कि अपमानजनक शर्तों पर आई. एम. एफ. का कर्ज हमारी समस्याओं के निदान का रास्ता नहीं है, बल्कि यह देशद्रोही आधुनिकीकरण के नाम पर हमारी आर्थिक आजादी के प्राण भी ले लेगा। संसद के भीतर हमारे विद्वान सांसद इस पर कुछ भी न कर सकेंगे। एक व्यापक देशप्रेमी व जनवादी जन संगठन को इसके खिलाफ एक जबर्दस्त जनमत अभियान चलाना होगा। **जन आंदोलन के जरिये कर्जा लेने की प्रवृत्ति पर तीव्र प्रहार करके ही हम सरकार को इस प्रवृत्ति से विमुख कर सकेंगे।**

यह विडम्बना ही कही जायेगी कि हम कश्मीर, पंजाब सहित देश के अन्य क्षेत्रों में चल रहे आतंकवाद से तो मुक्ति पाना चाहते हैं, पर हमारी राजनीति में शस्त्र व्यापारी खशोगी और चंद्रास्वामी की शर्मनाक उपस्थिति से भी कोई बुद्धिजीवी व्याकुल नहीं होता। क्या शस्त्र व्यापारियों की भारत की राजनीति में बेरोकटोक निर्लज्ज उपस्थिति देश में अशांति के लिए जिम्मेदार नहीं है ? यह भी एक विडम्बना ही है कि देश में विदेशी दवा कम्पनियाँ प्रति वर्ष करोड़ों रुपयों का मुनाफा कमाती हैं और बस्तर जैसे पिछड़े इलाकों में प्रति वर्ष हजारों लोग सिर्फ शुद्ध पेयजल के अभाव में पेचिश की बीमारी से कालकवलित होते हैं।

एक सकारात्मक रुझान

यह सच है कि उत्तर प्रदेश एवं गुजरात में भाजपा को अभूतपूर्व सफलता मिली और मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश व राजस्थान में रामशिला पूजन की तात्कालिक तर्कहीन भावना वास्तविकता के तथ्य से ध्वस्त हो चुकी है। जहाँ-जहाँ भाजपा की सरकारें थीं, वहाँ-वहाँ ही भाजपा को मात मिली।

उत्तर प्रदेश में भाजपा को और भी कठिन एवं प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करना होगा। आम जनता का एक हिस्सा अब भाजपा से लगातार यह माँग करता रहेगा कि अयोध्या का राम मंदिर एक समयबद्ध कार्यक्रम के तहत निर्मित किया जाये। यह माँग जितनी प्रबल होती जायेगी, जन समस्याएँ सत्ता-पुरुषों की नजर से उतनी ही दूर होती चली जायेंगी। क्योंकि मस्जिद गिराना असम्भव है, इसीलिए भाजपा के गरम दलों (बजरंग दल, विश्व हिन्दू परिषद् , शिवसेना आदि) की भाजपा नेतृत्व से ही टकराव की स्थिति बनेगी। **जिस राम मंदिर के शिला पूजन से भाजपा का उत्थान व विजय अभियान प्रारम्भ हुआ, उसी रामशिला के**

हमारा पर्यावरण

यह सम्भवतः नियोगी का अंतिम लेख है। यह जुलाई 1991 में लिखा गया था। पर्यावरण एवं विकास के रिश्ते पर नियोगी का जनवादी दृष्टिकोण इस लेख में स्पष्ट है। यह लेख नियोगी की दिलचस्प व सहज लेखन शैली की भी सुंदर मिसाल है।
— स.

प्रेक्षण एक पद्धति है जिससे हम जानकारियाँ प्राप्त करते हैं। समानताओं, समस्याओं एवं समधर्मिताओं या असमानताओं, विरूपताओं एवं विपरीत धर्मिताओं का पर्यवेक्षण कर हम अपनी जानकारी को पक्का बनाते हैं। जानकारी हासिल करना हमारी सभी की बुनियादी जरूरत है।

विचलित करने वाली जानकारियाँ, जैसे कि वायुमंडल की ऊपरी सतह की ओज़ोन गैस परत का विघटन, हवा में आक्सीजन की कमी, जहरीली गैसों का प्रतिशत बढ़ जाना आदि हमें व्याकुल बनाती हैं। ट्रेड यूनियन के जागरूक कार्यकर्ता इस पर समय-समय पर चर्चा करते हैं।

क्षेत्र में स्थित शंखिनी नदी का पानी और दल्ली माईन्स से निकलता हुआ प्राकृतिक नालों का पानी जब लौह अयस्क के फाइन्स के साथ मिलकर लाल रंग का हो जाता है या डिस्टिलरी, इस्पात कारखानों और फर्टीलाइज़र प्लांट से निकलते हुए विभिन्न केमिकल्स से विषाक्त तरल पदार्थ जब शिवनाथ या खारून नदी के पानी को जहरीला बना देते हैं, तब औद्योगिक विकास के नाम पर विनाश की प्रक्रिया देखकर हम चिंतित हो उठते हैं। इस पर यूनियन में गर्मागर्म बहस होती है।

गैस बूस्टर, एक्ज़ॉस्टर हाऊस, कम्प्रेसर या ब्लास्ट फर्नेस में काम करने वाले मजदूर साथी जब कुछ दिन काम करने के बाद क़ोयल की मधुर आवाज को न सुन पाने की शिकायत करते हैं, हम उसे अपनी बदनसीबी मानकर चुप रह जाते हैं।

उल्लेखित जानकारियाँ साधारण प्रकृति की हैं, फिर भी हम पर्यावरण की सुरक्षा के विशेष मुद्दे को साधारण प्रकृति की जानकारियों के साथ मिलाकर देखने में असमर्थ रहे।

खदान परिक्षेत्र में पर्यावरण की विनाशलीला चरम बिंदु पर थी। ट्रेड यूनियन के कार्यकर्ता इस सिद्धांत पर विश्वास करते हैं कि —

1. जहाँ अन्याय या अत्याचार हो वहाँ प्रतिरोध अवश्य होगा।
2. विनाश की प्रक्रिया का, निर्माण की सृजनशीलता द्वारा मुकाबला किया जा सकता है।

बात छोटी सी थी। एक आदिवासी किसान एक रोज यूनियन दफ्तर में आकर रोने लगा और बोला कि वह और उसके साथी सूखी जलाऊ लकड़ी का गट्ठा सिर पर ढोते हुए ला रहे थे, तब जंगल विभाग के एक अधिकारी ने उन्हें मारपीट कर उनसे जलाऊ लकड़ी का गट्ठा छीन लिया और हाथों-हाथ दूसरों को वह लकड़ी बेच दी। "कल हरियाली त्यौहार का दिन है

3. पर्यावरण में, जहाँ तक जंगल का सवाल है, जंगली इलाकों के निवासियों के लिए जंगल पर आधारित उनके हित को सुनिश्चित करना होगा, ताकि उनमें यह भावना बनी रहे कि ' जंगल हमारी सम्पत्ति है। '

4. वर्तमान जंगल-नीति के तहत जिन गलत उपायों पर अमल किया जा रहा है, उन्हें बदलने के लिए यथासम्भव प्रयास किया जायेगा। एक वैकल्पिक पद्धति का प्रचार कुछ हद तक अपने बूते पर लागू कर एक मजबूत जनमत बनाना होगा।

5. व्यवस्था की विकृतियों पर कठोर प्रहार किया जायेगा एवं साथ-साथ सुझाव के रूप में नयी रूपरेखा बनायी जायेगी।

6. ' अपने जंगल को पहचानो ' के तहत एक नये प्रकार का कार्यक्रम बनाया जायेगा ताकि जंगल के साथ हम अपने रिश्ते को मजबूत कर सकें।

7. जल प्रदूषण पर कठोर प्रहार किया जायेगा और शुद्ध एवं साफ जल के लिए सरकार से अधिक-से-अधिक नलकूप निर्माण की माँग की जायेगी।

8. ध्वनि प्रदूषण की रोकथाम के लिए लाउड स्पीकरों के अत्यधिक उपयोग के खिलाफ जनमत तैयार करने की कोशिश की जायेगी।

9. यूनियन के जागरूक कार्यकर्ता देश-विदेश में हो रहे पर्यावरण आंदोलनों के बारे में जानकारी हासिल करेंगे एवं आंदोलनों के पक्ष में भाई-चारा आंदोलन सहित अन्य प्रकार का समर्थन देने के लिए अपने सदस्यगण एवं आम जनता को तैयार करेंगे।

10. उद्योगों में जहाँ हमारी यूनियन कार्यरत है, वहाँ विशेष रूप से हवा में उड़ते हुए धूल कणों को रोकने के लिए इन उद्योगों के मैनेजमेंट से माँग करना, ध्वनि प्रदूषण के खिलाफ आवाज उठाना एवं ध्वनि प्रदूषण के कारण पीड़ित मजदूर साथियों के लिए कुछ कार्यक्रम तय कराना।

11. पर्यावरण की सुरक्षा की आड़ में नौकरशाहों व अधिकारियों की श्रम एवं धन शक्ति की फिजूलखर्ची के खिलाफ आवाज बुलंद करना, पर्यावरण की सुरक्षा की आड़ में मजदूर-विरोधी नीतियों को चलाने पर रोक लगाना और पर्यावरण को केवल अमूर्त रूप से देखते हुए उद्योग-विरोधी वातावरण [1] तैयार करने के खिलाफ कठोर प्रतिरोध पैदा करना जरूरी है।

यह क्षेत्र बस्तर जिले के उत्तर और दुर्ग जिले के दक्षिण भाग में स्थित है। जहाँ किल्लेकोड़ा पहाड़ समाप्त होता है, वहाँ दल्ली, झरनदल्ली, राजहरा, महामाया की पहाड़ियों के बीच से क्षेत्र के आसपास तांदुला, सुखा, किरियाकसा नाले प्रवाहित होते हैं। यह क्षेत्र लौह खनिज से भरपूर है और यहाँ वर्तमान में एक विकसित एवं एशिया की वृहत्तम लौह खदान है। आज से 35 वर्ष पूर्व जब लोग कुसुमकसा से डौंडी या बस्तर की तरफ चलते थे तो घने जंगल से होकर उन्हें

---

[1] यहाँ उन ' विशुद्ध ' पर्यावरणवादियों के प्रति संकेत है जो पर्यावरण को इंसान की जरूरतों और उसके वर्ग-आधारित दोहन/शोषण से अलग करके देखते हैं और इसलिए अक्सर उद्योग-विरोधी दृष्टिकोण अपनाने के भँवरजाल में फँस जाते हैं।

का गिरना बराबर जारी है। दूसरी तरफ कंक्रीट के जंगलों में प्रति दिन शाखाएँ बढ़ती जा रही हैं। ईंटों के साँचों पर लोहे के पिंजरों के बीच इंसानों की एक नयी दुनिया बसती जा रही है, जहाँ लोग टेलीविजन में समुद्र का दर्शन करते हैं। दुनिया की सारी सुंदरता को कुछ मिनटों में ही देखा जा सकता है। बड़ी-बड़ी कम्पनियों के दफ्तरों में आदिवासी बालाओं की अर्द्ध-नग्न तस्वीरों या जंगल-झाड़ी के आयल पेन्टिंगों (तैल चित्र) को वे अपनी आदिवासी संस्कृति के प्रति लगाव का सबूत बताते हैं। बोरियत हुई तो दार्जिलिंग के टायगर हिल में जाकर सूर्योदय देख आते हैं या अरब सागर में डूबते हुए सूरज का दर्शन गोवा के समुद्र तट पर करने चले जाते हैं। गाँव में रात आती है। सर्दी के महीनों में आग जलाकर आदिवासी गाँव में नाचते रहते हैं। चारों ओर के सुनसान में ढोल की आवाज से घुँघरू झनकते रहते हैं। आदिवासी गाँव में युवक-युवतियाँ नाचते हुए गाते हैं –

" तुमन शहर के मन अब सुते हो,
हमन चंदा ला संगवारी बनाके नाचत रहियन। "

अर्थात् आप शहर के लोग जब सोते रहते हो, तब हम चंद्रमा को साथी बनाकर नाचते-गाते रहते हैं।

कितना फर्क है !

जब ट्रक में लदकर सारा-का-सारा जंगल शहर की ओर भाग रहा है, बाँस कागज की मिलों में पहुँच रहा है, उस समय, यह समझ पाना कि पर्यावरण पर एक राष्ट्रीय चेतना कैसे विकसित होगी, मुश्किल हो जाता है।

आज की दुनिया बहुत छोटी बनती जा रही हैं। दुनिया भर के लोग पर्यावरण के बारे में सोच रहे हैं। इराक में युद्ध के कारण पर्यावरण पर असर पड़ा है। हम जानते हैं कि वर्तमान समय में कई ज्वालामुखी फूट रहे हैं जिससे पर्यावरण असुरक्षित है। अंटार्कटिका में प्रयोग जारी है, मिसाइलें महाकाश में छोड़ी जा रही हैं, पर्यावरण घायल हो रहा है। इस समय मेरे घर के पाँच पेड़ और मेरी बस्ती के कुछ दर्जन झाड़ क्या हमारे पर्यावरण को सुरक्षित रख सकेंगे ?

एक तरफ राष्ट्रीय असमान विकास की धाराएँ और दूसरी तरफ अंतर्राष्ट्रीय पैमाने में घटित घटनाएँ और उनसे पर्यावरण पर पड़ा प्रतिकूल असर, इससे पर्यावरण पर हमारी राष्ट्रीय चेतना कुंठित हो जाती है।

आम जनमानस गणित के आँकड़ों से उद्वेलित नहीं होता। भावनाओं को जब तक तार्किक व गणितीय रूप नहीं दिया जायेगा, तब तक कर्म-रूपी सृष्टि सम्भव नहीं है। इसीलिए भावना और तर्क के मिश्रण से ही बनेगी, पर्यावरण पर राष्ट्रीय चेतना।

यूनियन ने इसीलिए पर्यावरण के स्थान पर प्रकृति शब्द को अपनाया। यह प्रकृति, हमारे क्षेत्र की प्रकृति, सदियों से, हमारे पुरखों की शुरूआत के पहले से चलती आ रही है। हमारे पुरखे, जिस हवा में साँस लेते थे, जिन नदियों के पानी से अपनी प्यास बुझाते थे, उन्हें नष्ट करने का अधिकार हमें नहीं है। यह नदी, यह हवा, यह पहाड़, यह जंगल, यह पक्षियों का चहकना – यह हमारा देश है। हम विज्ञान की सहायता से हमारी दुनिया को आगे बढ़ायेंगे, लेकिन इस पर भी अवश्य ध्यान रखेंगे कि नदियों का स्वच्छ पानी कल-कल स्वर से बहता रहे, हमारी शुद्ध हवा, हमारे मन को तरोताजा बनाती रहे। हम अपने कानों से उन पक्षियों की आवाज सुनते

जबकि वर्तमान कानून में यह प्रावधान कहीं-कहीं कुछ मात्रा में स्वीकार किया गया है, फिर भी कानूनी प्रक्रिया इतनी जटिल है या कानून लागू करने वाले अधिकारियों के निकम्मेपन, गैर-जिम्मेदाराना हरकत एवं अनाचारी प्रवृत्ति के कारण आदिवासी इन कानूनों का फायदा नहीं उठा पाते हैं और वन विभाग के अधिकारियों की निरंकुशता बढ़ती जाती है। इस ओर ध्यान देकर जंगली इलाके के निवासियों के लिए जंगल पर आधारित नीतियों को सुनिश्चित करना होगा। जिस दिन यह सुनिश्चित हो सकेगा, उस दिन से 'हम अपने जंगल की रक्षा करेंगे', यह कहकर जंगली इलाके का हर एक नन्हा-मुन्ना भी अपनी शिशु आँखों को पैनी बनाकर जंगल पर निगरानी रखेगा। जंगल के चोरों पर अंकुश लगेगा। निकम्मे एवं अनाचारी नौकरशाहों की गलती को दूर किया जा सकेगा। जंगल पर कुल्हाड़ी की एक भी नाजायज चोट से सारा जंगली इलाका चीख उठेगा। क्योंकि जंगल उस समय जनहित साधने का एक साधन बनेगा। जनहित से देशहित की रक्षा होगी और पर्यावरण की रक्षा के साथ-साथ मानवता की रक्षा की एक गारंटी बन जायेगी।

यूनियन इन मुद्दों पर समय-समय पर माँग करती रही, अधिकारियों से चर्चा करती रही। कभी-कभी इन मुद्दों पर जन आंदोलन शुरू किया गया, आदिवासियों के हितों को सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया और साथ-साथ जंगल चोरी पर अंकुश लगाने का प्रयास भी किया गया।

जंगल चोरों से छुटकारा

घटना लगभग 10 बरस पहले की है। ग्राम साल्हेटोला के निवासी इस बात से परेशान थे कि झलमला गाँव की आरा मिल वाले उनके गाँव के जंगल से सागौन काटकर ले जाते थे। ग्रामवासियों ने वन विभाग, पुलिस विभाग व राजनैतिक नेताओं से कई बार शिकायत की, मगर सभी ने उन्हें अनसुना कर दिया।

फिर यूनियन ने ग्रामवासियों को एक तरीका सुझाया। वह था कि ग्रामवासी धूमधामपूर्वक एक समारोह करेंगे जिसमें 2-4 वृक्षारोपण करने के साथ वन महोत्सव मनायेंगे। इस कार्यक्रम के बाद जंगल चोर उस जंगल का रास्ता भूल गये और सागौन की चोरी बंद हुई।

एक संतुलित नीति ही पर्यावरण रक्षा का कवच है

पर्यावरण की सुरक्षा व जंगलों के महत्व को औद्योगिक सभ्यता के बढ़ने के समय से ही पहचाना गया है। धुआँ, गैस उगलते कारखानों से वायुमंडलीय संरचना में हो रहे परिवर्तन को कुछ हद तक जंगल के जरिये ही संतुलित बनाया जा सकता है।

1. यदि संतुलन-रक्षक जंगल को ही उद्योगों की खुराक (कच्चा माल) बनाया जायेगा तो उससे संतुलन कैसे रखा जा सकेगा? वर्तमान वन नीति के तहत नीलगिरी, चीड़ (पाईन) आदि झाड़ों को धड़ल्ले से लगाया जा रहा है, जिससे उद्योगों की जरूरतों की पूर्ति हो पा रही है। पर जंगल के विनाश को रोकना असम्भव हो गया है। इसी नीति के तहत 'मोनोकल्चर' रोपणी की गलत प्रवृत्ति भी है। इसके खिलाफ यूनियन ने आवाज उठायी एवं समविचार साथियों के साथ मिलकर समय-समय पर विरोध

हमारी यूनियन ने अपने आफिस के पास एक छोटे से जंगल को संतुलित रूप से विकसित कर एक विकल्प देने का प्रयास किया है, जिसका वर्णन आने वाले अध्याय में किया जायेगा।

व्यवस्था हमेशा लकीर की फकीर बनी रहती है

1. कई ऐसे मुद्दे जिसे जन सामान्य आसानी से समझते हैं, अक्सर हमारे बुद्धिमान अधिकारियों की समझ के परे हो जाते हैं। जैसे, जब जंगली इलाके के निवासी माँग करते हैं कि फलाँ नदी को बाँधकर, स्टाप डैम बनाकर सिंचाई व्यवस्था की जाये और जब राजस्व कर्मचारी भी खाली पड़ी जमीन पर कोई आपत्ति न करके स्टाप डैम निर्माण का अनुमोदन कर देते हैं, तब वन विभाग चौकन्ना हो जाता है और उसे बाँध पर 'आपत्ति' होने लगती है। उस बाँध के बनने पर बाँध के आस-पास एक अच्छे जंगल के बनाने की सम्भावना हो सकती है। जंगली पशुओं के लिए पीने के पानी की व्यवस्था हो सकती है पर वन विभाग अड़ियल बनकर उस बाँध के निर्माण को रोक देता है।

   बड़े बाँध के निर्माण के समय जंगल का उत्पादन बढ़ेगा (कटाई से), जंगल व्यापारियों का मुनाफा बढ़ेगा और इस प्रकार विकास का दर्जा हासिल करने वाली इस योजना को वन विभाग आसानी से अनुमति दे देता है।

   हमारी यूनियन बहुत सारे छोटे-छोटे बाँधों के निर्माण के लिए काफी समय से संघर्ष करती रही है और तुएगोंदी, जुंगेरा आदि कई स्थानों पर छोटे बाँधों का निर्माण करवाने में सफल भी हुई है।

2. बरसात का पानी लोहा खदान की फाइन्स मिट्टी को बहाकर ले आता है। खेत या जंगल की उर्वरा भूमि पर यह फाइन्स मिट्टी टॉप सॉयल (मिट्टी की ऊपरी तह) की परत बनाकर उस जमीन का दम घोंट देती है। पूरा क्षेत्र रेगिस्तान बन जाता है, पर किसी को इसकी फिक्र नहीं होती।

   महामाया माईन्स से बहता हुआ फाइन्स आस-पास के कई गाँवों की उर्वरा कृषि भूमि या वन भूमि पर फैलकर बेरोक-टोक बंजर बना रहा था। हमारी यूनियन ने जन आंदोलन कर इस पर रोक लगायी, किसानों को मुआवजा दिलाया एवं बुलडोजर की सहायता से पहाड़ी बाढ़ की मिट्टी-पानी के निकास का रास्ता बनाने का प्रयास किया।

3. अक्सर सरकार के विभिन्न विभागों में तालमेल का अभाव देखा जाता है। तालमेल के इस अभाव में नये प्रकल्पों की कल्पना भी नहीं बनती। गाँव में नजूल भूमि, घास-जमीन, हमेशा विवाद के दायरे में रहती है। गाँव के प्रतिष्ठित ग्रामवासी उस पर प्रति वर्ष कब्जा बढ़ाते रहते हैं। कभी-कभी इन जमीनों को लेकर गाँव में कई गुट बन जाते हैं। जमीन पर कब्जे के लिए कई बार खून-खराबे की नौबत आ जाती है।

यह बात बार-बार बतायी गयी है कि राजस्व विभाग व वन विभाग तालमेल बनाकर इन परती जमीनों पर उपयोगी किस्म के वृक्षों का रोपण कर सकते हैं। साथ में मवेशियों के लिए चारा पैदा करने की व्यवस्था हो सकती है, फिर तो 'आपरेशन फ्लड' स्कीम के तहत इन जमीनों से दूध की गंगोत्री बह निकलेगी। बेशक अल्प चारा-उत्पादन में एक गुणात्मक परिवर्तन

परिणाम

1. इस प्रयोग से हम यूनियन कार्यालय के आस-पास की फालतू जमीन का उपयोग कर पाये।
2. मजदूर साथियों में पेड़ लगाने के प्रति उत्साह पैदा हुआ और उन्होंने अपने-अपने घरों में पेड़ लगाना शुरू किया। जहाँ पहले हरियाली नजर नहीं आती थी, आज वह क्षेत्र मजदूरों के घरों में लगे लाखों पेड़ों से हरा-भरा हो चुका है।
3. हम सरकारी प्लांटेशन कार्यक्रमों के बारे में भी अपनी समझ को गहरा बना पाये और हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि सरकारी योजना पर आधारित जंगल (प्लांटेशन) जहाँ लगाया जाता है, वहाँ साधारणतः 40% पेड़ कामयाब होते हैं। शेष 60% नष्ट हो जाते हैं। इस पर आम जनता की देख-रेख या हिस्सेदारी नहीं होती।

   यदि आम जनता के सहयोग व हिस्सेदारी से प्लांटेशन कार्य हो तो उसका स्वरूप कुछ ऐसा होगा —

क)	बाँस के झाड़	15%	यह बाँस स्थानीय निवासियों के मकान निर्माण आदि आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होगा।
ख)	स्थानीय वन उपज के पेड़	35%	जैसे कि चार, महुआ, बेल, आँवला, कैथ।
ग)	अन्य उपयोगी वनस्पति	20%	रूख-अरहर, बादाम, काजू, चंदन, नींबू, नीम, जामुन, आम आदि।
घ)	सरकारी स्कीम के तहत अन्य पेड़	30%	जिन पेड़ों को वन विभाग प्लांटेशन के तहत लगाता है।
	कुल क्षेत्र	100%	

4. 'अपने जंगल को पहचानो' कार्यक्रम के तहत यूनियन ने जिन पेड़ों को लगाया, आज उनका एक बड़ा हिस्सा काफी विकसित हो चुका है। अब इन वृक्षों पर एक-एक तख्ती / बोर्ड लगाया गया है जिन पर पेड़ का स्थानीय नाम, हिन्दी नाम, वैज्ञानिक नाम एवं किस परिवार से उक्त वृक्ष सम्बंधित है, इसकी जानकारी अंकित की गयी है। इससे इन पेड़ों का पूर्ण परिचय सम्भव हो जाता है। स्कूल के विद्यार्थी इन जानकारियों से अपनी वनस्पति विज्ञान की समझ पुख्ता बनाते हैं।
5. यूनियन की ओर से इन वृक्षों में से हरेक के उपयोग की जानकारी व अन्य सम्बंधित विशिष्ट तथ्यों पर पुस्तिकाएँ तैयार करने का प्रयास किया जा रहा है।

इस प्रकार 'अपने जंगल को पहचानो' के तहत हम अपनी दुनिया के सबसे विश्वस्त साथी के बारे में जानकारी इकट्ठा कर पाये हैं और उससे आम जनता का परिचय कराने में प्रयासरत हैं, जिससे पर्यावरण की सुरक्षा की गारंटी हो सके। यह पूरा कार्यक्रम यूनियन अपने सीमित साधनों के आधार पर चला रहा है।

कुदरत ने हमें एक जल स्रोत दिया था!

दल्ली राजहरा के निवासी सदियों से दल्ली नाला व झरन नाला से अपनी आवश्यकताओं

की चर्चा कर मजदूर पर्यावरण पर अपने तर्क को मजबूत बनाते हैं। फिर हम कुछ पर्यावरण-प्रेमी आंदोलनों के बारे में विशेष जानकारी इकट्ठी करते हैं। प्रकृति के दुश्मनों ने टिहरी बाँध बनाकर क्षेत्र के संतुलन को बिगाड़ने के लिए जी-जान लगा दी। हम पंडित सुंदरलाल बहुगुणा के विचारों व कार्यक्रमों को आत्मसात कर लेते हैं और उनके सहभागी बनते हैं। 'चिपको आंदोलन' हमें पुलकित करता है और हम उसको एक क्रांतिकारी आंदोलन के रूप में मान्यता देते हैं। जब नर्मदा घाटी क्षेत्र में 'बाँध नहीं बनेगा' आंदोलन शुरू होता है, हमारी यूनियन के सैकड़ों साथी घाटी में जाकर बाबा आमटे के नेतृत्व में चल रहे आंदोलन का तन-मन से साथ देते हैं। केरल की 'सायलेंट वैली' आंदोलन में पर्यावरण-प्रेमियों की सफलता हमें उमंग से भर देती है। अमेरिका की रेड इंडियन जनता का प्रकृति के प्रति प्रेम, प्रकृति और जन्मभूमि को एकाकार कर देखने की भावना के साथ हम भी घुल-मिल जाते हैं। हमारे यूनियन दफ्तर में इन सब पर चर्चा होती है। मजदूर साथी भाईचारा आंदोलन करते हैं, पर्यावरण-प्रेमियों को अपने परिवार का सदस्य समझकर, उनकी आवाज में अपनी आवाज मिलाने की कोशिश करते हैं।

मजबूर अब मजबूर न रहे, हमने उन्हें मजबूत किया !

पर्यावरण के मुद्दे पर यूनियन की जागरूकता को भिलाई इस्पात संयंत्र का मैनेजमेंट भी अनदेखा न कर सका।

शुरू में तो मैनेजमेंट के लोग बेपरवाह थे। खदान परिक्षेत्र में हमेशा धूल का गुबार छाया रहता था, खासतौर पर गर्मियों के मौसम में खदान की कच्ची सड़कों पर से ट्रक या डम्पर आदि के गुजरने से बहुत धूल उड़ती थी। मेडिकल जाँच में मजदूरों में सिलिकोसिस बीमारी का होना पाया गया।

यूनियन ने इस पर विशेष तौर पर ध्यान दिया व मैनेजमेंट से कारगर कदम उठाने की माँग की। राजनांदगाँव स्थित कपड़ा मिल में वहाँ की विशेष परिस्थितियों पर तो यूनियन ने लम्बा आंदोलन भी चलाया।

अब दल्ली राजहरा की खदानों में, खदानों की सड़कों पर मैनेजमेंट द्वारा पानी का छिड़काव कर उड़ते धूल के कणों को रोकने के कदम उठाये जा रहे हैं। इसी प्रकार खदान क्षेत्र में हो रहे ध्वनि प्रदूषण के दुष्प्रभावों के खिलाफ भी कारगर कदम उठाये गये। ध्वनि प्रदूषण से पीड़ित मजदूरों का ई. एन. टी. विभाग के जरिये नियमित इलाज यूनियन के प्रयासों पर ही किया गया।

इनको रोक पाना मुश्किल है पर असम्भव नहीं

1. एक था राजा, वह अपने मंत्री के भ्रष्टाचार से परेशान था। राजा ने मंत्री को समुंदर किनारे ट्रांसफर कर दिया और सोचा कि अब वह भ्रष्टाचार नहीं कर पायेगा। मंत्री समुंदर के किनारे गया और उसने समुंदर की लहरों को गिनने का काम अपने हाथ में ले लिया। वहाँ से गुजरने वाले समुद्री जहाजों पर मंत्री जी ने अपने लहर गिनने के काम में रुकावट डालने के नाम पर जुर्माना ठोकना शुरू किया। मंत्री जी लहर गिन-गिन कर मालामाल होते गये।

4.

नियोगी की कलम से - कविताएँ

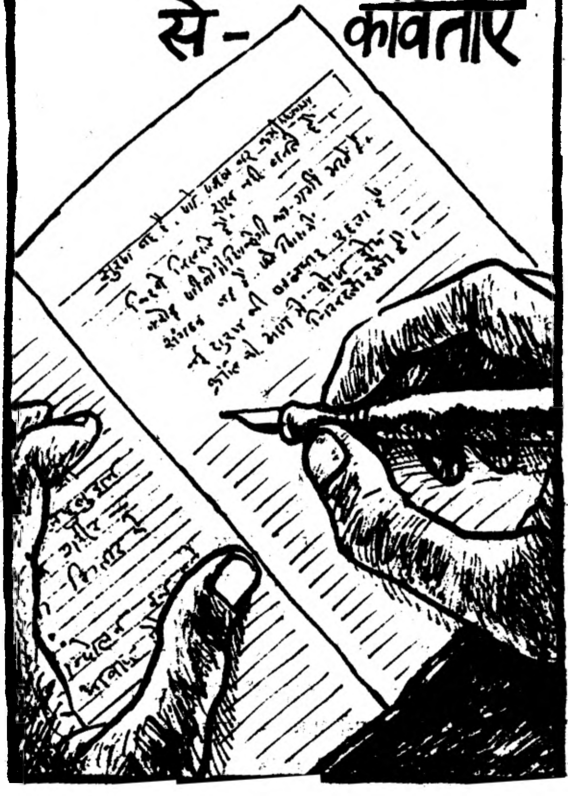

यहाँ जेल कोठरियों से दिखने वाला एक टुकड़ा नीला आसमान और उड़ने वाले आजाद परिंदे भी हैं, सुनहली ओस से अपने शरीर को धो लेने वाले पके धान हैं, लीपे जाते खलिहान हैं, बजते हुए माँदर हैं और उम्मीद से भरी सुबहें तथा सोते किसानों को झकझोर कर जगा देने वाली उद्‌बोधक पुकार है। हर दूसरी तीसरी कविता में घायल शेर की तड़प और आक्रामक दहाड़ है।

इन कविताओं को पढ़ते हुए यह भ्रम पैदा न होगा कि इनकी विषय वस्तु क्या है और ये किस प्रकार के पाठकों को सम्बोधित हैं। आज जहाँ कविता के कई-कई रूप और कवियों के कई-कई सम्प्रदाय हैं, ये कविताएँ उन लोगों के लिए हैं जो संघर्षशील, परिवर्तनकारी न्याय की माँग करने वाले समाज के साथ खड़े होने को तैयार हैं, कुछ ज्यादा नहीं तो कम-से-कम सच को सच और झूठ को झूठ कहने का माद्‌दा रखते हैं। छत्तीसगढ़ श्रमिक आंदोलन के गर्भ से जन्मी ये कविताएँ विश्व के समस्त श्रमिक जनों के लिए हैं, जो अपनी मुक्ति के मार्ग पर लड़ते-मरते हुए निरंतर आगे बढ़ रहे हैं। इन में सदियों से मार खाते और मूर्च्छित हो-होकर रह जाने वाले मेहनतकश इंसानों को जगाने और उनके भीतर जीवन की नयी चाह और उमंग भर देने की शक्ति है। उसी को जन-जन तक पहुँचाने के लिए इन्हें यहाँ पुनर्प्रस्तुत किया जा रहा है।

हिंसा की शुरूआत कहाँ से होती है, अन्याय कौन लोग करते हैं, उनका मुँहतोड़ जवाब देने के लिए किसान-मजदूर एका आज कितनी जरूरी है, कविताओं में यही संदेश प्रधान है। इस संदेश को श्रमिक समाज और आंचलिक श्रमिक समूहों का संदेश बनाने की जिम्मेदारी आज हम पर आ पड़ी है। जेल की कोठरी में 1 मार्च 1991 को लिखी एक कविता में वे लिखते हैं —

मैं हूँ यहाँ अकेला . . . .
जो जुटे हुए हैं खेतों में, कारखानों में,
व्यस्त हैं जुलूसों में,
उनसे दूर यह अकेलापन,
क्या नहीं है असंगत ?

यह एक ऐसा सवाल है, जो ये कविताएँ हमसे भी करती हैं। इतिहास और समाज के यक्ष प्रश्न बार-बार बदलते रहते हैं। आज जो लोग इन प्रश्नों से आँख मिलायेंगे उन्हें यह अनुभव हो जायेगा कि यह अकेलापन चाहे जितना सुरक्षित और सुविधाप्रद हो, किंतु है बेहद असंगत।

किसान-मजदूर संघर्ष के जो काव्य-बिम्ब यहाँ प्रस्तुत किये गये हैं, वे जीवन के प्रत्यक्ष बल्कि आँखों देखे और जाने-पहचाने अनुभवों से चल कर आये हैं। जिसने यह सब झेला है, उसी ने इन्हें रचा भी है। इसलिए शब्द और अर्थ के सम्बंधों में यहाँ जैसी विश्वसनीय अभिन्नता है, वह उन कविताओं में शायद ही दिखायी पड़े जो बतौर फैशन या स्वयं को क्रांतिकारी (?) बताने के लिए लिखी जाती रही हैं। हिन्दी कविता के पाठकों के लिए यह एक ऐसा अनुभव क्षेत्र है, जिसे शंकर गुहा नियोगी जैसे कवियों ने ही पहली बार प्रस्तुत किया है। जबकि उसी छत्तीसगढ़ में कई और कवि हैं जो कविता को कल्पना और अमूर्तन की हदों तक खींचकर ले गये हैं और जिनकी अभिव्यक्ति सामंती कला-अभिरुचियों और कथित आधुनिक कलावाद-धरातलों का पोषण करने में लगी है।

'अभिव्यक्ति का खतरा' उठाने का मंत्रजाप करने वाले लोग कविता के इस अनुभव-क्षेत्र से आँखें चार करने का साहस जुटा पायेंगे, ऐसी उम्मीद है। अभिव्यक्ति का खतरा केवल भाषा

जो कविताएँ मेरे सामने मूल हिन्दी, अंग्रेजी, गोंडी और छत्तीसगढ़ी में थीं, उन्हें यत्किंचित् सम्पादकीय संस्पर्श से सँवार देने की कोशिश भर की गयी है, किंतु इस सावधानी के साथ कि उनका मूल स्वर और नियोगी जैसे कवि का अपना काव्यशिल्प कहीं से भी पहचान-मुक्त न हों। अनुवाद करते समय मैंने अपने कवि मित्र शलभ श्रीराम सिंह और बंगला साहित्य के रसिक श्री कृष्ण कुमार भट्टाचार्य की सहायता ली है। श्रद्धा काशिव ने कविताओं के लिप्यांतरण में हमेशा की तरह मेरा सहयोग यहाँ भी किया है। डॉ. हीरालाल शुक्ल (भोपाल विश्वविद्यालय) ने गोंडी एवं भाई श्याम बोहरे (भोपाल) ने छत्तीसगढ़ी से अनुवाद करके सहयोग दिया है।

शंकर गुहा नियोगी जैसे क्रांतिकारी शहीदों के प्रति यह सामूहिक श्रद्धांजलि नहीं तो और क्या है। जो कचोट, बेचैनी, तड़प और गरज इन कविताओं में है, वैसा ही भरा हुआ ज्वार-फेनिल मन और उठा हुआ आत्मदीप्त स्वाभिमानी माथा भी इनमें है। हम सब उसी के प्रति नतमस्तक हैं।

❑

(डॉ. विजय बहादुर सिंह द्वारा लिखे गये मूल सम्पादकीय का संक्षिप्त स्वरूप ; उनकी पांडुलिपि में से नियोगी के जीवन, काम व विचार से सम्बंधित विवरणात्मक अंश दोहराव से बचने के लिए निकाल दिये गये हैं। — स.)

सन् 1981-82 में कलकत्ता के ' अनुष्टुप ' प्रकाशन की ओर से नियोगी की मूल हिन्दी में लिखी कविताओं के बंगला अनुवादों का एक संकलन प्रकाशित किया गया था। इसके लिए अधिकांश अनुवाद नियोगी के साथी एवं युवा कवि श्री गाज़ी एम. अंसार द्वारा किये गये थे। इस सिलसिले में हिन्दी पांडुलिपि कहीं खो गयी। इस पुस्तक में इन कविताओं को शामिल करने के लिए हमें ' अनुष्टुप ' द्वारा प्रकाशित बंगला अनुवादों को पुनः हिन्दी में अनूदित करना पड़ा है। यह काम विदिशा (म. प्र.) के प्रसिद्ध हिन्दी समीक्षक-कवि डॉ. विजय बहादुर सिंह ने किया है। इसके लिए और इस खंड का सम्पादन करने के लिए हम उनके आभारी हैं। परंतु यह भी स्पष्ट होना चाहिए कि नियोगी की मूल हिन्दी की कविताओं के बंगला अनुवादों को पुनः हिन्दी में रूपांतरित करने का कोई भी प्रयास, चाहे वह कितना ही ईमानदार क्यों न हो, उनकी सहज और बेबाक अभिव्यक्ति का स्थान नहीं ले सकता। अतः नियोगी की मूल हिन्दी रचनाओं के फिर से मिल जाने का बेसब्री से इंतजार रहेगा। बहरहाल, इस खंड की तैयारी में हमें श्री अंसार द्वारा जनवरी 1992 में प्रकाशित नियोगी की नयी एवं पुरानी अनेक कविताओं के बंगला अनुवादों के संकलन से विशेष मदद मिली है। इसके अलावा उनकी अब तक अप्रकाशित कई कविताएँ हमें उनकी बेटी क्रांति गुहा नियोगी के सौजन्य से प्राप्त हुई हैं।

— स.

आओ भाइयो,
आज हथियार उठाओ,
शोषकों के विनाश की दुंदभी बजाओ,
लाल हो उठा है पूरब का आकाश,
नींद त्याग करो आलस का परिहार।
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

जागो ! जागो ! मजदूर ! किसान !
तुम्हीं तो हो पृथ्वी के भगवान।
शोक के आँसुओं को बदलो आनंद में,
बंद हो दुश्मनों की बक-बक।
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

आओ,
हम सब एक हो जायें,
दुनिया को मिलकर स्वर्ग बनायें।
इस बसंत में आओ शपथ लो,
त्याग दो आलस, त्याग दो डर।
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

❑

(मूल हिन्दी से गाज़ी एम.अंसार द्वारा किये गये बंगला अनुवाद से डॉ. विजय बहादुर सिंह द्वारा पुनः अनूदित।)

प्रतिरोधक पुकार

लवकुश-अभिमन्यु के साथ
खड़ा है आज वीरदर्प अर्जुन।
निर्भय वक्ष और लाख-लाख हाथों में
गांडीव लिये,
हजारों-हजार बरस के
शोषण और उत्पीड़न के प्रतिशोध में
हाथ उठे हैं आज आदमी के
हथियारों के साथ।

रक्त-पिपासु कंस और कौरवों के हाथ से
छिन्न यह देश,
भात के एक-एक कौर के पीछे
लुटेरों का भय,
क्लांत भारत आज फिर देखे दानव-दलन।
मीर जाफरों के घिनौने हाथ
मजबूत कर देते हैं
सत्ता के पाँव।

रूस-अमेरिका होशियार !
होशियार . . . .
होशियार ! मजदूर !! किसान !!
हर कीमत पर रोक दो इनका अत्याचार।

प्रतिशोध पूर्ण हृदय से बजाओ मांदर,
नस-नस में भर लो नवजीवन का उन्माद।
भय-मुक्त मन से लाखों-लाख हाथों में
उठा लो गांडीव।
वीरदर्प अर्जुन खड़ा है आज
लव-कुश और अभिमन्यु के साथ।

❑

(मूल हिन्दी के 'अनुष्टुप' द्वारा प्रकाशित बंगला अनुवाद से डॉ. विजय बहादुर सिंह द्वारा पुनः अनूदित।)

वरना !

वे जन्मे हैं,
इस दुनिया की
सुंदरता औ' संगीत का आनंद उठाने,
पाँच सितारा होटलों में
मनोरम दृश्य औ' दुनिया भर के सुख भोगने,
इतिहास के नामी-गिरामी स्थलों
की हवाई उड़ानों
और
आकर्षक व्यंजनों व मदिरा से सुसज्जित
नित नयी दावतों का मजा लूटने,
और भी न जाने क्या-क्या करने !

वे जन्मे हैं,
हर भौतिक सुख-सुविधा पर नियंत्रण रखने।
समुद्र-आकाश-हवा,
खनिज-जंगल-कछार,
और
अब तक के हुए सारे आविष्कार –
सबके वही हैं मालिक, मैनेजर, सर्वेसर्वा,
वे ही तो हैं,
अध्यक्ष, जनरल, संचालक औ' पूरे भागीदार,
और भी न जाने क्या-क्या !

वे जन्मे हैं,
सभ्यता के आदिकाल से
हर प्रतिष्ठित क्षेत्र में हुकूमत पाने।
वे ही तो हैं
बुद्धिजीवी, सुसंस्कृत और सम्भ्रांत जन
और
करोड़ों फटेहाल मेहनतकशों,
पीड़ित श्रमिकजनों का
नेतृत्व करने में भी सबसे आगे।

वे जन्मे हैं,
पीड़ितों को मार्गदर्शन देने,
अपने धाराप्रवाह प्रवचनों में
उन्हें स्वर्ग की राह दिखाने।
तभी तो उन्होंने स्थापित किये हैं
मंदिर, मस्जिद औ' गिरजाघर
और भी न जाने क्या-क्या !

सचमुच, कितना सुंदर है स्वर्ग !
उनके लिए सबसे उपयुक्त स्थान।
ओ, मेहनतकशों !
जैसे बच्चा माँ की गोद में ही लगता है भला,
वैसे ही मालिक, संचालक, सम्भ्रांत जन बगैरह
देते हैं स्वर्ग में ही अधिक शोभा।
आओ, हम संकल्प लें
उन्हें स्वर्ग में जगह दिलवाने का –
हरेक के लिए होवे उपयुक्त प्रावधान।
और यूँ करें हम प्रयास
उनके मंगल के लिए ,
ताकि बन सकें हम
स्वस्थ, सुखी और विवेकवान।
वरना . . . . . !

❑

दुर्ग जेल में,
फरवरी–मार्च 1991

(मूल अंग्रेजी से शशि मौर्य द्वारा भावानुवाद ; जेल डायरी से।)

मरण-यंत्रणा सहते-सहते
जीवन केवल शीर्ण।

स्कूल में शिक्षक का डर,
डर बाबू साहबों से
पुश्तैनी जमीन के छिन जाने का।
काली आँखें तरेर कर कहता है महाजन –
" कल आना है तुझे बेगार पर।"

भय के ऊपर भय के पहाड़,
पौ-बारह हैं पुलिस और सूदखोरों की,
फिर रहे हैं भिखमंगे बच्चे डरे-डरे,
" भीख चाहिए तुम्हें, तुम्हारी ये हिम्मत !"
भय से घर छोड़ जाने पर उतारू है बीबी,
रोज आता है डर हमें त्रस्त करने।

❑

(मूल हिन्दी के ' अनुष्टुप ' द्वारा प्रकाशित बंगला अनुवाद से डॉ. विजय बहादुर सिंह द्वारा पुनः अनूदित।)

आपात्काल का मोर्चा

असूझ है यह काला अंधकार,
जकड़ दिये हैं जिसने जीवन के हाथ-पाँव।
जंगली घास से ढँक उठती है जैसे पगडंडी,
निराशा की काली चादर
ढँकती जा रही है हमारा अस्तित्व।
आस-पास चारों ओर है श्मशानी शांति,
है पिशाची अट्टहास,
शवों के स्तूप पर नाच रहे हैं प्रेत,
कर्फ्यु की इस रात में
साठ करोड़ जनता का हाल है बेहाल।
यही सब तो है छब्बीस जून का आपात्काल।

आपात्काल : इतिहास का एक काला पन्ना।
आपात्काल : मटियामेट कर दिये
जिसने करोड़ों परिवारों के स्वप्न।
आपात्काल : मजदूरों के मुँह पर लगा ताला।
आपात्काल : पूँजीपति मालिकों के लिए
सौभाग्य माला।

आपात्काल : नंगा कर दिया जिसने
हततेज विरोधी दलों का चेहरा।
आपात्काल : ठगों-भ्रष्टाचारियों का संरक्षक।

अध्यादेश पर अध्यादेश,
संशोधन पर संशोधन,
धौंस . . . संत्रास . . . आतंक,
पूरा देश बना जेलखाना।
पुलिस हुई विचारकर्ता,
साठ करोड़ नागरिकों का हाल है बेहाल।
यही तो है छब्बीस जून का आपात्काल।
जागो, करो स्वयं को संगठित।
बनाओ दृढ़ एकता,
हों जिससे साठ करोड़ जन न बेहाल।
याद रहे साथियो !
छब्बीस जून का आपातकाल !!

❑

(मूल हिन्दी से काज़ी एम. अंसार द्वारा बंगला में किये गये अनुवाद से डॉ. विजय बहादुर सिंह द्वारा पुनः अनूदित।)

बीसवीं सदी में आकर

यह कविता नियोगी ने सन् 1959-61 में जलपाईगुड़ी में इंटरमीडियेट के अपने विद्यार्थी जीवन के दौरान लिखी थी। यह हस्तलिखित बंगला पुस्तिका 'इमारत' में पायी गयी जो नियोगी और उनके साथियों ने उन दिनों तैयार की थी। — स.

आकाश ने जन्म लिया
असंख्य युगों पहले।
सूर्य-चाँद-तारे,
हवा की साँस में,
सौर लोक में आये थे
कौन होकर वीतराग[1] ?

सागर का अनंत जल
जब बूँद-बूँद इकट्ठा हुआ,
जमा हुए बहुत से
कीट-पतंगे-टिड्डे-अमीबा-मनुष्य
युगों की अतल गहराई से।
ग्रीस-रोम-इजिप्ट-सिंधु सभ्यताएँ,
एक-एक कर खो गयी है इनकी छटपटाहट।

कितनी निस्तब्ध रातें पार करके
चल रहे हैं मनुष्य रेस्तराँ ढोते हुए
किसी दिग्विजय के पथ में।
बियर-व्हिस्की-ब्रांडी-बॉल डांस,
स्नो-रूज-पाउडर में
कितने एडवांस !

इस बीसवीं सदी में
हम नहीं सोचते आज
अतीत और भविष्य,
केवल हँसकर, खेलकर
या लेबोरेटरी में टेस्ट ट्यूब हिलाकर,

छल और मिथ्या के हाथ पकड़,
जा रहे हैं किस ओर ?
किसी नवयौवना के
नरम हाथों के स्पर्श में
कौन सा उन्माद होता है,
जिससे हमें मिलती है मादकता
और सीने में तप्त पिपासा ?

शायद इसीलिए दुनिया के
सभी नशीले द्रव्य,
रसों के शरबत,
काँच के गिलास में
अविरल पिये जा रहे हैं।
और सभ्यता के सर्वेसर्वा
उन सभी वेश्याओं की
उष्ण निःश्वासों . . . .
नरम माँस पिंडों की कोमलता
का स्वाद चख-चखकर,
फहराये जा रहे हैं
सभ्यता की डोलती ध्वजा।

हाथ में पाषाण जैसे कल-पुर्जे
रह-रहकर झनझनाते हैं।
गहरी मदहोशी बढ़ाती है
उनकी अर्थलिप्सा।
इसलिए घूम-घूमकर
आवारा जीवन की यायावरी चखना,
हो चुका है आज हमारा पेशा।

[1] विरक्त या सन्यासी-भाव वाला।

एम. डी. साहब के दफ्तर में

सन् 1989 में पूर्ण मशीनीकरण के खिलाफ संघर्ष के दौरान 23 जुलाई को नियोगी अनशन पर बैठ गये (देखिये पृ. 408)। लगता है कि प्रस्तुत कविता नियोगी ने अनशन पर बैठे हुए लिखी होगी। इसमें नियोगी द्वारा भिलाई के इस्पात भवन में मैनेजिंग डायरेक्टर से उनके दफ्तर में मिलने का जिक्र है। नियोगी की बंगला-छत्तीसगढ़ी लहजे वाली हिन्दी में हमने छुटपुट संशोधन किया है। — स.

नक्शा के,
नकली जंगल के पीछे एक दफ्तर,
स्थान उत्पात भवन [1]।
दुनिया के सबसे कोमल उँगली के
थोड़े से दबाव से खुलता है,
मध्य भारत के सबसे बड़े
साम्राज्य का दरवाजा।

एक कम्प्यूटर-टेबिल के किनारे,
उसके बाजू में रजनीगंधा की
सफेद पतली पँखुड़ियों के बीचों-बीच
एक रक्त गुलाब,
लाल कार्पेट,
टेलीफोन की इलेक्ट्रॉनिक आवाज,
बज़र, वायरलेस,
फालतू कागज फेंकने का टोकना,
इस साम्राज्य का भाषा
तैमूरलंग से सीखा हुआ
हुकुम का धाराप्रवाह।

एक दिन,
साहब के सिपाहियों ने
ढकेलकर पहुँचा दिया
उस 'एयर कंडीशंड' ठंडे घर में मुझे।
मेरे चेहरे पर कितने छेद हैं
उसी दिन जान सका,
पसीने की बूँदें कुर्ते की बाहों पर
सोखने के वक्त।

जनाब !
उस मकान की खिड़कियों से
रोशनी की नीली आभा का
आसमान नहीं दिखता।
वहाँ चिमनियों के जंगल के बीच,
लोहा पत्थर के रंग का,
कम खून में, ज्यादा पानी की मिलावट जैसा,
'वग-वग' निकलते धुएँ से
मलिन आकाश ही दिखता है।

मैं तैमूर की आवाज सुनने को,
इतिहास एवं विज्ञान के विद्यार्थी
की तमन्ना दिल में छुपाकर
इंतजार की घड़ी गिन रहा था।
तब एक मीठी आवाज गूँज उठी वहाँ,
"आप उधर क्या देख रहे हैं ?"
मैं रजनीगंधा और गुलाब की

---
[1] भिलाई स्टील प्लांट का मुख्यालय — इस्पात भवन।

इस बार

यह कविता सन् 1989 में पूर्ण मशीनीकरण के खिलाफ चले लम्बे संघर्ष के संदर्भ में है। देखिये, खंड आठ में ' मशीनीकरण के खिलाफ एक लड़ाई ' शीर्षक का लेख (पृ. 401-409)।

— स.

बीके कम्पनी [1] को ठेका,
सम्बल [2] को ठेका,
मिला एकता तोड़ने का।
लूट की आजादी बचाने के लिए ,
पूँजीपतियों का एक ही उपाय,
मेहनतकशों की एकता तोड़ने की
साजिश करना।
साजिश के खिलाफ विरोध अब शुरू होगा,
प्रतिरोध दुगना-दस गुना बढ़ जायेगा।
मैनेजमेंट ने हमारी बस्ती में पत्थर फेंका —
लहर बननी शुरू हो चुकी है।
विचार की रोशनी
सारे क्षेत्र को आलोकित करेगी,
मजदूर उठेगा, मजदूर जागेगा।
लुटेरों की लूट,
अब बर्दाश्त नहीं की जायेगी,
पहाड़ियों से घन की आवाज नहीं आयेगी,
ट्रकें रात-रात चलेंगी नहीं।
अब फिर जुलूस शुरू होगा,
सँभाल लेना तुम लोग भिलाई चिमनी का
धुआँ इस बार।

❑

(मूल हिन्दी में ; छमुमो के सौजन्य से।)

जनता आपको चाहती नहीं

हमें संगठन चाहिए
लाखों-लाख इंसानों का संगठन।
परंतु क्यों, क्यों चाहिए ?
जवाब —
राज पर हमारा कब्जा होगा।
फिर क्या होगा ?
फिर हम आपको एक नया समाज देंगे।
हमें संगठन चाहिए करोड़ों लोगों का।
क्यों चाहिए ?
हम इस व्यवस्था में
गुणात्मक परिवर्तन लायेंगे।
फिर क्या होगा ?
फिर जनता सुखी होगी।

---

[1] सन् 1989 में दल्ली खदान समूह के मशीनीकरण के नये चरण का ठेका पाने वाली भिलाई की एक प्रभावशाली कम्पनी।

[2] एटक की स्थानीय इकाई के एक नेता — श्री सम्बल चक्रवर्ती — जिन्होंने उक्त लड़ाई में बीके कम्पनी के समर्थन से मशीनीकरण की नीति के पक्ष में काम किया था।

सूरज

सूरज है वह
जो कभी जलकर राख नहीं बनता,
किरणें बिखेरता है,
करोड़ों जीवों में
जिंदगी की गर्मी भरता है।

संगठन है वह
जिसमें रहती है नये सूरज की ललकार,
क्रांति की आग में
निखरता रहता है जो रोज-रोज।
जब चलती है बात लाल-हरे संगठन की,
हजारों पुरुषों और नारियों के नारों से
गूँज उठता है आसमान,
सँभाले रखता है हर एक अपनी छाती में
तब एक-एक सूरज।

उजाला फैलता है,
आशा जागती है गरीबों के दिल में,
मरना ही पड़ता है तब निशाचरों को,
झुरमुटों में जाकर जब वे छुपते हैं,
मजदूर बच्चे तब पकड़कर उन्हें,
लगाते हैं गुदगुदी।

ऐ निशाचरो !
बीके, बी. आर., केडिया, सिम्प्लेक्स वालो !
रात के अंधेरे में लूटते रहे तुम बहुत दिन।
आयी है अब हजारों सूरज की रोशनी
बस्ती जाग उठी है,
अब नहीं बचा पायेंगी तुम्हें झुरमुटें।
बचोगे,
तो केवल हमारी मेहरबानी से।

❑

दुर्ग जेल में,
12 फरवरी 1991
(मूल हिन्दी का परिमार्जित रूप; जेल डायरी से।)

जहाँ धरती है प्यासी

चलो गाँव की ओर
जहाँ प्यासी धरती है,
जुल्मी खूनों की
अभिलाषी धरती है।

ईंट से ईंट बजाकर रख देना,
हर दुश्मन को जाकर कह देना –

लाल किरन की भूखी बस्ती है।
चलो गाँव की ओर . . . .

हर दुश्मन
दुश्मन है मिटने तक,
पथ का रोड़ा है
न खिसकने तक।
चलो गाँव की ओर
जहाँ प्यासी धरती है।

❑

(मूल हिन्दी का परिमार्जित रूप; गाज़ी एम. अंसार के सौजन्य से।)

तूफान के आगे खड़े हो तुम

नियोगी ने यह कविता लैंग्स्टन हिऊज़ एवं सुकांत भट्टाचार्य की कविताओं के सहारे हिन्दी में लिखी थी । सन् 1986 में जब दल्ली राजहरा व दानीटोला के खदान मजदूर एवं राजनांदगाँव के कपड़ा मिल व ग्लूकोज़ मिल मजदूर एक ऐतिहासिक और विकट संघर्ष में जुटे हुए थे, उसी दौरान सी. एम. एस. एस. द्वारा प्रसारित 'संघर्ष की तीन कविता' पुस्तिका में यह कविता शामिल की गयी थी। — *स.*

अच्छा मौका मिला है !
कहाँ हो ? किधर हो ?
निकलो सारे रंग-बिरंगे दलालो !
तुम लोग तो वही दलाल हो,
जो काफी दिनों से मजदूर बस्तियों में
डेरा जमाये हुए थे।
आओ निकल पड़ो,
अच्छा मौका मिला है।

जहन्नुम की मंजिल वाले मूर्ख,
जो लोग, समाज से अलग-थलग,
अपने कडुवे जीवन के स्वाद
से परेशान।
कौवा के मयूर पँख पहनने के शौक से,
ना समझ।
आओ निकल पड़ो,
अच्छा मौका मिला है।

निकलो रे, बाहुबल के घमंडी,
घूसखोर और लालची,
निकल तेरी गंदी गली की
हवा सूँघ-सूँघ कर।

अरे ! गड्ढे के कीड़े !
पंचाँग में इससे अच्छा समय और नहीं है।
गड्ढे के अँधियारे से निकल रे।
और निकल रे छोटे-छोटे साँप,
बड़े और मोटे साँपों को जो घेर कर
रखते हो।

समय बढ़िया है।
चमचों को तेरे सामने
कितनी गाली पड़ी होंगी !
उनके सामने तुम भी सारे अपमान सहते रहे।
अब निकल चल,
तेरे पेट में खानदानी सफेद दाग।
जहरीला जानवर,
हँस, दाँत निकाल कर हँसते रह।
दुनिया वाले जानते हैं,
अच्छे से समझते हैं।
हजारों इंसानों के खिलाफ एक को
खड़ा कर देना मालिकों का पुराना तरीका।

सिर्फ दो-चार लालची,
बहुत सारे गरीबों के खिलाफ
और अच्छे विचार के खिलाफ
सिर पटक कर अपने खून से,
चेहरे को
मृत्यु-पथ यात्री की तरह बना लिया है।
सूरज की रोशनी की ओर
जाने वालों के खिलाफ
जहरीलों ने फन उठाया है।

आज तो हम

नियोगी ने यह कविता 2-3 जून 1977 को हुए दल्ली राजहरा गोली कांड के संदर्भ में छत्तीसगढ़ी में लिखी थी। *— स.*

रायफल की गोली छाती पर खाकर
विदा हो गये हमारे जो भाई,
छोड़ गये हमें इस दुनिया के शोषण
और अत्याचार के लिए।
वे हमारे भाई-बंधु
जिन्होंने कभी नहीं सहा अन्याय और
उठायी हमेशा शोषण के खिलाफ आवाज,
बलिदान की निष्ठा को
अपने रक्त की बूँद-बूँद से
रंग कर चल दिये।
हमारे वे साथी, बहन अनुसूइया,
मृत्यु सागर के तट पर हो गये वे अमर।
शहीद तो होते ही आये हैं अमर,
व्यर्थ कभी नहीं जाता उनका लहू।

छत्तीसगढ़ कभी नहीं भुला पायेगा
तीन तारीख का खूनी इतिहास।

किसान-मजदूर की शक्ति होगी संगठित,
बजेगा वर्ग संघर्ष का बिगुल,
बदला लेंगे हम
अपने भाई-बहनों के खून का।
आज तो हम
क्रांति की लड़ाई की तैयारी में लगे हैं।
जिस रायफल ने
हमारे भाई-बहनों की छाती को छेदा,
कल वही हमारे हाथ आयेगी
और हम गिन-गिन कर, छाँट-छाँटकर
जमीन पर सुला देंगे लुटेरों को।
आज तो होम करते हैं हम
हमारे दस भाई और बहन, अनुसूइया को।

(मूल छत्तीसगढ़ी कविता का डॉ. विजय बहादुर सिंह द्वारा हिन्दी रूपांतरण; अनुवाद सहयोग, श्याम बोहरे।)

इस देश में

नीचे दी हुई कविता सुप्रसिद्ध बंगाली कवि काज़ी नज़रूल इस्लाम की कविता का नियोगी द्वारा हिन्दी में किया गया रूपांतरण है। पहला पैराग्राफ बंगला कविता से थोड़ा भिन्न है। यह हिन्दी रूपांतरण हमें श्री माज़ी एम. अंसार के सौजन्य से प्राप्त हुआ है, जिन्हें यह सन् 1977 में नियोगी की दानीटोला स्थित झोपड़ी में मिला था। उनके अनुसार यह रूपांतरण शायद तब किया गया था जब नियोगी बस्तर में भूमिगत जीवन व्यतीत कर रहे थे। — स.

इस देश में
स्वराज्य-समाजवाद
कीमती गाड़ियों में चढ़कर आते हैं।
बच्चे को क्या मालूम, रो उठता है।
डाँटता हूँ उसे —
" चुप ! देखता नहीं आजादी आयी है।
अब समाजवाद आ रहा है ।"
भूखे बच्चे को स्वराज्य नहीं चाहिए,
चाहिए थोड़ा सा भात और
एक चुटकी नमक।

दिन बीत गया है।
मेरे मुन्ना ने अभी तक
नहीं खाया है कुछ भी,
उसके छोटे से पेट में आग जल रही है।
देखकर रोते हुए उसे,
पागलों सा भागकर आता हूँ ।
स्वराज्य का नशा फौरन उतर जाता है।
रोकर पूछता हूँ —
" भगवान ! तुम आज भी हो क्या ?
जो लोग इन मासूम मुन्नों का खून पीते हैं,
उनका मुँह कालिखों से क्यों नहीं पोता जाता ?
उसके लिए कितनों का
खून मैं बहा सकता हूँ ?
इसलिए
अपने खून की स्याही से लिखता जाता हूँ,
कर सकूँ जिससे उनका चरम सर्वनाश।
गम्भीर दुख में
महान विचार मुझे नहीं सूझते,
वह सब आपके लिए छोड़ता हूँ
जो हों बहुत सुख में।"

□

(मूल हिन्दी रूपांतरण का डॉ. विजय बहादुर सिंह द्वारा परिमार्जित स्वरूप।)

आओ चलें साथ-साथ

सम्भवत: यह गोंडी कविता सत्तर के दशक के शुरूआती वर्षों में लिखी गयी होगी जब नियोगी बस्तर के गोंड आदिवासियों के बीच रह रहे थे और गोंडी भाषा सीख रहे थे।
— स.

आओ साथियो ! आओ इधर !
हम सब चलें साथ-साथ !
अपने देश की दुर्गति बनी,
हमारे देश की नयी राहें —
विज्ञान आया, विज्ञान आया।

हमारे देश में देखो,
मोटर आयी गाड़ी आयी
और आ गयी रेल।
आओ साथियो ! देखो मुड़कर !
अपने देश की विडम्बना —
विज्ञान आया, विज्ञान आया।

अपने देश में भाइयो,
बेजुबान हम भटक गये।
तुमने इसको समझा क्या ?
अभी आयी मोटरगाड़ी,
अभी आयी मोटरगाड़ी।
विज्ञान आया, विज्ञान आया।

आओ साथियो ! देखो इधर !
हम सब चलें साथ-साथ !
अपने देश की दुर्गति बनी,
हमारे देश की नयी राहें —
विज्ञान आया, विज्ञान आया।

और कौन आया ?
सियार आया, भेड़िया आया,
अफसर आया, ठेकेदार आया,
अपने देश को आगे ले जाने।

अपने देश में देखो,
बेजुबान हम भटक रहे।
अपने देश की है विडम्बना,
हमारे देश की नयी राहें —
मशीन आयी, बेरोजगारी आयी,
विज्ञान आया, बलात्कारी आये,
विज्ञान आया, प्रदूषण आया।

आओ साथियो देखें मिलकर,
अपने देश की दुर्गति।

(मूल गोंडी से प्रो. हीरालाल शुक्ल द्वारा अनूदित ; गाज़ी एम. अंसार के सौजन्य से।)

5.

नियोगी की कलम से - चिट्ठी-पत्री

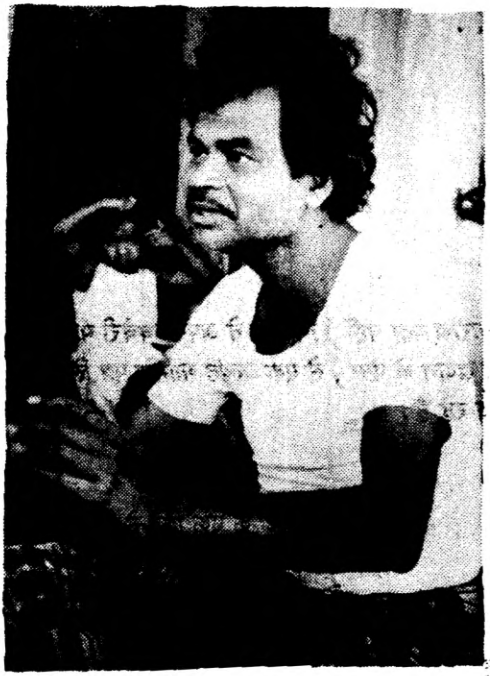

फ़ोटो : आनन्द पटवर्धन (बम्बई)

फ़ोटो : आनन्द-पटवर्धन (बम्बई)

अनौपचारिक मुद्रा में नियोगीजी

दामोदर नदी के किनारे बैठकर क्या-क्या सोचता था, क्या बातें करता था, यह मुझे अब कुछ भी याद नहीं है। पर इतना याद है कि रक्तिम सूरज हमारी आँखों के सामने ढल जाया करता था। दायीं ओर कोयला खदान के ऊपर के दोनों गोल-चक्र दूर से दिखायी देते थे। कोयला खदान के मालिक थे, बी. एन. मंडल। याद है एक बार उनके घर में दीदी की सहेली की शादी हुई थी ? दीदी से सुना था कि शादी बहुत धूमधाम से हुई थी। वैसे तो, विजयदशमी की शाम को पटाखे फोड़ते वक्त हम उनके बेटों की टक्कर में उतरते थे। हम तीनों भाई साल भर तक पटाखे के लिए पैसे जमा किया करते थे। सीधी तरह से तो पैसे कभी मिल नहीं पाते थे, इसलिए बाजार से सामान लाते समय दो-चार आने मार लिया करते थे। उस समय हर चीज सस्ती थी। आलू तीन-चार आना सेर था। दो पैसा, एक आना में टमाटर मिलता था। बड़की की दुकान से आलू खरीदता था। अब तक शायद उस बुढ़िया की 'टें' बोल गयी होगी।

साक्तोरिया के बाजार में रौनक रहा करती थी। मुझे याद है कि बाजार जाने के लिए माली से हमारा अघोषित झगड़ा था। हो सकता है कि माली भी हमारी तरह दो-चार आने खिसकाता रहा हो। दामोदर के किनारे बैठे-बैठे उत्तर की ओर देखकर कभी-कभी मन उदास हो जाता था। उत्तर की ओर दिशेरगढ़ है। दिशेरगढ़ के रास्ते में, दामोदर के किनारे साल में एक बार पीरबाबा का मेला लगता था। मेला तीन दिन तक चलता था। मेले के समय पीरबाबा की कब्र के सामने हर तरह की मिठाई की दुकान, सर्कस, झूला, इलेक्ट्रिक करेंट वाला आदमी, मनिहारी की दुकान और न जाने कौन-कौन सी दुकानें लगती थीं। पीरबाबा को हिन्दू व मुसलमान दोनों सम्प्रदायों के लोग 'जागृत देव' मानकर इज्जत देते थे। ये सारी बातें शायद तुम लोगों को भी याद होंगी। उस समय मैं पीरबाबा से प्रार्थना करता था कि, हे पीरबाबा, मुझे परीक्षा में पास करा देना। पास कराने के लिए सिर्फ पीरबाबा को ही नहीं, बल्कि बहुत सारे देवी-देवताओं के पास प्रार्थना करता था, जैसे दुर्गा पूजा के समय दुर्गा जी से प्रार्थना करता था कि, 'हे दुर्गा देवी, पास करा देना।' लेकिन, दुर्गा पूजा में बहुत आनंद आता था। बाँसगढ़िया के किनारे, हमारे खेल के मैदान में दुर्गा पूजा होती थी। पूरा महीना नाना प्रकार के कौतुकों में बीत जाता था। हमारी बहनों की 'विरोधी पार्टी' को नयी साड़ियाँ खरीदते हुए देखकर हम ईर्ष्या से जलते थे या नहीं, यह मैं भूल गया हूँ। हाँ, लेकिन स्कूल आते-जाते समय यह जरूर देखते थे कि मूर्ति बनाने का काम कितना आगे बढ़ा है। चार दिन की दुर्गा पूजा। लेकिन इसकी तारीखों पर पंचाँग लेकर बहसें नहीं होती थीं। तीन दिन में तीन फिल्में। पुरानी बंगला फिल्में। ओह, कितने मजेदार थे वे दिन ! हाँ, मुझे फिल्में देखने का बड़ा शौक था। शनिवार-रविवार के मैटिनी-शो का इंतजार रहता था। हम सिनेमा के इतने दीवाने थे, यह सोचकर आज बड़ा आश्चर्य होता है। सिनेमा के टिकिट के पैसे पुराने अखबार बेचकर जमा किया करते थे। हम लोगों का हर सपना, हर योजना दामोदर नदी के किनारे ही जन्म लेती थी। एक दिन वहीं बैठकर माइथन बाँध देखने की योजना बनी। कल्याणेश्वरी, झाड़ग्राम व माइथन घूमकर हम लौट आये, फिर वही दामोदर नदी के किनारे, वही साक्तोरिया कालोनी .... । हमारी किशोरावस्था के वे दिन जो एक युग पहले कहीं खो गये हैं .... अब कभी वापस लौटकर नहीं आयेंगे।

जेल के सन्नाटे में अतीत की बहुत सी बातें याद आती थीं। जब मेरा मन थोड़ा-सा विचलित हो जाता था, तब जेल की कोठरी में छत की कड़ियों को देखते-देखते मुझे उसी जमाने

6.

भिलाई के मजदूरों से अपील

दल्ली राजहरा आंदोलन की शुरूआत और जून 1977 के गोलीकांड के कुछ ही माह बाद नियोगी द्वारा भिलाई इस्पात संयंत्र के मजदूरों के नाम जारी की गयी यह अपील दिखाती है कि संगठित औद्योगिक मजदूरों के संघर्ष को एक नयी दिशा देने के सवाल को वे कितना अधिक महत्व देते थे। इन मजदूरों के बीच कार्यरत ट्रेड यूनियनों पर भी यह उनकी संक्षिप्त पर सटीक टिप्पणी है (विस्तृत व्याख्या के लिए इस विषय पर पृ. 194-208 पर उनका लेख देखिये)। — स.

साथियो,

राजहरा के खदान मजदूरों के वीरतापूर्ण संघर्ष के बाद भिलाई के मजदूर साथियों ने नये सिरे से सोचना शुरू कर दिया है। खदान मजदूरों की लड़ाई ने यह साबित कर दिया है कि अगर सही नेतृत्व रहता है तो मजदूर आंदोलन में गुणात्मक परिवर्तन आ सकता है। संघर्ष के रास्ते से गुजरते हुए एकता व्यापक और गहराई तक पहुँच सकती है।

भिलाई में भी मजदूरों ने संघर्ष में काफी भाग लिया है। मुस्तैदी से दुर्नीति का मुकाबला किया है। कोक ओवन के इन्सेंटिव बोनस का आंदोलन, मशीन शॉप की लड़ाई, ओपन हर्थ का संघर्ष, गैस फैसिलिटीज़ का घेराव, मजदूर आंदोलन में नयी चेतना लाये थे।

फिर 20 जून 1967 को मजदूरों ने संघर्ष का एक नया इतिहास बना डाला। प्रत्येक गद्दार अभिजात नेता की अच्छी मरम्मत हुई। मजदूरों ने 20 जून को मैदान में तथाकथित नेताओं का परित्याग किया और नये नेतृत्व को आह्वान दिया।

रेल ट्रांसपोर्ट और ब्लास्ट फर्नेस का संघर्ष तो हिन्दुस्तान के अच्छे-से-अच्छे संघर्षों में गिना जा सकता है। जुझारूपन की एक सुंदर मिसाल कायम की थी। हर्थमैनों के संघर्ष ने तो सारे भारत में ख्याति प्राप्त की थी। पुलिस ने नायर को गिरफ्तार कर लिया था, मजदूर गरज उठे थे कि 'नायर को वापस लाओ', आखिर मैनेजमेंट को घुटने टेकना पड़ा था।

संघर्षों की इतनी लम्बी परम्परा से गुजरते हुए भी भिलाई में अब तक मजदूरों की मजबूत एकता क्यों नहीं कायम हो पायी ? कितने ही मजदूर नेताओं को नौकरी से हाथ धोना पड़ा। इतनी कुर्बानियों के बावजूद आज तक भिलाई के मजदूर डूबते हुए आदमी की तरह साँस बंद करके घुटन अनुभव कर रहे हैं। इसका कारण क्या है ?

इसका कारण यह है कि मजदूर अब तक मालिक-परस्त दलाल नेताओं के चक्कर में फँसे हुए हैं। आज तमाम केंद्रीय ट्रेड यूनियनों के नेताओं में न तो एक भी मजदूर है और न ही मजदूरों के शुभचिंतक। इन ट्रेड यूनियनों के नेताओं को अभिजात मजदूर नेता ('लेबर एरिस्टोक्रेसी') का नाम दिया जा सकता है।

- ये लोग संघर्ष के हर कदम में रोक-टोक लगाकर मजदूर वर्ग के जुझारूपन को नष्ट करते हैं।
- ये लोग नौकरशाही रवैया अपनाकर कार्यकर्त्ता की सक्रियता को नष्ट करते हैं और मजदूरों

को दबाते हैं।

- ये लोग विजय के बदले समझौता का नारा लगाकर 'वर्ग समझौता' ('क्लास कोलेबोरेशन') की कायर नीति खड़ा करते हैं।
- ये लोग ट्रेड यूनियन में 'मोल-भाव' करके दलाली का रास्ता बनाते हैं।
- ये लोग ट्रेड यूनियन को सिर्फ आर्थिक लड़ाई के लिए इस्तेमाल करते हैं। फलतः मजदूर वर्ग को अर्थवाद के गड्ढे में ले जाकर गिराते हैं।
- ये लोग सर्वहारा अंतर्राष्ट्रीयवाद की आड़ लेकर खुल्लमखुल्ला साम्राज्यवादियों की दलाली करते हैं।

भिलाई के बहादुर मजदूर साथियो, जब तक आप इन तथाकथित केंद्रीय ट्रेड यूनियनों के चक्कर में फँसे रहेंगे, तब तक भिलाई में मजदूरों की एकता बनाना सम्भव नहीं होगा। वर्ग संघर्ष के आधार पर ट्रेड यूनियन कायम कीजिये ..... एवं एक सृजनात्मक विचारधारा के आधार पर तमाम कार्यक्रम बनाइये। मजदूर वर्ग के सबसे निकट के साथी किसानों के दुख-दर्द में घुलमिल जाइये। तभी आप ..... देश के लिए नया नेतृत्व पैदा कर पायेंगे जो त्याग और हिम्मत के साथ आगे बढ़ते हुए एक समाजवादी भारत के निर्माण के लिए देश की जनता का मार्गदर्शक बन पायेगा।

❑

(सी. एम. एस. एस. के मुखपत्र 'साप्ताहिक मितान' के 9 सितम्बर 1977 को प्रकाशित प्रथम अंक से साभार।)

उत्पादन संघर्ष के साथ वर्ग संघर्ष भी जरूरी

"दुनिया में दो प्रकार के प्रमुख संघर्ष हैं – एक है वर्ग संघर्ष और दूसरा उत्पादन संघर्ष। देश में किसान और मजदूर हर दिन उत्पादन संघर्ष में भिड़े रहते हैं। तभी तो अनाज पैदा होता है, कारखानों में माल बनता है, खदानों में खनिज निकलता है, मकान बनते हैं, रास्ता बनता है, रेल-मोटर चलती है। यह सब तो उत्पादन संघर्ष का फल है। परंतु आज की समाज व्यवस्था में उत्पादन के साधनों पर पूँजीपतियों का कब्जा है, इसलिए जो भी पैदा होता है वह पूँजीपतियों के भंडार में जा पहुँचता है। ..... इसलिए आज सिर्फ अन्न पैदा करने से ही नहीं चलेगा, उत्पादन संघर्ष के फलों पर अधिकार जमाने के लिए लुटेरे वर्ग के खिलाफ संघर्ष भी करना पड़ेगा। लुटेरे वर्ग के खिलाफ संघर्ष को ही वर्ग संघर्ष कहेंगे। ..... (राजहरा का) मजदूर उत्पादन संघर्ष के साथ-साथ वर्ग संघर्ष में भी हिस्सा ले रहा है। खदानों में पत्थर के साथ संघर्षरत है और मैदान में पूँजीपति एवं लुटेरों के खिलाफ संघर्ष में बहादुरी के साथ आगे बढ़ रहा है।"

(सी. एम. एस. एस. के मुखपत्र 'साप्ताहिक मितान' के 9 सितम्बर 1977 को प्रकाशित प्रथम अंक में नियोगी द्वारा प्रस्तुत 'गाँव के गरीब किसान साथियों से अपील' से साभार उद्धृत।)

इस पुस्तक के खंड चार के खंड परिचय में कहा गया है कि नियोगी की 'कविताएँ, कविताएँ नहीं हैं, उनके संघर्ष का हथियार हैं।' यदि यह अभिव्यक्ति नियोगी की कविताओं के लिए सच है तो यह बात कहीं अधिक उनके भाषणों के लिए सटीक बैठती है। नियोगी एक कुशल वक्ता तो थे ही, परंतु उससे कहीं अधिक वे कुशल थे यह तय करने में कि किस सभा में, किस संदर्भ में और किस उद्देश्य से उन्हें क्या कहना है। उनके सहयोगी बताते हैं कि वे अपने हर भाषण की सामग्री एक रणनीति बतौर जुटाते थे ताकि इसके द्वारा आंदोलन के अगले चरण में अपेक्षित लक्ष्य हासिल करने में मदद मिले। इसका एक जबर्दस्त उदाहरण इस खंड में शामिल किया गया 'रामलाल की जीवन-गाथा' शीर्षक का उनके एक भाषण का अंश है। किसी काल्पनिक रामलाल मजदूर साथी की यह मार्मिक कहानी उन्होंने भिलाई आंदोलन के शुरूआती चरण में एक सभा के दौरान सुनायी थी। उस समय उद्योगपतियों के इशारों पर माफिया गुटों ने हिंसा का तांडव रचकर मजदूरों में दहशत का माहौल बनाया हुआ था। रामलाल की कहानी का मजदूरों पर जादुई असर हुआ और जब वे लौटे तो दहशत की जगह साहस व उत्साह ने ले ली थी। उनके भाषण मजदूरों के चेतना जागरण के भी औजार थे। वे इतिहास को मजदूरों के शिक्षण का जरूरी आधार मानते थे। इसकी एक उम्दा मिसाल राजनांदगाँव आंदोलन के बीच दिया गया उनका 'लाल-हरा झंडा इतिहास के कदमों पर' शीर्षक का भाषण है।

भाषणों एवं बयानों के इस संकलन में उनका 'जीवन की मृत्यु पर विजय' शीर्षक का भाषण कालजयी सिद्ध होगा, ऐसा हमारा विश्वास है। नियोगी ने यह भाषण अगस्त 1990 में छत्तीसगढ़ की मेहनतकश जनता के बीच सक्रिय गैर-दलीय संगठनों के कार्यकर्ताओं की एक सामूहिक बैठक में दिया था। इस भाषण में उन्होंने 'मरणशील और जीवनशील तत्व', 'पशुशक्ति और जनशक्ति' एवं 'साधारण और विशेष' की अवधारणाओं में निहित द्वंद्वात्मक रिश्ते को उभारकर छत्तीसगढ़ और देश के अनेक व्यापक मुद्दों का जोरदार विश्लेषण पेश किया है।

इसी संकलन में नियोगी का अपनी हत्या के कुछ सप्ताह पूर्व टेप रिकार्ड किया हुआ बयान भी शामिल है। मृत्यु को इतना नजदीक देखकर भी, 'मैं इस दुनिया को अवश्य प्यार करता हूँ, परंतु मेरा कर्तव्य, मेरा काम मेरे लिए सबसे प्यारा है' (पृ. 304)। ऐसी बात नियोगी समान आशावादी एवं मजबूत मानस का व्यक्ति ही कह सकता है। उनके इस कथन में नेल्सन मंडेला की इसी भावना की अभिव्यक्ति झलक रही है (देखिये खंड आठ, पृ. 450)। जाहिर है कि इन दोनों क्रांतिकारी व्यक्तित्वों ने इस अभिव्यक्ति के लिए मानवता के प्रति अपने समर्पण के गर्भ से और 'शहीदों के खून से सिंचित' राह पर चलकर प्रेरणा ली है।

❑

की 'विरोधी पार्टी' की बहनों की रह-रहकर याद आती थी। मैं कभी-कभी सोचता था कि काश, मेरे पँख होते तो मैं उड़कर अपनी उन बहनों को ढूँढ़ता और ढूँढ़ता किशोरावस्था के उन दिनों को, जिनमें खो गया है पश्चिम बंगाल का पश्चिमी संथाल-कुलियों का वह देश — मेरा प्रिय साकतोरिया। लेकिन वह तो हो नहीं सकता। पता नहीं, तुम लोगों के साथ मेरी दोबारा कब मुलाकात होगी, होगी भी या नहीं। मुलाकात फिर से हो या न हो, यह याद रखना कि तुम लोगों का एक भाई था जो तुम लोगों को बहुत प्यार करता था, बस। एक दिन आशीष दा मुझे अपने घर ले गये थे। वहीं भाभी से मेरी मुलाकात हुई। उन्हीं से खबर मिली कि रंजू दा अमरीका चले गये हैं और ताऊजी की तबियत ठीक नहीं है। अगर सम्भव हो तो समाचार देना कि क्या हुआ है और वे अब कैसे हैं। मेरे पास बताने लायक और कुछ नहीं है। लगभग साल भर जेल में बिताकर अब पिछले तीन महीनों से खुली धूप में घूम-फिर रहा हूँ। भूख लगती है, प्यास लगती है, नींद आती है और इन सब जरूरतों का मुँह बंद भी रखना पड़ता है। आजकल मैं भिलाई में रहता हूँ। पर ज्यादातर समय गाँवों में ही बीतता है। कभी यहाँ . . . . कभी वहाँ . . . . कभी और कहीं। तुममें से कई तो अब गृहणियाँ बन गयी होंगी — जल्द ही श्रीमती पाती की गृहणियाँ।

अब भी मालूम नहीं कि यह चिट्ठी पोस्ट होगी या नहीं ? अगर होती है और सही पते पर पहुँच जाती है तब उदास होने के बावजूद एक बार साकतोरिया की बातों को याद कर लेना। आज की कड़वाहट को भूल जाना। हम सब अच्छे थे, आगे के दिनों में भी अच्छे ही रहेंगे — क्या होगा वर्तमान को लेकर, सिर खपाकर। प्रणाम व प्यार स्वीकार करना। ताऊजी व ताईजी को मेरा श्रद्धापूर्ण प्रणाम कहना।

अंत में शुभेच्छाओं के साथ,

तुम लोगों का भाई
बाच्चू

अभी इस पते पर हूँ —
स्ट्रीट न. 14, क्वार्टर न. 12 ए,
पो. आ. भिलाई, जिला दुर्ग,
मध्य प्रदेश

(मूल बंगला से भक्तिपद घोष, उत्पला दास एवं चित्ररूपा पालित द्वारा अनूदित।)

पुराने दिनों की याद

कभी सन् 1972 में (पक्की तारीख पता नहीं) नियोगी ने अपनी चचेरी बहनों को ग्राम दहियान (दानीटोला सदान के पास) से एक अत्यंत मार्मिक पत्र लिखा था। उसे हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं। — स.

छत्तीसगढ़ के एक छोटे-से गाँव
' दहियान ' से
जिला दुर्ग (मध्य प्रदेश)

मेरी प्रिय दीदी — मूना, मिनू , चिनू ,

मैं जानता नहीं हूँ कि इस पल तुम लोगों में से कौन कहाँ होगा ? पड़े-पड़े दोपहर के आलस में सोच रहा था — बहुत दूर की, गुम हो गयी, ऐसी एक दूसरी ही जिंदगी की बात। साकतोरिया। दामोदर और बराकर दोनों नदियों का मेल होता है, साकतोरिया को छूते हुए। दोस्तों के साथ मैं शाम को घूमने जाता था। सड़क धूल से भरी होती थी। चलते-चलते घुटनों तक धूल में धँस जाते थे। धूल का रंग शिव के शरीर के रंग जैसा होता था। दामोदर नदी के किनारे एक विशाल ' वाटर-टावर ' था। हम जाकर बैठ जाते थे, टावर के पत्थर के चबूतरे पर। उन्हीं दिनों रात-रात जागकर या फिर पढ़ाई के दौरान किताबों की आड़ में रखकर शरत् बाबू को पढ़ने के कारण हम एक-दो साथियों का कवि-मन बनने लगा था। यूँ तो कसम खाकर नहीं कह सकता कि ' खेद के साथ यह कहना पड़ रहा है कि आपके द्वारा रचित कविता, कहानी, निबंध . . . ' सरीखे पत्र पाकर मेरा कवि-मन संकुचित नहीं होता था। हालाँकि उस समय मैं खुद को रवि ठाकुर का उत्तराधिकारी ही समझता था। दामोदर के किनारे बैठकर हम गाँगठीमूली जंगल को निहारा करते थे। जंगल में बेल, नीम, अर्जुन के पेड़ भरे हुए थे। सरस्वती पूजा में एक जोड़ा बेल व आतुरी-मुतुरी फूल की जरूरत पड़ती थी। हम लोग सरस्वती पूजा के एक दिन पहले गाँगठीमूली के जंगल में जाते थे। घर में किसी को भनक भी नहीं पड़ती थी। मैं बेल के पेड़ पर चढ़ने में उस्ताद था। सरस्वती पूजा हमारी उस जिंदगी के उबाऊपन को दूर करने के लिए एक नया, आनंदमय व रोमांचक अनुभव थी। पूजा से पहले की रात को हम घुटनों के बल चलते हुए घर के दरवाजे पर सोते बुजुर्गों को लाँघकर, हमारी ' विरोधी पार्टी ' वाली बहनों को चकमा देकर, बाहर खिली हुई चाँदनी में खुद को सराबोर कर लिया करते थे। फूल चुराकर पूजा की सजावट करना यह हमारा रात का काम था। दोस्तों में मैं सबसे बेकार आदमी था। फिर भी अच्छा लगता था।

खंड परिचय

हमने जब इस पुस्तक में इस खंड के लिए प्रावधान किया था तो हमारा उद्देश्य था कि नियोगी द्वारा लिखे गये पत्रों के माध्यम से हम उनके व्यक्तित्व, विचारों एवं अनुभवों के बहुत सारे उन पहलुओं को उभार पायेंगे जिन्हें अन्य खंडों से उभारा नहीं जा सकता। हमें यह उम्मीद थी कि नियोगी जैसे व्यक्ति ने अपने जीवनकाल में ढेर सारे निजी पत्र लिखे होंगे। परंतु जब हम पत्रों को ढूँढ़ने चले तो उनके मित्रों, सहकर्मियों एवं परिवारजनों में से किसी के भी पास उनका एक भी पत्र उपलब्ध नहीं था, चार लाइनों का भी नहीं। यहाँ तक कि उनके एक डेढ़ दशक पुराने मित्रों व सहकर्मियों के पास भी उनका कोई भी पत्र मिल नहीं पाया। कहीं ऐसा तो नहीं कि नियोगी निजी पत्र लिखते ही नहीं थे ? अंत में हमें मदद मिली 'अनुष्टुप' द्वारा बंगला में प्रकाशित 'संघर्ष औ' निर्माण' पुस्तक से जिसमें नियोगी द्वारा अपनी चचेरी बहनों को लिखा एक पत्र मिला। इसका हिन्दी अनुवाद हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं। यही इस खंड की अकेली प्रस्तुति है। इसके अलावा हमें यूनियन के कार्यालय से नियोगी द्वारा आंदोलन के काम के सिलसिले में लिखे कुछ और पत्र प्राप्त हुए, जैसे प्रधान मंत्री, केंद्रीय इस्पात एवं खनन मंत्री, गैर-दलीय संगठनों आदि को। हमने ऐसे पत्रों को जानबूझ कर इस खंड में शामिल नहीं किया है चूँकि उनकी सार्थकता 'जन आंदोलन एवं संगठन' (खंड आठ) के संदर्भ में अधिक लगी। वहाँ इन पत्रों को उनकी सामग्री से सम्बंधित मुद्दों के क्रम में रखा गया है।

हम आशा करते हैं कि इस खंड का अपेक्षाकृत खालीपन नियोगी को जानने वाले लोगों को प्रेरित करेगा कि वे अपनी पुरानी फाइलों, संदूकों और आलमारियों में से उनके पुराने पत्रों को खोज निकालेंगे और इस पुस्तक के अगले संस्करण के लिए भेजेंगे। ❑

सितार के सात तार

सात कंटीले तार —
अब तक छूता था मजदूर
जब कभी इन तारों को,
होता था लहुलुहान उसका शरीर।

अब वह बन गया
सितार के सात तार।
पैदा करेगा मजदूर आंदोलन
इन तारों से आवाज !

❑

दुर्ग जेल में,
फरवरी-मार्च 1991
(मूल हिन्दी में ; जेल डायरी से।)

शुरूआत की सुबह

' हमारा पर्यावरण ' लेख (खंड तीन का अंतिम लेख) के अंत में नियोगी द्वारा रचित यह कविता सम्भवत: उनकी अंतिम कविता है। इसी सिलसिले में पृ. 624 देखिये, जिससे इस कविता का संदर्भ स्पष्ट हो जायेगा। — ***सं.***

छोटी-छोटी बातें,
हजारों दुख गाथाएँ।
समझने में सीधी और आसान,
कहीं सिर्फ एक या दो मामूली-सी पहचान।
धूल कण,
एक पेड़ का गिरना,
कहीं से थोड़ा-सा रिसाव,
चूल्हे का ऊष्म धुआँ।

हमारी आवाज शर्मिन्दा होकर
छुप जाती है मशीनों के बाजार में।
सिर्फ वेदनाएँ ,
दुख की गाथाएँ ,
चलती रहेंगी अनंत काल तक
या
हम उठ खड़े होंगे
अंतिम क्षणों में ?
अंत नहीं होगा
जहाँ अंत होना था,
वहीं शुरूआत की सुबह खिल उठेगी।

❑

जुलाई 1991
(मूल हिन्दी में ; छमुमो की लोक साहित्य परिषद् के सौजन्य से।)

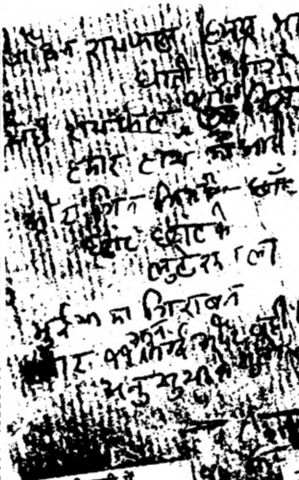

छत्तीसगढ़ी में

(हिन्दी अनुवाद पृ. 259 पर)

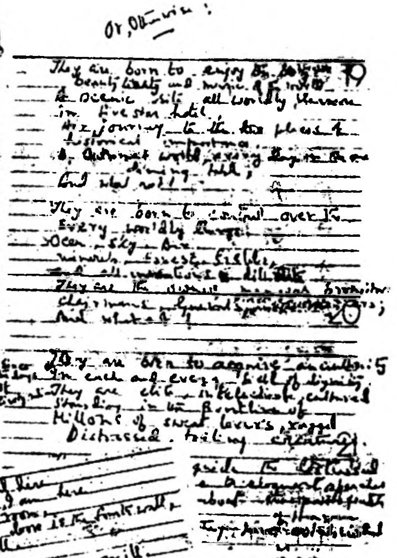

अंग्रेजी में

(हिन्दी अनुवाद पृ. 245 पर)

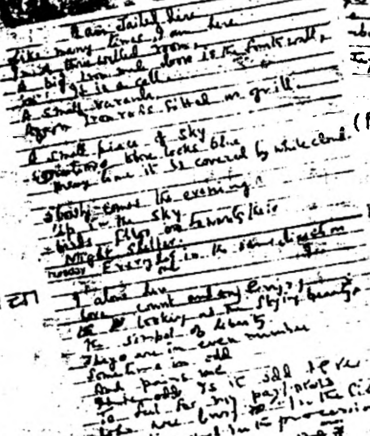

अंग्रेजी में

(हिन्दी अनुवाद पृ. 246 पर)

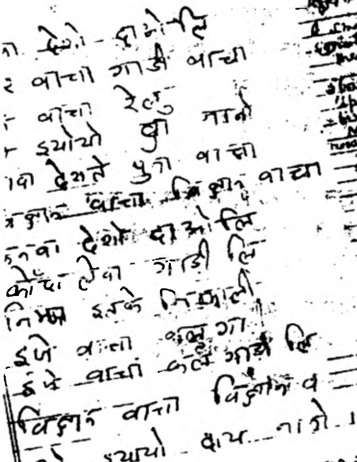

गोंडी में

(हिन्दी अनुवाद पृ. 263 पर)

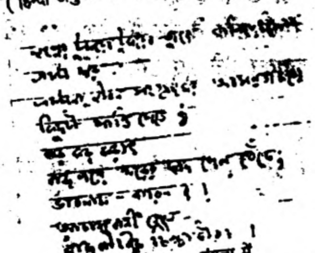

बंगला में

(हिन्दी अनुवाद पृ. 258 पर)

निशाचर

मैं
बहुत रो चुका हूँ,
बहुत रो चुका है मेरा वतन।

वे कहते हैं –
मजबूर हैं मजदूर,
भूख से मर रहे हैं,

बस थोड़ा-सा
और चाहिए पुलिसिया आतंक,
फिर तो बुझ जायेंगे ये चिराग,
अँधेरा छा जायेगा।
निशाचर
मनायेंगे सुहागरात।

दुर्ग जेल में,
फरवरी–मार्च 1991
(मूल हिन्दी में; जेल डायरी से।)

तब तक

लड़ो! लड़ो! लड़ो!
इस भिलाई में
जहाँ भी मजदूर हैं,
हमारा है एक ही नारा,
लड़ो!
अपने दुश्मन का नाश
होने तक लड़ो!
वक्त आ चुका है,
जब सारा भिलाई
उठ खड़ा होगा।
* * *

मुर्दे गहरी नींद सोते हैं,
इसकी कीमत
उन्हें चुकानी होगी –
भूख के हमारे दर्द की,
आग की, शोले की,
खून के हर कतरे की,
हर चोट की,
हम भिलाई को जिलायेंगे!

दुर्ग जेल में,
फरवरी–मार्च 1991
(मूल हिन्दी में; जेल डायरी से।)

इनका हौसला बुलंद है क्योंकि
पिछले दिनों
वीर नारायण सिंह भी,
इन दलालों के चक्कर में
मारा गया था।

दोस्तो, वह हमारे गाँव का नाम
भूल गया है।
मजदूर इस बस्ती के नाम से
अपनी छाती फुला लेता है।

जहरीले साँपों ने,
लाल रंग का चमड़ा ओढ़ के
या तिरंगे चमड़ों से,
और अब मैनेजमेंट का दिया हुआ
नये काले चमड़ों के कलंक को,
अपने शरीर पर ओढ़ लिया है।

शराबी, जुआरी और गुंडों से
जो मदद लेते हैं,
अब निकल आये हैं
मजदूरों के खिलाफ टकराने के लिए,
उस समय जब मजदूर भूख के खिलाफ
संघर्ष में डटे हुए हैं।

परंतु, ये भी जानते हैं कि
चमचों को इज्जत नहीं मिलती है,
चमचों को खरीदा जाता है।
चमचे मंडी में नहीं,
अंधी गली में छुप-छुप के बिकते हैं।

अब तक का इतिहास,
चमचों की गद्दारी का
अच्छी भाषा में वर्णन नहीं
कर पाया है।

घर में,
नेम प्लेट में चमचा लिखने का
रिवाज अब तक नहीं बन पाया है।
अब यहाँ तूफान उठेगा,
यह तूफान कचरों को साफ करेगा।

होशियार मजदूर !
तूफान के आमने-सामने तुम खड़े हो।
विजय नहीं तो मृत्यु।
आओ, विजय को गले लगायें !

(छमुमो के सौजन्य से।)

आकाशवाणी

टुकड़ा-टुकड़ा सपना
जोड़कर बनाया था एक घर।
एक अविराम जीवन संग्राम की
अवसन्नताओं के बीच
पाने के लिए थोड़ी सी शांति।
कड़कड़ा कर गिरी अचानक बिजली,
टेढ़ा हो गया फूस का घर।
सोचता रहा — कारण !
आकाशवाणी हुई —
राजनैतिक विचारधारा।

(मूल बंगला में ; डॉ. विजय बहादुर सिंह द्वारा अनूदित।)

जिन्होंने दिखाया हमें रास्ता

करोड़ों लोगों की रात को भोर कर देने वाले
आदिलाबाद के वीर भूमइया, किष्टा गौड[1]
के गले में पड़ी है फाँसी।

देशी-विदेशी हत्यारों को कब्र में सुलाने वाले
कामरेड तुम।
आपातकाल की रात के अंधेरे में
दे दी गयी है तुम्हें फाँसी।

मानवों के सुख ! साथियों के सपने !!
साथियों की छाती
भर उठी है देशवासियों के दुख से।
मनुष्य की पीठ पर कोड़ों के दाग,
क्रोध की लपटें हैं
साथियों के हृदय में।

सम्पूर्ण देश के भूखे किसानों की
पेट की ज्वाला को
अपनी बनाकर
जिस दिन साथियों ने लिया है मोर्चा,
उसी दिन कामरेड
तुमने सोचा था उसी दिन
रच दोगे तुम मेहनतकशों का एक सुराज।

घातक शासक शैतान, तुम !
शांति मंत्रों की ओट में
ले आये हो श्मशानी स्तब्धता !
'गरीबी हटाओ' वायदे की आड़ में
निर्धन शिशुओं के प्राणहंता तुम !

वही देख रहा हूँ आज
किष्टा गौड, वीर भूमइया[1] की पुकार पर
जाग उठा है समूचा गाँव,
भय से काँप उठी है
अत्याचारियों की छाती।
हलों की फाल से
जमीन को चीर देने वाले किसान
को पुकार रहे हैं उसके साथी।
पुलिस राज का मुकाबिला करने को
हम भी हैं तैयार।

करो तैयार मोर्चे ! करो प्रतिरोध !!
आपातकाल की काली रात में चुपके से
उन्होंने डाल दिया वीरों के गले में फंदा।
अत्याचारियों के यहाँ गिरवी रख दिया है
जिन्होंने अपना पेट।
उन्हीं की हैं बंदूकें, उन्हीं की हैं संगीनें,
वे ही कर रहे हैं शक्ति प्रदर्शन,
दिखा रहे हैं अपना बल।

उनकी आँखों में हैं अभी तक
हरियालियों के समारोह,
उन्होंने देखी ही नहीं
भूखे आदमी की आँखों की क्रोधाग्नि।
उनकी दृष्टि की ओट में फहर रहा है
मेहनतकशों की एकता का परचम।
मुक्तियुद्ध (संघर्ष) का यह संदेश
उनके लिए है एक अजाना समाचार।

आकर देखो, तुम्हारी आँखों के सामने
शहीदों के खून से भीग रहा है पथ।
गर्वोन्नत हृदय से वे दोनों वीर
खोद रहे हैं अत्याचारियों की
कब्र।

(मूल हिन्दी के 'अनुष्टुप' द्वारा प्रकाशित-बंगला अनुवाद से डॉ. विजय बहादुर सिंह द्वारा पुनः अनूदित।)

---

[1] वीर भूमइया और किष्टा गौड जिला आदिलाबाद (आंध्र प्रदेश) के कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आंदोलन के कार्यकर्ता थे। इन्हें सन् 1975 में आपातकाल के दौरान फाँसी की सजा दी गयी थी। स्वतंत्र भारत में राजनैतिक बंदियों को फाँसी देने की यह पहली घटना थी जिसे लेकर आपातकाल के पूर्व देशभर में व्यापक विरोध हुआ था।

परंतु जनता आपको चाहती नहीं है —
सब गड़बड़ हो जाता है
राष्ट्र व्यवस्था में ;
आपका वर्ग विश्लेषण भी
खतरे में आ जाता है ;
मुख्य द्वंद्व , साधारण द्वंद्व , मौजूदा द्वंद्व ,
सब गड़बड़ हो जाता है !

❑

(मूल हिन्दी में ; छमुमो के सौजन्य से।)

तीन कविताएँ

रो माँ, रो !
नहीं तो तेरे बच्चों का दर्द
मेरे देशवासियों के सीने में
बैठ जायेगा।

* * *

लाखों हाथों में काम की भूख,
लाखों पेटों में भूख की आग
और हर दिल में गुस्से की आग,
जंगल की आग सारी पहाड़ियों में।

* * *

हाथ
सिर्फ जोड़ने के लिए नहीं,
हाथ
गर्दन को मरोड़ने के लिए भी होता है।
मेहनतकशों का हाथ
सिर्फ श्रम के लिए नहीं,
लुटेरों के हाथों को
तोड़ने के लिए भी होता है।

❑

(मूल हिन्दी में ; छमुमो के सौजन्य से।)

कुर्बानी के रास्ते पर

शहीदों के खून से सींचे हुए
कुर्बानी के रास्ते पर,
बढ़ते चलो कदम-कदम।
शोषकों के खिलाफ,
इस आखिरी युद्ध में
सुनिश्चित है हमारी विजय।

❑

(मूल हिन्दी में ; छमुमो के सौजन्य से।)

ताजा सुंदरता पर नजर टिकाकर
कुछ सोच रहा था।
फिर मीठा आवाज निकला,
" वैसे बड़े आकार का गुलाब
बड़ी मुश्किल से मिलता है।
रजनीगंधा की मृदु गंध
बड़ी सुहावनी है, अच्छा है न ? "
मैनें कहा,
" साहब, मैं देखते हुए कुछ सोच रहा था।"
" देखना अच्छा है, सोचना खराब।
फिर भी बताइये, क्या सोच रहे हैं आप ? "
मैं मेरा दिल को खोलना चाहा
उस मिठास भरी आवाज के सामने,
" साहब !
इन फूलों की पँखुड़ियों ने,
कितना ताजा पानी भर रखा है
अपने शरीर में !
वे सिर्फ बादल के भरोसे
चंदा की आभा प्राप्त नहीं करते हैं।
हरा-हरा धान के पौधों की
सफेद जड़ों को निचोड़कर
भरता है पानी तांदुला [1] और खरखरा [1]।
वह (उस) पानी,
गुलाब और रजनीगंधा के शरीर को
हृष्ट-पुष्ट बनाता है
और सूखा जड़ों को लेकर
' किशोरी ' धान-कन्याएँ [2]
अकाल-बुढ़ापा-पीलापन पाकर
दम तोड़ देती हैं . . . . साहब ! "
साहब का आँख लाल हो उठा,
उन्होंने कहा, " शट-अप।"
मैं कुछ समझा नहीं।
उन्होंने अपनी हथेली की उँगलियों को
आड़ा-तिरछा बनाकर चिमटा जैसा
बना लिया और कहा, " गेट-आऊट ! "
मैं एम. डी. साहब के दफ्तर में
तैमूर को देखकर लौटा।

❑

(मूल हिन्दी में ; क्रांति गुहा नियोगी के सौजन्य से प्राप्त नियोगी की एक डायरी के पन्नों से।)

---

[1] दुर्ग जिले में सिंचाई के लिए बनाये गये दो बड़े जलाशय जिनका पानी अब भिलाई स्टील प्लांट को दे दिया गया है।

[2] छत्तीसगढ़ क्षेत्र में पायी जाने वाली धान की एक किस्म ' किशोरी ' जिसे यहाँ कन्या की उपमा दी गयी है।

हम कहते हैं
यही तो अमरत्व है,
वेश्या, गणिका के ये शरीर,
ये बियर के गिलास और
चारमीनार के धुएँ का अंधकार,
यही मेरे जीवन का सब कुछ है।
मन कहता है,
"यह तो सभ्यता का शव है।"
हम कहते हैं, "यही भला है।"

जब देखते हैं रंगीन स्पेक्ट्रम [1]
तो भूल जाते हैं उसकी जननी —
रोशनी को, प्रकाश को,
और भूल जाते हैं
अस्तित्व की छटपटाहट ;
रंगों के वैविध्य में
मैंने रोमाँस का स्वर पाया है।

पुरातन की जीर्णता
धूसर खाई जैसी लगती है
और भूल जाते हैं प्रेयसी के सिंदूर का टीका।
शहर के कारखानों में चलता है
सभ्यता का सरीसृप [2]।
सूर्य की प्रखरता मैं और नहीं सह सकता ;
जीवन पथ में
झिलमिलाती हुई नियान की सर्चलाइट,
ये बत्तियाँ, ये रश्मियाँ,
कौन हैं मेरे अपने ?
हम जानते नहीं हैं,
केवल जानते हैं
व्हिस्की और बियर !!

(जलपाईगुड़ी साईंस एंड नेचर क्लब की पत्रिका 'संज्ञान' के शंकर गुहा नियोगी स्मृति अंक से साभार ; मूल बंगला से अनूदित, श्याम बोहरे के सौजन्य से।)

शांति, क्रांति और विकास

जब सवाल उठता है, युद्ध या शांति,
हम साफ जवाब देते हैं —
हम शांति के पक्षधर हैं।
जब यथास्थिति में थोड़ी-सी
सिर्फ संस्कार की बात होती है,
तब हम क्रांति के लिए
अपनी आवाज बुलंद करते हैं।
जब जगह-जगह विनाश का डमरू बजता है,
हम विकास के नाम पर बिगुल फूंकते हैं।
इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं
कि शांति, क्रांति और विकास
से मेरी सहमति है।
शांति का उपाय, क्रांति का दृष्टिकोण
और विकास का लक्ष्य मिलकर बनती है,
हमारी विचारधारा।
मंजिल निश्चित है, दृष्टिकोण साफ है,
उपाय उपयुक्त है,
फिर चलने में दिक्कत क्या है ?

(मूल हिन्दी में ; छमुमो के सौजन्य से।)

---

[1] सात रंगों का वर्णक्रम जो सूर्य की रोशनी के त्रिपार्श्व (प्रिज़्म) में से गुजरने से बनता है, जैसा इंद्रधनुष बनने में भी होता है।

[2] रेंगने वाले जंतु।

गजब है आँख दिखाना

गजब है
एक खौफनाक कहर का आँख दिखाना
सारे छत्तीसगढ़ में।

दल्ली राजहरा के हजारों मजदूर
सोये पड़े थे जब अपनी झोपड़ियों में,
तभी ध्वनि-प्रतिध्वनि, कोलाहल-चीत्कार,
दगती रहीं खाकी पोशाक वालों की राइफलें,
हो गया सब स्वाहा।

बहन अनुसूइया,
बालक सुदामा, उपाध्यक्ष जगदीश,
टीभू , डेहर, रामदयाल, समारू, सोनऊ,
सब हो गये शहीद।
रोटी चाहिए थी न तुम सबको ?
पायीं गोलियाँ।
शामिल हो गये न तुम सब इतिहास में !

एक खौफनाक कहर आँख दिखा रहा है
पूरे छत्तीसगढ़ को।
मजदूरों की हुँकार से
काँप रहे हैं आस-पास के पहाड़।
मुक्ति चाहिए ,
मुक्ति चाहिए नेताओं की,
चाहिए मुक्ति देश की।

❑

(मूल हिन्दी से गाज़ी एम. अंसार द्वारा बंगला में किये गये अनुवाद से डॉ. विजय बहादुर सिंह द्वारा पुनः अनूदित।)

वोट की चिंता

हे जीवन ! क्यों उदास हो तुम ?
एक बूढ़ी हत्यारिन का खूनी रास्ता पकड़
पुनः प्रवेश कर रहे हैं युवा हत्यारे।

यही तो है हमारा सारा देश –
अजब कानूनों से ठँसा पड़ा है यह रास्ता,
धनिकों का ही तो है सारा राजपाट।
राजगद्दी पार्लियामेंट,
मुर्गों की पहरेदारी में तैनात हैं जंगली सियार।
पाँच-पाँच सालों में सुस्वादु रक्त चूस-चूसकर
मुग्ध तृप्त सियार।

हे जीवन ! खिन्न क्यों हो तुम आज ?
हे जन्मभूमि !
अफीम के नशे में क्यों ले रही हो झपकियाँ ?
बरसात के पीले मेंढक हैं वे,
देखे जाते हैं सिर्फ बरसात में।
दादुर बोलते हैं जिस तरह वर्षागम पर,
चुनावों में लगा रहे हैं नेतागण
भाइयो . . . हो . . . बहनो . . . हो . . . की रट।

देश जिस दिन होगा एकजुट,
भंग हो जायेगा यह दादुर समारोह।
छिन्न हो जायेंगे भूख रोग शोक हाहाकार,
डूब जायेंगे ये सब
जनता के तीव्र हुँकार में।

❑

(मूल हिन्दी से गाज़ी एम. अंसार द्वारा किये गये बंगला अनुवाद से डॉ. विजय बहादुर सिंह द्वारा पुनः अनूदित।)

मैं यहाँ जेल में हूँ

कई बार की तरह
आया हूँ यहाँ फिर एक बार।

तीन तरफ दीवालों से घिरी
मेरी कोठरी,
लोहे की सीखचों से बना
वह बड़ा दरवाजा ही चौथी दीवाल।
एक छोटा सा बरामदा
घिरा है लोहे के जंगले से।

वह नीला
छोटा सा आसमान का टुकड़ा
सफेद बादलों से ढँका हुआ कई बार।

धीमे-धीमे उतर रही है गहराती सांझ।
दूर ऊपर आकाश में,
अपने रैन बसेरे की ओर
उड़े चले जा रहे हैं पंछी,
एक ही दिशा में एक साथ।

मैं हूँ यहाँ अकेला।
पंखेरुओं को प्यार कर रहा हूँ,
गिन रहा हूँ,
उनमें मगन हूँ मैं।
देख रहा हूँ
उनकी उड़ान का सौंदर्य,
जो प्रतीक हैं आजादी के।
जोड़ों में उड़ रहे हैं वे,
कभी-कभी अकेले।
यह देख पीड़ा से भर जाता है मेरा मन
अपने साथियों की याद में –
जो जुटे हुए हैं खेतों में, कारखानों में,
व्यस्त हैं जुलूसों में,
उनसे दूर यह अकेलापन,
क्या नहीं है असंगत ?

❑

दुर्ग जेल में,
1 मार्च 1991

(मूल अंग्रेजी में ; डॉ. विजय बहादुर सिंह के भावानुवाद का संशोधित स्वरूप ; जेल डायरी से।)

किसान का डर

डरते डरते दिन जाता है,
रातें भी भयदीर्ण।[1]
मरण सो रहा मरते-मरते,
जीवन शतधाजीर्ण।[2]
छिद्र-विद्ध जीवन बबूल के काँटों से,
रात की नींद में नहीं रही सपनों की उड़ान।

---

[1] भय से विक्षिप्त। [2] तार-तार हुआ या बिखरा हुआ।

जागो ओ सोने वालो !

अभी भी
सोये पड़े हो तुम !
रात के अंतिम पहर की पुकार आ गयी
कर्म-वेला है यह।
उठो ! त्याग कर अपनी शैय्या !
सुनहली ओस से मानो
पके धान ने धो लिया हो अपना शरीर।
यही धान तो है मनुष्य का जीवन,
गिरवी है जो महाजनों के यहाँ।

कटनी का दिन है आज —
धान की गौंजों के लिए,
लीप कर सजाये जा रहे हैं खलिहान।
ओ सोये मानव ! सोते ही मत रहो !
उठो और देख-समझकर,
चलो अपनी राह !

क्लांत हैं शिशु
पिछले अकाल की मार से।
तार-तार हैं बहुओं की देह के कपड़े,
धोतियाँ फटकर हो गयी हैं कौपीन,
भीख के अन्न से जैसे-तैसे कट रहे हैं दिन।
हाय रे ! हाय रे !!

धान-मड़ाई शुरू होते ही आयेंगे बैल,
अभी भी जो सोये हैं बिस्तर पर।
उठो ! उठो !! जागो ! जागो !!

खून-पसीने की कमाई को तो जाना ही है
महाजन के सूद में।
दँवरी के बैल को हाँकते रहो पैने से,
घुमाते रहो उन्हें।
सोते हुए मानव उठो !
छोड़ो नींद और जागो !

बैलों को हाँकते
जिस हाथ से उठाया था पैना,
महाजन के आने पर
उसी हाथ से उठाओ हथियार !
आगे आना तो होगा लड़ाई के मैदान में,
दुख की रात की विदाई के शेष पहरों में।
इस तरह मूर्खों-सा सोना !
आलस्य छोड़कर नींद से उठो,
ओ सोते मानव !
जागो, इस वेला में !

(मूल हिन्दी के 'अनुष्टुप' द्वारा प्रकाशित बंगला अनुवाद से डॉ. विजय बहादुर सिंह द्वारा पुनः अनूदित।)

जय छत्तीसगढ़

डेढ़ करोड़ जनों की धरती,
कर्मभूमि यह मेरी।
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

गोंड, कौंवर, धीवर,
मारिया, मुरिया,
ओरॉव, हल्बा, मजबूत सिकड़।
प्यारे आदिवासी हमारे,
बहादुर वीर एक-से-एक बढ़कर।
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

वीरों की कौम है हमारी,
गोंड, कूँअर, चेलिक, मोटियारी।
बघेल, सुंदर शर्मा, नागे नारायण राव,
प्यारे लाल नेता सब बढ़-चढ़कर।
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

यह देशप्रेम विश्वास जगाता है,
स्वर्णाक्षर में इतिहास लिखाता है,
त्यागी जनों की यह धरती,
विप्लवकारी 'विद्रोही' छत्तीसगढ़।
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

कोयला, लोहा, ताँबा, सोने की खानें,
धान का कटोरा यह कौन नहीं जाने।
अंग-अंग में अँट्य पड़ा है सौंदर्य,
करोड़ों में लिये बैठा है बड़ी धन-दौलत।
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

नदी-नाला, जलाशय और पोखर,
आबोहवा इसकी मधुर सुंदर।
लोग यहाँ के हैं देवता की तरह सरल,
दानव छाये हैं इनके ऊपर।
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

महानदी हमारी प्रिय गंगा,
शिवनाथ, नर्मदा सभी की प्रियतर,
सारन, गोदावरी बहे निर्झर।
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

सभी मनुष्य हैं बंधु हमारे,
निर्धन सब सभी सर्वहारे।
कंकालवत हैं सभी आदिवासी,
बचे हैं केवल हाड़-हाड़ भर।
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

वन सम्पदा लाख, शीशम, सराई,
खेत में मूँग, उड़द, छोला रे भाई।
लाख, तिल, गेहूँ, मसूर और राई,
पैदा करते हैं ये गार कर रक्त,
देह अपनी निचोड़कर।
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

हम तो करते हैं प्यार सभी को,
किंतु क्या कोई प्यार करता हमें है ?
छद्म नेता और व्यापारी . . . .
खून चूस कर हमारा,
हिंस्र पशुओं जैसे करते हैं गड़-गड़।
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

व्यापारी नेता करते हैं शोषण,
तभी तो रोज-रोज होता है हमारा मरण।
हमारी इन्हीं आँखों के आगे,
शहीद हो गये न जाने कितने,
न जाने कितने नहीं गये खप-मर !
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

लगता है जैसे सो गये हैं जवान,
न जाने किस दुख से कर रहे हैं पलायन।
क्यों नहीं तब विचरेंगे शोषकगण,
उठाकर अपना मस्तक और तानकर अपना धड़ !
जय छत्तीसगढ़। प्रिय छत्तीसगढ़।।

और मुहावरों की उथल-पुथल में नहीं, वरन् उस जीवन बोध में रहता आया है जिससे संवेदनात्मक स्तर पर जुड़ते ही औपचारिक भावों को पसीना छूटने लगता है और कृत्रिम भाषा के हाथ-पाँव फूल जाते हैं। हिन्दी के जुझारू लेखन के संदर्भ में यह 'काव्यांचल' अपनी करुण-विक्षुब्ध मुद्रा और रौद्र रूप के प्रचंड तेवर के कारण हमेशा अलग से पहचाना जाता रहेगा। इसे वही जनता पढ़ेगी, जिसे आत्म-बलिदान का संस्कार मिला है, जो अपनी असंख्य शहादतों के बाद वह सुबह देखना चाहती है जो इन कविताओं में भोर की लाली की तरह अंधकारपूर्ण रात्रि की नीलिमा को चीरकर झाँकने लगी है।

अपना ही घर फूँक कर अपने ही छप्पर से उठने वाली लपट पर रह-रह कर मुग्ध हो उठने वाली पीड़ा भरी चमक की गवाही देती ये कविताएँ हमें ताज भोपाली के उस शेर के पास ले जाकर खड़ा कर देती हैं जिसमें घर के जलने से आसमान ही रोशन नहीं होता, चेहरे की कांति भी बढ़ जाया करती है —

दर्द से चेहरे की ताबानी बढ़ी,
घर जला तो आसमाँ रोशन हुआ।

नियोगी की कविताओं में आग और उजाले की जो आभा है, उसमें कहीं बंकिमचंद्र, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, विवेकानन्द, रवीन्द्रनाथ, शरत्चंद्र और काज़ी नज़रूल इस्लाम के संस्कारों की परछाइयाँ भी हैं। पर इन परछाइयों को नियोगी ने अपनी बनाकर जिस तरह की अभिनवता दी है, उससे कालजयी परम्परा का सौंदर्य दुगुना हुआ है और जन काव्य को एक तर्क-सम्मत ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मिल सका है। भारत के किसान-मजदूर आंदोलनों के तथ्यों और जटिल परिपार्श्वों को समझने में ये कविताएँ हमारी मदद करेंगी। साथ ही नव-निर्माणकारी जन चेतना और उसे मूर्त करने वाली संस्कृति की रक्त-रंजित राह का इतिहास भी हमारी निगाह में आ सकेगा। यह समझ पाना तब और आसान हो जायेगा कि समाज को बदलने वाली कविता किन लोगों के द्वारा लिखी जाती रही है और उसका गर्भकेंद्र कहाँ रहता आया है, और यह भी कि परिवर्तन की कविता लिखने वालों ने ही हमेशा स्वयं यह तय किया है कि उन्हें अपने भाव और भाषा के साथ कैसा व्यवहार करना है।

हिन्दी पाठकों ने अब तक रामप्रसाद बिस्मिल, अश्फ़ाक़ उल्ला ख़ाँ, माखनलाल चतुर्वेदी, सरोज दत्त, अवतार सिंह पाश, वरवरा राव, चेरा बंडा राजू की जनपक्षधर क्रांतिधर्मी काव्य परम्परा को ठीक उसी तरह भारतीय कविता की विरासत में शामिल किया है, जिस तरह महान स्वाधीनता आंदोलन से जुड़े लेखन को। नियोगी की ये कविताएँ उसी परम्परा की मजबूत कड़ियाँ हैं। इन कविताओं को पढ़ते हुए जूलियस फ्यूचिक, नाज़िम हिकमत और चे-ग्वारा की संघर्षधर्मी शब्द परम्परा भी नये सिरे से हमारी जुझारू चेतना के आकाश में कौंधने लगती है।

भले ही ये कविताएँ मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ अंचल के श्रमिक संघर्ष-संदर्भों की आवश्यक प्रचुरता लिए हुए हों, किंतु अपने सपनों और अपनी जिजीविषा में ये इतनी विरल और असाधारण हैं कि हमारे अपने समय के और भविष्य के क्रांतिदर्शी संघर्षजीवी श्रमिक बिरादरी के लिए पथ-प्रदर्शक का काम करेंगी।

इन कविताओं को मैंने ज्यादातर 'अनुष्टुप' द्वारा प्रकाशित गाज़ी एम. अंसार के बंगला अनुवादों के आधार पर हिन्दी रूप दिया है। मूल हिंदी पांडुलिपि की अनुपलब्धता के चलते यह मजबूरी आ बनी कि इन्हें पुनः अनूदित रूप में ही यथाशीघ्र पाठकों तक पहुँचा दिया जाये।

खंड सम्पादन — डॉ. विजय बहादुर सिंह

मेरे लिए यह जानकारी चमत्कृत करने वाली थी कि शंकर गुहा नियोगी असाधारण श्रमिक जन-नायक ही नहीं, एक भावुक कवि और स्वप्नदर्शी रचनाकार भी थे। कुलीन बंगाली नियोगी ने अभिजात को जिस तरह उतारकर फेंक दिया था और अनभिजात बिरादरी के सदस्य बन गये थे, इसी से उनकी संवेगप्रवणता और हद दर्जे की संवेदनशीलता का पता चलता है। इसी बिरादरी के अगुवा साथी के रूप में उन्होंने यह समझ लिया था कि धीरे-धीरे ही सही, मेहनतकश वर्ग आज नहीं तो कल, स्वयं एक ऐसे आत्म-समर्थ समाज के रूप में उठ खड़ा होगा, जिसके मानदंड किसी भी कथित भद्र या उच्च समाज के जीवनादर्शों से अधिक श्रेष्ठ और मानवीय होंगे।

नियोगी एक पूरे समाज के मुक्ति-संग्राम के यशस्वी वीर योद्धा थे। उनकी अनगढ़ किंतु ठेठ कविताओं में उनके इस योद्धा की तस्वीर उभरती है और उनकी बंगला में अनूदित कविताओं के समीक्षक मुस्ताफिजुर रहमान का यह कथन बार-बार याद आता है कि उनकी कविताएँ, कविताएँ नहीं हैं, उनके संघर्ष का हथियार हैं। बहस कई बार उठायी और चलायी गयी है कि कविता सचमुच क्या कोई परिवर्तन कर पाती है ? क्या उससे समाज बदलता और मोड़ लेता है ? इस समय सिर्फ यह कहना ही यथेष्ट होगा कि सभ्यता के प्रत्येक नये मोड़ पर परिवर्तन के तमाम महत्वपूर्ण औजारों के साथ कविता भी एक महत्वपूर्ण औजार रही है। मानवता की उथल-पुथल और करवट के संवेदन-ग्राफ तैयार करने में उसने जो भूमिका निभायी है, उसके सृजनात्मक अभिलेख आज हमारी थाती बने हुए हैं। ऐतिहासिक युग परिवर्तन के प्रत्येक मोड़ पर वह हर सजग मस्तिष्क और संवेदनशील मन की भाषा रही है। छत्तीसगढ़ की मुक्तिकामी जनता के महानायक की ये कविताएँ भी युग परिवर्तनकारी उथल-पुथल और श्रमिक बिरादरी की नयी करवट का दृश्य-लेख लिये खड़ी हैं। भावी जन संघर्षों की कूट-जटिलता, उनके बीच दबते-घुटते कोमल इंसानी सपनों की व्याकुल छटपटाहटों के बीच ठने द्वंद्व का महासमर कैसा होगा, इसका भविष्य-लेख इनमें है। दल्ली राजहरा की लौह खदानों में गिरते पसीने और भिलाई की धमन भट्ठियों में लपट व लावा बनकर दौड़ते खून का जैसा रक्तिम पूर्वाभास यहाँ है, उससे नियोगी जैसे कवियों का उत्तराधिकार ग्रहण करने वाली कवि-पीढ़ी को अपना रास्ता चुनने और उस पर बेधड़क चल पड़ने में मदद मिलेगी। जो लोग सधी-बंधी शब्द कारीगरी के उस्ताद हैं और जिन्हें भावों की प्रखरता और विचारों के तेज से कहीं अधिक भाषा और शिल्प के टिकाऊ काव्य-व्याकरण की अधिक चिंता है, वे शायद ही इनका आस्वाद ले सकें। नियोगी की कविता जन-साधारण के अंतर्मन की शुद्ध, सरल आवाज भी तो हमारी भाषा को मिली।

इन कविताओं में पुलिस और शराब ठेकेदारों, मिल-मालिकों, महाजनों, सूदखोरों, जमींदारों और पूँजीपतियों के अत्याचार चित्रित हैं तो किसानों का हाड़-तोड़ परिश्रम, उनकी सामाजिक-आर्थिक बदहाली भी जगह-जगह अंकित है। इनमें जेल के कठोर लौह सींखचे हैं, काल-कोठरियाँ हैं, फाँसी के फंदे हैं। इन्हीं के साथ है वह आपात्काल जिसे कवि नियोगी ने पूँजीपतियों के सौभाग्य की माला कहकर एक नया अर्थ ही दे दिया है। किंतु इतना ही नहीं है।

इस देश में लहर गिनने वाले अधिकारियों की कमी नहीं है। पर्यावरण-सुरक्षा की आड़ में भी लहरों की गिनती चल रही है। बड़े-बड़े उद्योगों, जैसे भिलाई इस्पात संयंत्र, ने अपने-अपने पर्यावरण विभाग बनाये। जिन अधिकारियों की किसी काम में दिलचस्पी नहीं होती उनका पर्यावरण विभाग में पुनर्वास किया जाता है।

2. कहीं तो पेड़-पौधों के रोपण के नाम पर ठेका दे दिया जाता है, झाड़ों की गिनती बढ़ा-चढ़ाकर बतायी जाती है, रुचि के अभाव में पेड़-पौधे दूसरे साल ही समाप्त हो जाते हैं, इस प्रकार के कार्यक्रमों का यूनियन विरोध करती आयी है।

   सिम्पलेक्स इंजीनियरिंग, बीके इंजीनियरिंग आदि भिलाई के उद्योगपति पर्यावरण-सुरक्षा की आड़ लेकर वृक्षारोपण हेतु बाड़ लगा देते हैं और कुछ दिन पश्चात् इन सरकारी जमीनों पर अपना स्टाक यार्ड या डम्प यार्ड बना लेते हैं। समय के साथ-साथ एक दिन वहाँ का पर्यावरण सम्बंधी प्लेकार्ड (तख्ती) टूट जाता है और सरकारी जमीन उनकी अपनी जमीन कहलाने लगती है। यूनियन इस भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज उठाती है।

3. तीन-चार वर्ष पहले भिलाई इस्पात संयंत्र का मैनेजमेंट दल्ली स्थित मयूरपानी पहाड़ी में परम्परागत पद्धति की मानवीकृत खदानों (मैन्युअल माईन्स) को बंद कर मशीनीकृत माईन्स शुरू करने की फिराक में था और इसके लिए वह पर्यावरण-सुरक्षा का तर्क भी देने लगा। यूनियन ने सवाल किया, " जहाँ टॉप सॉयल नहीं है, और हजारों वर्षों में भी टॉप सॉयल नहीं बन पायेगी, वहाँ पर यह वृक्षारोपण किस प्रकार से कामयाब हो सकता है ?" यूनियन के इस तर्क के सामने मैनेजमेंट को झुकना पड़ा। दानीटोला क्वार्ट्ज़ाइट खदान क्षेत्र में भी मैनेजमेंट द्वारा इसी प्रकार का प्रयास किया गया था, जिसका यूनियन द्वारा विरोध किया गया था। राजनांदगाँव जिले की चाँदीडोंगरी माईन्स में भी वन विभाग ऐसी ही साजिश कर रहा है जिसका कि यूनियन विरोध करती आ रही है।

4. **आजकल कहीं-कहीं तो पर्यावरण को हौवा बनाकर व पर्यावरण की सुरक्षा की आड़ लेकर उद्योग-विरोधी विचारधारा को बल दिया जा रहा है।** यूनियन इस तरह की अमूर्त विचारधारा के खिलाफ आवाज उठा रही है।

   हकीकत तो यह है कि हमें अपनी प्रकृति की रक्षा करनी होगी, अपने भूगोल की रक्षा करनी होगी। जंगल, पेड़, पौधे, पीने का साफ पानी, शुद्ध हवा, पशु-पक्षी और इंसान, ये सब मिलकर हमारी दुनिया हैं। हमें अपने संवेदनशील विचारों के आधार पर, लचीले कार्यक्रम के आधार पर, प्रकृति के संतुलन और विज्ञान के संतुलन को बनाकर रखना होगा और यह जन चेतना के विकास के आधार पर किया जा सकेगा।

[मूल लेख के अंत में दी गयी कविता खंड चार में ' शुरूआत की सुबह ' शीर्षक से पृ. 264 पर प्रस्तुत है। — स.]

❑

(छमुमो की लोक साहित्य परिषद् के सौजन्य से।)

की निस्तारी करते रहे हैं। स्थानीय गोंड जाति के आदिवासी इन प्राकृतिक नालों से ही पानी की अपनी जरूरतों की पूर्ति करते थे। ये प्राकृतिक नाले किस कदर जन-जीवन के आधार थे, यह इस तथ्य से जाहिर होता है कि कितने ही गाँवों के नाम इन नालों के नाम पर से पड़े थे, जैसे – झरन टोला, अरमुरकसा (एर-मुर-कसा) यानी पानी-किनारे-छोटी झील।

दल्ली राजहरा के हजारों मजदूर एवं आस-पास के हजारों आदिवासी आज भी इन नालों के पानी का उपयोग अपने दैनिक जीवन में करते हैं। मगर जब दल्ली क्रशिंग प्लांट बना तो 'ओर-वाशरी' के कारण नाले का पानी प्रदूषित होने लगा। पानी के इस प्रदूषण को रोकने के लिए यूनियन की ओर से माँग रखी गयी। तनिक सुनवाई हुई, तनिक सुधार हुआ। अब इस नाले में रक्तिम लाल पानी की जगह संतरा रंग का पानी प्रवाहित होता है।

यूनियन की माँग के आधार पर दल्ली राजहरा के मजदूर-क्षेत्र में पेयजल के लिए 89 ट्यूबवेल डेढ़ वर्ष के अंतराल में लगाये गये। इसके साथ-साथ नजदीकी ग्रामीण इलाकों में भी ऐसे ट्यूबवेल लगने से साफ पेयजल की व्यवस्था कुछ हद तक हो पायी है।

वर्तमान समय में 'केडिया डिस्टिलरीज़ लिमिटेड' शराब कारखाने द्वारा शिवनाथ नदी के पानी को प्रदूषित करने के खिलाफ व्यापक जन आंदोलन चलाने का निर्णय लिया गया है जिसमें बड़ी संख्या में मजदूर, किसान, बुद्धिजीवी, पर्यावरण-प्रेमी शामिल हैं। इन सबकी सहायता से भविष्य का कार्यक्रम बनाया जा रहा है।

मजदूरों के वेतन में बढ़ोतरी बनाम ध्वनि प्रदूषण

पंद्रह वर्ष पूर्व जिन दिनों दल्ली राजहरा की दैनिक मजदूरी तीन रुपये से अधिक नहीं होती थी, ध्वनि प्रदूषण सामाजिक जीवन को त्रस्त नहीं करता था। यूनियन के संघर्ष से मजदूरों का वेतन बढ़ता गया। आज यहाँ के मजदूर की न्यूनतम दैनिक मजदूरी 70 रुपये से अधिक है। इसी के साथ-साथ माइक्रोफोन की दुकानें, कुकुरमुत्तों की तरह पनपीं। हर गली-मुहल्ले में फिल्मी गानों के कैसेट लाउड स्पीकरों पर फुल वाल्यूम पर बजने लगे। छठी हो या विवाह या फिर सत्यनारायण जी की कथा, किसी भी सामाजिक अनुष्ठान के लिए माइक्रोफोन का उपयोग एक परम्परा बन गयी। दुकानदारों ने मजदूरों को लुभाने के लिए लाउड स्पीकरों का बहुतायत से इस्तेमाल शुरू किया। ध्वनि प्रदूषण अपनी चरम सीमा पर था। यूनियन ने अपनी मुहल्ला-कमेटियों का निर्माण कर, अपने शहीद अस्पताल के स्वास्थ्यकर्मियों, मजदूरों, साथियों की सहायता से, ध्वनि प्रदूषण के हानिकारक प्रभाव के बारे में शिक्षित करने का कार्यक्रम हाथ में लिया है और लाउड स्पीकरों के उपयोग को कम करने का प्रयास शुरू किया है। दुकानदारों को भी यह समझाइश देने के प्रयास किये जा रहे हैं।

हम उनसे सुनेंगे, हम उनसे सीखेंगे

सदियों से कवि व लेखक, प्रकृति के वर्णन में रचनाएँ रचते आये हैं। हमारे देश व अन्य देशों की कथाओं में ऐसे वर्णनों के अनेक उदाहरण हमारे सामने हैं। ऐसी कृतियों की जानकारी रखना पर्यावरण की सुरक्षा के लिए भावनात्मक बुनियाद को तैयार करना है।

आज देश-विदेश में वैज्ञानिक कई प्रकार के आँकड़ों का सहारा लेते हुए पर्यावरण की सुरक्षा पर गहरी चिंता व्यक्त कर रहे हैं। अपनी ट्रेड यूनियन की मीटिंगों में इन वैज्ञानिक तथ्यों

इन चारागाहों का सही उपयोग सिद्ध हो सकता है। पर इसकी जिम्मेवारी लेगा कौन ? सिर्फ एक जनांदोलन के सहारे ऐसी कल्पना को साकार नहीं किया जा सकता और जब तक एक संवेदनशील पर्यावरणमुखी विचारधारा, व्यवस्था में शीर्ष स्थानों पर बैठी राजनैतिक व प्रशासनिक हस्तियों को प्रेरित नहीं कर सकेगी, तब तक यह सम्भव नहीं होगा। यूनियन की ओर से इस विचारधारा पर व्यापक चर्चा के प्रयास किये जा रहे हैं।

पर्यावरण के नाम पर हो-हल्ला तो बहुत हो रहा है, मगर स्थायी रूप से कुछ कर गुजरने की तमन्ना या नीयत दिखायी नहीं देती। पर्यावरण की सुरक्षा के लिए स्थायी व निरंतर चलने वाले कार्यक्रम की आवश्यकता है। स्थानीय लोगों को इस कार्य में जुटाकर ही उनमें पर्यावरण सुरक्षा की दिलचस्पी पैदा की जा सकती है। आदिवासी क्षेत्रों की जनता की क्रय क्षमता में वृद्धि के इस अवसर से इन पिछड़े क्षेत्रों की तरक्की की भी गुंजाइश बनती है। इस प्रकार के एक स्थायी विभाग का जाल पूरे देश में फैलाने की आवश्यकता है। जहाँ पर भी एक पुलिस थाना हो वहाँ एक पर्यावरण थाना होना चाहिए। आज देश में 15 करोड़ से अधिक बेरोजगार हैं, पर्यावरण विभाग के जरिये कम-से-कम 50 लाख लोगों को सेवा करने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए। संवेदनशील पर्यावरण-प्रेमियों की इस विभाग में नियुक्ति होनी चाहिए।

अपने जंगल को पहचानो, अपने परिवार को पहचानो

अपने एक निकट रिश्तेदार, जिन्हें हमने कभी देखा न हो, उनकी मृत्यु की खबर भी हमें उतना व्याकुल नहीं करती जितना कि हम अपने मोहल्ले के जाने-पहचाने व्यक्ति की दुर्घटना की खबर से विचलित हो जाते हैं। अपने जंगल से परिचय व उसके प्रति लगाव के बीच भी कुछ ऐसा ही सम्बंध है। ' मैं जंगल के बारे में नहीं जानता, अपने टंगिए की धार परखने के लिए यूँ ही एक हाथ चलाता हूँ, तीन-वर्षीय शिशु सागौन का पेड़ कत्ल हो जाता है। अपने जंगल से मेरी अपरिचितता के कारण ही ऐसा हुआ। ' इस समझ के आधार पर आज से करीब सात वर्ष पहले यूनियन ने ' अपने जंगल को पहचानो ' नाम से एक छोटा-सा कार्यक्रम शुरू किया और आज भी इसकी गतिविधियाँ जारी हैं। इसके तहत –

क) अपने जंगल के उपयोगी वृक्षों को चुनकर रोपण किया गया। इन वृक्षों में बाँस, सल्फी, महुआ, आम, जामुन, फरहर, शीशम, बेर, सागौन, नीम, करी आदि शामिल थे।

ख) कुछ ऐसे उपयोगी वृक्ष जो प्लांटेशन के तहत उगाये जाते हैं, जैसे काजू, चंदन व यूकिलिप्टस (नीलगिरी) की विभिन्न किस्में आदि का इस छोटे-से जंगल में रोपण किया गया।

ग) बाँस की कटंगी, स्थानीय एवं विभिन्न प्रकार की अन्य किस्में भी लगायी गयीं।

घ) ' फिर से जंगल को वापस करो ' कार्यक्रम के तहत नींबू, रुख-अरहर (एक प्रकार का अरहर जिसका झाड़ तीन-चार साल तक टिकता है), करंज, करौंदा आदि को लगाया गया।

इसी प्रकार खम्हार, कदम्ब, बादाम, रेन ट्री, नारियल आदि का भी यहाँ रोपण किया गया। इन सात वर्षों में यह एक छोटे-से जंगल का रूप ले चुका है और यूनियन के सदस्य इसे ' अपना जंगल ' कहकर गौरव अनुभव करते हैं।

की दीवार खड़ी की। पाईन-रोपण के खिलाफ व्यापक चर्चा हो चुकी है। सागौन का 'मोनोकल्चर' रोपण भी उतना ही गलत है। जहाँ उसकी चौड़ी पत्तियाँ गिरती हैं वहाँ घास का भी उगना बंद हो जाता है। यूनियन समय-समय पर अपने सुझाव को वन विभाग अधिकारियों को देती रही है।

2. 'मोनोकल्चर' रोपण पर तो बहुत जोर दिया जा रहा है। इसके लिए विश्व बैंक से सहायता भी मिल रही है। पर इसी रोपणी के नाम पर परम्परागत विभिन्न पेड़ों वाले जंगलों की कटाई बेतहाशा जारी है। काट कर वन डिपो में एकत्रित किये गये तनों को उत्पादन के रूप में दिखाया जाता है। हर वर्ष पिछले वर्ष से अधिक 'उत्पादन' का लक्ष्य तय किया जाता है। इससे अधिकारियों की कार्यकुशलता या तरक्की निश्चित होती है। जब तक 'उत्पादन' की यह धारणा बनी रहेगी, तब तक जंगल गायब होते रहेंगे।

3. महुआ, चार, तेंदू आदि पेड़ों की कटाई पर प्रतिबंध लगना चाहिए। ऐसा प्रतिबंध लगने से, स्वाभाविक प्रजनन (नेचुरल रिप्रोडक्शन) के तहत इन पेड़ों की संख्या बढ़ती जायेगी एवं जंगल इलाके के निवासियों की परम्परागत वन आधारित अर्थव्यवस्था का संतुलन बना रहेगा। इससे जंगल की सुरक्षा की गारंटी भी मिल सकेगी।

4. हर जंगल-क्षेत्र में अनेक औषधियों व रसायनों के स्रोत, जड़ी-बूटियों की पहचान व उनके उपयोग पर खोज होती रहनी चाहिए। उपयोगी जड़ी-बूटियों की खोज के कार्यक्रम से बूटियों (हर्ब्स) की रक्षा हो सकेगी।

5. आरक्षित वनों या अभ्यारण्य क्षेत्रों के बारे में अक्सर सुनने में आता है कि 'फलाँ जगह शेर या चीता नरभक्षी बन गया।' फिर आसाम या केरल से शेर मारने के लिए शिकारी बुलाये जाते हैं। एक नरभक्षी को मारने के नाम पर कई शेरों का शिकार होता है। शेरों का नरभक्षी बनना भी संतुलन टूटने के कारण ही होता है। जंगली सुअर, हिरन, खरगोश आदि जंगली जानवरों की कमी होने पर बाघ, तेंदुए नरभक्षी बनते हैं। अतः संतुलन को बनाकर रखने के लिए प्रयास आवश्यक हैं। यूनियन की ओर से इस दिशा में प्रयास करने का कार्यक्रम है।

6. लाख के वन कुछ विशेष स्थानों पर ही होते हैं। परंतु बड़ी चिंता का विषय है कि बड़े-बड़े बाँध बना कर (जैसे बस्तर में बोधघाट बाँध) इन दुर्लभ वनों के विनाश का रास्ता बनाया जा रहा है। इसीलिए साल वनों को नष्ट करने के किसी भी कार्यक्रम का विरोध किया जाना चाहिए। हमारी यूनियन बोधघाट बाँध के निर्माण का विरोध इसलिए करती है क्योंकि इससे साल जंगलों का विनाश होगा।

हमारी यूनियन ने राजनांदगाँव जिले में प्रस्तावित मोंगरा बाँध के निर्माण का भी विरोध किया क्योंकि इसमें काफी मात्रा में जंगलों के कटने की आशंका थी। इस आंदोलन में यूनियन के एक मजदूर कवि का गीत 'मोंगरा के बाँध बनन देबो नहीं भैया', क्षेत्र के आदिवासियों में विशेष रूप से लोकप्रिय हुआ था।

रहें, जो पक्षी गा-गा कर हमारे पुरखों की भावना को प्रकृति-मुखी बनाते रहे हैं।

और तब फिर हमारे देश के इंसानों को प्यार करना देशप्रेम कहलायेगा, हमारे देश की प्रकृति से प्यार करना देशप्रेम कहलायेगा। **विज्ञान, प्रकृति की हत्या नहीं करेगा। वही विज्ञान हमारा विज्ञान कहलायेगा। ऐसे ही होगा पर्यावरण पर राष्ट्रीय चेतना का विकास।**

व्यक्ति-हित, सामूहिक हित, देशहित

यह सर्वविदित है कि जंगल-क्षेत्र से सैकड़ों किलोमीटर दूर के निवासी, व्यापारी बन कर जंगल क्षेत्र के आस-पास आये और जंगल को लूटकर मालामाल हो गये। वे शहरी गणमान्य नागरिक कहलाते हैं। अधिकारियों के साथ बैठकर इनका खाना-पीना, मेल-मुलाकात होता है। इनके निकटतम पारिवारिक रिश्ते के लोग महत्वपूर्ण राजनैतिक व्यक्ति भी होते हैं। उनके पास कई ट्रकें होती हैं या आरा मिल या लकड़ी टाल होता है। ये व्यक्ति जंगल विभाग के ठेकेदार भी हो सकते हैं। जंगल से वे अपना हित सिद्ध करते हैं। इनकी हर पहल व्यक्ति-हित पर आधारित होती है।

भारत के जंगल के इलाके में रहने वाले लोग साधारण आदिवासी होते हैं। एक भी आदिवासी से आज तक जंगल से व्यक्ति-हित का साक्ष्य नहीं पाया गया। रोजमर्रा की जरूरतों की पूर्ति करने में भी इन्हें मुर्गी या पैसा जंगल अधिकारियों को देना पड़ता है।

सामूहिक हित और देशहित में निकट सम्बंध होता है। देश में जन शब्द निहित है। जनहित या सामूहिक हित और देशहित एक दूसरे के परिपूरक हैं।

जंगल कानून बनाते समय आदिवासी इलाके के सामूहिक हित के मुद्दों पर विचार नहीं किया जाता। सन् 1817 में पहली बार अंग्रेजों ने जंगल कानून बनाया। इसके बाद से ही अनर्थ शुरू हुआ। जंगल क्षेत्र के निवासियों के अधिकार छीन लिये गये। 'यह हमारा जंगल है' कहने वाले आदिवासी जंगल के विनाश पर सबसे ज्यादा परेशान होते थे — जिनके पूर्वज जंगल की रक्षा करते आ रहे हैं — जंगल कानून ने हमेशा उन आदिवासियों पर ही प्रहार किया। इसलिए आज जंगल का कोई माँ-बाप नहीं है। नौकरशाही का ढाँचा जब जंगल कानून को यंत्रवत लागू करता है, तब वन अधिकारी जंगल राज कायम कर बैठता है।

जंगल कानून में सुधार होना अनिवार्य है। स्पष्ट रूप से जंगल चोरों को चिह्नित करना आवश्यक है। जंगली इलाके के करोड़पतियों की एक लिस्ट बनानी चाहिए। उन पर अंकुश लगाने के लिए कानून को मुस्तैद बनाना चाहिए और कानून लागू करने के लिए हर एक जंगल-क्षेत्र के गाँव के निवासियों का पूर्ण सहयोग माँगना चाहिए।

तेंदूपत्ता, तेंदू, बेल, चार, सल्फी, महुआ, बाँस, दोना बनाने की पत्तियाँ, जंगली बेर (जिसमें रेशम के कीड़ों का पालन होता है), पलाश (जिसमें लाख के कीड़ों का पालन किया जाता है) और विभिन्न प्रकार की औषधियों के फूल या पत्तियों आदि पर जंगल निवासियों का अधिकार एवं कानूनी संरक्षण कायम होना चाहिए।

जंगल के निकटस्थ किसानों को उनकी जरूरत के मुताबिक जलावन की व्यवस्था जंगल से कानूनी रूप से होनी चाहिए। आदिवासियों को मकान बनाने के लिए आवश्यक लकड़ियों की व्यवस्था उनके आस-पास के जंगल से हो, यह अधिकार कानूनन रूप से मिलना चाहिए। भले ही उसके लिए निर्धारित शुल्क उन्हें देना पड़े।

गुजरना पड़ता था। बीच-बीच में आदिवासियों के छोटे-छोटे गाँव। अरमुरकसा, बुरकालकसा, अड़जाल आदि नामों से यह पता चलता है कि इलाके के निवासी गोंड जाति के होते थे और उनकी बोली गोंडी थी। पूरा इलाका हरियाली की छटा से भरपूर था। कोयल, पेड़की, मयूर और अन्य पक्षियों की मधुर आवाज एवं किरियाकसा, झरन व बोईरडीह नाले के बहते पानी के कल-कल स्वर के मिलने से एक संगीतमय वातावरण हमेशा बना रहता था। गाँवों में आदिवासी बालक-बालिकाओं, नवयुवकों एवं नवयुवतियों के सामूहिक नृत्य और मंदिर की ढोल से क्षेत्र की सांस्कृतिक चहल-पहल होती थी।

फिर एक दिन जियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया (भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग) के लोग आये, फिर आयी रशियन तकनीशियनों के साथ मिलकर भारतीय इंजीनियरों की टोली।[1] एक दिन जोरदार ब्लास्टिंग का धमाका हुआ। आदिवासी गाँवों के लोग, जंगल के सभी जीव और हरियाली की छतरी फैलाये जंगल के सारे पेड़ काँप उठे। फिर बार-बार ब्लास्टिंग के धमाके होते गये। बुलडोजर, डम्पर आदि की घर्र-घर्र की आवाज शुरू हुई। मयूर और कोयल पता नहीं कहाँ उड़ गये। रिलों का नाच समाप्त हुआ, माँदर (मृदंग का एक प्रकार) चुप हो गया। एक के बाद एक छोटे-बड़े पेड़ लाखों की संख्या में धूल में मिल गये। पूरे इलाके में चारों तरफ आरा मिल वालों ने डेरा जमाया। झाड़ों की चीर-फाड़ होती चली गयी।

किरियाकसा तथा झरन नाले का पानी लौह अयस्क फाईन्स के साथ मिलकर रक्त रंग से रंगीन हो गया। जहाँ देखो, वहाँ लाल पानी।

फिर एक दिन आया। जब जंगल की बात तो दूर, पेड़-पौधों का नामो-निशान मिट गया। क्षेत्र के आरा मिल वाले और राजनांदगाँव, दुर्ग एवं रायपुर के व्यापारियों ने कवेलू के घरों के स्थान पर बड़े-बड़े महलों का तांता लगा दिया। लौह अयस्क का उत्पादन शुरू हुआ। राजहरा के लौह अयस्क ने भिलाई की धमन भट्टियों में पिघल कर, इस्पात कारखाने की चिमनियों ने फेरस आक्साइड और कार्बन मोनोआक्साइड का धुआँ उगलते हुए 'विकास का झंडा' बुलंद किया। विनाश की ध्वंस लीला की बुनियाद पर विकास की नयी मंजिल खड़ी हुई।

फिर बना सीमेंट कारखाना। आस-पास के खेतों में सीमेंट कण गिरने लगे। मिल के बाद मिल, किसानों के खेतों की हरियाली को निगलती गयीं। लाखों किसान सिर पीटते रहे। फिर आयी डिस्टिलरी। मोलासेस की सड़न ने इलाके की हवा में दुर्गन्ध फैला दी। खारून और शिवनाथ नदियों का पानी भी फर्टीलाइजर, डिस्टिलरी, मेज फैक्ट्री से निकले हुए तरल पदार्थों से विषाक्त हुआ। खुजली का प्रकोप गाँव-गाँव में फैल गया। गाय-गोरू आदि जानवरों की मृत्यु दर में अस्वाभाविक वृद्धि हुई। शहरों की जनसंख्या में वृद्धि हुई। दुर्गन्ध के वातावरण में चारों तरफ भारी-भारी मशीनों की आवाज। मशीनों के कल-पुर्जों से रिसते हुए तेल और तेजाब-मिश्रित पानी को व्यवहार में लाकर लाखों झुग्गी-झोपड़ी वाले कीड़े-मकोड़ों की तरह जीवन जीने के लिए मजबूर हैं। पर्यावरण की सुरक्षा अब अहम मुद्दा है और यह नयी चुनौती हमें ललकार रही है।

असमान विकास और कृत्रिम कायदों से भावना नहीं बनती

'आषाढ़स्य प्रथम दिवसे' अब मयूर अपने पँख फैलाकर नाचते नहीं हैं। जंगल में पेड़ों

---

[1] यह प्रसंग भिलाई स्टील प्लांट की स्थापना से पूर्व का, पचास के दशक के उत्तरार्द्ध का है।

— किसान का पहला त्यौहार — और हमें बच्चों के साथ भूखा रहना होगा।"

यूनियन कार्यकर्ता ने पूछा, "अब वह जंगल अधिकारी कहाँ मिल सकेगा ?" आदिवासी किसान ने जवाब दिया, "वह तो शराब पीकर बस्ती में मस्ती कर रहा है।" यूनियन के कुछ साथियों ने आदिवासी किसान के साथ घटना-स्थल पर जाकर घटना की जानकारी हासिल की एवं राजहरा पुलिस स्टेशन जाकर सिटी सुपरिंटेंडेंट ऑफ पुलिस (सी. एस. पी.) से सम्पर्क किया। पुलिस पहले तो आनाकानी करती रही पर यूनियन के दबाव से घटना-स्थल पर गयी एवं जंगल अधिकारी को गाड़ी में बैठाकर ले आयी। फिर भी आदिवासी की समस्या के ऊपर चर्चा नहीं हो पायी। कारण यह था कि उस समय जंगल अधिकारी को पेश होने के लिए अपने बंगले जाना जरूरी था।

दूसरे दिन पुलिस स्टेशन पर विस्तारपूर्वक चर्चा हुई। आदिवासी ने आरोप लगाया कि जंगल अधिकारी ने उससे 5/- रुपये प्रति गट्ठा माँगा, न देने पर उसने पूरे गट्ठे छीन लिये।

जंगल अधिकारी	—	"इस आदमी ने जंगल का नुकसान किया था। हमें पर्यावरण की सुरक्षा को भी देखना है। हम तो इस पर केस भी चला सकते थे।"
ट्रेड यूनियन	—	"क्या 5/- रु. देने पर गट्ठा कानूनी बन जाता ?"
जंगल अधिकारी	—	"यह 5/- रु. का आरोप गलत है।"
सी.एस.पी. (पुलिस)	—	"किसी के ऊपर गलत आरोप नहीं लगाने चाहिए।"
ट्रेड यूनियन	—	"इलाके के सारे जंगल गायब हो गये हैं। आरा मिल वाले, ठेकेदार लोग, राजनैतिक पार्टी के नेतागण मिलकर ट्रकों में लादकर जंगल की सारी इमारती लकड़ियाँ चाट गये। उस समय पर्यावरण का नुकसान नहीं हुआ ? गैर-कानूनी काम नहीं हुआ ? आपके सारे कानून आदिवासियों एवं गरीबों के ऊपर ही बोझे की तरह लदे हुए हैं। कानून के रक्षक अगर अब जंगल इलाके के ग्रामीणों में असुरक्षा पैदा करेंगे तो हमें जन आंदोलन के जरिये जंगल एवं आदिवासियों की सुरक्षा करनी होगी।"

और उस दिन से हमारी ट्रेड यूनियन ने एक चुनौती स्वीकार की, जिस पर आगे चलकर ट्रेड यूनियन ने अपनी एक नयी शाखा का निर्माण किया। इस शाखा ने 'अपने जंगल को पहचानो' का नारा लेकर एक नये आंदोलन की शुरूआत की।

यूनियन ने अपने विचार को पक्का बनाया

बहस एवं एक जन आंदोलन को रचनात्मक दिशा देने के लिए हर सप्ताह यूनियन दफ्तर में बैठकों का सिलसिला शुरू हो गया। कई बैठकों के बाद निम्नलिखित मुद्दों को तय किया गया —

1. पर्यावरण विनाश के कारणों का विश्लेषण करना होगा।
2. समग्र रूप से पर्यावरण के ऊपर एक राष्ट्रीय चेतना का विकास करना होगा।

नीचे भाजपा के दमित होने का खतरा भी मौजूद है। छोटे राज्यों की माँग को समर्थन देकर उत्तराखंड, झारखंड आदि क्षेत्रों में समर्थन एवं सीटें बीनने वाली भाजपा को अब स्पष्टतः अपने काम से बताना होगा कि वे सम्बद्ध क्षेत्रों की जन आकाँक्षाओं के प्रति कितनी कटिबद्ध है।

बढ़ता उपभोक्तावाद भी देश की राजनैतिक अस्थिरता के लिए जिम्मेदार है। उपभोक्तावादियों ने देश को दो टुकड़ों में विभक्त कर दिया है। एक तरफ देश की वह 30 करोड़ जनता है, जिसकी क्रय क्षमता कुछ अधिक है, तो दूसरी तरफ वे 50 करोड़ लोग हैं, जो जीवनोपयोगी वस्तुएँ जुटाने में भी असमर्थ हैं। उपभोक्तावादियों की योजना की धारा 30 करोड़ जनता तक पहुँचते-पहुँचते ही लुप्त हो जाती है। विकास की गंगा को अन्य 50 करोड़ जनता तक पहुँचाने में इनकी कोई रुचि ही नहीं होती, जिससे लगातार असमान विकास का दौर चलता है। सकारात्मक रूप से असमान विकास के दौर के चलते ही आज क्षेत्रीय / प्रांतीय स्वायत्तता की माँग तेजी से बढ़ती जा रही है और संघवाद की बात हो रही है। नकारात्मक रूप से अराजकता और आतंकवाद भी पनपता जा रहा है और यह स्वाभाविक भी है। फिर भी हर हाल में बढ़ती हुई **उपभोक्तावादी प्रवृत्ति पर अंकुश लगाना आज की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है। उपभोक्तावाद के प्रभावी रहने तक स्थायित्व की बात करना वास्तविकता से भागने के अलावा कुछ भी नहीं है।** फिर आई. एम. एफ. का कर्ज लिया जायेगा, बी. डी. ओ. (विकास खंड अधिकारी) से लेकर मंत्रियों तक कमीशन बाँटा जायेगा और हम स्थायी सरकार का ख्वाब लेकर हर दूसरे साल आम चुनाव करवाकर अरबों रुपयों की होली जलाते रहेंगे। इस प्रवृत्ति के विरुद्ध स्थायी सरकार के लिए देश की मूलभूत समस्याओं से स्थायी रूप से मुक्ति पाना नितांत जरूरी है; और वह सिर्फ एक देशप्रेमी और जनवादी राजनैतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक संरचना से ही सम्भव है।

दसवीं लोकसभा सिर्फ भारत के वर्तमान राजनैतिक-आर्थिक संकट को घटाने या बढ़ाने के लिए जिम्मेदार नहीं रहेगी, बल्कि तीसरी दुनिया का स्वाभाविक अगुवा होने के कारण सम्पूर्ण तीसरी दुनिया के राजनैतिक-आर्थिक संकट को घटाने या बढ़ाने की भी जिम्मेदारी इसी पर रहेगी। देश के इस संकट काल में देशप्रेमी बुद्धिजीवियों का यह कर्त्तव्य है कि वे संकट को और भी घनीभूत करने के लिए जिम्मेदार लालची, नवधनाढ्य वर्ग के ऊपर अंकुश लगाने के लिए जन भावना को उद्दीप्त करें, ताकि देश अराजकता की स्थिति से उबरकर एक वैचारिक मंथन के जरिये राष्ट्रवादी अर्थनीति का निर्माण कर सके एवं चौराहे पर खड़ी भारत की राजनीति को सही दिशा देकर एक सुख-शांति वाले मार्ग पर आगे चलने का निर्देश दें।

❏

(' नव भास्कर ', रायपुर, 22 व 25 जून 1991, से साभार।)

स्थायित्व का सवाल, जन समस्याओं का अम्बार

स्थायित्व के सवाल पर सभी दल एक मत हैं। बार-बार चुनाव कोई भी नहीं चाहता। दसवीं लोक सभा के जरिये यह कल्पना की जाती है कि –

1. देश के 15 करोड़ बेरोजगारों को रोजगार मिलेगा।
2. महँगाई पर रोक लगेगी।
3. पंजाब, कश्मीर, पूर्वांचल राज्यों में जन-जीवन सामान्य हो जायेगा।
4. पुलिस एवं फौज अपनी बैरकों में चली जायेंगी।
5. आदिवासी क्षेत्रों की मूलभूत समस्याओं से जूझ रहे वनवासियों को भी जीवनोपयोगी वस्तुएँ सुलभ हो सकेंगी।
6. क्षेत्रों में महिलाएँ बेखौफ चल सकेंगी।
7. हमारे देश के आयात-निर्यात में संतुलन कायम हो सकेगा।
8. विदेशी मुद्रा का भंडार भी आवश्यकता की पूर्ति लायक बना रहेगा। देशी एवं विदेशी कर्ज पर निर्भर नहीं होकर सरकार स्वावलम्बन की ओर बढ़ेगी तथा अपने मंगलसूत्रों को अमरीकी बाजार में गिरवी न रखेगी।

एक देशप्रेमी एवं जनवादी सरकार का यही कर्त्तव्य होता है।

नयी सरकार और आर्थिक चक्रव्यूह

नयी सरकार के सामने देश के विकास को गति देने का सवाल द्वितीय वरीयता का है। प्रथम वरीयता का प्रश्न यह है कि 80 हजार करोड़ रुपये के विदेशी कर्ज की ब्याज सहित किस्त की अदायगी कैसे हो ? इसीलिए बार-बार यह सवाल उठता है कि आई. एम. एफ. (अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष) से क्यों न फिर से कर्ज लेकर काम चलाया जाये, भले ही उसके लिए नव-उपनिवेशवादियों की अपमानजनक शर्तों को स्वीकार करना पड़े। हमारी नेहरू-रचित मिश्रित अर्थनीति की सबसे बड़ी कमजोरी यह रही कि हम सहायता के नाम पर कर्ज लेने के आदी बन चुके हैं। वर्तमान परिस्थिति में अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से कर्ज की कट्टर विरोधी कम्युनिस्ट पार्टियाँ भी धीरे-धीरे उसे मंजूर करने की मानसिकता बनाती जा रही हैं। भौतिक शास्त्र का यह वैज्ञानिक सिद्धांत है कि किसी वस्तु को एक विशिष्ट स्थिति से दूसरी स्थिति में स्थानांतरित करना तब तक सम्भव नहीं होता जब तक कोई जबर्दस्त शक्ति उसे प्रभावित न करे। वर्तमान व्यवस्था में देश में कर्ज लेने की प्रवृत्ति पर रोक लगाने के लिए भी इसी नियम के अनुसार देशद्रोही आधुनिकीकरण के खिलाफ देशप्रेमी आधुनिकीकरण की नीति को स्थापित करना होगा। उदाहरण के लिए सिर्फ इस्पात उद्योग में पिछले 5 सालों में 15 हजार करोड़ रुपये आधुनिकीकरण पर खर्च हुए। उसके बावजूद हम 80 लाख टन के स्थान पर 100 लाख टन का भी उत्पादन लक्ष्य हासिल न कर पाये। इसके विपरीत यह स्थिति पैदा हो गयी है कि आस्ट्रेलियाई आयातित कोयले के बिना हमारी धमन भट्ठियाँ बंद होने की स्थिति में आ गयी हैं। अर्थात् विदेशों पर निर्भरता और बढ़ गयी है। यह एक देशद्रोही आधुनिकीकरण था जिसे भाजपा के श्री जय दुबाशी

कदम उठाने से पहले अब वाम मोर्चे को अछूत नहीं माने, बावजूद इसके कि कांग्रेसी घोषणापत्र में इस बार ' समाजवाद ' शब्द ही गायब है।

भाजपा का दम्भ

अयोध्या की कार सेवा का संचार माध्यमों द्वारा एक तरफा अतिरंजित समाचार, जिस पर प्रहार भी मीडिया के ही एक हिस्से ने किया। मुख्य मंत्री मुलायम सिंह ने भी इस धार्मिक उन्माद के विरुद्ध जनमत तैयार करने की अपेक्षा प्रशासनिक तंत्र के सहारे ही इसे कुचलने की कोशिश की, जिस कारण भाजपा नेताओं के प्रति उत्तर प्रदेश की जनता की उत्सुकता जगी। फिर भाजपा के पूर्व अध्यक्ष लालकृष्ण आडवाणी उत्तर प्रदेश में भाजपा की कल्पनातीत कामयाबी को अपने नेतृत्व का ही करिश्मा मानते हैं। आठवीं लोकसभा में 2 सीटों से बढ़कर दसवीं लोकसभा में 100 से अधिक सीटें पाने में तात्कालिक रूप से यह सिद्ध भी हो जाता है। फिर भी इसके लिए देश को कितना भुगतना पड़ा ? कानून व्यवस्था की स्थिति में अभूतपूर्व गिरावट आयी एवं जो धार्मिक उन्माद (ऋतम्भरा के भाषणों के कैसेट से) फैला, इसकी निंदा करने के लिए आज भी वे तैयार नहीं हैं एवं 2 से 87 से 100 के हिसाब से अगली छलाँग के द्वारा केंद्र में सत्ता हथियाना भाजपा का एक मात्र लक्ष्य बना हुआ है। यह सपना बजाज, गोयनका, बिड़ला घरानों की मजदूर-विरोधी नीतियों के साथ तालमेल भी खाता है। इस हालत में भाजपाई महत्वाकाँक्षा एवं अहम् उसके स्थायित्व के लिए कांग्रेस की मदद करने से रोकेगा।

जनता दल, राष्ट्रीय मोर्चा एवं वाम मोर्चा का तालमेल

सबसे बड़ा घटक जनता दल आज भी सिर्फ नेताओं की पार्टी है। नेताओं के विरोधाभासी बयान समय-समय पर उजागर होते रहते हैं। इसलिए वर्तमान राजनैतिक संकट को एक अनुशासित दल के रूप में झेल पाना जनता दल के लिए सम्भव नहीं है। ऊपर से प्रो. मधु दंडवते जैसे सुलझे हुए राजनीतिज्ञों के संसद में न पहुँच पाने से भी जनता दल को एक जबर्दस्त धक्का लगा है। नम्बूदिरीपाद, हरकिशन सिंह सुरजीत एवं ज्योति बाबू के बीच का अंतर्विरोध भी अब छुपा नहीं है। पंजाब में चुनाव के मसले पर आज भी भाकपा एवं माकपा के विचार-भेद स्पष्ट हो चुके हैं, जबकि वर्तमान परिस्थिति में माकपा बंगाल में सीमित एक क्षेत्रीय दल ही माना जायेगा। विशेषतः सोवियत रूस का अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में वर्चस्व कम हो जाने के बाद, तृतीय विश्व की कोई भी कम्युनिस्ट पार्टी अब राष्ट्रीय स्तर पर उठने वाले मसलों पर अपनी स्वयं की राय बनाने लगी है। इस हालत में कम्युनिस्ट पार्टियाँ कब तक एक सूत्र में बंधी रहेंगी, यह भी विचारणीय है। इतिहास साक्षी है कि भारत में कम्युनिस्टों की एकता सिर्फ अंतर्राष्ट्रीय दबाव से ही सम्भव है। जनता दल की वर्तमान औकात से निराशा की लहर भी तेज हुई है। श्री रामकृष्ण हेगड़े ने राजनीति से सन्यास लेने की अपनी मंशा जाहिर कर दी है। शरद यादव भी पराजय का मुँह देख चुके हैं। समाजवादी खेमे की एकजुटता के बावजूद जनता दल में सरसरी निगाह से देखने पर ही पता लग जाता है कि इस पर पूर्व कांग्रेसियों वी. पी. सिंह, अजीत सिंह आदि का वर्चस्व ही प्रमुखता रखता है। जनता दल की सतही एकता की तह में बिखराव के अँकुर छिपे हुए हैं। भाजपा की अभूतपूर्व सफलता ने जनता दल में आतंक पैदा कर दिया है और इस आतंक के बने रहने तक अपने विरोधाभासी व्यक्तित्वों के बावजूद राष्ट्रीय

कोई भी राजनैतिक पार्टी जनता के पास जाकर समर्थन जुटाने की हिम्मत नहीं करती। नवधनाढ्य वर्ग गुपचुप नये गठबंधन व ध्रुवीकरण में जुटा रहता है। ऐसे में संसदीय व्यवस्था आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, सभी मुद्दों को प्रदूषित कर देती है। हमारी संसदीय प्रणाली का रथ कर्ण के रथ की तरह कीचड़ में धँसा हुआ है। कोई सारथी इसे हाँक नहीं पा रहा है।

आज दुनिया के हर भाग में जनवादी आंदोलन की लहर प्रवाहित हो रही है। हमारे करीबी देशों में भी यह दिखायी देने लगा है। नेपाल ने सदियों की राजशाही के बाद जनतांत्रिक पद्धति में पदार्पण किया है। बर्मा में जनवाद की लड़ाई भीतर ही भीतर सुलग रही है। पाकिस्तान में सर्वशक्तिमान सेना भी संसदीय चुनाव कराकर जनवादी पद्धति पर औपचारिक मुहर लगाने पर मजबूर है। बंगलादेश में तो सैनिक शासन के खिलाफ अद्भुत आंदोलन में समूचे आवाम ने सड़क पर उतर कर तानाशाही शासन की बुनियाद को झकझोर दिया था। राष्ट्रपति इरशाद ने इस्तीफा देकर और उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति को कार्यवाहक राष्ट्रपति बनाकर बंगलादेश में लोकतांत्रिक चुनावों का रास्ता प्रशस्त किया है। विश्व जनवाद एक ऐतिहासिक दौर में पहुँचकर नयी ऊँचाइयों को छू रहा है। ऐसे में अपने राजनैतिक रथ को प्रतिक्रियावादी मारकोस-रूपी राष्ट्रपति शासन की दिशा में मोड़ना बेशक हमें मंजूर नहीं है। सच्चे जनवाद का फल पाने के लिए संसदीय प्रणाली के झाड़ को जन-आकाँक्षाओं के अमृत से सींचना होगा।

❑

(' इतवारी अमृत संदेश ', रायपुर, 20 जनवरी 1991, से साभार।)

[नियोगी की हत्या के बाद मोर्चा के कार्यकर्त्ताओं को यूनियन के दफ्तर में उक्त लेख की मूल पांडुलिपि प्राप्त हुई, जिसका एक अंश ' इतवारी अमृत संदेश ' के लेख में प्रकाशित नहीं हुआ है। इस अंश में नियोगी ने नवधनाढ्यों को राष्ट्रवादी नीति अपनाने के लिए मजबूर करने हेतु ' देश के बुद्धिजीवियों एवं राष्ट्रभक्तों को चर्चा का वैचारिक युद्ध ' छेड़ने का आह्वान किया है। इसे ' एक नये राष्ट्रीय व जनवादी आंदोलन ' की संज्ञा देते हुए उन्होंने निम्नलिखित कार्यक्रम प्रस्तुत किया था –

" 1. बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ नवधनाढ्यों के सहयोग पर पूर्ण पाबंदी लगायी जाये।

2. स्वदेशी औद्योगीकरण का आंदोलन छेड़ा जाये।

3. विज्ञापन आदि के जरिये मध्यम वर्ग को प्रलोभित एवं प्रभावित करने वाले, विलासिता बढ़ाने वाले उपभोगवाद पर रोक लगायी जाये तथा इंसान की जरूरतों को नये सिरे से परिभाषित किया जाये, जो राष्ट्रीय विकास में सहायक हो।

4. देश के विभिन्न प्रांतों व क्षेत्रों के असमान विकास को दूर करने के लिए बहुस्तरीय संघीय प्रणाली और छोटे राज्यों व छोटे जिलों के निर्माण के जरिये नया प्रशासनिक ढाँचा कायम हो।

5. मानवीय मूल्यों एवं नागरिक अधिकारों को महत्व देकर इंसानियत की स्वस्थ संस्कृति को विकसित किया जाये।

6. जनवादी संस्थाओं से घटिया लोगों को निकाल बाहर कर नवधनाढ्य वर्ग से मुक्त संघर्षशील व्यक्तियों को प्रतिष्ठित किया जाये, जो हर पार्टी में मौजूद हैं। कार्यकर्त्ताओं की नियुक्ति जागरूकता को मापदंड मानकर की जाये, न कि राजीव गांधी स्टाइल में पुलिसिया रिपोर्ट के आधार पर। "

संसदीय प्रणाली को लक्ष्य बनाकर, आजादी के संघर्षों की एक के बाद एक लहर उठती गयी। संसदीय प्रणाली राजसत्ता प्राप्ति के बाद ही लागू हो सकेगी, इसलिए आजादी हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, यह स्वीकार किया गया। राजसत्ता प्राप्ति के संघर्ष में राष्ट्रीय कांग्रेस की तीन धाराएँ आजादी प्राप्ति तक बरकरार रहीं जिसमें से गर्म दल के सुभाषचंद्र बोस के नेतृत्व में 'आजाद हिन्द फौज' ने संघर्ष द्वारा आजादी प्राप्ति का अंतिम महत्वपूर्ण कार्यक्रम रखा, तो महात्मा गांधी के नेतृत्व में 'करो या मरो', 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' के नारे के साथ अगस्त क्रांति का बिगुल फूँका गया। महत्व इस बात का नहीं है कि हर आंदोलन को विजयश्री प्राप्त हुई या नहीं ? आंदोलन में भाग लेने वाली करोड़ों जनता एक सुख-शांति वाली व्यवस्था की कल्पना अपने दिलों में संजोये हुए थी। राजनैतिक नेतागण उन दिनों बहस से नहीं डरते थे और अपने राजनैतिक विचारों को जनता के अंतिम व्यक्ति तक पहुँचाने के लिए अपने कर्त्तव्य का पालन करते थे। सन् 1952 में संसद में कम्युनिस्ट एवं समाजवादी दलों की महत्वपूर्ण भूमिका और सन् 1957 के चुनाव में केरल की प्रांतीय सरकार पर कम्युनिस्टों का कब्जा हो जाना तत्कालीन राजनैतिक जन-चेतना की गवाही देता है। राम मनोहर लोहिया के नेतृत्व में बिहार, उ. प्र. की प्रांतीय राजनीति में उसूलों और मुद्दों पर बहस-युद्ध छेड़ा गया था। उन दिनों लहर की राजनीति नहीं थी।

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् सोवियत रूस महाशक्ति के रूप में उभरा था। फासीवाद की करारी मात से राष्ट्रवाद एवं राष्ट्रीयतावादी मुक्ति आंदोलन को बल मिला था। दक्षिण-पूर्व एशिया, चीन, अफ्रीका के देशों में जन आंदोलन नयी ऊँचाइयों पर पहुँचे। सोवियत रूस की विजय को दुनिया के जनवादियों ने अपनी विजय माना और इस विजय की चकाचौंध में लोगों ने सामंतवादी संस्कार एवं अर्थनीति को नजरअंदाज करने की गम्भीर भूल की। सन् 1917 में सोवियत रूस में समाजवादी-साम्यवादी विचारधारा ने एक कठोर और कठिन संघर्ष में पूँजीवाद को वैचारिक एवं राजनैतिक शिकस्त दी थी। परंतु तीसरी दुनिया के देशों में सामंतवाद उन देशों के पूँजीवादी विकास की राह में रोड़ा बन गया। उन देशों में अविकसित पूँजीवाद, सामंतवादी संस्कार एवं अर्थनीति के खिलाफ संघर्ष में विजय का झंडा फहरा नहीं पाया था। सामंतवाद की बुनियाद पर समाजवाद लागू होना सम्भव नहीं, इस सच्चाई को नजरअंदाज कर, पथ-भ्रमित व पथ-भ्रष्ट होकर साम्यवादियों ने अविकसित पूँजीवाद को ही अपना निशाना बना लिया। इस गलत दिशा-निर्देशन का फायदा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने उठाकर तीसरी दुनिया के सामंतवादियों के साथ एक अपवित्र गठबंधन तैयार किया। देशी पूँजी ने इस गठबंधन के समक्ष समर्पण कर दिया। बिन पेंदी के लोटे की दशा में हमारी देशी पूँजी, तोते की तरह हाँ-में-हाँ मिलाने में ही कुशलता हासिल कर पायी। भारत की संसदीय प्रणाली में इसका असर चमचावाद के रूप में देखने को मिला। इस परिस्थिति में, तथ्य और तत्व से परे, तर्कहीन उत्तेजना व क्षणिक भावना पर आधारित एक नयी राजनैतिक परम्परा का उदय हुआ, जो धड़ल्ले से जनता की एकता को तोड़ने के कार्य में जुटकर, साम्प्रदायिक दंगों को हवा देती रही।

नेहरू के नेतृत्व में मिश्रित अर्थनीति की जो डफली बजायी गयी, उसने तो हमारी संसदीय प्रणाली के प्राण-पखेरू 'जनवाद' को ही नोचकर घायल कर दिया। समाजवाद के नाम पर देशी पूँजीवाद को कलंकित किया गया, पर 'जानसन बेबी पाउडर' आदि के रूप में बहुराष्ट्रीय

फिर भी मजदूर डटे हुए हैं

इतने आतंक व यातना के बावजूद इस औद्योगिक शहर के मजदूर डटे हुए हैं और अपनी मर्यादा और जनतांत्रिक अधिकारों को बहाल करने की लड़ाई में आगे बढ़ रहे हैं। देशभर के प्रगतिशील संगठनों द्वारा समर्थन में की गयी कार्रवाइयों ने भिलाई के मजदूरों को मौत और विनाश की ताकतों के खिलाफ लड़ाई जारी रखने के लिए प्रोत्साहित किया है।

फिर भी, यह बुनियादी सवाल अब भी बरकरार है कि पिछड़े छत्तीसगढ़ के विकास में भिलाई स्टील प्लांट की भूमिका और जगह क्या है ? **क्या यह आंतरिक उपनिवेशवाद का प्रतीक नहीं है, जिसमें किसी इलाके के लोगों की दुर्दशा पर ध्यान दिये बगैर वहाँ के प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया जाता है ?**

भिलाई स्टील प्लांट ने लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने के अपने घोषित वायदों को आज तक पूरा नहीं किया है। उल्टे ' मशीनीकरण ' और ' आटोमेशन ' (स्वचालित प्रणाली पर आधारित उत्पादन प्रक्रिया) के नाम पर रोजगार की सम्भावनाएँ सुनियोजित ढंग से खत्म की जा रही हैं। भिलाई स्टील प्लांट में फिलहाल 72,000 मजदूर काम करते हैं, जिनमें ठेकेदारी मजदूर भी शामिल हैं, जबकि सन् 1986 में यहाँ 96,000 मजदूर काम करते थे। इस प्रकार देश के 24,000 लोगों को सार्वजनिक क्षेत्र के इस सबसे बड़े प्रतिष्ठान ने मात्र पाँच साल के अंदर बेरोजगार कर दिया है। सामाजिक-आर्थिक न्याय और जनोन्मुखी विकास के हिमायती लोगों के लिए यह सचमुच काफी चिंता का विषय है।

❑

(मूल अंग्रेजी से ध्रुव नारायण द्वारा अनूदित ; छमुमो के सौजन्य से।)

जरूरत है संसदीय प्रणाली में जन आकाँक्षाओं के अमृत से सींचकर सच्चा जनवाद लाने की

हिन्दी दैनिक ' अमृत संदेश ' (रायपुर) के प्रधान सम्पादक श्री गोविंदलाल वोरा ने दि. 22.11.90 को नियोगी समेत कुछ अन्य विचारकों को पत्र लिखकर उस समय ' राष्ट्रपति प्रणाली बनाम संसदीय प्रणाली ' विषय पर चल रही बहस के संदर्भ में लेख लिखने के लिए आमंत्रित किया। नीचे प्रस्तुत लेख नियोगी ने इसी आमंत्रण के प्रत्युत्तर में लिखा था। — *स.*

एक लोकप्रिय सरकार के लगातार अभाव में आज हमारी संसदीय प्रणाली पर ही सवाल उठ रहे हैं। कहीं-कहीं राष्ट्रपति प्रणाली का जिक्र भी आ रहा है। संसदीय प्रणाली में, विभिन्न राजनैतिक पार्टियाँ, संसद में बहस करती हैं और सत्ताधारी राजनैतिक पार्टी की वोट शक्ति के

की मजदूरी काफी कम है — महज 500 या 600 रुपये महीना। भिलाई में साधारण से मकान का किराया भी 300 रुपये महीना से कम नहीं है। लेकिन इन उद्योगों में लगे मजदूरों को सिर्फ 20 या 25 रुपये महीना मकान किराया भत्ता मिलता है। ऐसी हालत में यह कैसे सम्भव है कि ये मजदूर एक उम्दा जिंदगी जी सकें ?

औद्योगिक दुर्घटनाओं की दर भी काफी ज्यादा है !

मजदूरों को स्थायी रूप से 'अस्थायी' बनाये रखने की नीति के तहत उन्हें नियमित रूप से एक कारखाने से दूसरे में भेजते रहने के कारण हर उद्योग मौत का फंदा बन गया है। अंग-भंग होने, आँखों के चले जाने की घटनाएँ आये दिन होती रहती हैं। सबसे प्रमुख बात यह है कि ठेका मजदूरी के नाम पर उन्हें कोई हर्जाना भी नहीं दिया जाता।

ट्रेड यूनियन बनाने का कोई अधिकार नहीं

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के भिलाई में उदय के पहले तक इन औद्योगिक इकाइयों में कोई भी ट्रेड यूनियन नहीं थी। दल्ली राजहरा के 15,000 मजदूरों के बीच ट्रेड यूनियन गतिविधियों के साथ सामाजिक सुधार आंदोलन का तालमेल स्थापित करने के अपने अनुभवों के चलते इस साल की शुरूआत में भिलाई के मजदूरों के बीच छमुमो के प्रति काफी आकर्षण पैदा हुआ। लेकिन यहाँ के उद्योगपति सिर्फ अपनी 'पालतू ट्रेड यूनियनों' से ही परिचित थे। यह काफी अजीबोगरीब बात है कि छमुमो द्वारा भिलाई को अपना कार्यक्षेत्र बनाने से पहले इस महा-औद्योगिक नगरी के उद्योगपति खुद ही अपनी मन-मर्जी से ट्रेड यूनियन बनाते और तोड़ते थे।

सिम्प्लेक्स उद्योग समूह गर्व से कहता था कि उसकी इकाइयों में ट्रेड यूनियन की कोई जरूरत नहीं है। हाल ही में उन्होंने दावा किया कि 'दिल्ली के पास सफदर हाशमी के टुकड़े-टुकड़े कर दिये गये, फिर भिलाई में तो किसी महात्मा गांधी को भी खत्म करने में देर नहीं लगेगी।' अस्सी के दशक की शुरूआत में सीटू ने सिम्प्लेक्स में ट्रेड यूनियन बनाने की कोशिश की थी, लेकिन जब उसके अगुआ कार्यकर्त्ता श्री पी. के. मोइत्रा को कारखाने के भीतर बम विस्फोट के एक मामले में झूठ-मूठ फँसा दिया गया तो उसे पीछे हटना पड़ा। सच्चाई यह थी कि प्रबंधन ने साजिश बतौर ऐसे हालात इसलिए पैदा किये ताकि ट्रेड यूनियन आंदोलन को कुचला जा सके।

प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ

वर्षों तक चुपचाप बैठे रहने के बाद भिलाई के मजदूरों ने छमुमो के नेतृत्व में 'प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ' का निर्माण किया। अब ये मजदूर अन्याय व दमन को बर्दाश्त करने को कतई तैयार नहीं थे। एक ही साथ भिलाई की 50 औद्योगिक इकाइयों के हजारों मजदूरों ने ट्रेड यूनियन का गठन किया। समय-समय पर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने के लिए उनके द्वारा आयोजित जुलूसों व हड़तालों ने इन उद्योगपतियों के भीतर कम्पकपी पैदा कर दी। इस इलाके के पुलिस महानिरीक्षक को अपनी ओर मिलाकर इन उद्योगपतियों ने ट्रेड यूनियन नेताओं को 'अपराधी' घोषित करने और गुंडों को महिमामंडित करने का अभियान शुरू किया। इसकी आड़ में आज वे मजदूरों की संयुक्त ताकत के खिलाफ नये तरीकों से दमन चला रहे हैं। इसके

हम दिलोदिमाग से अपने मकसदों की प्राप्ति के प्रति समर्पित हैं। हम कुर्बानियों से घबराते नहीं। शोषकों पर अंतिम विजय तक हम समुद्र की लहरों की तरह एक के बाद एक संघर्षों का तूफान उठाते रहेंगे।

□

(मूल अंग्रेजी का अंश ध्रुव नारायण द्वारा अनूदित ; छमुमो के सौजन्य से।)

भिलाई : चंद तथ्य

भिलाई आंदोलन शुरू होने के बाद नियोगी ने 13 दिसम्बर 1990 को दिल्ली में एक प्रेस सम्मेलन में भिलाई की परिस्थिति के बारे में एक विस्तृत नोट प्रसारित किया। इस नोट को हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं। — स.

भिलाई स्टील प्लांट, जिसे सन् 1958 में सोवियत संघ की साझेदारी में शुरू किया गया था, ने इस आशा के साथ स्टील का उत्पादन शुरू किया कि वह छत्तीसगढ़ के लोगों के विकास में मील का पत्थर साबित होगा। धीरे-धीरे सहायक उद्योग भी खुल गये। शुरूआत में 10 लाख टन के उत्पादन से प्रारम्भ करके भिलाई स्टील प्लांट प्रति वर्ष 42 लाख टन के ऊपर स्टील का उत्पादन करने लगा है। भिलाई में 140 पंजीकृत औद्योगिक इकाइयाँ हैं, जिनमें से सिर्फ 105 ही काम कर रही हैं और बाकी 35 कागजी बनी हुई हैं। ये भ्रष्टाचार के ही एक अन्य रूप का प्रतीक हैं।

भिलाई छत्तीसगढ़ी लोगों की नजर में **विनाश** का प्रतीक है, न कि **विकास** का। वे इसे घृणा और हिकारत की नजरों से देखते हैं। इसके दक्षिण में भिलाई से मात्र 100 कि. मी. की दूरी पर बस्तर जिले का अबूझमाड़ स्थित है, जहाँ के मारिया और मुरिया जनजातियों के हजारों लोग खूनी दस्त से मर रहे हैं। उत्तर में भिलाई से 85 कि. मी. की दूरी पर स्थित है मंडला जिला, जहाँ के बैगा आदिवासियों के साथ उनकी आदिम सभ्यता के चलते अजायबघर की वस्तु की तरह का व्यवहार किया जाता है। भिलाई के पूर्व में 100 कि. मी. की दूरी पर रायपुर जिले के पिथौरा, बसना एवं सरायपाली स्थित हैं, जहाँ समाजकर्मी समूहों की पहलकदमी पर हाल ही में भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के हस्तक्षेप से 5,000 बंधुआ मजदूरों को मुक्त कराया गया। भिलाई से पश्चिम में महज 25 कि. मी. की दूरी पर राजनांदगाँव जिला स्थित है, जो पानी के अभाव और अकाल के लिए मशहूर है, जबकि भिलाई स्टील प्लांट और उसके उपनगर में पानी की प्रचुरता है। इस प्रकार भिलाई स्टील प्लांट अपने गौरवमय विकास के 32 सालों के बाद भी इस इलाके के सामाजिक-आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करने में पूरी तरह नाकाम रहा है, जबकि

आंदोलन के आगे बढ़ने के लिए इसका हल जरूरी है। फिर भी, ट्रेड यूनियनों के तात्कालिक कार्यक्रमों और लक्ष्यों की चर्चा के दौरान इस प्रश्न पर पूरी तरह विचार करना मुश्किल है। आज जरूरी यह है कि औद्योगिक वातावरण, इस्पात उद्योग और ट्रेड यूनियनों पर असर डालने वाले महिलाओं से सम्बंधित मुद्दों को उठाया जाये।

इस सम्बंध में हम देखते हैं कि चंद क्षेत्रों को छोड़कर, मजदूरों में एवं ट्रेड यूनियन सदस्यता व ट्रेड यूनियन नेतृत्व में महिलाओं का अनुपात अत्यंत ही कम है। यह एक ऐसी स्थिति है जिसमें सचेत रूप से सुधार किया जाना चाहिए। यह तभी किया जा सकता है, जब एक तरफ महिलाओं को अधिकाधिक संख्या में ट्रेड यूनियन के आम संघर्षों में शामिल किया जाये और दूसरी तरफ औद्योगिक महिला मजदूरों की खास महिला-सम्बंधी समस्याओं को उठाया जाये।

महिलाओं पर विशेष रूप से असर डालनेवाला एक खास महत्वपूर्ण मुद्दा है — **मजदूरों में महिलाओं के अनुपात पर मशीनीकरण का विशिष्ट नकारात्मक प्रभाव।** अगर हम सन् 1905 से चलकर आज तक औद्योगिक मजदूरों में महिलाओं के अनुपात पर ध्यान दें तो देखेंगे कि वह लगातार घटता गया है। जब मशीनीकरण होता है तो करीब हर स्थिति में सबसे पहले महिलाओं का रोजगार छूटता है।

महिलाओं के प्रजनन और बच्चों के पालन-पोषण से सम्बंधित विशेष कार्यों के बारे में न केवल महिलाओं को, बल्कि तमाम ट्रेड यूनियन आंदोलन को ध्यान देना चाहिए। बच्चों को माँ के दूध की जगह कृत्रिम दूध या अन्य दूध पिलाने की बढ़ती हुई आदत विशेष चिंता का कारण है। यह तो बढ़ते हुए क्रम में 'उच्च' प्रकृति की तकनालाज़ी के उपयोग का ही सीधा नतीजा है कि महिला घर से अधिकाधिक दूर हटती जा रही है। जहाँ महिलाएँ मशीनीकृत उद्योगों में काम कर भी रही हैं, वहाँ भी वे सर्वाधिक यंत्रवत कामों में लगायी जाती हैं। अतः मशीनीकरण के साथ-साथ जो काम का भार बढ़ता जाता है उससे सबसे अधिक पीड़ित होने वाली महिलाएँ ही हैं।

मौजूदा औद्योगिक स्थिति में महिलाओं की समस्याओं में से तो यहाँ बहुत कम का ही जिक्र किया गया है। जो भी हो, इस बात पर जोर देना जरूरी है कि ट्रेड यूनियनों को इन सवालों को महिलाओं को कोई रियायत देने के उद्देश्य से नहीं, ...

(इसके बाद का अंश पांडुलिपि से गायब था। परंतु हमें 'इस्पात ट्रेड यूनियन : नयी दिशा की तलाश' शीर्षक वाले भाषण का अंग्रेजी अनुवाद प्राप्त हुआ जिसे नियोगी ने सन् 1983 में जमशेदपुर में आयोजित एक अखिल भारतीय सम्मेलन में प्रस्तुत किया था। उसी अंग्रेजी भाषण से अनूदित करके हमने इस पांडुलिपि को पूरा किया है। — स.)

......बल्कि इसलिए उठाना चाहिए चूँकि महिलाओं से सम्बंधित मुद्दों से जूझना ट्रेड यूनियन आंदोलन के अपने स्वस्थ विकास के हित में है।

आज औद्योगिक माहौल में मौजूद वर्गीय उत्पीड़न किस प्रकार महिलाओं के हितों के खासतौर पर खिलाफ है, इसकी ओर विशेष ध्यान देकर ही उत्पादन प्रकिया में लगी औरत को एक औरत के रूप में और मजदूर वर्ग की एक सदस्या के रूप में उसकी अपनी भूमिका के प्रति जागरूक बनाया जा सकता है। इसी प्रक्रिया में उन्हें उन तौर-तरीकों के प्रति भी सचेत किया जा सकता है जिनके सहारे यही वर्गीय स्वार्थ उन ताकतों का समर्थन करते हैं जो पुरुषों व महिलाओं के बीच भेदभाव पैदा करती हैं। सम्पूर्ण मजदूर वर्ग और ट्रेड यूनियन आंदोलन को

के अंतर्गत चलाने का फैसला किया।

इस्पात क्यों महत्वपूर्ण है ?

1. आज भारत में सार्वजनिक क्षेत्र में लगी करीब 40,000 करोड़ रुपये की कुल पूँजी में से 10,000 करोड़ रुपये तो अकेले इस्पात उद्योग में लगे हैं।
2. इस्पात उत्पादन में लगी तकनालाजी और इस्पात की खपत की प्रकृति से हम देश में औद्योगिक विकास के स्तर को जान सकते हैं।
3. औद्योगिक मजदूर, मजदूर वर्ग का सबसे आगे बढ़ा हुआ हिस्सा है। केवल औद्योगिक मजदूर वर्ग के नेतृत्व में ही सामाजिक विकास में गुणात्मक परिवर्तन लाना सम्भव है। इस्पात मजदूर उच्च तकनीकी ज्ञान से लैस औद्योगिक मजदूर हैं।
4. संख्या की दृष्टि से भी देश में रेल, कोयला और टेक्सटाइल मजदूरों की तरह इस्पात मजदूरों की संख्या भी काफी अधिक है। देश के विभिन्न इस्पात कारखानों में कुल मिलाकर 3 लाख से अधिक मजदूर काम कर रहे हैं।
5. देश के तमाम इस्पात कारखाने और उनके कच्चे माल के स्रोत देश के सबसे पिछड़े हुए क्षेत्रों में स्थित हैं। ये कारखाने और खदानें ऊबड़-खाबड़ जंगलों और पहाड़ों वाले हरिजन-आदिवासी इलाकों से घिरे हुए हैं।

स्वास्थ्य और ट्रेड यूनियन

शायद ही कभी भारत में ट्रेड यूनियनों ने मजदूरों के स्वास्थ्य के सवाल को अपने समग्र कार्यक्रम के अंतर्गत एक स्वतंत्र मुद्दे के रूप में शामिल किया है। जब कभी ऐसा किया भी तो उन्होंने इस सवाल को पूँजीवाद के वैचारिक ढाँचे के अंतर्गत ही रखा है। इस प्रकार ट्रेड यूनियनों ने चिकित्सा की पर्याप्त सुविधा, कार्य-स्थल पर लगी चोटों या विकलांगता का मुआवजा और काम में विकलांग हुए लोगों को मानवीय दृष्टि से वैकल्पिक रोजगार देने जैसे मुद्दों तक ही अपने को सीमित रखा है। यह कहने की जरूरत नहीं है कि इस परम्परागत विचार-पद्धति के दायरे में भी काफी कुछ करना अभी बाकी है। फिर भी, **यह विचार-पद्धति पूँजीवाद के इस मूल वैचारिक आधार को मानकर चलती है कि श्रम शक्ति एक ऐसा ' माल ' (या ' जिंस ') है, जिसे कोई मालिक उतनी ही कीमत पर खरीदता है जिससे कि उत्पादन प्रक्रिया में उसे अधिकतम मुनाफा मिल सके।**

इसी सिलसिले में हम देखते हैं कि औद्योगिक और पेशे से सम्बधित स्वास्थ्य के मामले में भी मालिक-मैनेजमेंट के साथ बातचीत और समझौता वार्ता का आधार हमेशा यही रहा है कि मजदूरों के स्वास्थ्य पर ' स्वीकार्य ' स्तर तक खतरनाक असर डालने वाले काम के हालात में उनको काम करने दिया जा सकता है। सवाल है — स्वीकार्य किसको ? मजदूरों को या मैनेजमेंट को ?

आज इसकी तुरंत जरूरत है कि ट्रेड यूनियन एक वैकल्पिक वैचारिक आधार पर स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचाने वाले खतरनाक हालात के मानदंडों के सवाल को मौलिक रूप से उठाये

अर्थवादी लोग चाहे जितना भी आर्थिक माँगों के बारे में आवाज बुलंद करें, फिर भी आज ट्रेड यूनियनों के कार्यकर्त्ता इस बारे में वाकिफ हैं कि,

क) सन् 1947 या सन् 1960 के मूल्य सूचकांक के साथ आज के मूल्य सूचकांक की तुलना की जाये तो हम देखेंगे कि इन 43 सालों या 30 सालों के बीच मजदूरों का वेतन रुपयों में बढ़ा है, लेकिन असली वेतन घटा है। मतलब यह हुआ कि आर्थिक संघर्षों और समझौतों की लम्बी प्रक्रिया के बाद भी कुछ हासिल नहीं हुआ, बल्कि शोषण और भी बढ़ा है।

ख) आर्थिक माँगों के बारे में ट्रेड यूनियनों का दिमाग सरकार (राज्य) और मैनेजमेंट द्वारा निर्देशित होता है। जैसे कि हर बार वेतन संशोधन (वेज रिवीज़न) में देखा जाता है कि वहाँ पुनर्विचार के लिए विशेष समयावधि का प्रावधान दिया रहता है। या, राज्य द्वारा विज्ञप्ति (नोटिफिकेशन) जारी करने के अधिकार और विभिन्न कमीशनों की सिफारिशों को मजदूरों के सामने रखकर सरकार ट्रेड यूनियनों को लालायित करती रहती है।

ग) सरकार विभिन्न श्रम कानूनों को गोल-मोल बनाकर इस व्यवस्था के अंदर ही गुंजाइश की मरीचिका दिखाती है।

घ) उद्योगों और अंचलों के आधार पर अलग-अलग वेतनमान बनाकर सरकार एक 'परिवर्तनशील लक्ष्मण रेखा' खींच देती है। अंग्रेजों के जमाने में जिस तरह अंग्रेज लोग रियासतों के लिए अलग-अलग कानून बनाकर रियासतों की जनता के मुँह से 'अंग्रेजों का कानून लागू करो' वाली माँग उठवाने का जो साम्राज्यवादी तरीका अपनाये हुए थे, आज भी उसी तरीके से सरकार अर्थवाद को बढ़ावा दे रही है। एक उद्योग के मजदूर दूसरे उद्योग के मजदूरों के समान वेतन हासिल करने की कोशिश में सारी जिंदगी बिता देते हैं।

च) 'कुछ छोड़ो-कुछ लो' ('गिव एंड टेक') की नीति इस स्थिति में जड़ पकड़ लेती है। विजय का नहीं, बल्कि समझौते का पाठ पढ़ाया जाता है। जबकि हर समझौते को लागू करने की समस्या हमेशा बनी ही रहती है। **'इंकलाब जिंदाबाद' के नारे के साथ 'वेतन-समझौता जिंदाबाद' के नारे से आसमान गूँजता रहता है, इंकलाब कभी नहीं आता।**

आज केंद्रीय ट्रेड यूनियनें अर्थवाद के गड्ढे में फँस चुकी हैं। आर्थिक मंदी के युग में कर्ण का रथ जमीन में धँसता जा रहा है, कर्ण जितना ही रथ हाँकता है, रथ उतना ही धँसता जाता है। कर्ण अपने ही रथ में बंदी बना हुआ है।

इस हालत में नेता मजदूरों को सांत्वना देता है — 'हो रही है, बातचीत हो रही है', 'कुछ मिला है', 'कुछ दिला देंगे।' मजदूर अब आश्वासनों से खुश नहीं है। अब मजदूर बढ़ चला है, सेनापति पीछे छूट रहा है। पीछे फँसा हुआ सेनापति मजदूरों को उग्रवादी कहकर, वामपंथी भटकाव और पृथकतावाद की दुहाई देकर अपने को व्यवस्थारूपी एवं राज्यरूपी भगवान के सामने निर्दोष बता रहा है। मजदूर वर्ग केंद्रीय ट्रेड यूनियनों को हटाकर स्वतंत्र ट्रेड यूनियनों का निर्माण कर रहा है। लेकिन अधिकांश स्वतंत्र ट्रेड यूनियनें भी उसी राह की राही हैं।

हमें अर्थवाद का अंधकार नहीं, आर्थिक संघर्ष के साथ-साथ मुक्ति का आलोक भी चाहिए, एक इज्जतदार मजदूर वर्ग की प्रतिष्ठा चाहिए, नयी संस्कृति की शुद्ध हवा चाहिए, एक क्रांतिकारी ट्रेड यूनियन चाहिए।

सबसे अधिक वर्ग-चेतना से भरपूर होने के तरीके का जिक्र पहले ही किया गया है। यह चार-सूत्री तरीका है — **वर्ग संघर्ष, उत्पादन संघर्ष, वैज्ञानिक प्रयोग और इतिहास का अध्ययन**। वर्तमान व्यवस्था के अंतर्गत ट्रेड यूनियनों में बिना वर्ग संघर्ष के भी नेतागिरी चलती है। लेकिन अगर इस व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करना है तो अवश्य ही सामंतवादी-पूँजीवादी, और प्रतिक्रियावादी शक्तियों के खिलाफ संघर्ष में नेतृत्व को खुद भी बहादुरी के साथ भाग लेना होगा। अक्सर देखा जाता है कि जब जनता आंदोलन करती है तब नेतृत्व चुपचाप मुँह छिपाकर भाग जाता है। जो आदमी कर्फ्यु और 144 धारा के जमाने में सिर के बाल नोचता है, वही स्थिति शांत होने पर नेता बन जाता है। इससे मजदूर आंदोलन पूँजीपतियों की राह पर चलने लगता है।

वर्ग संघर्ष में निडरता से भाग लेना सही नेतृत्व की पहली कसौटी है। दूसरी कसौटी है उत्पादन संघर्ष। ऐसे कामचोर आदमी जिनको उत्पादन के काम में कोई दिलचस्पी नहीं, वह नेतृत्व के लायक नहीं हैं। दीवाली के पहले घर में मकड़ी के जालों की सफाई करने की तरह मजदूर वर्ग को अपने ट्रेड यूनियन रूपी घर से ऐसे उत्पादन-विमुख नेताओं का सफाया कर देना चाहिए।

नेतृत्व तभी सही नीति का निर्धारण और कार्य पद्धति का उपयोग कर सकेगा, जब वह **साधारण परिस्थिति को विशेष परिस्थिति के साथ जोड़ सके**। अगर हड़ताल करना है तो नेतृत्व को यह समझ होनी चाहिए कि मुख्य मुद्दा क्या होगा, हड़ताल का यह उचित समय है या नहीं। अगर नेतृत्व इस पर सही निर्णय नहीं ले सकता तो आंदोलन में मार खाने की पूरी गुंजाइश रह जायेगी। साधारण परिस्थिति की जानकारी, वैज्ञानिक प्रयोग और इतिहास की जानकारी के जरिये ही हो सकती है। सफल नेतृत्व की कसौटी है, साधारण परिस्थिति की पूर्ण जानकारी और विशेष परिस्थिति में उस जानकारी को लागू करने की क्षमता। नेतृत्व को व्यक्तिगत तौर पर महत्वाकाँक्षी नहीं होना चाहिए। ईमानदारी और कुर्बानी, नेतृत्व के साथ श्वास-निःश्वास की तरह जुड़े हुए गुण होने चाहिए। तभी वह नेतृत्व लोकप्रिय हो सकता है और उस नेतृत्व पर भरोसा करके लाखों लोग जान हथेली पर रखकर संघर्ष में कूद जायेंगे।

10. आज की ट्रेड यूनियनें अर्थवाद से बुरी तरह ग्रस्त हैं। आर्थिक माँग के लिए संघर्ष करना अर्थवाद नहीं है। परंतु जब संघर्ष केवल आर्थिक माँग के लिए होता है और आर्थिक माँग के अलावा बाकी तमाम राजनैतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक सवालों को ताक पर रख दिया जाता है, तब इस प्रकार की नीति को अर्थवाद कहा जाता है। यह एक खतरनाक नीति है। आज की ट्रेड यूनियनें ऐसे ही खतरनाक रास्ते पर चल रही हैं। इससे ट्रेड यूनियनों के जीवन की सजीवता समाप्त हो चुकी है और सूखी लकड़ी पर बढ़ई द्वारा रंदा चलाये जाने की तरह मजदूरों की जिंदगी के सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनैतिक पहलुओं में निराशाजनक कृत्रिमता लाकर उन पर पूँजीपतियों के राजनैतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विचारों को थोपा जा रहा है।

हमें ऐसी रंदा लगायी गयी लकड़ी की जरूरत नहीं है। हम एक सजीव सुंदर वृक्ष की तरह का जीवन अपने अंदर समा लेना चाहते हैं। पूँजीपति मजदूरों को आधे-अधूरे, विकृत एवं कमजोर बनाकर रखना चाहते हैं। पूँजीपति मजदूरों को एक सस्ती कीमत की निर्जीव वस्तु की तरह बनाकर रखना चाहते हैं। इससे उनके मालामाल होने की प्रक्रिया सुरक्षित रहने की गारंटी

यानी साधारण को विशेष के साथ जोड़कर नहीं देख पाते। पश्चिम बंगाल के कारखानों में यह कहावत प्रचलित है कि 'वोट के लिए तिरंगा झंडा, पेट के लिए लाल झंडा।' इसी सिलसिले में उनकी नयी उपलब्धि है 'चोट के लिए सगा भाई'।

भारत की ट्रेड यूनियनें राजनैतिक पार्टियों पर अपना प्रभाव तो डाल नहीं पायी हैं, बल्कि निराशाग्रस्त नेताओं ने ट्रेड यूनियनों पर हावी होकर सारे मजदूर आंदोलन को भँवरजाल में फँसा दिया है।

8. ट्रेड यूनियन मजदूर वर्ग का हथियार है। ठोस ढंग से इस हथियार का उपयोग करने की विधि है — जनवादी केंद्रीयता। संघर्ष का निर्णय, रणनीति और संगठन से सम्बंधित मामलों में फैसला जनवादी तरीके से करना चाहिए एवं इन फैसलों को केंद्रीयता के मातहत लागू करना चाहिए। कभी-कभी भारी संख्या में मौजूद या दूर-दूर तक छितराये हुए मजदूरों में सामान्य ढंग से इस विधि का उपयोग करने में दिक्कत आती है। इस स्थिति में विभिन्न इकाइयों में व्यापक चर्चा चलाकर और 'जनता से, जनता को' वाले सिद्धांत को लागू करके, जनता की विस्तृत भागीदारी और मुद्दों के प्रति उसकी समझ व चेतना को सही निर्णय-प्रक्रिया का आधार बनाया जा सकता है।

आज की तमाम केंद्रीय ट्रेड यूनियनें इस पद्धति का उपयोग नहीं करती हैं। वहाँ निर्णय ऊपर से थोप दिया जाता है। वास्तविक समस्या, मजदूर वर्ग की विचारधारा, अत्याचारी ताकतों द्वारा निर्दयतापूर्वक दमन आदि के विषय में नेतृत्व लापरवाह रहता है। ये यूनियन वाले श्रम कानून पर, श्रम कानून लागू करने वाली शोषक वर्गों की मशीनरी एवं कानूनी व्यवस्था के मसलों की जरूरतों पर अधिक ध्यान देते हैं। ये लोग इन मामलों में मजदूर वर्ग की अज्ञानता और निस्पृहता का लाभ उठाकर नौकरशाही यानी सिर्फ केंद्रीयता की पद्धति से तमाम मामलों का निराकरण या निपटारा करते हैं। इसी प्रकार आज की ट्रेड यूनियनें एक भयावह स्थिति पैदा कर चुकी हैं। इससे ट्रेड यूनियनों को बनाये रखने की पूँजीपतियों की जरूरतें भी पूरी नहीं हो रही हैं, मेहनतकशों के हथियार के रूप में ट्रेड यूनियन का इस्तेमाल करना तो दूर की बात है।

फलस्वरूप, मजदूरों पर ट्रेड यूनियन का कोई प्रभाव नहीं रहता है। मजदूर ट्रेड यूनियन के सदस्य नहीं बनते और न ही सदस्यता शुल्क देते हैं। काल्पनिक नामों से सदस्यता रजिस्टर भरे रहते हैं, एक से अधिक यूनियन एक मजदूर की सदस्यता का दावा करती हैं। मजदूर हँसता है कि उसने विभिन्न यूनियनों को बेवकूफ बना दिया और यूनियन वाले हँसते हैं कि मजदूर बेवकूफ बन गया और पूँजीपति इन दोनों की बेवकूफी पर हँसता है और खुद को अधिक सुरक्षित महसूस करता है। मजदूरों की मामूली-से-मामूली समस्या का निपटारा भी ठेके में होता है। इस नौकरशाही या अति-केंद्रीय तरीकों के चलते मालिक का उद्देश्य पूरा न होने पर भी वह खुश रहता है। मालिक या मैनेजमेंट मजदूरों में से 10-20 प्रतिशत 'लायक' मजदूरों को छाँट लेता है और उनको प्रमोशन, ओवर्र-टाईम, 'कामचोरी की छूट' या अन्य सुविधाएँ देकर अपना समर्थक गुट बना लेता है। इस गुट के लोग हर यूनियन में घुसपैठ करते रहते हैं। ऐसे उद्योग में मजदूरों का जीवन गुलाम से भी बदतर होता है, तानाशाही दमन का तरीका जारी रहता है। उधर मालिक के पैर चाटने वाले कुत्ते अपने गले में लगे बेल्ट को फूलमाला मानकर अपने को गौरवान्वित महसूस करते रहते हैं।

निम्नलिखित कारणों से देता है –

क) दमन और शोषण से त्रस्त मजदूरों द्वारा अचानक बगावत करने की आशंका को निर्मूल करने के लिए ;

ख) उद्योगों में मालिक वर्ग द्वारा तय अनुशासन के दमन-मूलक नियमों व हर प्रकार के कानूनी बंधनों को ट्रेड यूनियन नेताओं के माध्यम से मजदूरों से स्वेच्छापूर्वक मनवाने के लिए ;

ग) सिर्फ आर्थिक संघर्ष के लिए मजदूरों को प्रोत्साहित करके मजदूरों के सोच को उसके उद्योग तक ही सीमित रखने के लिए ; एवं

घ) सह-अस्तित्व की नीति को सभी स्तरों पर प्रचारित और प्रतिष्ठित करने के लिए।

आज भारत की केंद्रीय ट्रेड यूनियनें मालिक वर्ग के इन्हीं उद्देश्यों को पूरा करने में लगी हुई हैं।

5. विभिन्न राष्ट्रीयताओं वाले हमारे देश में नौकरी की भर्ती नीति भी ट्रेड यूनियनों के मजबूत नहीं होने का एक प्रमुख कारण है।

अंग्रेज साम्राज्यवादियों ने सन् 1917 की अक्तूबर क्रांति से उपयोगी शिक्षा हासिल की थी। उद्योग में उनकी भर्ती की नीति भी भारत में इस प्रकार की क्रांति की सम्भावनाओं पर रोक लगाने के लिए तय की गयी थी। कहीं सर्वहारा के नेतृत्व में भारत में जनवादी लोकतांत्रिक क्रांति सम्पन्न न हो जाये, इसके लिए उन्होंने काफी दूरदर्शिता दिखायी। किसी खास क्षेत्र में स्थित उद्योगों में उस क्षेत्र के लोगों को भर्ती न करके अन्य क्षेत्रों के लोगों को भर्ती किया गया। मध्य प्रदेश व झारखंड की कोयला खानों में 'सेंट्रल रिक्रूटमेंट आफिस' के माध्यम से गोरखपुरी मजदूरों को भर्ती किया गया। आसाम और बंगाल के चाय बागानों में छत्तीसगढ़ी और झारखंडी मजदूरों को भर्ती किया गया। झारखंड और बंगाल की कोयला खदानों में छत्तीसगढ़ी और गोरखपुरी मजदूरों को भर्ती किया गया।

क्षेत्रीय विकास में क्षेत्रीय जनता की भागीदारी ही राष्ट्रीय विकास की गारंटी है। क्षेत्रीय विकास में बाहर से आये हुए मजदूर दिलचस्पी नहीं लेते, क्योंकि उनकी राष्ट्रीयता, संस्कृति तथा आर्थिक पृष्ठभूमि अलग होती है। इस तरह चूँकि उद्योगों में अधिकांश मजदूर बाहरी क्षेत्रों से आये हुए हैं, इसलिए मजदूर वर्ग क्षेत्रीय विकास की मुख्य धारा से कट जाते हैं, नेतृत्व देना तो दूर की बात। चूँकि इन मजदूरों की आर्थिक-सामाजिक जड़ें कहीं और हैं, इसलिए वे स्थानीय विकास के मुद्दों से जुड़ नहीं पाते। नतीजा होता है एक बहुत ही असंतुलित और विकृत विकास।

भारत के विभिन्न उद्योग-कारखानों में गोरे अंग्रेजों के इस तरीके को काले अंग्रेजों ने भी वफादारी के साथ अपनाया है। भिलाई के 90 प्रतिशत मजदूर दूसरे क्षेत्रों से आये हुए हैं। बोकारो में दक्षिण बिहार से आये मजदूरों की संख्या 20 प्रतिशत से अधिक नहीं है। दुर्गापुर इस्पात कारखाने में स्थानीय लोगों की कमी ने ही वहाँ के ग्रामांचल में झारखंड की आवाज को जोरदार किया है। टाटा के कारखाने में भी आपको बहुत ही कम झारखंडी मिलेंगे।

एक तरफ तमाम सुविधाओं से भरपूर इस्पात नगरी, मानो एक गमले में सुंदर सा गुलाब का पौधा है, वहीं दूसरी तरफ घोर दरिद्रता के अंधकार में डूबे हुए गाँव। एक ओर अधिक वेतन पाने वाले संगठित मजदूर और दूसरी ओर गाँव में भुखमरी के शिकार खेतिहर मजदूर, गरीब

भारत के ट्रेड यूनियन आंदोलन की समस्याएँ

किसी भी देश के विकास के लिए उद्योग की स्थापना एवं उसका निरंतर विकास होना जरूरी है। पिछली शताब्दी के अंत तक भारत में औद्योगिक विकास उल्लेखनीय नहीं रहा। अंग्रेज लौह-इस्पात, भारी मशीन, कपड़ा, दवाई आदि इंग्लैंड से मँगाकर अपना धंधा चलाते थे। मुनाफा बटोरना अंग्रेजों का एक मात्र उद्देश्य था।

सन् 1947 के बाद अंग्रेज तो चले गये लेकिन उनके धंधे ज्यों-के-त्यों रह गये। उसके बाद विभिन्न बहुराष्ट्रीय कम्पनियों, विशेष रूप से अमेरिकी, जापानी, फ्रांसीसी एवं जर्मन कम्पनियों ने भारत के उद्योग-धंधों में हाथ डाला। हत्यारी यूनियन कार्बाइड उनमें से एक है।

उद्योग और भारत

वर्तमान समय में भारत के उद्योग-धंधे मूलतः तीन प्रकार के मालिक वर्ग के कब्जे में है –

1. सार्वजनिक क्षेत्र के मालिक – देश में वर्तमान में सार्वजनिक क्षेत्र के तहत चालीस हजार करोड़ से भी अधिक लागत के कल-कारखाने, उद्योग-धंधे चल रहे हैं। इस्पात, बिजली, कपड़ा, रेल, कोयला, तेल आदि उद्योगों में ज्यादातर सार्वजनिक क्षेत्र का कब्जा है।

2. बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ – विदेशी कम्पनियों, विशेष रूप से साम्राज्यवादी देशों के पूँजीपतियों ने सारी दुनिया के उद्योग-धंधों पर अपने कब्जे जमा रखे हैं। सिर्फ समाजवादी देशों में ही इनके शिकंजे कमजोर हैं। साम्राज्यवादी दुनिया का मालिक वर्ग हमारे देश में भी इंजीनियरिंग, दवाई, आटोमोबाइल, चाय, रबर, केमिकल्स आदि क्षेत्रों में उद्योग-धंधा चला रहा है।

3. इजारेदार पूँजीपति – तीसरे, महत्वपूर्ण पूँजीपति हमारे ही देश के इजारेदार पूँजीपति हैं, जैसे बिड़ला, टाटा, डालमिया, किर्लोस्कर, महेन्द्रा आदि। देश में टेक्सटाइल, केमिकल्स, इस्पात आदि अनेकानेक उद्योग-धंधों पर इनका कब्जा है।

इसके अलावा कुछ पूँजीपति अपने उद्योग-धंधे के लिए जी-तोड़ कोशिश तो कर रहे हैं, लेकिन इन्हें अधिक कामयाबी नहीं मिल पा रही है। ये असंगठित रहने के कारण सरकार व बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की शोषण की नीति का कुफल भोग रहे हैं और अपना गुस्सा अपने ही उद्योग में कार्यरत मजदूरों के ऊपर निकालते रहते हैं।

छत्तीसगढ़ में दिन-ब-दिन उद्योगों का विकास होता जा रहा है। औद्योगिक विकास की गुंजाइश भी प्रचुर है। जितना विकास अब तक हो चुका है, वह भी कम नहीं है।

यह सवाल बार-बार उठता रहता है कि छत्तीसगढ़ में औद्योगिक विकास के साथ तालमेल रखकर छत्तीसगढ़ की जनता का विकास क्यों नहीं हो रहा है ? इस सवाल का जवाब संगठित मजदूर वर्ग ही दे सकता है। संगठित मजदूर वर्ग अगर अपनी ट्रेड यूनियन को एक स्कूल और हथियार के रूप में इस्तेमाल करे और संघर्ष एवं रचना के सिद्धांत पर आधारित अपने कार्यक्रम

क्रांतिकारी ट्रेड यूनियन की जरूरत पर

नवम्बर 1982 में 'अखिल भारतीय इस्पात मजदूर समन्वय समिति' की बोकारो में आयोजित बैठक के लिए तैयार किये गये नियोगी के बयान का एक अंश यहाँ उद्धृत है। *— स.*

"आज सारे देश में आंदोलन की बड़ी-बड़ी लहरें उठ रही हैं और व्यवस्था की बुनियाद पर चरम आघात कर रही हैं। क्या ये लहरें व्यवस्था को ध्वस्त कर पायेंगी ? या यह व्यवस्था आंदोलन को कुचल डालेगी ? इसका निर्णय अभी होने को है। हमारा कहना है कि अगर लहरों की बागडोर सृष्टि के देवता उत्पादक वर्ग के हाथ में रहेगी, तो वर्तमान व्यवस्था ध्वस्त होगी और नयी व्यवस्था की सृष्टि होगी। और अगर यह लहरों की बागडोर अनुत्पादक पूँजीपति वर्ग या निम्न पूँजीपति वर्ग के हाथ में रहेगी तो व्यवस्था बरकरार रहेगी। जनवाद ध्वस्त होगा, भूख की काली छाया देश में फैलती रहेगी एवं उत्पादक वर्ग कमजोर होता जायेगा।

उत्पादक वर्ग की स्थिति मजबूत करने के लिए ही क्रांतिकारी ट्रेड यूनियन की जरूरत है। उसी जरूरत की पूर्ति के लिए जगह-जगह वैज्ञानिक प्रयोग हो रहे हैं। हम भी छत्तीसगढ़ में कुछ प्रयोग कर रहे हैं।"

❑

लाल-हरा झंडा इतिहास के कदमों पर

सन् 1983-84 में राजनांदगाँव की बी. एन. सी. मिल्स के मजदूरों ने छमुमो के लाल-हरे झंडे के तले 'राजनांदगाँव कपड़ा मिल मजदूर संघ' नाम की यूनियन का गठन किया। इसके नेतृत्व में मजदूरों ने मानवीय कार्य-परिस्थितियों और श्रम कानूनों के तहत उपलब्ध सुविधाओं के लिए जुझारू संघर्ष किया। दल्ली राजहरा के खदान मजदूरों ने इस संघर्ष को सक्रिय समर्थन दिया। खदान मजदूरों की एक सभा में अपनी गिरफ्तारी के पूर्व नियोगी द्वारा 28 अगस्त 1984 को दिया गया भाषण नीचे प्रस्तुत है। खदान मजदूरों के शिक्षण की दृष्टि से नियोगी ने जिस तरह राजनांदगाँव में मजदूर संघर्ष का इतिहास तराशा है वह उनकी जन शिक्षण के बारे में गहरी समझ की मिसाल है। *— स.*

बी. एन. सी. मिल्स (बंगाल-नागपुर कॉटन मिल्स, राजनांदगाँव) के दो माह के आंदोलन के अंदर पूँजीपति वर्ग और प्रशासन ने इस बात को महसूस किया है कि लाल-हरे झंडे की राजनीति

एक्ट ' के खिलाफ ऐतिहासिक लड़ाई लड़ी। अंग्रेज शासन का रौलेट एक्ट, आज के कांग्रेसी शासन में रासुका के काले कानून जैसा था। सन् 1908 में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ने वाले बाल गंगाधर तिलक की गिरफ्तारी पर बी. एन. सी. मिल के मजदूरों ने हड़ताल की थी। मजदूरों ने एक के बाद एक संघर्ष कर राजा के दांत खट्टे कर दिये और अंग्रेजों की नींद हराम कर दी। छत्तीसगढ़ के इस सबसे पुराने उद्योग के मजदूर अंग्रेज साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ाई में हमेशा आगे रहे।

बी. एन. सी. मिल का आंदोलन तेज तब हुआ जब उसका नेतृत्व ठाकुर प्यारेलाल सिंह ने सँभाला। छत्तीसगढ़ के मजदूर आंदोलन में उनका नाम सबसे ऊपर है। सबसे पहले सन् 1923 में ठा. प्यारेलाल सिंह के नेतृत्व में छह माह तक हड़ताल चलाने वाले मजदूरों पर गोली चली थी, जिसमें जरहू गोंड नाम का श्रमिक मारा गया। यह भारत के मजदूर आंदोलन का पहला शहीद माना जाता है। ठाकुर साहब के नाम से अंग्रेज काँपते थे। जबलपुर में लोगों का आज भी कहना है कि ठाकुर प्यारेलाल सिंह को कांग्रेसी सरकार ने जहर देकर मरवा डाला और उनको नर्मदा में डाल दिया।

ठाकुर साहब को अंग्रेजों ने जिला बदर कर दिया और उनके राजनांदगाँव की रियासत में प्रवेश पर पाबंदी लगा दी। तब प्यारेलाल सिंह ने चिट्ठी भेजकर नागपुर से कामरेड रूईकर को बुलवाया। रूईकर के आने के बाद आंदोलन इतना तेज हुआ कि पहली बार 23 दिन और दूसरी बार 65 दिन की हड़ताल हुई। कामरेड रूईकर पर कई बार जानलेवा हमले हुए। उनको बोरे में बंद कर बाघ नदी की पुलिया में डाल दिया गया। उनकी हड्डी टूट गयी। कुछ केवट लोगों ने उन्हें बमुश्किल बचाया। कामरेड रूईकर के दिल में एक नये समाज का सपना था। पर अफसोस, जो पौधा उन्होंने इतने श्रम से लगाया, उसे आजादी के बाद कोई रोशनी, हवा, पानी नहीं मिला। उनके चेले चुनावी दलदल में फँसकर लाइसेंस-कोटे की राजनीति करने लगे।

इंटक की दलाली

इस तरह वहाँ धीरे-धीरे सोशलिस्ट पार्टी की नींव कमजोर होने लगी। उसी समय प्रकाश राय पहली बार राजनांदगाँव आये। वह बीड़ी मजदूरों में काम करते रहे पर कभी भी बी. एन. सी. मिल के अंदर नहीं घुस सके। फिर प्रकाश राय के चेले वहाँ ठेकेदारों से मिल कर छानने-घोटने लगे। अब कांग्रेसी राज्य होने के कारण वहाँ पर इंटक ही मान्यता-प्राप्त यूनियन है। इंटक के वहाँ पर दो भाई हैं, दोनों वकील। बड़ा भाई खजान सिंह खनूजा मैनेजमेंट का वकील। छोटा भाई बलबीर खनूजा मजदूरों का वकील। यूनियन का कारोबार ऐसा है कि मजदूर अगर कोई समस्या लेकर जाते हैं, तो वकील साहब कहते हैं कि कोर्ट केस कर दो। कोर्ट में दोनों खनूजा वकील भाइयों की साँठ-गाँठ हो जाती है। दोनों भाई छानते-घोटते हैं। पिसते और मरते हैं मजदूर।

मजदूरों की हालत

बी. एन. सी. मिल में 350 महिलाएँ काम करती हैं। वहाँ सुपरवाइजर का इतना आतंक है कि ठिकाना नहीं। पेशाब जाती हुई महिला मजदूरों का भी सुपरवाइजर पीछा करता है। मजदूर वहाँ कुछ बोल नहीं सकते। जो अपनी बदतर हालत के खिलाफ आवाज उठाता है उसे चार्जशीट दे दी जाती है। इस तरह मैनेजमेंट करीब 200 ईमानदार मजदूर मुखियाओं की नौकरी खा गया। यहाँ आज भी मजदूरों का बेसिक वेतन सिर्फ 26 रुपये प्रतिमाह है यानी एक रुपये रोज से भी कम।

बहुत कुर्बानी देनी पड़ेगी, लाठी खानी पड़ेगी एवं लम्बी हड़ताल होगी। शुरू में दल्ली राजहरा के मजदूरों ने हड़ताल की, लाठी खायी, गोली खायी, जिससे ग्यारह मजदूर साथी शहीद हो गये। 144 धारा लगी, कर्फ्यु लगा, ये सब तकलीफ सहन करनी पड़ी, तब कहीं जाकर संगठन बना और इज्जत बनी। इस प्रकार हमारे साथ वहाँ पर कई प्रकार की विपत्ति झेलनी पड़ेगी – तो बताओ ? नहीं तो, लाल-हरा झंडा राजनांदगाँव में नहीं गड़ायेंगे। वे बोले कि आप जो भी रास्ता बतायेंगे, हम चलने को तैयार हैं।

यूनियन के रजिस्ट्रेशन के बाद मिल में खलबली मच गयी। अब पहले वाली स्थिति भी खत्म हो गयी। मजदूरों को बेरहमी से तंग करना शुरू हो गया। मिल के अंदर तापमान 110-120 डिग्री फैरनहाइट तक बढ़ा दिया गया। भाप भी बढ़ा दी गयी। यूनियन के नाम से जो चिट्ठी मैनेजमेंट को दी जाती थी, उसे फाड़कर फेंक दिया जाता था। कहते थे, इन्दौर में रजिस्ट्रेशन कराये हो, उन्हीं से जाकर बातचीत करो।

पहला घेराव

13 जुलाई 1984 की बात है। तरासन खाते में बहुत अधिक गर्मी थी। एक महिला बेहोश होकर गिर गयी। उसको अस्पताल पहुँचाने के लिए कोई एम्बुलेंस नहीं थी। एक माह में वहाँ पर 3-4 महिलाएँ बेहोश हो चुकी थीं। मजदूर आकर फैक्ट्री मैनेजर से बोले कि इतनी गर्मी में काम कैसे होगा। मैनेजर ने मजदूरों को नौकरी से निकाल देने की धमकी दी। तब मजदूरों को गुस्सा आया और उन्होंने मैनेजर का घेराव कर दिया। इसके बाद वहाँ संड-मुसंड पहलवान आ गये और मजदूरों के साथ धक्का-मुक्की करने लगे। मजदूर भी उनको थोड़ी दवाई दिये। मैनेजर भी अधिक गर्मी की बात को मान गये और अधिक भाप का दोष सुपरवाइजर पर मढ़ने लगे।

इसके बाद मजदूरों ने एक माँग और रखी कि इस शांतिपूर्ण धरने से किसी की नौकरी नहीं जानी चाहिए। इसके बाद वहाँ पर नये कलेक्टर मिंज और एस. पी. पेंडारकर अचानक आ पहुँचे। इंसपेक्टर त्रिपाठी जो सन् 1977 के गोलीकांड के समय दल्ली राजहरा में था, वह भी वहाँ आ पहुँचा। उसके कंधे पर अब दो की बजाय तीन फूल लग गये हैं। ये सब मिल कर फैक्ट्री मैनेजर को बोले कि तुम मजदूरों को कुछ भी लिखकर मत दो। ये लोग लाल-हरा झंडा पकड़े हैं, तो इनको थोड़ा सबक सिखाओ। इनको सस्पेंड करो, नौकरी से निकालो। इस प्रकार की वहाँ जिला प्रशासन की नीति है।

पुलिस ने रात दो बजे मजदूरों पर लाठी चार्ज किया, इतना भयंकर लाठी चार्ज कि करीब एक हजार मजदूर घायल हुए, जिसमें 75 गम्भीर रूप से घायल हुए। उन्हें धारा 151 के तहत जेल भेज दिया गया।

संगठन कैसे बना

14 जुलाई 1984 को मिल मजदूर दल्ली राजहरा आये। हम लोग सोच रहे थे कि वहाँ पर गोली चली होगी। शाम को हम दल्ली राजहरा से निकले और राजनांदगाँव जाकर बैठ गये। वहाँ बहुत आतंक था। परदेसिये मजदूरों से मारपीट कर रहे थे। दल्ली राजहरा के कार्यकर्त्ताओं ने प्रत्येक मुहल्ले में मीटिंग करना और संगठन बनाना शुरू किया। मुहल्ले के अंदर बी. एन. सी. के मजदूर ही नहीं, दीगर मजदूरों को भी संगठन में जोड़ा गया। क्योंकि यह लड़ाई बी. एन. सी. मिल की ही नहीं, अर्चना फैक्ट्री की ही नहीं, ईंट भट्ठे की ही नहीं, ठेका मजदूर की ही

विचारधारा का दिवालियापन

नियोगी के कागजातों में उनके हमें कुछ नोट्स मिले हैं। ऐसा लगता है कि ये नोट्स ट्रेड यूनियन आंदोलन के चरित्र पर दिये जाने वाले किसी भाषण (या लेख) के लिए तैयार किये गये थे। इनमें नियोगी ने इसी विषय पर लिखे अपने 'भारत के ट्रेड यूनियन आंदोलन की समस्याएँ' शीर्षक के लेख (देखिये पृ. 194-208) के कुछ अंश शामिल करने के भी संकेत दिये हैं। पक्की जानकारी के अभाव में इन नोट्स का काल अस्सी के दशक के मध्य के आस-पास माना जा सकता है। ये मूल नोट्स यहाँ प्रस्तुत हैं। — स.

इस देश में बहुत सी ट्रेड यूनियनें हैं। हर एक उद्योग में एकाधिक ट्रेड यूनियनें कम-से-कम औद्योगिक नगरों की दीवालों की शोभा बढ़ाती रहती हैं। दीवालों पर लिखे अनेक प्रकार के दिल लुभाने वाले स्लोगनों (नारों) में महक नहीं होती पर एक दूसरी ट्रेड यूनियनों के स्लोगनों से ज्यादा चमक अवश्य होती है। एक ट्रेड यूनियन दीवाल पर लिखती है कि न्यूनतम वेतन कम-से-कम 650 रुपये होना चाहिए, तो दूसरी ट्रेड यूनियन तत्काल दीवालों पर यह लिखने से हिम्मत नहीं हारती कि न्यूनतम वेतन 653 रुपये 55 पैसे होना चाहिए। मजदूर दीवाल पर लिखे स्लोगनों को देख-देख कर थक जाते हैं और नये-पुराने स्लोगनों का फर्क नहीं समझ पाते हैं। लेकिन मालिक वर्ग या मैनेजमेंट दीवाल पर लिखा स्लोगन पढ़ लेता है। मैनेजमेंट इसे एक स्वस्थ औद्योगिक वातावरण की संज्ञा देता है। नतीजा यह होता है कि मैनेजमेंट अपनी जगह, मजदूर अपनी जगह और मजदूरों की माँग कहीं भी नहीं। औद्योगिक नगर में भोंपू हर सुबह बजता है, दिन बीत जाता है। मजदूर एक-एक दिन बिता देते हैं। रिटायर होने के लिए एक-एक दिन कम होता जाता है। आठ घंटा की ड्यूटी, फिर काली बाड़ी, राममंदिर में मजलिस या चर्चा, सिनेमा या थियेटर, कुछ कार्यक्रम न रहा तब पड़ोसियों की चोरी-चुगली। फिर एक दिन अमुक से झगड़ा होता है तो यूनियन की फिक्र होती है। किसी साथी का प्रमोशन होने पर खुद के प्रमोशन की फिक्र काटती रहती है। फिर यूनियनों पर गुस्सा भड़क उठता है। 'सब यूनियनें बेकार हैं। बड़ी-बड़ी बात करती हैं। सब मैनेजमेंट की दलाल हैं।' पार्टी के कट्टर समर्थक पार्टी की यूनियन को खराब नहीं बता सकते तो यूनियन लीडर को व्यक्तिगत रूप से गाली देकर गुस्सा ठंडा कर लेते हैं। कुछ भी हो मजदूर को ठंडा होना पड़ता है। ट्रेड यूनियनों को मजदूरों को ठंडा करना पड़ता है। नहीं तो मैनेजमेंट ही मजदूर को ठंडा करता है। पर हकीकत यह है कि मजदूर ठंडा होता ही है। फिर सबेरे मिल का भोंपू बजता है, जैसे कि सबेरे का सिर फूट गया हो।

मालिक कहता है मधुर औद्योगिक सम्बंध स्थापित हुआ है। ट्रेड यूनियनें हैं, रहेंगी भी। मजदूर है, रहेगा भी। मालिक है, रहेगा भी। सभी ने यह बात स्वीकार कर लिया है! मार्क्सवादी साथी कागज-कलम में मालिक की शाश्वत-अवस्था के बारे में स्वीकार नहीं करेंगे, परंतु अपने-अपने दिल में कागज-कलम की बातें महत्व नहीं रखतीं।

कथनी और करनी में फर्क, सिद्धांत और अमल में फर्क का मुख्य कारण है, विचारधारात्मक दिवालियापन। हमारे देश के राजनैतिक पंडितों के विचारधारात्मक दिवालियापन

काम इतना है कि इसे हजारों सालों में भी पूरा नहीं किया जा सकता है। **जिस काम को हजारों सालों में भी पूरा नहीं किया जा सकता, उसमें एक भी पल गँवाने से क्या फायदा है ? इसलिए काम के जरिये, काम से समय को पकड़ के रखो, बाँध के रखो। समय को चूकने मत दो।**[1]

भ्रांति, क्रांति और शांति

आपने, हमने और सभी साथियों ने एक असीम सुख-शांति वाली समाज व्यवस्था का जो सपना देखा है, उसे हासिल करने के लिए क्रांति चाहिए। इसे हमने समझा है, स्वीकार किया है। **परंतु क्रांति तभी आयेगी जब देश के अंदर जो भ्रांतियाँ चल रही हैं, वे दूर हो जायें। जब तक भ्रांतियाँ दूर नहीं होंगी, तब तक क्रांति हो नहीं सकती, और जब तक क्रांति नहीं होगी, तब तक शांति बनेगी नहीं, और शांति हमें मिलेगी नहीं।**

भ्रांतियाँ आज बहुत सारी हैं। सबसे बड़ी भ्रांति यह है कि कांग्रेस बदल गयी, जनता दल आ गया, जन मोर्चा आ गया, भाजपा आ गयी और क्या-क्या नहीं आ गया। इन सभी लोगों ने बड़े सुंदर-सुंदर आश्वासन देना चालू कर दिया और चिकनी-चुपड़ी बातें शुरू कर दीं — 'हम ये कर रहे हैं, वो कर रहे हैं।' इन बातों से एक भ्रांति पैदा हो रही है। परंतु एक और भ्रांति है जिसके बारे में हमने ज्यादा चर्चा नहीं की। सत्ता एक ऐसी व्यवस्था बनाना चाहती है, जहाँ खौफ और आतंक का राज हो। वह खौफ और आतंक को ही सर्वशक्तिमान साबित करना चाहती है।

तुम मजदूर ! तुम अपनी मेहनत का दाम माँगते हो ? तुम किसान ! सिंचाई के लिए पानी माँगते हो ? तुम विद्यार्थी ! सुंदर पढ़ाई की व्यवस्था माँगते हो ? तुम महिला ! तुम्हारे ऊपर अत्याचार हो रहा है, तुम उससे मुक्ति माँगती हो ? वह तो मिलना ही चाहिए , परंतु नहीं मिला, उसके लिए तुम कोई विरोध नहीं कर सकते। अगर विरोध करोगे तो ये देखो, हमारे ये वर्दी वाले लोग हैं, और वर्दी वालों से पहले तो हमारे सामाजिक लोग हैं — जिनको आप और हम असामाजिक कहते हैं, गुंडा कहते हैं। उन असामाजिक लोगों को वे भेज देते हैं, मारपीट करते हैं, गुंडागर्दी करते हैं, अत्याचार करते हैं और यदि उसके जरिये से नहीं हुआ तो पुलिस भेजकर, गोली चलाकर, वे खौफ पैदा करते हैं, आतंक पैदा करते हैं। जिससे लोग अपना रास्ता भटक जायें, भ्रमित हो जायें और चुपचाप रहें। हमारे दिमाग में यह स्पष्ट होना चाहिए कि कोई भी खौफ, कोई भी आतंक हमें दबा नहीं सकता, हमारे चलने की राह को रोक नहीं सकता, रोड़ा बनकर पथ में खड़ा नहीं हो सकता। अगर खड़ा होता है, तो हम एक-एक रोड़ा हटाकर आगे बढ़ेंगे।

साथियों ! भटकाव आता है। भटकाव के समय हमारा दिमाग बहुत साफ होना चाहिए ; हमारा विचार परिपक्व होना चाहिए। अगर परिपक्व विचार लेकर हम आगे नहीं बढ़ पायेंगे तो विशाल अंधकार में हम कहीं गुम हो जायेंगे, पता नहीं चलेगा। हमारे पीछे बहुत बड़ा इतिहास है। इतना बड़ा इतिहास है, जिसे जिंदगी भर सुनते रहें, तो भी पूरा नहीं होगा। हजारों साल का इतिहास है, कितनी कुर्बानियों का इतिहास है ! हमारे देश में कितने लोगों ने कुर्बानी दी है — चंद्रशेखर आजाद, भगत सिंह, वीर नारायण सिंह, महात्मा गांधी, रामाधीन गोंड, बस्तर के हमारे मुरिया साथी लोग। परंतु तथाकथित आजादी मिलने के बावजूद सन् 1948 में राजनांदगाँव में पहली बार मजदूरों के ऊपर गोली चली, जो कांग्रेस शासन ने चलायी, बी. एन. सी. मिल के मजदूरों के ऊपर। अंग्रेजों ने सबसे पहले सन् 1920 में गोली चलायी थी — बी. एन. सी. मिल

---

[1] देखिये पृ. 608 पर प्रस्तुत माओ-त्से-तुंग की कविता।

अभी मैं पूरे भारत की बात न करके छत्तीसगढ़ में ही अपने को सीमित रखना चाहता हूँ। मैंने पहले ही बताया है कि छत्तीसगढ़ के लोगों ने अंग्रेजों के जमाने में पहले कुर्बानी दी। कांग्रेस के जमाने में, फिर जनता पार्टी के जमाने में, फिर कांग्रेस के जमाने में और फिर भारतीय जनता पार्टी के जमाने में कुर्बानी का रास्ता जारी रखा। मेरे साथियो, आपसे मेरा निवेदन है कि जिस अंधकार के खिलाफ हमारे शहीदों ने कुर्बानी दी थी, उस कुर्बानी की बातों को याद करें – आज भी अंधेरा है, रोशनी नहीं आयी है। आपके कदम को मजबूती के साथ, कार्यक्रम के साथ में जोड़कर आपको आगे बढ़ना होगा, समय के चूकने से यह नहीं होगा।

साधारण के साथ विशेष को जोड़ें

हमारे जीवन में, हम लोगों के जीवन में, मैं सामाजिक कार्यकर्ता साथियों की बात कर रहा हूँ , आम जनता की बात नहीं कर रहा हूँ। सामाजिक कार्यकर्त्ता के सामने भी एक समस्या मैं बार-बार देख रहा हूँ। लोग हमारी बात को सुनते जरूर हैं, परंतु उस पर अमल नहीं करते। फिर एक बात पैदा होती है, कार्यकर्त्ता साथी भी इन बातों से प्रभावित रहते हैं! वह बोलते हैं कि 'पहले तो भई अपन परिवार ला देखना है, ओकर बाद में हो सकही तो घर ला देखना है, फिर हमर गली ला देखना है, मुहल्ला ला देखना है, गाँव ला देखना है। औ भई हमर अतिक शक्ति तो नई हे कि समाज के काम ला करन, फिर देश के बात तो बड़े बात है। तभो ले अगर मौका मिल जाही तो ओ मा घलो हाथ बँटा देबोन!' ये जो विचार है कि घर से शुरू करेंगे, परिवार से शुरू करेंगे, ये भी भ्रांति है। कितने ही कार्यकर्त्ता साथी हैं, जो इस भ्रांति में फँसे हैं। ये इससे निकल नहीं पा रहे हैं। कभी-कभी कोई साथी महात्मा गांधी को भी पढ़कर उसकी ग़लत परिभाषा वहाँ पर शुरू कर देते हैं। गाँव का विकास करते-करते गाँव तक ही सीमित हो जाते हैं। **जब तक साधारण के साथ में विशेष को हम जोड़ नहीं पायेंगे, विशेष को जब तक साधारण के साथ में जोड़ नहीं पायेंगे, उसका रिश्ता स्थापित नहीं कर पायेंगे, तब तक हमारा विशेष मुद्दा तय नहीं हो सकता।** अगर आपके गाँव के आस-पास एक नदी है, अगर बाढ़ का पानी आ चुका है तो कैसे करेंगे आप ? जब आपके गाँव में पानी घुसेगा तो क्या होगा ? सारे गाँव की झोपड़ियों के गिर जाने का डर होगा। परंतु आपके गाँव के पास की नदी में जब बाढ़ आ रही है, तो क्या आस-पास के और भी गाँव हैं, वहाँ पानी नहीं आयेगा ? वहाँ पर भी गाँव में प्रवेश नहीं करेगा ? क्या गाँव नहीं डूबेगा ? फिर आप कैसे अपने गाँव को बचा सकते हो ? कैसे अपने घर को बचा सकते हो ? अगर बादल हैं, चारों तरफ बादल हैं, तो बारिश होगी। अगर बादल नहीं हैं, तो बारिश नहीं होगी। आपके गाँव में भी नहीं होगी, दूसरे गाँव में भी नहीं होगी, देश में नहीं होगी तो आपके गाँव में नहीं होगी। जो देश में होगा, वह आपके यहाँ होगा, ये विशेष से साधारण, साधारण से विशेष में आना होगा। परंतु अपने ही गाँव को आधार बनाने का जो सीमित विचार है, कहीं पर दूसरे छोटे-छोटे मुद्दों पर या दूसरे समूहों को आधार बनाकर इन्हीं बातों को रखा जाता है। हमें इन भ्रांतियों से मुक्ति मिलनी चाहिए। इन भ्रांतियों से हमें दूर होना है।

मैं सबसे बड़ी भ्रांति यहाँ आपके सामने रखूँगा। नियति के सम्बंध में एक भ्रांति है। छत्तीसगढ़ में कहते हैं कि 'का करबोन जी, ये जनम का कर्जा हा अगले जनम में चुकाये बर पड़ही। ओ हा कुकुर बनके नहीं तो बैला बन के छुटाही हमर कर्जा ला। नियति जो हमर है, ऐसने है भैया, कैसे करबोन ?' अब इस प्रकार से जो भ्रांति है, जबर्दस्त भ्रांति, नियति की भ्रांति हमारे सामने है। दो बातें हैं – एक बात नियति, दूसरी बात है स्थिति। **नियति और स्थिति,**

राजनांदगाँव, रायपुर, बिलासपुर, किसी भी आस-पास के शहर में देखेंगे कि आजकल वहाँ पर एग्रीकल्चर फार्म हैं। वहाँ पर देखेंगे कि कहीं पर गन्ना लगा हुआ, कहीं कुछ लगा हुआ है। हर प्रकार की फसल वहाँ पर हो रही है। उनके सामने फलों की छोटी-मोटी दुकानें भी आपको मिल जायेंगी। तो यह फार्म हाउस की बात है। हमारे यहाँ के सबसे बड़े नेता रायपुर शहर के विद्याचरण जी शुक्ल, उनका फार्म हाऊस अगर आप देखेंगे तो आपका दिल और दिमाग बिल्कुल खुश हो जायेगा कि ऐसा भी कोई मुकाम है। इस फार्म हाऊस का चक्कर भी बहुत बड़ी बात है। इन बड़ी-बड़ी जमीनों के मालिकों ने कभी नांगर (हल) की मुठिया नहीं पकड़ी, वे जानते नहीं हैं, उनमें कोई भी नहीं जानता। और फिर रायपुर शहर में ऐसे कई मोहल्ले हैं, जहाँ रहने वालों की जमीन बेमेतरा में है, कवर्धा में है, राजनांदगाँव में है, फलाना जंगह में है और सब रहते हैं रायपुर शहर में एक विशेष पारा के अंदर। छत्तीसगढ़ के कोने-कोने में जो जमींदार हैं, वे सब शहरों में रहकर कैसे गाँवों से कमाई कर रहे हैं, वह भी आप लोगों को कुछ-न-कुछ खबर रखना है। यह जो जमीन का सवाल है, जो हमारे सामाजिक कार्यकर्त्ताओं ने बार-बार गाँव-गाँव जाकर उठाया है। परंतु एक बात का उन्होंने आज तक ख्याल नहीं किया। इस जमीन से, इन जमीन पुत्रों की, धरती पुत्रों की भी एक आवाज उठी है। एक नारा पैदा हुआ है –

" छत्तीसगढ़ छत्तीसगढ़ियों का, नहीं किसी के बाप का।"

अब ये छत्तीसगढ़िया कौन हैं, भैया ? एक हमर जूदेव साहब राजा-महाराजा हैं। औ धर्मपाल गुप्ता जी, जेकर पास अढ़ाई-तीन हजार एकड़ जमीन है – इही मन छत्तीसगढ़िया है ! और ये छत्तीसगढ़ और छत्तीसगढ़िया के मतलब का होथे ? ये छत्तीसगढ़िया औ छत्तीसगढ़ी नो हे – ये दोनों के अंदर झगड़ा करो ! जैसे हमर संगवारी हा बताईस, अच्छा ढंग से बताईस, कि हमर मजदूर परिवार है, एक जात है। हमन ला ये बात जात के रूप में, बिरादरी के रूप मा बोलना चाहिए। जात ही नहीं, गोत (गोत्र) भी एक है। दो गोत हैं दुनिया के अंदर में – एक है बघवा (बाघ) गोतियार औ एक है आदमी गोतियार। लहू पिवैया मन के जात है बघवा गोतियार औ जे मन मेहनत करके खाथैं, मजदूर मन ओ मन आदमी गोतियार, मनखे गोतियार। यहाँ पर हम सभी एक जाति के, एक गोत्र के लोग बैठे हैं। हमारे बीच में फूट डालने के लिए , भेद करने के लिए उन्होंने इस तरह का नारा उछाला है। हम भी एक नारा देते हैं, हम अपना नारा बाद में बतायेंगे।

मजदूर यूनियनों का गलत रास्ता

परंतु इसके साथ दूसरी बात भी आपके सामने रखना चाहूँगा। औद्योगिक क्षेत्र के अंदर, जैसे भिलाई, राजनांदगाँव, दल्ली राजहरा, कोरबा या हिर्री, नंदिनी, बैलाडीला, अभनपुर वगैरह के मजदूर इलाकों में सिर्फ एक बात की चर्चा है कि हमारी फलानी माँग पूरी होनी चाहिए। दो माँगें तो हमारी बहुत पापुलर माँगें हैं – एक, वेतन में बढ़ोतरी करो; दूसरा, बोनस दो। इंकलाब जिंदाबाद। इससे क्या परिवर्तन होगा ? गुणात्मक परिवर्तन, क्रांति या इंकलाब ? उर्दू मा इंकलाब कथैं औ हिन्दी मा ओला क्रांति कथैं – मतलब ये के गुणात्मक परिवर्तन। और माँग का चलत हे ? कि ' 10 प्रतिशत बोनस देना होगा, देना होगा। ' तो का 10 प्रतिशत बोनस मिले के बाद में हमर देश के अंदर में गुणात्मक परिवर्तन आ जाही ? मजदूर जो हे ओ कोई मालिक बन जाही ? जो लूट-खसोट करैया हे ओ गरीब आदमी बन जाही ? वेतन बढ़ोतरी के बाद में हमारे सारे दुःख हट जाही ? आज ट्रेड यूनियनों के पास सिर्फ एक मुद्दा बचा हुआ है – वेतन में बढ़ोतरी

लोग इस प्रकार की तकनालाजी का आयात कर रहे हैं, और देशद्रोह कर रहे हैं। जनता दल के कुछ नेताओं से जो आज मंत्री पद पर हैं, उनसे मैंने व्यक्तिगत रूप में चर्चा की थी, तब उन दिनों में उन्होंने बताया था कि इस प्रकार से विदेशी कम्पनियाँ हमारे देश को खा रही हैं, लूट रही हैं। परंतु आज सत्ता में आने के बाद उन्होंने इस बात को भुला दिया।

आज जो नयी औद्योगिक नीति की बात हो रही है, पता नहीं क्या औद्योगिक नीति है। राजीव गांधी की औद्योगिक नीति थी, तकनीक के बारे में। उनकी नीति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। वह नीति आज भी जारी है, जोरदार ढंग से जारी है। यहाँ बस्तर से बहुत से साथी आये हैं, वे जानते होंगे कि बस्तर में रावघाट नाम की जगह है, वहाँ लोहा पत्थर है। रावघाट से लोहा पत्थर भिलाई आने वाला है। पर्यावरण मंत्री श्रीमती मेनका गांधी ने इसकी अनुमति नहीं दी, इसलिए भिलाई के अफसर उनसे बहुत नाराज हैं। वे कहते हैं कि मेनका गांधी यहाँ का विकास नहीं चाहती हैं। भिलाई के अफसर बहुत जोर लगा रहे हैं कि अनुमति जल्दी मिल जाये। बस्तर के इतने पास होते हुए भी आप तो रावघाट गये नहीं, परंतु अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया , कोरिया और जापान, इन पाँच देशों के लोग रावघाट में डेरा डाले हुए हैं। अंतर्राष्ट्रीय पैमाने पर वहाँ का ठेका होने वाला है। वहाँ पर मशीनीकरण की कौन-सी प्रक्रिया लागू होगी ? कौन-सी तकनीक वहाँ लागू होगी ? जिस तकनीक के जरिये वहाँ से लोहा पत्थर निकाला जायेगा और भिलाई कारखाने में लाया जायेगा, उसके बारे में दुनिया भर को मालूम है। हम बस्तर के आदमी मन, छत्तीसगढ़ के आदमी मन, रावघाट ला नहीं देखे हन; और ये आस्ट्रेलिया वाले मन, कनाडा, कोरिया औ जापान वाले मन, ये मन सब देख डारिन हे। योजना बनात हे। एक अफसर से मेरी बात हुई। मैंने उनको बताया कि ' भई, मशीनीकरण के बाद में यह उत्पादन लागत कम होनी चाहिए। तुम लोग बार-बार यह बोलते हो, परंतु गलत बात बोलते हो। गलत आँकड़े पेश करते हो। असल में ये जो मशीन का दिमाग खराब हो जाता है, उसकी बात तुम लोग कभी सोचते नहीं हो। तुम जो बात रखते हो, उससे कई गुना ज्यादा डिप्रीसिएशन (घिसाई) होता है।'

तकनीक में मैन्युअल (मानवीकृत) शक्ति से जो काम होता है, हमारे देश में वह सबसे बढ़िया किस्म का है। उसमें उत्पादन लागत भी कम है। क्वालिटी में भी आगे है। बैलाडीला का माल दस साल तक ' मेन्युअल प्रोसेस ' यानी मानवीकृत खनन के जरिये लिया है। मनुष्य जो काम करता है, उसकी क्वालिटी में कोई फर्क, कोई कमी नहीं है। मशीन से अच्छा माल हम देते हैं। इसका प्रमाण है कोयला। जब कोयला खदानों का मशीनीकरण नहीं हुआ था, तब कोयले की क्वालिटी इतनी खराब नहीं थी, जितनी खराब अब हो गयी है। फिर तकनीक की बात तुम लोग क्यों करते हो ? तुम लोग बोलो कि हम मशीन की बात करते हैं। तकनीक और मशीन दो अलग-अलग बातें हैं। तकनीक ऐसी है कि इस तकनीक में तुम घुस गये हो – अभिमन्यु जैसे। तुम घुस सकते हो, परंतु उससे निकलने का रास्ता तुमको मालूम नहीं है। इसलिए अभिमन्यु का जो हाल होता है, उसकी मृत्यु होती है, उसी प्रकार तुम देश की जनता के करोड़ों रुपयों का नुकसान कर रहे हो, हत्या कर रहे हो, देश की जनता के विश्वास की तुम हत्या कर रहे हो। इंसान की जरूरत की तुम हत्या कर रहे हो और देश के लिए एक नयी समस्या पैदा कर रहे हो। तुम मरणशील तत्वों को हावी कर रहे हो, तुम जीवनशील तत्वों के ऊपर चाकू चला रहे हो, तलवार चला रहे हो।

छत्तीसगढ़ का प्रश्न

दो मुद्दे आपके सामने हैं। एक है, जमीन का सवाल और दूसरा मुद्दा आपके सामने

बड़े ठेकेदार हो गये . . . . . . आप बताइये कितना पैसा कमाया, इन भिलाई के लोगों ने ? तो ये जो दो वर्ग हैं, यहाँ पर दोनों जगहों में – जमीन के सवाल पर, उद्योग के सवाल पर, उद्योगपतियों के सवाल पर – अगर हमारी बात स्पष्ट हो जाये, तो गलत विचारधारा से, भ्रांतियों से, मरणशील तत्वों के विचार से हम मुक्त हो जायेंगे। तब जीवनशील तत्व हावी होगा, शहीदों की विचारधारा आगे बढ़ेगी, मुक्ति का रास्ता मजबूत होगा। तो, ये जो दो मुद्दे हैं, इन दो मुद्दों की राजनीति को समझने के बाद अपना कार्यक्रम हमें बनाना होगा।

पशुशक्ति और जनशक्ति

कार्यक्रम बनाते समय आपको इन बातों का ख्याल रखना होगा। शक्ति किसके पास है ? शक्ति दो जगह में है। आप बोलेंगे कहाँ-कहाँ है, कैसे दो जगह हो सकती है ? एक ही जगह होनी चाहिए। नहीं, दो जगह है। एक जगह है पशुशक्ति। पशुशक्ति सत्ता में है, जो सत्ता आपको दिखती है, शासन करती है आपके ऊपर। और दूसरी जगह एक शक्ति है, वह है जनशक्ति। जहाँ पर जनशक्ति कमजोर है, वहाँ पर मरणशील तत्व हावी हैं, जीवनशील तत्व वहाँ पर मार खाते हैं। और जहाँ पर जनशक्ति मजबूत है, वहाँ पशुशक्ति जो है, मरणशील तत्व जो हैं, वे गिड़गिड़ाते हैं।

छत्तीसगढ़ मा गोठियाथे (बोलते हैं) कि 'बरपेली (जोर) के बात है।' अगर तोर बरपेली चल जाही तो मोर बरपेली नहीं चल सके। मोर दुसमन के अगर बरपेली चल जाही तो मोर बरपेली नहीं चल सके। और मोर बरपेली अगर नहीं चलही तो फिर मरणशील तत्व हमर ऊपर हावी हो जाही, मृत्यु हमर ऊपर हावी हो जाही और जीवन हमर से दूर हो जाही, उम्मीद और आशा हमर से दूर हो जाही। सपना के मृत्यु हो जाही, तो ईसीलिए संगवारी जो बात है – ये बरपेली प्रतिष्ठित करने की बात है। जनशक्ति को प्रतिष्ठित करने की बात है। जनशक्ति प्रतिष्ठित करने के उपाय सोचने की बात है।

कोन्टा में, मोंगरा में, कवर्धा में, सामाजिक कार्यकर्ताओं ने जंगल वालों के खिलाफ भूख हड़ताल की तो उन्हें नक्सलाइट कह कर गिरफ्तार कर लिया। संविधान में ये बात कहीं पर नहीं लिखी गयी कि किसी को तुम जान से मार सकते हो, किसी को जबर्दस्ती जेल में बंद कर सकते हो, और हमारे सामाजिक कार्यकर्ताओं के बारे में ये बात तो लागू ही नहीं होती। मैं उनको व्यक्तिगत रूप से जानता हूँ कि वे नक्सलाइट नहीं हैं। उस विचार के आस-पास नहीं हैं। तो क्यों उनको नक्सलाइट बोलकर गिरफ्तार किया जाता है ? इसलिए कि हमारे इलाके में मरणशील तत्व हावी हैं, जीवनशील तत्व यहाँ पर किसी जगह नहीं दिखते। संगठन नहीं है, एकता नहीं है, मजबूत एकता नहीं है।

छत्तीसगढ़ में अब नक्सलाइट कहकर किसी को गिरफ्तार करना आसान नहीं होगा क्योंकि छत्तीसगढ़ में ऐसी जनशक्ति पैदा हो रही है, कवर्धा में, चौकी में, नारायणपुर में, कोंडागाँव में, काँकेर में, सरगुजा और रायगढ़ में पैदा हो रही है। भिलाई और दल्ली राजहरा, राजनांदगाँव और कोरबा के मजदूर इलाकों में पैदा हो रही है। इन सभी स्थलों में जनशक्ति स्थापित होने जा रही है। प्रभावी होने जा रही है। इसलिए कोई फिक्र की बात नहीं है, एस. पी. महोदय, तुम इस प्रकार की एक-दो और घटनाएँ होने दो। फिर देखना कि नक्सलाइट कैसे होते हैं ? और क्या काम करते हैं ! जब नदी से पूर का पानी निकलेगा, जब बाढ़ आयेगी, तो पूरा कचड़ा साफ हो जायेगा । कोई गंदगी नहीं बचेगी। जब बाढ़ का पानी आयेगा, उस समय तुम मत रोना कि हमने गलती की, एक सामाजिक कार्यकर्ता को नक्सलाइट बोलकर जो बंद कर दिया था। परंतु

लोग तीन बजे रात भी घर जाने के लिए तैयार नही थे, बड़ा-बड़ा डंडा लेकर खड़े हो गये। मैंने कहा, कोई जरूरत नहीं, आप लोग घर चले जाइये। अन्याय के पास कोई शक्ति नहीं है, न्याय के पास शक्ति है। नीति के पास शक्ति है। नीति का मुकाबला, न्याय का मुकाबला, अन्याय नहीं कर सकता है। मुझे कुछ नहीं होगा आप देख लेना। बहुत मुश्किल से अपनी बहनों और भाई लोगों को हटाया। कुछ नहीं हुआ। देखा, कुछ नहीं हुआ।

पशुशक्ति खेत के अंदर हिलने वाले पुतले के समान, पंछियों को डराने वाले पुतले के समान ही है। जब आप पहुँच जाओगे तो देखोगे कि गुंडों के पास कोई ताकत नहीं है। गुंडा क्या, पुलिस के पास कोई ताकत नहीं है। दुनिया में कोई शक्ति नहीं है जो लोकशक्ति का मुकाबला कर सकती है, जनशक्ति का मुकाबला कर सकती है। इसलिए डरने की कोई बात नहीं है। दिल खोल कर चलो। रायपुर से जिस दिन स्विच दबेगा तो कवर्धा हो, चाहे नारायणपुर हो, हर जगह लोकसत्ता प्रभावी हो जायेगी। मरणशील तत्वों को मिटा दिया जायेगा, कब्र के अंदर घुसा दिया जायेगा, गाड़ दिया जायेगा। जीवनशील तत्व वहाँ पर छाती फुलाकर खड़ा हो जायेगा। होगा, ऐसा ही होगा। ऐसी उम्मीद है, ऐसी तमन्ना है, मेरा और आपका सपना है। इसलिए अब गाँव के अंदर इसी बात को लेकर जाना है। जो शक्ति का पुंज है, वह कहाँ है छत्तीसगढ़ की शक्ति का पुंज ? कौन शक्ति ? पशुशक्ति। पशुशक्ति का किला कहाँ है ? आप बोलेंगे, रायपुर में। रायपुर में कुछ नहीं है, रायपुर में जो लोग हैं, चाहे वे किसी भी पार्टी के हों, ये सारे लोग भिलाई के पूँजीपतियों के दलाल हैं। तो ये जो दलाल हैं, वो यहाँ निवास करते हैं और कहते हैं कि हम छत्तीसगढ़ के नेता हैं। परंतु उनके पास में जो असली बात है, असली जो ताकत है, वह भिलाई वालों के पास है। पूँजी उनके पास है। और ये पूँजीपति लोग जो हैं, वहाँ पर हावी हैं। वे दिखा रहे हैं कि हम हावी हैं। तो इसलिए , छत्तीसगढ़ के नौजवान साथियो, छत्तीसगढ़ के सामाजिक कार्यकर्ता साथियो, मेरे दोस्तो, आज आपको इस बात को, इस पैगाम को, आपको गाँवों में ले जाना होगा।

मैं एक उक्ति कहने का लोभ रोक नहीं पा रहा हूँ। जयप्रकाश नारायण जी ने पटना में एक भाषण दिया था, आज से बहुत साल पहले। उन्होंने कहा था कि पटना शहर में तानाशाही हावी है। और इसलिए बिहार की जनता को खड़ा होना होगा – हर गाँव से, हर शहर से, हर इलाके से आना होगा। पटना शहर में आकर बैठना होगा। उन्होंने यह बात उठायी और बिहार में एक आंदोलन का बिगुल फूँक दिया। तब देश के अंदर नवचेतना पैदा हो गयी। आज मैं आपसे कहता हूँ , साथी, उस उक्ति को लेकर फिर मैं आपकी शरण में आया हूँ। छत्तीसगढ़ के शोषण की जड़ इस भिलाई इस्पात कारखाने में ही है, जिसमें रहने वाले मालिक और मैनेजमेंट के लोगों ने पूँजीपतियों के साथ मिलकर छत्तीसगढ़ के शोषण की व्यवस्था को जारी रखा है, इस कुव्यवस्था को नेतृत्व दिया है। उनके शहर में छाती फुलाकर छत्तीसगढ़ के हर गाँव के – नारायणपुर के, अम्बिकापुर के, सरगुजा के, मैनपाट इलाके के, बिलासपुर के – सारे इलाके के साथियों को, आपको आना होगा भिलाई में। एक दिन इस बात को तय करने के लिए। और उस दिन, सारे नवयुवकों को अपने-अपने गाँव से – चार हजार गाँव हैं – वहाँ से बीस-बीस लोग होंगे, तो 80 हजार लोग होंगे और भिलाई के 80 हजार साथी वहाँ पर बैठे हुए होंगे, आपका स्वागत करने के लिए। इस प्रकार से लाखों की शक्ति पैदा होगी, जनशक्ति पैदा होगी, जिसके सामने सिर उठाकर कोई खड़ा नहीं हो सकता। **इस लोकसत्ता के सामने पशुसत्ता को झुकना होगा, निश्चित रूप से झुकना होगा।** अब उस दिन के बारे में तय करना होगा। लोकसत्ता को कब प्रतिष्ठित किया जा सकता है ? जनशक्ति को किस दिन प्रतिष्ठित किया जा सकता है ? कौन

वाला हूँ। और इस प्रकार से छत्तीसगढ़ का हर गाँव खड़ा हो जायेगा। हर सड़क के मजदूर, बस्ती के मजदूर, झोपड़ी के मजदूर, झुग्गी-झोपड़ी के मजदूर खड़े हो जायेंगे। गाँव और शहर कंधे-से-कंधा मिलाकर एक नारा बुलंद करेंगे – मुक्ति चाहिए हमें। किसको मुक्ति चाहिए ? नारायणपुर वालों को चाहिए, सरगुजा को चाहिए, मैनपाट को चाहिए, बिलासपुर वालों को चाहिए, रायपुर के लेंडी तालाब के लोगों को चाहिए। हर जगह में, हर तरह के लोगों को चाहिए। दल्ली राजहरा के मजदूरों को चाहिए, चांदीडोंगरी माईन्स के मजदूरों को चाहिए, हिर्री इलाके में चाहिए। सब जगह के लोगों को मुक्ति चाहिए। फिर देखो, कहाँ से आती है ताकत पशुशक्ति के पास। कोई ताकत नहीं है पशुशक्ति के पास। पशुशक्ति की मृत्यु होगी।

जीवन मृत्यु को दफना देगा !

❑

(छमुमो द्वारा प्रसारित कैसेट, ' कार्यकर्त्ताओं के नाम संदेश ' से सुधा भारद्वाज द्वारा तैयार आलेख के आधार पर श्याम बोहरे द्वारा परिमार्जित एवं संक्षिप्त हिन्दी रूपांतरण।)

रामलाल की जीवन-गाथा

17 सितम्बर 1990 (विश्वकर्मा दिवस) को छमुमो के भिलाई आंदोलन का पहला जुलूस था। उस दिन कई छोटे-बड़े कारखानों के मजदूरों ने पहली बार इकट्ठे होने का साहस किया था – ' छोटी-छोटी नदियाँ मिलकर महानदी ' बना रही थीं। पर उसी दिन उद्योगपतियों की शह पर चारों तरफ हिंसा का तांडव शुरू हो चुका था। एक नामी गुंडे (बाद में नियोगी हत्याकांड का अभियुक्त) ने सिम्पलेक्स इंजी. एंड फाउंडरी वर्क्स के आहाते में दो-तीन मजदूरों की निर्मम पिटाई की। अन्य कारखानों से भी ऐसी ही रपटें आ रही थीं। हर कीमत पर मजदूरों को जुलूस में शामिल होने से रोकना था। दहशत के बावजूद जुलूस में हजारों मजदूरों ने भाग लिया। उस दिन आम सभा में नियोगी ने अपने भाषण में ' रामलाल ' की कहानी सुनायी जिसे सुनकर सारी सभा रो पड़ी। जब जुलूस लौटा तो जैसे जादू हो गया था। दहशत की जगह नये जोश ने ले ली थी। सब जोर से नारे लगा रहे थे। ' रामलाल ' की कहानी छमुमो के साथी अनूप सिंह ने बाद में लिपिबद्ध की। उसे यहाँ पेश कर रहे हैं। – स.

पैंतीस वर्षीय रामलाल एक कुशल मजदूर है, टेस्टेड वेल्डर। पिछले सत्रह वर्षों से भिलाई औद्योगिक क्षेत्र में कार्यरत रामलाल फिलहाल ' सिम्पलेक्स कास्टिंग्स ' में काम करता है। इन सत्रह बरसों में उसने कई कारखानों में काम किया। एक कारखाने से निकाल दिये जाने के बाद दूसरे कारखाने में और कभी फिर वापस पुराने कारखाने में। सिम्पलेक्स से उसे तीन बार निकाला

हैं। रामलाल दुःखी है, रामलाल बहुत चिंतित है – मगर उसके लिए नहीं जो दुनिया छोड़ कर चली गयी। अपने शेष तीन बच्चों के बारे में चिंतित है, जिन्हें भी वही बीमारी है, जो आधा पेट खाने से होती है। उसे डर है कि तीन दिन नहीं जाने के बाद कल जब वह गेट पर जायेगा तो ठेकेदार कहीं जवाब न दे दे। यही चिंता उसके दिल में घर कर लेती है। लोग सोचते हैं कि रामलाल ने हिम्मत से दुःख को दबाया है।

दोस्तों व रिश्तेदारों की मदद से बच्ची को श्मशान घाट में दफनाने का कार्य बस पूरा हो चुका है, अंतिम मिट्टी बाकी थी कि रामलाल का दोस्त श्यामलाल आकर उसके कान में कहता है, " ठेकेदार ने कल काम से तेरी छुट्टी कर दी है, फाइनल ले जाने के लिए कह रहा था। "

रामलाल अब और बर्दाश्त नहीं कर पाता। वह फूट-फूट कर रोने लगता है। साथी सोचते हैं कि रामलाल ने बहुत देर तक अपना दिल कड़ा करके रखा था। अब अपनी बिटिया की अंतिम विदाई पर फूट पड़ा है। वे नहीं जानते कि जो जा चुकी है, उसके लिए नहीं, बल्कि जो हैं, उनके लिए रो रहा है कि अब वह कैसे कमा कर लायेगा। उसे काम से बैठा दिया गया है। रोते-रोते अब उसके आँसू सूख जाते हैं, उसकी आँखें लाल हो उठती हैं, मुट्ठी भिंच जाती है, और भिंची हुई मुट्ठी को आसमान में लहरा कर वह जोर से आवाज करता है – ' इंकलाब .... जिंदाबाद ' !

यह कहानी एक रामलाल की ही नहीं है, बल्कि उन हजारों रामलालों की कहानी है, जो भिलाई के औद्योगिक क्षेत्र में, पिछले पच्चीस बरसों से नवधनाढ्य उद्योगपतियों के शोषण के शिकार हैं।

□

(छमुमो के भिलाई कार्यालय के सौजन्य से।)

सामाजिक-आर्थिक न्याय के लिए एकता यात्रा

नियोगी निरंतर प्रयासरत रहे कि देश के सभी प्रगतिशील, जनवादी लोगों व संगठनों को इकट्ठा करके एक राष्ट्रीय विकल्प खड़ा किया जाये। इसके तहत सामाजिक-आर्थिक न्याय को प्राप्त करने के लिए विकास के एक वैकल्पिक मॉडल की खोज करना आवश्यक समझा गया था। देश में बढ़ती हुई साम्प्रदायिकता को भी जन-विरोधी आर्थिक और औद्योगिक नीतियों के संदर्भ में देखा गया था। दिसम्बर 1990 में ऐसे 6 संगठनों की दिल्ली में बैठक हुई जिसमें छमुमो की ओर से नियोगी ने भाग लिया। बैठक के बाद 13 दिसम्बर 1990 को जारी किया गया संयुक्त प्रेस बयान नीचे प्रस्तुत है।

– स.

देश के छह जन संगठनों ने साम्प्रदायिकता के खिलाफ संयुक्त अभियान चलाने का फैसला किया है। इन संगठनों ने वर्ष 1991 को ' साम्प्रदायिकता उन्मूलन वर्ष ' घोषित करने का निर्णय लेते हुए कहा है कि साम्प्रदायिकता के खिलाफ उनका संघर्ष जनता के व्यापक सामाजिक-आर्थिक

अंतिम आदमी की बात [1]

9 सितम्बर 1991 को मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले के पूर्वी छोर पर स्थित बनखेड़ी में पुलिस, वनकर्मियों एवं स्थानीय गुंडों ने मिलकर ग्राम पलिया पिपरिया के हरिजन–आदिवासियों पर नाना प्रकार के अत्याचार ढाये। अत: अपनी अंतिम दिल्ली यात्रा से लौटते हुए नियोगी प्रभावित क्षेत्र में गये, पीड़ित लोगों का हाल सुना और उन्हें ढाढ़स बंधाया। 19 सितम्बर को उन्होंने पिपरिया में 'समता संगठन' द्वारा आयोजित एक आम सभा को सम्बोधित किया। सम्भवत: यह उनका किसी आम सभा में दिया गया अंतिम भाषण था जो यहाँ प्रस्तुत है। — स.

महात्मा गांधी जी ने एक बात कहे थे, "जब तुम कोई निर्णय लोगे, उस समय देश के सबसे गरीब व्यक्ति का ख्याल करना। अगर देश के सबसे गरीब व्यक्ति का तुम ख्याल नहीं करोगे तुम्हारे निर्णय में, फिर तुम्हारा निर्णय गलत साबित हो सकता है। अगर देश के सबसे गरीब व्यक्ति का ख्याल तुम करोगे तुम्हारे निर्णय में, तो तुम्हारा निर्णय सही साबित होगा।" मैं इस बात को मानता हूँ।

आज हमारे दोस्त गोपाल गाँगूड़ा साहब ने, हमारे यहाँ के छात्र संघ के बंधुओं ने, इस इलाके के सबसे गरीब लोगों का ख्याल करके आज की आम सभा बुलाया, इसलिए मैं यहाँ के छात्र संगठन के हमारे साथियों का अभिनंदन करता हूँ।

आप देख रहे हैं कि इस समय देश के पैमाने पर एक अद्‌भुत-सी स्थिति, एक अद्‌भुत-सा वातावरण चल रहा है, जो पिछले कई युगों में कभी सुना नहीं गया, देखा नहीं गया था। एक तरफ कश्मीर में रोजाना हत्याएँ हो रही हैं, पंजाब में हत्याएँ हो रही हैं, तमिलनाडु में लिट्टे के कार्यक्रम आपके कान में आता ही होगा। आज इस समय पूरा आसाम सेना के हवाले कर दिया गया है। रोजाना जान हानि हो रहा है, मानव वध हो रहा है, और इस प्रकार से वातावरण बनता जा रहा है जहाँ पर केवल हिंसा और हिंसा को एक लक्ष्य बनाकर चला जा रहा है। उस समय आपको सुनकर बहुत आश्चर्य और खुशी होगा कि मध्य प्रदेश में जनवादी आंदोलन चलाया जा रहा है। नर्मदा घाटी में मेधा पाटकर के नेतृत्व में वहाँ के आदिवासी, वहाँ के नागरिक, वहाँ के किसानों ने गोलबंद होकर, जत्थाबंदी कर, सरकार के बड़े बाँध बनाने की जो योजना है, उसके खिलाफ उन्होंने संघर्ष कर रहे हैं। दूसरी तरफ छत्तीसगढ़ इलाका में मजदूर आंदोलन, आदिवासियों के आंदोलन, किसानों के आंदोलन, ये सारे आंदोलन वहाँ पर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की ओर से चलाया जा रहा है और इस इलाका में, हमारे पिपरिया इलाका में भी आप देख रहे हैं कि जो आदिवासियों के खिलाफ अन्याय हो रहा है, उसके खिलाफ यहाँ पर समता संगठन के लोग जनवादी प्रक्रिया में संघर्ष कर रहे हैं। तो देश में एक तरफ पंजाब के आंदोलन हैं, लिट्टे और उल्फा के आंदोलन हैं। दूसरी तरफ मध्य प्रदेश के (विभिन्न) जनवादी आंदोलन हैं। ये जनवादी आंदोलन को किन मुद्दों पर चलाया जा रहा है, ये भी ख्याल करने की बात है।

---

[1] भाषण की मौलिकता बनाये रखने की दृष्टि से हमने नियोगी की छत्तीसगढ़ी-बंगाली लहजे वाली हिन्दी को ज्यों-का-त्यों छोड़ दिया है। — स.

नहीं कब उनको जमानत मिलेगा। कब वह खुली हवा में घूम पायेंगे।

यह नक्सलपंथी आंदोलन का जो हौवा खड़ा किया जा रहा है, जनवादी आंदोलन को कुचलने के लिए नक्सलपंथी आंदोलन का हौवा खड़ा किया जाता है। मैं जानता हूँ नक्सलपंथी आंदोलन क्या होता है, हमारे इलाके में नक्सलपंथी आंदोलन है, बस्तर इलाके में जहाँ पर हमारा संगठन काम करता है। उस इलाके में मैं जानता हूँ कि नक्सलवादी आंदोलन है। आप लोगों को मालूम नहीं होगा, यहाँ के पुलिस के जवानों को मालूम नहीं होगा, यहाँ के एस. पी. को मालूम नहीं होगा, परंतु मुझे मालूम है। अभी कुछ दिन पहले वहाँ पर (बस्तर में) बारूद लगा कर एक ठो पुलिस के डग्गे को उड़ा दिया गया। उसमें कई पुलिस के जवानों की मृत्यु हुई। हमारे बस्तर की पुलिस डर के मारे उस इलाके में गया नहीं। दुर्ग जिला के पुलिस अधीक्षक, सी. एस. पी. दिनेश शर्मा, वे गये वहाँ पर। उनको जिम्मेदारी दिया गया कि पुलिस की जो लाशें हैं, उनको बीन-बीन कर जंगल में से लाओ। मैंने दिनेश शर्मा सी. एस. पी. से बात किया, "कैसा था वहाँ का दारुण दृश्य ?" वे बोले, "नियोगीजी, मैं क्या बताऊँ, इतना दहलाने वाला बात था कि जंगलों में जहाँ पर यह बारूद उड़ाया गया था, वहाँ पर पुलिस की लाशें झाड़ में लटक रही थीं। कोई पुलिस की टाँग कोई झाड़ में लटक रहा था, कोई पुलिस का हाथ कोई झाड़ में लटक रहा था, पुलिस की टोपी एक बड़े झाड़ पर टँगा हुआ था। इस प्रकार से वहाँ पर एक खौफनाक स्थिति पैदा हो गया था।" मैंने कहा कि इसके बाद आपने क्या किया वहाँ पर ? जनता को पूछे कि कौन इस प्रकार से काम किया ? उन्होंने बोले कि पुलिस वालों का तो यह हालत हो गया है जनाब, कि वहाँ पर हम लोग ड्रेस लगाकर घूम नहीं सकते हैं, वहाँ पर पुलिस वाले खाकी वर्दी उठाकर फेंक दिये हैं और आप के जैसे सिविल ड्रेस लगाकर हम लोग बस में घूमते हैं। और नक्सलवादी आके सामने सड़क में खड़ा हो जाते हैं और बस को रोकते हैं और कहते हैं कि 'ऐ बस वाले, तुम रुक जाओ यहाँ पे, ये पुलिस वाले बहुत ज्यादतियाँ किया हमारे ऊपर, आदिवासियों के ऊपर। हम देखना चाहते हैं कौन है पुलिस वाला ?' एक-आध पुलिस वाला वहाँ पे मिल जाता है, उनको उतारते हैं, एक लात मारते हैं और कहते हैं, 'जाओ, बहुत अत्याचार किया था तुमने इस बार।' इस प्रकार से बस्तर के अंदर नक्सलपंथियों का आंदोलन चल रहा है। परंतु समता संगठन इस प्रकार का आंदोलन नहीं करते हैं। समता संगठन के लोग जनवादी प्रक्रिया को अपनाते हैं। समता संगठन के लोग कहते हैं कि हम हजारों की संख्या में हैं, ये सरकार, ये व्यवस्था को बदलने के लिए। यह दो-चार मुट्ठीभर नक्सलपंथियों का काम नहीं है।

आज यहाँ पर जंगल चोरी के नाम से आदिवासियों को पकड़ा जाता है। जेलों में अगर जायेंगे, होशंगाबाद जेल में, तो आप देखेंगे कि वहाँ गरीबों के बच्चे चोर के नाम से, पाकेटमार के नाम से, गुंडा के नाम से, बदमाश के नाम से वहाँ बंद पड़ा हुआ है। परंतु मैं पूछता हूँ कि पटवा सरकार जवाब दे मुझ को कि आज तक कितना इन्कम टैक्स चोरी करने वाले को आपने गिरफ्तार किया ? कितना काला धन पैदा करने वालों को आपने गिरफ्तार किया ? कितना भ्रष्टाचार करने वालों को गिरफ्तार किया ? कितना घूसखोरी करने वालों को आपने गिरफ्तार किया ? एक को भी आपने गिरफ्तार नहीं किया और न तुम कर सकते हो।

आज की पूँजीवादी व्यवस्था जहाँ पे शोषण की, अत्याचार की बुनियाद पर जो खड़ा है, वहाँ पर मैं जानता हूँ वो चोर जो करोड़ों रुपया चोरी करता है, एक-एक साल में जो लाखों रुपया चोरी करता है, ये सब ईमानदार लोग कहलाते हैं, गणमान्य व्यक्ति कहलाते हैं। और यहाँ पे चोर कौन होते हैं ? जो अपना पेट के भात के लिए थोड़ा-सा लकड़ी लेकर जंगल से आते हैं, उनको चोर कहा जाता है। आज की व्यवस्था ऐसी व्यवस्था है।

वो गुंडे जा कर हमारे भाई के ऊपर सिर में डंडा बरसा रहा है। अब दूसरी तरफ हमारे घर के बेटे, जो पुलिस के जवान हैं, उनको कह रहे हैं कि जाओ तुम इन गुंडों को संरक्षण दो। इस प्रकार ये अधिकारी जो है एक भाई को दूसरे भाई से लड़वा रहा है। परंतु अब एक भाई और दूसरा भाई लड़ेगा नहीं।

पुलिस के जवानों को भी मैं इस बात को कहना चाहूँगा कि कौन से मुद्दों पर आपका अफसर कौन-सा बात कह रहे हैं। जय प्रकाश नारायण जी का बात को आप याद करना कि आप जब भी कोई डंडा चलायेंगे मजदूर के ऊपर, किसान के ऊपर, नौजवान के ऊपर, विद्यार्थी के ऊपर, उस समय ख्याल करना कि कौन-सा मुद्दा को लेकर वो लड़ रहा है। आपके एस. पी. ने कह दिया इसलिए आप आपके देश के लोगों को मारते रहेंगे, ये बात ये जमाना जो है, भूल जाइये ! **ये आजाद देश के नागरिक हैं और आप आजाद देश के पुलिस है। आजाद देश के पुलिस को आजाद देश के पुलिस जैसे व्यवहार करना चाहिए।**

आपके सामने ये देश के जागरूक जनता जो सामने खड़ा हुआ है। मैं जानता हूँ यहाँ पर दो-तीन परिवार हैं — पलिया परिवार हैं, वो यहाँ पर बहुत गुंडागर्दी कर रहे हैं, बहुत दिन से कर रहे हैं। ये पलिया परिवार सट्टा खिलाते हैं, शराब का धंधा करते हैं, कौन-सा ऐसा गलत काम नहीं है जो पलिया परिवार के लोग नहीं करते हैं। उस बस्ती का नाम भी पलिया पिपरिया रख दिया, वो पिपरिया बस्ती के नाम को कलंक कर रहे हैं, पलिया शब्द डालकर। परंतु ये पलिया जो हैं, इनकी गुंडागर्दी ज्यादा दिन तक चलेगा नहीं। मैं गया था आज उस बस्ती (पलिया पिपरिया) में, मैंने देखा वहाँ पर बनखेड़ी के अंदर ऐसा एक गुंडागर्दी का माहौल खड़ा करके रखा है जहाँ पर हरिजन लोग बोलने की हिम्मत नहीं कर रहे हैं। दो-चार हरिजन भाई-बहन हमारे सामने आकर मिले। जब वो अपनी दुःख की बात को बोलने लगे, तो पलियों ने अपना जासूस भेज दिया, 'देखो क्या बात कर रहे हैं ये गरीब लोग।'

हमारा दिमाग में यह बात आया कि आज आजाद देश के लोग इस बात को बोल नहीं पा रहे हैं कि इस देश के अंदर में बहुत गुंडागर्दी हो चुका है। अब ये गुंडागर्दी बर्दाश्त नहीं किया जायेगा। जनता एक दिन जागेंगे और जिस दिन जनता जागेंगे, उस दिन जनता अपने फैसले खुद कर लेंगे। परंतु मैं सबको यह चेतावनी देना चाहता हूँ, यहाँ के कलेक्टर, एस. पी. को चेतावनी देना चाहता हूँ कि ये गुंडागर्दी का राज जो है, (उसे) तत्काल समाप्त करने के लिए कोई-न-कोई कदम उठाये जायें। ये गुंडागर्दी ज्यादा दिन तक बेरोकटोक चलना नहीं चाहिए। अगर बेरोकटोक चलेगा तो समाज के अंदर समाने के बाद ये उसमें घुल जायेगा। समाज के अंदर में जो विषमता है, (वह) और तेजी से बढ़ता जायेगा। तो देश का अंततोगत्वा नुकसान ही होगा।

मैं अंत में इतना कहकर अपना बात को समाप्त करना चाहूँगा कि कल के दिन जो नयी सुबह आयेगी, वो नयी सुबह एक सही दिशा को लेकर आयेगी। एक शांति और खुशहाली का राज, एक समाज व्यवस्था कायम होगी। यह कल्पना करते हुए, यह सपना देखते हुए, मैं मेरी बात को समाप्त करना चाहता हूँ। इंकलाब जिंदाबाद !

□

(डॉ. हृदयकांत दीवान एवं नीलिमा सेतान द्वारा समता संगठन, पिपरिया, के कैसेट से तैयार किये गये आलेख का सम्पादित स्वरूप।)

सिम्पलेक्स के लोग जिस प्रकार से बदमाशी कर रहा है, विशेष रूप से मूलचंद [1] जिस प्रकार से क्रिमिनल्स लोगों को इकट्ठा कर रहा है। उधर प्रभुनाथ मिश्रा है जो शांतिलाल जैन [2] का दोस्त भी है। उसने जिस प्रकार उसका भाई गुंडा [3] है, उसने भी पूरा जोर कोशिश कर रहा है कि यहाँ पे ऐसी कुछ अघटन घटाया जाये। केडिया [4] बहुत चालू आदमी है। उससे ही मुझे यह विश्वास है कि मूलचंद और केडिया ये दो ही आदमी आज इस समय ये सारे साजिशों के पीछे हैं। मैं आभास से इस बात को पूरा समझते जा रहा हूँ कि ये दोनों व्यक्ति लगातार यहाँ के जो आई. जी., इंस्पेक्टर जनरल ऑफ पुलिस है मिस्टर सिंह, उसके साथ मिलकर एक बड़ा साजिश में जुटा हुआ है। और इसलिए मैं इस बात को, मेरे दिल की भावना को मैंने टेप रिकार्डर के जरिये से रिकार्ड करके जा रहा हूँ और क्योंकि शायद बहुत जल्दी कुछ होने वाला है, इसलिए ये रिकार्ड हमारे साथियों को ये सारे बातों को समझने में मदद करेगा।

मेरे मृत्यु के बाद एक ऐसे नेतृत्व को कायम करना होगा जिस नेतृत्व को इस बात का यकीन होना चाहिए कि हम सही दिशा में इस आंदोलन को ले के जायेंगे। हमारे आंदोलन में रचना और संघर्ष यह दो मुख्य बातें हैं। याने रचनात्मक कार्य करना होगा और शोषण – हर शोषण और अत्याचार के खिलाफ संघर्ष भी जारी रखना होगा ..... राजनैतिक रूप से हमारे निकटतम है पीपुल्स वार ग्रुप और आई. पी. एफ.। पीपुल्स वार ग्रुप से कुछ हमारा विरोध भी है – वह है कि उन्होंने सिर्फ बंदूक के आधार करके जो संगठन बनाना चाहता है, उससे मेरा सहमत नहीं है। हमें जनवादी आंदोलन को तेज कर, जनता को गोलबंद कर, फिर आवश्यकता पड़ने पर या समय की पुकार पर हमें सशस्त्र संग्राम से भी न डरना चाहिए और हथियारबंद संघर्ष के लिए भी हमें तैयार रहना चाहिए। परंतु शुरू में हथियारबंद संघर्ष का गैर-जनवादी तरीका में जाना उचित नहीं होगा। पहले हमें यह कोशिश करना होगा कि सारी शक्ति हम जनवादी कृत्य में लगायें। जनता को महसूस हो कि नहीं, जनवादी प्रक्रिया से कुछ सम्भव नहीं हो रहा है। इस व्यवस्था को खत्म करने के लिए उस समय हम अगर हथियारबंद संघर्ष करेंगे, तो वह एक सही रास्ता होगा।

आई. पी. एफ. से मेरा फर्क यही है कि आई. पी. एफ. के लोग यह जो इन बातों को बता रहे हैं परंतु उसका नेतृत्व जो है वह एक पीछे हटने वाला कुछ कदम उठाया है जो हमें पसंद नहीं है। उन्होंने पेरेस्त्रोइका या ग्लासनोस्त के बारे में जिस प्रकार से अपना भावना बनाया, यह एक बिल्कुल गलत भावना है और वर्तमान सोवियत नेतृत्व को हम किसी हालत में क्रांतिकारी नेतृत्व नहीं मान सकते।

मैं समझता हूँ कि एक दिन ऐसे भी आयेगा कि भारत में एक सही ढंग का एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी बनेगी। जिस दिन एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी बनेगी, उस दिन छत्तीसगढ़ के हमारे क्रांतिकारी साथियों को मैं निवेदन करूँगा उस दिन उन मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी के साथ में मिलके उन्होंने भी नया दुनिया या नया समाज रचना में सबको सहयोग देते हुए आगे बढ़ें। □

---

[1] भिलाई के सिम्पलेक्स उद्योग समूह के मालिक शाह बंधुओं में सबसे बड़ा मूलचंद शाह।

[2] दल्ली राजहरा में लौह अयस्क खदानों का एक प्रभावशाली ठेकेदार।

[3] भिलाई में उद्योगपतियों के संरक्षण में कार्यरत ज्ञान प्रकाश मिश्रा जो वर्तमान में नियोगी हत्याकांड में एक अभियुक्त है।

[4] भिलाई एवं कुम्हारी (जिला दुर्ग) के दो बड़े शराब कारखानों का मालिक कैलाशपति केडिया।

7.
नियोगी की
जबान से -
साक्षात्कार
एवं चर्चा

नैतिक हथियार सबसे बड़ा है

सन् 1977 में राजहरा में हुए गोलीकांड के बाद मध्य प्रदेश के अधिकांश समाचार पत्रों ने नियोगी को एक अतिवादी नक्सलपंथी व्यक्ति के रूप में पेश किया था। फरवरी 1981 में राष्ट्रीय सुरक्षा कानून के अंतर्गत हुई गिरफ्तारी ने उन्हें राष्ट्रीय पटल पर तो उभारा, पर साथ ही उक्त छवि को और सुदृढ़ भी किया। उन्हें लेकर अनेक प्रकार की भ्रांतियाँ व निराधार धारणाएँ फैलायी गयीं। इस समय तक उनके कई रचनात्मक कार्यक्रमों की भी मजबूत नींव पड़ चुकी थी। शराबबंदी आंदोलन, अर्द्ध-मशीनीकरण, वीर नारायण सिंह दिवस, शहीद स्कूलों का गठन और ' स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करो ' आदि काम उनकी उभरती हुई ' संघर्ष और निर्माण ' की राजनीति के परिचायक बन चुके थे। किंतु भ्रांतिपूर्ण छवि फिर भी बनी रही। हालाँकि ' इकनॉमिक एंड पोलिटिकल वीकली ' जैसी अंग्रेजी बुद्धिजीवी पत्रिकाओं ने उनके काम के बारे में खूब जानकारी-युक्त रपटें छापीं, परंतु आमतौर पर राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं ने इस ओर अपेक्षाकृत कम ध्यान दिया। उस समय (लगभग बारह वर्ष पूर्व) यह साक्षात्कार पंकज शर्मा ने लिया और ' नई दुनिया ' (इन्दौर) ने इसे 14 जून 1981 को छापा, जिससे पहली बार हिन्दी के पाठकों को नियोगी को उन्हीं के शब्दों में जानने-समझने का मौका मिला। नियोगी की हत्या के बाद ' गांधी मार्ग ' (नयी दिल्ली) ने इसका संक्षिप्त स्वरूप पुनः प्रकाशित किया।

— स.

सवाल — आपके पूरे आंदोलन का मजदूरों के सामाजिक जीवन पर क्या असर दिखायी पड़ता है ?

नियोगी — देखिये, हमने आर्थिक मुद्दों पर कभी लड़ाई नहीं की। हमने सबसे पहले इज्जत की लड़ाई की। हमने प्रबंधकों से कहा कि खदानों में आपको इस ढंग से काम चलाना चाहिए और आप इस तरह नहीं चला रहे हैं। हमने जब काम की स्थितियों के बारे में बताया तो नौकरशाहों ने कहा कि तुम मजदूर हो, तुम कौन होते हो बताने वाले ? एक मामूली मजदूर को कार्य-परिस्थितियों (वर्किंग कंडीशंस) के बारे में बताने की जरूरत क्या है ? तो हमने कहा कि देश हमारा है और उसके उत्पादन में हमारा श्रम लगा है। इसमें हमारा हिस्सा भी है। इसलिए उत्पादन-वृद्धि के मामले में हमारी विचार-बुद्धि भी काम आनी चाहिए। लेकिन प्रबंधकों ने हमारी सुनी नहीं। हमने कहा कि कार्य-परिस्थितियाँ ठीक न होने से जो नुकसान होगा, उसकी क्षतिपूर्ति आपको करनी पड़ेगी। हमने उन्हें बताया कि ' फाल बैक वेजेस ' देना पड़ेगा। यानी काम हम करना चाहते हैं, पर काम नहीं मिल रहा है। काम तुम नहीं दे रहे हो, उससे मजदूरी

से हमला किया गया, तलवारों से। एक औरत यह सब देख रही थी। वह मुझ पर कूद पड़ी। मैं गिर गया। उस औरत की एक उँगली कट गयी। उसने बचा लिया। हम तो लोगों के ही भरोसे हैं। नैतिक हथियार सबसे बड़ा है, बस।

सवाल — लेकिन वर्ग संघर्ष और नैतिक हथियार ?

नियोगी — आज लोग यह भी नहीं समझ पा रहे हैं कि संजय गांधी के रास्ते से मुक्ति मिलेगी या किसी और रास्ते से। लोग यह तय नहीं कर पा रहे हैं कि आखिर कौन-सा रास्ता सही है। विभिन्न क्षेत्रों से परिवर्तन की जो भावना पैदा हुई है, वहाँ लोग अपने-अपने ढंग से कोशिश कर रहे हैं। हमें छोड़कर भी बहुत लोग हैं जो बहुत तरीकों से कोशिश कर रहे हैं। जब व्यापक जनता जाग जायेगी तब परिस्थितियाँ तय करेंगी कि कौन-सा रास्ता लोग अपनायें।

सवाल — भाकपा, माकपा और नक्सलवादियों के बारे में आपकी राय क्या है ?

नियोगी — भाकपा का जहाँ तक सवाल है, ये लोग तो अभी जनता से जुड़े हुए हैं नहीं। ये लोग जिस समाज के हैं, उसका प्रतिनिधित्व नहीं करते। माकपा की बात यह है कि उसके 'कैडर' के कुछ लोग जरूर जनता से जुड़े हुए हैं पर उनके नेता आज भी उस समाज का प्रतिनिधित्व नहीं करते।

सवाल — अब एक संगठन और बच गया — नक्सलवादी ?

नियोगी — नक्सलवादी तो कोई शब्द ही नहीं है। यह तो इस देश में एक कृत्रिम शब्द है। नक्सलपंथ जैसी कोई चीज नहीं है। लेकिन मार्क्सवाद-लेनिनवाद के नाम पर कुछ गुट जरूर काम कर रहे हैं। जहाँ तक उन्हें मैं जानता हूँ, उनके साथ अपना तालमेल मैं बैठा नहीं पाया, क्योंकि उनका जो तरीका है कामकाज का और सोचने का, उससे मुझे नहीं लगता कि भारत की जमीन और उसके उत्पादक वर्ग से वे लोग भी कोई विशेष जुड़े हुए हैं। उनके पास भी कोई स्पष्ट रूपरेखा नहीं है।

सवाल — आपको ऐसा नहीं लगता कि वामपंथी ताकतों में वे ही हैं, जो सबसे ज्यादा जुड़े हुए हैं उत्पादक वर्ग से ?

नियोगी — यह वामपंथी शब्द कहाँ से आया ? यह आया इंग्लैंड से। वहाँ संसद में बायीं तरफ मजदूर वर्ग के प्रतिनिधि बैठते थे। मजदूर वर्ग का यहाँ कोई प्रतिनिधित्व ही नहीं करता तो वामपंथी का मतलब ही क्या ? मैंने पहले ही कहा कि इस देश में जितने भी राजनैतिक दल हैं, उनमें से कोई भी उत्पादक ताकतों का प्रतिनिधित्व नहीं करता।

सवाल — जो मिल मजदूर हैं, जिस तरह भाकपा और माकपा का उन पर काफी असर है, वैसे ही, जिन्हें हम नक्सलपंथी कहते हैं, उनके प्रभाव क्षेत्र में आंध्र प्रदेश का बहुत सारा क्षेत्र, श्रीकाकुलम का इलाका, खासतौर से तमिलनाडु के धरमपुरी का, उत्तर-पूर्व का अच्छा-खासा इलाका है। वे सशस्त्र क्रांति के जरिये व्यवस्था में परिवर्तन लाना चाहते हैं। उन्हें आप क्या मानते हैं ?

नियोगी — आपकी कितनी जानकारी है, मुझे मालूम नहीं है और मेरी भी इस विषय में ज्यादा

सवाल – **आप सामाजिक परिवर्तन में मजदूरों की भूमिका सबसे आगे मानते हैं। शंका यह है कि भारत में विकास की जो प्रक्रिया है, वह पश्चिमी पद्धति पर है और मजदूर का जो क्रांतिकारी चरित्र होना चाहिए था, वह समय के साथ विकसित हुआ नहीं है, बल्कि वह प्रतिक्रांति की दिशा में जा रहा है। जैसे अमेरिका में मजदूरों ने कभी खास विरोध ही नहीं किया। वियतनाम युद्ध का विरोध वहाँ के छात्रों और युवकों ने किया। बड़ी कम्पनियों के मजदूर खामोश रहे। इसी तरह हमारे यहाँ भी बड़े कारखानों के मजदूरों में यानी जहाँ ज्यादा वेतन है, वहाँ वर्ग चेतना का अभाव देखने में आता है। तो इस मजदूर का नेतृत्व कुल मिलाकर कैसा होगा, सामाजिक परिवर्तन के दौर में ?**

नियोगी – भारत का आर्थिक विकास पश्चिमी पद्धति पर हो रहा है यह सही नहीं है। हमारे देश में न अमेरिकी पद्धति चल रही है, न रूसी पद्धति और न ब्रिटिश पद्धति। हमारे देश में भारतीय पद्धति ही चल रही है। आज भी सामंती पद्धति है। गाँवों में तो विशुद्ध सामंती व्यवस्था है। शहरों में मिली-जुली संस्कृति है। हाँ, कस्बों में पूँजीवादी प्रवृत्ति जरूर है।

सवाल – **सामंतवाद तो है पर पूँजीवाद भी अपने उच्चतम बिंदु तक जा रहा है। आप देखिये कि एशिया, अफ्रीका और तीसरी दुनिया के देशों में हमारी जो कम्पनियाँ पूँजी लगा रही हैं, वे बिल्कुल उसी तरह शोषण कर रही हैं, जैसे कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ भारत में शोषण करती हैं।**

नियोगी – ठीक है, पर यह नयी बात नहीं है। पहले भी था ऐसा। दरअसल हमारी जो अर्थव्यवस्था है, वह बहुत गड़बड़ है। गुलाम कहें तो भी मुश्किल है और आजाद कहें तो भी मुश्किल है।

सवाल – **सुना है कि आपने 20 हजार लोगों को एक साथ शराब पीना छुड़वा दिया। मैं समझता हूँ कि नेता का चाहे जितना नैतिक असर हो, लेकिन क्या 20 हजार लोग एक साथ शराब पीना छोड़ सकते हैं ? कहा जा रहा है कि आपके क्षेत्र में तो लोगों ने शराब पीना छोड़ दिया है, लेकिन आस-पास के क्षेत्रों में शराब की बिक्री बढ़ गयी है। वे वहाँ जाते हैं शराब पीने।**

नियोगी – यह बेबुनियाद प्रचार है कि आस-पास के इलाकों में शराब की बिक्री बढ़ गयी है। रही शराब छुड़ाने की बात तो यह कोई एक दिन की बात नहीं कि इधर ऐलान किया और उधर लोगों ने शराब छोड़ दी हो। राजहरा में एक लाख की जनसंख्या है और शराब की एक दुकान है। लोग आस-पास भी पीने जायें तो कम-से-कम 15-20 किलोमीटर उन्हें जाना पड़ेगा। यह कतई सम्भव नहीं है। पहले हमने हमारी यूनियन के नेताओं की ही शराब छुड़ायी। 31 पदाधिकारी थे यूनियन के। उनमें से सिर्फ दो ऐसे थे जो शराब नहीं पीते थे। पहले हमने उन 29 की शराब छुड़ायी। फिर धीरे-धीरे और लोगों की। महीनों लगे। अब करीब 30-40 हजार लोग शराब छोड़ चुके हैं। हम समय-समय पर डाक्टरों से शराब की बुराइयों पर भाषण करवाते हैं। रविशंकर विश्वविद्यालय

7. *गीता रामकृष्णन*

एवं एम. सुब्बू - तमिलनाडु राज्य निर्माण मजदूर यूनियन, मद्रास ; एवं

8. *शंकर गुहा नियोगी - छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा।*

साक्षात्कर्ता ने एक-एक करके वही प्रश्न सबके समक्ष रखे जिनमें से नियोगी के उत्तरों को यहाँ उद्धृत किया जा रहा है। — स.

सवाल — आपकी नजर में आज ट्रेड यूनियन आंदोलन के सामने कौन-सी प्रमुख समस्याएँ हैं ?

नियोगी — मुख्य समस्याएँ आर्थिक मुद्दों के आसपास केंद्रित हैं। असंगठित क्षेत्र की ट्रेड यूनियनों के लोग बहुत ही असुरक्षित जीवन जी रहे हैं। अगर वे इंटक के सदस्य नहीं हैं, तो अपनी नौकरी से हाथ धो बैठते हैं। यह असुरक्षा उन्हें मौजूदा व्यवस्था को स्वीकार करने पर मजबूर करती है। संगठित क्षेत्र में मैनेजमेंट द्वारा जो 'अग्रिम' दिया जाता है वह एक बड़ी समस्या है। त्यौहार, स्कूटर, मकान और अन्य अग्रिम वे ऋण हैं जिनको मजदूर के मासिक वेतन में से काटा जाता है। हर महीने वेतन में से होनेवाली इस कटौती के चलते मजदूर के हाथ उसकी दैनिक जरूरत की तुलना में काफी कम पैसा लग पाता है। इस तरह वह उधारी या और पैसे माँगते रहने के चक्कर में पड़ जाता है और उसका जीवन स्तर गिरता जाता है। ये अग्रिम लेना ही मजदूरों के लिए प्राथमिकता बन गयी है और यही अर्थवाद का सबसे घिनौना रूप है। इस अर्थवाद से यह भी स्पष्ट होता है कि किस तरह मजदूरों की भावनाओं के साथ खिलवाड़ करके साम्प्रदायिक दल उन्हें अपनी गिरफ्त में ले लेते हैं और साथ-साथ वे उन्हें और अधिक आर्थिक लाभ का आश्वासन भी देते रहते हैं। इस प्रकार के अर्थवाद के फलस्वरूप मजदूर अपना जुझारूपन खो बैठे हैं।

सवाल — भारत के श्रम कानूनों में हाल में किये गये परिवर्तनों को आप किस नजर से देखते हैं ?

नियोगी — हमारी अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों का असमान विकास ही आज हमारी अर्थनीति का केंद्रीय सवाल है। बहुत सारी समस्याएँ हैं जिनसे निपटना जरूरी है। उदाहरण के लिए, न्यूनतम मजदूरी का सवाल है। प्रत्येक उद्योग तथा हर इलाके की अलग परिस्थिति के अनुसार मजदूरी तय किये जाने पर चर्चा चल रही है। ठेका मजदूरी अधिनियम का खंड 10 है, जिसमें संशोधन की जरूरत है। इस संशोधन की जरूरत के बारे में सम्बंधित मंत्रियों को राजी कर लेने के बावजूद मजदूरों के पक्ष में कानून बनाये नहीं जाते। जो सुधार किये जाते हैं वे भी बहुत सी सीमाओं से बंधे होते हैं। उदाहरण के लिए, जब सरकार न्यूनतम मजदूरी की दर बढ़ाती है, तो वह इस पैसे को वापिस लेने के तरीकों को भी प्रोत्साहित करती है। उदाहरण के लिए, बिहार में शराब की 1,500 नयी दुकानें मुख्यतः धनबाद कोयला खदान क्षेत्र में खोली गयी

ट्रेड यूनियन नेता हड़ताल पर जाना नहीं चाहते हैं। उदाहरण के लिए, बम्बई की कपड़ा मिलों की हड़ताल को ही लें। वह तात्कालिक माँगों या मजदूरों को मिले राजनैतिक फायदों, दोनों ही मोर्चों पर असफल रही है। पिछले कुछ समय से कोई भी हड़ताल सफल नहीं हुई है क्योंकि उद्देश्यहीन उत्पादन के चलते हड़ताल अब एक हथियार नहीं रह गयी है।

सवाल – क्या मजदूर वर्ग आज अपनी ऐतिहासिक भूमिका निभा रहा है ? इसे समझायेंगे आप ?

नियोगी – मजदूर वर्ग को एक ऐतिहासिक भूमिका निभानी ही चाहिए, लेकिन ऐसा नहीं हो पा रहा है क्योंकि नेतृत्व को अलग तरह से काम करने के लिए मजबूर किया जाता है। मजदूर आंदोलन में अर्थवाद और उद्देश्यहीन पूँजी निवेश तथा उत्पादन, नेतृत्व को उस रास्ते पर बढ़ने से रोक रहे हैं जिस रास्ते पर चलने से मजदूर वर्ग को अपनी ऐतिहासिक भूमिका निभाने में मदद मिलेगी।

सवाल – ट्रेड यूनियन आंदोलन में आये बिखराव पर कैसे काबू पाया जा सकता है ?

नियोगी – मुझे लगता है कि मौजूदा बिखराव पर काबू पा लिया जायेगा। पहले हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच साम्प्रदायिक द्वंद्व था और आज पश्चिम बंगाल में माकपा और रिवोल्यूशनरी सोशलिस्ट पार्टी के बीच या महाराष्ट्र में माकपा और श्रमिक संघटना या कष्टकरी संघटना के बीच है। गुणात्मक तौर पर ये टकराव पिछले साम्प्रदायिक द्वंद्वों से अलग हटकर नहीं हैं क्योंकि दोनों ही नेतृत्व के बीच की लड़ाइयाँ हैं और इस प्रक्रिया में मजदूर वर्ग पिट जाता है। मजदूरों में और अधिक वर्ग चेतना पैदा करके इस बिखराव पर काबू पाया जा सकता है। यहाँ ऐसा हुआ है। मेरी गिरफ्तारी के बाद सरकार ने मेरे नाम से विभिन्न आदेश जारी करके हड़ताल खत्म करवाने की कोशिश की थी। परंतु मेरी अनुपस्थिति में भी हड़ताल जारी रही क्योंकि मजदूर उसे अपनी कार्रवाई मानते थे, न कि मेरी। दत्ता सामंत के नेतृत्व में प्रीमियर आटोमोबाइल्स की हड़ताल में भी ऐसा ही हुआ।

सवाल – ट्रेड यूनियन आंदोलन मुख्य रूप से आर्थिक माँगों और मजदूरों के काम से सम्बंधित मुद्दों तक ही सीमित रहा है। क्या फैक्ट्री गेट पर किया गया काम ही पर्याप्त है ? क्या इसमें कुछ और जोड़ने की जरूरत है ? किस प्रकार ?

नियोगी – ट्रेड यूनियन को मजदूरों की बस्तियों तक आना पड़ेगा क्योंकि ट्रेड यूनियन मजदूरों की जिंदगी का मात्र एक छोटा-सा हिस्सा भर नहीं है। बल्कि उसे मजदूरों की पूरी सामाजिक और सांस्कृतिक जिंदगी को प्रभावित करना होगा। अगर ट्रेड यूनियन मजदूरों की जिंदगी का एक अभिन्न अंग बन जाती है तो उनके बीच के विचारधारात्मक और राजनैतिक भेद मिट जायेंगे।

सवाल – जिस ट्रेड यूनियन से आप जुड़े हैं वह किस प्रकार की है ? क्या आपको लगता है कि जिस यूनियन का आप नेतृत्व करते हैं वह पर्याप्त है ? क्या आपके संगठन को किसी समस्या का सामना करना पड़ रहा है ?

मार्क्सवाद एक सृजनात्मक विज्ञान है

कलकत्ता के एक पत्रकार और संस्कृति-कर्मी कुशलदेव नाथ ने नियोगी का यह साक्षात्कार सन् 1990 के शुरू में लिया था। मूल बंगला में लिये गये साक्षात्कार का हिन्दी अनुवाद यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। — स.

सवाल — केंद्रीय सरकार में जो परिवर्तन हुआ है उसके बारे में आपका क्या मत है ?

नियोगी — नौवीं लोकसभा के चुनाव में लोगों ने परिवर्तन के लिए वर्तमान व्यवस्था के विरोध में अपना मत दिया है। उत्तर भारत से लेकर दक्षिण भारत तक यही स्थिति है।

सवाल — पश्चिम बंगाल में यह परिवर्तन क्यों नहीं हुआ ?

नियोगी — पश्चिम बंगाल में मूलतः दो कारणों से यह परिवर्तन नहीं हुआ। प्रथम, घीसिंग और दूसरा, ज्योति बाबू। पश्चिम बंगाल के अधिकांश लोग यह विश्वास करते हैं कि ज्योति बाबू का कोई विकल्प नहीं है। माकपा जो अपने आपको राष्ट्रीय पार्टी कहती है, मूलतः पश्चिम बंगाल के बंगालियों की भावनाओं को ध्यान में रखकर कार्य करती है। और घीसिंग के विरोध ने इन भावनाओं को और प्रबल किया है।

सवाल — केंद्र में राष्ट्रीय मोर्चा सरकार को स्थायित्व मिलेगा ?

नियोगी — स्थायित्व मिलेगा या नहीं, यह कहना कठिन है। फिर भी निकट भविष्य में इस सरकार के पतन की सम्भावना नहीं है। भाजपा और माकपा अपने-अपने स्वार्थों के लिए इसका समर्थन करती रहेंगी। विश्वनाथ प्रताप सिंह ने भी बहुत चतुराई के साथ पदभार सँभाला है। चुनाव के पहले विश्वनाथ प्रताप सिंह के बारे में ये बातें कही जा रही थीं कि वे अस्थिर बुद्धि वाले हैं, यहाँ तक कि प्रावदा[1] ने भी कहा था कि वे अस्थिर बुद्धि हैं। किंतु देखा जा रहा है कि ऐसे कथन गलत सिद्ध हुए। दरअसल, बहुत ही निपुणता और चतुराई के साथ वे (विश्वनाथ प्रताप सिंह) आगे बढ़ने की कोशिश कर रहे हैं। मंत्रिमंडल के गठन को देखते हुए यह स्पष्ट है।

सवाल — यह सरकार क्या कोई परिवर्तन ला पायेगी ?

नियोगी — चुनाव द्वारा नयी सरकार बनने के बाद भी जन-विरोधी व्यवस्था कायम है। हमारे देश में सभी समस्याओं की जड़ में यह व्यवस्था ही है। इस दृष्टि से कांग्रेस सरकार और राष्ट्रीय मोर्चा सरकार में कोई फर्क नहीं है। तब भी आज की परिस्थिति आंदोलन के लिए ज्यादा अनुकूल है। कारण यह है कि कांग्रेस समाज के जिस वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है वह वर्ग प्रतिक्रियावादी विचारधारा वाला है। विरोधियों पर मनमाने ढंग से आक्रमण करने में कांग्रेस अत्यंत निपुण है, परंतु वर्तमान राष्ट्रीय

---

[1] सोवियत समाचार पत्र।

में बंगाल में भी 'बंग मुक्ति मोर्चा' का गठन होना चाहिए। हमारे देश में लम्बे समय से चल रहे कम्युनिस्ट एवं जनतांत्रिक आंदोलनों में राष्ट्रीयता के प्रश्न की अवहेलना हुई है। इस प्रश्न की अवहेलना करके हमारे देश में परिवर्तन लाना सम्भव नहीं है।

सवाल – अब अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों को लिया जाये। पोलैंड, पूर्वी जर्मनी आदि के साथ पूर्वी यूरोप और चीन में पिछले जून में घटी घटनाओं के बाद सम्पूर्ण विश्व में एक आवाज उठी है कि मार्क्सवाद व्यर्थ हो चुका है। इसके बारे में आपकी क्या धारणा है ?

नियोगी – मार्क्सवाद व्यर्थ हो गया है, यह कहना गलत है। यह विश्व भर के बुर्जुआ लोगों द्वारा फैलाया गया दुष्प्रचार है। मार्क्सवाद एक सृजनात्मक विज्ञान है। मार्क्सवाद ही श्रमिक वर्ग एवं अन्य सभी मेहनतकश लोगों की मुक्ति का रास्ता है। आज के पूर्वी यूरोप या दूसरे समाजवादी राष्ट्रों की समस्या के पीछे मार्क्सवाद नहीं, वरन् वहाँ की कम्युनिस्ट पार्टियाँ हैं। इस विषय का थोड़ा विश्लेषण करने की जरूरत है। एक देश में, एक समाज में प्रारम्भिक क्रांति कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में हुई। इसके बाद नये समाज की स्थापना के पश्चात् इसी पार्टी को नेतृत्व देना पड़ा। द्वंद्वात्मक भौतिकवाद की दृष्टि के अनुसार कोई भी चीज या तो विकास करेगी या उसका क्षरण होगा। हम लोग सिर्फ विकास की दृष्टि से ही समस्या को देखते हैं। इसलिए जिस कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में एक क्रांति सफल होती है, क्रांति के पश्चात् उसी पार्टी के लिए एक नयी समस्या पैदा हो जाती है – व्यवस्था के संचालन की। हमें यह विश्लेषण करना होगा कि अभी तक जिसने सिर्फ संघर्ष का ही नेतृत्व किया था, क्या वे नयी समस्याओं का सामना करते हुए अपने सिद्धांतों पर चल पा रहे हैं या नहीं ? यहाँ भी उन्हें आगे बढ़ते रहने के लिए अपने-आप में एक विकासशील परिवर्तन लाना होगा। किंतु मुझे लगता है कि इसी बिंदु पर विभिन्न देशों की कम्युनिस्ट पार्टियाँ अटक गयी हैं। वे विकास से जुड़ी समस्याओं को, विशेषकर पार्टी के प्रति श्रमिक वर्ग के साथ-साथ आम जनता के लगाव को, समझने में और पार्टी के साथ उनका सम्पर्क बढ़ाने के क्षेत्र में अपनी सही भूमिका निभा पाने में असमर्थ रहीं, जिससे कई प्रकार की भ्रांतियाँ उत्पन्न हो गयीं।

एक मात्र माओ-त्से-तुंग ही इस समस्या को सही ढंग से समझ पाये थे। और इसीलिए उन्होंने श्रमिक वर्ग के नेतृत्व में क्रांति का आह्वान किया। सांस्कृतिक क्रांति के लिए आदर्श आधार को अगर ठीक से समझा जाये तो हम देख पायेंगे कि माओ ने कितने सही ढंग से इस समस्या को समझा था और इसके समाधान की बात भी की थी। समाजवादी समाज के निर्माण एवं समाजवादी गणतंत्र के विकास के लिए माओ ने सही दिशा दिखायी थी।

सवाल – सी. एम. एस. एस. की 'संघर्ष और निर्माण' की राजनीति के बारे में कुछ बतायें ?

नियोगी – समाज व्यवस्था में परिवर्तन लाने के लिए और अधिकार प्राप्त करने के लिए संघर्ष तथा छोटे-छोटे निर्माण, जो कि नये समाज के गठन के लिए एक नयी चेतना पैदा कर सकें, इसको लेकर हम प्रयोग कर रहे हैं। लेकिन यह याद रखना होगा कि शोषण

के समक्ष यह सिद्ध कर दिया है कि मशीनीकृत खदानों की तुलना में मैन्युअल खदानें लौह अयस्क की गुणवत्ता, मात्रा और उत्पादन की कीमत, सभी दृष्टि से श्रेष्ठ हैं। अतः खदानों का पूर्ण मशीनीकरण नहीं करना चाहिए। हमारे देश में मशीनीकरण की प्रक्रिया एक विध्वंसक प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया हिंसा के आधार पर शोषण की व्यवस्था को जारी रखने और उसे टिकाऊ बनाये रखने के लिए की जा रही है। छत्तीसगढ़ के लोगों को बेरोजगार करना मशीनीकरण की नीति का ही एक अंग है। इससे बंधुआ मजदूरों की संख्या बढ़ेगी और ठेकेदारों के माध्यम से सत्ता में बैठे लोग अपने स्वार्थों की पूर्ति करेंगे। शोषण-पूर्ण व्यवस्था की इसी प्रक्रिया के कारण शिवसेना व नक्सलवादी समूहों को पनपने का अवसर मिला है।

यह सब इसलिए हो रहा है चूँकि हमारे देश में दर्शन की गरीबी है, विचारधारा का अभाव है। विवेकानंद के बाद इस देश में कोई सांस्कृतिक विचारक पैदा नहीं हुआ और महात्मा गांधी के बाद कोई सामाजिक विचारक पैदा नहीं हुआ। इसलिए हमें अब अपनी राह खुद तय करनी होगी। जब तक हम साधारण महत्व के मुद्दों को विशेष महत्व के मुद्दों से जोड़कर नहीं देखेंगे, तब तक समस्या का वास्तविक हल नहीं निकल पायेगा। विचार की प्रक्रिया को निचले स्तर से शुरू करके जनवादी तरीके से सहमति विकसित करनी होगी, तभी व्यवस्था में बदलाव आ सकेगा। इस समय हर स्थान पर देशीपन की आवश्यकता है और यह विदेशी चीजों से नहीं आ सकता। गांधीजी ने समस्याओं के समाधान के लिए शांति का रास्ता दिखाया है। हम शांति के रास्ते को बेहतर मानते हैं। शांति उपाय है, क्रांति दृष्टिकोण है और विकास उद्देश्य है। हमें विनाश के कारणों पर चिंतन करना चाहिए और उनका मुकाबला कर उन्हें परास्त करना चाहिए। तभी हम सही मायने में विकास की ओर बढ़ सकते हैं। लेकिन हमें शांति के उपाय को नहीं भूलना चाहिए।

साम्यवादी विचारधारा में हर व्यक्ति को उसकी क्षमतानुसार दिये गये काम के बदले उसकी जरूरतों को पूरा करना राज्य का दायित्व माना गया था। लेकिन कार्ल मार्क्स ने यह नहीं सोचा था कि विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ आदमी की जरूरतों की परिभाषा बदल जायेगी। साम्यवादियों के समाजवादी विकास की पूरी प्रक्रिया पूँजीवादी व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष पर टिकी थी। लेकिन जब उन्होंने पूँजीवादी व्यवस्था को ध्वस्त करके नया ढाँचा बना लिया तब अंतर्विरोध पैदा हो गया। साम्यवादियों का लक्ष्य सबको रोटी, कपड़ा और मकान देना था। जब यह लक्ष्य हासिल हो गया तो वे व्यवस्थावादी हो गये। दरअसल सन् 1917 की क्रांति के बाद रूस में विरोधी विचार को भी प्रोत्साहित करना चाहिए था और विकल्प को सामने रखना चाहिए था। साम्यवादियों ने पूँजीवाद को तो अपना एकमात्र शत्रु मान लिया। लेकिन सामंतवाद पर प्रहार नहीं किया। इसीलिए पोलैंड में साम्यवादी व्यवस्था के ढहने पर चर्च का सामंतवाद हावी हो गया।

परिस्थितियाँ हमेशा बदलती रहती हैं। इसलिए आवश्यकतानुसार नये सिरे से विचारधारा को सुधारते रहना चाहिए और अपनी कार्यनीति में परिवर्तन करना चाहिए। ऐसा न करने से हमारे विचारों में शिथिलता आती है और विरोधाभास पैदा होता है। साम्यवादी विचारधारा एक वैज्ञानिक विचारधारा है। लेकिन नयी परिस्थितियों में नयी आवश्यकताओं के अनुसार सुधार न करने से हम गलत रास्ते पर चले गये। हमारे देश के साम्यवादी दलों ने अर्थनीति

वन संरक्षण के पक्ष में और पर्यावरण प्रदूषण के विरोध में सक्रिय हुआ और ये मुद्दे उनके संगठन की कार्यसूची में शामिल किये गये। ये विषय उन्होंने मुख्यतः तीन भागों में बाँटे – (क) वृक्ष और वन संरक्षण, (ख) वृक्षारोपण और (ग) वनों में कृषि उत्पादन।

उन्होंने बताया कि वृक्षों की अवैज्ञानिक कटाई की खबरें सुनते ही उनका संगठन वहाँ पहुँचकर वहाँ के लोगों को सचेत कर वृक्षों की कटाई के विरोध में आंदोलन विकसित करता है। अपने-अपने इलाकों में मनुष्यों और वृक्षों में एक रिश्ता स्थापित करने से इस तरह की गतिविधियों को विशेष सफलता प्राप्त हुई है। उनके संगठन ने वन संवर्धन के कार्य में स्वेच्छापूर्वक श्रमदान करके एक अभिनव उदाहरण पेश किया है। जब भी किसी इलाके में वन विभाग द्वारा वनों के विनाश की सूचना मिलती, नियोगी अपने साथियों के साथ दौड़कर वहाँ पहुँच जाते हैं। तत्पश्चात् किसी छुट्टी वाले दिन वहाँ वन महोत्सव का आयोजन किया जाता है। इस वन महोत्सव में स्थानीय लोगों के साथ मिलकर उनके साथी योगदान देते हैं। इस प्रकार सभी के सम्मिलित श्रम से उस इलाके में फिर से वनों के सृजन का काम सम्पन्न होता है। इस उपलक्ष्य में उस इलाके की लोक संस्कृति के अनुसार सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन किया जाता है। इस प्रकार स्थानीय लोगों और वहाँ के जंगल-जमीन के बीच के खोये हुए रिश्तों को फिर से जीवित किया गया है।

वन भूमि में अधिक अनाज पैदा करने के अनेक प्रयोग शुरू किये हैं। उन्होंने बताया कि वनों के पास रहने वाले लोग वनों को काटे बिना ही वहाँ अनाज और फलों का उत्पादन कैसे बढ़ा सकते हैं, जिससे उत्पादन के साथ-साथ रोजगार और आय में भी वृद्धि हो सके, इस दिशा में भी उनके संगठन ने काम किया है। उन्होंने बताया कि वनों से छेड़खानी किये बगैर वहाँ फसलें उगाने का काम भी उनके संगठन ने किया है। उदाहरण के लिए थोड़ी सी ही खुदाई करके तुअर (अरहर) की अच्छी फसल प्राप्त की। उन्होंने यह भी सोचा था कि वृक्षों की कतारों के बीच हल्दी और अदरक भी पैदा किया जाये। उन्होंने मुख्य रूप से बताया कि हमें अपने जीवन की आवश्यकताएँ प्रकृति से ही प्राप्त करना है। **इस प्रक्रिया में यदि हमने प्रकृति का संतुलन बिगाड़ दिया तो हमारा अस्तित्व ही समाप्त हो जायेगा।**

❑

(मूल बंगला से टुलटुल विश्वास द्वारा अनूदित एवं ' जलपाईगुड़ी साईंस एंड नेचर क्लब ' द्वारा प्रकाशित पत्रिका ' संज्ञान ' के नियोगी स्मृति अंक से संशोधित एवं साभार ; श्याम बोहरे के सौजन्य से।)

नियोगी — इन सभी सवालों पर मजदूर वर्ग का अपना सोच है जो शासक वर्ग के सोच से बिल्कुल भिन्न है। और उसी सोच के अनुसार हम सक्रिय रहे हैं। हम मेहनतकशों की जिंदगी से सम्बंध रखने वाले किसी भी सवाल पर तटस्थ रहने की बात को नकारते हैं। हम उस धर्मनिरपेक्षता के पक्ष में हैं जो मजदूरों और गरीबों के आपस में लड़ने के खिलाफ है, और आपसी सम्मान के आधार पर सभी धर्मों के लोगों के मानवीय रिश्तों को मजबूत करती है। राष्ट्रीय एकता का आधार है जनता। इस व्यवस्था में, बहुसंख्यक शोषित-पीड़ित जनता और हमारे लिए राष्ट्रीय एकता वह है जो जनता के हित में काम करे। उसकी आकाँक्षाओं, उसकी भाषा, संस्कृति, जीवन शैली वगैरह को न दबाये। इसलिए हमने छत्तीसगढ़ की मुक्ति के लिए ऐसे मुद्दे उठाये हैं, जो क्षेत्र की जनता की एकता और विकास का आधार बन सकें। प्रजातांत्रिक मूल्यों और जनवादी अधिकारों की लड़ाई तो मजदूर संगठनों के लिए बहुत महत्व रखती है, क्योंकि इस व्यवस्था में प्रजातांत्रिक मूल्यों को शासक वर्ग व पूँजीपतियों द्वारा लगातार कुचला जाता रहा है। गरीबों की अपने जीवन को बेहतर बनाने की कोशिशों को दबाया जाता रहा है। भिलाई में आज औद्योगिक क्षेत्र में चल रही लड़ाई इस बात का उदाहरण है। इज्जत से जीने के लिए, एक खुशहाल जीवन की दिशा में जाने के लिए, जनवादी अधिकारों के लिए लड़ना मजदूर संगठनों के लिए अनिवार्य हो जाता है।

❑

(नियोगी के घर से क्रांति गुहा नियोगी के सौजन्य से।)

संघर्ष से निकलती है जन कविता

विगत दो-तीन सालों में भिलाई आंदोलन के दौरान भिलाई, टेडेसरा, कुम्हारी और उरला के मजदूरों में से कई कलाकार उभरे हैं, जो खुद गीत लिखते हैं, गाते हैं। इन कलाकारों की कला में क्रांतिकारी दिशा लाने के उद्देश्य से नियोगी ने मई 1991 में राजहरा में दो-दिवसीय सांस्कृतिक प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया था। शिविर के अंतिम दिन नियोगी द्वारा की गयी चर्चा का सार डॉ. पुण्यब्रत गुण द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है। — स.

मजदूर आंदोलन एक कविता है, एक गीत है। यह कविता आंदोलन की कहानी बताती है, मजदूरों के दुःख-दर्द की गाथा सुनाती है, नये सपने दिखाती है, विजय की कल्पना सजाती है। संघर्ष

छत्तीसगढ़ के मजदूरों के पास नेतृत्व की कमी नहीं

नियोगी से 12 सितम्बर 1991 को दिल्ली में पत्रकार अनिल शुक्ल ने लम्बी बातचीत की थी। इस बातचीत का मूल पाठ यहाँ प्रस्तुत है। — स.

सवाल — दल्ली राजहरा में लगभग पंद्रह वर्ष तक काम करने के बाद आपने भिलाई क्षेत्र को आधार बनाने के लिए क्यों चुना ?

नियोगी — दरअसल, दल्ली राजहरा जाने से पहले मैं भिलाई इस्पात कारखाने में नौकरी करता था और वहीं के कर्मचारियों और तकनीशियनों के साथ मिलकर ट्रेड यूनियन में भी सक्रिय था। इस दौरान मुझे लगातार यह महसूस हो रहा था कि मैं मूल काम नहीं कर पा रहा हूँ। मूल काम से मेरा अभिप्राय मजदूरों को संगठित करने से है। इसी बीच नक्सलबाड़ी आंदोलन के प्रति मैं आकर्षित हुआ और तब 'नक्सली' समझ के मुताबिक मैं भी यही मानने लग गया था कि ट्रेड यूनियन संगठन केवल पूँजीवादी फ्रेम में ही काम कर सकते हैं, वही उनकी सीमा रेखा है। लिहाजा, आपात्काल से ठीक पहले मैं इस्पात संयंत्र छोड़कर छत्तीसगढ़ के ग्रामीण श्रमिकों और किसानों को संगठित करने की नीयत से काम करने लगा और आप जानते ही हैं कि इसके लिए मैंने दल्ली राजहरा क्षेत्र को चुना। तेरह-चौदह बरसों की मेहनत के बाद वहाँ स्थानीय स्तर पर एक सुदृढ़, जुझारू और विवेकवान नेतृत्व विकसित हो गया जिससे वहाँ के स्तर पर मेरा काम हल्का हो गया। तब मैंने भिलाई के औद्योगिक क्षेत्र में जमने और वहाँ नये तरीके का श्रमिक आंदोलन विकसित करने का फैसला किया, क्योंकि वहाँ ज्यादातर श्रमिक या तो असंगठित थे या फिर दकियानूस अथवा गैर-ईमानदार मंशाओं वाले नेतृत्व के साथ थे।

सवाल — क्या इस बार ट्रेड यूनियन के संदर्भ में 'पूँजीवादी फ्रेम' की अवधारणा आड़े नहीं आयी ?

नियोगी — नहीं .... (क्षणिक विराम) यह अवधारणा तो अस्सी का दशक शुरू होने से पहले ही बदल चुकी थी और इस बारे में मेरी स्पष्ट राय कायम हो चुकी थी कि न केवल ग्रामीण श्रमिकों, बल्कि आधुनिक उद्योगों के श्रमिकों को संगठित किये बिना, इस देश की किसी भी समस्या से निबटा नहीं जा सकता है।

सत्तर और अस्सी के दशक के भारत की तुलना आप चीन सरीखे उस देश से कैसे कर सकते हैं जहाँ बीस या तीस के दशक में न तो औद्योगिक केंद्र थे, न औद्योगिक श्रमिकों की बहुतायत, न संचार के अत्याधुनिक साधन और न ही केंद्रीकृत अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित सेना। आप यदि शहरों या वहाँ के श्रमिकों को भूलकर केवल गाँव की बात करेंगे तो यह वस्तुतः एक एकांगी समझ ही साबित होगी। इसलिए ट्रेड यूनियन आंदोलन को पूँजीवादी फ्रेम का आंदोलन भर मानने और उससे पल्लू झाड़ लेने की

सवाल — आपके खुले ऐलान की क्या प्रतिक्रिया हुई ?

नियोगी — हूबहू वही, जिसकी हमने कल्पना की थी। भिलाई और आस-पास के क्षेत्रों के उद्योगपतियों ने निरंतर बैठकें कीं और तय किया कि चाहे जो भी कीमत चुकानी पड़े, नियोगी और उनके लोगों को यहाँ घुसने नहीं देना है। उन्होंने न सिर्फ पुलिस और प्रशासन के पास जाकर अपना रोना रोया बल्कि यहाँ कार्यरत पुरानी ट्रेड यूनियनों के नेताओं की पूछ अचानक बढ़ गयी। उद्योगपतियों ने उन्हें ' समझाया ' कि यदि नियोगी यहाँ जम गया, तो हमारा जो नुकसान होना है वह तो होगा ही पर साथ ही तुम्हारा संगठन भी खत्म हो जायेगा।

जिन फैक्ट्रियों में श्रमिकों ने छमुमो से सम्बद्ध यूनियनों के साथ सम्बंधित होने का ऐलान किया, उन्हें धमकाया गया, प्रताड़ित किया गया और बहुतों को नौकरी से हटाने की कोशिशें भी की गयीं (कुछ को हटा भी दिया गया)। हमारे विरुद्ध उद्योगपतियों का पहला ही हमला पूरी ताकत से किया गया था। दरअसल, वे लोग इस समय को भिलाई में हमारा प्रवेश मान रहे थे, जिसे वे पूरी ताकत से ' खारिज ' कर देना चाहते थे। उन्हें यह नहीं मालूम था कि भिलाई में हमारा प्रवेश तो डेढ़ साल पहले ही हो चुका है, यह समय तो हमारे ऐलान मात्र का है। लिहाजा अपनी पूरी शक्ति का इस्तेमाल करने के बावजूद वे हमें उखाड़ नहीं सके। यह हमारी रणनीति की विजय थी और उनकी रणनीति की पराजय।

सवाल — भिलाई में आपको किस तरह की श्रमिक समस्याएँ मुख्य रूप से दिखायी दीं ?

नियोगी — देखिये, शोषण तो यहाँ बहुत गम्भीर रूप में मौजूद था। भिलाई, दुर्ग, उरला, सभी जगह स्थायी चरित्र वाले उद्योग होने के बावजूद वहाँ ठेकेदारी प्रथा का ही बोलबाला था। श्रमिकों के स्थायीकरण की चिंता उद्योगपतियों को नहीं थी। पूर्व में कार्यरत श्रमिक संगठन और श्रम विभाग के अधिकारी भी यह भूल चुके थे कि देश में ' ठेकेदारी प्रथा उन्मूलन अधिनियम ' नाम का कोई कानून भी है। परिणामस्वरूप ठेकेदारी के नाम पर न तो जीवनयापन लायक वेतनमान के बाबत कोई पूछनेवाला था और न ही काम की समय-सीमा की किसी को परवाह थी। जो लोग भिलाई के औद्योगिक ' व्याकरण ' से परिचित नहीं हैं, उनके लिए यह कल्पना कर पाना नामुमकिन है कि ऐसी जगह जहाँ देश का सर्वाधिक प्रतिष्ठित सरकारी इस्पात संयंत्र हो (जहाँ प्रत्येक श्रमिक कानूनों और सुविधाओं का पालन होता है), वहीं उससे जुड़े निजी उद्योगों में अठारहवीं शताब्दी के यूरोप की बर्बर औद्योगिक परम्पराएँ चलती हैं।

दूसरे, यहाँ औद्योगिक दुर्घटनाओं की दर काफी ज्यादा थी। कोई महीना ऐसा नहीं होता था जब काम के दौरान दुर्घटनाओं की चपेट में एक-दो श्रमिकों की जान न जाती हो। जहाँ तक घायलों की संख्या का ताल्लुक है, छह से दस तक हर महीने का औसत है और उद्योगपति हर मामले को श्रम विभाग तथा पुलिस के साथ मिल-जुलकर रफा-दफा कर देते थे। इस सब को रोकना, उपयुक्त सुरक्षा उपायों की व्यवस्था करना और फिर भी दुर्घटना हो जाये तो उचित मुआवजे का प्रबंध करना —

हमारे लिए यह एक कामयाब आंदोलन है, जबकि उनके लिए नाकामयाब।

सवाल — आपने अभी महिलाओं के बीच संगठन की आवश्यकता की बात कही है। महानगरों और बड़े शहरों में ही नारीवादी (फेमिनिस्ट) आंदोलनों की बात पिछले एक-डेढ़ दशक में खूब जोर-शोर से चली है। आप इन दो प्रकार के आंदोलनों (या संगठनों) में क्या अंतर या समानता पाते हैं ?

नियोगी — (लम्बी चुप्पी) . . . . आपने बहुत आवश्यक सवाल पूछा है। इन दोनों प्रकार के आंदोलनों में अवश्य ही कुछ समानताएँ हैं जिन पर मैं बाद में बात करूँगा, पहले अंतर की बात की जाये। बड़े शहरों में चलने वाले जिन नारीवादी (फेमिनिस्ट) आंदोलनों का आपने जिक्र किया है, उनके नेतृत्व में प्रायः उच्च मध्यमवर्गीय महिलाएँ होती हैं। इनका सोच और कार्यक्षेत्र आमतौर पर उच्च मध्यमवर्ग या ज्यादा-से-ज्यादा मध्यमवर्ग की महिलाओं की समस्याओं के एक पक्ष तक सीमित होता है। फिर भी इन संगठनों ने दहेज हत्याओं, दहेज उत्पीड़न या किन्हीं मामलों में महिलाओं को न्यायालय में न्याय दिलाने के क्षेत्र में प्रशंसनीय भूमिका अदा की है। लेकिन इन संगठनों या इनके नेतृत्व की सबसे बड़ी कमी यह रही है कि ये महिला समस्याओं को सारे समाज की मूलभूत समस्याओं से अलग-थलग काटकर देखते हैं। यह सच है कि शताब्दियों से विश्व के अधिकतर हिस्सों में पुरुष-प्रभुत्व का विचार ही हावी रहा है, लेकिन जिस समाज का आधार ही सामाजिक और आर्थिक शोषण पर टिका हो, वहाँ शोषण के अलग-अलग रूपों को लेकर आप अलग-अलग लड़ाई लड़ेंगे, तब तो समाज बदलने से रहा। यह तो सबकी एकजुटता और मिली-जुली लड़ाई से ही सम्भव होगा। फिर पुरुषप्रधान सत्ता से मुक्ति के लिए जरूरी है कि महिलाएँ उत्पादन की प्रक्रिया में बराबर की हकदार बनें और वह भी बराबरी के वेतन पर। मजेदार बात यह है कि उत्पादन की प्रक्रिया में सर्वाधिक भागीदारी श्रमिक वर्ग की महिलाओं की होती है, उसकी तुलना में बहुत कम मध्यमवर्ग की और न के बराबर उच्च मध्यमवर्ग की। पर दुर्भाग्य से इस प्रकार के अधिकतर संगठनों के सोच और कार्यक्षेत्र की प्राथमिकता इस क्रम के ठीक उलट होती है। उधर पुरुषप्रधान सत्ता के विरोध की अधकचरी समझ के कहीं-कहीं ऐसे हास्यास्पद नतीजे दिखते हैं कि लगता है लड़ाई पुरुषप्रधान सत्ता के खिलाफ न होकर, हर पुरुष के ही खिलाफ लड़ी जा रही हो।

सवाल — इसे जरा स्पष्ट करेंगे ?

नियोगी — अब आप जरा छत्तीसगढ़ महिला मुक्ति मोर्चा और उसके नेतृत्व की महिलाओं के सोच और कार्यक्षेत्र को लीजिये। दल्ली राजहरा में आज कोई भी श्रमिक अपनी पत्नी को पीट नहीं सकता। कोई ठेकेदार या सुपरवाईजर किसी महिला श्रमिक के शारीरिक शोषण की कल्पना भी नहीं कर सकता। लेकिन पुरुषों के विरुद्ध किसी भी घृणा का कोई माहौल नहीं है। चाहे दल्ली राजहरा की खदान हो या भिलाई के उद्योग, महिला और पुरुष साथ मिलकर मजदूरी करते हैं और मिलकर संघर्ष भी करते हैं।

संगठनों का एक ' फ्रंट ' बनाने का विचार नेपथ्य में चला गया और यह कोशिश होती नजर आयी कि जितने भी जन संगठनों के लोग आये हैं, उन्हें झटपट ' लिबरेशन ' गुट के झंडे तले समेट लिया जाये। मुझे यह धारणा उचित नहीं लगी और यह भी लगा कि इससे वास्तव में कुछ होने वाला नहीं है, लिहाजा मैं इससे अलग हो गया।

सवाल — **आज की तारीख में नक्सली गुटों में एक ओर आई. पी. एफ. सरीखी संसदीय धारा है तो दूसरी तरफ ' पीपुल्स वॉर ग्रुप ' सरीखी गैर-संसदवादी हिंसावाद की धारा। आप लोग तुलनात्मक रूप से स्वयं को किसके अधिक निकट खड़ा पाते हैं ?**

नियोगी — देखिये, संसदवाद और सशस्त्र संघर्ष — किसी भी क्रांति के लिए ये मसले कार्यनीति का सवाल हैं या रणनीति का, असली मुद्दा यह है। वस्तुतः इन दोनों ही चीजों के बीच समयानुसार जिस प्रकार के लचीलेपन की जरूरत किसी भी कम्युनिस्ट क्रांतिकारी पार्टी या गुट में होनी चाहिए , दुर्भाग्य से इन दोनों संगठनों में यह चीज गायब है। इसे ज्यादा स्पष्ट करें तो यह कहा जा सकता है कि दोनों संगठन दो ' अति ' पर जी रहे हैं।

सवाल — **आपको कभी ' सुधारवादी कम्युनिस्ट ', कभी ' अहिंसावादी कम्युनिस्ट ' और कभी ' गांधीवादी ट्रेड यूनियन नेता ' के नाम से पुकारा जाता है। ' हिंसा ' और ' अहिंसा ' के बारे में आपकी वास्तव में अवधारणा क्या है ? क्या आप इसे स्पष्ट करेंगे ?**

नियोगी — ' हिंसा ' या ' अहिंसा ' — यह तो माध्यम होता है , लक्ष्य नहीं। सवाल लक्ष्य का है, वह यदि स्पष्ट हो तो माध्यम के बारे में भ्रम की स्थिति नहीं बनती। यह सही है कि छमुमो का पिछले पंद्रह-सोलह वर्षों का आंदोलन मोटे तौर पर एक अहिंसक आंदोलन रहा है। इस आधार पर यदि मुझे या मोर्चे को अहिंसक कहा जाये तो यह आधारहीन सम्बोधन नहीं होगा। लेकिन इससे ज्यादा महत्वपूर्ण सवाल यह है कि मोर्चे का या मेरा अंतिम लक्ष्य क्या है।

मुझ सहित मोर्चे के तमाम नेतृत्वकारी साथियों की यह समझ है कि इस देश की तमाम समस्याओं का निदान है जनवादी क्रांति। स्वाभाविक है कि यह जनवादी क्रांति अकेले छत्तीसगढ़ तक तो सीमित होगी नहीं। देशभर में इसके लिए व्यापक और परिपक्व जनवादी आंदोलन चलाने होंगे। जब यह आंदोलन अपने चरम बिंदु पर होंगे, तो उस समय की परिस्थितियों से यह तय हो जायेगा कि क्रांति करने के लिए हिंसा की जरूरत है या नहीं, है तो कितनी और कैसे ? आंदोलन को देशव्यापी स्तर पर विकसित करने और व्यापक बनाने के पहले ही आप हथियार तानना शुरू कर देंगे, तब तो सारा कुछ ' फिस्स ' हो जायेगा। नेतृत्व का काम है कि वह जनवादी तौर-तरीकों से आंदोलन को शिखर तक पहुँचाये और फिर जनता को स्वयं महसूस होने दे कि परिवर्तन हथियार के बिना सम्भव है या हथियार की मदद से। ' हिंसा ' या ' अहिंसा ' की मोर्चे या मेरी अवधारणा को इस परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए।

यूनियन और आंदोलनात्मक गतिविधियों की शुरूआत आपने किस तरह से की ? इस प्रश्न का जवाब देते हुए नियोगी अतीत में खो गये थे। तब वह भी मजदूरों के साथ पत्थर काटते थे। उस समय मजदूरों को पता तक नहीं था कि सच्चा जनवादी संगठन क्या होता है। लेकिन धीरे-धीरे मजदूर सब जानते चले गये। तब भी नियोगी को यह जरूरी नहीं लगता था कि केंद्रीय ट्रेड यूनियनों से हटकर मजदूरों की सचमुच अपनी कोई यूनियन होनी चाहिए, क्योंकि पहले तो समझ ही ऐसी थी कि ट्रेड यूनियन आंदोलन मजदूरों को अर्थवाद के गड्ढे में गिराने के समान है। यह बात सन् 1972-73 के पहले की है।

यूनियन के कामकाज की उनकी विशिष्ट शैली का ही परिणाम था कि उन्हें एक ही साथ वामपंथी-दक्षिणपंथी से लेकर मध्यमार्गी धारा की आलोचना का शिकार होना पड़ा।

नियोगी इस शैली के खिलाफ थे कि एक डाक्टर को लड़ाई के लिए बंदूक थमा दी जाये। उन्होंने भोजपुर के नक्सलवादी आंदोलन के अनुभव की याद दिलाते हुए बताया कि वहाँ एक डाक्टर को हथियार थामे देखकर उन्हें लगता था कि डाक्टर अपने पेशेगत चरित्र के साथ आंदोलन से ज्यादा दिनों तक जुड़ा रह सकता है। अपनी इसी समझ के कारण उन्होंने मजदूरों के पक्ष में डाक्टर, तकनीशियन से लेकर विभिन्न पेशे के लोगों का समर्थन प्राप्त किया। विकल्प की बात को वह जमीनी स्तर पर उतारने में विश्वास करते थे। हर क्षेत्र में वह विकल्प प्रस्तुत करते थे, ताकि मजदूरों में विकल्प का सपना साकार होने का विश्वास लगातार और मजबूत होता रहे। कोई नयी तकनीक आती तो वह सरकार और प्रबंधन की राय के विरोध में तकनीक के नुकसान से मजदूरों को अवगत कराते और मजदूरों के लिए सही तकनीक को पेश करते।

नियोगी ने अपनी इसी कार्यशैली की विशिष्टता का उल्लेख करते हुए कहा था कि उनकी यूनियन ने अपने लिए ट्रक और गाड़ियाँ खरीदीं। लेकिन यह सब मजदूरों ने अपने बलबूते पर किया। यूनियन इस धारणा की विरोधी है कि मजदूर अपनी यूनियन को आधुनिक नहीं बना सकते। उन्होंने कहा कि अस्पताल ही नहीं, जगह-जगह स्कूल भी खोले गये, ताकि मजदूरों के बच्चों को शिक्षा दी जा सके। छह प्राइमरी स्कूलों से इसकी शुरूआत की गयी थी। उनका इरादा था कि होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण पद्धति के स्कूलों की तरह शिक्षा दी जाये। यूनियन द्वारा समर्थित एक गैरेज भी है जहाँ प्रत्येक वर्ष लगभग पचास ड्राइवर व मैकेनिक तैयार किये जाते हैं।

आंदोलन के विकास और कार्यशैली की चर्चा करने के दौरान ही नियोगी से यह पूछा था कि क्या इस आंदोलन को संचालित करने के लिए दूसरी कतार तैयार की जा रही है ? क्या आपके सफल नेतृत्व के बाद कोई और नेतृत्व भी उभरता हुआ दिखायी दे रहा है ? इस सवाल के जवाब में नियोगी ने कहा " **वारिस तो सम्पत्ति वाले लोग खोजते हैं, लेकिन आंदोलन में वारिस पूरी पीढ़ी होती है।** उसी पीढ़ी पर यह दायित्व जाता है कि वह आंदोलन की विरासत का विकास करे।" वे इस सम्बंध में कहते हैं कि किसी खास नाम और नेतृत्व की चर्चा करने की उन्हें जरूरत महसूस नहीं होती। पूरी पीढ़ी तैयार हो रही है। और इसके साथ ही यह भी सत्य है कि आनेवाली पीढ़ियाँ बराबर बेहतर नेतृत्व प्रदान करती हैं। उनका भी यही भरोसा है। नियोगी का यह भरोसा कितना सही है, यह तो आनेवाले दिनों में ही देखा जायेगा। लेकिन उनका यह विश्वास ही बताता है कि उन्होंने अपने आंदोलन में एक ऐसी पीढ़ी का निर्माण किया है जो न्याय चाहती है, असमानता दूर करना चाहती है, बेहतर जीवन का सपना संजोती है।

का विकास होगा और यहाँ की जनता समृद्ध होगी। परंतु इस विकास से छत्तीसगढ़ को क्या मिला ? यहाँ की जनता को इससे क्या लाभ हुआ ? ये सबसे महत्वपूर्ण सवाल हैं। भिलाई आज एक प्रमुख औद्योगिक केंद्र है। परंतु यहाँ से केवल 80 किलोमीटर दूर बस्तर है जो सम्भवतः देश का सबसे पिछड़ा इलाका है। वहाँ महिलाओं को पहनने के लिए कपड़े का एक छोटा-सा टुकड़ा ही मुहैया हो पाता है जो उनके शरीर को ठीक से ढक भी नहीं पाता। बच्चे तो नंगे ही रहते हैं। खाने के लिए चावल मिल सकता है, यह उनके लिए एक सपना है। उन्हें किसी मोटे अनाज पर ही गुजारा करना पड़ता है। कभी-कभी तो उन्हें, जंगलों से जो कुछ बीनकर लाते हैं, उसी पर निर्भर रहना पड़ता है। वे 'झूम' खेती करते थे, परंतु अब जंगल विभाग उन्हें यह भी नहीं करने देता।

भिलाई से लगे हुए इलाके में कई सहायक उद्योग हैं जहाँ 25,000 मजदूर कार्यरत हैं। वहाँ हमारा ट्रेड यूनियन आंदोलन सक्रिय है। उन्हें अक्सर निर्धारित न्यूनतम वेतन भी नहीं मिलता और जब वे इसकी माँग करते हैं तो उनकी निर्दयतापूर्वक पिटाई की जाती है। मजदूरों पर अत्याचार तो आम बात है। उद्योगपतियों ने तो अपनी निजी सेनाएँ तक खड़ी कर ली हैं। हमारे ट्रेड यूनियन आंदोलन में आने के पहले एटक, इंटक और सीटू यहाँ की ट्रेड यूनियन की गतिविधियों में संलग्न थे। परंतु वे चल नहीं पाये।

हमने पहले लौह अयस्क नगरी दल्ली राजहरा में छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ स्थापित किया। उस समय खदान में काम करने वाले मजदूर केवल 2 या 3 रुपये मजदूरी प्रति दिन पाते थे। किंतु आज उन्हें 72 रुपये प्रति दिन मजदूरी मिल रही है। ट्रेड यूनियन आंदोलन में आने के कुछ दिनों के अंदर ही हमने महसूस किया कि भारत में जो ट्रेड यूनियनवाद है, वह भारतीय यथार्थ और जरूरतों के अनुरूप विकसित नहीं हुआ है। हमने देखा कि जब मजदूरों की मजदूरी 2 रुपये से बढ़कर 30 रुपये, बाद में 50 रुपये और उससे भी अधिक हो गयी, तब शराब ठेकेदारों की तो चाँदी हो गयी। तब हमने अपने-आप से सवाल किया कि क्या हम मजदूरी बढ़ाने की लड़ाई केवल इसलिए लड़ रहे हैं ताकि मजदूर शराबी हो जायें ? तब हमने शराबबंदी अभियान छेड़ा। हमारे इस अभियान का बहुत लोगों ने विरोध किया, माकपा तक ने। उनका कहना था कि शराब तो मजदूर वर्ग का पर्याय है, तो आप शराबबंदी की बात कैसे कर रहे हैं ? परंतु हम एकदम स्पष्ट थे कि हमारा संघर्ष व कुर्बानी मजदूरों के जीवन की बेहतरी के लिए है, न कि उन्हें बर्बाद करने के लिए। शीघ्र ही हमने महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों का मुद्दा उठाया और इससे जो मूलतः ट्रेड यूनियन आंदोलन था, वह एक सामाजिक आंदोलन में बदल गया।

सवाल -- विस्तार से बताइये कि यह परिवर्तन कैसे आया ?

नियोगी -- नशाबंदी अभियान इसकी शुरूआत थी। उसके बाद हमने दूसरे मुद्दों पर ध्यान दिया। हमने देखा कि अस्पताल के अभाव में प्रसव के समय बहुत-सी महिलाओं की मृत्यु हो जाती थी या उनके नवजात शिशु खत्म हो जाते थे। अतः हमने एक स्वास्थ्य केंद्र की शुरूआत की जो धीरे-धीरे एक पूर्ण अस्पताल में विकसित हो गया। हमने नारा

के बाहर हो गयी है। केवल आतंक के लिए आतंक और बलात् लूटमार तो वहाँ के जीवन का अंग बन गयी है। हम अपने को उसके साथ नहीं जोड़ सकते। असम में उल्फा प्रारम्भ में कुल मिलाकर आतंकवादी नहीं था। उसने नशाबंदी एवं मालिकों व उनके दलालों द्वारा चाय बागान के मजदूरों का शोषण सरीखे सामाजिक मुद्दों को उठाया था। परंतु उल्फा पर बढ़ते हुए हमलों और केंद्र सरकार के उनकी मदद के लिए आगे न आने के कारण उल्फा का प्रजातंत्र पर से विश्वास ही हिल गया। इस प्रक्रिया में अतिवादी लोगों को शक्ति मिली और मध्यमार्गी कमजोर होते गये और अंततः पृष्ठभूमि में चले गये। आज असम में भी उल्फा का प्रमुख उद्‌देश्य हिंसा फैलाना बन गया है।

हमारे आंदोलन में आज 25,000 मजदूर हैं। हम पिछले एक साल से अपनी क्रय-शक्ति बढ़ाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। यदि हमारी क्रय-शक्ति नहीं बढ़ेगी तो स्वरोजगार में लगे व्यक्ति अपना सामान किसे बेचेंगे ? परंतु हमारे आंदोलन को कुचला जा रहा है। हम कितनी और देर तक लड़ सकते हैं ? अधिक-से-अधिक एकाध वर्ष और। यदि तब तक मामला हल नहीं हुआ तो वर्तमान नेतृत्व पिट जायेगा। फिर नया नेतृत्व सामने आयेगा जो शायद कहे कि प्रजातांत्रिक संघर्ष से कुछ भी हासिल नहीं किया जा सकता।

सवाल — **यदि आपकी माँगें पूरी नहीं हुईं तो छत्तीसगढ़ आंदोलन शांतिपूर्ण और प्रजातांत्रिक नहीं रहेगा, क्या आपको यह डर लगने लगा है ?**

नियोगी — निश्चित हाँ। इसीलिए तो हम भारत के राष्ट्रपति से मिलने दिल्ली आये हैं। आपने अभी तक नहीं सुना होगा कि किसी ट्रेड यूनियन नेता को मजदूरों के बुनियादी संवैधानिक अधिकारों की माँग करने राष्ट्रपति के पास आना पड़ा हो। किसी भी मजदूर आंदोलन में ऐसी बात सुनने में नहीं आयी है। परंतु हमने बहुत सावधानी से इस पर मनन किया। हमारी इच्छा है कि हम इस तथ्य को प्रकाश में लायें कि ट्रेड यूनियन बनाने और अपनी माँगों को शांतिपूर्वक और प्रजातांत्रिक तरीके से पूरा कराने का हमारा अधिकार है, इसीलिए हम यह कर रहे हैं। परिवर्तन की यह क्रमगत प्रक्रिया विश्वव्यापी है। परंतु यदि आप इस बात पर अड़े हुए हैं कि इस क्रमगत प्रक्रिया से सुधार एवं परिवर्तन नहीं आने देंगे तो परिवर्तन क्रांति से आयेगा।

सवाल — **आपने शायद राष्ट्रपति से यह पूछा है कि क्या सरकार ने यह तय कर लिया है कि लोगों की आवाज तब तक नहीं सुनी जायेगी जब तक कि वे आतंकवाद को नहीं अपनाते ?**

नियोगी — मैंने राष्ट्रपति से पूछा कि लोगों की समस्याओं को क्या तब तक स्वीकारा नहीं जायेगा जब तक कि वे हिंसा न करने लगें ? मैंने केवल लोगों की समस्याओं को 'स्वीकार कर लेने' की बात कही थी। यदि आज पंजाब में 'समस्या का अस्तित्व' स्वीकारा गया है तो इसीलिए कि वहाँ लोग हिंसक तरीकों को अपना रहे हैं। परंतु चूंकि हमारा आंदोलन प्रजातांत्रिक ढाँचे के अंदर संवैधानिक अधिकारों और श्रम कानूनों को लागू

सवाल — सरकार कौन-सी भाषा समझती है ?

नियोगी — सरकार तब तक नहीं समझती जब तक कि उसकी व्यवस्था और मशीनरी ठप्प नहीं कर दी जाती।

सवाल — यदि आपके अब तक के शांतिपूर्ण और प्रजातांत्रिक तरीके परिणाम प्राप्त करने में असफल हो जाते हैं तब आप क्या करेंगे ?

नियोगी — जन आंदोलन में पर्याप्त गति आ चुकी है, इसे अब न तो मध्य प्रदेश सरकार रोक पायेगी और न ही केंद्र सरकार। हम देख चुके हैं कि जब भी जन आंदोलनों को बलपूर्वक दबाने की कोशिश की गयी है, तब उनकी गति में और अधिक तेजी आयी है। हमारा प्रयास होगा कि चाहे कुछ भी हो हमारा आंदोलन शांतिपूर्ण रहे, फिर भी यह जुझारू आंदोलन रहेगा। मुझे भरोसा है कि कोई भी सरकार हमारे जुझारूपन को दबा नहीं सकती। औद्योगिक श्रमिकों के दायरे के बाहर भी हमारी शक्ति विकसित हुई है। सभी दुकानदार, मध्यमवर्गीय लोग और क्षेत्र के गरीब लोग हमारे साथ हैं।

सवाल — आपने जुझारूपन और हिंसा में अंतर बताया है। आप इन दोनों को एक दूसरे से अलग कैसे रखेंगे ?

नियोगी — हमारा आंदोलन इस मायने में सुरक्षात्मक है कि हम अपने आत्मसम्मान की रक्षा के लिए संघर्ष कर रहे हैं, जिसे हमारे संवैधानिक हकों के साथ हमसे छीना जा रहा है। इस प्रक्रिया में यदि हमारे ऊपर हमला हुआ तो हम स्वयं की, अपने आत्मसम्मान की और अपने अधिकारों की रक्षा में अपने पूरे संसाधन झोंक देंगे। जुझारू आंदोलन का यही मतलब है। हिंसक आंदोलन तो वह है जिसमें लोग आक्रामक हो जाते हैं और बदला लेने के उद्देश्य से उन पर चोट करते हैं, जो उन्हें नुकसान पहुँचाते हैं। हिंसक आंदोलन में अंततः हिंसा ही अपने-आप में साध्य बन जाती है। परंतु हमारा उद्देश्य हमेशा सामाजिक परिवर्तन लाना रहेगा। यदि आवश्यकता हुई तो हम सड़कें और रेल लाइनें रोकेंगे, काम रोक देंगे और पुलिस बैरकों में चले जायेंगे और उन्हें अपने ऊपर गोली चलाने देंगे। यह सब जुझारू आंदोलन में शामिल होगा।

सवाल — शायद आप अपनी जिंदगी में अपने जुझारू आंदोलन को हिंसा से मुक्त रख पायें, परंतु क्या यह तब भी ऐसा रह सकेगा जब आप दृश्य-पटल पर नहीं होंगे ?

नियोगी — अपने बीच में हम अक्सर इसकी चर्चा करते रहते हैं। हम हथियारों या बाहुबल के जोर पर कुछ ' दिलवा देने ' का विरोध करते हैं। यह और बात होगी यदि लोग स्वतःस्फूर्त ढंग से हथियार उठा लें, परंतु हम ' पकी-पकायी रोटी दिलवा देने ' का काम नहीं करते। एक अलग ही संदर्भ में पश्चिम बंगाल की कम्युनिस्ट सरकार यही धंधा करती है। लोगों के लिए यह ठीक नहीं है, क्योंकि लोग यदि अपने हक स्वयं अपनी शक्ति से नहीं ले पाते, तब जो भी उन्हें हिंसक या अन्य तरीकों से दिलवाया गया है उसे सुरक्षित भी नहीं रख सकेंगे। इस प्रवृत्ति से हिंसा और आतंकवाद को बढ़ावा मिलेगा। अतः हमारे आंदोलन का उद्देश्य लोगों में चेतना जगाना है, जिससे जो उनका सही हक है उसे आगे आकर हासिल कर सकें।

और फिर आप पूँजीपतियों की तरह बातें क्यों कर रहे हैं ? इस पर वे बोले, "मैंने तो उनसे पैसा नहीं लिया।" मैंने कहा, "मैंने तो कभी भी यह आरोप नहीं लगाया।" वे इतने भ्रमित हैं कि सत्य का सामना ही नहीं कर सकते।

जहाँ तक राम का सवाल है, तो राम ने मध्य प्रदेश में भाजपा का साथ छोड़ दिया है। रही रोटी की बात, तो वह मध्य प्रदेश में उपलब्ध ही नहीं है। आवश्यक वस्तुओं के लिए इतनी लम्बी लाइन लगती है कि गरीबों की तो बात छोड़िये, मध्यम वर्ग भी हतोत्साहित हो रहा है।

सवाल — आप भाजपा और कांग्रेस दोनों के शासनों में जेल में रहे हैं। क्या आपके साथ उनके व्यवहार में किसी तरह का अंतर रहा ?

नियोगी — मेरी प्रारम्भिक गिरफ्तारियों के समय कांग्रेस सरकार द्वारा मेरे साथ बुरा व्यवहार किया गया था, परंतु उस समय हमारी यूनियन बहुत छोटी थी। यह तो मानना पड़ेगा कि सन् 1977 के बाद मध्य प्रदेश में जेल की स्थितियों में सुधार हुआ है। परंतु अभी हाल में भाजपा शासन में गिरफ्तारी के दौरान मेरे साथ सबसे बुरा व्यवहार हुआ। उन्होंने मुझे दो माह जेल में रखा। सभी जानते हैं कि मुझे एक टाँग में तकलीफ है। परंतु वे जानबूझकर पूरे समय मुझे हताश करने के लिए एक जगह से दूसरी जगह ले जाते रहे। मुझे तीन-तीन जिलों की अदालतों में पेश होना पड़ा। वे मुझे सुबह जल्दी ले जाते थे, दिन भर भूखा रखते और देर रात वापिस लाते थे। यह सिलसिला कई दिनों तक चलता रहा। इस तरह उन्होंने मुझे शारीरिक रूप से काफी प्रताड़ित किया। परंतु इसके बावजूद वे मुझे हथकड़ी लगाने का साहस नहीं जुटा सके, चूँकि तब उन्हें जनता के आक्रोश का सामना करना पड़ता।

सवाल — छत्तीसगढ़ मुख्यतः आदिवासी इलाका है। क्या आपको लगता है कि आदिवासी संस्कृति को सुरक्षित रखने के नाम पर इस क्षेत्र के एक बहुत बड़े हिस्से के विकास को जानबूझकर अनदेखा किया गया है ?

नियोगी — यह तथाकथित आदिवासी संस्कृति आपको पाँच सितारा होटलों में देखने को मिलेगी, जिनकी दीवारें अधनंगी आदिवासी महिलाओं की तस्वीरों से सजायी जाती हैं। या फिर देखने को मिलेगी बड़े-बड़े उद्योगों के प्रशासनिक भवनों की कृत्रिम सजावट में। आदिवासी संस्कृति, उनकी बोली, कला एवं संगीत सभी कुछ मर रहा है। औद्योगीकरण और शहरीकरण के कारण शहरों में बड़ी तादाद में आदिवासी महिलाएँ वेश्यावृत्ति की शिकार हो गयी हैं। आदिवासी इतनी बुरी हालत में हैं कि यह पूछो कि उनके साथ क्या नहीं हुआ ? हर बार जब कोई महामारी फैलती है तब वे कुत्ते-बिल्लियों की तरह मरते हैं और कोई उनकी चिंता नहीं करता। कई ऐसी आदिवासी जातियाँ हैं जिनकी जनसंख्या घट रही है, फिर भी नसबंदी करके उनकी जाति को मिटाया जा रहा है। आदिवासी संस्कृति सुरक्षित नहीं रखी गयी है। आदिवासी संस्कृति कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसे आप अजायबघर में रखकर सुरक्षित रख सकें।

४.

जन आंदोलन एवं संगठन

जन कवि एवं मजदूर साथी फागूराम यादव
द्वारा रचित
आंदोलन का लोकप्रिय गीत

मिल-जुल के सबो झन शोषण ला टारबो . . . .

चल मजदूर चल किसान, देश के हो महान,
तोर संग-संग मा चलही बनिहार।
मिल-जुल के सबो झन शोषण ला टारबो,
छत्तीसगढ़ दाई के हावे रे गोहार – 2।

ये छत्तीसगढ़ भुँइया मा हम जनम धर के आये हन,
जनम धर के आये हन, जनम धर के आये हन।
धन हमर भाग ये महतारी सुघर पाये हन,
महतारी सुघर पाये हन, महतारी सुघर पाये हन।
एकर गोदी मा पलेहन करबो दूध के सुधान।
मिल-जुल के सबो झन शोषण ला टारबो . . . .।

खाके कसम अत्याचार ला भगाबो,
अत्याचार ला भगाबो, अत्याचार ला भगाबो।
इंकलाब जिंदाबाद के नारा ला लगाबो,
नारा ला लगाबो, नारा ला लगाबो।
इंकलाब जिंदाबाद, जिंदाबाद, जिंदाबाद,

मजदूर वर्ग की प्रतिष्ठा की लड़ाई

गणेशराम चौधरी

भिलाई इस्पात संयंत्र के स्थायी मजदूरों के साथ-साथ ठेकेदारी व सहकारी समितियों[1] के मजदूरों के लिए भी बोनस कानून लागू था। इस्पात संयंत्र के कर्मचारियों ने पहली बार सन् 1974 में उत्कृष्ट उत्पादन देने की एवज में भिलाई में 20% बोनस की माँग की। चूँकि दल्ली राजहरा की खदानें इसी संयंत्र की बंधक खदानें हैं, इसलिए दल्ली राजहरा में भी इस माँग ने जोर पकड़ा। यहाँ के ठेका व सहकारी समितियों के मजदूरों ने इस माँग को लेकर कई जुलूस एवं प्रदर्शन आयोजित किये।

अंततः इंटक एवं एटक की मान्यता प्राप्त स्थानीय यूनियनों ने '8.33% और रु. 100/- अतिरिक्त' के आधार पर समझौता कर लिया। उस समय भी ठेका एवं समितियों के खदान मजदूरों को 'रु. 100/- अतिरिक्त' के लाभ से वंचित रखा गया। इस समझौते से ही खदान मजदूरों में इन यूनियनों के प्रति अविश्वास के अंकुर प्रस्फुटित होने लगे थे। सन् 1975-76 में आपातकाल के कारण बोनस देने पर रोक लग चुकी थी। इसके बावजूद संयंत्र के स्थायी कर्मचारियों एवं विभागीयकृत खदान मजदूरों को प्रबंधन ने सन् 1975 और सन् 1976 में प्रोत्साहन राशि स्वरूप क्रमशः रु. 160/- और रु. 200/- वितरित किये। इस बार भी ठेका व समितियों के खदान मजदूरों को कुछ भी लाभ नहीं दिया गया। लेकिन इंटक एवं एटक दोनों यूनियनों द्वारा इन खदान मजदूरों को ही आंदोलन के प्रत्येक चरण में अगुवा मजदूरों के रूप में सबसे आगे रखा जाता था। यूनियन के प्रमुख नेताओं से उपरोक्त भेदभाव के सम्बंध में कुछ भी पूछने पर हमेशा यह बता दिया जाता था कि यह मुद्दा पंच-निर्णय हेतु पड़ा है।

संयंत्र के प्रबंधन की विभागीयकृत एवं ठेका-समिति के मजदूरों के बीच निरंतर भेदभाव की नीति तथा मान्यता-प्राप्त यूनियनों के नेतृत्व की मूक दर्शक बने रहने की प्रवृत्ति खदान मजदूरों में हलचल पैदा कर रही थी। इसी क्रम में आपातकाल के अंतिम चरण के दौरान 1 मार्च 1977 को प्रबंधन, इंटक-एटक यूनियनों और ठेकेदारों ने स्थायी व विभागीयकृत मजदूरों के लिए रु. 308/- तथा ठेका-समिति के खदान मजदूरों के लिए मात्र रु. 70/- के बोनस के समझौते पर हस्ताक्षर किये।

2 मार्च 1977 को दोनों यूनियनों ने खदानों में कार्यरत मजदूर मुखियाओं को बुलाकर उपरोक्त समझौते की जानकारी दी। सन् 1974 से इन यूनियनों के नेतृत्व के प्रति यह जो अविश्वास का अंकुर मार्च 1977 में यह जानकारी पाकर ऐसे नेतृत्व के प्रति नफरत के वट वृक्ष का रूप धारण कर चुका था। अब मजदूरों को उनकी प्रतिष्ठा के साथ यूनियन नेतृत्व द्वारा खिलवाड़

[1] कई वर्षों से दल्ली राजहरा की खदानों में मजदूरों की अनेक सहकारी समितियाँ कार्यरत रही हैं। ये सहकारी समितियाँ भी खदानों में लोहा पत्थर निकालने ('रेजिंग') और टिप्पर ट्रकों में लादने ('लोडिंग') का ठेका भिलाई स्टील प्लांट से लेती हैं। वर्तमान में ऐसी सात सहकारी समितियाँ अपने को सी. एम. एस. एस. से सम्बद्ध मानती हैं। — स.

दिया जाता था।

- मैनेजमेंट व ठेकेदारों की लौह अयस्क उत्पादन एवं अन्य मामलों में मनमानी चलती थी। इसमें मज़दूरों का कोई भी नियंत्रण नहीं था।
- खदानों की व्यवस्था दिन-प्रतिदिन बिगड़ती जा रही थी।
- इस बिगड़ती व्यवस्था के फलस्वरूप मजदूरों की औसत दैनिक आय गिर चुकी थी, चूँकि उन्हें अक्सर बिना काम लौटना पड़ता था।
- मजदूरों को मकान या झोपड़ी के लिए कोई सहायता नहीं मिलती थी, जबकि स्थायी और विभागीयकृत कर्मचारियों को संयंत्र की ओर से पक्के क्वार्टर मिलते थे।

मई 1977 के संघर्ष के दौरान मजदूरों की एकजुटता, उनके अदम्य साहस और संगठित शक्ति के सामने मैनेजमेंट व ठेकेदारों को झुकना पड़ा। 31 मई को सी. एम. एस. एस. के साथ उनका पहला समझौता सम्पन्न हुआ। इस समझौते में झोपड़ी मरम्मत भत्ते के रूप में रु. 100/- की राशि एवं ' आयडिल वेजेस ' के स्थान पर ' फाल बैक वेजेस ' की सुविधाएँ मजदूरों नें हासिल कीं।[1] ' फाल बैक वेजेस ' के माध्यम से मजदूरों ने उत्पादन की लगाम अपने हाथ में ले ली और व्यवस्थित उत्पादन के लिए आवश्यक हालात बनाने हेतु मैनेजमेंट व ठेकेदारों को विवश किया।

अपनी प्रतिष्ठा की लड़ाई में मजदूर विजयी तो जरूर हुए परंतु यह विजय केवल सैद्धांतिक साबित हुई। जब समझौते के अनुसार मजदूर झोपड़ी मरम्मत भत्ते के भुगतान के लिए 1 जून 1977 को मैनेजमेंट या ठेकेदारों के दफ्तरों तक गये, तो उन्हें वहाँ कैशियर की जगह सशस्त्र पुलिस मिली। उसी दिन उत्तेजित मजदूरों ने मैनेजमेंट व ठेकेदारों द्वारा समझौते की शर्तों को पूरा न करने के मुद्दे को लेकर एक विशाल रैली निकाली। इसके जवाब में 2 जून की रात को प्रशासन ने नियोगीजी को गिरफ्तार कर लिया और उसके बाद मजदूरों पर दो बार गोली चालन किया। ग्यारह मजदूर शहीद हुए और नियोगीजी को पैंतीस दिन तक दुर्ग जेल में बंद रखा गया। इस सब के बावजूद अंत में मजदूरों ने अपने दृढ़ संकल्प एवं संगठित शक्ति का परिचय देते हुए और शांतिपूर्ण ढंग से उक्त सभी माँगों पर विजय प्राप्त करके ही दम लिया।

❑

[1] काम न मिलने पर ठेका या दिहाड़ी मजदूरों को ' आयडिल वेजेस ' के नियम के अनुसार 100% दैनिक मजदूरी और ' फाल बैक वेजेस ' के नियम के अनुसार दैनिक मजदूरी का 80% भुगतान किया जाता है।

के बीच दो बिंदुओं पर समझौता। पहला, इंटक-एटक के स्थानीय नेतृत्व द्वारा पूर्व मे स्वीकारे गये रु. 70/- के बोनस को नामंजूर करते हुए मजदूरों ने बोनस का अंतिम फैसला होने तक उससे कम , यानी रु. 50/- के बोनस को स्वीकृति दी।[1] दूसरा, इंटक-एटक यूनियनों की जगह मजदूरों द्वारा अपनी नयी यूनियन बनाने एवं उसके माध्यम से न्यायपूर्ण बोनस पाने की लड़ाई को आगे बढ़ाने के अधिकार को मैनेजमेंट ने मान्यता दी।

- 24/3 – मजदूर काम पर लौटे। मजदूरों एवं मुखियाओं का प्रतिनिधिमंडल दल्ली राजहरा से नियोगी को मिलने दानीटोला क्वार्ट्ज़ाइट खदान के पास उनके घर पहुँचा। मजदूरों द्वारा नियोगी से आंदोलन को मदद देने का आग्रह।[2]

  25/3 – अगले दिन नियोगी दल्ली राजहरा में ; डी. के. एम. एस. एस. (दल्ली खदान मजदूर सहकारी समिति) के दफ्तर में आयोजित मुखियाओं की बैठक में उपस्थित (श्री बंशीलाल साहू इसी समिति में मुखिया थे)।[2]

अप्रैल 1977

- 29/4 – छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ (सी. एम. एस. एस.) का इन्दौर में पंजीयन। प्रथम अध्यक्ष – बंशी लाल साहू ; प्रथम महामंत्री – रायसिंह ; प्रथम संगठन सचिव – शंकर गुहा नियोगी। पहली कार्यकारिणी में दो महिला पदाधिकारी भी (दोनों उपाध्यक्ष)। कैम्प न. 1 में एक झोपड़ी में यूनियन के अस्थायी कार्यालय की शुरूआत।

मई 1977

- 4/5 – एटक नेतृत्व द्वारा अपने सदस्य माइनिंग मेट, फोरमैन एवं वे-ब्रिज क्लर्क आदि की हड़ताल आयोजित। इसका उद्देश्य खदानों में काम रुकवाकर नवगठित सी. एम. एस. एस. के मजदूरों को दैनिक आय से वंचित करना।

  5/5 – क) काम न दिये जाने पर यूनियन द्वारा ' आयडिल वेजेस ' (बिना काम बिठाये जाने या निष्क्रिय किये जाने पर मजदूरी) की एवं झोपड़ी मरम्मत हेतु बाँस-बल्ली की सहायता राशि (रु. 100/-) की माँग।

  ख) एटक की उक्त ' हड़ताल ' के चलते यूनियन ने अपनी माँगों को लेकर धरने-प्रदर्शनों का सिलसिला शुरू किया।

  31/5 – राजहरा गेस्ट हाऊस में सहायक श्रम आयुक्त के सामने उक्त दोनों माँगों पर मैनेजमेंट एवं ठेकेदारों के साथ यूनियन का पहला लिखित करारनामा।

---

[1] मजदूरों का उद्देश्य केवल इंटक-एटक नेतृत्व द्वारा प्रबंधन के साथ किये गये निर्णय को ठुकराकर उससे अपनी स्वतंत्रता जाहिर करना था। चूंकि इस वक्त प्रबंधन रु. 70/- से अधिक बोनस देना मान नहीं रहा था, अतः मजदूर प्रतिनिधिमंडल ने उससे कम राशि स्वीकारना बेहतर समझा और संघर्ष जारी रखने का फैसला किया।

[2] इन प्रसंगों का आँखों देखा हाल पृ. 589-592 पर दर्ज है।

भी आंशिक नियंत्रण की शुरूआत।

अगस्त 1977

- भिलाई स्टील प्लांट की अन्य बंधक खदानों – दानीटोला (जिला दुर्ग) की क्वार्ट्ज़ाइट, नंदिनी (जिला दुर्ग) की चूना पत्थर एवं हिर्री (जिला बिलासपुर) की डोलोमाइट खदानों – के मजदूरों ने भी लाल-हरे झंडे को स्वीकारा।

- 22/8 – यूनियन ने अपने दृष्टिकोण के आधार पर मजदूरों की माँगों को 8-सूत्री माँग पत्र का रूप दिया। इनमें दानीटोला, नंदिनी एवं हिर्री खदान मजदूरों की माँगें भी शामिल। सहायक श्रम आयुक्त (रायपुर) एवं स्टील प्लांट प्रबंधन को दि. 07.09.77 से हड़ताल का नोटिस। विभागीयकरण, ग्रेच्युइटी एवं अस्पताल की सुविधाओं की माँगें भी जुड़ीं।

सितम्बर 1977

- 7/9 – यूनियन के 8-सूत्री माँग पत्र पर दल्ली राजहरा, दानीटोला, नंदिनी एवं हिर्री खदानों के लगभग 16,000 मजदूरों ने हड़ताल शुरू की। सभी खदानों का उत्पादन बंद।

- 9/9 – यूनियन के मुखपत्र के रूप में 'साप्ताहिक मितान' के प्रकाशन की शुरूआत (प्रथम अंक में प्रकाशित नियोगी के दो वक्तव्य पृ. 273-274 पर)।

अक्तूबर 1977

- नवगठित 'खदान-इस्पात मजदूर एकता कमेटी' के आह्वान पर भिलाई के कई स्थायी इस्पात मजदूरों ने भी खदान मजदूरों के संघर्ष कोष में सहायता दी और एकजुटता प्रदर्शित की।

- स्टील प्लांट प्रबंधन बिहार के 'बड़ा जमडा' क्षेत्र से चार गुना अधिक कीमत पर लौह अयस्क खरीदने पर मजबूर। क्वार्ट्ज़ाइट भी निजी खदानों से अधिक कीमत पर मँगाना शुरू। डोलोमाइट का भंडार भी समाप्ति पर।

- 29/10 – प्रबंधन और यूनियन के बीच समझौता वार्ता शुरू।

नवम्बर 1977

- 2/11 – समझौता वार्ता सम्पन्न। दल्ली राजहरा, दानीटोला, नंदिनी एवं हिर्री खदानों के 16,000 मजदूर लाल-हरे झंडे के नेतृत्व में 56 दिन की हड़ताल के बाद विजयी। उनकी कई माँगें मंजूर।

दिसम्बर 1977

- यूनियन की जुझारू उपाध्यक्षा कामरेड कुसुमबाई की बी. एस. पी. के राजहरा अस्पताल में डाक्टरों की लापरवाही के कारण मृत्यु। मजदूरों में डाक्टरों पर आक्रोश।

- बी. एस. पी. द्वारा दल्ली समूह की खदानों के पूर्ण मशीनीकरण का घोषित उद्देश्य – बेहतर किस्म के लौह अयस्क का अधिक, सस्ता और स्थायी उत्पादन। परोक्ष उद्देश्य – सी. एम. एस. एस. के जुझारू नेतृत्व में संघर्षरत मजदूरों की बड़े पैमाने पर छँटनी। यूनियन द्वारा मशीनीकरण रुकवाने का निर्णय; साथ में प्रबंधन को मैन्युअल (मानवीकृत) खदानों से उम्दा गुणवत्ता और कम कीमत के लौह अयस्क के पर्याप्त उत्पादन वाला अर्द्ध-मशीनीकरण का वैकल्पिक प्रस्ताव (देखिये पृ. 399-400)।
- 12/6 – हिर्री डोलोमाइट खदानों में यूनियन के संघर्ष के फलस्वरूप 2,700 ठेका मजदूरों का विभागीयकरण (देखिये नियोगी का लेख, पृ. 120-121)।
- यूनियन से सम्बद्ध एवं खदानों में कार्य हेतु गठित मजदूर सहकारी समितियों के काम को व्यवस्थित एवं लोकतांत्रिक बनाने की प्रक्रिया को यूनियन के काम में महत्व।
- परम्परागत ' आठ घंटों की यूनियन ' की जगह ' चौबीस घंटों की यूनियन ' की कल्पना को साकार रूप देने की पहलकदमी।
- यूनियन द्वारा 17 विभागों में काम की व्यवस्था जिसमें मजदूरों के समग्र जीवन के प्रति सरोकार प्रतिबिम्बित (विभागों की सूची के लिए देखिये पृ. 377)। इस प्रकार मजदूरों द्वारा सत्ता का विकल्प खड़ा करने का प्रयास।
- यूनियन का पहला वृहत विभागवार चुनाव सम्पन्न।
- मजदूरों द्वारा यूनियन की मदद से विभिन्न बस्तियों में प्रायमरी स्कूलों की स्थापना।

1979

- दल्ली पहाड़ी पर अयस्क को परिष्कृत करने के लिए पूर्णतः स्वचालित ' क्रशिंग प्लांट ' की स्थापना एवं काम की शुरुआत। यूनियन द्वारा पूर्ण मशीनीकरण के विकल्प में ' अर्द्ध-मशीनीकरण ' के प्रस्ताव के पक्ष में संघर्ष तेज।
- 20/4 – बी. एस. पी. और यूनियन के बीच ऐतिहासिक समझौता – यूनियन का ' अर्द्ध-मशीनीकरण ' का प्रस्ताव दो वर्ष के प्रयोग बतौर मंजूर और मजदूरों की छँटनी न करने का आश्वासन।
- ठेकेदारों एवं उनके पिट्ठुओं द्वारा महिला मजदूरों के साथ छेड़खानी एवं बलात्कार की घटनाओं में भारी कमी।
- आंदोलन में किसानों व खेत मजदूरों को जोड़ने और संगठन को गाँवों तक फैलाने के उद्देश्य से छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा (छमुमो) का गठन।
- छमुमो के तहत महिला मुक्ति मोर्चा का गठन।

- 27/9 – खदानों की सुरक्षा के लिए तैनात केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल (सी. आई. एस. एफ.) के जवानों द्वारा एक आदिवासी युवती के साथ बलात्कार की कोशिश के विरोध में मजदूरों द्वारा प्रदर्शन करने पर बल के ही जवानों द्वारा गोली चालन। एक लकड़हारा साथी शहीद (पृ. 468-469 पर एक रपट के कुछेक अंश)।

- छमुमो द्वारा विभिन्न जनवादी व प्रगतिशील संगठनों को जोड़कर राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा गठित करने की पहलकदमी।

- 12-13/12 – पटना (बिहार) में राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा का पहला सम्मेलन एवं झारखंड मुक्ति मोर्चा के सांसद श्री शिबु सोरेन की अध्यक्षता में प्रथम कार्यकारिणी गठित (इस अवसर पर पारित प्रस्ताव पृ. 459-461 पर)।

- विधानसभा चुनाव में डौंडी लोहारा क्षेत्र से छमुमो के उम्मीदवार श्री जनकलाल ठाकुर कांग्रेस के बाद दूसरे स्थान पर।

- छमुमो की संगठन क्षमता से प्रभावित होकर आस-पास के छोटे-छोटे उद्योगों एवं अन्य खदानों के मजदूरों द्वारा लाल-हरे झंडे तले आने की शुरूआत। संगठन का फैलाव बालोद की राइस मिलों से बिलासपुर जिले की बाराद्वार खदान तक।

- शराबबंदी अभियान की सफलता के फलस्वरूप मजदूरों ने बैंकों में नये खाते खोले और उनके द्वारा जमा पूँजी में उल्लेखनीय वृद्धि, गाँवों में मजदूरों द्वारा जमीनें खरीदी गयीं और दल्ली राजहरा के दुकानदारों की बिक्री बढ़ी। परंतु नियोगी मजदूरों में निजी सम्पत्ति के प्रति बढ़ते हुए आकर्षण और अंकुरित हो रही सामंती प्रवृत्ति से चिंतित।

- शराब ठेकेदारों के माफिया द्वारा छमुमो और इसके नेताओं को कत्ल करने तक की धमकियाँ।

1981

- 'नवाँ अंजोर' सांस्कृतिक मंच का गठन एवं उसके द्वारा छत्तीसगढ़ भर में सांस्कृतिक कार्यक्रम। सन् 1986 तक सक्रिय[1]।

- 11/2 – राष्ट्रीय सुरक्षा कानून के तहत शंकर गुहा नियोगी और तत्कालीन यूनियन अध्यक्ष सहदेव साहू गिरफ्तार। नियोगी सागर जेल में।

- अपने नेताओं की रिहाई के लिए संघर्ष कर रहे मजदूरों और प्रशासन के बीच भीषण तनाव एवं यूनियन के खिलाफ अनेक कठोर गैर-लोकतांत्रिक कदम।

- गिरफ्तारी के लगभग एक हफ्ते बाद राज्य शासन द्वारा यूनियन से सम्बद्ध सभी खदान सहकारी समितियाँ भंग। इसके फलस्वरूप खदानों में उत्पादन भी अस्त-व्यस्त

---

[1] 19 दिसम्बर 1992 से नवाँ अंजोर दल फिर से सक्रिय हुआ।

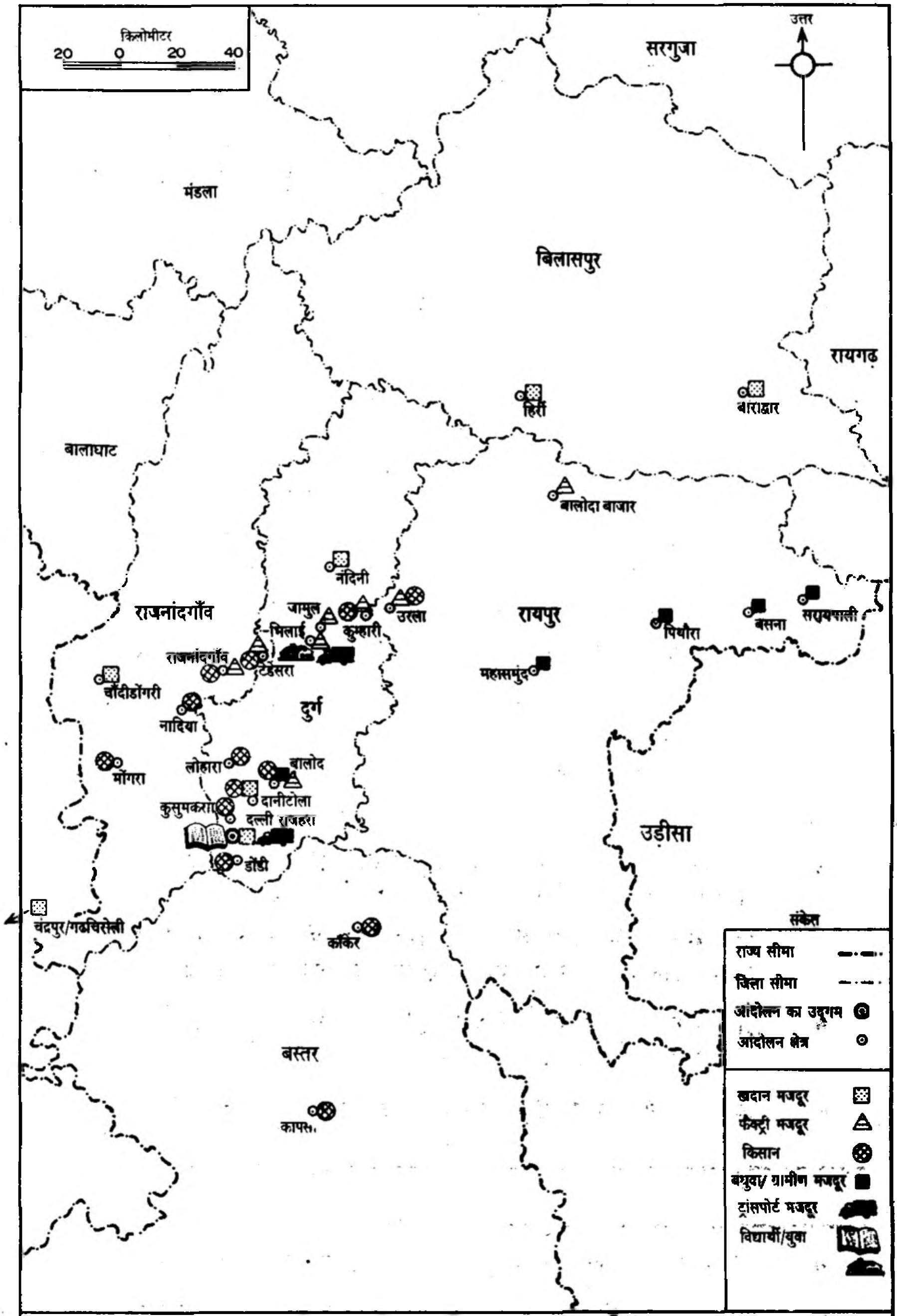

आंदोलन में शामिल जन समुदाय

युवा मेकेनिकों को एक विकल्प देते हुए यूनियन के मार्गदर्शन में ' शहीद गैरेज एवं ट्रेनिंग सेंटर ' की स्थापना। एक युवा इंजीनियर द्वारा तकनीकी मार्गदर्शन।

- अप्रैल दूसरा सप्ताह – पूर्व केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री व अखिल भारतीय नशाबंदी परिषद् की अध्यक्षा डॉ. सुशीला नैयर का दल्ली राजहरा में मजदूर आम सभा में भाषण एवं यूनियन के शराबबंदी अभियान को समर्थन।

- 18/4 – शराब माफिया द्वारा अखिल भारतीय नशाबंदी परिषद् की दल्ली राजहरा शाखा के अध्यक्ष एवं यूनियन के शराबबंदी अभियान के समर्थक श्री बाबूलाल शर्मा को ट्रक से कुचलकर मार देने की कुचेष्टा। पुलिस द्वारा साधारण दुर्घटना के रूप में दर्ज।

- यूनियन दफ्तर के पीछे ' अपने जंगल को पहचानो ' अभियान के तहत जंगल लगाने की शुरूआत (देखिये नियोगी का लेख, पृ. 232-233)।

- किशोर भारती (जिला होशंगाबाद) एवं विदूषक कारखाना (जिला शहडोल) की संयुक्त पहल पर म. प्र. में कार्यरत स्वयंसेवी संगठनों एवं गैर-दलीय ट्रेड यूनियनों की तीन बैठकों (क्रमशः जनवरी, अप्रैल व अगस्त में) के दौर में छमुमो की भागीदारी और उसके द्वारा नये रिश्ते खोजने का प्रयास। दूसरी बैठक में नियोगी स्वयं उपस्थित।

- जिला राजनांदगाँव में ग्राम नादिया के कबीरपंथी मठ के महंत द्वारा मठ की भूमि पर खेती कर रहे छोटे किसानों को बेदखल करके भूमि हड़पने का प्रयास। किसानों द्वारा मदद के आग्रह पर छमुमो के नेतृत्व में महंत के खिलाफ संघर्ष की शुरूआत।

- बालोद और आस-पास के ग्रामीण मजदूरों को संगठित करके ' छत्तीसगढ़ ग्रामीण श्रमिक संघ ' की शुरूआत।

- अक्तूबर – दल्ली राजहरा में ' अखिल भारतीय इस्पात मजदूर समन्वय समिति ' का सम्मेलन जिसमें सी. एम. एस. एस. के अलावा प्रोग्रेसिव लेबर यूनियन (दुर्गापुर), प्रोग्रेसिव फ्रंट (बोकारो) व छत्तीसगढ़ श्रमिक संघ (भिलाई) ने भाग लिया।

  नवम्बर – उक्त ' समन्वय समिति ' की केंद्रीय समिति की बोकारो में आयोजित बैठक में नियोगी व साथियों की भागीदारी (नियोगी के भाषण का अंश, पृ. 275)।

- स्वास्थ्य, मशीनीकरण, शराबबंदी, महिलाओं की भूमिका आदि विषयों पर श्रृंखलावार प्रदर्शनियों के द्वारा जन शिक्षण।

1983

- 17/3 – विधानसभा में भारी राजनैतिक दबाव के बाद जून 1977 गोलीकांड पर गठित न्यायमूर्ति रज्जाक जाँच आयोग की रपट राज्य शासन द्वारा प्रसारित (देखिये

- भिलाई स्टील प्लांट के 'स्लैग डम्प यार्ड' में लौह पिंड काटने-ढोने वाले ठेका मजदूरों का 'छत्तीसगढ़ श्रमिक संघ' के नेतृत्व में आंदोलन।
- 31/10 – तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी की हत्या के संदर्भ में भड़के सिख-विरोधी दंगों में यूनियन द्वारा दल्ली राजहरा, राजनांदगाँव और अपने अन्य प्रभाव क्षेत्रों में सिखों को पूर्ण सुरक्षा (देखिये एक रपट, पृ. 71-72)।

1985

- डौंडी लोहारा विधान सभा क्षेत्र से छमुमो की ओर से का. जनकलाल ठाकुर विधायक चुने गये।
- भोपाल के गैस पीड़ितों के संघर्ष में छमुमो का समर्थन। जन स्वास्थ्य केंद्र, भोपाल, के लिए शहीद अस्पताल ने डाक्टर एवं अन्य सहायता भेजी।
- रायपुर जिले के पिथौरा, सरायपाली, बसना एवं महासमुंद क्षेत्रों में उच्चतम न्यायालय के आदेशों पर विमुक्त हजारों बंधुआ मजदूरों के पुनर्वास के लिए संघर्ष को छमुमो का समर्थन।
- 25/5 – दानीटोला क्वार्ट्ज़ाइट खदान के मजदूर, दल्ली राजहरा खदान मजदूरों के तुल्य वेतनमानों की माँग को लेकर हड़ताल पर।
- 16/8 – दल्ली राजहरा की मजदूर बस्तियों में अत्याधिक वर्षा के कारण भीषण बाढ़। यूनियन एवं शहीद अस्पताल द्वारा व्यापक स्तर पर बचाव एवं राहत कार्य।
- 18/8 – बी. एस. पी. के प्रबंध निदेशक (एम. डी.) श्री के. आर. संगमेश्वरन, कलेक्टर एवं अन्य अधिकारियों के मजदूर बस्तियों के निरीक्षण दौरे के दौरान नियोगी के नेतृत्व में मजदूरों द्वारा घेराव एवं उन्हें मजदूरों के प्रति सहानुभूतिपूर्वक व सम्मानजनक व्यवहार करने का आश्वासन देने को बाध्य किया जाना।
- 21/9 – प्रबंधन द्वारा कोकान खदान में कार्यरत एवं यूनियन से सम्बद्ध 'श्रमिक सहकारी समिति' को वहाँ अयस्क खत्म हो जाने का बहाना बनाकर राजहरा से 18 कि. मी. दूर महामाया खदान में भेजने की पेशकश। इसके पीछे प्रबंधन की मंशा थी कि समिति के 1,500 मजदूर राजहरा से विस्थापित हों। अतः प्रबंधन के इस निर्णय के खिलाफ यूनियन द्वारा आंदोलन शुरू।
- कोकान खदान मजदूरों के आंदोलन के दौरान 'मितान की आवाज' शीर्षक की कैसेट श्रृंखला द्वारा व्यापक जन शिक्षण (विवरण पृ. 435-436 पर)।
- 19/12 – शहीद वीर नारायण सिंह की कर्मस्थली सोनाखान (जिला रायपुर) में शहीद दिवस के अवसर पर भोपाल गैस पीड़ितों के समर्थन में मजदूरों द्वारा यूनियन कार्बाइड की 'एवरेडी' बैटरी के बहिष्कार का संकल्प।

- डोंडी लोहारा विकास खंड में खरखरा जलाशय के ऊपरी छोर पर छमुमो के नेतृत्व में ग्रामवासियों द्वारा शासन पर दबाव डालकर मवरमरा पुल के निर्माण की शुरूआत। इससे वर्षों से अलग-थलग पड़े 35 ग्रामों के डोंडी लोहारा उप-तहसील से जुड़ जाने की उम्मीद जागी।

- राजाराम मेज़ प्रॉडक्ट्स (ग्लूकोज़ फैक्ट्री), राजनांदगाँव, के मजदूर लाल-हरे झंडे के समर्थन से आंदोलित।

- स्टील प्लांट प्रबंधन द्वारा दल्ली खदान समूह की कोन्डेकसा 'बी' खदान का पूर्ण मशीनीकरण करने के उद्देश्य से वहाँ कार्यरत एवं यूनियन से सम्बद्ध दो सहकारी समितियों (डी. के. एम. एस. एस. एवं के. एम. एस. एस.) को हटाने की पेशकश। इन दोनों समितियों की जगह अपनी जेबी यूनियन एटक की एस. के. एम. एस. को वहाँ काम देने की कोशिश, परंतु सी. एम. एस. एस. द्वारा कड़ा विरोध करने पर एवं बालोद अनुविभागीय दंडाधिकारी के न्यायालय से यूनियन द्वारा स्थगन आदेश प्राप्त करने पर काम रुका। सन् 1986 की सर्दियों से लेकर सन् 1989 के अगस्त तक यह खदान खाली पड़ी रही – तब एक नये समझौते के तहत मात्र 'ओवरबर्डन' हटाने के लिए मशीनें ले जाने की यूनियन ने स्वीकृति दी (देखिये पृ. 408-409)।

- 17/5 – स्टील प्लांट प्रबंधन ने कुछ समय पूर्व एक बड़े ठेकेदार के सभी ट्रक 'डी-रजिस्टर' (खदानों में प्रवेश पर प्रतिबंध) कर दिये थे। इसके फलस्वरूप बड़े पैमाने पर उत्पादन बंद। परंतु यूनियन ने 'फाल बैक वेजेस' की माँग की। अंततः ठेकेदार कुछ भुगतान करके भाग खड़ा हुआ। हजारों मजदूर बेरोजगार।

- विभिन्न खदानों में अलग-अलग समयों पर उत्पादन बंद। लगभग 4,600 मजदूर बेरोजगार। दल्ली राजहरा बस्ती की अर्थव्यवस्था चरमरायी।

- जून प्रथम सप्ताह – स्टील प्लांट की खदानों में व्याप्त भ्रष्टाचार, दुर्व्यवस्था एवं उत्पादन में मनमानीपन आदि समस्याओं को लेकर और विभागीयकरण, मशीनीकरण एवं औद्योगिक विकास की दिशा के मुद्दे उठाते हुए नियोगी ने एक-के-बाद-एक पाँच पत्र प्रधान मंत्री को भेजे (दो पत्र इसी खंड में प्रकाशित, पृ. 393-396)। कोई परिणाम नहीं।

- महामाया लौह अयस्क खदानों से बहने वाले पानी में मिली हुई लाल मिट्टी के बारीक कण ('फाईन्स') पास के ग्राम कुसुरकट्टा, कोपेडेरा, नलकसा, और अमलीपारा के खेतों पर परत के रूप में जमने लगे, खेत नष्ट होने लगे। छमुमो के नेतृत्व में ग्रामवासी संगठित हुए और मैनेजमेंट पर दबाव बनाया। मैनेजमेंट ने खेतों की मिट्टी खुदवायी और महामाया से निकले नाले की दिशा बदलवायी। यह आंदोलन सन् 1987 तक चला।

रपट के कुछ अंश, पृ. 466-467)।

- 3/6 – मजदूरों के पैसों एवं श्रम से निर्मित 'शहीद अस्पताल' का राजहरा के सबसे बुजुर्ग खदान मजदूर श्री लाहर सिंह एवं ग्राम आड़ेझर के वयोवृद्ध किसान श्री हलाल खोर द्वारा उद्घाटन। क्रांतिकारी नेतागण श्री नागभूषण पटनायक (अध्यक्ष, इंडियन पीपुल्स फ्रंट), श्री भक्ति भूषण मंडल (प्रसिद्ध क्रांतिकारी व तत्कालीन मंत्री, पश्चिम बंगाल) एवं काकोरी बम कांड के श्री मन्मथनाथ गुप्त द्वारा भाषण (श्री नागभूषण पटनायक के भाषण का एक अंश पृ. 503 पर)।

- 12/11 – 'खदानें, मशीनीकरण और लोग' विषय पर पीपुल्स यूनियन फ़ॉर डेमोक्रेटिक राइट्स द्वारा नयी दिल्ली में आयोजित एक परिचर्चा में नियोगी और कई साथियों द्वारा भागीदारी ; नियोगी द्वारा एक पर्चा प्रस्तुत (देखिये पृ. 145-154)।

- भिलाई होटल कर्मचारी यूनियन के संघर्ष में योगदान।

1984

- 8/7 – बंगाल-नागपुर काटन मिल्स, राजनांदगाँव, में लाल-हरे झंडे के तले 'राजनांदगाँव कपड़ा मजदूर संघ' का पंजीकरण।

  13/7 – अत्याधिक गर्मी के कारण कपड़ा मिल के तरासन खाते में एक महिला मजदूर के बेहोश होने की घटना के विरोध में मजदूरों द्वारा मिल के अफसरों का घेराव, पुलिस द्वारा लाठी चार्ज – 60 घायल, 75 गिरफ्तार।

  14/7 – 3,600 मजदूरों में से 3,000 मजदूर हड़ताल पर। शाम को नियोगी का राजनांदगाँव आगमन। मुद्दे – बेहतर कार्य परिस्थितियाँ, विशेषकर स्वास्थ्य-सम्बंधी। पृष्ठभूमि में स्थानीय इंटक-एटक यूनियन नेतृत्व के मजदूर-विरोधी चरित्र के प्रति आक्रोश।

  14/7-30/8 – प्रतिदिन मजदूरों द्वारा प्रदर्शन, घेराव, आम सभा, जुलूस, आदि का कार्यक्रम ; पुलिस द्वारा अक्सर लाठी चार्ज एवं गिरफ्तारियाँ।

  31/8 – राजनांदगाँव बंद। नियोगी को गिरफ्तार करके रायपुर सेंट्रल जेल भेजा गया।

  1-11/9 – आंदोलन जारी। उत्पादन ठप्प। इंटक समर्थकों द्वारा मजदूरों के एक समूह पर घातक हमला – एक मजदूर की मृत्यु (12/9)।

  12/9 – पुलिस द्वारा मजदूरों पर गोली चालन। तीन मृत, अनेक घायल (पृ. 469-470 पर एक रपट के कुछेक अंश)।

  13/9 के बाद आंदोलन जारी। अक्तूबर में नियोगी रिहा। फिर प्रबंधन के साथ समझौता।

और हजारों मजदूर मजदूरी से वंचित।

- रासुका गिरफ्तारी के खिलाफ देश भर में बुद्धिजीवियों, कलाकारों, समाजकर्मियों एवं मानव अधिकार संगठनों द्वारा तीव्र भर्त्सना। वयोवृद्ध गांधीवादी नेता आचार्य जे.बी. कृपलानी, प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के पूर्व प्रमुख सचिव श्री पी. एन. हक्सर एवं विख्यात हिन्दी कवि श्री भवानी प्रसाद मिश्र द्वारा कड़े शब्दों में सरकारी कार्रवाई की निंदा व तत्कालीन मुख्य मंत्री श्री अर्जुन सिंह से नेताओं की रिहाई की अपील (देखिये पृ. 389-391)।
- राष्ट्रव्यापी लोकतांत्रिक दबाव के फलस्वरूप नेताद्वय 39 दिन बाद रिहा।
- रिहाई के बाद भी सहकारी समितियाँ भंग रहीं।
- 22/6 – बी. एस. पी. प्रबंधन से समझौता और समितियों को भंग करने का राज्य शासन का आदेश वापस। उत्पादन फिर शुरू।
- डौंडी लोहारा विकास खंड में खरखरा बाँध के कारण डूबे ग्राम बंजारी के विस्थापित लगभग तीस परिवारों ने छमुमो के मार्गदर्शन में वन भूमि पर सामूहिक खेती शुरू की जो आज भी जारी।
- 15/8 – '**स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करो**' का नियोगी द्वारा आह्वान एवं जन स्वास्थ्य कार्यक्रम की कल्पना प्रस्तुत (यूनियन द्वारा प्रसारित हैंडबिल पृ. 422 पर)।
- 22-23/8 – आंध्र प्रदेश रेडिकल स्टूडेन्ट्स यूनियन द्वारा 'भारत में राष्ट्रीयता का प्रश्न' विषय पर मद्रास में आयोजित अखिल भारतीय परिचर्चा में नियोगी द्वारा 'छत्तीसगढ़ और राष्ट्रीयता का प्रश्न' शीर्षक का पर्चा प्रस्तुत (देखिये पृ. 135-142)।
- सितम्बर के दूसरे पखवाड़े में एक दिन मजदूरों द्वारा दल्ली राजहरा में सफाई अभियान और शहर भर के कचरे को ट्रकों में लादकर जुलूस में बी. एस. पी. के नगर प्रशासक के घर के सामने ले जाकर गंदगी के खिलाफ विरोध प्रदर्शन। सुधार न होने पर अगली बार सारा कचरा उनके घर के सामने डालने की चेतावनी।
- डाक्टरों के नेतृत्व में 100 से अधिक मजदूरों की **जन स्वास्थ्य कमेटी** का गठन करके बस्तियों में स्वास्थ्य कार्यक्रम का सूत्रपात।
- स्थानीय छात्रों, युवाओं एवं बुद्धिजीवियों को आंदोलन में जोड़ने का विशेष प्रयास।

1982

- 26/1– यूनियन कार्यालय के गैरेज में 'शहीद डिस्पेंसरी' का उद्घाटन।
- प्रायवेट गैरेज मालिकों के खिलाफ आंदोलन करने के कारण काम से निकाले गये

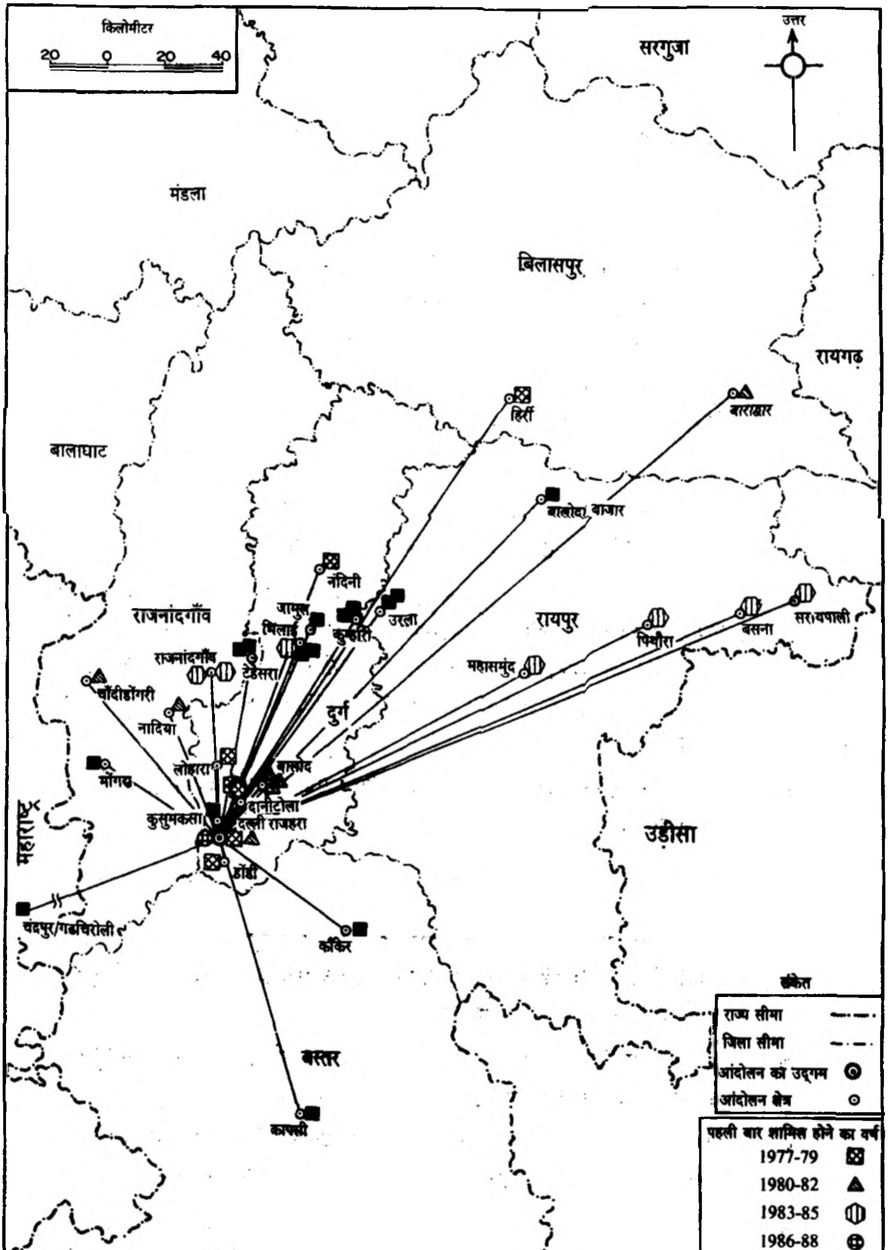
किलोमीटर
20 0 20 40
उत्तर
सरगुजा
मंडला
बिलासपुर
रायगढ़
हिर्री
बाराद्वार
बालाघाट
बालोदा बाजार
नंदिनी
जामुल
भिलाई
कुम्हारी
उरला
राजनांदगाँव
रायपुर
राजनांदगाँव
टेडेसरा
महासमुंद
पिथौरा
बसना
सरायपाली
चाँदीडोंगरी
नादिया
दुर्ग
लोहारा
बालोद
मोंगरा
दानीटोला
कुसुमकसा
दल्ली राजहरा
उड़ीसा
महाराष्ट्र
डौंडी
चंद्रपुर/गढ़चिरोली
कांकेर
बस्तर
कापसी
संकेत
राज्य सीमा
जिला सीमा
आंदोलन का उद्गम
आंदोलन क्षेत्र
पहली बार शामिल होने का वर्ष
1977-79
1980-82
1983-85
1986-88
1989-91

आंदोलन का फैलाव

- डोंडी लोहारा विकास खंड में बी. एस. पी. के लिए निर्मित खरखरा बाँध के डूब क्षेत्र में आये ग्राम बंजारी के विस्थापित लोगों के पुनर्वास की समस्या में छमुमो ने रुचि ली।
- 'फाल बैक वेजेस' स्कीम लागू होने के कारण बढ़ी हुई आय का प्रमुख हिस्सा देशी शराब के ठेकों व जुआघरों को जाने लगा। यूनियन द्वारा एक अनूठे शराबबंदी अभियान की पिछले वर्ष से ही शुरूआत जिसकी अगुवाई महिलाओं के हाथ में।
- दस हजार मजदूरों व अन्यों ने शराब छोड़ी (विवरण पृ. 414-420 पर)।
- नियोगी और साथियों द्वारा शहीद वीर नारायण सिंह का इतिहास पूरी तरह से खोज निकालने के लिए जिला रायपुर के ग्राम सोनाखान की शोध-यात्रा (देखिये नियोगी का लेख, पृ. 122-132)।
- इस वर्ष के उत्तरार्द्ध में यूनियन ने खदानों में ठेका मजदूरों हेतु 'आयरन ओर वेज बोर्ड' की जगह 'स्टील वेज बोर्ड' की सिफारिशें लागू करवाने में विजय प्राप्त की। इसके फलस्वरूप दैनिक आय रु. 12/- से बढ़कर रु. 17/- तक पहुँची।
- 19/12 – शहीद वीर नारायण सिंह का शहादत दिवस रायपुर में एक विशाल रैली निकालकर इतिहास में पहली बार मनाया गया। हर वर्ष मनाने का संकल्प।

1980

- 16/5 – यूनियन ने खदान ठेकेदारों पर ड्रिलिंग मजदूरों, ड्रायवरों, हेल्परों व आफिस स्टाफ के बकाया वेतन-भत्ते का भुगतान करने के लिए दबाव डाला। ठेकेदारों ने घबराकर काम बंद करके खदानें ही छोड़ दीं।
- 11/8 – ड्रिलिंग मजदूरों के विभागीयकरण का उप मुख्य श्रम आयुक्त (दिल्ली) के कार्यालय में समझौता। शेष मजदूरों की छँटनी न करने एवं दि. 15.09.81 तक उनके विभागीयकरण का निर्णय करने का प्रबंधन द्वारा आश्वासन। ठेकेदारों को वापस लाने की पेशकश।
- यूनियन द्वारा ठेकेदारों पर मजदूरों व अन्य स्टाफ की बकाया राशि का भुगतान करने हेतु दबाव जारी। साथ में ट्रांसपोर्ट मजदूरों को बकाया 'फाल बैक वेजेस' देने के लिए संघर्ष। ठेकेदारों द्वारा कुल देय राशि लाखों में। उसकी जगह ठेकेदारों द्वारा मजदूरों के लिए एक प्रसूति गृह बनवाने का आश्वासन।
- 5/9 – बी. एस. पी. के मुख्य इंजीनियर (खदान) श्री बिमलेन्दु मुखर्जी द्वारा 'शहीद प्रसूति भवन' का शिलान्यास।
- 7/9 – लगभग चार माह बाद खदान ठेकेदारों द्वारा काम चालू। उत्पादन फिर शुरू।

मजदूरों द्वारा मजदूर-किसानों के लिए एक 'प्रसूति गृह' बनाने के सोच का अंकुर प्रस्फुटित (देखिये नियोगी का लेख, पृ. 98-100)।

1978

- खदानों में मजदूरों की कार्य परिस्थितियों में सुधार हेतु संघर्ष जारी।
  - क) मजदूरों के पारिवारिक व सामाजिक कामों के लिए समय की जरूरत को देखते हुए दैनिक काम के घंटे प्रातः 8 बजे से सायं 5 बजे तक की जगह प्रातः 7 बजे से दोपहर 3 बजे तक करवाये गये।
  - ख) विभागीयकरण यानी ठेकेदारों एव सहकारी समितियों के मजदूरों (क्रमशः ठेका एवं 'सोसायटी' मजदूर) की सेवाओं का भिलाई स्टील प्लांट में नियमितिकरण करवाने के लिए दबाव बनाये रखा।

- 5/4 – बस्तर जिले की बैलाडीला लौह अयस्क खदानों में नेशनल मिनरल डेवलपमेंट कार्पोरेशन की ओर से प्रस्तावित पूर्ण मशीनीकरण का एटक की स्थानीय यूनियन के नेतृत्व में विरोध करते हुए आदिवासी मजदूरों पर पुलिस द्वारा गोली चालन किया गया एवं 10,000 मजदूरों की बस्तियों को उजाड़ा गया (पूर्ण विवरण के लिए देखिये नियोगी का लेख, पृ. 100-115)।

  – सी. एम. एस. एस. द्वारा बैलाडीला के पीड़ित मजदूर परिवारों को ट्रकों में भर-भर कर चावल भेजा गया और उनके संघर्ष को पूर्ण नैतिक समर्थन।

- 4/5 – यूनियन की ओर से 18-सूत्री माँग पत्र का हड़ताली नोटिस जारी। प्रमुख माँगे – 'आयरन एंड स्टील वेज बोर्ड' की सिफारिशों का क्रियान्वयन, स्थायी मजदूरों को दी जाने वाली सुविधाओं व भत्तों को ठेका मजदूरों को भी देने की माँग, विभागीयकरण, बोनस आदि आर्थिक माँगों के अलावा मजदूरों द्वारा चलाये जाने वाले स्कूलों के लिए अनुदान एवं दल्ली खदानों का मशीनीकरण रोकने की माँगें भी। हालाँकि हड़ताल नहीं हुई, किंतु प्रबंधन से लगातार चर्चा करके एक-के-बाद-एक फैसले करवाये गये।

- 20/5 – क) बैलाडीला गोलीकांड की शहादत से प्रेरणा लेते हुए यूनियन ने दल्ली खदान समूह में किये जा रहे पूर्ण मशीनीकरण के खिलाफ जुलूस निकाला और दल्ली क्रशिंग प्लांट के गेट पर काला झंडा गाढ़ कर इस मुद्दे पर चेतना जागरण व संघर्ष शुरू करने की घोषणा की।
  - ख) यूनियन ने बैलाडीला के संघर्ष पर और पूर्ण मशीनीकरण के विकल्प में अर्द्ध-मशीनीकरण का प्रस्ताव देते हुए नियोगी द्वारा लिखित 'किरंदुल के अग्निगर्भ से' शीर्षक की तथ्यपरक पुस्तिका प्रसारित की (पुस्तिका पृ. 100-115 पर)।

(उस दिन का आँखों देखा हाल पृ. 397-398 पर।)

'आयडिल वेजेस' की जगह 'फाल बैक वेजेस' की स्कीम स्वीकृत।[1]
(मई 1977 के संघर्ष के विवरण के लिए देखिये पृ. 352-353)

- यूनियन की ओर से विधान सभा चुनाव में दो उम्मीदवार।

जून 1977

- 1/6 – क) स्पष्ट समझौते के बावजूद ठेकेदारों द्वारा ऐन मौके पर झोपड़ी मरम्मत भत्ता देने से इंकार। मजदूरों में आक्रोश फैला।
  ख) लाल-हरे झंडे के बैनर में मजदूरों की प्रभावशाली विशाल रैली। प्रबंधन-ठेकेदार-प्रशासन स्तब्ध।

- 2/6 – मध्य रात्रि को यूनियन के अस्थायी दफ्तर के बाहर सो रहे नियोगी को पुलिस द्वारा धोखे से गिरफ्तार करना और जीप में फुर्ती से बालोद ले जाना। तब तक जाग गये मजदूरों द्वारा 5-6 पुलिस जवानों-अफसरों के एक दल को घेर लेना। पुलिस द्वारा उनके लोगों को छोड़ देने की चेतावनी देने पर मजदूरों द्वारा नियोगी को लौटा देने की माँग।

  2/6 – पुलिस द्वारा रात में ही कई स्थापित नियमों का उल्लंघन करके गोली चालन (देखिये पृ. 466-467)। अनुसूइया बाई एवं बालक सुदामा समेत सात मजदूर शहीद।

  3/6 – पूर्वान्ह में फिर गोली चालन। चार और मजदूर शहीद। इस तरह पुलिस मजदूरों के घेरे से अपने लोगों को छुड़वा पायी।

  4/6 – म. प्र. में तत्कालीन राष्ट्रपति शासन द्वारा उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायमूर्ति श्री एम. ए. रज्जाक की अध्यक्षता में एक-सदस्यीय न्यायिक जाँच आयोग की अधिसूचना।

- 18/6 – यूनियन और प्रबंधन-ठेकेदारों के बीच बालोद की बैठक में 'फाल बैक वेजेस' और झोपड़ी मरम्मत भत्ते के भुगतान को लेकर एक बार फिर समझौता।

जुलाई 1977

- 35 दिन की कैद के बाद नियोगी रिहा।

- झोपड़ी मरम्मत भत्ते का भुगतान।

- दल्ली राजहरा खदानों में 'फाल बैक वेजेस' स्कीम का आंशिक क्रियान्वयन शुरू – यहाँ के इतिहास में पहली बार। इसके माध्यम से लौह अयस्क उत्पादन के मामले में प्रबंधन-ठेकेदारों की साँठ-गाँठ में चल रही ढिलाई व मनमानी पर मजदूरों के

---

[1] दिहाड़ी मजदूरों के लिए 'आयडिल वेजेस' का कानूनन अर्थ है कि काम न दिये जाने पर 100% मजदूरी मिलना, जबकि 'फाल बैक वेजेस' का अर्थ है कि उन्हीं हालात में दैनिक मजदूरी का 80% मिलना।

संघर्ष और निर्माण की डायरी[1,2]

(मार्च 1977 से सितम्बर 1991 तक)

प्रस्तुति : अनिल सद्गोपाल

1977

मार्च 1977

- 2/3 – भिलाई स्टील प्लांट (बी. एस. पी.) की दल्ली राजहरा स्थित बंधक लौह अयस्क खदानों में ठेकेदारी प्रथा में कार्यरत लगभग दस हजार मजदूरों द्वारा इंटक-एटक यूनियनों के स्थानीय नेतृत्व के खिलाफ स्वतःस्फूर्त खुला विद्रोह।[3] तात्कालिक मुद्दा भिलाई स्टील प्लांट के स्थायी (विभागीयकृत) और ठेका मजदूरों के लिए प्रस्तावित बोनस में अंतर (क्रमशः रु. 308/- और रु. 70/-), जबकि दोनों प्रकार के मजदूर एक ही काम करते थे। परंतु पृष्ठभूमि में असली मुद्दे थे – (1) इंटक-एटक यूनियनों की स्थानीय इकाइयों के नेतृत्व की मैनेजमेंट-परस्त नीतियाँ व मजदूर-विरोधी चरित्र, एवं (2) विभागीयकृत मजदूरों की तुलना में स्टील प्लांट द्वारा ठेका मजदूरों को निरंतर दोयम दर्जा दिया जाना व इस कारण उठा उनकी प्रतिष्ठा का प्रश्न।[4]

- 3/3 – श्री बंशीलाल साहू के नेतृत्व में लाल मैदान में अनिश्चितकालीन हड़ताल शुरू। लौह अयस्क का उत्पादन पूर्णतः बंद। मजदूरों की माँगें हल करने में स्थापित, केंद्रीय ट्रेड यूनियनों के सभी नेता असफल।

- 21/3 – हड़ताल अभी भी जारी। मीसा में गिरफ्तार शंकर गुहा नियोगी की रायपुर सेंट्रल जेल से 13 माह बाद रिहाई।

  23/3 – एक तरफ मैनेजमेंट, प्रशासन व ठेकेदार एवं दूसरी तरफ मजदूर प्रतिनिधिमंडल

---

1 यहाँ जब किसी आंदोलन विशेष का जिक्र किया गया है तो इसका मतलब यह नहीं है कि वह प्रक्रिया केवल उसी वर्ष चली होगी। चूँकि अधिकांश कार्यक्रम या आंदोलन कई वर्षों तक चले हैं, अतः उनके शुरू होने अथवा उनमें कोई नया मोड़ आने की प्रक्रिया को रेखांकित करने के लिए उन्हें किसी वर्ष विशेष में दर्शाया गया है।

2 केवल उन्हीं घटनाओं को शामिल किया गया है जो 'संघर्ष और निर्माण' का दर्शन उभारने में उपयोगी लगीं।

3 इन खदानों में कई वर्षों से केंद्रीय ट्रेड यूनियनों की स्थानीय इकाइयों के नेतृत्व के खिलाफ असंतोष सुलग रहा था और श्रमिक-मुखियाओं ने इसे नेतृत्व व दिशा भी दी थी। अतः यहाँ स्वतःस्फूर्त विद्रोह का अर्थ केवल यह है कि यह प्रक्रिया मुख्यतः आंतरिक थी।

4 उन हालात का एक प्रत्यक्षदर्शी विवरण पृ. 351-353 पर दर्ज है।

और अधिक मंजूर नहीं था। उस समय दोनों यूनियनों के दफ्तरों में एक ही समय अलग-अलग बैठकें चल रही थीं। खदानों के मुखियागण अपने-अपने यूनियन नेताओं के मजदूर-विरोधी व्यवहार की कड़े शब्दों में आलोचना कर रहे थे। इसके जवाब में दोनों यूनियनों के नेतागण भेदभाव की नीति के लिए एक-दूसरे की यूनियन को जिम्मेदार ठहरा रहे थे। एटक वाला इंटक को, इंटक वाला एटक को। तब दोनों यूनियनों के मुखियाओं ने एक-दूसरे के दफ्तरों में जाकर यह जानने की कोशिश की कि वहाँ क्या हो रहा है। उस दिन मजदूर समझ गये कि हमारे सामने एक-दूसरे को गालियाँ देकर इंटक-एटक नेतागण आपस में मिल जाते हैं और हम मजदूरों को एक-दूसरे से लड़ाते रहते हैं। मुखियाओं ने उसी रात तय किया कि प्रबंधन, ठेकेदार व यूनियन नेतृत्व की तिकड़ी की भेदभाव पूर्ण नीति के खिलाफ एक इज्जतदार मजदूर की हैसियत से हमें अपनी माँगों के लिए, अपनी प्रतिष्ठा के लिए, एक साथ मिलकर स्वतंत्र संघर्ष करना होगा और इन दोनों यूनियनों को छोड़कर अपना खुद का संगठन बनाना होगा।

इस प्रकार 3 मार्च 1977 को सुबह से ही तमाम खदानों में काम बंद करके लगभग दस हजार मजदूरों की फौज पूर्ण आक्रोश के साथ राजहरा के लाल मैदान में आकर हड़ताल पर बैठ गयी। इसी बीच लोकसभा का चुनाव सम्पन्न हुआ। हम मजदूरों ने इस चुनाव का बहिष्कार किया। तानाशाही कांग्रेस की ऐतिहासिक हार के कारण मीसाबंदियों की रिहाई सम्भव हुई। 21 मार्च को तेरह माह की जेल-यात्रा के बाद नियोगीजी रायपुर सेंट्रल जेल से रिहा हुए और अपने पुराने साथियों से भिलाई में मिलते हुए दानीटोला अपने घर पहुँचे। अभी उनसे दल्ली राजहरा के मजदूरों ने अपनी हड़ताल को लेकर कोई सम्पर्क स्थापित नहीं किया था। यह किये बगैर ही 24 मार्च को मैनेजमेंट व ठेकेदारों के साथ हमारे प्रतिनिधियों का समझौता हुआ। इस समझौते से आर्थिक दृष्टि से तो मजदूरों को कोई तात्कालिक फायदा नहीं हुआ, परंतु इंटक-एटक नेतृत्व के नौकरशाही ढाँचे से मुक्ति मिली। इस प्रकार मजदूरों ने अपनी इज्जत को प्रतिष्ठित किया।

इसके तुरंत बाद से नियोगीजी ने हमारे एक सहयोगी के रूप में काम करना शुरू कर दिया। शीघ्र ही हमारी नवगठित यूनियन का पंजीयन भी हो गया।

अब इंटक-एटक यूनियनों के स्थानीय नेतृत्व और मैनेजमेंट के गठबंधन की ओर से हमारी यूनियन के खिलाफ कदम उठने शुरू हुए। मई 1977 में एटक के नेतृत्व में खदानों के विभागीयकृत कर्मचारी (माइनिंग मेट, फोरमैन, क्लर्क आदि) हड़ताल पर चले गये। इसमें मजदूरों को दैनिक मजदूरी से वंचित करके हमारे संगठन को कमजोर करने की नीयत साफ झलक रही थी। मजदूरों के उत्पादन को प्रमाणीकृत करने वालों के अभाव में मजदूर शीघ्र ही 'आयडिल' ('निष्क्रिय') हो गये। परंतु हमारी यूनियन ने एटक की इस तथाकथित हड़ताल का लाभ उठाकर मजदूरों के लिए 'आयडिल वेजेस' एवं झोपड़ी मरम्मत भत्ते के मुद्दे उठा दिये। इसके पीछे हमारी समझ का आधार निम्नानुसार था –

- जब खदान मजदूर काम पर हाजिर होता है, तब मैनेजमेंट व ठेकेदार की जिम्मेदारी हो जाती है कि मजदूरों को पर्याप्त काम उपलब्ध कराये।
- कभी ड्रिलिंग नहीं, कभी ब्लास्टिंग नहीं, कभी टिप्पर ट्रक नहीं, कभी डीजल नहीं आदि नाना प्रकार के बहाने बनाकर मजदूरों को अक्सर खदानों से खाली हाथ वापस लौटा

मजदूर-किसान जिंदाबाद, जिंदाबाद, जिंदाबाद।
जिंदाबाद-जिंदाबाद-जिंदाबाद के,
पूरा छत्तीसगढ़ भुंइया मा होही रे गुंजार।
मिल-जुल के सबो झन शोषण ला टारबो . . . .।

ए छत्तीसगढ़ महतारी के हम सपूत बेटा,
हम सपूत बेटा, हम सपूत बेटा।
वीर नारायण सिंह के बगराबो गा संदेश ला,
बगराबो गा संदेश ला, बगराबो गा संदेश ला।
लाल सूरज उगे संगी, होगे रे बिहान।
मिल-जुल के सबो झन शोषण ला टारबो . . . .।

एक ही नारायण से हजार नारायण बन गेहे,
हजार नारायण बन गेहे, हजार नारायण बन गेहे।
एक ही नियोगी से लाख नियोगी होवत हे,
लाख नियोगी होवत हे, लाख नियोगी होवत हे।
लाख से करोड़ होही देए बर कुरबान।
मिल-जुल के सबो झन शोषण ला टारबो. . . .।

नदिया कस पूरा हमन आघू बढ़त जावो,
आघू बढ़त जावो, आघू बढ़त जावो।
रोक नई सके कोई तूफान से टकरावो,
तूफान से टकरावो, तूफान से टकरावो।
अत्याचार टारबो, भ्रष्टाचार मिटा देबो,
ए माटी के राख लेबो मान।
मिल-जुल के सबो झन शोषण ला टारबो. . . .।

❑

यह खंड इस पुस्तक का मेरुदंड है। इस खंड का उद्देश्य पाठकों को छमुमो द्वारा चलाये गये आंदोलन की प्रक्रिया, इसके विविध आयामों एवं इसके संगठनात्मक आधार से परिचित कराना है। यह खंड मेरुदंड इसी वजह से है चूँकि नियोगी के निबंध (खंड तीन), भाषण एवं बयान (खंड छह) और साक्षात्कार एवं चर्चा (खंड सात) या तो आंदोलनात्मक एवं संगठनात्मक धरातल से उपजे हैं, उसी को मजबूत कर रहे हैं या फिर उसी पर टिके हुए हैं। यहाँ तक कि नियोगी की अधिकांश कविताएँ (खंड चार) भी इसी आंदोलन के बारे में उनकी भावनाओं की अभिव्यक्ति मानी जा सकती हैं। ' नियोगी की शहादत ' (खंड नौ) आंदोलन की तार्किक परिणति थी और ' विरासत का प्रश्न ' (खंड दस) आंदोलन की शिक्षण प्रक्रिया और संगठन की लोकतांत्रिक पद्धति से जुड़ा हुआ मसला है। ' नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़ ' (खंड दो) की अवधारणा भी इस आंदोलन की जरूरतों और अनुभवों से विकसित हुई और फिर इसने आंदोलन को भी एक दिशा दी। ' मूल्यांकन और दिशा ' (खंड ग्यारह) और ' नियोगी — एक नयी राजनैतिक धारा ' (खंड चौदह) में प्रस्तुत सामग्री आंदोलन को ही समझने और उसकी व्याख्या करने की कोशिश कर रही है। नियोगी के ' निजी ' जीवन को चित्रित करते हुए शेष खंडों को यदि आंदोलन के ताने-बाने से अलग करके देखा जाये तो वे [illegible] खो बैठेंगे।

अतः हमने प्रयास किया है कि [illegible] कुछ सामग्री जरूर प्रस्तुत की जावे। यह [illegible] कि इसका पूरा विवरण यहाँ देना सम्भव न था। उदाहरण के लिए, नियोगी ने [illegible] छोटे आंदोलनों [illegible] प्रयासों को नेतृत्व दिया या उत्प्रेरित किया, मसलन [illegible] पानी की समस्या का निवारण, मोंगरा बाँध के डूब में आने वाले गाँवों का प्रश्न और डोंडी लोहारा विकास खंड में ग्राम कंजारी के निवासियों की सामूहिक [illegible] का मामला। ये [illegible] आकार में छोटे थे, पर इनका जन मानस पर [illegible] ' संघर्ष-निर्माण ' की राजनीति भी सुंदर ढंग से [illegible] में हम इन आंदोलनों पर प्रमाणित सामग्री [illegible]। पर ऐसे [illegible] का जिक्र ' संघर्ष और निर्माण की डायरी ' में किया गया है (देखिए पृ. [illegible]-374)। [illegible] पुस्तक के विभिन्न संदर्भों को समझने में [illegible]। [illegible] पूर्ण है व त्रुटिरहित है। आशा है कि भविष्य में आंदोलन के मजदूर साथियों एवं पाठकों की मदद से इस डायरी को बेहतर बनाया जा सकेगा।

□

यह गतिहीन नहीं होती। संस्कृति या तो विकसित होती है या लुप्त हो जाती है। परंतु इसका कोई विकास नहीं हो रहा है।

❑

(मूल अंग्रेजी से श्याम बोहरे द्वारा अनूदित एवं ' इलस्ट्रेटेड वीकली ऑफ इंडिया ', बम्बई, 5-11 अक्तूबर 1991, से साभार; मूल साक्षात्कार के प्रमुख अंश।)

बुद्धिजीवियों की भूमिका पर

सन् 1982 में क्रमशः जनवरी, अप्रैल व अगस्त में किशोर भारती (जिला होशंगाबाद, म. प्र.) में विदूषक कारखाना (जिला शहडोल, म. प्र.) के सहयोग से मध्य प्रदेश के स्वयंसेवी संगठनों, जन आंदोलनों तथा अन्य समाजकर्मी समूहों की तीन बैठकें आयोजित की गयी थीं। इनमें से दूसरी बैठक में नियोगी भी आये थे। उस बैठक के अनौपचारिक क्षणों में नियोगी द्वारा की गयी एक छोटी-सी लेकिन दूरगामी महत्व की टिप्पणी को राकेश दीवान याद कर रहे हैं। —स.

दिन भर गहन राजनैतिक चर्चाएँ होती रहीं। इस गम्भीर बौद्धिक माहौल और देर रात हो जाने के कारण बैठक के कई भागीदार बेचैन होने लगे थे। अंत में ' पीड़ित ' मित्रों में से एक ने माहौल को हल्का बनाने और ' अति-बौद्धिकता ' पर टिप्पणी करने के लिहाज से एक चुटकुला सुनाया। उन दिनों ' गाँवों में काम करना ' अध्ययन, बौद्धिक बहसों आदि से श्रेयस्कर माना जाता था और यह चुटकुला एक ऐसे ही ग्रामीण कार्यकर्ता के अहम् की अभिव्यक्ति भी था। चुटकुला यूँ था — एक बैठक में कोई जानवर घुस आया जिसे देखकर एक बुद्धिजीवी ने कहा कि यह एक चूहा था और इसने भयानक शोषण किया है जिसके कारण यह इतना मोटा-ताजा हो गया है। एक अन्य बुद्धिजीवी ने कहा, " नहीं, यह दरअसल एक हाथी था और इसका भयानक शोषण किया गया है। इसलिए इसकी यह हालत हो गयी है। " जिस जानवर को ये बुद्धिजीवी मित्र पहचान नहीं पाये उसे अंततः एक ग्रामीण मैदानी कार्यकर्ता ने ही पहचाना — दरअसल वह जानवर एक सुअर था।

चुटकुले के बाद लोग देर तक हँसते रहे। लेकिन तभी नियोगी ने हस्तक्षेप किया। उन्होंने कहा, " चुटकुला और हँसना तो अपनी जगह ठीक है, लेकिन हमें अपने बुद्धिजीवी साथियों की हैसियत कम करके नहीं आँकनी चाहिए। बुद्धिजीवियों से हमारी समझ बढ़ती है, सामाजिक-आर्थिक विश्लेषण मिलता है और भावी समाज का एक खाका बनाने में सहायता मिलती है। इसलिए उनकी भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। हाँ, यह बात सभी आंदोलनों को ध्यान में रखनी होगी कि बुद्धिजीवी साथियों को नेतृत्व न दिया जाये। उन्हें हमेशा संगठन के नेतृत्व के पीछे ही रखना होगा। नेतृत्व हमेशा मजदूर वर्ग के हाथों में ही होना चाहिए। "

❑

सवाल — अपने संघर्ष के दौरान आपने कांग्रेस और भारतीय जनता पार्टी दोनों की मध्य प्रदेश सरकारों का सामना किया है। दोनों में आपने क्या अंतर पाया ?

नियोगी — कांग्रेस शासन में हमें एक बुनियादी लाभ यह था कि नौकरशाही और प्रशासनिक मशीनरी कभी जड़ नहीं हुई। भाजपा ने तो उसे जड़ बना दिया। कांग्रेस सरकारें अक्सर हमारी माँगे नहीं मानती थीं परंतु वे उन माँगों को देखने की जहमत तो उठाती थीं। यह सरकार तो उतना भी नहीं करना चाहती। भाजपा के शासन में तो पूरी शासकीय मशीनरी लकवाग्रस्त हो गयी है। प्रदेश के दूसरे मामले जिस तरह से संचालित हो रहे हैं उससे नौकरशाही हतोत्साहित हो रही है।

यह कोई पहली बार नहीं है कि इन्होंने उल्टे काम किये हैं। सन् 1978 में बैलाडीला (बस्तर) में भाकपा के नेतृत्व वाले आंदोलन के 10,000 श्रमिकों की झोपड़ियाँ जला दी गयी थीं, लगभग 9,000 मजदूरों की पिटाई की गयी थी। ये वही लोग हैं जो इसके लिए जिम्मेदार थे। इस बार पटवा सरकार के शासन सँभालने के एक सप्ताह के अंदर रायपुर जिले के अमनपुर में गोली चलायी गयी। मजे की बात तो यह है कि दहशत बरकरार रखने के लिए वही पुलिस इंसपेक्टर, जो उसके लिए जिम्मेदार था, अभी भी उसी थाने में पदस्थ है। भाजपा जनता की समस्याओं के प्रति एकदम उदासीन है। अभी हाल में बस्तर में 5,000 लोग हैजे से मर गये परंतु इन्होंने कुछ नहीं किया। कांग्रेस कम-से-कम सक्रियता का नाटक तो करती थी। भले ही हेलीकाप्टर से वहाँ पहुँचती थी, इस कारण नौकरशाही को उठना तो पड़ता था और कुछ न्यूनतम मदद पहुँचा दी जाती थी। परंतु भाजपा वाले तो मौके का मुआयना करने तक के इच्छुक नहीं हैं। आज तक एक भी मंत्री वहाँ नहीं पहुँचा है।

सवाल — भाजपा राम और रोटी की बात करती है और आपके संघर्ष का एक बड़ा हिस्सा रोटी से ताल्लुक रखता है। क्या कहीं इससे बातचीत की गुंजाइश निकली है ?

नियोगी — पटवा के मुख्य मंत्री बनने के बाद पहली मुलाकात में मैंने उनसे कहा कि मैं उम्मीद करता हूँ कि आप हमारी माँगें पूरी करेंगे। वे बोले, "नियोगीजी आप यह 'इंकलाब जिंदाबाद' बहुत ज्यादा करते हो, ऐसे में कोई भला आपकी बात कैसे सुन सकता है ?" मैंने कहा, "जैसे आप राम के नाम पर 'इंकलाब जिंदाबाद' करते हो, मैं वैसे ही रोटी के नाम पर करता हूँ। यदि राम का महत्व है तो रोटी का भी है। मैं अपने पहले पैसे से रोटी के लिए अनाज खरीदूँगा और इसके बाद ही दूसरे पैसे से पूजा के लिए फूल खरीदूँगा। आम लोगों से यह उम्मीद कैसे करते हो कि वे अपने पहले पैसे से पूजा के लिए फूल खरीदें ?" इस पर उन्होंने कुछ नहीं कहा।

दूसरी बार जब मैं उनसे मिला तब उन्होंने आरोप लगाया कि मैं हड़तालें करवाता हूँ। मैंने कहा कि ठीक है, जहाँ हम हड़ताल नहीं कर रहे हैं वहाँ हमारी माँगें पूरी क्यों नहीं करा देते ? इस पर उन्होंने विषय बदल दिया और पूछा कि जिन इकाइयों में हड़ताल है उनमें कितने मजदूरों को नियमित कराना चाहते हो ? मैंने कहा सवाल यह नहीं है कि मैं कितनों को नियमित कराना चाहता हूँ। मुख्य मंत्री होने के नाते आप देखें कि मौजूदा श्रम कानूनों के अंतर्गत कितने मजदूर नियमित हो सकते हैं।

करने की माँग शांतिपूर्ण तरीके से कर रहा है, क्या इसीलिए आप इसे मानने के लिए तैयार नहीं हैं ?

सवाल — **देश भर में फैले हुए जन आंदोलनों को देखने पर क्या आपको लगता है कि जो लोग आंदोलन कर रहे हैं वे धीरे-धीरे, पर बढ़ते हुए क्रम में यह भरोसा खोते जा रहे हैं कि प्रजातांत्रिक प्रक्रिया से सामाजिक-आर्थिक न्याय प्राप्त किया जा सकता है ?**

नियोगी — यह सही है। कई वर्षों के संघर्ष से हम अपनी प्रमुख माँगों का क्रियान्वयन करा सके हैं। लेकिन शुरू में हमने कुछ बहुत ही मामूली-सी माँगें की थीं जो नहीं मानी गयीं, उल्टे हम पर गोली चलायी गयी जिसमें 11 साथी मारे गये। उद्योगपतियों के उकसाने पर पुलिस ने हम पर अक्सर गोली चलायी है। लोगों की आवश्यकताओं और आकाँक्षाओं की सरकार न तो चिंता करती है और न ही सम्मान।

मेधा पाटकर के नेतृत्व में चल रहे 'नर्मदा बचाओ आंदोलन' को देखिये — इतने सारे आदिवासी अपने घरों से बेदखल कर दिये जायेंगे। और यह भी देखिये कि उनके साथ कैसा सलूक हो रहा है। जहाँ भी लोग बेदखल किये जायेंगे, एक-न-एक दिन वहाँ नक्सलवाद का उदय अवश्य होगा। आज सरकार स्वयं ही ऐसी विपरीत परिस्थितियाँ पैदा कर रही है। कभी-कभी मुझे लगता है कि हमारे राजनीतिज्ञ और पूँजीपति इस निष्कर्ष पर पहुँच गये हैं कि अव्यवस्था पैदा करके और लोगों को हिंसा की ओर धकेल कर ही वे उनके ऊपर शासन करना जारी रख सकते हैं।

सवाल — **क्या आप को लगता है कि सैकड़ों मजदूरों के साथ दिल्ली आकर राष्ट्रपति से मिलने से कुछ नतीजा निकलेगा ?**

नियोगी — जब हमने राष्ट्रपति को अपनी समस्याएँ बतायीं तब उन्होंने कहा, "मुझे उम्मीद है कि यह विवाद संतोषजनक ढंग से जल्दी ही सुलझा लिया जायेगा।" विडम्बना तो यह है कि वे केवल 'उम्मीद' करते हैं कि समस्या सुलझ जायेगी, परंतु भारत के राष्ट्रपति होने के नाते यह नहीं कहते कि वे यह सुनिश्चित करेंगे कि मध्य प्रदेश सरकार इस प्रकार काम करे कि दबे-कुचले लोगों को सताया न जाये और उनका दमन व शोषण न हो। वे यह वचन दे सकते थे, परंतु उन्होंने ऐसा नहीं किया।

हम तो आडवाणी जी से भी मिले। उनसे हमने कहा कि कम-से-कम वे यह तो सुनिश्चित करें कि श्रम कानून लागू किये जायेंगे। उन्होंने केवल इतना कहा कि वे सुंदरलाल पटवा से 'बात करेंगे'। एक बार भी उन्होंने यह नहीं कहा कि पटवा ने जो गलतियाँ की हैं, वे सुधारी जायेंगी।

बहरहाल, इन लोगों से बात करके हम लोग वापस जा रहे हैं। अपने लोगों को इस बातचीत के बारे में बतायेंगे और कुछ उचित समय तक इंतजार करेंगे। हम यह जानते हैं कि एकाएक कुछ नहीं होता, समय चाहिए। परंतु इस इंतजार के बाद भी यदि हालात नहीं सुधरते तो हम उस भाषा में बोलेंगे, जो भाषा इस देश की सरकार समझती है।

दिया, 'स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करो' और स्वस्थ बनने व रहने के महत्व पर ध्यान केंद्रित किया। स्वास्थ्य के लिए पीने का साफ पानी होना जरूरी है, अतः हमने इसकी माँग की एवं इसे पाने के लिए अपने भी प्रयास किये। दल्ली राजहरा स्थित हमारा अस्पताल अब विकसित होकर 50 बिस्तरों वाला अस्पताल हो गया है।

धीरे-धीरे हम अन्य मुद्दों पर भी काम करने लगे। हमारे बच्चों के पास खेलने के लिए केवल गिल्ली-डंडा ही था। हमने सोचा कि हमारे बच्चे भी दूसरे खेल क्यों नहीं खेल सकते ? अतः हमने खेल का एक मैदान बनाया और फुटबाल, कबड्डी तथा क्रिकेट जैसे खेलों को प्रोत्साहित किया। हमने खेल-कूद प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया। इन प्रतियोगिताओं में आस-पास के आदिवासी क्षेत्र के बच्चों ने काफी बड़ी संख्या में भाग लिया। हमने लोक संगीत को भी प्रोत्साहित किया और ऐसे गाने बनाये जिनमें संघर्ष, स्वास्थ्य सुधार, परिवर्तन, ट्रेड यूनियन आंदोलन और इस इलाके के इतिहास की भी बातें कही गयीं। फिर हमने स्कूल चलाये, व्यवसायिक प्रशिक्षण देने के लिए एक तकनीकी स्कूल भी शुरू किया। इस तरह से हमने अपने काम का विस्तार 17 अलग-अलग विभागों में कर लिया। इन गतिविधियों के लिए हमें किसी से भी पैसा नहीं माँगना पड़ा। पैसों की हमारी पूरी जरूरत ट्रेड यूनियन आंदोलन से ही पूरी हो जाती है। हमने तो सरकार से भी पैसा नहीं माँगा। मजदूरों से ही पूरा पैसा इकट्ठा किया गया जिसे बहुत ही सोच-समझकर मितव्ययता के साथ खर्च किया।

सवाल – आप छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के प्रमुख हैं। आप किसकी और कौन-सी मुक्ति की कोशिश कर रहे हैं ?

नियोगी – हमें राजनैतिक स्वतंत्रता तो मिल गयी। परंतु मेरा मानना है कि हमारे लोग अभी भी मुक्त नहीं हुए हैं। यह केवल छत्तीसगढ़ के लोगों की बात नहीं है, भारत के सभी गरीबों की बात है।

सन् 1960 के एक रुपये की कीमत आज केवल 9.9 पैसा है। योजना आयोग की परिभाषा के अनुसार सन् 1960 में भी 1,400 रुपये प्रति वर्ष कमाने वाला व्यक्ति गरीबी की रेखा पर या उससे थोड़ा-सा ही ऊपर था। परंतु आज भी भारत में ऐसे लोग हैं जो उतना भी नहीं कमा पा रहे हैं। उन्हें गरीबी की जंजीरों से मुक्त कराना है। परंतु जहाँ तक हमारे आंदोलन का सवाल है यह छत्तीसगढ़ के गरीबों और मजदूर वर्ग की सामाजिक-आर्थिक मुक्ति के लिए है।

सवाल – यह कहा जाता है कि जनता की बुनियादी आवश्यकताओं और आकांक्षाओं की पूर्ति करने में सरकार के असफल होने के कारण ही हिंसा, आतंक, क्षेत्रीयता और अलगाववाद की माँग पूरे देश में बढ़ी है। आप अपने आंदोलन की तुलना पंजाब, कश्मीर और असम की अशांति तथा अलगाववादी आंदोलन से कैसे करते हैं ?

नियोगी – सरकार वास्तव में भारत की जनता की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को पूरा करने में असफल रही है, खासकर भयंकर गरीबी में जी रहे बहुसंख्यक लोगों की। परंतु जहाँ तक पंजाब और कश्मीर का सवाल है वहाँ तो स्थिति पूरी तरह नियंत्रण

नियोगी ने इस एक घंटे की बातचीत में पत्रकारों से यह भी कहा कि जनोन्मुखी पत्रकारिता की दिशा में भी विकल्प की तलाश की जानी चाहिए। उन्होंने यह विश्वास दिलाया कि वे इस दिशा में होने वाले हर प्रयास के साथ हैं। इस विषय पर विस्तृत बातचीत के लिए उन्होंने अक्तूबर 1991 के दूसरे पखवाड़े में पत्रकारों से समय निर्धारित किया था। लेकिन . . . .

(' संडे ऑब्ज़र्वर ', 6 अक्तूबर 1991, से साभार ; मूल आलेख का संक्षिप्त स्वरूप।)

हम उस भाषा में बोलेंगे, जो भाषा सरकार समझती है

सितम्बर 1991 में नियोगी की दिल्ली यात्रा के दौरान ' इलस्ट्रेटेड वीकली ऑफ इंडिया ' की ओर से अमित प्रकाश ने उनसे 80 मिनट का साक्षात्कार लिया जिसे यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। जहाँ तक हमें पता है यह उनका अंतिम साक्षात्कार था।

— स-

सवाल — **लोग आपको भारत के एक प्रमुख मार्क्सवादी ट्रेड यूनियन नेता के रूप में जानते हैं। फिर भी आमतौर पर भारत के लोग छत्तीसगढ़ आंदोलन के बारे में अपेक्षाकृत कम जानते हैं। क्या आप इस सम्बन्ध में संक्षेप में कुछ बतायेंगे ?**

नियोगी — छमुमो मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ अंचल की जनता की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक उन्नति के लिए काम करता है। जैसा कि आप जानते ही होंगे कि छत्तीसगढ़ आधुनिक मध्य प्रदेश की कई उप-राष्ट्रीयताओं में से एक है। राज्य के कृत्रिम रूप से किये गये निर्माण के समय इन उप-राष्ट्रीयताओं की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को यथोचित सम्मान नहीं दिया गया था।

प्राचीन काल से ही छत्तीसगढ़ की जनता को समझने की कोशिश न तो कभी क्षेत्र के प्रबुद्ध नागरिकों ने की और न ही यहाँ के शासकों और प्रशासकों ने की। उनकी भाषा एवं जीवन शैली को हमेशा ही हीन भाव से देखा गया और उनके प्रति तिरस्कारपूर्ण व्यवहार भी किया गया। जब अंग्रेज आये तब वे रेल लाइन के निर्माण और आसाम के चाय बागानों में यहाँ के आदिवासियों से गुलामों की तरह काम लेने लगे।

सन् 1956 में भिलाई में इस्पात संयंत्र की स्थापना के साथ ही इस क्षेत्र में ' औद्योगीकरण ' की घुसपैठ शुरू हुई। आज भिलाई इस्पात संयंत्र एशिया के सबसे बड़े कारखानों में से एक है और प्रति वर्ष यहाँ पर बयालीस लाख टन इस्पात का उत्पादन होता है। जब औद्योगीकरण शुरू हुआ तब यह आशा जागी कि इस क्षेत्र

सवाल – सोवियत संघ और पूर्वी यूरोप में साम्यवाद का जो सफाया हुआ उसे आप कैसे लेते हैं ?

नियोगी – वहाँ जो कुछ हो रहा है उसके कारण उनके अपने समाज और अपनी व्यवस्था में मौजूद थे। जो लोग स्वयं द्वंद्वात्मक भौतिकवाद में आस्था रखने का दावा करते हैं और पिछले दशकों के घटनाक्रम पर मौन बने रहे और अब हाहाकर मचा रहे हैं, उन्हें सोवियत संघ के साथ-साथ अपना भी विश्लेषण कर लेना चाहिए। देखिये, मैं कोई ' अंतर्राष्ट्रीय केंद्र ' बनने की कम्युनिस्टों की अवधारणा के बिल्कुल विरुद्ध हूँ। मैं केवल द्वंद्वात्मक भौतिकवाद में विश्वास रखता हूँ। यह एक विज्ञान है। लेकिन विभिन्न देशों में इस विज्ञान का इस्तेमाल या इसका विश्लेषण कैसे होगा, यह वहाँ की तमाम सामाजिक-राजनैतिक परिस्थितियों पर निर्भर करेगा।

सवाल – जिस तरह का मॉडल आप छत्तीसगढ़ में बना रहे हैं, क्या अपने बाद के लिए आपने नेतृत्व की दूसरी कतार भी अभी तैयार की है ? लोग जानना चाहेंगे कि नियोगी के बाद कौन ?

नियोगी – मेरा मानना है कि दूसरी कतार हमेशा दूसरी पीढ़ी की होती है। कल को मैं नहीं रहूँगा, हमारे दूसरे साथी नहीं रहेंगे, तो नयी पौध आयेगी। प्रकृति का यही नियम है। छत्तीसगढ़ के मजदूरों के पास नेतृत्व की कमी नहीं। हमारे बाद दूसरी पीढ़ी हम लोगों का स्थान स्वयं ही ले लेगी। इसलिए यह ऐसा कोई दिक्कततलब या गम्भीर मसला नहीं है।

❑

(मूल साक्षात्कार के प्रमुख अंश।)

आंदोलन में वारिस तो पूरी पीढ़ी होती है

10 सितम्बर 1991 को नियोगी छत्तीसगढ़ के करीब ढाई सौ मजदूरों के साथ देश की राजधानी में धरना देने एवं राष्ट्रपति को ज्ञापन देने पहुँचे। इसी यात्रा के दौरान उन्होंने दिल्ली के दर्जनों पत्रकारों के साथ 12 सितम्बर को ' दिल्ली यूनियन आफ वर्किंग जर्नलिस्ट्स ' के दफ्तर में बातचीत की। दिल्ली के पत्रकारों के साथ नियोगी की यह अंतिम सामूहिक बातचीत थी। इस बातचीत को पत्रकार अनिल चमड़िया ने अपनी डायरी में उतार लिया था। डायरी के पन्नों के कुछेक अंश यहाँ प्रस्तुत हैं।

– स.

' महिला मोर्चा ' इस सबके साथ-साथ महिलाओं की विशिष्ट समस्याओं के प्रति उन्हें जागरूक करता है और लड़ना सिखाता है। उधर हमारे संगठन में शहरों की पढ़ी-लिखी कई महिला साथी कार्यरत हैं लेकिन महिला समस्याओं के बारे में वे भी एकांगी होकर नहीं, समग्रता से सोचती हैं, कार्य करती हैं।

सवाल – आपका झुकाव या जिस तरह से आप इस क्षेत्र में लगातार सीमित होते जा रहे हैं, तो क्या भविष्य में भी आपका इरादा छत्तीसगढ़ तक ही सीमित रहने का है ?

नियोगी – यह मुझे समझ में नहीं आता कि आप क्वालिटी (गुणवत्ता) चाहते हैं या क्वांटिटी (संख्या)। यदि आप क्वालिटी चाहते हैं तो आपको कहीं-न-कहीं लोकलाइज़्ड (स्थानीकृत) होना पड़ेगा। फिर जो लोग अलग-अलग हिस्सों में काम करते हैं, आप उनके बीच में आगे चलकर एकता बना सकते हैं। पहले अलग-अलग मॉडल बनने दीजिए और मॉडल तो एक छोटे क्षेत्र से ही शुरू हो सकता है।

सवाल – क्या आप पंजाब के खाड़कुओं के खालिस्तान का भी समर्थन करते हैं ?

नियोगी – खालिस्तान की माँग करने वाले, या खाड़कुओं का एक बड़ा हिस्सा जो भी कुछ आज पंजाब में कर रहा है उसमें क्षेत्रीयता या स्थानीयता नहीं है, उसके केंद्र में धर्म ज्यादा है। धर्म के तौर पर आप प्रदेश बनायेंगे तो सम्भव नहीं होगा। हाँ, जहाँ तक पंजाब में अकालियों के स्वायत्ततावादी आंदोलन की बात थी (जो कालांतर में खाड़कुओं के हाथों में पहुँच गया, कब और कैसे, और शासक दलों की उसमें क्या भूमिका रही, मैं उसके विस्तार में यहाँ नहीं जाऊँगा), तो वह बिल्कुल सही था। यह एक ऐसी ही माँग थी जैसे झारखंड या छत्तीसगढ़ की माँग। अलग राज्यों से हमारा आशय देश की मुख्यधारा से अलग-थलग हो जाना नहीं है, बल्कि छोटे राज्यों के निर्माण और उनके विकास व सम्पन्नता से राष्ट्रीय स्तर पर भाईचारे की भावना का और अधिक विकसित होना है।

सवाल – शुरू में आप ' इंडियन पीपुल्स फ्रंट ' से जुड़े थे, लेकिन बाद में उससे अलग हो गये। इसकी क्या वजह थी ?

नियोगी – ' फ्रंट ' के गठन के पहले जो सेमिनार दिल्ली में हुआ था, मैं उसमें शामिल था, लेकिन बाद में ' फ्रंट ' के विधिवत गठन के समय मैंने उसमें शामिल होना ठीक नहीं समझा। असल में शुरू में ' फ्रंट ' का घोषित उद्देश्य यह था कि विभिन्न स्थानों पर जो मोर्चे या जन संगठन कार्यरत हैं, जैसे झारखंड मुक्ति मोर्चा, विदर्भ मुक्ति मोर्चा, उत्तराखंड मुक्ति मोर्चा या हमारा छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा, इनके बीच तालमेल के लिए एक ढीला-सा संगठन या फेडरेशन या ' फ्रंट ' जैसी कोई चीज बने। हमारा मानना था कि देश में जो संघर्षशील साथी हैं, उनका एक संगठन बने, ताकि अपने-अपने अनुभवों और समझ को हम लोग ' शेयर ' कर सकें . . . . यानी वही क्वालिटी वाला सवाल। लेकिन एम. एल. का ' लिबरेशन ' गुट, जो इसकी तैयारी में सबसे अगुआ था, उसकी कार्यप्रणाली को देखकर लगा कि वे किसी भी तरह एक राष्ट्रीय खुला संगठन बनाने की हड़बड़ी में हैं। सिर्फ हड़बड़ी ही नहीं, वहाँ विभिन्न

ये सारे फौरी काम हमारे सामने थे।

सवाल — **आपकी गिनती मोटे तौर पर मार्क्सवादी नेता के रूप में की जाती है। फिर पहले दल्ली राजहरा में और अब दुर्ग में मद्यनिषेध आंदोलन चलाने के पीछे आपकी क्या मंशा थी ?**

नियोगी — श्रमिक पहले ही निर्धनता, हताशा और दुःख का शिकार होता है। ऐसे में शराब का सेवन न सिर्फ उसे और अधिक निर्धन बनाता है, बल्कि संगठन बनाने और संगठित होने में सर्वाधिक आड़े यही शराब आती है। इसलिए शराब का छुड़वाया जाना, उनके बीच काम करने की सबसे पहली शर्त होती है। दूसरे, इस आंदोलन में महिलाओं और बच्चों को शामिल कर लेने का महत्वपूर्ण काम भी आसानी से होता है क्योंकि आखिरकार श्रमिकों की शराबखोरी का सर्वाधिक शिकार तो महिलाओं और बच्चों को होना पड़ता है। मद्यनिषेध आंदोलन अपने-आप महिलाओं और बच्चों के व्यापक संगठन में बदल जाता है और बाद में इस संगठन में सामाजिक और आर्थिक जागरूकता के विचार-तत्वों को लाने की प्रक्रिया सहज और स्वाभाविक हो जाती है।

दूसरी बात जो आपने पूछी, वह बिल्कुल सही है। भारत के साम्यवादियों ने कभी भी मद्यनिषेध को कोई 'मसला' नहीं माना। जहाँ तक मेरा ताल्लुक है, यह एकदम सही है कि मार्क्सवाद इस बारे में मेरी कोई सहायता नहीं कर सका।.... (क्षणिक विराम)। देखिये, भारतीय साम्यवादियों के साथ कुछ तो बड़ी अजीब दिक्कतें रही हैं .... भारत की अपनी परिस्थितियों में मार्क्सवाद को लागू करने के बारे में उन्होंने कोई स्वतंत्र सोच ही नहीं किया .... अब यही मद्यनिषेध का 'मसला' लें। चूँकि मार्क्सवाद यूरोप से चला और चूँकि यूरोप की भौगोलिक परिस्थितियों में शराब आपत्तिजनक नहीं थी और चूँकि यूरोप के मार्क्सवादियों ने शराबबंदी का कोई आह्वान नहीं दिया, इसलिए हमारे देश के साम्यवादियों ने भी इसे कोई 'मसला' नहीं माना। मेरे लिए यह एक 'मसला' था। भारतीय साम्यवादी इस मामले में मेरी कोई मदद नहीं कर पा रहे थे। दूसरी तरफ, मेरी मदद को गांधी (वाद) थे और मैंने उन्हें ही पढ़कर सहायता ग्रहण की।

सवाल — **आपके शराबबंदी आंदोलन और गांधीवादियों के मद्यनिषेध में क्या आप कोई फर्क करते हैं ?**

नियोगी — दोनों की मंशा और उद्देश्य तो एक ही हैं। लेकिन हम लोग लगातार इस मामले को लेकर आंदोलन चलाते रहे और व्यवहार में उसे लागू भी कराते रहे। जहाँ तक गांधीवादियों का सवाल है, मद्यनिषेध उनके लिए एक स्टीरियोटाइप (लकीर के फकीर की तरह का) कार्यक्रम है। कैसेट बजा देने से कुछ नहीं होता। इसके अलावा मद्यनिषेध हमारे लिए मूल आंदोलन नहीं है। यह एक सहायक आंदोलन है — मूल आंदोलन को मदद पहुँचाने के लिए, जबकि गांधीवादियों का जो हिस्सा इसे संचालित करता है, उसके लिए यह अपने-आप में एक मूल आंदोलन है। यही वजह है कि

मेरी समझ अस्सी का दशक शुरू होते ही बदल चुकी थी। भिलाई-दुर्ग का औद्योगिक क्षेत्र चूँकि इस दिशा में महाक्षेत्र है, लिहाजा तकरीबन दो साल पहले मैंने भिलाई में काम शुरू किया।

सवाल — यहाँ काम शुरू करते समय आपको किस प्रकार की दिक्कतों का सामना करना पड़ा ?

नियोगी — शुरू में क्या, अभी भी दिक्कतें ही दिक्कतें हैं, दिक्कतें तो हमेशा होती हैं। चूँकि भिलाई और दुर्ग में बड़े-बड़े उद्योग-समूह हैं और ये संख्या में भी काफी हैं, लिहाजा आपसी बाजार प्रतिद्वंद्विता होने के बावजूद श्रमिकों के मामलों को लेकर उनके बीच बड़ी एकता है। हम लोगों का काम शुरू होने से पहले यहाँ इंटक और एटक की यूनियनें थीं। लेकिन वे संगठित और जुझारू तो नहीं ही थीं, साथ ही इस क्षेत्र की समस्याओं की जो अपनी विशिष्टताएँ हैं, उनके बारे में उनकी न तो कोई समझ थी और न ही विश्लेषण। वे औद्योगिक समूहों की गुंडागर्दी और आतंक के प्रति तो जागरूक थे (जाहिर है कि उसके पूरे दबाव में रहकर ही वे कार्यरत थे), लेकिन (जाने या अनजाने) यह सोचने-समझने को तैयार नहीं थे कि पूँजीपतियों की एकताबद्ध गुंडागर्दी का मुकाबला करने के लिए यहाँ की श्रमिक शक्ति पूरे तौर पर सक्षम हो सकती है, बशर्ते कि उनके बीच जुझारू एकता कायम करवायी जाये। इस समझ के अभाव में उनकी भूमिका एक दबाव गुट के बजाय याचक की ज्यादा होती थी जो अपने झंडे तले इकट्ठा मजदूरों से चंदा बटोरने में तो बड़े सख्त थे लेकिन उद्योग समूहों को माँग पत्र देने में बड़े लचीले (मुस्कराहट)। इसलिए श्रमिकों को लगातार अपने अधिकारों से वंचित रहना पड़ता था।

इस पूरे क्षेत्र में हम लोगों की छवि एक जुझारू संगठन की बन चुकी थी। इसलिए हमें पता था कि यहाँ काम शुरू करते ही हम पर हमले शुरू हो जायेंगे। इसलिए लगभग डेढ़ साल तक हमने अपना काम और संगठन गुप्त और भूमिगत रखा। हमें पता था कि यहाँ का उद्योगपति कितना खूँखार है। लिहाजा हमने अलग-अलग औद्योगिक इकाइयों में लोगों को व्यक्तिगत रूप से लेकर संगठित करना शुरू किया। चूँकि भिलाई और दुर्ग का अधिकांश श्रमिक निकटवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों से आता है, जहाँ छमुमो का पहले से ही काम था, अतः हमने अपने ग्रामीण सम्पर्कों को इन श्रमिकों को संगठित करने का काम सौंपा। यदि आप भारत के श्रमिक आंदोलन के इतिहास को देखें तो यह एक प्रकार का नया प्रयोग लगेगा जहाँ शहरी श्रमिकों को संगठित करने का प्रारम्भिक कार्य शहरों से शुरू न होकर गाँवों से हुआ। आप इसे 'प्रयोग' मानें या हमारी 'मजबूरी'। बहरहाल, इस नये प्रकार की सोची-समझी रणनीति को आधार बनाकर संगठन की शुरूआत का सिलसिला बड़ी दिलचस्प प्रक्रिया थी जिसके परिणाम बेहद सकारात्मक निकले। संगठन बनाने और उसके व्यापक विस्तार की यह भूमिगत और गुप्त प्रक्रिया पिछले वर्ष के पूर्वार्द्ध तक चलती रही। पिछले अक्तूबर में ही हमने अपने काम और संगठन को बाकायदा खुला रूप दिया और खुलकर इसका ऐलान किया।

से नये समाज की सृष्टि होती है, जन संघर्ष से जन्म लेती है नयी जन संस्कृति, नया गीत, नयी जन कविता, नयी कहानी। एक दिन आंदोलन समाप्त होता है, लेकिन कहानी रह जाती है। आंदोलन से उभरे गीत व कविताएँ आनेवाली पीढ़ी को संघर्ष के लिए प्रेरित करते रहते हैं। अन्याय के खिलाफ, शोषण के खिलाफ जन आंदोलन की कहानियों से, गीत-कविताओं से जनता शिक्षा लेती है। कामरेड फागूराम के गीत दल्ली राजहरा के आंदोलन से उभरे थे, लेकिन वे गीत आज भिलाई के भी गीत बन चुके हैं। फागूराम से प्रेरणा लेकर भिलाई-उरला-कुम्हारी-टेडेसरा के कई मजदूर साथियों ने गीत लिखना शुरू कर दिया है। नयी संस्कृति का विकास ऐसे ही होता है।

लेकिन हमारी कला व दूसरे वर्ग की कला में फर्क क्या है ? हमारे मनोरंजन और दूसरे वर्ग के मनोरंजन में क्या फर्क होना चाहिए , वह भी हमें समझना होगा। क्योंकि मजदूरों में भी पूँजीवादी विचार घुस सकता है।

पूँजीवादी संस्कृति का आवाम की जिंदगी के साथ सम्पर्क नहीं रहता है, यह संस्कृति आसमान में उड़नेवाली संस्कृति है।

मजदूर वर्ग की संस्कृति का सम्बंध मजदूर जीवन के यथार्थ से होता है — पुलिसिया दमन, महँगाई, मजदूर के जीवन-संघर्ष, वर्ग संघर्ष, नये समाज की कल्पना, इस संस्कृति के विषय होते हैं।

शोषक जनता को मार सकता है, लेकिन जन कवि की कल्पना को खत्म नहीं किया जा सकता है।

हमारी संस्कृति निराशा की बात नहीं बोलती, हताशा नहीं फैलाती। आशा का, उम्मीद का संचार करना हमारी संस्कृति का काम है। सिम्पलेक्स के मजदूरों को देखो, आठ महीने से काम बंद है, मजदूर बस्ती में भुखमरी छायी हुई है, लेकिन मजदूर हताश नहीं है। क्योंकि मजदूर जानते हैं कि वर्ग संघर्ष के नियम से जीत उनकी ही होगी, जंजीर टूटेगी, आजादी मिलेगी।

हमारी कला, हमारी संस्कृति, दुनिया के इतिहास की शिक्षा को जनता तक पहुँचायेगी, आशा की बात पहुँचायेगी। सहनशीलता की आखिरी सीमा तक दमन-उत्पीड़न सहन करने की प्रेरणा देंगे हमारे गीत-कविता।

मजदूर आंदोलन में घुसे दलालों, चमचों को बेनकाब करेंगे हमारे गीत। हमारे आंदोलन के बीच अगर कोई गलत प्रवृत्ति या धारा हो, तो उसका खुलासा भी हमें गीत के जरिये करना होगा।

ऐसे गीत लिखो जो नये समाज की बात बताते हों, समता की बात बताते हों, जिन्हें सुनकर शोषणविहीन समाज की कल्पना जाग उठती हो, समता का विचार बोया जाता हो।

इंसानियत और हैवानियत के बीच हम इंसानियत का पक्ष लेते हैं। हमारी संस्कृति इंसानियत का पक्ष लेगी।

❑

मजदूर संगठन, समाज परिवर्तन की दिशा में काम करें

1 मई 1991 (मजदूर दिवस) से रायपुर से शुरू होने वाली पत्रिका ' मासिक राष्ट्र बंधु ' हेतु हरि ठाकुर द्वारा नियोगी से पत्र-व्यवहार के माध्यम से लिया गया साक्षात्कार। — *स.*

सवाल — क्या समाज की तमाम समस्याओं से काट कर देश में ट्रेड यूनियनवाद को जीवित रखा जा सकता है ?

नियोगी — नहीं ! ट्रेड यूनियनें मजदूरों को मौजूदा व्यवस्था में अपने काम की शर्तों और हालातों को बेहतर करने के लिए संगठित करती हैं, लेकिन यह तो समाज के एक तबके के जीवन का एक पहलू मात्र है। अगर मेहनतकशों के जीवन के अलग-अलग पहलुओं की उपेक्षा करके मात्र इसी एक पहलू को देखें तो वह ट्रेड यूनियन ज्यादा दूर नहीं जा सकती है। वह एक संकुचित और कमजोर आंदोलन बनकर रह जायेगी। उसमें जिंदापन खत्म हो जायेगा। अक्सर इस किस्म के संकुचित ट्रेड यूनियन एक समय के बाद मजदूरों के हितों के खिलाफ काम करने लगते हैं।

सवाल — क्या सामाजिक परिवर्तन लाने की दिशा में मजदूर संगठन कोई भूमिका निभा सकते हैं ?

नियोगी — मजदूर जो इस व्यवस्था में शोषित-पीड़ित हैं, वे ही अपने जीवन को अपने आंदोलन व अपने संगठन के जरिये बेहतर बना सकते हैं। उन पर राज़ करने वाले उनके खून-पसीने पर जीने वाले तो चाहेंगे ही कि वे हमेशा के लिए उनके गुलाम बन कर रहें। यह व्यवस्था ऐसी बनी हुई है कि अगर मजदूर खुद आंदोलन न करें तो उनकी जिंदगी बदतर ही होती जायेगी। इसलिए मजदूर संगठनों का दायित्व बनता है कि वे इस दिशा (समाज परिवर्तन की दिशा) में काम करें और केवल खुद के लिए ही नहीं, बल्कि समाज के सभी शोषितों, पीड़ितों, किसानों और औरतों के आंदोलनों को भी मदद दें। उदाहरण के तौर पर, छत्तीसगढ़ में बाहरी लुटेरों के द्वारा यहाँ की जनता को लूटने की जो व्यवस्था बनी हुई है, उसके खिलाफ आंदोलन खड़ा करने में सी. एम. एस. एस. ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

सवाल — क्या साम्प्रदायिक, राजनैतिक, प्रशासनिक दुराग्रहों, कुरीतियों, विषमताओं और विरोधाभासों से लड़ने के लिए मजदूर संगठनों की कोई भूमिका हो सकती है ?

नियोगी — इस सवाल का जवाब भी हमारे सी. एम. एस. एस. के काम में ही आपको मिलेगा। शराबखोरी, जुआखोरी, महिलाओं की प्रताड़ना, दहेज, भ्रष्टाचार जैसी कई सामाजिक बुराइयों पर जनता की पहलकदमी और सक्रिय कार्रवाई द्वारा हमला बोलने का काम हमारी ट्रेड यूनियन ने किया है।

सवाल — धर्मनिरपेक्षता, राष्ट्रीय एकता, प्रजातांत्रिक मूल्यों तथा नागरिक अधिकारों की रक्षा जैसे मुद्दों से क्या मजदूर संगठनों को तटस्थ रहना चाहिए ?

को वेतन और बोनस के मसलों में उलझा दिया है। मैं भी शुरू में बोनस और मजदूरी जैसे मसलों पर जुलूस, जलसे करके सही रास्ते से भटक गया था। मजदूरी बढ़ने पर हमारे यहाँ मजदूरों में शराब पीने की लत बढ़ गयी। हमें अपनी गलती का अहसास हुआ और हमने मजदूरों की समझ बढ़ाने का काम शुरू किया। श्रमिकों और गरीबों में शराब की आदत छुड़ाने, महिलाओं को जागृत करने, कुरीतियाँ मिटाने जैसी अनेक उपलब्धियाँ हमने हासिल कीं। दल्ली राजहरा में एक अस्पताल शुरू करने के साथ-साथ हमने स्वास्थ्य कार्यकर्त्ताओं की एक टीम खड़ी की। हमारे यहाँ हर काम मजदूरों के निर्णय और उनकी भागीदारी से होता है। नयी सरकार ने औद्योगिक प्रबंधन में श्रमिकों की भागीदारी की घोषणा की है। लेकिन यह घोषणा अस्पष्ट है। इसका खुलासा होना चाहिए कि यह भागीदारी किस प्रकार की होगी – तकनालाजी, औद्योगिक रिश्ते और विपणन के किस क्षेत्र में और किस सीमा तक होगी। यह भी सुनिश्चित होना चाहिए कि श्रमिकों के नाम पर ऐसे श्रमिक नेताओं की भागीदारी बिल्कुल न हो जो श्रमिक न हों।

आज हमारे देश में 35 करोड़ जनता गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी और तकलीफ का जीवन जी रही है। ऐसे जीवन को कैसे विकास कहा जायेगा ? सत्ता में बैठे शोषक वर्ग के लोग ठेकेदारों के मार्फत गरीबों को लूट रहे हैं। गरीबों की अपनी संस्कृति और पहचान खत्म की जा रही है। राष्ट्रीयता का सवाल जटिल होता जा रहा है। हमें इसे सरल करना होगा। हमारा देश जब गुलाम था तब यहाँ से रूई और लोहा दूसरे देशों को जाता था। **कच्चा माल देश से बाहर भेजना गुलाम देश की नीति रही है।** आज भी बस्तर का लौह अयस्क जापान भेजा जा रहा है। आज भी हम गुलामी की नीति पर कायम हैं। ऐसी हालत में सत्ता में बैठे लोगों द्वारा विकास की बात कहना बेमानी है।

❑

इंसान और जंगल के रिश्ते फिर से जीवित

जलपाईगुड़ी में नियोगी का बचपन बीता था। जुलाई 1990 में वे जलपाईगुड़ी गये तो बचपन के अनेक साथियों ने उनसे गहन चर्चाएँ कीं। उसी दौरान उनकी 'जलपाईगुड़ी साइंस एंड नेचर क्लब' के मंच पर पर्यावरण के मुद्दे पर चर्चा हुई जिस पर आधारित एक संक्षिप्त रपट बिमलेन्दु मजुमदार ने तैयार की है। — स.

नियोगी ने चर्चा के दौरान बताया कि शुरू में उन्होंने एक जंगल के ठेकेदार के यहाँ श्रमिक के रूप में कार्य किया। उस समय वन संरक्षण के प्रति उनकी रुचि जागी। बाद में उनका संगठन

पर आधारित जन-विरोधी व्यवस्था को बदलने के लक्ष्य को लेकर ही हम ' संघर्ष व निर्माण ' की राजनीति की बात करते हैं।

❑

(मूल बंगला से दुलदुल विश्वास द्वारा अनूदित एवं अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित ' संघर्ष औ' निर्माण ' से साभार।)

शांति उपाय है, क्रांति दृष्टिकोण है, विकास उद्देश्य है

4 से 6 अप्रैल 1990 को भोपाल में म. प्र. के सामाजिक कार्यकर्त्ताओं का एक सम्मेलन हुआ था। यह सम्मेलन समाज परिवर्तन में सामाजिक कार्यकर्त्ताओं व संगठनों की भूमिका और सहमति के मुद्दों के आधार पर कार्यनीति तय करने के लिए आयोजित किया गया था। नियोगी ने विकास की अवधारणा पर 5 अप्रैल 1990 को अपने विचार व्यक्त किये थे और बाद में आम सभा में भाषण भी दिया था। सम्मेलन के बाद, ' दैनिक नई दुनिया ' (भोपाल) के नगर प्रतिनिधि से उनकी चर्चा हुई थी। सम्मेलन, आम सभा और पत्रकार के साथ हुई चर्चा में नियोगी द्वारा व्यक्त किये गये विचारों को श्याम बहादुर ' नम्र ' ने इस लेख में संजोया है। — *स.*

आजकल हर तरफ विकास की बात कही जाती है। विकास और विनाश ये ऐसे शब्द हैं जो परस्पर विरोधी हैं, लेकिन ये एक-दूसरे के बहुत निकट भी हैं। कभी-कभी इनका उपयोग एक-दूसरे के अर्थ में भी किया जाता है।

आधुनिकीकरण के नाम पर औद्योगिक विकास के लिए बड़ी-बड़ी मशीनें लगायी जा रही हैं। और इसे ही औद्योगिक विकास कहा जा रहा है। भिलाई इस्पात संयंत्र में सन् 1986 में 96 हजार मजदूर काम करते थे। बाद में मशीनीकरण करके 24 हजार मजदूरों की छँटनी कर दी गयी। अब वहाँ केवल 72 हजार मजदूर काम कर रहे हैं। इसी तरह बैलाडीला में जब मशीनें नहीं थीं तब 10 हजार अतिरिक्त मजदूरों को काम मिलता था और लौह अयस्क का उत्पादन 35 रु. प्रति टन की लागत पर होता था। अब जबकि वहाँ मशीनीकरण हो गया है, तब 10 हजार मजदूरों की छँटनी कर दी गयी और लौह अयस्क के उत्पादन की लागत 35 रु. प्रति टन की दर से बढ़कर 150 रु. प्रति टन हो गयी। भारी संख्या में मजदूरों की छँटनी से न केवल क्षेत्र का बाजार प्रभावित हुआ बल्कि क्षेत्र की सारी सामाजिक व्यवस्था ही गड़बड़ा गयी। **इस तरह के औद्योगिक विकास ने गरीब मजदूरों का विनाश कर दिया।**

मैंने प्रधान मंत्री वी. पी. सिंह, योजना आयोग के उपाध्यक्ष श्री हेगड़े और इस्पात मंत्री

मोर्चा सरकार विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करती है। मनमाने ढंग से और जल्दबाजी से कार्य करना इनके लिए मुश्किल है। बल्कि एक सीमा तक अपने संस्कारों से जुड़े रहकर ये आगे कदम उठायेंगे और इसी समय श्रमिक वर्ग और जनतांत्रिक शक्तियों को एकजुट होकर अपना कार्य करना होगा।

सवाल — भाजपा और माकपा के बारे में आपका क्या मत है ?

नियोगी — इस चुनाव में भाजपा ने हिन्दू भावनाओं का उपयोग करते हुए अपनी सीटें बढ़ायी हैं। यह मूलतः व्यापारियों का दल था। किंतु आजकल इसे सामंतवादी एवं पूँजीवादी शक्तियों का भी समर्थन प्राप्त है। ये लोग पहले कांग्रेस को समर्थन दे रहे थे। परंतु इन शक्तियों के भावनात्मक समर्थन की यह लहर ज्यादा दिन नहीं टिकेगी। माकपा को शासक दल के किसी-न-किसी हिस्से के साथ अपना गठजोड़ करना पड़ रहा है। राष्ट्रीय राजनीति में, विशेषकर हिन्दी भाषी क्षेत्र में, माकपा अपनी शक्ति बढ़ाने में असफल रही है।

सवाल — आप लोग चुनाव में क्यों खड़े हुए ?

नियोगी — चुनाव में हमने पहले भी भाग लिया है। इस बार लोक सभा के चुनाव में हमने काँकेर क्षेत्र से अपना उम्मीदवार खड़ा किया था। हमें लगभग 60,000 वोट मिले। निर्वाचन के समय मतदाता अलग-अलग पार्टियों के घोषणा पत्रों द्वारा ही उनके विचारों से अवगत होता है। हमने भी चुनाव के दौरान अपनी ' संघर्ष और निर्माण ' की राजनीति का प्रचार किया।

सवाल — इससे क्या लाभ हुआ ?

नियोगी — दूर-दराज के अंचलों से हमारा सम्पर्क बढ़ा। छत्तीसगढ़ के विभिन्न इलाकों के बीच हमारा संगठन फैल रहा है।

सवाल — छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा और झारखंड मुक्ति मोर्चा के वक्तव्यों में क्या फर्क है ?

नियोगी — झा. मु. मो. एक पृथक राज्य की माँग कर रहा है। हम एक नये छत्तीसगढ़ के निर्माण की बात करते हैं। यहाँ समस्या अलग राज्य की न होकर, शोषण की है। हम जन-विरोधी व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष छेड़ने के लिए छत्तीसगढ़ की जनता का आह्वान करते हैं।

सवाल — आप क्या भारतवर्ष से अलग होने की बात कर रहे हैं ?

नियोगी — देखो, हम कह रहे हैं कि एक नये भारत के गठन के लिए एक नये छत्तीसगढ़ का निर्माण हो। भारत सिर्फ एक राष्ट्रीयता वाला राष्ट्र नहीं है। विभिन्न राष्ट्रीयताओं और ' राष्ट्रीय ' समूहों को मिलाकर देश का गठन हुआ है। अतः एक ओर, इस देश में वर्ग-आधारित आंदोलन के साथ-साथ राष्ट्रीयताओं की मुक्ति के लिए भी आंदोलन किये बगैर सम्पूर्ण परिवर्तन सम्भव नहीं है। तो दूसरी तरफ, देश से जुड़े भावनात्मक लगाव को नकार कर अलग होने की बात करना भी अर्थहीन है। इसलिए श्रमिक वर्ग को विभिन्न राष्ट्रीयताओं के विकास कार्य को शीघ्र ही कार्यान्वित करने की जिम्मेदारी लेनी पड़ सकती है। मेरा यह स्पष्ट मत है कि श्रमिक वर्ग के नेतृत्व

नियोगी – हम ट्रेड यूनियन के आर्थिक पक्ष से आगे जाने की कोशिश कर रहे हैं। मजदूर भी हमें ट्रेड यूनियन से कुछ अधिक ही मानकर चलते हैं। जो महिला वहाँ बैठी है, वह एक सामाजिक समस्या को लेकर यहाँ आयी है और वह दूसरा आदमी अपने गाँव की किसी जमीन की समस्या के बारे में चर्चा करने आया है।

परंतु हम यह नहीं कह सकते कि हम सफल हो गये हैं। अर्थवाद के अलावा हमें यह भी याद रखना होगा कि सरकार हमारे नेताओं को भ्रष्ट करने की कोशिश कर रही है। उसे 5 प्रतिशत नेताओं और कुछेक मजदूरों को भी भ्रष्ट करने में सफलता मिली है। मैनेजमेंट के इस भ्रष्ट प्रभाव से जूझना एक टेढ़ी खीर है। हमें माहौल बदलना पड़ेगा। हम भ्रष्ट तौर-तरीकों के खिलाफ संघर्ष करके स्थिति को बदलने की कोशिश कर रहे हैं।

हम दूसरे मुद्दों को भी उठा रहे हैं। जैसे, यहाँ पर मजदूरों द्वारा शराब पीने की आदत एक प्रमुख समस्या है। ऐसा लगता है कि मजदूर बस्ती में पानी के नलों से ज्यादा तो शराब की गैर-कानूनी दुकानें हैं। अपने गाँवों में कभी-कभार और सामाजिक उत्सवों पर शराब पीने वाले आदिवासी यहाँ आने पर जिंदगी में तनाव और असंतुलन के चलते आदतन शराबी बन जाते हैं। धीरे-धीरे मजदूर अपना स्वाभिमान तथा संगठित होने व सोचने की क्षमता खोने लगता है। इसके अलावा, शराब के ऊपर बहुत सा पैसा बर्बाद होने के कारण मजदूर और ज्यादा पैसे की माँग करते रहते हैं। इसके परिणामस्वरूप ट्रेड यूनियनें अर्थवाद के कुचक्र में उलझ गयी हैं। मजदूर वर्ग की एकता धीरे-धीरे खत्म होती जा रही है।

हम इस मुद्दे पर काम करने के साथ-साथ मजदूरों के स्वास्थ्य जैसे अन्य मुद्दों को भी उठा रहे हैं। इस क्षेत्र के दूसरे संगठन भी हमारी तरफ एक ट्रेड यूनियन से कुछ अधिक होने की नजर से देखते हैं। अपने-अपने आंदोलनों के तहत शराबबंदी का कार्यक्रम करने वाले लोग हमें अपनी सभाओं में बुलाते हैं। हम एक अस्पताल भी चलाते हैं और इस योजना को भी एक आदर्श के रूप में दूसरे अपना सकते हैं।

साथ ही सांस्कृतिक पक्ष को भी नजरअंदाज नहीं किया जाता है। हर साल हम आदिवासी नेता शहीद वीर नारायण सिंह की बरसी पर समारोह का आयोजन करते हैं। किसी भी सरकारी आयोजन से कहीं ज्यादा लोग इस समारोह पर इकट्ठा होते हैं क्योंकि इसमें उन्हें अपनी संस्कृति की बेहतर अनुभूति मिलती है। उदाहरण के लिए, पिछले साल इस इलाके में पाँच मंत्री वीर नारायण सिंह दिवस पर घूमे और लोगों को आकर्षित करने की कोशिश की। वे लोग पंद्रह हजार से ज्यादा लोगों को इकट्ठा नहीं कर सके, जिनमें से अधिकतर बाद में हमारे आयोजन में शामिल हो गये, जबकि हमारे आयोजन में सत्तर हजार लोग मौजूद थे।

❑

(इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट, नयी दिल्ली, की पत्रिका ' सोशल एक्शन ' के जनवरी 1984 के अंक से साभार ; मूल अंग्रेजी से अनूदित।)

हैं।

इसके अलावा, कानून में बहुत सी खामियाँ होती हैं जो मैनेजमेंट की तरफदारी करती हैं। उदाहरण के लिए, किसी श्रम कानून का उल्लंघन करने पर मैनेजमेंट को बहुत कम जुर्माने की सजा दी जाती है। लेकिन इन कानूनों को तोड़ने से उसे जो मुनाफा मिलता है, वह बहुत ज्यादा होता है। परंतु कानून तोड़ने पर मजदूरों को कहीं ज्यादा दंड दिया जाता है।

बहरहाल, साथ ही यह भी कहना उचित होगा कि जब मजदूर संगठित हो जाते हैं तो उन्हें कानून की जरूरत नहीं पड़ती। तब वे अपने लिए बेहतर परिस्थितियों हेतु बातचीत स्वयं कर सकते हैं और इस प्रक्रिया में अपने स्वाभिमान के अहसास को मजबूत कर सकते हैं। परंतु जब वे असंगठित होते हैं, तो कानूनी तौर पर जो उन्हें मिलना चाहिए, वह नहीं मिल पाता है। अतः अगर बातचीत के द्वारा, मजदूरों को कानूनन जो हक मिलना चाहिए, उससे कुछ कम भी मिले, तो भी यह उनकी हिस्सेदारी के बगैर सिर्फ कानूनी तौर पर मिलने वाले फायदे से बेहतर होगा क्योंकि यह प्रक्रिया उनका आत्मविश्वास बढ़ायेगी। भारत में कानूनों की भूमिका तो है पर वह सिर्फ जन आंदोलनों को मजबूत करने के संदर्भ में है, अलग से उनकी कोई भूमिका नहीं है।

सवाल — सन् 1980 के बाद से कोई भी बड़ा ट्रेड यूनियन आंदोलन सफल क्यों नहीं हो पाया ?

नियोगी — हाल में किसी भी बड़ी हड़ताल के सफल न होने का कारण मुख्यतः आर्थिक मंदी है। उद्योगों में उत्पादन उद्देश्यहीन है। मैनेजमेंट कभी भी यह प्रश्न नहीं उठाता कि एक तयशुदा तरह का ही उत्पादन क्यों हो रहा है। इसी तरह पूँजी कहाँ और किस प्रकार लगायी जा रही है, इस पर भी सवाल नहीं उठाया जाता है। उदाहरण के लिए, भिलाई का, जो पूरी तरह से विदेशी बाजार पर निर्भर है, विस्तार किया जा रहा है, पर स्थानीय जरूरत के लिए उत्पादन करने वाले राउरकेला का नहीं। चूँकि मैनेजमेंट के लिए स्थानीय जरूरत के अनुसार कदम उठाने की कोई मजबूरी नहीं होती, इसलिए उसे हड़ताल और उत्पादन में घाटे की कोई फिक्र भी नहीं करनी पड़ती है। जिस प्रकार से कुछ मिलों और चाय बागानों को 'बीमार' घोषित कर दिया जाता है, वह हमारी पूँजी लगाने की गलत नीतियों का जीता-जागता उदाहरण है। हमारे उद्योग जो पहले दुधारू गाय की तरह थे, अब उनके साथ 'पवित्र गाय' जैसा व्यवहार किया जा रहा है। उद्योगपति तब उद्योगों में कोई पूँजी नहीं लगाते जब उनसे मुनाफा हो रहा होता है। और जब उद्योग मुनाफा देना बंद कर देते हैं तब उनसे उस 'पवित्र गाय' की तरह व्यवहार किया जाता है, जिसे न तो मारा जाता है और न मरने ही दिया जाता है, वरन् उन्हें बूढ़ी गायों के किसी केंद्र में सुरक्षित रखा जाता है जहाँ उन पर दुर्लभ संसाधनों का अपव्यय किया जाता है। ऐसा इसलिए होता है चूँकि दबावों के कारण सही निर्णय लेना सम्भव नहीं होता और बीमार मिलों और चाय बागानों का अधिग्रहण सरकार को करना ही पड़ता है। इस तरह के पूँजी निवेश के कारण उद्योगों को उत्पादन के घाटे से कोई फर्क नहीं पड़ता है। इसी कारण से हमारे

ने शराब और आर्थिक जीवन पर एक शोधपत्र तैयार किया है। हमने मजदूरों को उसकी जानकारी दी। इस तरह हुआ सब। अचानक नहीं।

सवाल – यूनियन का काम चलाने के लिए आर्थिक स्रोत मजदूरों से लिया जाने वाला वार्षिक शुल्क ही है या और भी कोई व्यवस्था ?

नियोगी – हमारे आर्थिक स्रोतों के बारे में बड़े भ्रम हैं। तीन साल में हमारी यूनियन की जितनी सम्पत्ति बनी है, उतनी शायद ही किसी और यूनियन की बनी हो। हमारी यूनियन की इमारत है। हमारे पास जीप है। प्रोजेक्टर है। टेप रिकार्डर है। लाउड स्पीकर है। कुर्सियाँ हैं। बहुत चीजें हैं। ज्यादातर चीजें मजदूरों ने दान में दी हैं। इमारत और जीप के लिए यूनियन ने पहल की थी। बजट बनाकर मजदूरों को बताया गया था कि इतने पैसे चाहिए। मजदूरों ने दिये। बाहर से कोई मदद नहीं लेते हम।

सवाल – कितना कोष है आपकी यूनियन के पास ?

नियोगी – हमारे पास कोई कोष नहीं है, पर हमारे पास कोष की कोई कमी भी नहीं है। ❑

(' गांधी मार्ग ', नयी दिल्ली, दिसम्बर 1991, से सम्पादित एवं साभार।)

भारत में मजदूर संगठन और औद्योगिक रिश्ते

वॉल्टर फर्नाण्डिस (इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट, नयी दिल्ली) द्वारा सन् 1983 में विभिन्न गैर-दलीय ट्रेड यूनियन नेताओं के लिये गये सामूहिक साक्षात्कार से उद्धृत अंश यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं। इस साक्षात्कार में जिन्होंने भाग लिया वे इस प्रकार हैं –

1. मायकेल फर्नाण्डिस – तत्कालीन अध्यक्ष, हिन्द मजदूर किसान पंचायत, बंगलूर ;
2. दत्ता सामंत – मुम्बई गिरनी कामगार यूनियन, बम्बई ;
3. डी. थंकप्पन – कमानी एम्प्लाईज़ यूनियन, बम्बई ;
4. जॉर्ज फर्नाण्डिस – सांसद एवं हिन्द मजदूर किसान पंचायत, नयी दिल्ली ;
5. ए. के. राय – भूतपूर्व सांसद एवं अध्यक्ष, मार्क्सिस्ट को-ऑर्डिनेशन कमेटी, धनबाद ;
6. गणेश पांडे – कानपुर के ट्रेड यूनियन नेता ;

जानकारी नहीं है। परंतु मैं जितना जानता हूँ उसके हिसाब से कह रहा हूँ कि जो लोग मार्क्सवाद-लेनिनवाद पढ़कर जनता में नयी चेतना और देश में नयी उत्पादन पद्धति के विकास में लगे हैं, वे जरूर अच्छे होंगे। लेकिन इस बारे में कोई ऐसी मिसाल आपके पास है क्या कि किस-किस जगह नयी उत्पादन पद्धति का इन लोगों ने विकास किया ?

सवाल — सामाजिक परिवर्तन की दिशा में आप मजदूरों की भूमिका ज्यादा महत्वपूर्ण समझते हैं या किसानों की ?

नियोगी — दोनों को जुड़ना पड़ेगा। तभी कुछ होगा। पर मजदूरों का नेतृत्व जरूरी है। किसान अभी नेतृत्व की स्थिति में नहीं है।

सवाल — लेकिन सवाल यह पैदा होता है कि मजदूर के रहन-सहन का स्तर ज्यों-ज्यों बढ़ता है, त्यों-त्यों उसमें अर्थवाद आने लगता है। वह सुविधाभोगी होता जाता है। आपके यहाँ, छत्तीसगढ़ में भी वेतन बढ़ेगा तो यह अर्थवाद आयेगा ही।

नियोगी — संगठन का जो ध्येय होता है, वैसे ही सब कुछ होता है। हम लोगों ने अब तक यही तो सिखाया कि 'इंकलाब जिंदाबाद' का नारा लगाओ और अपनी रोजी बढ़वाओ ! हमने कभी भी तो नहीं कहा कि आप उत्पादन भी करो। कोई ट्रेड यूनियन नेता बोला आज तक कि उत्पादन भी बढ़ाओ ? शोषण से बचने के लिए मजदूर संगठनों ने बस आर्थिक माँग ही सिखायी। समाज की जो स्थिति है, उसके बारे में कुछ नहीं बताया। पहले मजदूर 12 घंटे काम करता था। अब आठ घंटे की ड्यूटी हो गयी। लेकिन किसी यूनियन ने बताया कभी कि बचे हुए चार घंटों का कैसे सदुपयोग करें ? हमको बोनस ज्यादा चाहिए। ठीक है। पर ज्यादा बोनस के लिए उत्पादन भी तो ज्यादा होना चाहिए न ? अगर सरकार या मालिक जानबूझकर उत्पादन कम कर रहा है, तो दबाव डालकर उत्पादन बढ़वाना चाहिए। यह बात कभी किसी यूनियन ने उठायी है ? हमारे देश में तो उत्पादन बहुत हो सकता है। कच्चा माल बहुत है। आदमी भी बहुत हैं। बाजार भी बहुत है। पर यहाँ का पूँजीपति वर्ग उत्पादन करना ही नहीं चाहता। हमें दबाव डालना चाहिए कि उत्पादन करना पड़ेगा। वरना हम हरजाना लेंगे।

कृषि उत्पादन में भी यही होता है। टमाटर दस पैसे किलो बिकता है, गेहूँ सड़ा दिया जाता है, पर बाजार में नहीं भेजा जाता। सरकार से माँग होती है कि अनाज की कीमत बढ़ाओ। यह माँग वे जमींदार करते हैं जो अनाज की जमाखोरी कर सकते हैं। तो भाव बढ़ने से लाभ होगा तो उन्हीं को होगा, किसानों को नहीं। पिछली बार हमारी यूनियन का कार्यक्रम था कि किसानों से सीधे अनाज खरीद कर मजदूरों में बाँटें। हमने हिसाब लगाया कि मजदूरों को कितना धान चाहिए। हम किसानों के पास गये कि अगर आपको धान बेचना है तो हमें बेच दीजिये। हम मंडी से पाँच रुपये ज्यादा देंगे। पर उस बार कार्यक्रम पूरा नहीं हो पाया। मैं गिरफ्तार हो गया। और भी साथी जेल चले गये। सबने काम बंद कर दिया। सब बिखर गया।

में जो फर्क पड़ रहा है, वह अदा करना पड़ेगा। यानी कुल मजदूरी का 80 प्रतिशत बैठे-बैठे दो। तो इज्जत के सवाल से शुरू होकर माँग आर्थिक बन गयी। इससे हमारी मजदूरी जो 3-4 रु. रोज थी, वह अपने आप बढ़कर 11 रुपये 96 पैसे हो गयी। प्रबंधकों ने सोचा कि बैठे-बैठे पैसे देने पड़ते हैं तो 'वर्किंग कंडीशंस' ही सुधार दो। दूसरी बात हमने कही कि आप लोग क्वार्टर में रहते हैं। ऐसे क्वार्टर हमारे लिए भी बना दो। हम भी मेहनत करके खाते हैं। तुम्हारे लिए इतना आराम तो हमारे लिए क्यों न हो ? यह भी हमारी इज्जत का सवाल है। तो इस मुद्दे से फिर एक आर्थिक माँग पैदा हो गयी। उन्होंने माँग मानी कि ठीक है, भई, इन लोगों को घर-द्वार सुधारने के लिए 100 रुपये दिये जायें। इन दोनों माँगों के लिए सन् 1977 में हमें गोली भी खानी पड़ी। हमारी लड़ाई तो यह थी कि हम कम नहीं हैं तुम से। माँग तो उन्होंने ही बना दी।

सवाल — आपने पहले एक बार बताया था कि शराब के ठेकेदारों के हथियारबंद गिरोह हैं आपके इलाके में और वे हमले करते हैं आपके लोगों पर। तो आप अपने लोगों को उनका मुकाबला करने के लिए किस तरह तैयार करते हैं ?

नियोगी — हमने अपने को सिर्फ मजदूर आंदोलन तक ही सीमित नहीं रखा है। अभी न्यूनतम मजदूरी हमारे यहाँ 19 रुपये 90 पैसे है। और 65 रुपये एडवांस भी मिलता है। तो कम-से-कम 23-24 रुपये रोज तक मजदूरी है। एक परिवार में दो आदमी काम करते हैं। लेकिन हम लोगों ने देखा कि इतना कमाने के बावजूद लोगों के पास पैसा नहीं बचता। पैसा ज्यादा मिलने से दो नुकसान हो रहे थे। एक तो लोग काम पर नियमित नहीं आते थे। रविवार को अगर आराम मिल गया तो काम पर जाने की इच्छा नहीं होती थी क्योंकि पैसे पहले ही बहुत मिल चुके होते थे। दूसरे, मजदूर शराब भी बहुत पीने लगे थे। इसलिए हमने शराब के खिलाफ मुहिम चलायी और कहा कि उत्पादन पर ध्यान देना चाहिए। उत्पादन पर ध्यान देने की बात वैसे सिर्फ सत्तापक्ष के ही कुछ लोग बोलते हैं। उनका मकसद रहता है वर्ग संघर्ष से ध्यान हटाना। इसलिए वे कहते हैं कि उत्पादन पर ध्यान दो। वैसे, उत्पादन से उनका कोई लेना-देना नहीं होता। पर जो वर्ग संघर्ष के साथ उत्पादन पर ध्यान देने की बात है, वह हमारे देश में किसी भी मार्क्सवादी या लेनिनवादी . . . . . नहीं, नहीं, 'किसी भी' तो नहीं कह सकता . . . . . यानी बड़े-बड़े मार्क्सवादियों ने कभी यह बात नहीं सिखायी कि उत्पादन भी बढ़ाया जाये। हमने लोगों को समझाया कि बहुत जरूरी काम हो तो ही छुट्टी लें। तो इस तरह चलता रहा सब कुछ। लोगों ने शराब पीना भी छोड़ा। इससे शराब वालों का नुकसान हुआ। उनके पास गुंडे हैं। हथियार हैं। हमारे पास एक ही हथियार है — संगठन का अनुशासन।

सवाल — बदमाशों के हथियारों का मुकाबला कैसे करते हैं आप लोग ?

नियोगी — बंदूक, पिस्तौल से हमला आज तक हम पर हुआ नहीं। हाँ, तलवारों से जरूर हुआ है एक बार, बालोद शहर में। बाजार का दिन था, बुधवार। रास्ते में मुझ पर पीछे

खंड परिचय

नियोगी एक निहायत अनौपचारिक एवं सहज प्रकृति के व्यक्ति थे। वे अपने विचार चाय की किसी दुकान के बेंच पर बैठे हुए और बीड़ी सुलगाते हुए जिस सुविधा से पेश कर सकते थे, उतना किसी भी औपचारिक विधा के द्वारा नहीं। इसीलिए उनके सारे निबंधों को पढ़कर भी, चाहे वे अभिव्यक्ति के लिहाज से कितने ही बेबाक और प्रभावशाली क्यों न हों, कई बार यह आस बनी रहती है कि काश, इस बिंदु पर नियोगी से हम कुछ और पूछ पाते या बहस कर पाते। इस खंड में दिये गये चर्चाओं के सारांश एवं साक्षात्कार इस आस को पूरा करते हैं, चूँकि अपनी बात कहने की यह विधा उनकी कुदरत के अनुकूल थी।

नियोगी की हाजिरजवाबी, त्वरित प्रतिक्रिया और सारगर्भित उत्तर उनके साक्षात्कारों और चर्चाओं की उपयोगिता को कई गुना बढ़ा देते हैं। नियोगी ने दबावों में काम करना और जीना सीखा था। दबाव जितना बढ़ता था, उनकी क्षमता भी उसी के अनुपात में बढ़ जाती थी। इसके बेशुमार उदाहरण खंड बारह में उनके बारे में लिखे गये संस्मरणों में देखे जा सकते हैं। शायद इसी गुण के कारण साक्षात्कार एवं चर्चा में अपेक्षित दबाव नियोगी की अभिव्यक्ति को उत्कृष्ट स्तर पर पहुँचा देता था। सितम्बर 1991 में जब वे आखिरी बार दिल्ली गये तो उनका समय बेहद भाग-दौड़ और तनाव से भरा हुआ था। उसी दौरान उन्होंने दिल्ली के पत्रकारों के साथ बातचीत की जिसमें दिया गया उनका कथन **'लेकिन आंदोलन में शरीक पूरी पीढ़ी होती है'** (पृ. 337), आज छत्तीसगढ़ आंदोलन के बारे में उनकी सबसे महत्वपूर्ण भविष्यवाणी के रूप में उभरकर आया है।

हमें आशा है कि पाठकों के मन में इस पुस्तक के पन्ने पलटते हुए जो प्रश्न व शंकाएँ उठेंगी उनके जवाब वे यदि और कहीं नहीं तो, इस खंड के सवाल-जवाबों में जरूर खोज पायेंगे।

❑

(१) [illegible] २२४,१२ के बंदूक और पुलिसकर्मियों की मशीन की संरक्षा शुरू कर दिया है 'इस से मारो मजदूरों को' [illegible] बंदूक से मारने से ज्यादा इल्ला होता है. तो मशीन से मारो, तलवार से मारो, [illegible] से मारो मजदूरों को, २००० कर जाएगा [illegible] इल्ला नहीं

(नियोगी की लिखावट में)

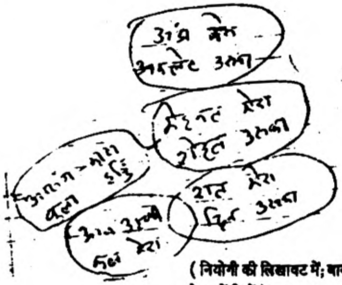

(नियोगी की लिखावट में; बायीं ऊपर वाला घेरा गोंडी में)

साथियों के नाम एक संदेश

"दोस्तो! हमारे ऊपर अनेक हमले हुए हैं। कल और खतरनाक हमलों के दौर से हमें गुजरना होगा, क्योंकि औद्योगिक क्षेत्र के मजदूर अपनी माँग पूरी किये बिना नहीं रुकेंगे। इसलिये ऐसी भी घटना हमारे ऊपर हो सकती है, जिसे सुनकर आपके रोंगटे खड़े हो जायेंगे। उस दिन, साथियो! उठ खड़े होना। अगर वह भी संभव न हो तो फिर हमारी कुर्बानी को याद कर दो बूँद आँसू टपका देना। लाल जोहार!!"

शंकर गुहा नियोगी
19 अगस्त 1991

उद्योगपतियों के गुंडों द्वारा भिलाई के एक मजदूर साथी पर किये गये प्राणघातक हमले के सिलसिले में दि. 19.08.91 को जारी पर्चे में बयान

" मेरे दो बेटे हैं। मेरा एक बेटा कारखाने में कार्य करने जाता है तो वे उसके समस्त अधिकारों को छीनकर अमानवीय शोषण करते हैं। जब वह उस शोषण के खिलाफ सीना तानकर खड़ा होता है, यूनियन बनाकर इंकलाब का नारा लगाता है, अपने हक की माँग करता है, तब वे मेरे दूसरे बेरोजगार बेटे के हाथ में चाकू थमा देते हैं और कहते हैं, 'जा, अपने भाई पर चाकू चलाकर आ जा।' इस प्रकार इंसानियत के दुश्मन ये लालची उद्योगपति मेरे दोनों बेटों का शोषण करते हैं।"

— भिलाई की अंतिम आम सभा के भाषण से
(फौजी नगर, 28 अगस्त 1991)

'उठ खड़े होना . . . दो बूँद आँसू टपका देना' व अन्य बयान

अंतिम संदेश

नियोगी की हत्या के बाद उनके घर में उन्हीं की आवाज में रिकार्ड किया हुआ एक कैसेट मिला। ऐसा लगता है कि उन्होंने यह कैसेट अपनी हत्या की साजिशों का पूर्वाभास हो जाने के बाद अपने सहयोगियों के लिए अंतिम संदेश के रूप में रिकार्ड किया था। एक अनुमान के अनुसार यह रिकार्डिंग सम्भवतः हत्या के 4-5 सप्ताह पूर्व नियोगी ने दल्ली राजहरा में अपने घर में की होगी। यह कैसेट 6 अक्तूबर 1991 को पुलिस जाँच दल को सौंप दिया गया था। नियोगी का यह अंतिम संदेश, कुछ सांगठनिक उल्लेखों को छोड़कर, यहाँ प्रस्तुत है।

— स.

भिलाई के उद्योगपतियों ने जिस प्रकार झूठ और फरेब का राज चला रहा है, उन्होंने जिला प्रशासन को जिस प्रकार दबाव डाल रहा है, उन्होंने गुंडों को जिस प्रकार यूनियन के समर्थकों या यूनियन के नेताओं के ऊपर जानलेवा हमले करने के लिए उकसा रहा है, इससे यह बात दिखते जा रहा है कि निकट भविष्य में वहाँ ऐसी कुछ गलत काम संगठित हो सकेगा जिससे मजदूर आंदोलन के ऊपर एक भयंकर खूँखार हमला के जरिये, उसे चकनाचूर करने के लिए , उसे खत्म करने के लिए एक आखिरी प्रयास हो सकेगा।

परंतु मजदूर वर्ग इस बात को जानता है कि पूँजीपति कितना भी ताकतवर क्यों न हो, उस (से) मुकाबला हमें करना ही होगा। अगर हम सही ढंग से मुकाबला न कर सकेंगे, अगर हम इन खूँखार मालिकों के खिलाफ अपनी सारी ताकत न लगा सकेंगे, फिर ऐसी कुछ पूँजीपतियों की दादागिरी हर वक्त चलता रहेगा। परंतु जनवादी प्रक्रिया के आंदोलन को इन खूँखार दरिंदों ने हमेशा-हमेशा की तरह हमला करते रहेंगे। इसलिए मुकाबला की आवश्यकता है और मुकाबला हमें करना ही होगा।

मैं जानता हूँ कि ये लोग मेरी जान के पीछे पड़ा हुआ है। मैं इस बात को अच्छी तरह से जानता हूँ कि हो सकता है इस आंदोलन के दरम्यान ये मुझे मार डालेंगे। मृत्यु सबके लिए आयेगा, मेरे लिए भी आयेगा। आज नहीं तो कल। एक साल बाद या परसाल बाद या कल के दिन। मैं जानता हूँ यह दुनिया बहुत सुंदर है। मैं यह चाहता हूँ कि इस दुनिया में ऐसी व्यवस्था कायम करने के लिए जहाँ शोषण नहीं रहेगा, जहाँ मेहनतकश मजदूर-किसान शांति से अपना जीवन जीयेंगे। परंतु मैं चाहने से सब कुछ नहीं होने वाला है। मुझे मेरी जिम्मेदारी पूरी करना है। मैं सुंदर दुनिया को अवश्य प्यार करता हूँ , परंतु मेरा कर्त्तव्य, मेरा काम मेरे लिए सबसे प्यारा है। मैं जिस जिम्मेदारी को लिया हूँ , उठाया हूँ , उस जिम्मेदारी को मुझे पूरा करना ही होगा और ये लोग मुझे मार डालेंगे। फिर भी मैं जानता हूँ , मुझे मारने से हमारे आंदोलन को कोई समाप्त नहीं कर सकेगा। यह जरूर है कि यह बात निश्चित रूप से सामने आयेगा कि मेरे मृत्यु के बाद कौन मुझे मारा तथा मेरे मृत्यु के पीछे कौन जिम्मेदार है।

परंतु दोस्तो, यह खुशी की बात है, आपकी इस इलाका में हरगोविन्द राय जैसे एक नेता हैं। मुझे लगता था कि महाकौशल के लोग, बालाघाट या सिवनी या होशंगाबाद या बैतूल जिले के लोगों (द्वारा) यहाँ पे अभी तत्काल कोई जनवादी आंदोलन होने वाला नहीं है, ऐसी कोई सम्भावना नहीं है। परंतु जब व्यक्तिगत रूप से मैंने देखा, परखा, हरगोविन्द राय के नेतृत्व में आज जो एक नयी प्रक्रिया जारी हुआ है आपके गाँव में, आपकी बस्ती में, आपके खेड़ा में, उससे मुझे भरोसा हो रहा है कि कल के दिन ये मध्य प्रदेश के लोग – नर्मदा घाटी के, हमारे निमाड़ और मालवा इलाका में मेधा पाटकर के नेतृत्व में जो आंदोलन जारी है, इस इलाका में हरगोविन्द राय के नेतृत्व में जो आंदोलन जारी है, और छत्तीसगढ़ इलाका में जो मजदूर आंदोलन जारी है, किसान आंदोलन जारी है, आदिवासियों की लड़ाई जो जारी है – ये तीनों, चारों बड़े आंदोलन अगर एक हो जायें तो ! मध्य प्रदेश में कम-से-कम आज के समय तीस जिलों में अच्छे ढंग से जनवादी लोग अपने काम को सँभाल रहे हैं और जनता को जगाने का प्रक्रिया शुरू कर रहे हैं। इसीलिए स्वामी विवेकानंद ने कहा था, एक बार आपको मैं याद दिलाना चाहता हूँ, " ऐ देश के नागरिको, तुम जागो और सोये मत रहो। " जब तक आप सोये रहोगे तो इस देश में लुटेरों का राज जो है वो पनपता जायेगा, गरीबों के ऊपर अत्याचार बढ़ता जायेगा।

तो मैं आपको स्वामी विवेकानन्द की आवाज से यही बात कहना चाहूँगा कि हरगोविन्द राय ने जो आंदोलन का बीड़ा उठाया, जो मशाल को जलाया, उस मशाल के पीछे लाखों जनता अब एक हो जाओ। ये होशंगाबाद जिला, ये महाकौशल इलाका के नागरिको, दोस्तो, ये जनता अगर एक हो जायेंगे तो मुझे विश्वास है कि हक के लिए जो लड़ाई है, रोजगार के लिए जो लड़ाई है, यह लड़ाई अंततोगत्वा सही दिशा में, सही लक्ष्य को हासिल करेगा। साथियो, अंत में इतना ही बात मैं आप को बोलना चाहूँगा कि आज इस समय आतंकवादी आंदोलन जो चल रहे हैं, पंजाब में आतंकवादी आंदोलन चल रहा है, कश्मीर में जो आंदोलन चल रहा है, ये कोई सही रास्ता में पहुँचने वाला कुछ बात नहीं है। उधर जो चुनाव वाले लोग आते हैं, पाँच-पाँच साल में एक बार वोट माँगने के लिए। इनके ऊपर आज कोई भरोसा हमारा नहीं रहा है। आज आपको मालूम है कि जिसके पास में सबसे ज्यादा पैसा है वह ही चुनाव जीतते हैं और चुनाव जीतने के बाद में कोई फिक्र नहीं है। अभी पटवा जी का राज्य चल रहा है। जिन दिनों में पटवा जी सड़क के लोग थे, हमारे जैसे लोग थे, उस समय पटवा जी से मैं भी मिलता था। पटवा जी से उन दिनों में मैं बातचीत करता था। मैं उनको समझाता था कि मध्य प्रदेश में हमें कुछ मिलकर करना चाहिए, परंतु आज जब पटवा जी वहाँ पर कुर्सी पकड़ लिये, मुख्य मंत्री बन गये तो आज वह उद्योगपतियों का साथ दे रहा है।

आज बिड़ला को सिर्फ 10 पैसे में एक बांस दिया जाता है और आदिवासियों को 15 रुपये में एक बांस दिया जाता है। बस्तर के जंगल से प्रतिदिन ट्रकों में भर-भर कर बांस अमलाई पेपर मिल में पहुँचाया जा रहा है। इस प्रकार से औद्योगिक नीतियाँ बनाये जा रहे हैं और जहाँ देखो वहाँ पुलिस का अत्याचार। आज पुलिस वालों को पता नहीं क्या हो गया है ? पुलिस तो आखिर में जाके हमारे परिवार के लोग हैं। पुलिस के जवान जो हैं वो मजदूर-किसान के घर के लड़का लोग होते हैं। परंतु ये जो लुटेरे अफसर, एस. पी. और कलेक्टर लोग बैठे हुए हैं, जो आई. ए. एस.-आई. पी. एस. अफसर लोग बैठे हैं, ये क्या कर रहे हैं ? ये जा के एक तरफ बनखेड़ी के गुंडों को सामने कर दिये, बोले कि जाओ तुम आदिवासियों के खिलाफ लड़ाई करो।

समता संगठन के जो आंदोलन अभी चल रहे हैं, वो इस मुद्दे पर चल रहे हैं कि यहाँ पर आदिवासी बालिकाएँ, जिन्होंने जंगल में जाकर सूखी लकड़ी बीन कर आ रही थीं — मुन्नी, गुड्डी और कुमोदी — उस समय जंगलवालों ने जाकर उनको पकड़ कर लाते हैं, डिपो में रखते हैं तीन दिन तक, और उनके साथ बारी-बारी सामूहिक रूप से बलात्कार किया जाता है। इतनी दर्दनाक, खौफनाक ऐसी घटनाएँ आपकी बस्ती के सामने हो रही हैं जिसके खिलाफ समता संगठन के लोग आंदोलन कर रहे हैं। हरगोविन्द राय के नेतृत्व में नवयुवकों ने, आदिवासियों ने, किसानों ने वहाँ गोलबंद होकर उन गुंडा तत्वों के खिलाफ संघर्ष कर रहे हैं। जब ये संघर्ष चल रहा है, उस समय पुलिस के पास में कहना क्या है ? पुलिस कहते हैं कि इन्होंने जंगल की चोरी कर रही थीं, लकड़ी चोरी कर रही थीं। अगर ये लकड़ी चोरी भी किये होंगे तो कौन-सी परिस्थिति में लकड़ी चोरी किये होंगे ?

इस समय देश में आपको मालूम है कि करीब पंद्रह करोड़ लोग बेरोजगार हैं। गाँव की हालत इतना बदतर है कि यहाँ पर रोजगार नहीं। लोगों के सामने सिर्फ एक सवाल है कि मुझे रोटी मिलेगी कि नहीं मिलेगी खाने के लिए ? मुझे भात मिलेगी कि नहीं मिलेगी खाने के लिए ? आज देश के अस्सी प्रतिशत जनता ऐसी गरीबी रेखा के नीचे है जिनके सामने ये सवाल है कि उनके पास खाना मिलेगा कि नहीं मिलेगा। जब गरीबों के घर में, दोस्तो, चावल पकता है, उस समय आपको मालूम होना चाहिए कि चावल धोकर, हांडी में डालकर उसमें आगी लगाने के बाद वो गरीब आदमी के बेटे-बेटियाँ झाँकते रहते हैं कि कब वो भात के पानी जो है गर्म होगा, और कब भात उबलेगा। अब जब पानी गर्म होता है, उस आदिवासी घर के बेटे और बेटियों को आँख में चमक आ जाता है और वो देखते रहते हैं, उसकी सुगंध सूँघते रहते हैं। जब वो भात थालियों में परोसा जाता है, तो उस समय उनको लगता है कि दुनिया के सब सुख और सबसे बड़ी खुशी उनके कब्जे में आ चुकी है। अब उस भात के लिए आदिवासी, कोई बालक या बालिका, जंगल में जाकर थोड़ा-सा लकड़ी लेकर भी आते हैं। तो जिस सरकार के पास यह हिम्मत नहीं है, दम नहीं है कि ' सौ दिन में मैं महँगाई कम करवा दूँगा, एक साल में बेरोजगारी दूर करा दूँगा।' इतनी दम भरने वाली सरकारें ! जब आज नौजवानों के सामने कोई रोजगार नहीं है, रोजगार की तलाश में नौजवान भटक रहे हैं, उस समय आदिवासियों ने जंगल से दो टुकड़ा लकड़ी लेकर आया, तो वह कौन-सा बड़ा पाप कर लिया ? वह तो अपने बाल-बच्चों के पेट को पालने के लिए ये काम किया। **यह तो उनके जीने का हक था। इस देश में पैदा होने के साथ-साथ जिस हक को इस सरकार को स्वीकार करना था, देना-दिलाना था, परंतु जीने के हक नहीं दिला पाया सरकार।** उन्होंने आदिवासियों को जंगल चोर कहकर थाने में भेज दिया और रेंजर वन विभाग के जरिये से उन पर अत्याचार किया जा रहा है और जब लोग कहते हैं कि तुम यह गलत काम कर रहे हो, अत्याचार कर रहे हो, तो वे कहते हैं कि ये सब तो नक्सलपंथी लोग हैं और इन नक्सलपंथियों पर हमला करना उचित है। ' समता संगठन के लोग नक्सलपंथी बन चुका है, इसलिए उनके ऊपर हमला करना चाहिए।' मैं इस बात को नहीं समझ पा रहा हूँ कि समता संगठन के लोग जब शराबबंदी का आंदोलन कर रहे हैं, जब छुआछूत के खिलाफ कर रहे हैं, जब उन्होंने जंगल को लगा रहे हैं; अभी कुछ दस दिन पहले उस इलाका में समता संगठन के लोगों को इस होशंगाबाद जिला के माननीय कलेक्टर महोदय ने जाकर सराहना किया कि आपने एक हजार झाड़ों को लगाया, वृक्षारोपण किया। उसी संगठन के लोगों को वहाँ के फॉरेस्ट डिपार्टमेंट के रेंजर साहब ने जाकर पकड़ कर लाये और लाकर उनको पीटे और हरगोविन्द को पीटे और उनको जेल में बंद कर दिया, और उन पर 307 की दफा लगाया। पता

संघर्ष का एक जरूरी हिस्सा होगा।

आज एक संवाददाता सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए इन संगठनों के प्रतिनिधियों ने जोर दे कर कहा कि सरमायेदारों-फिरकापरस्तों और जातिवादियों के मिले-जुले शातिर गिरोह ने आम जनता के न्याय और मुक्ति के लिए चलाये जा रहे संघर्ष को देश के राजनैतिक परिदृश्य से ओझल करने की सुनियोजित साजिश की है। उनकी इस साजिश का नतीजा यह है कि व्यापक जन समुदाय लगातार समाज में सम्मान और अधिकार से वंचित होता जा रहा है।

देश के दूरदराज इलाकों में दलितों, आदिवासियों, किसानों, बंधुआ मजदूरों, भूमिहीन, संगठित व असंगठित मजदूरों आदि गरीब और उत्पीड़ित जनों के बीच काम कर रहे इन जन संगठनों के नेताओं और कार्यकर्त्ताओं ने मानवता की भावना पैदा करने वाली एक नयी राजनैतिक शैली की जरूरत बराबर महसूस की है। इस कमी को पूरा करने के लिए विभिन्न जन संगठन और सामाजिक समूह अपने आपसी सम्बंधों को और अधिक घनिष्ठ बनाने में लगे हैं, ताकि वे आमूल सामाजिक परिवर्तन में लगी शक्तियों के साथ खुद को रचनात्मक रूप से जोड़ सकें। भविष्य के साझा कार्यक्रम के लिए इस व्यापक सोच को आधार बनाते हुए स्वामी अग्निवेश (बंधुआ मुक्ति मोर्चा), मेधा पाटकर (नर्मदा बचाओ आंदोलन), शंकर गुहा नियोगी (छमुमो), अब्दुल जब्बार खाँ (भोपाल गैस पीड़ित महिला उद्योग संगठन), बी. पी. सिंह 'बागी' (शोषित समाज दल) और शमशेर सिंह बिष्ट (उत्तराखंड संघर्ष वाहिनी) ने एक संयुक्त बयान जारी किया है। इसमें **साम्प्रदायिक आधार पर देश के टुकड़े करने वाली ताकतों के मंसूबों को शिकस्त देने के लिए जनशक्ति के प्रदर्शन की जरूरत** पर बल दिया गया है।

देश और समाज के सामने मौजूद समस्याओं की शिनाख्त करते हुए इन नेताओं ने दिनोंदिन बढ़ती आर्थिक और सामाजिक असमानता पर चिंता व्यक्त की है। बेरोजगारी, मूल्य वृद्धि, नयी औद्योगिक नीति, विश्व बैंक द्वारा थोपे गये 'विकास' के मॉडल को बढ़ावा देने से सुनियोजित ढंग से पर्यावरण और समाज का विनाश तथा मेहनतकश जनता का अपनी जमीन से बेदखल होते जाना – ये कुछ ऐसे आर्थिक मुद्दे हैं, जिन पर इन जन संगठनों को तत्काल और सघन रूप से सक्रिय होना है। इसी प्रकार लोगों को अमानवीय बनाने वाली समाज व्यवस्था के खिलाफ युद्ध छेड़ने के लिए काम और आवास का अधिकार, प्राकृतिक सम्पदा को इस्तेमाल करने का आम आदमी का अधिकार, जाति-आधारित भेदभाव को समाप्त करने की लड़ाई, सबके लिए अनिवार्य निःशुल्क शिक्षा जैसे सामाजिक मुद्दों पर ध्यान देने की जरूरत है।

इन जन संगठनों ने समान सोच वाले अन्य संगठनों के साथ संवाद जारी रखने की योजना बनायी है। इन संगठनों ने बढ़ते हुए साम्प्रदायिक उन्माद को देखते हुए निकट भविष्य में आंध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश और गुजरात में प्रमुख व्यक्तियों की टीम भेजने का फैसला किया है ताकि इन राज्यों की प्रगतिशील ताकतों को सक्रिय किया जा सके। धर्मनिरपेक्ष, समाजवादी और जनतांत्रिक मूल्यों के लिए प्रतिबद्ध विशिष्ट जनों का एक दल 'सामाजिक-आर्थिक न्याय के लिए एकता यात्रा' का नेतृत्व करेगा। वह यात्रा अलीगढ़, मेरठ, कानपुर, मुरादाबाद, बिजनौर, एटा आदि दंगा-प्रभावित क्षेत्रों से गुजरेगी।

इस साझा अभियान समिति ने फिरकापरस्त ताकतों को शिकस्त देने के लिए सभी प्रगतिशील तत्वों का आह्वान किया है।

❑

(छमुमो के सौजन्य से प्राप्त प्रेस विज्ञप्ति का संक्षिप्त स्वरूप।)

जा चुका है। उसने चौथी बार फिर सिम्पलेक्स में काम पकड़ा है। पिछली बार सन् 1986 में उसे इसलिए निकाला गया था कि उसने एक साथ चौबीस घंटे से ज्यादा ओवर टाईम के लिए रुकने से इंकार कर दिया था। उस समय तो उसे इतना गुस्सा आया था कि उसने कसम खायी थी कि इस कम्पनी में अब कभी नहीं आऊँगा। मगर बीके, बी. ई. सी. में भी तो हालत वही है — ठेकेदार गाली बिना बात नहीं करते, मालिक जब चाहे हाथ भी उठा देते हैं, फिर भी रामलाल सब सहन कर लेता है।

रामलाल सब सहन कर लेता है क्योंकि वह भूखा नहीं मरना चाहता, अपने बच्चों को भी भूखा नहीं मारना चाहता। वैसे भी उसकी तीन-वर्षीय बच्ची बीमार है, हाथ-पैर पतले हैं, पेट फूल-सा गया है, बाल भूरे व पतले पड़ गये हैं। उसकी बच्ची को भी वही बीमारी है जो दूसरे मजदूरों के बच्चों को होती है — बच्ची को भूख की बीमारी है, भरपेट खाना न मिलने के कारण बीमार है।

आज फिर बच्ची को बहुत तकलीफ है, पर डाक्टर को कैसे दिखायेगा वह ? हाथ में एक पैसा नहीं है। सुपरवाईजर के पास कैसे जायेगा ? अभी तो पिछले महीने छोटे बच्चे के दूध के लिए तो पचास रुपये एडवांस लिया था। इतनी जल्दी सुपरवाईजर दोबारा एडवांस कैसे देगा ? बड़ी मुश्किल से फिर आज पचास रुपये जुगाड़ कर रामलाल बच्ची की दवाई लाने के लिए जाने की तैयारी करता है। पर जाने से पहले दो किलो चावल ला कर घर में पत्नी को देता है। उसकी पत्नी चावल को सिगड़ी पर रखे गर्म पानी में डाल देती है।

थोड़ी देर बाद भात की खुशबू पूरे घर में फैल जाती है। घर के सभी लोगों की आँखों में नयी चमक आ जाती है। डेढ़-वर्षीय गुड्डू भी समझ जाता है कि घर में भात पक रहा है और खुशी से किलकारियाँ मारने लगता है। रामलाल की बड़ी बच्ची भात की खुशबू आते ही, ' दाई भात दे तो, मोला भूख लागत हे ', कहती हुई मचलने लगती है।

मगर आज भात की खुशबू भी उस बुझे हुए चेहरे को चमक नहीं दे पाती, कहीं आज उसकी बीमारी बहुत बढ़ तो नहीं गयी ?

दवाई खरीदने के लिए जाते-जाते रामलाल अपनी मुट्ठी में कैद पचास रुपये के नोट को देखता है, एक क्षण के लिए वह ठिठक जाता है। उधारी देते हुए सुपरवाईजर का निर्दयी चेहरा उसकी आँखों के सामने घूम जाता है, उसकी आवाज कान में गूँजती है —

> " देख रामलाल, रुपये तो जितने चाहिए ले जाओ, पर यूनियनबाजी के चक्कर में मत पड़ना, वरना . . . . "

इस ' वरना ' के अर्थ को रामलाल भली-भाँति समझता है, पिछले सत्रह साल में उसे सात बार काम से जो निकाला जा चुका था। फिर वह पिछले सप्ताह की घटना को याद करता है, जब उसके साथी गेट पर छाती तान कर नारा लगा रहे थे — ' इंकलाब जिंदाबाद ', तो फैक्ट्री के भीतर मालिक व अफसरों में ऐसी भगदड़ मच गयी थी, जैसे बकरियों के झुंड में शेर को देखने से हो जाती है। उसकी भी छाती उत्साह से फूल गयी थी। मगर फिर वही पचास रुपये, बिटिया की दवाई . . . .

सहम कर रामलाल, केमिस्ट की दुकान की ओर लपकता है।

घर पहुँचने से पहले ही क्रंदन की आवाज रामलाल के कानों में पड़ती है। बिजली की चमक के समान दुःख उसके दिल तक पहुँचता है, पर वह तुरंत दिल को कड़ा कर लेता है। उसकी बीमार बच्ची चल बसी है। पड़ोसी, दोस्त, घर-भर में छा जाते हैं। रामलाल व उसकी पत्नी को ढाढ़स बंधाते हैं। रामलाल की खामोशी देख, उसके दुःख की गहराई को नापने की कोशिश करते

सा पुनीत दिन है ? अपना पंचाँग देख कर उस दिन को प्रतिष्ठित करना होगा। परंतु आज, चारों ओर गाँव-गाँव में इस पैगाम को फैलाना होगा कि हर गाँव से लाइये – 10 आदमी, 20 आदमी, 30 आदमी। और वे आयेंगे। वे नवयुवक साथी क्यों आयेंगे ? आज छत्तीसगढ़ में कितनी बेरोजगारी है ? कितने बेरोजगार लोग हैं छत्तीसगढ़ में, गाँव-गाँव में बेरोजगार हैं। ये सी. पी. आई. के लोग, कम्युनिस्ट पार्टी के लोग गाँव वालों को कह रहे हैं, 'चलो मोंगरा बाँध बनाना होगा।' क्यों ? क्योंकि वहाँ पर काम मिलेगा। चाहे उससे 200 गाँव डूब जायें। फिर मशीनीकरण करना होगा। क्यों ? हमारी बेरोजगारी दूर हो जाये। सिर्फ एक महीना मशीनीकरण का काम, फिर उनको भगा दिया जायेगा। तो चलो साथियो, आज छत्तीसगढ़ के इलाके में लोकसत्ता को प्रतिष्ठित करने का अवसर है। इस मौके पर हमें झुकना नहीं चाहिए, और एक ताकत के साथ मिलाई में पहुँचना चाहिए और लोकसत्ता के झंडे को बुलंद करना चाहिए। ठीक है न ?

विशाल समुद्र का महागर्जन

तो इसलिए छत्तीसगढ़ में एक ऐसा दिन आयेगा! कितने तालाब हैं छत्तीसगढ़ में ? आपके गाँव में तालाब हैं, सब गाँव में तालाब हैं। सब गाँवों के तालाब अगर एक तालाब बन जायें, अगर ईब नदी, अरपा नदी, इंद्रावती, शिवनाथ और महानदी, सारी नदियाँ अगर यहाँ पर एक हो जायें, तो कितना पानी होगा ? बहुत पानी होगा। विशाल ! और उस पानी का जो समुद्र का रूप रहेगा, उससे लहरें पैदा होंगी। वे लहरें शोषण के किलों पर बार-बार धावा मारेंगी। एक बार लहर, दो बार लहर, तीन बार लहर, चार बार लहर . . . .। और शोषण का किला वह धावा बार-बार सँभाल नहीं सकता। वह किला टूटने वाला है। कमजोर किला है, क्योंकि उसकी नींव कमजोर है, अन्याय की नींव के ऊपर खड़ा है वह किला। वह किला टूटेगा। परंतु **छत्तीसगढ़ के सारे गाँवों के तालाबों का पानी चाहिए, आस-पास ईब, बांगो, इंद्रावती, शबिनी, महानदी, शिवनाथ का पानी चाहिए यहाँ। यह पानी अगर आयेगा तो समुद्र पैदा होगा।** मगर हर इलाके से, गाँव और जिले से, अगर नवयुवक आयेंगे तो यह समुद्र पैदा होगा। एक महागर्जन पैदा होगा, और वह महागर्जन 'इंकलाब जिंदाबाद' का नारा लगायेगा। तो वह सही मायने में इंकलाब लाने वाली बात होगी, एक गुणात्मक परिवर्तन लाने वाली बात होगी। **और फिर युद्ध होगा, जीवन और मृत्यु का एक दूसरे के खिलाफ। जीवन लड़ेगा मृत्यु के खिलाफ, मृत्यु लड़ेगी जीवन के खिलाफ।** यह लड़ाई आपको लड़नी होगी।

स्पार्टकस की कहानी

एक कहानी है छोटी-सी, आदि विद्रोही की कहानी। स्पार्टकस नाम का एक नेता था, वह कोई आजकल का नेता नहीं, जो लेता है। वह 'न लेने वाला' नेता था, बहादुरी करने वाला नेता था। उसने मुक्ति के गीत गाये थे। ऐसा नेता था स्पार्टकस, जो गुलामों को जंजीरों से मुक्ति दिलाना चाहता था। उनकी लड़ाई के लिए जान देता था। जब स्पार्टकस खत्म हो गया लड़ाई में, तो उस समय गुलामों के मालिकों को पता नहीं था कि कौन है स्पार्टकस ? पूछा, 'कौन है स्पार्टकस ?' वहाँ उस समय बहुत सारे युद्धबंदी थे। सब कहने लगे, 'मैं स्पार्टकस हूँ।' यह कहता, 'मैं स्पार्टकस हूँ।' वह कहता, 'मैं स्पार्टकस हूँ।' सब जगह आवाज उठती है, 'मैं स्पार्टकस हूँ, मैं स्पार्टकस हूँ।' हर गाँव को इस प्रकार विरोध में खड़ा होना होगा। और दूसरे लोग जो जनशक्ति स्थापित करने वाले हैं – मैं फलाना गाँव वाला हूँ, मैं ढिमका गाँव

हमको इतना सुनने से खुश नहीं होना चाहिए। नदी का पानी बारिश में आकर चला जायेगा, उसके बाद समुद्र में चला जायेगा। फिर हमारी नदी सूख जायेगी। इस पानी को रोकने की बात भी सोचनी चाहिए , तो इस पानी को रोकना होगा। कैसे रोकेंगे आप ? बाँध बनाना होगा, तब जाकर रुकेगा। एकता बनानी होगी, तब जाकर रुकेगा। मजदूर, किसान, बुद्धिजीवी, देशप्रेमी इन सभी वर्गों की एकता बनानी होगी, तब जाकर यह शक्ति, जनशक्ति जो है, नदी के पानी को रोक सकती है। और उस काम को आप लोग कर रहे हो, परंतु और मुस्तैदी से करना होगा, और तेजी से करना होगा। हिम्मत के साथ करना होगा, बहादुरी के साथ करना होगा।

हमारे भगत सिंह से लेकर रामाधीन गोंड तक, रामाधीन गोंड से अभनपुर के रमेश परेरा तक, इन्होंने जो कुर्बानी दी है, वे सभी डरे नहीं। आज इसीलिए लोकसत्ता स्थापित होने जा रही है, जनशक्ति स्थापित होने जा रही है। जनशक्ति को नष्ट करने के लिए लोग तोड़-फोड़ करेंगे, आतंक फैलायेंगे, साम्प्रदायिकता, जाति-प्रांत की बातें करके वे हमारे अंदर फूट डालने की कोशिश करेंगे। हम किसी को फूट नहीं डालने देंगे। प्रण है हमारा। आप सब का प्रण है, उन्हें फूट के बीज बोने नहीं देंगे। आप फिर एकता के बीज बोयेंगे। जब हम एकता के बीज बोयेंगे, तो आज जो यह पानी चल रहा है, बीच-बीच में बारिश में दिखता है, यानी हम जब देश का काम करेंगे, उस समय वह पानी और अधिक दिखेगा। हमें इस पानी को रोकना होगा। जहाँ पर इस पानी की जरूरत है, वहीं पर रोकना होगा। अगर कवर्धा में अत्याचार हो रहा है तो रायपुर से स्विच दब जायेगा। लोकसत्ता कवर्धा में पहुँच जायेगी और कहेगी, 'अरे देखो हम हजारों की तादाद में पशुशक्ति का मुकाबला करने के लिए पहुँच चुके हैं। कौन है पशुशक्ति ? आओ, जनशक्ति का मुकाबला करो, लोकसत्ता का मुकाबला करो।'

देखना, ओ खेती के अंदर में एक फरिया (पुतला) देखे हो न ? जब किसान खेती के अंदर में फरिया टाँग देत हे, तो जितना चिड़ियाँ हैं, पंछी हैं, वो सोचथे, 'अरे ये तो कोई आदमी होगा।' बेचारी डर कर खेत में नहीं आतीं। मगर जब कोई बेख्खर चिरई (ढीठ चिड़ियां) आ गयी तो का होही ? चिरई ला कुछु नई होय। फरिया तो खुदे हिलत हे। चिरई खा-खुआ के चल देत हे। तो जतका वर्दी वाले मन हे औ जो आतंक औ खौफ दिखाने वाले गुंडामन हे वो फरिया के समान हैं। जब मैं भूख हड़ताल पर बैठा था – अभी हाल में ए. सी. सी. के सामने, उस समय मेरे को मारने वाले वहाँ थे। तो कलेक्टर एवं एस. पी तक ने कहा कि नियोगीजी आप वहाँ पर मत जाना, आपकी जान खतरे में है। कई साथियों को मालूम है, इसके पहले भी गुंडा लोग लाठी चला चुके हैं। हमारे घोषाल दादा और कई साथियों के ऊपर लाठियाँ बरसायी थीं। तो हमने बोला, ठीक है, मरना तो है। कौन आया है, अमर होकर इस दुनिया में ? इसलिए कल भी मरना है, आज भी मरना है। और अपनी उम्र तो काफी हो गयी है, हमारे देश के लोगों की औसत उम्र करीब-करीब हम प्राप्त कर चुके हैं। तो इसलिए जीने का कोई लालच नहीं है। परंतु अच्छा काम करने के लिए , समाज के अंदर लोकसत्ता स्थापित करने के लिए , जनतंत्र स्थापित करने के लिए कई साथियों ने कुर्बानी दी है। मैं तो उतना दे भी नहीं पाया हूँ। मेरा एक ही सपना है कि मैं, अपने उन साथियों, जो शहीदों का रास्ता अपनाकर कुर्बानी के रास्ते पर चले हैं, और देश को मुक्ति के गीत सुनाकर गये हैं, उनका जीवन अगर मुझे मिल जाये तो बहुत अच्छी बात है। इससे बड़ा पुण्य क्या हो सकता है ? केदारनाथ, बद्रीनाथ जाने से भी नहीं हो सकता है, जो शहीद की मृत्यु में हो सकता है। इसलिए हमने उनको बता दिया। ठीक है, जिन्हें जो करना है कर लें, मैं तो भूख हड़ताल पर बैठा हूँ। उस समय भी पशुशक्ति आयी, परंतु लोकसत्ता वहाँ पर स्थापित थी। वहाँ पर ए. सी. सी. के मजदूर, दूसरे इलाके के मजदूर

है मशीनीकरण का सवाल। अब ये जमीन और मशीनीकरण, इन दो बातों पर तथा औद्योगिक नीति के बारे में आपके दिमाग में सफाई होनी चाहिए। आपके दिमाग में कोई भ्रांति नहीं होनी चाहिए — जो राजनीति, जमीन से धरती पुत्रों की राजनीति, जमीन से जुड़ी धरती पुत्रों की बात — उसके बारे में कोई भ्रांति नहीं होनी चाहिए। 'छत्तीसगढ़ छत्तीसगढ़ियों का', इस बात से आपको घृणा करनी चाहिए। और दूसरी जो है सिर्फ अर्थवाद — सिर्फ आर्थिक मुद्दों पर ट्रेड यूनियन की बात को ले जाना, इससे भी आपको घृणा करनी चाहिए। ये राजनीति की दो बातें हैं। सी. पी. एम., सी. पी. आई. के लोग, जो मजदूर बेल्ट के अंदर काम कर रहे हैं, लगातार इन बातों को लेकर चल रहे हैं और कांग्रेस और भाजपा उनके साथ में है। और दूसरी जो नयी किस्म की शक्ति है, जो जनता के अंदर भेद-भाव करने के लिए , एकता को तोड़ने के लिए , जनता की आवाज को खत्म करने के लिए , नाश करने के लिए , उन्होंने फूट की राजनीति के बीज बोये हैं। जो फूट की राजनीति बोता है, उनकी बात से भी आपको घृणा करनी चाहिए। फिर नयी बात क्या है ? घृणा तो करेंगे भई। फिर विकल्प क्या है ? हम सब कहेंगे एक आवाज से — 'लुटेरों की जागीर नहीं, छत्तीसगढ़ हमारा है।' लुटेरों की जागीर नहीं, शोषकों की जागीर नहीं, छत्तीसगढ़ किसका है ? हमारा है। हमारा है छत्तीसगढ़। मजदूरों का, किसानों का, मेहनतकशों का, ईमानदारों का, देशप्रेमियों का और बाकी लोगों का — पर तुम्हारा नहीं है। बताओ जी, तुम्हारी बहुत जमीन है, तुम कहाँ के छत्तीसगढ़िया हो, तुम तो खून पिवैया हो — मनखे के लहू पिवैया, तुम नहीं हो छत्तीसगढ़िया ! छत्तीसगढ़िया मन जो है मनखे के लहू नहीं पिये। इंसान का लहू नहीं पीते है, छत्तीसगढ़िया लोग। मेहनतकश, देशप्रेमी किसी का खून नहीं पीता। तो तुम्हारा छत्तीसगढ़ जब है, तो हमारा नहीं है। और हमारा छत्तीसगढ़ जब है, तो तुम्हारा नहीं है। दोनों के बीच बहुत बड़ी और स्पष्ट भेद की रेखा है, जो एक दूसरे की अलग पहचान करती है। इसलिए उनका नारा जो एकता को तोड़ने वाला नारा है, उसको हम नहीं लगाते। हम नये छत्तीसगढ़ की बात करते हैं — 'लुटेरों की जागीर नहीं, छत्तीसगढ़ हमारा है', यह नारा लगाते हैं। ठीक है कि गलत है ? यही नारा हमें लगाना है। और सिर्फ आर्थिक माँग ही नहीं, तकनीक की बात भी करो।

भिलाई के मजदूर साथी आये हैं। मेरे सामने की बात है, जब मैं भिलाई में नौकरी करता था, जब मैं भिलाई में एक मजदूर था। उस समय सिम्पलेक्स कम्पनी के पास में सिर्फ दो लेथ मशीनें थीं। उसके बाद मैं देखता हूँ , आज सिम्पलेक्स के पास इतनी पूँजी है, इतनी अधिक पूँजी है, अरबों रुपयों की पूँजी ! वह चीन के साथ मिलकर, बैलाडीला के पास एक स्पंज आयरन का कारखाना बनाने वाला है, जिसमें एक सौ पचास करोड़ रुपये से भी ज्यादा पैसा लगाने वाला है। आज से तीस साल पहले जिसके पास सिर्फ दो लेथ मशीनें थीं, आज उसके पास एक लोहा कारखाना, इस्पात कारखाना लगाने की ताकत आ गयी है। भिलाई में कारखाना है, फलाना जगह में कारखाना है, अहमदाबाद में कारखाना है। दूसरी तरफ बीके कम्पनी आपके सामने है। चंडीगढ़ में बिल्डिंग का ठेका — बीके कम्पनी, बंगलौर में बिल्डिंग का ठेका — बीके कम्पनी, भोपाल में बिल्डिंग का ठेका — बीके कम्पनी। बोकारो, दुर्गापुर, राउरकेला में बिल्डिंग का ठेका — बीके कम्पनी। देश के अंदर दो बड़े बिल्डिंग ठेकेदार हैं। एक हैं — एशियाड बनाने वाले — जय प्रकाश। और दूसरे हैं — ये आपके बीके कम्पनी — बक्तयार सिंह। और क्या थे ये, आप मजदूर साथी नहीं जानते, आपमें से बहुत से लोग तो शायद उस समय पैदा भी नहीं हुए थे। परंतु हम जानते हैं, उनके पास में कुछ नहीं था। इन्होंने सेक्टर 4 में जब ठेका लिया, उस समय उनके पास में कुछ भी नहीं था। पेटी ठेकेदारी से उनका काम शुरू हुआ। पेटी ठेकेदार आज देश के सबसे

करो और दूसरा जो है बोनस। छत्तीसगढ़ में हमन ओला 'भुनस' कथन औ भुनस बोल देबोन तहाँ ले हमर दिल अईसन खुश हो जाथन। औ एकाध परसेंट बढ़ गीस ते ठीक! अगर दस-बीस रुपया चंदा देना है तो फटाफट कर देबोन। 'अच्छा काम करेहे हमर नेता मन जो दो-एक परसेंट बोनस बढ़ा के लान दीस। हमर बोनस बढ़ गीस तो बस हमर क्रांति होगे।' सालभर ट्रेड यूनियन और क्या काम करेगी? सालभर वह एक काम करेगी, वह चार्जशीट का जवाब देगी। मालिक लोग आकर कहते हैं कि तुम काम नहीं करते हो, इसलिए भाग जाओ। तब मालिक, मजदूर को चार्जशीट दे देते हैं। फिर मजदूर चार्जशीट लेकर नेता के पास आते हैं, बताते हैं कि इसमें लिखा है कि 72 घंटे में जवाब देना है, 24 घंटे में जवाब देना है। अब 24 घंटे, 72 घंटे, 3 दिन, 7 दिन बैठकर हम इसका जवाब देते हैं।

मजदूर कैसी झोपड़ी में रहते हैं? मजदूरों के लिए पीने के पानी की व्यवस्था है कि नहीं? मजदूरों के इलाके में अस्पताल की सुविधा है कि नहीं? मजदूरों के बच्चों की पढ़ाई-लिखाई की व्यवस्था है कि नहीं? मजदूरों के बच्चे कौन से विचार लेकर आगे चलेंगे। वीडियो फिल्म, ब्लू फिल्म देख-देखकर ढिशुम-ढिशुम करके अमिताभ बच्चन की नकल करते रहें, या दूसरी बात करें? यह बात हमारे ट्रेड यूनियन नेताओं के मन में है कि नहीं? मजदूर शराब पीकर गली में पड़े रहते हैं। हमारे फागूराम जी ने एक गाना बनाया है। इस गाने में वे कहते हैं कि शराबी के मुँह में तो कुत्ता भी पेशाब कर देता है। यह बात कौन देखेगा कि मजदूर नेता अब काम करते हैं या नहीं? यहाँ मजदूर कहाँ से आये हैं? वे गाँवों से आये हैं। भूमिहीन होकर गाँव के मजदूर जो शहर में आकर मजदूर बने हैं, उद्योगों में काम करते हैं, उनके सगे लोग गाँव में रहते हैं, रिश्तेदार गाँव में रहते हैं, उसके रिश्तेदारों के साथ उसका रिश्ता टूट चुका है, इस पर ट्रेड यूनियन ध्यान देती है कि नहीं देती है?

मशीनीकरण का प्रश्न

इससे भी बड़ी एक खतरनाक बात होती है जो सिर्फ मजदूरों के ऊपर नहीं होती है, पूरे देश पर जिसका असर होता है कि उस उत्पादन व्यवस्था में कौन-सी तकनालाजी की व्यवस्था लागू हो सकती है? कौन-सी तकनालाजी वहाँ पर जारी है। वह तकनालाजी इस देश के सुधार के लिए है या देश के लिए खतरनाक है? वह मशीन हमारे देश के फायदे के लिए है कि नहीं? भिलाई मा एक ठन मशीन है। ओकर नाम है आई. बी. एम. गिनती मशीन। करीब पच्चीस-तीस करोड़ रुपया ओकर कीमत है। ओ गिनती बहुत फटाफट लगाथे, अतिक जल्दी लगाथे कि तुम सोच नहीं सको। लाखों-करोड़ों के गिनती ओ फटाफट कर देथे। एक सेकंड के कई हिस्सा मा कर दिही। एक दिन जो है, ओ मशीन के एकठन छोटा-सा पुर्जा, ओकर एकठन जो स्क्रू है, वो हर बिगड़गे। अब जैसे ओ कम्प्यूटर के एकठन स्क्रू ढीला होगे — तहाने ओ मशीन के दिमाग घलो खराब होगे। अब जब दिमाग खराब होगे, तब ओ हम मन ला उल्टा-पुल्टा बतावत है। हम जानत हन दो गुणा दो कातिक होथे — हम जानत हन दो गुणा दो चार होथे। पर ओ हर का लिखथ हे? अस्सी लिख देथे। ओकर दिमाग ऐसते खराब हो जाथे। तो अफसर लोगों ने अमेरिका की कम्पनी से कहा कि इस मशीन का पुर्जा बदल दो। तो अमेरिका वाले बोले, 'यह तो पुराने मॉडल की मशीन है, इसके पुर्जे हमारे देश में नहीं मिलते। उस मशीन को फेंक दो। लेना हो तो नये मॉडल की मशीन खरीद लो, उसकी कीमत पचास करोड़ रुपये है।' अब जाओ भई। ओकर दिमाग के एकठन स्क्रू के खातिर ओकर दिमाग खराब होगे — पचास करोड़ रुपया पानी मा बोहागे! पचास करोड़ रुपया फालतू में चला गया। आज यहाँ के मैनेजमेंट के

एक-दूसरे से एकदम विपरीत हैं। हमारे छत्तीसगढ़ के कार्यकर्त्ता साथियों के सामने ये बात बार-बार आती है। नियति की बात बार-बार आती है, इसलिए नियति की बात और स्थिति की बात स्पष्ट होनी चाहिए। जैसे, हमेशा हमारी बहनें कहती हैं कि पुरुष महिला के ऊपर ज्यादती करता है और कई महिलाएँ इसे नियति समझकर स्वीकार कर लेती हैं। **स्थिति और नियति के बीच में जो नियति है, वह जड़ है, उसमें जीवन नहीं है, मरणशील तत्व उसके ऊपर हावी हैं, जीवनशील तत्व वहाँ पर नहीं है।** इसलिए स्थिति, आज की परिस्थिति क्या है ? इस परिस्थिति से अगली परिस्थिति क्या होगी ? इस अगली परिस्थिति से अगली परस्थिति क्या होगी, उस अगली परिस्थिति में हम कैसे जायेंगे, कैसे आगे बढ़ेंगे ? इस पर हमारा विश्वास जमना चाहिए। इस पर हमारा तर्क जमना चाहिए , इसके ऊपर हमारा विचार जमना चाहिए। जब तक इस पर हमारा तर्क और विचार नहीं जमेगा, तब तक आज की स्थिति से, परिस्थिति से मुक्ति नहीं होना है। और नियति मायने स्थिर, नियति मायने मृत्यु , नियति मायने जड़। परंतु जो मर जाता है, उसकी कोई परवाह नहीं है। हम भी मर जायेंगे कोई परवाह नहीं। मैं मर जाऊँगा तो मेरी लाश यहीं पड़ी रहेगी। लाश यहीं पड़ी रहेगी, तो इतनी बदबू आयेगी साहब, कि इस मोहल्ले वालों का यहाँ रहना मुश्किल हो जायेगा। यह इसलिए चूँकि **नियति पर मृत्यु हावी है, जिन समूहों ने नियति पर विश्वास कर लिया है उनके लिए समस्या नहीं है, परंतु उनके आस-पास रहने वालों के लिए बहुत बड़ी समस्या है।** इस समय जीवनशील तत्वों का मरणशील तत्वों पर हावी होना जरूरी है। जहाँ पर शोषण है, अत्याचार है, अन्याय है, वहाँ पर मरणशील तत्व हावी हैं, और जहाँ पर लड़ाई है, संघर्ष है, आगे बढ़ने की तमन्ना है, आशा है, उम्मीद है, वहाँ पर जीवनशील तत्व हावी हैं। वह कदम-कदम कूच करता है, आगे बढ़ता है, एक दिन वह विजय की मंजिल पर जा पहुँचता है।

जमीन का सवाल

साथियो, इन बातों पर चर्चा करते समय, इन भ्रांतियों के बारे में विचार करने के बाद अब हमें उन मुद्दों पर चर्चा करनी चाहिए , जिसके कारण छत्तीसगढ़ की जनता कष्ट भोग रही है। जिन विचारों के जरिये फिर से भ्रांतियाँ फैलायी जा रही हैं, उन पर स्पष्ट चर्चा होनी चाहिए। आपके सामने जमीन का सवाल भी आया है। आज इस इलाके में जमीन के बारे में बातचीत करूँ। राजनांदगाँव का जो संसद सदस्य है, पूरे दुर्ग शहर की सभी जमीन उसके कब्जे में है। दुर्ग के कलेक्टर साहब उस दिन मुझे बता रहे थे कि एक दिन श्री धर्मपाल गुप्ता ने उन्हें बताया कि जो कलेक्ट्रेट है, कलेक्टर महोदय का जो बंगला है, वह भी उनके पूर्वजों की जमीन पर है। तो मैंने उनको कहा, ' भैया, तुम सरकार के ऊपर लगान-ठगान लगाओ, किरायेदार हो, लगान दो।' ऐसी कोई जमीन बाकी नहीं है जो धर्मपाल गुप्ता के पास नहीं है, जो भाजपा के बहुत बड़े नेता हैं। उसके पहले कोई दूसरी पार्टी में थे। दल-बदल करके वे अभी इस पार्टी में हैं। सारे दुर्ग की जमीन उनके कब्जे में है। हमारे जूदेव साहब हैं, राजा महाराजा जी, उनके पास कितनी जमीन है। आप लोग जो उनके इलाके (जिला रायगढ़) से आये हैं, अच्छी तरह से बता सकते हैं, हजारों एकड़ जमीन उनके पास में है। और कुछ मठ हैं, जैसे नादिया का मठ। ऐसे बहुत से मठ हैं, वानखेड़ा का मठ है, भद्राचलम् का मठ है और इन मठों के नाम से बहुत सारी जमीन है। मैंने सुना है कि सीलिंग एक्ट से बचने के लिए कहीं-कहीं पर कुत्तों और बिल्लियों के नाम से भी जमीन है। जो बच्चा पैदा भी नहीं हुआ, उसके नाम से भी जमीम है। तो जमीन की हालत इतनी खतरनाक है।

देश के अंदर जो अच्छी जमीन है और विशेष रूप से शहर के किनारे जमीन है। दुर्ग,

के मजदूरों के ऊपर, भारत में मजदूर आंदोलन में पहली हत्या। आजाद भारत में सन् 1948 में कांग्रेसियों के जमाने में, पहली बार गोली चली, वह भी राजनांदगाँव में मजदूरों के ऊपर। जनता पार्टी बनी, सबसे पहले गोली चली दल्ली राजहरा के मजदूरों के ऊपर। बीच में, सन् 1984 में कांग्रेस आयी, उस दौरान राजनांदगाँव में फिर गोली चली। फिर भारतीय जनता पार्टी का राज आया, तो उन्होंने भी छत्तीसगढ़ की जनता के ऊपर गोली चलायी, अभनपुर के मजदूरों के ऊपर।[1] छत्तीसगढ़ की जनता ने बार-बार जिन सपनों को संजोकर रखा था, उन सपनों को पूरा करने के लिए बार-बार कोशिश की और एक बड़ी शक्ति के रूप में उभर कर शोषण करने वाले लोगों के खिलाफ आवाज बुलंद की। परंतु खौफ चाहने वालों ने आतंक फैलाकर, जनता को दबाने वाले, शोषण करने वाले लोगों ने छत्तीसगढ़ की जनता के ऊपर बार-बार गोली चलाकर उन्हें दबाया।

इसीलिए आप देखते हैं कि इस देश के अंदर आज जो सबसे विकराल समस्याएँ बन रही हैं — पंजाब, कश्मीर, आसाम, बोडो और लिट्टे। इसके पीछे क्या कारण हैं ? देश की असमान विकास की प्रक्रिया। समान विकास नहीं हो पाया, इसलिए इस प्रकार की बातें अलग-अलग जगहों में विभिन्न रूपों में, विभिन्न बातें, विभिन्न समस्याओं के आधार पर ये नतीजे सामने आ रहे हैं। तो इस समय छत्तीसगढ़ की जनता के सामने भी जो सपने हैं, उनको पूरा करने के लिए हमारे शहीदों ने जो कुर्बानी दी, उन कुर्बानियों के रक्तसिंचित रास्ते पर चलकर उन शहीदों के सपने हमें पूरे करने होंगे और एक नये छत्तीसगढ़, नये भारत के लिए कल्पना करनी होगी। इस कल्पना को साकार करने के लिए कार्यक्रम बनाना होगा, उस पर ईमानदारीपूर्वक अमल करना होगा।

मरणशील तत्व और जीवनशील तत्व

भ्रांति की बात मैंने शुरू में की थी। उसी भ्रांति के बारे में आपसे बात करना चाहता हूँ। मनुष्यों में और सभी जीवों में दो तत्व होते हैं। एक मरणशील तत्व और दूसरा जीवनशील तत्व। ये दोनों तत्व हमारे अंदर हैं। हम जिंदा हैं, फिर भी मरणशील तत्व हमारे ऊपर हावी हैं। मृत्यु के बाद शरीर जड़ हो जाता है, जीवन की शक्ति समाप्त हो जाती है, तब मरणशील तत्व हमारे ऊपर पूर्णरूप से हावी हो जाते हैं। जीवनशील तत्व और मरणशील तत्वों के बीच यह संघर्ष जारी है। जिस समय जीवनशील तत्व ज्यादा ताकतवर होते हैं, हम आगे बढ़ते हैं, सपना आगे बढ़ता है। और जिस समय मरणशील तत्व हमारे ऊपर हावी हो जाते हैं, उस समय हमारे सपने की मृत्यु हो जाती है। **तो सपने को जिंदा रखने, आगे बढ़ने वाले रास्ते को बनाये रखने के लिए जरूरी है कि मरणशील तत्वों के ऊपर जीवनशील तत्व हावी रहें, यह सबसे जरूरी है। भ्रांतियों के ऊपर क्रांति हावी रहे, यह भी बहुत जरूरी है।** अगर भ्रांति के ऊपर क्रांति हावी नहीं रह पायेगी, तो जरूर दिखने के लिए दिखेगा कि हमारा शरीर जिंदा है, परंतु यदि हमारे सपने की ही मृत्यु हो गयी तो इस जीवन की क्या कीमत है ? हमारे इस जीवन का, हमारे इस समाज के जीवन का, हमारे देशवासियों के जीवन का कोई मतलब निकलना चाहिए। कोई बात बननी चाहिए और उस बात को बनाने के लिए एक नये भविष्य की कल्पना हमें बार-बार करते रहना है। छत्तीसगढ़ में क्या, पूरे भारत में भी यही बात है।

---

[1] नियोगी की हत्या के बाद, भाजपा शासन काल में 1 जुलाई 1992 को एक बार फिर मजदूरों पर गोली चली, इस बार भिलाई में।

के कारण ही आप-हम लोग दिशाहीन होकर चौराहे पर खड़े हैं।

पंछियों की छटपटाहट में से एक नये सबेरे का प्रसव होगा। इस्पात नगर भोंपू बजाकर उसका स्वागत करेगा। शोषणहीन, असीम सुख-शांति वाली समाज व्यवस्था का, नयी आशा एवं उम्मीद लेकर एक नया दिन आयेगा। करोड़ों मजदूर ताली पीट-पीट कर उसका स्वागत करेंगे। मजदूर सिर्फ बोनस के नहीं, एक अन्य वेतनमान के नहीं, बल्कि सारी दुनिया के हकदार होंगे। ❑

(नियोगी के घर से क्रांति गुहा नियोगी के सौजन्य से।)

जीवन की मृत्यु पर विजय

सन् 1989-90 के दौरान नियोगी इस कोशिश में लगे रहे कि छत्तीसगढ़ में मजदूरों, आदिवासियों एवं अन्य सभी शोषित तबकों के बीच कार्यरत लोग व विभिन्न संगठन एक मंच पर आयें और मिलकर एक वैकल्पिक राजनीति की नींव रखें। इसी प्रयास के फलस्वरूप 17-18 अगस्त 1990 को रायपुर में एक सम्मेलन हुआ, जिसमें छत्तीसगढ़ के दूर-दराज क्षेत्रों में कार्यरत अनेक संगठनों के कार्यकर्त्ता पहली बार एक मंच पर आये। इस सम्मेलन में नियोगी द्वारा दिया गया निम्नलिखित भाषण सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया व उसमें कार्यकर्त्ताओं की भूमिका के बारे में उनका चिंतन, उनकी विशेष प्रेरणाशील शैली में प्रस्तुत करता है। मूल भाषण के कई अंश छत्तीसगढ़ी में थे; उनमें से कुछ का यहाँ हिन्दी में रूपांतरण कर दिया गया है, शेष अभी भी छत्तीसगढ़ी में हैं। — स.

तो कल और आज, दो दिन लगातार बहुत सारे कार्यकर्त्ता साथियों ने यहाँ आकर विचार-विमर्श किया। हमारे बहुत से साथी जिन्होंने विचार-विमर्श में भाग नहीं लिया, वे भी बहुत ध्यान लगाकर, मन लगाकर इन विचारों को सुनते रहे। सभी कार्यकर्त्ता साथियों ने बहुत सुंदर ढंग से जो विचार रखे हैं, वे जीवन के साथ जुड़े हुए सवाल हैं। आज समाज में जो मुद्दे हैं, असमानताएँ और विषमताएँ हैं, उनको एक-एक करके, फूल की पँखुड़ियों के समान खोलकर, प्रस्फुटित कर उन्होंने इस चर्चा-रूपी हमारे बगीचे को सुशोभित किया है। अच्छी-अच्छी बातें हुईं, और इन बातों में एक बात जो सभी ने कही, वह है — 'हमें परिवर्तन चाहिए। इस व्यवस्था से हम बहुत दुखी हैं, और हमें परिवर्तन चाहिए, हमें इंकलाब चाहिए।' एक गुणात्मक परिवर्तन के लिए , एक समग्र क्रांति के लिए , लोगों के दिलोदिमाग में भावनाएँ उमड़ रही हैं। अब काम करने का समय आ चुका है। हमारी उम्र घटती जा रही है और पता नहीं आगे यह काम पूरा होगा कि नहीं होगा।

नहीं, बल्कि सभी मजदूरों की लड़ाई है। यह पुरुषों की ही नहीं, महिलाओं की भी लड़ाई है। दल्ली राजहरा की अमरबाई, दुर्गाबाई, लीलाबाई और भी बहिनी लोग गयीं। इन्होंने महिलाओं की मीटिंग करके समझाया तो उनमें बहुत बड़ी शक्ति पैदा हुई। लाल-हरा जन आधार पर खड़ा हुआ।

सोचा था कि माँग पूरी होने के बाद तत्काल मजदूरों का एक जुलूस निकालेंगे। पर डर था कि परदेसिया लोगों के पास बम, फटाके, पिस्तौल हैं, कहीं हमला न कर दें। इसके बारे में पुलिस एस. पी., कलेक्टर, अर्जुन सिंह, इंदिरा गांधी सब को लिखा था। परंतु पुलिस ने कुछ नहीं किया। उनका सोचना था कि मजदूर लोग जुलूस निकालेंगे, तो उस पर गुंडे लोग हमला कर देंगे, जिससे पुलिस को लाठी चार्ज करने का मौका मिल जायेगा। लाठी चार्ज करके कहेंगे कि मजदूर हिंसात्मक कार्रवाई कर रहे थे। इस तरह उन्हें गोली भी चलाने का मौका मिल जायेगा। हम शुरू में इसीलिए जुलूस निकालने के पक्ष में नहीं थे। मुखियाओं के साथ भी झगड़ा करना पड़ा क्योंकि वे जुलूस निकालना चाहते थे। हम बोले कि पहले संगठन बनाओ, अगर जुलूस निकालना है तो मुहल्ले के अंदर जुलूस निकालो। इस प्रकार महिलाओं का जुलूस निकाला, बच्चों का भी जुलूस निकाला, और 108 गाँवों के अंदर संगठन तैयार हो गया। यहाँ तक कि 7-8 साल का बच्चा भी वहाँ पर नारा लगाता है, 'लाल-हरा झंडा जिंदाबाद', 'शहीद साथी अमर रहें'। इस प्रकार से वहाँ पर संगठन बना है।

31 अगस्त 1984 को राजनांदगाँव बंद करने का मजदूरों ने आह्वान किया है। इस वजह से पुलिस जगह-जगह मजदूरों को मार-पीट रही है, और उन्हें झूठे केस बनाकर फँसा रही है। दल्ली राजहरा का मजदूर साथी फागूराम वहाँ के मजदूरों को कुछ गीत सुनाने गया था। उस पर भी झूठा केस बनाकर उसे जेल में बंद कर दिया। आसपास के किसान पूरी तरह मदद कर रहे हैं। जेल से लोगों को जमानत पर छुड़ा रहे हैं। पुलिस प्रशासन सब काम छोड़ कर मजदूरों के पीछे पड़ गया है।

राजनांदगाँव का आंदोलन बहुत वृहत रूप से चलेगा, जिसमें किसी की जान भी जा सकती है।

बम्बई के मिल मजदूर आंदोलन से बी. एन. सी. मिल का आंदोलन कुछ अलग तरीके से चल रहा है। यहाँ पर महिलाओं एवं बच्चों का लगातार संघर्ष जारी है एवं किसानों का पूरी तरह समर्थन प्राप्त है। दल्ली राजहरा के मजदूरों को अच्छी तरह समझना पड़ेगा कि राजनांदगाँव का आंदोलन जब तक चले, जी-जान देकर मदद करना होगा। राजनांदगाँव के मजदूर आंदोलन को विजय की मंजिल तक पहुँचाना है। दलाल नेता केवल एक नारा देते हैं — 'नियोगी भगाओ'। क्योंकि उनको मालूम है कि अब उनकी काला बाजारी नहीं चलेगी। बी. एन. सी. मिल मजदूरों की विजय सुनिश्चित है। दल्ली राजहरा के मजदूर एक-एक मुट्ठी चावल देकर मदद कर रहे हैं। दल्ली राजहरा के संगठन को और भी मजबूत करना होगा। सन् 1977 में दल्ली राजहरा के 11 साथी शहीद हुए थे, लेकिन जरूरत पड़ेगी तो बी. एन. सी. मिल के आंदोलन में 22 साथी शहीद होने के लिए तैयार हैं।

'इंकलाब जिंदाबाद'!

❑

(छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा बुलेटिन, 26 सितम्बर 1984, से साभार।)

टेरीकाट और टेरीलीन आने के बाद सूती कपड़े ने भारी मार खायी। यह कमजोर और बीमार मिल सन् 1974 में नेशनल टेक्सटाइल कार्पोरेशन के अंतर्गत आयी। इन सरकारी नौकरशाहों ने बहुत गोलमाल किया। ये कपास में हेरा-फेरी करते हैं। खराब कपास सप्लाई करते हैं जिससे सूत अधिक टूटता है। इधर सूत बार-बार टूटता है उधर सुपरवाइजर मशीन की गति इतनी बढ़ा देता है कि मजदूर हलाकान हो जाये। पुरानी मशीन में मजदूर दो साइड में काम करते थे। अब नयी मशीन में उनको चार साइड में काम करना पड़ता है।

दल्ली राजहरा की खदानों में किसी मजदूर को चोट लग जाने से तुरंत 'इंजुरी फार्म' भराया जाता है, परंतु बी. एन. सी. मिल में यदि किसी मजदूर की उँगली कट जाये तो सेफ्टी मैनेजर कहता है कि एक छोटी-सी उँगली कटने पर 'इंजुरी फार्म' भराने के लिए आ गये ? जाओ, हाथ-पैर काटकर आना, तब 'इंजुरी फार्म' भरेंगे। यह कहकर मजदूरों को भगाया जाता है।

फैक्ट्री एक्ट का सरेआम उल्लंघन होता है। फैक्ट्री में सूत भाप देकर बनाया जाता है। वहाँ तापमान 110-115 डिग्री फैरनहाइट तक हो जाता है, एकदम धमन भट्टी की तरह। कपड़े खाते में मजदूर पानी से भीगकर काम करते हैं जिससे उनके पैर गीले होकर सफेद पड़ जाते हैं। एन. टी. सी. के म. प्र. में 7 कारखाने हैं। फिर अगर मालिक एक, तो राजनांदगाँव में इन्दौर से कम वेतनमान क्यों ? पहले 5,500 मजदूर थे और रोजाना उत्पादन 55,000 मीटर कपड़ा। अब मजदूर कम कर 4,700 रह गये हैं परंतु उत्पादन 65,000 मीटर हो गया है। यहाँ इंक्रीमेंट, प्रमोशन कुछ नहीं। एक ही ग्रेड में खटो और रिटायर हो। टेम्परेरी मजदूर ज्यादा और परमानेंट मजदूर कम हैं। अगर कोई मजदूर न आये तो उसका काम बदली मजदूर से कराया जाता है। बदली मजदूर को ग्रेच्युइटी नहीं और परमानेंट होने का भी कोई चांस नहीं। और बदली मजदूर की जगह कैजुअल मजदूर जिसको कोई छुट्टी की सुविधा नहीं।

इंटक के 200 पालतू गुंडे हैं। इनका काम है लाठी चलाना, कुश्ती करना और मज़दूरों को दादागिरी के बल पर दबाकर रखना। यह सभी लठैत उत्तर प्रदेश से लाये गये थे, मजदूरों की मारपीट करने के लिए। आम मजदूर इन गुंडों को 'परदेसिया' बोलते हैं और इनसे घृणा करते हैं। परदेसिया लोगों को मिल के अंदर क्वार्टर मिले हैं जिसका मासिक किराया केवल 30 पैसा है। ये भैंसों का धंधा और सूद पर पैसा देकर महाजनी करते हैं। हड़ताली मजदूरों के साथ मारपीट कर उनके हाथ-पैर तोड़ना ही इनका काम है।

'भागीदारी योजना'

बी. एन. सी. मिल में चार यूनियनें हैं, पर मजदूरों की कोई सुनवाई नहीं है। उसी समय 'भागीदारी योजना' चालू हुई। भागीदारी कमेटी में इंटक के 200 पदाधिकारी घुसाये गये जो खाली घूमते रहते थे। इनका काम भी मजदूरों को करना पड़ता था। मजदूर त्रस्त होकर खुद-ब-खुद हड़ताल में उतर गये। पालतू गुंडों ने मजदूरों के साथ भयंकर मारपीट की। पुलिस ने गुंडों को संरक्षण दिया। मजदूरों पर झूठे केस बने। गुंडे छोड़ दिये गये।

उसके बाद बी. एन. सी. मिल के मजदूर दल्ली राजहरा में हमारे पास आये। उन्होंने लाल-हरे झंडे की राजनीति को समझा और दल्ली राजहरा के मजदूरों के संघर्ष और कुर्बानी की कहानी सुनी। वहाँ के मजदूरों ने निर्णय लिया कि उनको लाल-हरा झंडा की ही यूनियन बनानी है। हमने उन्हें बहुत समझाया कि हमारे पास अभी बाहर जाकर काम करने का समय नहीं है। हमारे जाने से तो तत्काल माँग पूरी नहीं हो सकती। यह तो नहीं हो सकता कि जादू का डंडा घुमायें और माँग पूरी हो जाये। हमारी यूनियन के जाने से वहाँ पर बहुत आंदोलन करना पड़ेगा।

केवल खदान मजदूरों की राजनीति नहीं, केवल किसान वर्ग और आदिवासियों की राजनीति नहीं है। लाल-हरे झंडे की राजनीति तमाम मेहनतकश वर्ग की राजनीति है। सारी दुनिया की दौलत मजदूर और किसान के खून, आँसू और पसीने से पैदा हुई है। लेकिन इस पर एक सफेदपोश लुटेरे वर्ग ने कब्जा कर लिया है। मजदूर वर्ग जन आंदोलन और संघर्ष के जरिये ही इसको पा सकता है।

कब और कैसे ?

बी. एन. सी. मिल कब बना, कैसे बना, इसके साथ छत्तीसगढ़ के इतिहास का क्या सम्बंध है, इसको समझना जरूरी है। करीब सौ साल पहले बी. एन. सी. मिल का निर्माण हुआ। उस समय अंग्रेजों का राज था, और मिल रियासत के अधीन थी। अंग्रेजों ने सबसे पहले रेल्वे का विकास किया। जिसे बंगाल-नागपुर रेल्वे (बी. एन. आर.) बोलते थे। इससे एक ओर छत्तीसगढ़ी जनता के लिए दूर देश जाने का रास्ता बना। पर दूसरी ओर शोषण का भी एक बड़ा रास्ता बना। मेहनतकश छत्तीसगढ़ी मजदूरों का यहाँ से निर्यात हुआ – कोयला खदानों में, चाय बागानों में, मिट्टी कटाई के काम में और दूर-दराज देश भर के ईंट भट्ठों में। अंग्रेजों ने रायपुर से धमतरी तक एक छोटी रेल लाइन और बिछायी। कांग्रेस के जमाने में कितनी रेल बनी ? एक बैलाडीला से वाल्टेयर तक, जिससे जापान हिन्दुस्तान का एक नम्बर क्वालिटी का लोहा पत्थर कौड़ियों के मोल खरीद सके। दूसरी रेल्वे लाइन दल्ली राजहरा और दुर्ग के बीच खींची, जिससे भिलाई कारखाने की खुराक पूरी हो। इससे स्थानीय जनता का न तो विकास हुआ और न ही जनता को कुछ सुविधा मिली।

आज से सौ साल पहले अकाल पड़ा। तब अंग्रेजों ने आपासी (सिंचाई) के लिए तांदुला नहर बनायी। धमतरी में रुद्री का बाँध गंगरेल भी तभी बना। अंग्रेजों ने इतना तो जनता के लिए किया। परंतु कांग्रेस के समय में खरखरा, गोंदली जो भी छोटे-छोटे बाँध बनाये गये, उन सबका पानी भिलाई और कोरबा हड़प कर रहा है और किसानों का सत्यानाश कर रहा है। छत्तीसगढ़ के जंगल और आदिवासियों को उजाड़ कर लोहा कारखाना बनाया। जंगल कटने से जंगल ठेकेदार तो पनपे पर बारिश कम हो गयी। इसलिए हर तीन चार साल में एक बार अकाल अब छत्तीसगढ़ के इतिहास के साथ जुड़ गया है। आज यहाँ कारखानों में केवल नौ प्रतिशत मजदूर छत्तीसगढ़ी हैं। बाकी बाहरी हैं जिनकी छत्तीसगढ़ के विकास में कोई रुचि नहीं है। तब दुर्ग, रायपुर छोटे शहर थे। अब यहाँ लकड़ी ठेकेदार, गल्ला ठेकेदार, मिट्टी ठेकेदार और पूँजीपतियों के महल और बंगले बन गये हैं।

अंग्रेजों ने छत्तीसगढ़ की काली मिट्टी यानी कन्हार मिट्टी में कपास उगाने की कोशिश की, जिससे किसान को एक नकदी फसल मिल जाये और सिर्फ धान पर उसकी निर्भरता कम हो जाये। किसान कपास पैदा करेगा और उस रूई से बी. एन. सी. मिल में कपड़ा बनेगा। पर मालगुजार और सामंत नहीं चाहते थे कि यहाँ पर कृषि का विकास हो और किसानों की तरक्की हो। अंग्रेजों को कपास उगाने का इरादा छोड़ना पड़ा। इसलिए बी. एन. सी. मिल के लिए रूई का आयात महाराष्ट्र और गुजरात से हुआ। इससे किसानों को लाभ नहीं हुआ।

सबसे अगुआ मजदूर

बी. एन. सी. मिल के मजदूरों ने मालगुजारों और अंग्रेजों दोनों के खिलाफ शुरू से ही लड़ाई में अगुआई की। बी. एन. सी. मिल के मजदूरों ने आज से 80 साल पहले 'रौलेट

- 17-18/12 – शहीद वीर नारायण सिंह दिवस बिलासपुर जिले की हिर्री खदानों में मनाया गया। इसके उपलक्ष्य में ' मशीनीकरण और महिला ' विषय पर राजहरा, राजनांदगाँव, रायपुर, दानीटोला एवं हिर्री की महिला साथियों एवं अन्य साथी संगठनों का सम्मेलन। महिला मुक्ति मोर्चा की ओर से एक दिशाबोध पर्चा एवं सम्मेलन द्वारा प्रस्ताव (देखिये पृ. 429-430)।

1987

- 14/1 – लम्बे अर्से से विभिन्न खदानों में बंद पड़े उत्पादन कार्य को लेकर यूनियन का प्रबंधन के साथ वृहत समझौता – ड्राइवरों का विभागीयकरण, ठेकेदार की ट्रकों का ' डी-रजिस्ट्रेशन ' खत्म, प्रोत्साहन बोनस की घोषणा आदि माँगें मंजूर। यूनियन ने बी. एस. पी. की ' टिप्पर ' ट्रकों पर कुछ खदानों में काम करने की स्वीकृति दी।
- 3-5/3 – ' संघर्ष और निर्माण के दस साल ' समारोह का आयोजन।
- छमुमो की पहल पर म. प्र. के स्वयंसेवी संगठनों व जन संगठनों के साथ वैकल्पिक राजनीति की खोज का सिलसिला शुरू। पहली बैठक दल्ली राजहरा में।

1988

- एक वैकल्पिक विकास नीति की रूपरेखा तय करने के उद्देश्य से छमुमो की पहल पर समधर्मी जन संगठनों के साथ विचार-विमर्श की शुरूआत। पहली बैठक कानपुर और दूसरी बैठक सहारनपुर में। दूसरी बैठक में नियोगी की ओर से वैकल्पिक औद्योगिक नीति पर पर्चा प्रस्तुत (देखिये पृ. 175-181)।
- छत्तीसगढ़ स्टूडेंट्स फेडरेशन एवं छत्तीसगढ़ प्रगतिशील युवा संघ का गठन।
- दिसम्बर – भिलाई स्टील प्लांट द्वारा दल्ली समूह की खदानों के पूर्ण मशीनीकरण हेतु नये कदम (दल्ली मशीनीकरण चरण क्र. दो) उठाने के कारण मशीनीकरण के खिलाफ संघर्ष का नया दौर शुरू (देखिये पृ. 402-403)।
- 28/12 – प्रबंधन ने दानीटोला के मजदूरों की दल्ली राजहरा के समान वेतनमानों की माँग स्वीकारी। दि. 25.05.85 से चल रही हड़ताल खत्म।

1989

- 11-14/3 – मलियाना (जिला मेरठ) में राज्य शासन के परोक्ष समर्थन से मुस्लिम नागरिकों की हुई नृशंस हत्याओं के विरोध में ' साम्प्रदायिकता विरोधी आंदोलन '

1990

- राजनांदगाँव जिले में प्रस्तावित मोंगरा बाँध के डूब क्षेत्र में आनेवाले 190 गाँवों के लोगों को संगठित करके छमुमो द्वारा बाँध के विरोध की शुरूआत।

- मार्च – विधानसभा चुनावों में छमुमो ने 13 निर्वाचन क्षेत्रों में अपने उम्मीदवार खड़े करके अपना राजनैतिक संदेश बस्तर तक पहुँचाया, परंतु कोई उम्मीदवार विजयी नहीं हुआ (उम्मीदवारों द्वारा ली गयी चुनावपूर्व शपथ, पृ. 385-386)।

- मार्च – टाटा समूह की जामुल (भिलाई) स्थित ए. सी. सी. फैक्ट्री के 'माल धक्का यार्ड' में कोयला-जिप्सम की ढुलाई करनेवाले ठेका मजदूरों के नियमितिकरण की माँगों को लेकर भिलाई आंदोलन का सूत्रपात (देखिये पृ. 451-452)। यहीं से 'प्रगतिशील सीमेंट श्रमिक संघ' की बुनियाद।

- दल्ली राजहरा-बालोद मार्ग पर स्थित ग्राम कुसुमकसा का तालाब एकदम सूख गया और पानी की भीषण समस्या। सरकार निष्क्रिय। ग्रामवासियों के अनुरोध पर छमुमो ने पहल की और नीचे बह रहे नाले में से पानी पम्प द्वारा 'लिफ्ट' करके तालाब भरवाया जिससे आसपास के कुँओं में भी पानी आ गया।

- 3/6 – जनवादी साहित्य के प्रकाशन को व्यवस्थित रूप देने के उद्देश्य से छमुमो द्वारा लोक साहित्य परिषद् का गठन।

- 3/6 – शहीद अस्पताल के जन शिक्षण कार्यक्रम के तहत शहीद दिवस से 'लोक स्वास्थ्य शिक्षा माला' का प्रकाशन शुरू हुआ। इसके जरिये अलग-अलग रोगों पर सीधी-सादी भाषा में वैज्ञानिक जानकारी देना शुरू।

- 26/7 – 'प्रगतिशील सीमेंट श्रमिक संघ' और ए. सी. सी. के बीच ठेका मजदूरों की माँगों को लेकर समझौता। इस विजय की खबर का भिलाई औद्योगिक क्षेत्र के हजारों मजदूरों पर व्यापक और उत्साहजनक प्रभाव (देखिये पृ. 451-452)।

- 17-18/8 – छमुमो की पहल पर छत्तीसगढ़ में मजदूरों, आदिवासियों एवं अन्य शोषित तबकों के बीच काम कर रहे अनेक जन संगठनों के कार्यकर्ताओं का रायपुर में सम्मेलन एवं भविष्य में एक मंच पर आने का निर्णय (देखिये, सम्मेलन में दिया गया नियोगी का भाषण, पृ. 282-295)।

- 1/9 – भारत को संघीय आधार पर पुनर्गठित करने के उद्देश्य से नयी दिल्ली में आयोजित 'संघवाद पर कन्वेंशन' में नियोगी की भागीदारी।

- 17/9 – विश्वकर्मा दिवस पर भिलाई के अनेक कारखानों के मजदूरों का पहला सामूहिक जुलूस एवं आम सभा (देखिये, आम सभा में नियोगी के भाषण का अंश, पृ. 295-297)। मजदूरों ने अपनी माँगें रखीं।

- 4/2 – बालोद एवं राजनांदगाँव न्यायालयों में 5-9 वर्षों से लम्बित अनेक प्रकरणों में पेशी पर अनुपस्थित रहने के आरोप में नियोगी की गिरफ्तारी। दुर्ग जेल में रखा गया।

- फरवरी से मार्च तक – केवल छत्तीसगढ़ में ही नहीं, वरन् पूरे भारत में नियोगी की गिरफ्तारी की भर्त्सना और उनकी रिहाई की माँग। छत्तीसगढ़ में निरंतर रैलियाँ, हड़तालें, जुलूस और विरोध सभाएँ।

- 27/3 – म. प्र. उच्च न्यायालय द्वारा नियोगी को रिहा करने का आदेश।

- मार्च – छमुमो की ' लोक साहित्य परिषद् ' द्वारा ' इतिहास के पन्नों से ' श्रृंखला का प्रकाशन शुरू। पहला प्रकाशन – ' संथाल विद्रोह की अमर कहानी '।

- 3/4 – नियोगी रिहा। दल्ली राजहरा के हजारों मजदूरों ने उस वर्ष विरोधस्वरूप होली नहीं मनायी थी। अतः नियोगी के देर रात को पहुँचने पर उल्लास के साथ गुलाल लगाकर होली मनायी गयी।

- 29/4 – नियोगी को उनकी हत्या की साजिश की जानकारी देते हुए एक पत्र प्राप्त। पत्र में हथियार खरीदे जाने का भी जिक्र। मोर्चा ने पत्र राजहरा पुलिस को सौंपा।

- मई – भिलाई-उरला-कुम्हारी-टेडेसरा के मजदूरों के बीच में से संघर्ष के दौरान उभरे कलाकारों की दल्ली राजहरा में सांस्कृतिक कार्यशाला। नियोगी ने ' जन संस्कृति ' की व्याख्या की (देखिये पृ. 327-328 पर चर्चा-सार)।

- 4/7 – नियोगी को दूसरा पत्र मिला। उनकी हत्या का ठेका डेढ़ लाख रुपये में दिये जाने का जिक्र। इसकी प्रति भी राजहरा थाने में जमा।

- 19/7 – नियोगी को छमुमो के कार्यक्षेत्र के पाँच जिलों (दुर्ग, रायपुर, राजनांदगाँव, बिलासपुर और बस्तर) से हास्यास्पद और बेतुके आरोप लगाकर जिलाबदर करने का नोटिस जारी।

- 10/8 – म. प्र. उच्च न्यायालय द्वारा जिलाबदर नोटिस के क्रियान्वयन पर रोक लगाने का आदेश। नियोगी के खिलाफ उद्योगपतियों की शह पर प्रशासन द्वारा किया गया वार एक बार फिर बेकार।

- 10-17/9

  – नियोगी तथा अन्य छमुमो नेताओं के साथ लगभग ढाई सौ भिलाई मजदूरों के एक दल द्वारा नयी दिल्ली में श्रमशक्ति भवन (श्रम मंत्रालय) के सामने सत्याग्रह।

  – नियोगी के नेतृत्व में एक प्रतिनिधिमंडल ने राष्ट्रपति और प्रधान मंत्री को ज्ञापन सौंपे जिनमें मजदूरों की माँगों के अलावा उद्योगपतियों के माफिया द्वारा की जा रही हिंसा पर अंकुश लगाने की भी अपील थी (देखिये ज्ञापन, पृ. 477-479)। राष्ट्रपति को दिये गये ज्ञापन पर लगभग पचास हजार हस्ताक्षर।

किसान-मजदूर, छात्र-युवा, महिलाओं एवं अन्य शोषित-पीड़ित तबकों का स्वेच्छा से निर्मित संगठन है। इस मोर्चे की अगुवाई औद्योगिक सर्वहारा वर्ग करेगा। इसका लक्ष्य गुणात्मक रूप से छत्तीसगढ़ की जनता का आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास करना है और छत्तीसगढ़ भू-भाग में एक स्वावलम्बी आर्थिक नीति के जरिये छत्तीसगढ़ी जनता में स्वाभिमान का बोध जागृत करना एवं एक शोषणविहीन समाज व्यवस्था की ओर बढ़ना है। अपने गठन के कुछ ही समय बाद छमुमो ने तत्कालीन हालात को दृष्टिगत रखते हुए निम्नलिखित कार्यक्रम घोषित किया —

कार्यक्रम

1. वर्तमान अकाल के परिणामस्वरूप उत्पन्न परिस्थितियों से पलायन करने के बजाय छत्तीसगढ़ के लोग जनसमूह में ब्लाक स्तर पर एक दिन एक साथ जमा हों और तब तक वापस न जायें जब तक सरकार की ओर से उन्हें काम की व्यावहारिक गारंटी नहीं दी जाती।

2. उद्योगपतियों को बाध्य किया जाये कि वे अपने-अपने उद्योगों से होने वाले लाभ का एक निश्चित हिस्सा सम्बंधित जिले में सिंचाई एवं पेय जल उपलब्ध कराने पर खर्च करें। इंकार करने पर उद्योग की घेराबंदी की जाये।

3. ठेकेदारी मजदूरों, असंगठित मजदूरों, बीड़ी मजदूरों, पत्थर तोड़ने और जंगल में कार्यरत मजदूरों को संगठित क्षेत्र के मजदूरों का दर्जा देने का आंदोलन पूरे छत्तीसगढ़ में एक साथ चलाया जाये।

4. साम्प्रदायिकता, जातिवाद एवं पृथकतावाद के खिलाफ हर स्तर पर आंदोलन किया जाये।

5. सामाजिक बुराइयों, शराबखोरी, महिलाओं का निर्यात एवं जुआ-सट्टा इत्यादि के खिलाफ, हर स्तर पर आंदोलन किया जाये।

6. छत्तीसगढ़ी भाषा में गाँव के स्तर पर शिक्षा का काम शुरू किया जाये एवम् गोंडी, हल्बी व छत्तीसगढ़ की अन्य बोलियों की रक्षा व विकास के लिए कदम उठाये जायें।

7. जंगल के उत्पादन में लाख, चिरौंजी, साल, बीजा, कुसुम, करंज, कोसा आदि के उत्पादन का उचित मूल्य देने के लिए सरकार एवं व्यवसायियों को बाध्य किया जाये।

8. जंगल एवं कृषि के उत्पादन पर आधारित उद्योग लगाने के लिए सरकार एवं उद्योगपतियों को आंदोलन के जरिये बाध्य किया जाये।

9. शराब की जायज एवं नाजायज भट्ठियों को समाप्त किया जाये।

10. आदिवासी क्षेत्र में वन विभाग के कर्मचारियों एवं अधिकारियों द्वारा शोषण एवं अत्याचार का सक्रिय रूप से विरोध किया जाये।

11. चूँकि साहूकार एवं ठेकेदारों द्वारा गरीब किसानों की जमीनों को हड़पा गया है, इसलिए इन वर्गों को एक इंच भी जमीन रखने का नैतिक अधिकार नहीं है। इन जमीनों को क्षेत्र के गरीब मजदूर-किसान अपने कब्जे में लें।

निर्भयता के साथ निभायेंगे और साथ ही अन्य शोषित तबकों की लड़ाई में हमेशा उनका साथ देते रहेंगे।

ख) सामाजिक उत्पादन – उत्पादन में विकास के साथ ही समाज में तरक्की आती है। उत्पादन को केवल बिकाऊ सामान के रूप में न देखकर हम सामाजिक हित में इसके साधनों के विकास के लिए हमेशा प्रयासरत रहेंगे। साथ ही उत्पादन साधनों पर सामाजिक नियंत्रण के रास्ते खोजते रहेंगे।

ग) लोकतंत्र – आज के आम संगठनों का ढाँचा शोषणवादी समाज पर ही आधारित है। हमारे संगठन में हर सदस्य को उतनी ही इज्जत और अधिकार है जितना नये समाज में हर इंसान को रहेगा।

घ) जनवादी संस्कृति – आज के औद्योगिक वातावरण में जनता की संस्कृति पर शोषणकर्त्ताओं के संरक्षण में अपसंस्कृति का जोरदार हमला है। हम मेहनतकश की पारम्परिक संस्कृति में समाजवादी मूल्यों को बचाने के लिए ठोस कदम उठायेंगे। साथ ही सांस्कृतिक साधनों में प्रगतिशील, मानवतावादी और समाजवादी मूल्यों को स्थापित करने का प्रयास करेंगे।

च) महिलाओं और पुरुषों में समानता और एकता – आज के भेदभावपूर्ण समाज में महिलाओं के प्रति हीनभाव का हम विरोध करते हैं। हम महिला और पुरुष को समान इज्जत के हकदार और क्रांति के लिए समान रूप से जिम्मेवार समझते हैं। हम दोनों में इस जिम्मेवारी को उभारने की कोशिश करेंगे। साथ ही हम महिलाओं पर सामंतवादी और पूँजीवादी शोषण के खिलाफ निरंतर संघर्ष करते रहेंगे।

छ) स्वस्थ पर्यावरण का निर्माण – पूँजीवादी विकास केवल मेहनतकश को ही नहीं, पर्यावरण को भी बेरहमी से लूटता है। हम उद्योगों द्वारा फैलाये हुए रासायनिक व नाभिकीय प्रदूषण के विरोध में जनमत संगठित करेंगे। पर्यावरण की शुद्धता को बचाने के लिए वन सम्पदा की रक्षा और विकास के लिए लड़ेंगे और मेहनतकश के लिए साफ एवं पर्याप्त पानी व स्वस्थ जीवन के मौलिक अधिकार के लिए भी लड़ाई जारी रखेंगे।

ज) विश्व शांति और निरस्त्रीकरण – अतिशक्तिशाली देशों (जैसे सोवियत संघ, अमरीका) द्वारा जोड़े गये अस्त्र भंडार पूरे मानव अस्तित्व के लिए एक खतरा हैं। हम जीने का और आगे बढ़ने का हक माँगते हैं, इसलिए हम शांति और निरस्त्रीकरण के लिये कटिबद्ध हैं।

यूनियन ने अपने सिद्धांतों के अनुसार आगे बढ़ने के लिए सन् 1978 में अपने तहत 17 विभागों का गठन किया जो इस प्रकार हैं – 1) ट्रेड यूनियन विभाग, 2) किसान विभाग, 3) शिक्षा विभाग, 4) बचत विभाग, 5) स्वास्थ्य विभाग, 6) खेलकूद विभाग, 7) नशाबंदी विभाग, 8) संस्कृति विभाग, 9) मोहल्ला सुधार विभाग, 10) महिला विभाग, 11) मेस विभाग, 12) कानून विभाग, 13) पुस्तकालय विभाग, 14) पर्चा वितरण विभाग, 15) वालंटियर विभाग, 16) फाल बैक वेजेस विभाग और 17) भवन निर्माण विभाग।

आज सी. एम. एस. एस. के नेतृत्व में दल्ली राजहरा सहित हिर्री, बाराद्वार, दानीटोला, नंदिनी, चांदीडोंगरी आदि खदानों के लगभग 9,000 श्रमिकों ने अपने जीने लायक वेतन व अन्य कानूनी प्रावधानों को लागू करवाया है और मशीनीकरण द्वारा छँटनी करने की

8. छत्तीसगढ़ ग्रामीण श्रमिक संघ का गठन सन् 1982 में बालोद और आस-पास के ग्रामीण मजदूरों को संगठित करके हुआ। बाद में उच्चतम न्यायालय के आदेशों से रायपुर जिले के लगभग 4,000 मुक्त हुए बंधुआ मजदूरों ने इसी के नेतृत्व में संगठित होकर अपने को पुनः गुलामी के गर्त में जाने से रोका। आज इस संगठन का प्रमुख प्रभाव क्षेत्र रायपुर जिले के बसना, सरायपाली, पिथौरा और महासमुंद इलाकों में है।

छमुमो के अन्य संगठन

मार्च 1977 में मजदूरों द्वारा बोया गया लाल-हरे झंडे का बीज उनके खून-पसीने से सिंचित होते हुए एक नन्हे पौधे से बढ़कर 13-14 वर्षों में एक विशाल 'वट वृक्ष' बन गया है। आज इस वट वृक्ष की शाखाएँ फैल कर जड़ें बन गयी हैं जो इस वृक्ष के फलने-फूलने के लिए हर साधन जुटा रही हैं और छत्तीसगढ़ को छाया दे रही हैं। आइये, इनमें से कुछ शाखाओं को पहचानें –

1. महिला मुक्ति मोर्चा

सी. एम. एस. एस. के गठन की शुरूआत से ही महिला मजदूरों ने अग्रणी भूमिका निभायी है। बी. एस. पी. के एक वरिष्ठ इंजीनियर-प्रबंधक ने बताया कि सन् 1977 के शुरूआती दौर में जब यूनियन का पहला प्रतिनिधिमंडल खदान मैनेजमेंट से चर्चा हेतु पहुँचा तो उसमें दो महिलाओं को देखकर वे अचम्भित रह गये। तब तक एटक-इंटक यूनियनों का प्रतिनिधित्व केवल पुरुषों ने ही किया था। कामरेड कुसुमबाई, जिनकी प्रसव के दौरान उचित इलाज न मिलने के कारण मृत्यु हो गयी, स्वयं एक सशक्त संगठक थीं। जून 1977 के गोलीकांड में कामरेड अनुसूइया बाई शहीद हुईं। गोली चालन से पूर्व वे सबसे अगली पंक्ति में पुलिसवालों का सामना करते हुए क्रांतिकारी गीत सुना रही थीं। सन् 1978-80 के ऐतिहासिक शराबबंदी अभियान के दौरान भी महिलाओं ने अगुवाई की। कामरेड कुसुमबाई की मौत से विक्षुब्ध होकर मजदूरों ने एक प्रसूति गृह बनाने का संकल्प लिया जो बाद में शहीद अस्पताल बना। इस क्रांतिकारी पृष्ठभूमि में सन् 1979 के दौरान 'महिला मुक्ति मोर्चा' का गठन हुआ और मोर्चे ने अपनी निम्नलिखित दिशा तय की –

क) महिलाओं के नेतृत्व को उभारना।
ख) महिलाओं पर सामंती शोषण का विरोध करना।
ग) अन्य शोषित तबकों की लड़ाई में साथ देना।
घ) पूँजीवादी शोषण का विरोध करना।
च) मजदूर वर्ग में नये मूल्यों के लिए लड़ाई जारी रखना।

आज भी छमुमो के हर कार्यक्रम में महिलाओं को जोड़ने का काम यह मोर्चा करता है और अलग से विशेष कार्यक्रम भी उठाता है (देखिये इस विषय पर लेख, पृ. 428-431)।

2. नवाँ अंजोर

छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक पहचान बनाये रखने और उसके विकास की भावना को साकार करने के लिए सन् 1981 में यह सांस्कृतिक दल बना जिसने गीत लिखने, नाटक रचने-खेलने

आदि महत्वपूर्ण योगदान दिये। इसी के तहत मजदूर साथी श्री फागूराम यादव द्वारा रचे गये गीत तो अब लोकगीत बनते चले जा रहे हैं। यह दल सन् 1986 तक सक्रिय रहा।[1]

3. छत्तीसगढ़ प्रगतिशील युवा संघ

इसका गठन सन् 1988 में हुआ। तब इसने निम्नलिखित घोषणापत्र जारी किया –

घोषणा

आजादी और खुशहाली लाने की उमंग लिये, नौजवान समाज परिवर्तन की लड़ाई में अगुवा दस्ता है। छत्तीसगढ़ प्रगतिशील युवा संघ, छत्तीसगढ़ के तमाम नौजवानों का आह्वान करता है कि वे शोषण व अत्याचार के खिलाफ संघर्ष में सक्रिय रूप से भाग लें।

नौजवानों में अपार सृजन शक्ति है। उन्हें राष्ट्रीय आंदोलन से परे नहीं रखना चाहिए। देश के निर्माण में उनकी भूमिका को पहचानते हुए हम उन्हें जनता व देश हित के लिए संगठित व गोलबंद करने की जिम्मेदारी लेते हैं।

उद्देश्य व लक्ष्य

क) पूरे छत्तीसगढ़ के नौजवानों की एकता व संगठन कायम कर प्रगति व खुशहाली के लिए आंदोलन करना।

ख) नौजवानों के अधिकारों व इज्जत के लिए संघर्ष करना।

ग) तानाशाही व सामंती व्यवस्था के खिलाफ जनवादी अधिकारों के लिए लड़ना।

घ) सामाजिक कार्यों के लिए नौजवानों को संगठित करना।

च) शोषण के खिलाफ, सामाजिक न्याय के लिए काम करना। जाति, भाषा, धर्म व रंग के भेदभाव के खिलाफ मानवीय रिश्तों को कायम करना। रंगभेद की नीति का विरोध कर नेल्सन मंडेला की रिहाई की माँग करना।

छ) आज के समाज में व्याप्त अपसंस्कृति, महिलाओं के अपमान आदि के खिलाफ संघर्ष कर एक स्वस्थ समाजवादी संस्कृति एवं पुरुषों व महिलाओं में समानता और भाईचारा के लिए प्रयासरत रहना।

ज) सामंती, अर्द्ध-सामंती व दलाल-पूँजीपति व्यवस्था के खिलाफ, जनवाद एवं समाजवादी व्यवस्था के लिए संघर्ष करना।

झ) किसान-मजदूर व मध्यम वर्ग के साथ एकता बनाना व उनके संघर्ष में कंधे-से-कंधा मिला कर चलना।

ट) भारत के विभिन्न हिस्सों, उपराष्ट्रीय समूहों जैसे उत्तराखंड व झारखंड की जनता के लिए जनवादी संघर्षों एवं देश के विभिन्न मजदूर-किसानों के आंदोलन के साथ एकता व भाईचारा कायम करना।

ठ) स्वस्थ पर्यावरण का निर्माण करना और नाभिकीय व हर प्रकार के पूँजीवादी युद्ध की खिलाफत करना।

मूल रूप से, एक शोषणविहीन, असीम सुख-शांति की समाज व्यवस्था स्थापित करना हमारा लक्ष्य है।

---

[1] 19 दिसम्बर 1992 से यह दल पुनः सक्रिय हो गया है।

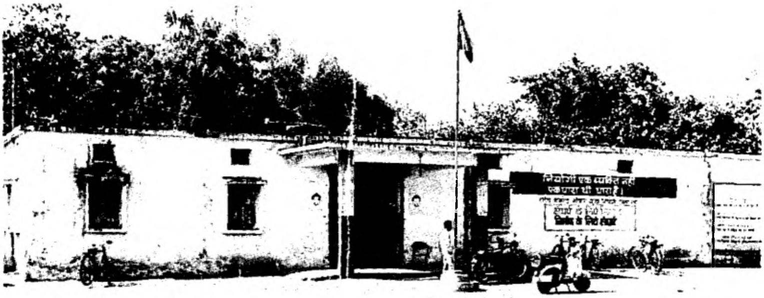

यूनियन दफ़्तर

हेमन्त पाठशाला

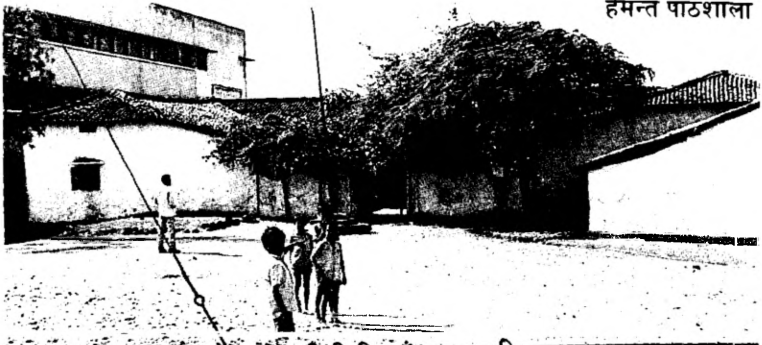

शहीद गैरेज एवं ट्रेनिंग सेंटर

यूनियन दफ्तर के पीछे 'अपना जंगल पहचानो' कार्यक्रम

सामूहिक सफाई अभियान
(सितम्बर 1981) पृष्ठ 364

महिलाओं की प्रजनन-स्वास्थ्य
सम्बंधी समस्याओं पर
शहीद अस्पताल में
स्वास्थ्य-कार्यकताओं का प्रशिक्षण

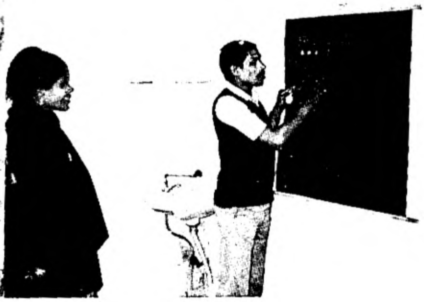

जन-सभाओं हेतु बड़े पैमाने पर (हजारों लोगों के लिए)
चावल पकाने की देशज तकनालाजी (दिसम्बर 1991)

शपथपत्र

* मैं छत्तीसगढ़ के महान क्रांतिकारी नेता शहीद वीर नारायण सिंह के नाम पर यह शपथ लेता हूँ कि मैं जीवन के अंतिम दिन तक जनता की सेवा करता रहूँगा। कठिनाइयों को झेलते हुए, शोषणमुक्त समाज व्यवस्था की स्थापना के लिए संघर्षरत रहूँगा एवं निडर होकर इस हेतु हर सम्भव कुर्बानी के लिए सदैव तत्पर रहूँगा।

* मैं यह जानता हूँ कि बंदूक की गोलियों से अधिक खतरनाक शक्कर की मीठी गोलियाँ होती हैं। मुझे यह भी पता है कि जो बहादुर साथी बंदूक की गोलियों से नहीं डरते, वे भी शक्कर की मीठी गोलियों से घायल हो जाते हैं। विधानसभा या लोकसभा चुनकर जाने वाले सदस्यों के सामने शक्कर की मीठी गोलियों का प्रलोभन सदैव बना रहता है। किसी नाजुक क्षण में वह मीठी गोली, कुर्बानी करने वाले साथी के ईमान को भ्रष्ट कर देती है और वह बहादुर साथी कायर बन जाता है। छत्तीसगढ़ के सपूत क्रांतिवीर ठाकुर प्यारेलाल सिंह की पुण्य स्मृति को सदैव साक्षी मानकर मैं निष्ठापूर्वक प्रलोभनरूपी मीठी गोलियों का मुकाबला करता रहूँगा।

* जन संगठन जन शक्ति का आधार है। वैज्ञानिक चिंतनधारा जन संगठन की आत्मा होती है। सूझ-बूझ से सम्पन्न कुशल कार्य पद्धति जन संगठन का आधार होती है ओर उसी के सहारे संगठन आगे बढ़ता है। मैं जनशक्ति के इन महत्वपूर्ण विषयों पर पूरा ध्यान दूँगा एवं जनता के सेवा कार्य में जुटे रहकर इन पद्धतियों का प्रयोग करते हुए एक जागरूक जन संगठन के उत्तरोत्तर विकास हेतु जीवन के अंतिम क्षण तक जुटा रहूँगा।

* इंसान की शिक्षा माँ की गोद से ही शुरू होती है जो उसके जीवन के अंत तक निर्बाध प्रक्रिया के रूप में चलती रहती है। व्यापक जन समुदाय की प्रगति का मार्ग प्रशस्त करने वाली शिक्षा ही वैज्ञानिक शिक्षा है। मैं विश्व की मानव सभ्यता के इतिहास से शिक्षा लेकर हमारी देशवासी करोड़ों जनता एवं दुनिया के सभी मेहनतकशों एवं क्रांतिकारियों के संघर्ष से शिक्षा लेकर नम्रता, निःस्वार्थ एवं सैद्धांतिक दृढ़ता का परिचय देते हुए समाज व्यवस्था और देश की व्यवस्था में गुणात्मक परिवर्तन लाने के लिए प्रयत्नशील रहूँगा।

* मैं जनता से एक सुई भी उपहार में नहीं लूँगा। विशेष जरूरत पड़ने पर ली गयी हर वस्तु की कीमत अदा करूँगा। मैं महिलाओं का सम्मान करूँगा तथा मादक

उद्योग हित बनाम मजदूर हित

राजनांदगाँव की राष्ट्रीय कपड़ा निगम द्वारा संचालित बंगाल–नागपुर कॉटन मिल्स के 80% से अधिक मजदूर राजनांदगाँव कपड़ा मजदूर संघ के नेतृत्व में 14 जुलाई 1984 से मिलों की अमानवीय कार्य परिस्थितियों एवं अन्य अनियमितताओं के विरोध में हड़ताल पर चले गये। 12 सितम्बर को पुलिस द्वारा मजदूरों पर गोली चालन किया गया जिसमें तीन मजदूर मारे गये, अनेक घायल हुए। ऐसे तनावग्रस्त माहौल में राजनांदगाँव के एक निजी उद्योग 'राजाराम मेज़ प्रॉडक्ट्स' के मालिक श्री राजाराम गुप्ता ने मिल की समस्या हल करवाने में सहयोग दिया। श्री गुप्ता स्वयं सन् 1963 में भारत सरकार द्वारा इसी मिल के 'मैनेजिंग एजेंट' नियुक्त किये गये थे और उन्होंने उस समय बंद पड़ी मिल को फिर से चालू करवाया था। 31 जुलाई 1984 को श्री गुप्ता ने मिल के जनरल मैनेजर को एक पत्र लिखा था जिसे हम नीचे प्रस्तुत कर रहे हैं। यह पत्र दिखाता है कि तीव्र संघर्ष के दौरान भी उद्योग और मजदूरों का साझा हित ही नियोगी का मुख्य उद्देश्य होता था, न कि अपनी राजनैतिक रोटियाँ सेंकना। — स.

"कल दिन भर मैं आपके और श्री शंकर गुहा नियोगी, राजनांदगाँव के कलेक्टर और श्रम अधिकारी के साथ मिलों में फिर से काम शुरू किये जा सकने की सम्भावनाओं पर बातचीत करता रहा। इस सिलसिले में मैं निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुँचा हूँ :

1. मंदसौर के भूतपूर्व कलेक्टर श्री रमेश दास ने मुझे श्री नियोगी के बारे में काफी अच्छी बातें बतायी हैं। उन्होंने मुझे बताया कि वे एक अलग प्रकृति के आदमी हैं और स्वार्थी व तबाहीपसंद तथाकथित मजदूर नेताओं की तरह नहीं हैं। उनके दिल में मजदूरों व उद्योग के प्रति सच्चा प्रेम व सहानुभूति है। मैं उनसे मिला और वे मुझे काफी समझदार आदमी लगे।

2. कलेक्टर और श्रम अधिकारी के साथ बातचीत के दौरान तो श्री नियोगी ने 75% माँगों को छोड़ने तक की बात कही और कहा कि मामले को कानूनी प्रक्रिया से निपटाया जा सकता है। समझौते के मार्ग में मुख्य बाधा 17 बर्खास्त मजदूरों का सवाल था। 3,500 मजदूरों को परेशानियों से निजात दिलाने और राजनांदगाँव की अर्थव्यवस्था को चौपट होने से बचाने के लिए इस समस्या का हल ढूँढना जरूरी है। श्री नियोगी ने जोर दिया कि हमें 'भूल जाओ और माफ करो' की नीति अख्तियार करनी चाहिए। उन्होंने उस दुःखद घटना के लिए बहुत खेद प्रकट किया और आश्वासन दिया कि अब भविष्य में

(1)

" आशा है कि आपको मेरा पिछला पत्र मिल गया होगा, जो मैंने बहुत पहले कलकत्ता में काम शुरू करने पर लिखा था।

बंगाल-नागपुर कॉटन मिल्स में मेरे कार्यकाल के दौरान आपने मुझे जो सहयोग दिया, उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। जैसा कि आप जानते हैं कि बंगाल-नागपुर कॉटन मिल्स को मेरे कार्यकाल में वर्ष 1988-89 का सर्वश्रेष्ठ कामकाज (उत्पादन, औद्योगिक सम्बंध आदि) का पुरस्कार दिया गया है। यह आपके सहयोग के बगैर सम्भव नहीं था। मिलों को सुचारू रूप से चलाने में समय-समय पर विभिन्न संवेदनशील मसलों पर आप से मिली मदद के लिए मैं व्यक्तिगत रूप से आभारी हूँ। कृपया मेरी ओर से अपनी यूनियन के तमाम पदाधिकारियों को मेरा अभिवादन और धन्यवाद दें एवं साथ ही अपने परिवार को भी मेरा प्रणाम कहें। "

(2)

" मुझे आपको यह जानकारी देते हुए खुशी हो रही है कि मुझे नेशनल टेक्सटाइल कार्पोरेशन (मध्य प्रदेश) लिमिटेड का अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक नियुक्त किया गया है। एन. टी. सी. (म. प्र.) मेरे लिए नया नहीं है। मैं पिछले दो सालों से इस संस्थान में मुख्य महाप्रबंधक (मार्केटिंग) के पद पर कार्यरत था। इस दौरान मुझे बंगाल-नागपुर कॉटन मिल्स, राजनांदगाँव, के हित में आपके द्वारा दिये जा रहे बहुमूल्य योगदान के बारे में पता चला है। बंगाल-नागपुर कॉटन मिल्स के मजदूरों / कर्मचारियों के कल्याण के प्रति आपके सरोकार व चिंता को भी मैं समझ पा रहा हूँ। आप अपने नेतृत्व में मिलों की रोजमर्रा की समस्याओं का समाधान करवा पाये हैं।

आशा है कि आप वही सहयोग मुझे भी देंगे। मुझे विश्वास है कि आपके बहुमूल्य सहयोग से हम बंगाल-नागपुर कॉटन मिल्स को और भी ज्यादा मजबूत और स्वस्थ आधार पर विकसित कर पायेंगे। मैं अपने राजनांदगाँव प्रवास के दौरान आपसे मिलने को काफी उत्सुक हूँ। " □

(छमुमो के सौजन्य से ; मूल अंग्रेजी से ध्रुव नारायण द्वारा अनूदित।)

छमुमो के नेताओं की गिरफ्तारी पर दो बयान

11 फरवरी 1981 को छमुमो के तत्कालीन अध्यक्ष श्री सहदेव साहू एवं संगठन मंत्री श्री नियोगी को राष्ट्रीय सुरक्षा कानून (रासुका) के तहत गिरफ्तार कर लिया गया। राज्य सरकार की इस कार्रवाई की देशभर में तीव्र भर्त्सना हुई। विख्यात कवि स्वर्गीय श्री भवानी प्रसाद मिश्र की अध्यक्षता में भोपाल में आयोजित लोक स्वतंत्रता संगठन (पीपुल्स यूनियन फ़ॉर सिविल लिबर्टीज़) की राज्य-स्तरीय

इतने आश्वासनों के बावजूद सरकार देश भर में इस कानून का उपयोग ऐसे लोगों पर कर रही है जो गरीबी, अन्याय और शोषण के खिलाफ जन-जीवन में चेतना जागरण कर रहे हैं और लोगों को संगठित कर रहे हैं।

आजादी की लड़ाई के दौरान हम लोगों ने ऐसे भारत का सपना देखा था जिसमें सदियों से शोषित आदिवासियों, हरिजनों, गरीब किसानों और मजदूरों को अपने विकास के लिए समाज में समान अवसर मिल सकेंगे और इज्जत की जिंदगी बिताने का अधिकार मिलेगा। आजादी के 33 वर्षों बाद आज यह कहना तक मुश्किल है कि आजादी के इस सपने को साकार करने के लिए हमने पहला कदम भी उठा लिया है। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि कमजोर वर्ग के लोगों को कम-से-कम अपनी आवाज बुलंद करने और शांतिपूर्वक अपने अधिकारों के लिए लड़ने की स्वतंत्रता हो। रासुका जैसा निरोधक नजरबंदी कानून जो गरीब लोगों के इस प्रजातांत्रिक अधिकार को छीनता है उसका विरोध करना हर जागरूक नागरिक का कर्तव्य है।

आपातकाल के दौरान लोकनायक जयप्रकाश नारायण और मैंने मिलकर पी. यू. सी. एल. का गठन किया था। मुझे बहुत खुशी है कि मध्य प्रदेश के सजग नागरिक मिलकर पी. यू. सी. एल. की राज्य-स्तरीय शाखा की शुरुआत कर रहे हैं। मुझे उम्मीद है कि भोपाल में हो रहे पहले राज्य-स्तरीय सम्मेलन में श्री शंकर गुहा नियोगी और उनके सहयोगियों को रिहा करवाने और रासुका जैसे काले कानून को रद्द करवाने के ठोस कार्यक्रम पर विचार होगा।

पी. यू. सी. एल. के माध्यम से मैं मध्य प्रदेश के मुख्य मंत्री श्री अर्जुन सिंह जी से अपील करता हूं कि छत्तीसगढ़ के मजदूर नेताओं को वे तुरंत रिहा करें ताकि अन्याय और शोषण के खिलाफ खदान व ग्रामीण मजदूरों का संघर्ष जारी रह सके। मुझे उम्मीद है कि मध्य प्रदेश सरकार मजदूरों के इन ईमानदार कार्यकर्ताओं को तुरंत रिहा करके प्रजातांत्रिक मूल्यों और संविधान द्वारा दिये गये मूलभूत अधिकारों में अपनी निष्ठा का सबूत देगी और जनता का विश्वास प्राप्त करेगी।"

नयी दिल्ली,
4 मार्च 1981

❑

(पी. यू. सी. एल., मध्य प्रदेश, के सौजन्य से ; श्री हक्सर का संदेश मूल अंग्रेजी से अनूदित।)

प्रधान मंत्री को लिखे पत्र

जून 1986 के प्रथम सप्ताह में नियोगी ने तत्कालीन प्रधान मंत्री स्वर्गीय श्री राजीव गांधी को एक-के-बाद-एक पाँच पत्र लिखे थे। इनमें छत्तीसगढ़ के औद्योगीकरण के कारण उपजी समस्याओं, सार्वजनिक उपक्रमों में व्याप्त भ्रष्टाचार, मशीनीकरण के रोजगार पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों, नौकरशाहों की मजदूर-विरोधी प्रवृत्ति, आदि विषयों पर तथ्यपरक टिप्पणियाँ की गयी हैं। ये पत्र इस बात के भी सबूत हैं कि नियोगी शासक वर्ग के चरित्र के बारे में अपनी प्रखर समझ और जुझारू शैली के बावजूद संवैधानिक दायरे में उपलब्ध सम्भावनाओं को पूरी तरह परख लेने के बाद ही किसी आंदोलन की शुरूआत करते थे। इन पाँच पत्रों में से दो पत्र यहाँ प्रस्तुत हैं। शेष तीन पत्र इन्हीं मुद्दों को और आगे बढ़ाते हैं। — स.

पत्र क्र. 1

सार्वजनिक उपक्रमों में भ्रष्टाचार और मजदूरों का दमन

आदरणीय महोदय,

राजहरा और राजनांदगाँव की मजदूर बस्तियाँ अब भुखमरी की बस्तियाँ बन चुकी हैं। हम आपको इन परिस्थितियों से अवगत कराना चाहते हैं और आपसे इन भीषण हालातों को सुधारने हेतु तुरंत निर्णयात्मक हस्तक्षेप करने का अनुरोध करते हैं।

राजहरा

दल्ली राजहरा की लौह अयस्क खदानें, भिलाई स्टील प्लांट या 'सेल' (भारतीय इस्पात प्राधिकरण) की बंधक खदानें हैं। आप सितम्बर-अक्तूबर 1984 की अपनी यात्रा के दौरान यहाँ से गुजर चुके हैं। इन खदानों को शुरू हुए आज पच्चीस साल से भी अधिक वक्त गुजर गया है, परंतु अधिकांश मजदूर अभी भी ठेका मजदूर प्रणाली के तहत काम कर रहे हैं। आप यह जानते ही हैं कि यह कानून के खिलाफ है चूँकि यहाँ का काम स्थायी और बारहमासी किस्म का है।

आपकी सरकार ने जब से 'आधुनिकीकरण' का नारा दिया है, तब से उत्पादन में 25 से 50 प्रतिशत तक की गिरावट आयी है (अखबारों के झूठे आँकड़ों की बात अलग है)। अपनी अक्षमता को छिपाने के लिए अयोग्य और भ्रष्ट अधिकारी हाथ से काम करने वाले ठेका मजदूरों

बी. एन. सी. मिल्स के मजदूरों ने प्रतिदिन 65,000 मीटर कपड़े का रिकार्ड उत्पादन किया है। परंतु, मैनेजमेंट ने जानबूझकर कार्य परिस्थितियाँ बिगाड़ीं, उत्पादन में गड़बड़ी की, और अब अपनी अक्षमताओं को छिपाने के लिए खराब औद्योगिक रिश्तों का बहाना बना रहे हैं। बुनाई विभाग में आर्द्रता (नमी) और तापमान को नियंत्रित करने वाले एक महत्वपूर्ण पँखे की जानबूझकर उपेक्षा की गयी, जिससे असहनीय कार्य परिस्थितियाँ बन गयीं और उनके चलते पिछले आठ माह से उत्पादन बंद है। भिलाई की तरह यहाँ भी भ्रष्टाचार रोजमर्रा की बात है!

यहाँ भी, हम आपसे दमन रोकने, छँटनी बंद करने और वेतन के ढाँचे को बदलने की दीर्घकालीन माँगों को पूरा करवाने हेतु हस्तक्षेप करने की अपील करते हैं।

सधन्यवाद। शुभकामनाओं सहित,

भवदीय,

शंकर गुहा नियोगी

पत्र क्र. 2

छत्तीसगढ़ का औद्योगीकरण बनाम आंचलिक विकास

आदरणीय महोदय,

छत्तीसगढ़ क्षेत्र खनिज पदार्थों और वन संसाधनों से भरपूर होने के बावजूद हमारे देश का एक गरीब और पिछड़ा हुआ इलाका है। ग्रामीण और शहरी दोनों अंचलों में लाखों बेरोजगार युवा लोग रोजगार की तलाश में भटक रहे हैं। ऐसे हालात इसके बावजूद बने हैं कि इस क्षेत्र का ताँबे, टिन, लौह, चूना पत्थर, डोलोमाइट, क्वार्ट्जाइट, फ्लोरस्पार, यूरेनियम और कोयले के अपने संसाधन होने की वजह से सच में बहुत तेजी से औद्योगिक विकास हो सकता था। वैसे भी भिलाई स्टील प्लांट, और भारत एल्युमिनियम कम्पनी (कोरबा) जैसे जो उद्योग इस क्षेत्र में लगाये भी गये हैं, उनकी वजह से इस क्षेत्र के विकास में कोई उल्लेखनीय योगदान नहीं मिल पाया है। कम-से-कम यह उम्मीद तो की ही जाती थी कि इन उद्योगों में बड़ी संख्या में छत्तीसगढ़ी लोगों को रोजगार मिलेगा। सच तो यह है कि इतना भी नहीं हो पाया और इस क्षेत्र के उद्योगों में प्रधानतः बाहर से लाये गये लोगों को ही काम मिला।

छत्तीसगढ़ के लोग आज इस पूरी प्रक्रिया पर प्रश्न उठा रहे हैं उनका कहना है, " हम इस क्षेत्र के औद्योगीकरण हेतु अपने खनिज स्रोतों का दोहन होने देने के लिए खुशी-खुशी राजी हो गये थे। ये उद्योग सिंचाई की सुविधाओं के विकास की कीमत पर हमारी नदियों में बह रहे पानी का भी उपयोग कर रहे हैं। इस क्षेत्र के लोगों ने अपनी जमीन, जंगल, घर, और माटी की भी इस उद्देश्य के लिए कुर्बानी दे दी है। परंतु तब भी, मेहनत करने को उत्सुक हमारे बच्चों को कोई रोजगार नहीं मिला है। तो फिर, आखिर, हमने पाया क्या ? "

आज नौकरशाहों ने अपने आपको आधुनिकीकरण के हथियार से लैस कर लिया है और इस क्षेत्र के लोगों के खिलाफ जंग छेड़ दिया है। जिन मुट्ठी-भर छत्तीसगढ़ी लोगों ने खदानों,

देशज और स्वावलम्बी तकनालाजी की ओर

गणेशराम चौधरी

दल्ली राजहरा में 20 मई 1978 का दिन।

कामरेड शंकर गुहा नियोगी के नेतृत्व में मजदूरों का एक जुलूस दल्ली ' क्रशिंग प्लांट ' की ओर, जुलूस की परम्परागत दिशा[1] की विपरीत दिशा में जा रहा था। जुलूस की इस नयी दिशा को लेकर ही मैं काफी उत्साहित था, किंतु असमंजस में भी था कि आखिर हो क्या रहा है। नियोगीजी एक काला झंडा थामे उस समय निर्माणाधीन दल्ली ' क्रशिंग, स्क्रीनिंग एंड वाशिंग ' प्लांट के गेट तक गये और गेट के सामने ही एक खम्भा गाड़कर उस पर काला झंडा लगा दिया। खदानों से सम्बंधित तमाम विभागों एवं पूरे दल्ली राजहरा शहर में सनसनी फैल गयी। आखिर इसका मतलब क्या है ? लोग आपस में गुफ्तगू करने लगे। यहाँ तक कि भिलाई इस्पात संयंत्र के अधिकारियों, इंजीनियरों व अन्य कर्मचारियों को भी इसी स्थिति में पाया गया। अंततः नियोगीजी ने एक जोरदार नारा लगाया —

" जहाँ श्रमशक्ति प्रचुर है, वहाँ मशीनीकरण एक पाप है। "

उसी शाम को दल्ली राजहरा में सी. एम. एस. एस. की ओर से एक पुस्तिका ' किरंदुल के अग्निगर्भ से ' प्रसारित की गयी (देखिये पृ. 100-115)। उस पुस्तिका में 5 अप्रैल 1978 को बस्तर जिले में स्थित बैलाडीला की लौह अयस्क खदानों के मजदूरों पर पुलिस द्वारा गोली चालन एवं उनकी बस्तियाँ उजाड़ने के बारे में जानकारी दी गयी थी। पुस्तिका में इस दुःखद घटना का परिप्रेक्ष्य समझाते हुए बैलाडीला की खदानों में किये जा रहे पूर्ण मशीनीकरण एवं उसके कारण छँटनी में निकाले गये लगभग 10,000 मजदूरों द्वारा किये गये आंदोलन का संदर्भ दिया गया था। पुस्तिका में आगे चलकर पूर्ण मशीनीकरण के विकल्प स्वरूप ठोस आँकड़ों सहित अर्द्ध-मशीनीकरण का तकनीकी प्रस्ताव भी दिया गया था। इस वैकल्पिक प्रस्ताव के अनुसार अर्द्ध-मशीनीकरण की पद्धति में मजदूरों की बिना छँटनी किये उम्दा किस्म का स्थायी एवं पर्याप्त उत्पादन देने की सम्भावना को उजागर किया गया था। पुस्तिका के आँकड़ों से मैं आश्चर्यचकित रह गया एवं बार-बार उसको पढ़ने की जिज्ञासा जागी। तब कहीं जाकर उस दिन सबेरे नियोगीजी द्वारा निकाले गये विपरीत दिशा वाले जुलूस एवं काले झंडे का मतलब समझ में आया।

सन् 1974 में ही भिलाई इस्पात संयंत्र की इस्पात उत्पादन क्षमता 10 लाख टन से बढ़कर 25 लाख टन हो गयी थी। मैनेजमेंट ने इस बढ़ी हुई क्षमता को मद्देनजर रखते हुए दल्ली खदान समूह में पूर्ण मशीनीकृत पद्धति लागू करने का फैसला कर लिया था (राजहरा खदान तो शुरू से ही, यानी सन् 1960-61 से, मशीनीकृत थी)। परंतु किसी कारणवश दल्ली क्रशिंग प्लांट का

---

[1] आमतौर पर मजदूर खदान गेट (क्रशिंग प्लांट) से अपना जुलूस लेकर राजहरा माइन्स दफ्तर तक जाते हैं जहाँ अधिकारी तबका मिलता है।

में ही रिकार्ड उत्पादन दिया एवं भारतीय इस्पात प्राधिकरण ('सेल') की तमाम खदानों में से सबसे उत्कृष्ट किस्म का लौह अयस्क का उत्पादन करके भिलाई इस्पात संयंत्र को उपलब्ध कराया। इसके साथ ही दल्ली राजहरा के ठेका व सहकारी समितियों के हजारों मजदूरों की छँटनी का खतरा उस समय के लिए टल गया।

स्टील प्लांट के मैनेजमेंट एवं 'सेल' के अधिकारियों को इस पद्धति पर आज भी आपत्ति है। उन्हें खतरा है कि इसकी सफलता को देखकर कहीं इस पद्धति का विस्तार न हो जाये। इस विस्तार को रोकने के लिए मैनेजमेंट समय-समय पर नये-नये नियम व स्कीमें बनाकर अथवा हथकंडे अपनाकर ठेका और समिति के मजदूरों की संख्या कम करने की कोशिश में लगा रहता है। मजदूर वर्ग आज नयी औद्योगिक नीति एवं नयी आर्थिक नीति के भँवरजाल से निकलने की तड़पन महसूस कर रहा है। इस परिस्थिति में हम स्वावलम्बन पर आधारित देशज तकनालाजी के जरिये ही बढ़ती हुई बेरोजगारी, घटती हुई क्रय क्षमता और विदेशों पर निर्भरता के अंधकार से निकलकर सुख-चैन की साँस ले सकते हैं।

नियोगीजी ने **आत्मसम्मान के साथ जीवन निर्वाह करने की पद्धति एवं एक इज्जतदार नागरिक की जीवन शैली** को आम जनता के सामने पेश किया था। यह वर्तमान पीढ़ी का दायित्व है कि वह देश की वस्तुस्थिति पर आधारित तकनालाजी का इस्तेमाल करने की जो राह नियोगीजी ने दिखायी है, उस पर चलने का संकल्प ले।

□

अर्द्ध-मशीनीकरण — देशप्रेमी तकनालाजी की मिसाल

अनिल सद्गोपाल

भारतीय खनन उद्योग के विकास में सी. एम. एस. एस. द्वारा प्रस्तावित अर्द्ध-मशीनीकरण का प्रयोग आधुनिक तकनालाजी को भारत की सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के मुताबिक ढालने का रास्ता दिखाता है।

पूर्ण मशीनीकृत पद्धति में पहाड़ी से लोहा पत्थर (1,000 मि. मी. साइज तक का) निकालने का काम विशालकाय स्वचालित 'शावेल' मशीनों द्वारा किया जाता है। ये मशीनें 'रेजिंग' मजदूरों की जगह ले लेती हैं। 'शावेल' की जरूरत के हिसाब से 'ड्रिलिंग' एवं 'ब्लास्टिंग' की तकनालाजी भी बदलनी पड़ती है और इस काम के लिए छोटी ड्रिलिंग मशीनों का स्थान बड़ी मशीनें ले लेती हैं जिससे ड्रिलिंग मजदूरों की भी जरूरत नहीं रह जाती। 'शावेल' बड़ी मात्रा में पहाड़ी से लोहा पत्थर निकालकर 50 टन-क्षमता वाले 'डम्पर' में सीधे डाल देता है, जिससे ढुलाई मजदूर भी फालतू हो जाते हैं। एक डम्पर दस 'टिप्पर' ट्रकों का काम करता है और इस प्रकार छोटे ट्रकों से रोजगार कमाने वाले लोग — साधारण हैसियत के ट्रक मालिक, ड्राइवर एवं हेल्पर तथा ट्रकों के रख-रखाव व मरम्मत में लगे हुए सैकड़ों मैकेनिक —

मशीनीकरण के खिलाफ एक लड़ाई [1]

गणेशराम चौधरी • पुण्यब्रत गुण

दल्ली और राजहरा दो पहाड़ियों के नाम हैं। दल्ली पहाड़ी पर लोहे की तीन खदानें हैं – दल्ली, मयूरपानी और झरनदल्ली। राजहरा पहाड़ी पर दो खदानें हैं – राजहरा और कोकान। इन पाँच खदानों के इर्द-गिर्द का जंगल काट कर पचास के दशक में बसाया गया था दल्ली राजहरा खदान शहर, जिसकी वर्तमान जनसंख्या लगभग एक लाख बीस हजार है। दल्ली राजहरा की अर्थव्यवस्था मूलतः खदानों पर निर्भर है। दल्ली राजहरा पर डौंडी लोहारा ग्रामीण ब्लाक के लगभग एक लाख लोगों की जिंदगी निर्भर है। ये लोग रोजी-रोटी कमाने हेतु लकड़ी, सब्जियाँ, अनाज और दूध बेचने यहीं आते हैं और यहीं के लिए खेती भी करते हैं। दल्ली राजहरा खदान समूह में उपरोक्त पाँच खदानों के अलावा दो और लौह अयस्क खदानें शामिल हैं – दल्ली से 18 कि. मी. दूर स्थित महामाया खदान और 21 कि. मी. दूर स्थित आरीडोंगरी खदान। ये सभी बी. एस. पी. की बंधक खदानें हैं।

मशीनीकरण क्षेत्र की अर्थव्यवस्था को अस्त-व्यस्त कर देगा

पूर्ण मशीनीकरण की योजना क्रियान्वित होने पर स्वाभाविक रूप से रेजिंग व ट्रांसपोर्ट मजदूर बेकार हो जायेंगे। उनकी छंटनी होगी। उनके परिवारों को खाना नहीं मिलेगा। इन खदान मजदूरों की आमदनी पर निर्भर दल्ली राजहरा की दुकानें बंद हो जायेंगी। आस-पास के गाँवों के जो लोग दल्ली राजहरा के बाजार में चीजें बेचते हैं, उनकी रोजी-रोटी बंद हो जायेगी। खदान मजदूरों की आय के एक हिस्से पर गाँवों में उनके परिवारों की खेती निर्भर है वह भी बंद हो जायेगी। जो टिप्पर ट्रकें खदानों में चलती हैं, उनकी जरूरत नहीं रहेगी। छोटी ट्रकों के मालिक, ड्राइवर, हेल्पर, दल्ली राजहरा के गैराजों में काम करने वाले मेकेनिक – जिनकी संख्या काफी बड़ी है – वे भी बेकार हो जायेंगे। पूरे इलाके की अर्थव्यवस्था और जन-जीवन अस्त-व्यस्त हो जायेगा। इस वास्तविक सम्भावना का व्यापक प्रचार करके और अर्द्ध-मशीनीकरण का विकल्प पेश करके सी. एम. एस. एस. मशीनीकरणविरोधी आंदोलन के पक्ष में जन समर्थन जुटाने में सफल हुआ है।

मैनेजमेंट का सोच

भिलाई इस्पात संयंत्र की उत्पादन क्षमता को बढ़ाने और उसे [illegible] दल्ली राजहरा

---

[1] दरअसल, यह लड़ाई सैद्धांतिक रूप से मशीनीकरण की [illegible] मशीनीकरण के खिलाफ है जो उपलब्ध श्रमशक्ति का समुचित उपयोग नहीं करता और समाज में विषमता व तनाव बढ़ाता है। इस मायने में सी. एम. एस. एस. की लड़ाई खदानों के पूर्ण [illegible] अर्द्ध-मशीनीकरण [illegible] लड़ाई' के रूप में जाना जाता है। बेहतर होता कि भविष्य में इसे '[illegible] के लिए लड़ाई' के रूप में जाना जाये! – सं.

जन [illegible]।

उपक्रम एच. एस. सी. एल. को राजहरा रेल्वे साइडिंग पर 'ओपन हर्थ ग्रेड' के अयस्क को तैयार करने हेतु एक छोटे क्रशर का ठेका दे दिया जिसमें करीब 50-60 नये मजदूरों की भर्ती की गयी। ये सभी मजदूर एटक से सम्बंधित थे। ध्यान देने योग्य बात है कि सन् 1974 से खदानों में नये मजदूरों की भर्ती एकदम बंद थी। इतने वर्षों बाद अचानक इस नयी भर्ती से बेरोजगार युवाओं में आशा की एक किरण जागी।

- सी. एम. एस. एस. की ओर से भी प्रबंधन से काम देने की अपील की गयी। अतः एक और क्रशर में 50-60 युवकों को यूनियन के माध्यम से काम मिला।

– नयी भर्ती से उपजी आशा का लाभ उठाते हुए एटक सम्बंधित यूनियन ने क्षेत्र के युवकों से बड़ी मात्रा में चंदा बटोरा एवं बेरोजगारों को इकट्ठा किया।

– सी. एम. एस. एस. की ओर से मैनेजमेंट की इस चाल को समझते हुए 26 दिसम्बर को विभागीयकरण, ग्रेच्युटी, नियमित छुट्टी आदि का माँग पत्र प्रस्तुत किया गया।

जनवरी 1989

– मैनेजमेंट ने दल्ली खदान समूह के मशीनीकरण के दूसरे चरण हेतु भिलाई के एक बड़े ठेकेदार (बीके कम्पनी) को 16 करोड़ रुपये का ठेका दिया।

- राजहरा खदान में नये रोजगार की ललक का इस्तेमाल करते हुए बीके कम्पनी ने दल्ली खदान में उनके द्वारा बनाये जा रहे दूसरे क्रशिंग प्लांट हेतु 97 मजदूरों को जनवरी के दूसरे सप्ताह में काम पर रख लिया, परंतु उन्हें स्थानीय दरों की तुलना में बहुत कम मजदूरी दी गयी।

- सी. एम. एस. एस. ने दल्ली क्रशर के लिए भर्ती किये गये मजदूरों को परोक्ष रूप से संगठित करके वेतन बढ़ोतरी की माँग उठवायी।

- अंतिम सप्ताह में राजहरा साइडिंग में एक ठेकेदार द्वारा सातवीं ब्लास्ट फर्नेस हेतु एक बड़ा क्रशर लगाया गया। चूँकि इस ठेकेदार का कुछ बड़ा काम दल्ली खदान समूह की तरफ चलता था, अतः उसे यूनियन की सलाह पर 120 मजदूरों को भर्ती करने पर विवश होना पड़ा।

- उधर बीके कम्पनी ने नये भर्ती किये गये मजदूरों की दिहाड़ी बढ़ाने की माँगें अमान्य कर दीं। इन मजदूरों का आंदोलन आगे बढ़ा।

फरवरी 1989

– पहले सप्ताह में बीके कम्पनी ने निर्माण कार्य हेतु सीमेंट मिक्सिंग प्लांट दल्ली खदान की तरफ ले जाने की कोशिश की जिसे उसी कम्पनी के 97 मजदूरों ने बीच रास्ते में ही रोक दिया। इसके बाद भी कम्पनी ने 3-4 बार और यह कोशिश की, किंतु हर बार उन्हीं के मजदूरों ने उसे विफल कर दिया।

– पहले सप्ताह में ही कम्पनी अध्यक्ष जनकलाल ठाकुर ने दल्ली राजहरा शहर में एक नागरिक सभा आयोजित की जिसमें विशिष्ट नागरिकगण, व्यापारी संघ के पदाधिकारी, पत्रकार, छात्र एवं एटक से जुड़ी एस. के. एम. एस. यूनियन के प्रतिनिधि भी उपस्थित थे। सभी ने एकजुट होकर दल्ली खदानों के मशीनीकरण के इस नये चरण का

पर आम सभा की और 2 अप्रैल से ' स्लो डाउन ' शुरू किया गया।

- 6 अप्रैल : मशीनीकरण के विरोध में दल्ली राजहरा के समस्त व्यापारियों, दुकानदारों, रेंड़ीवालों आदि ने बाजार बंद रखा। यह एक ऐतिहासिक सफलता थी। शाम को एक विशाल जन सभा के द्वारा सी. एम. एस. एस. ने अपनी बात शहर के आम लोगों तक पहुँचायी। अब एटक की एस. के. एम. एस. यूनियन अपने-आप में अकेली पड़ गयी थी, किंतु उसे मैनेजमेंट और बीके कम्पनी का समर्थन मिलता रहा। एटक की यूनियन से जुड़े मजदूर रोज बीके कम्पनी के काम पर जाते रहे और वापसी में जुलूस के रूप में आते रहे, साथ ही विभागीयकरण करवाने के नारे भी लगाते रहे।

- 30 अप्रैल : बीके कम्पनी में कार्यरत एटक के मजदूरों ने ' विजय जुलूस ' निकाला और यह दावा किया कि समस्त खदान मजदूरों का विभागीयकरण हो गया है।

मई 1989

- 1 मई : एटक द्वारा मई दिवस के उपलक्ष्य में सी. एम. एस. एस. दफ्तर के सामने से जुलूस निकाला गया और फिर विभागीयकरण हो जाने का दावा किया।

- 2 मई : सी. एम. एस. एस. ने तय किया कि दल्ली क्रशिंग प्लांट की ओर जाते हुए एटक के जुलूस को यूनियन दफ्तर के सामने रोककर विभागीयकरण का समझौता दिखाने को कहा जायेगा और तभी आगे जाने दिया जायेगा। एटक समझौता दिखाने में असफल, चूँकि ऐसा कोई समझौता हुआ ही नहीं था (आज तक मजदूर विभागीयकरण के लिए लड़ रहे हैं !)। बीके कम्पनी का काम रुक गया।

- 5 मई : बीके कम्पनी ने दुर्ग जिला अदालत से आदेश प्राप्त किया। इसमें जिला प्रशासन को निर्देशित किया गया था कि जैसे भी हो बीके कम्पनी के मजदूरों को सुरक्षित काम पर ले जाना पड़ेगा। सी. एम. एस. एस. द्वारा दल्ली क्रशिंग प्लांट को जाने वाली सड़क पर ' पिकेटिंग ' जारी रही।

- 6 मई : काफी तनावपूर्ण दिन। यहाँ प्रशासन की भूमिका को जरा समझना जरूरी है। प्रशासन बड़ी दुविधा में था। आमतौर पर प्रशासन, बी. एस. पी. और ठेकेदारों की मदद करता था। लेकिन बार-बार सी. एम. एस. एस. से टक्कर लेने के बाद प्रशासन समझ गया था कि बिना गोली चलाये इस यूनियन का अवरोध नहीं तोड़ा जा सकता। पुलिस प्रशासन गोली चलाना नहीं चाहता था, क्योंकि दुर्ग मध्य प्रदेश के तत्कालीन मुख्य मंत्री श्री मोतीलाल वोरा का गृह जिला था और उस साल चुनाव होने वाला था।

उस दिन सुबह सी. एम. एस. एस. के चार हजार से भी ज्यादा मजदूरों ने रास्ता रोका था। बीके कम्पनी के प्रारम्भिक 800 मजदूरों में से सिर्फ 170 कट्टर लोग ही हिम्मत करके काम पर जाने के लिए निकले थे। उनकी सुरक्षा के लिए लगभग 350 स्टेनगनधारी अर्द्ध-सैनिक बल के जवान मौजूद थे।

दुर्ग जिले के अतिरिक्त पुलिस सुपरिटेंडेंट और तहसील के एस. डी. एम. ने आकर सी. एम. एस. एस. के नेताओं से अनुरोध किया कि एक बार कोर्ट के आदेश का सम्मान रखने के लिए प्रशासन को इन 170 लोगों को काम पर पहुँचाने दिया जाये। सी. एम. एस. एस. ने रास्ता छोड़ दिया पर मजदूर सड़क के दोनों ओर कतार बनाकर

के. एम. एस. के दफ्तर पर कब्जा कर लिया और नेताओं की पिटाई शुरू कर दी।

जून 1989

– दल्ली राजहरा अब शांत, एस. के. एम. एस. (एटक) चुप। बी. एस. पी. अब एटक यूनियन को बीच में खड़ा करने की चाल में मात खाकर सी. एम. एस. एस. के साथ कई दौर में बातचीत के लिए मजबूर। सी. एम. एस. एस. का 'स्लो डाउन' जारी।

(कब फैसला होगा, कुछ पता नहीं ..... सी. एम. एस. एस. ने अपनी बारह साल की जिंदगी में बहुत-सी लम्बी-लम्बी लड़ाइयाँ लड़ी हैं। महीना-दर-महीना, साल-दर-साल, लम्बी-लम्बी हड़तालें चलायी हैं। मजदूरों ने अटल रहकर बार-बार जीत हासिल की है। मौजूदा आंदोलन को तो सिर्फ छह माह हुए हैं। मजदूरों की इस बार भी बहुत लम्बी लड़ाई चलाने की तैयारी है। देखते हैं कि आखिर में क्या होता है।)[1]

– 13 **जून** : मैनेजमेंट ने फिर से गलत कदम उठाने शुरू किये। सी. एम. एस. एस. के सदस्यों के 'स्लो डाउन' का मुकाबला करने के लिए उन्होंने महामाया खदान से लौह अयस्क शावेल द्वारा ट्रकों में भरकर दल्ली प्लांट में भेजने की कोशिश की। मजदूरों ने रास्ता रोका। उसी दिन दूसरा हमला हुआ दूसरी तरफ से। मैनेजमेंट ने उकसा-फुसलाकर ट्रक मालिकों के एक हिस्से से हड़ताल करवा दी। उन ट्रक मालिकों का कहना था कि 'स्लो डाउन' की वजह से उनको पूरा नहीं पड़ रहा था। यानी मजदूरों को पूरा उत्पादन करना होगा, आंदोलन बंद करना होगा। हालाँकि अधिकांश ट्रक मालिकों ने इस षड्यंत्र का विरोध किया।

– 14 **जून** : बी. एस. पी. मैनेजमेंट ने कोर्ट से आदेश प्राप्त किया जिसका आशय यह था कि उनकी सड़कों पर ट्रकों का रास्ता रोका नहीं जा सकता।

महामाया से दल्ली का सारा रास्ता बी. एस. पी. की मिल्कियत में है। सिर्फ एक जगह गोटुलगुंडा गाँव के पास सड़क का एक टुकड़ा राज्य सरकार का है। मजदूरों ने वहीं रास्ता रोकना शुरू किया।

जुलाई 1989

– 3 **जुलाई** : डौंडी-लोहारा के विधायक, छमुमो के अध्यक्ष श्री जनकलाल ठाकुर ने अनिश्चितकाल के लिए अनशन शुरू किया। माँगें इस प्रकार थीं –

1. दल्ली राजहरा शहर के लिए शवगृह (मॉरच्युरी), पानी, बिजली, सड़क, नालों पर पुल, साफ-सफाई की व्यवस्था की जाये।
2. मजदूरों की माँगें तत्काल पूरी की जायें।

– 14 **जुलाई** : भिलाई में एक समझौता वार्ता असफल रही। बी. एस. पी. बाकी माँगें मानने को तैयार था, पर उसने यूनियन से वायदा माँगा कि वे कोंडेकसा 'बी' ब्लाक में मशीनीकरण का विरोध नहीं करेंगे। यूनियन के प्रतिनिधियों ने यह प्रस्ताव नामंजूर कर दिया।

---

[1] लड़ाई के इस चरण में एक यूनियन कार्यकर्ता द्वारा मजदूरों के 'मूड' का विवरण।

समझौते का करारनामा :

1. ठेके और सहकारी समिति के अंतर्गत लगभग 10,000 मजदूर ग्रेच्युइटी पाने के हकदार हुए (सन् 1972 में ग्रेच्युइटी कानून लागू होने के बाद भारत में यह पहली बार है कि ठेके के मजदूरों को ग्रेच्युइटी मिली)।
2. मजदूरों को सवैतनिक 7 दिन की ' कैजुअल लीव ' व 5 दिन की ' फेस्टिवल लीव ' मिली।
3. सी. एम. एस. एस. ने कोंडेकसा ' बी ' खदान में मशीनीकृत माइनिंग (खनन) को अस्थायी तौर पर रुकवा दिया। बी. एस. पी. सिर्फ नीचे दबे हुए अयस्क के ऊपर की मिट्टी (यानी ओवरबर्डन) और अनुपयोगी चट्टानों को शावेल और बुलडोजर से हटा सकेगा। उसके बाद माइनिंग किस पद्धति से होगी, यह बी. एस. पी. और सी. एम. एस. एस. के बीच विचार-विमर्श से तय होगा।
4. जब तक वर्तमान पीढ़ी के मजदूर हैं, तब तक कोंडेकसा ' ए ', मयूरपानी व झरनदल्ली खदानों में छँटनी नहीं होगी।
5. विभागीयकरण का काम शुरू किया जायेगा।

❑

(उपरोक्त लेख के कई अंश अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित ' संघर्ष औ' निर्माण ' से साभार एवं मूल बंगला से डॉ. अमिताभ मुखर्जी द्वारा अनूदित ; डॉ. पुण्यव्रत गुण के मूल बंगला लेख का संशोधित स्वरूप।)

<u>दस्तावेज</u>

पूर्ण मशीनीकरण किस कीमत पर ?

नियोगी द्वारा दिसम्बर 1989 में नवगठित राष्ट्रीय मोर्चा सरकार के केंद्रीय इस्पात एवं खान मंत्री को लिखा गया एक पत्र यहाँ प्रस्तुत है। इस पत्र के बावजूद यह सरकार भी खदानों के पूर्ण मशीनीकरण की पूर्व सरकारों की नीति पर ही डटी रही।

माननीय मंत्री महोदय,

राजीव गांधी शासन के पिछले पाँच सालों के दौरान इस मंत्रालय के प्रबंधकों ने मशीनीकृत खनन में अत्यधिक रुचि दिखायी है। उन दिनों स्टील प्लांटों के तकनीकशाहों (टेक्नोक्रेट) के लिए ' नयी ' खर्चीली तकनालाजियों का आयात करना और मजदूर-विरोधी

मैन्युअल (मानवीकृत) प्रणाली	मशीनीकृत प्रणाली
ग) हाल के दिनों में पैदा किये गये उत्पादों के परीक्षण से उपरोक्त कथन की सत्यता प्रमाणित होती है। मैन्युअल खदानों से प्राप्त अयस्क में लौह तत्व की मात्रा 66 प्रतिशत से भी ज्यादा रही है।	
3. उत्पादन लागत	
क) दल्ली राजहरा समूह की खदानों में लौह अयस्क की उत्पादन लागत बहुत ज्यादा नहीं है। बारह हजार से ज्यादा मजदूरों को रोजगार देने के बावजूद लागत सिर्फ 103 रुपये प्रति टन है।	क) बैलाडीला खदानों के मशीनीकरण के बाद उसके अयस्क की उत्पादन लागत पूर्व की तुलना में दो से तीन गुना तक बढ़ गयी है। ख) अन्य खदानों से प्राप्त परिष्कृत अयस्क [1] की कीमतें भी कम नहीं रही हैं।
4. रोजगार सुविधाएँ	
क) आज दल्ली राजहरा समूह की मैन्युअल खदानों में 7,000 से ज्यादा मजदूर काम में लगे हुए हैं। ये इसी इलाके के मूल निवासी हैं। इन मजदूरों की आय बढ़ने की वजह से इस इलाके के लाखों लोगों की क्रय शक्ति बढ़ गयी है। ख) इस प्रकार हजारों लोगों के रोजगार की समस्या सीधे हल हो जाती है और परोक्ष रूप से उन लोगों की भी जो इस तरह से बढ़ी हुई आय पर निर्भर हैं।	क) मशीनीकृत खदानों में जो कुशल मजदूर भर्ती किये जाते हैं, वे आमतौर पर इस क्षेत्र के बाहर से आते हैं। ख) उल्टे यह बेरोजगारी की समस्या को और अधिक बढ़ा देता है, क्योंकि संयंत्र को खड़ा करने में लगे निर्माण-मजदूरों की उम्मीदों पर पानी फेर दिया जाता है। इस प्रकार, किरंदुल में डिपाजिट न. 5 (मशीनीकृत) के शुरू होने पर बेरोजगारी की समस्या और हताशा भयंकर रूप से बढ़ गयी [2], जिसके चलते अंततोगत्वा दक्षिण बस्तर नक्सलवादी इलाका बन गया।

इस बात का जिक्र करना भी जरूरी है कि अधिकांश लौह अयस्क व अन्य खनिजों का खनन झारखंड और छत्तीसगढ़ अंचलों से होता है। आप जानते ही हैं कि ये इलाके हमारे देश के सबसे पिछड़े इलाकों में से हैं। राजीव गांधी के शासनकाल ने विकसित और अविकसित इलाकों

[1] छनाई, ' साइजिंग ' एवं धुलाई जैसी प्रक्रियाओं से गुणवत्ता बढ़ाये जाने के बाद प्राप्त अयस्क।

[2] दक्षिण बस्तर में स्थित किरंदुल की इस खदान (डिपाजिट न. 5) को सन् 1978 में मशीनीकृत खदान के रूप में शुरू किया गया जिसकी वजह से बेरोजगार हुए मजदूरों में फैलते असंतोष पर काबू पाने के लिए पुलिस ने मजदूर बस्तियों में आतंक फैलाया और गोली चलायी (देखिये पृ. 100-109)।

बर्नपुर और अन्य इस्पात संयंत्रों के 'आधुनिकीकरण' कार्यक्रमों के लिए 'सेल' ने करोड़ों डालरों की विदेशी मुद्रा कर्ज के रूप में संचित कर ली है। अनुमानित 10,500 करोड़ रुपये के कर्ज / लागत से निर्मित हमारे इस्पात संयंत्र दुनिया का सबसे महँगा इस्पात बनाते हैं। आज जबकि विकसित देशों ने आधुनिक तकनीक के जरिये ब्लास्ट फर्नेस में 'लौह द्रवण प्रक्रिया' से छुट्टी पा ली है और सीधे इस्पात बना रहे हैं, तब ऐसे तथाकथित 'आधुनिकीकरण' का कोई औचित्य ही नहीं रह जाता है। बात तो केवल यही है कि विकसित देश अपनी पुरानी फालतू हो गयी तकनालाजियों को हमारे देश पर लाद रहे हैं। शायद इसी के जरिये 'कमीशन' बतौर तकनीकशाहों की करोड़ों रुपयों की कमाई सम्भव हो पायी है।

मंत्री महोदय से मैं आग्रह करूँगा कि आप उत्पादन, विपणन, उपभोग, आयात-निर्यात, मशीनीकरण व आधुनिकीकरण के सभी पहलुओं की जाँच करायें और अब तक हो रही तबाही को रोकने के लिए देशप्रेमी कदम उठायें।

हमारी माँगें निम्नलिखित हैं —

1. चूँकि मैन्युअल प्रक्रिया से खनन एक श्रम-प्रधान उद्योग है और हमारे देश के खदान क्षेत्रों में मेहनतकश लोग भारी तादाद में उपलब्ध हैं, इसलिए तमाम मशीनीकृत खदानें (दल्ली, किरीबुरू, मेघाहातिबुरू, बरसुआ, गुआ . . . .) मैन्युअल प्रक्रिया से चलायी जायें। अयस्क परिष्करण संयंत्र (प्रोसेसिंग प्लांट) अपना काम मशीनों के जरिये जारी रख सकते हैं।
2. मौजूदा गैरकानूनी ठेकेदारी प्रथा को समाप्त किया जाये और बारहमासी व स्थायी किस्म के कामों में लगे मजदूरों को विभागीयकृत (नियमित) किया जाये।
3. संयंत्र से निकलने वाले 'स्क्रैप' (रद्दी लोहा) व 'वेस्ट पिग आयरन' (बेकार हो गया या अपशिष्ट ढलवाँ लोहा) का इस्तेमाल किया जाये और उनका समुचित लेखा-जोखा रखा जाये।
4. भिलाई स्टील प्लांट में मजदूरों की संख्या को सन् 1984 के स्तर पर लाया जाये। सन् 1984 में यहाँ 96,000 मजदूर काम करते थे, लेकिन अब उनकी संख्या इस साल घटकर 72,000 हो गयी है। इसका या मतलब यह कि 24,000 रिक्त पदों पर मजदूरों की बहाली की जाये।
5. भिलाई के उत्तरी अंचल में बहने वाली शिवनाथ नदी पर बाँध ('चेक डेम्स') डाले जायें और मौजूदा जलाशयों का इस्तेमाल सिंचाई के लिए किया जाये।

धन्यवाद।

भवदीय

(शंकर गुहा नियोगी)

संगठन सचिव

□

(मूल अंग्रेजी से शुभ नारायण द्वारा किये गये अनुवाद का परिमार्जित स्वरूप।)

जाती है। शराब से ध्यान दूर करने के लिए शाम के समय भजन, लोकगीत व सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन किया जाता है। ”

(‘ जनवादी आंदोलन बनाम हिंसा की राजनीति ’, पी. यू. सी. एल. , म. प्र. , की रपट, मई 1982, से उद्धृत।)

महिलाओं ने शुरू से ही इस अभियान में अग्रणी भूमिका निभायी, चूँकि उन्होंने आसानी से समझ लिया था कि शराब के कारण घर में हो रहे उनके व बच्चों के शोषण से मुक्ति का यही रास्ता है।

सबसे पहले यूनियन के पदाधिकारियों पर, फिर मुखिया लोगों पर और अंततः मजदूरों पर शराब पीने की पाबंदी लगा दी गयी। परिणाम यह हुआ कि हजारों मजदूरों ने शराब न पीने का संकल्प लिया। इस विषय पर यूनियन के काम को नजदीकी से जानने वाले दिल्ली के एक पत्रकार, **भारत डोगरा,** लिखते हैं,

“ प्रायः यह माना जाता है कि आदिवासियों व विशेषकर आदिवासी खनिकों में शराब पीने की प्रवृत्ति इतनी प्रबल होती है कि उसे बदला नहीं जा सकता है, पर यूनियन ने यह सिद्ध कर दिया कि जब शराब छोड़ना मजदूरों के संगठन की इज्जत का सवाल बन जाता है, जब यह सवाल इस तरह से रखा जाता है कि संगठन की जिन उपलब्धियों को खून-पसीने से हासिल किया गया है उन्हें बनाये रखने के लिए शराब छोड़ना जरूरी है तो इस कार्य को एक जन आंदोलन का रूप देते हुए बहुत बड़ी संख्या में आदिवासी खनिक भी शराब छोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं। . . . किंतु मुख्य योगदान किसी तरह की जबर्दस्ती या जुर्माने का नहीं था। मुख्य योगदान इस तरह का माहौल बनाना था जिसमें मजदूर स्वयं अपने दिल में यह महसूस करते थे कि शराब पीना या पिलाना एक तरह से अपने संगठन के साथ धोखा करना है — ऐसे संगठन के साथ जो अनेक वर्षों में पहली बार इस क्षेत्र के मजदूरों के लिए आशा की एक किरण लाया था।

‘ खाली दिमाग शैतान की कार्यशाला है ’ और शराब के अभ्यस्त हो गये खनिकों का दिमाग शराब की ओर ही दौड़ता था, पर अब संगठन की ओर से स्कूल बनाने, सांस्कृतिक कार्यक्रम तैयार करने, किसानों के साथ सम्बन्ध बढ़ाने जैसे कितने ही नये उत्साहवर्धक कार्य आरम्भ होते जा रहे थे। अतः शराब के बिना शाम किस तरह बीतेगी, यह पूछने की नौबत ही नहीं आयी। ”

(‘ शहीद शंकर गुहा नियोगी और छत्तीसगढ़ का जन-आंदोलन ’ , प्रकाशन, मार्च, 1992, एन. एफ. एस. — इंडिया प्रकाशन, नयी दिल्ली, से उद्धृत।)

शराब के विरुद्ध अभियान के साथ-साथ जुआ खेलने के विरुद्ध भी [illegible] अनेक जुआरियों को यह लत छोड़नी पड़ी।

अभियान की विशेषताएँ

इस शराब-विरोधी अभियान की निम्नलिखित विशेषताओं को रेखांकित करना लाभप्रद होगा —

जन शिक्षण पोस्टर (छमुमो)

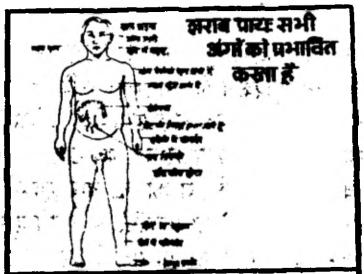

शराबबंदी अभियान

ट्रक से कुचल देने की कोशिश की गयी। स्वयं शराब ठेकेदार श्री भाटिया ट्रक में सवार थे। श्री शर्मा बुरी तरह घायल हुए, परंतु पुलिस ने इसे एक मामूली दुर्घटना का रूप देकर मामला रफा-दफा कर दिया। उसी वर्ष एक और घटना घटी। ठेकेदार के लोगों ने एक आदिवासी महिला पर अपने घर में शराब बनाने का आरोप लगाकर उसे डराया-धमकाया और ठेके पर ले जाकर रात भर बंद रखा। मजदूरों ने इसका आंदोलनात्मक ढंग से उत्तर दिया। सैकड़ों की तादाद में महिलाओं, बच्चों और पुरुषों ने ठेके के सामने प्रदर्शन करके व धरना देकर उस महिला को छुड़ा लिया और ठेकेदार को ऐसा न करने की चेतावनी दी। इस घटना से राजहरा में एक नया संतुलन स्थापित हुआ — मजदूरों के साथ दुर्व्यवहार में भारी कमी आ गयी।

बढ़ता हुआ जन समर्थन व प्रभाव

नियोगी ने इस अभियान में आम नागरिकों, पत्रकारों, समाजकर्मियों और देश के जाने-माने प्रगतिशील लोगों को राजहरा आमंत्रित किया। इसी क्रम में भूतपूर्व केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री एवं अखिल भारतीय नशाबंदी समिति की अध्यक्षा डॉ. सुशीला नैयर ने अप्रैल 1982 में राजहरा में एक विशाल जनसभा को सम्बोधित करते हुए हजारों मजदूरों को शराब व जुए से मुक्त कराने के लिए यूनियन की प्रशंसा की। समय-समय पर नियोगी स्वतंत्रता सेनानियों एवं अन्य क्रांतिकारी नेताओं को मजदूर रैलियों को सम्बोधित करने के लिए बुलाते रहे। उनका विश्वास था कि ऐसे लोगों को सुनकर और जानकर मजदूरों की समाज व देश के प्रति निष्ठा और गहरी होती है।

ऐसा नहीं था कि नशाबंदी अभियान का प्रभाव सिर्फ दल्ली राजहरा तक ही सीमित रहा हो। वास्तव में इस अभियान के तौर-तरीकों व सफलता से प्रेरित होकर देश के कई हिस्सों में इसी तरह के आंदोलन खड़े हुए जिनमें मुख्य थे सन् 1984 में 'उत्तराखंड संघर्ष वाहिनी' द्वारा उत्तर प्रदेश के नैनीताल, अल्मोड़ा व पिथौरागढ़ जिलों में चलाये गये सफल नशाबंदी अभियान।

उपसंहार — भिलाई के पदचाप

दस वर्ष पूर्व शराब माफिया राजहरा के मजदूर आंदोलन को आतंकित कर रहा था। सन् 1982 में पी. यू. सी. एल. (मध्य प्रदेश) की जाँच टीम ने लिखा था,

"यह उल्लेखनीय है कि धनबाद (बिहार) जैसे औद्योगिक क्षेत्रों में जनतांत्रिक संघर्षों को दबाने के लिए हिंसा की राजनीति का उपयोग करना एक आम बात हो गयी है। मध्य प्रदेश में अभी तक हिंसा की इस राजनीति की भूमिका गौण रही है। दल्ली राजहरा में गत दो-तीन वर्षों में निहित स्वार्थों द्वारा हिंसा की राजनीति को अपनाने के स्पष्ट संकेत मिले हैं। यदि ऐसी नीतियों के पीछे काम कर रही समाज-विरोधी शक्तियों के खिलाफ तुरंत कदम नहीं उठाया गया तो निश्चय ही दल्ली राजहरा धनबाद बन जायेगा और छत्तीसगढ़ के उभरते हुए जनतांत्रिक आंदोलन पर एक भयंकर नकारात्मक असर होगा।"

और अगले दस साल तक किसी भी प्रदेश सरकार ने माफिया राजनीति के खिलाफ कोई कदम नहीं उठाये। हालात बिगड़ते रहे।

सन् 1990-92 के दौरान लाल-हरे झंडे के नेतृत्व में जब भिलाई आंदोलन हुआ, तब वहाँ के नवधनाढ्य पाँच उद्योगपतियों ने मजदूरों पर अपने माफिया गैंग बेलगाम छोड़ दिये। खुलेआम मजदूरों पर प्राणघातक हमले हुए, हाथ-पाँव काटे गये, हत्याएँ हुई। पुलिस व प्रशासन

शिक्षा के खातिर ग्यारह स्कूल,
मजदूर मन दल्ली मा बनाय,
ओ स्कूल में लइका मन ह,
पढ़के भइया शिक्षा पाय,
रोग से मुक्ति पाये के खातिर,
शहीद अस्पताल नाम कहलाय,
शहीद के नाम से बने हे गैरेज,
नौजवान मन ट्रेनिंग पाय,
अइसन सीख ला देहे नियोगी,
एकता में सब कुछ बन जाय।

सबो लड़ाई लड़ीस मजदूर,
राजनीति में पहुँचे जाय,
विधानसभा के चुनाव जीत के,
नगर भोपाल के सीट में जाय,
ट्रक भरइया माईन्स के मजदूर,
ठाकुर जनकलाल कहलाय।"

(छमुमो की लोक साहित्य परिषद् द्वारा प्रकाशित 'शंकर गुहा नियोगी ला भइया करथों मेंहा लाल सलाम', फरवरी 1992, से साभार।)

वे नाराज क्यूँ ? / मणिमाला

शराब विरोधी आंदोलन ने समाँ बाँधा, तो शराब के ठेकेदार नाराज हो गये। उन्हें दो मोर्चों पर घाटा हुआ। एक तो आमदनी गयी और दूसरे, मजदूर वास्तव में ठेकेदारों के के चंगुल से मुक्त हुए। अब तक तो उनकी कमाई घूम-फिर कर मालिकों के पास ही ठेकेदारों के जरिये पहुँच जाती थी। तीसरा, सबसे बड़ा घाटा यह हुआ कि मजदूरों को अपनी बेहतरी के बारे में सोचने का, उसके लिए प्रयास करने का समय मिलने लगा। वे सोचने लगे अपने स्वास्थ्य के बारे में, अपने बच्चों की पढ़ाई के बारे में। शराबबंदी आंदोलन की शानदार सफलता के बाद ही वहाँ दो स्कूलों की नींव पड़ी। अपने पैसों से मजदूरों ने ये स्कूल खड़े किये। इन स्कूलों में उनके अपने बच्चे पढ़ते हैं। अब तक वे दूसरों के बच्चों के लिए विद्यालय भवन बनाते थे। जिंदगी में पहली दफा उन्होंने अपने बच्चों के लिए स्कूल बनाया था। नयी पीढ़ी की बुनियाद डाली थी। अपने लिए कुछ रचने के सुख का अनुभव किया था।

स्कूल क्या खड़ा हुआ, मानो व्यवस्था को चुनौती देने के लिए अगली पीढ़ी के गढ़ने का काम शुरू हुआ। शराब के ठेकेदारों को इससे काफी निराशा हुई, उद्योगपतियों को तो हुई ही। अब दिखने लगा था कि यह आंदोलन एक पीढ़ी में सिमट कर रहने वाला नहीं। पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलेगा। दूसरे मजदूर नेताओं को भी अच्छा नहीं लग रहा था। नियोगी ने मजदूर संगठन, मजदूर आंदोलन और मजदूर नेता की परिभाषा बदल दी थी। अन्य मजदूर संगठनों के मजदूर भी अपने बहुआयामी विकास की माँग कर बैठे तो जमे-जमाये मजदूर नेताओं का क्या होगा, यह चिंता उन्हें सताने लगी।

('साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 3 नवम्बर 1991, से उद्धृत अंश साभार।)

दल्ली राजहरा का जन स्वास्थ्य आंदोलन

'मेहनतकशों के स्वास्थ्य के लिए, मेहनतकशों का अपना कार्यक्रम', दल्ली राजहरा के जन स्वास्थ्य आंदोलन की केंद्रीय भावना है। इस स्वास्थ्य आंदोलन के तहत ही शहीद अस्पताल, स्वास्थ्य प्रचार तथा 'स्वास्थ्य के लिए संघर्ष' का काम सन् 1977 में छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ की शुरुआत के साथ ही हुआ।

सन् 1977 में दल्ली राजहरा की लौह अयस्क खदानों में काम करने वाले हजारों ठेका मजदूरों ने एक साथ एटक व इंटक यूनियनें छोड़कर छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ बनाया। इसी वर्ष संघ की जुझारू उपाध्यक्षा कुसुमबाई ने स्थानीय खदान अस्पताल में डाक्टरों की लापरवाही के कारण जान गँवाई और तभी मजदूरों के स्वास्थ्य की सही देखभाल करने के लिए अपना अस्पताल बनाने की सोच मजदूरों के मन में उपजा। यह निर्णय आम ट्रेड यूनियनों के जड़ विचारों और अर्थवाद की जंजीरों को तोड़कर, मजदूरों की जिंदगी के हर क्षेत्र में उत्थान का काम करने के छ. मु. मु. एम. की सोच के साथ पूरी तरह से मेल खाता है।

छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ का नारा है –

'संघर्ष के लिए निर्माण, निर्माण के लिए संघर्ष' और इसी सोच के तहत यूनियन के 17 विभिन्न विभागों में से एक विभाग – स्वास्थ्य – शुरू में ही खोला गया। जन स्वास्थ्य के संघर्ष के तहत ही शहीद अस्पताल का निर्माण हुआ। स्वास्थ्य कार्यक्रम एवं शहीद अस्पताल सहित अन्य सभी निर्माण के कार्यक्रमों का सुधारवादी निर्माण कार्यक्रमों से फर्क यह है कि यहाँ पर हुए सभी निर्माण कार्य किसी-न-किसी बड़े आंदोलन से उपजे हैं और लगातार उनसे जुड़े हुए हैं तथा यूनियन के सम्पूर्ण सोच व निर्माण के साथ संघर्ष करते हुए आगे बढ़ रहे हैं। इन सभी कार्यक्रमों से नये समाज की एक झाँकी आम जनता को मिलती है जो नये समाज की रचना के लिए आंदोलित हो कर, आगे बढ़कर हिस्सा लेती है।

जन स्वास्थ्य आंदोलन के तहत शहीद अस्पताल के कार्यक्रम को अपने आप में एक विशिष्ट प्रयोग कहा जा सकता है। इस प्रयोग की कई विशेषताएं हैं, अनुभव हैं, पर साथ ही साथ कुछ कमजोरियाँ भी हैं। इस प्रयोग के ऊपर एक नजर डालने से हमें स्वास्थ्य कार्यक्रम की हिस्सेदारी पर सोचने का मौका मिलेगा।

जन स्वास्थ्य कमेटी

राजहरा का स्वास्थ्य आंदोलन डाक्टरों और बुद्धिजीवियों की अनुपस्थिति में ही शुरू हुआ, जब अपने स्वास्थ्य और मेहनत से कमाये गये पैसे को शराब द्वारा बर्बाद होने से रोकने के लिए सन् 1978-79 में शराबबंदी आंदोलन शुरू हुआ। उसके बाद लगातार सीढ़ी-दर-सीढ़ी चढ़ते हुए जन स्वास्थ्य आंदोलन आगे बढ़ता गया, जिसके तहत सन् 1981 में आंदोलन की मदद करने आये डाक्टरों सहित सौ से अधिक मजदूर प्रतिनिधियों की स्वास्थ्य कमेटी बनी। स्वास्थ्य प्रचार, यूनियन आफिस और गैरेज से चलाया गया। शहीद डिस्पेंसरी और शहीद अस्पताल के

गये किसी बड़े सामाजिक आंदोलन का एक हिस्सा भी हो सकता है। सिर्फ स्वास्थ्य आंदोलन का अकेले कोई विशेष प्रभाव नहीं होगा।

रहन-सहन, खान-पान और स्वास्थ्य

गरीब देशों की स्वास्थ्य समस्याओं में से सबसे ज्यादा होने वाली एवं खतरनाक एक बीमारी है – टट्टी-उल्टी की बीमारी। कुपोषित बच्चों में टट्टी-उल्टी ज्यादा होती है। मुख्य रूप से पीने के खराब पानी, सड़े-गले या खुले भोजन द्वारा यह बीमारी फैलती है। छोटे-छोटे घरों के अस्वस्थ वातावरण में अधिकांश लोग रहते हैं, उनमें कोई भी छूत की बीमारी महामारी का रूप लें लेती है। शरीर में पानी की कमी हो जाने के कारण रोग जानलेवा हो जाता है, लेकिन लोगों के पास अगर नमक-शक्कर का शरबत बनाने की जानकारी रहे तो, शारीरिक पानी की कमी की रोकथाम व इलाज करना आसान हो जाता है। जिन देशों में टट्टी-उल्टी की बीमारी पर काबू पाया गया है, वहाँ सबके लिए पीने का साफ पानी, रहने को घर, भरपेट भोजन, शिक्षा के बंदोबस्त के जरिये ही यह सम्भव हुआ, यानी आर्थिक-सामाजिक परिवर्तन के जरिये।

कुछ स्वास्थ्य कार्यक्रम सिर्फ दवाइयों से ही टट्टी-उल्टी के इलाज पर जोर देते हैं। कुछ सुधारपंथी स्वास्थ्य कार्यक्रम टट्टी-उल्टी की रोकथाम के लिए पानी उबालकर पीने को बोलते हैं एवं इलाज के लिए शरबत की बात बोलते हैं। ये कार्यक्रम इस बात पर ध्यान नहीं देते कि जिनके पास पर्याप्त भोजन ही नहीं है, वे पानी उबालने के लिए लकड़ी या कोयले का जुगाड़ कैसे करेंगे। इनके स्वास्थ्य प्रचार में पर्याप्त भोजन का महत्व, आवास स्थल का महत्व आदि विषय गौण रह जाते हैं। उन कार्यक्रमों में पीने का साफ पानी उपलब्ध कराये जाने की माँग दब जाती है।

राजहरा के स्वास्थ्य कार्यक्रम में शुरू से ही प्रचार में बीमारी के आर्थिक व सामाजिक कारणों, दवाई की अनुपयोगिता व साफ पानी के महत्व पर जोर दिया गया। पीने के पानी की माँग को लेकर शहीद अस्पताल के स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं ने जोरदार प्रचार किया। श्रमिक संघ के आंदोलन के कारण प्रशासन ट्यूबवेल लगाने को मजबूर हुआ। असल में हमने टट्टी-उल्टी पर जो काबू पाया उसका मूल कारण लगातार पंद्रह सालों तक सी. एम. एस. एस. के संघर्ष के जरिये राजहरा के मेहनतकशों का आर्थिक, शैक्षणिक व सांस्कृतिक विकास होना है। सी. एम. एस. एस व छमुमो ने पीने के पानी की जरूरत के बारे में जागरूक जनता को संगठित किया व संघर्ष छेड़ा। इस संघर्ष के कारण सन् 1989-90 में प्रशासन ने राजहरा व आस-पास के गाँवों में 179 ट्यूबवेल लगाये।

वैज्ञानिक इलाज, जन शिक्षण और संघर्ष

राजहरा के स्वास्थ्य कार्यक्रम के तीन मुख्य पहलू हैं –

क) यह सही वैज्ञानिक इलाज पहुँचाने का एक कार्यक्रम है।
ख) यह जन शिक्षण का एक माध्यम है।
ग) यह संघर्ष का एक हथियार भी है।

क) विकास के हर कदम पर शहीद अस्पताल सही इलाज की लड़ाई लड़ता आया है। इस इलाके के लोगों में सुई के प्रति अंधविश्वास काफी गहरा था। शहीद अस्पताल में फालतू

ने अपने अस्पताल की बिस्तर संख्या 100 से ज्यादा कर दी।

स्वास्थ्य आंदोलन अंधविश्वास व कुसंस्कारों का विरोध करके सामंतवादी मूल्यबोध के खिलाफ संघर्ष में शामिल हुआ है। बहुराष्ट्रीय दवा कम्पनियों के शोषण का विरोध करके स्वास्थ्य आंदोलन ने साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष में योगदान दिया है।

स्वास्थ्य आंदोलन की समस्यायें

शुरू में लोगों तक स्वास्थ्य की जानकारी पहुँचाने में भाषा व प्रस्तुतीकरण की समस्या थी। प्रचलित स्वास्थ्य शिक्षण सामग्रियों से हमें ज्यादा मदद नहीं मिली। असल में स्वास्थ्य शिक्षण की सामग्री जो लोग तैयार करते हैं, वे जनता के हिताकांक्षी होने के बावजूद बड़े-बड़े शहरों में रहते हैं, वास्तव में आम जनता के साथ उनका सम्बंध कम रहता है। इसलिए जनता को समझाने लायक भाषा और प्रस्तुतीकरण के बारे में उनकी धारणाऐं अधूरी रहती हैं। हमारा का स्वास्थ्य कार्यक्रम जनता के निकट होने के कारण कुछ हद तक इस समस्या को सुलझा पाया है।

शहीद अस्पताल मजदूरों का अस्पताल है। अस्पताल संचालन की मुख्य जिम्मेदारी मजदूरों की ही है। मजदूर जब संचालन की जिम्मेदारी संभालते हैं तो कुछ विशेष समस्याएं कभी-कभी पैदा होती हैं। खदान में प्रबंधक लोग मजदूरों के साथ जैसा व्यवहार करते हैं, अस्पताल में 'मजदूर-प्रबंधक' भी कभी-कभी चिकित्साकर्मियों के साथ वैसा ही व्यवहार करने लगते हैं। हमारा तजुर्बा यह रहा है कि लगातार राजनैतिक व वैचारिक संघर्ष से ही इस गलत प्रवृत्ति का मुकाबला किया जा सकता है।

अस्पताल में कार्यरत सभी चिकित्साकर्मी (अस्पताल के [illegible] है) मजदूर-किसान परिवारों से आये हुए हैं। इनकी नियुक्ति के समय [illegible] के प्रति उनके लगाव पर विशेष ध्यान दिया जाता है। लेकिन इनमें से कुछ [illegible] कभी-कभी अस्पताल के काम को एक अन्य नौकरी जैसा देखने लगते हैं। स्वास्थ्य राजनीति व साधारण राजनीति को लेकर चर्चा, विशेष घटनाओं को लेकर विश्लेषण व चर्चा एवं संगठन के अन्य कार्यक्रमों में चिकित्साकर्मियों को जोड़ने जैसी प्रक्रियाओं के जरिये इस प्रवृत्ति का मुकाबला करने की कोशिश हो रही है।

एक अन्य बड़ी समस्या डाक्टरों-बुद्धिजीवियों की कमी की है। कामरेड शंकर गुहा नियोगी की शहादत के बाद बाहर से आये डाक्टर-बुद्धिजीवी कुछ हद तक इस कमी को पूरा कर रहे हैं। लेकिन आज तक छत्तीसगढ़, स्वास्थ्य आंदोलन को डाक्टर-बुद्धिजीवी नहीं दे सका है।

स्वास्थ्य आंदोलन के क्रांतिकारी विकास से ही इन उपरोक्त समस्याओं का हल हो पायेगा, ऐसी हमारी उम्मीद है।

जहाँ हमें विशेष प्रयास करना है

कुछ मुद्दे ऐसे हैं जिस पर स्वास्थ्य आंदोलन अब तक कुछ नहीं कर सका है।

क) छत्तीसगढ़ की देशी इलाज पद्धति के साथ आधुनिक चिकित्सा पद्धति को जोड़ने के बारे में कुछ काम नहीं हुआ है।

ख) आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के साथ आयुर्वेद, होम्योपैथी व एक्यूपंक्चर को जोड़ने के बारे में भी कोई ठोस काम नहीं हो सका है।

ग) औद्योगिक स्वास्थ्य को लेकर भी कोई खास काम नहीं हुआ है।

के गठन से पहले सभी खदान मजदूरों के अमानवीय शोषण के साथ महिलाओं पर ठेकेदारों व उनके गुंडा तत्वों द्वारा भयानक शारीरिक व अन्य लिंग-आधारित शोषण जारी था, यहाँ तक कि गर्भवती महिलाओं को रात-बेरात काम करने के लिए घर से घसीटकर ले जाने की घटनाएँ आम थीं। मजदूरों में इस सबके खिलाफ भारी रोष था। ऐसे माहौल में मार्च 1977 में संघर्ष की कोख से लाल-हरा परिवार के पहले संगठन सी. एम. एस. एस. का जन्म हुआ।

उस समय मैनेजमेंट द्वारा विभागीयकृत और ठेका मजदूरों के बीच किये जा रहे भेदभाव को लेकर चल रहे मजदूरों के स्वतःस्फूर्त संघर्ष में महिलाओं ने बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। वे अपने छोटे-छोटे बच्चों के साथ इक्कीस दिन तक लाल मैदान में दिनभर डटी रहीं; जब बातचीत के लिए पहली बार भिलाई स्टील प्लांट द्वारा इन हड़ताली मजदूरों का एक प्रतिनिधिमंडल बुलाया गया तब उसमें दो महिलाओं को देखकर मैनेजमेंट व ठेकेदार हतप्रभ हो गये क्योंकि इसके पहले महिलाएँ यूनियन दफ्तरों में पैर रखने तक से डरती थीं। आगे चलकर जून 1977 के गोलीकांड में महिला अगुआ अनुसुइया बाई शहीद हो गयीं और छत्तीसगढ़ की महिलाओं के लिए अमर मिसाल बन गयीं।

इस तरह शुरूआत से ही लाल-हरा परिवार में महिलाओं के समाज और उत्पादन प्रक्रिया में सम्मान व समता के स्थान तथा संगठन व संघर्ष में अगुआ भूमिका की मजबूत परम्परा की नींव रखी गयी, जो संगठन के साथ-साथ फैलती गयी। इसी परम्परा को आगे बढ़ाने और विकसित करने के लिए सन् 1979 में छमुमो के तहत 'महिला मुक्ति मोर्चा' का गठन हुआ। ऐसा माना गया कि इस मंच के गठन से महिलाओं के नेतृत्व को और अधिक उभारने में मदद मिलेगी और कई प्रकार की पारिवारिक व सामाजिक समस्याओं से भी जूझा जा सकेगा जिन्हें महिलाएँ यूनियन दफ्तर में लाती थीं।

शोषण हमेशा गुंडा राज के सहारे चलता है जिसकी विशेष शिकार महिलाएँ होती हैं और इसीलिए महिला मुक्ति मोर्चा हर प्रकार की गुंडागर्दी के खिलाफ लड़ता रहा है। सन् 1980 में जब सी. आई. एस. एफ. के जवानों ने दल्ली राजहरा में एक आदिवासी महिला के साथ बलात्कार की कोशिश की, तब महिला मुक्ति मोर्चा के नेतृत्व में महिलाओं व पुरुषों ने मिलकर तनी हुई संगीनों तक की परवाह न करते हुए जोरदार विरोध किया जिसमें एक लकड़हारा साथी आशाराम शहीद हो गये। सन् 1984 में राजनांदगाँव में बी. एन. सी. मिल्स के आंदोलन के दौरान न केवल मजदूर महिलाओं या मजदूरों की पत्नियों व बहनों ने, बल्कि तुलसीपुर, मोतीपुर आदि गरीब बस्तियों की अन्य महिलाओं ने भी भागीदारी की। उन्होंने गुंडागर्दी का डटकर विरोध किया और अपनी बस्तियों में शांति व सुरक्षा स्थापित की। सन् 1992 में भिलाई स्टील प्लांट की एक ठेका मजदूर महिला को सी. आई. एस. एफ. जवानों द्वारा बेइज्जत किए जाने पर मोर्चे ने कारखाने के खुर्सीपार गेट पर विशाल विरोध सभा की और दोषी जवानों को सजा दिलवायी।

भिलाई स्टील प्लांट के तकनीकशाह मशीन को ही तकनालाजी समझते हैं, मेहनतकश मजदूर से तो मानो वे नफरत करते हों। वे देश के हितों को ताक पर रखकर भी विदेशी आर्थिक सहयोग से विदेशी तकनालाजी पर निर्भर अंधाधुंध मशीनीकरण पर उतारू हो गये हैं। इस देशद्रोही 'आधुनिकीकरण' को लागू करने के लिए कई हथकंडे अपनाये जाते रहे हैं जिनकी शिकार विशेष रूप से महिलाएँ रही हैं। महिलाओं के प्रति समाज में व्याप्त हीन भावना की जानकारी का चतुराई से उपयोग करके उन्हें 'अकुशल' व 'अशिक्षित' करार देकर उनकी छँटनी करने

समझाने-बुझाने से लेकर सजा देने तक के विभिन्न तरीकों से हजारों पुरुष साथियों की शराब की लत छुड़वायी। महिला मुक्ति मोर्चा का यह भी प्रयास रहा है कि मजदूरों के आपसी विवादों का – चाहे वे पति-पत्नी के हों, भाई-भाई के हों या अड़ोसी-पड़ोसी के हों – मुखिया साथियों (पुरुष व महिला दोनों) की मदद से न्याय के पक्ष में समाधान हो जाये और उन्हें कोर्ट-कचहरी का विद्वेषपूर्ण व खर्चीला रास्ता न अपनाना पड़े।

लाल-हरा आंदोलन के दौरान जब-जब कर्फ्यु और धारा 144 के जरिये आतंक का माहौल बनाया गया है, चाहे वह दल्ली राजहरा में हो, राजानांदगाँव या भिलाई में हो, तब-तब महिलाओं ने आगे बढ़कर अपने हिम्मती जुलूसों से उस आतंक को चीरा है। जब कभी हमलों से साथियों के हौसले कुछ चुकने लगे, तो महिलाओं ने मोहल्ले-मोहल्ले, घर-घर जाकर सबको सांत्वना दी है, ढाढस बंधाया है और संघर्ष की नयी लहर पैदा करने में अहम भूमिका अदा की है। 25 जून 1991 को भिलाई औद्योगिक क्षेत्र में पुलिस द्वारा बर्बर लाठीचार्ज के बाद जब सैकड़ों साथी जेल भेज दिये गये, तब महिलाओं के जेली दस्ते ने जोशीले नारों और गीतों से पुरुष साथियों की बैरकों तक अपनी आवाज पहुँचाकर सबका मनोबल बनाये रखा। संगठन के मूल्यों – जुझारूपन के साथ सुदृढ़ अनुशासन व संयम बनाकर रखना और सीमित स्वार्थ के विपरीत मिल-बाँटकर रहना – को हजारों महिलाओं ने न सिर्फ आत्मसात किया है, बल्कि वे इनकी सक्रिय वाहक भी रही हैं।

लाल-हरा आंदोलन में महिलाओं का नेतृत्व शुरू से ही कायम रहा है। सन् 1977 के दल्ली राजहरा गोलीकांड की शहीद अनुसुइया बाई से लेकर सन् 1984 के भयानक दमन का सामना करने वाली राजनांदगाँव की भागाबाई, नये छत्तीसगढ़ के सपनों के गीत गाने वाली ए. सी. सी. फैक्ट्री की मजदूर गायिका कौशल्या बाई या फिर फुलबासन बाई जो 1 जुलाई 1992 को भिलाई गोलीकांड से कुछ ही मिनट पूर्व रेल पटरी पर बैठे हुए अपने छोटे बच्चों को पुलिसिया पथराव से बचाते हुए समझा रही थी कि 'हम यहाँ नियोगी भैया की तरह शहीद होने आये हैं' – इन सब को याद करके लगता है कि सचमुच,

"यह छत्तीसगढ़ की नारी है, फूल नहीं चिंगारी है।"

□

(जनवरी 1993)

स्कूली शिक्षा और जन शिक्षण

इलीना सेन

दल्ली राजहरा के खदान मजदूरों में साक्षरता व औपचारिक शिक्षा का स्तर अभी भी नीचे है। वहाँ मजदूरों में व्यापक साक्षरता व शिक्षा का काम शासन द्वारा कभी नहीं चलाया गया। किंतु सी. एम. एस. एस. की पहल पर औपचारिक शिक्षा तथा जन शिक्षण के कई प्रयोग हुए हैं।

और निर्माण ' के इतिहास का प्रभाव है, जो इनके सामाजीकरण व राजनीतिकरण की एक नयी मिसाल दर्शाता है।

व्यापक अर्थों में लोक शिक्षण के प्रयोग

स्कूली शिक्षा के बाहर भी संगठन के शैक्षणिक प्रयास के कई पहलू रहे हैं। यह भी सही है कि संगठन के कार्यकलाप के कई आयामों जैसे स्वास्थ्य, नशाबंदी आदि के अपने-अपने शैक्षणिक पक्ष रहे हैं। इन शैक्षणिक प्रयासों में समय-समय पर लिपिबद्ध, सांस्कृतिक और ' आडियो-विज़ुअल ' तकनीकी माध्यमों को उपयोग में लाया गया है।

1. लिपिबद्ध माध्यमों पर आधारित प्रयास

यूनियन द्वारा समय-समय पर पर्चा, पुस्तिका आदि निकालकर सदस्यों को तात्कालिक आंदोलन व राजनीति सम्बंधी सही जानकारी देने का प्रयास किया गया। आंदोलन के हर चरण पर पर्चे निकले, तीव्र संघर्ष के मौकों पर जुझारू पर्चे निकले और रचनात्मक पहलुओं पर प्रकाश डालते हुए ' स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करो ' जैसे पर्चे (पृ. 422) भी निकाले गये। पुस्तिकाओं की श्रृंखला में पहला प्रयास शायद सन् 1978 में छपी ' किरंदुल के अग्निगर्भ से ' नामक पुस्तिका का था (देखिये पृ. 100-115)। बैलाडीला गोलीकांड और वहाँ मजदूर आंदोलन पर दमन की जानकारी देने और मशीनीकरण के मजदूर-विरोधी पक्ष पर चेतना जगाने व उसका विकल्प पेश करने में इस पुस्तिका की निर्णायक भूमिका रही है। आगे के दिनों में कई और पुस्तिकाएँ आयीं। शहीद अस्पताल के स्थापना दिवस 3 जून 1983 को ' शहीद अस्पताल — स्वास्थ्य के रास्ते पर नया कदम ' शीर्षक की पुस्तिका निकाली गयी और यूनियन के दशाब्दी के अवसर पर मार्च 1987 में ' लाल-हरे झंडे के आंदोलन में महिलाओं की हिस्सेदारी ' और ' इतिहास की धारा ' जैसी पुस्तिकाएँ भी छपीं। इन पुस्तिकाओं की कीमत एक, दो या कभी तीन रुपये के आस-पास ही रही और इनका वितरण यूनियन के बड़े कार्यक्रमों और आम सभाओं में ' स्टाल ' (दुकान) लगाकर होता रहा। मजदूरों में इनकी बिक्री अच्छी रही और अनपढ़ मजदूर भी इन्हें लेते हुए कहते थे, " त का होइस जी, लइका मन हमला पढ़के सुनही। " इन्हीं प्रयासों के फलस्वरूप सन् 1990 में दल्ली राजहरा में ' लोक साहित्य परिषद् ' का गठन हुआ और इस व्यवस्थित ढाँचे में प्रकाशन की संख्या व नियमितता में वृद्धि हुई।

शहीद अस्पताल की ओर से स्वास्थ्य शिक्षण सम्बंधी पुस्तिकाओं को छापने व बाँटने का एक अलग सिलसिला रहा है। टट्टी-उल्टी, रक्तदान, बुखार आदि के बारे में सही व वैज्ञानिक जानकारी इन पुस्तिकाओं में सरल ढंग से पेश की गयी है, और यह भी ध्यान में रखा गया है कि लोग स्वस्थ रहने के लिए इलाज का ज्यादा-से-ज्यादा हिस्सा अपने हाथ में ले सकें।

सन् 1984 में अस्पताल व यूनियन आफिस की दीवारों पर दो दीवार पत्रिकाएँ देखने को मिलीं — अस्पताल में ' स्वास्थ्य-संगवारी ' और यूनियन दफ्तर में ' संघर्ष-संगवारी '। ' संघर्ष-संगवारी ' भिलाई स्टील प्लांट के मैनेजिंग डायरेक्टर श्री संगमेश्वरन की तानाशाही के खिलाफ यूनियन के सफल संघर्ष तक ही चली थी, पर ' स्वास्थ्य-संगवारी ' के आज तक 30 अंक निकल चुके हैं और स्वास्थ्य की जानकारी जन-जन तक फैलाने में इसकी एक महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

आगे चलकर, भिलाई आंदोलन के दिनों में गीत एक बहुत ही सशक्त राजनैतिक शिक्षण माध्यम के रूप में उभरे। भिलाई आंदोलन ने कई नये गीतकारों को खोजा, उभारा। नियोगीजी ने एक बार ऐसे जन कवियों के लिए दल्ली में रहकर प्रशिक्षण लेने की भी व्यवस्था की थी। कलादास, समारू, बाँगड़े, कौशल्या, भगवन्ती ये सब आज भिलाई के जन गायक हैं जो इसी प्रक्रिया से निकले हैं। गोलीकांड के पूर्व भिलाई पड़ाव में गायी हुई भगवन्ती बाई की तर्ज –

> " तोला थोरकु दया नई लगे पटवा,
> हमरे नाने नाने लइका बरे . . ."

– ऐतिहासिक साबित हुई।

फिल्म – दल्ली राजहरा यूनियन में चूँकि लगभग दो तिहाई सदस्य निरक्षर थे, इसलिए शुरू से ही देखने-सुनने की प्रक्रियाओं पर आधारित माध्यमों पर जोर दिया गया। सन् 1978-79 में यूनियन ने 16 एम. एम. फिल्म प्रोजेक्टर खरीदा और सन् 1978 के बाद कई बार यूनियन आफिस के सामने फिल्में प्रदर्शित की गयीं। लेकिन 16 एम. एम. की फिल्मों की प्राप्ति व प्रासंगिकता एक समस्या थी। सन् 1983-84 में यूनियन ने वी. सी. आर. व रंगीन टी. वी. खरीदा और धीरे-धीरे सामाजिक व राजनैतिक संदर्भ रखने वाली फिल्मों का अच्छा संकलन यूनियन के पास तैयार हो गया। कई शुभचिंतकों ने अपनी व दूसरों की फिल्मों के कैसेट भेंट किये। ' बम्बई हमारा शहर ' (आनन्द पटवर्धन की फिल्म) को हजारों मंत्रमुग्ध दर्शकों ने कई बार देखा है। यह भी प्रचलन हुआ कि साप्ताहिक मुखिया मीटिंग के पश्चात् मुखिया साथी मिलकर एक अच्छी सी फिल्म देखें और उस पर चर्चा करते हुए घर लौटें।

प्रदर्शनी – सबसे पहली प्रदर्शनी सन् 1980 में बनी। बालोद में आयोजित वीर नारायण सिंह दिवस पर दिखायी गयी इस प्रदर्शनी में देश के अनेक शहीदों के चित्र रखे गये थे। अगली प्रदर्शनी सन् 1982 में बनी। यह प्रदर्शनी चार श्रृंखलाओं में बनी थी – स्वास्थ्य, मशीनीकरण, शराबबंदी व महिला। स्वास्थ्य श्रृंखला में ' एक ही दवा की गोली सस्ती, सूजी महँगी ' जैसे पोस्टर थे, मशीनीकरण की श्रृंखला में एक राक्षस द्वारा बैलाडीला में मचाये गये तहलके का चित्रण था, और महिला श्रृंखला में महिला साथी द्वारा लड़ाई में बराबरी की हिस्सेदारी को उजागर करती हुई हैदराबाद की कवियित्री रत्नमाला की कविता थी –

> " किसी वीर की माँ या पत्नी भर नहीं,
> मैं हूँ लड़ाई में एक सिपाही . . . . । "

ऐसी प्रदर्शनियाँ कई बार 19 दिसम्बर शहीद दिवस या 3 जून शपथ दिवस के अवसर पर दल्ली, भिलाई, बिलासपुर में पंडालों में लगायी गयीं, जहाँ हजारों शहरी व ग्रामीण लोगों ने इन्हें देखा और यूनियन कार्यकर्ताओं के साथ इन पर चर्चाएँ कीं। शहीद मेले के अवसर पर आजादी के पूर्व के शहीदों की फोटुओं सहित ' शहीद मेला ' भी एक उल्लेखनीय प्रयास था।

मितान की आवाज – सन् 1985-86 का एक अनोखा और सफल प्रयोग था – ' मितान की आवाज ' नामक आडियो कैसेट की श्रृंखला। सन् 1985 में श्रमिक सहकारी समिति को भिलाई स्टील प्लांट के मैनेजिंग डायरेक्टर श्री संगमेश्वरन के इशारे पर कोकान की पहाड़ी में लीज में खदान न देकर, महामाया (दल्ली राजहरा से 18 कि. मी. दूर) में दी गयी। इस लीज को स्वीकारने

. . . . और फूटा अंकुर नयी संस्कृति का

श्याम बोहरे ● अनिल सद्‌गोपाल

सन् 1977 में सी. एम. एस. एस. के गठन के तुरंत बाद से ही यह महसूस किया गया कि मजदूर आंदोलन को सशक्त बनाने के लिए छत्तीसगढ़ी संस्कृति की महत्वपूर्ण भूमिका है। गीत, संगीत, नाटक एवं अन्य सांस्कृतिक विधाओं के माध्यम से मजदूर आंदोलन की आवाज और उसका संदेश जनता की विभिन्न जमातों तक पहुँचाने के उद्देश्य से यूनियन ने आरम्भ से ही सांस्कृतिक कर्म को एक सुनियोजित एवं व्यवस्थित रूप दिया। सन् 1983 में इसके लिए 'नवाँ अंजोर' (नयी रोशनी) नाम का एक सांस्कृतिक दल गठित किया गया। इस दल ने आंदोलन के पूरे कार्यक्षेत्र में, गाँव-गाँव, बस्ती-बस्ती घूमकर लोक शैली में आंदोलन की कहानी जनता को सुनायी। सन् 1857 के क्रांतिकारी शहीद वीर नारायण सिंह को इतिहास के गर्भ से निकालकर जन मानस के समक्ष रखने का जो सिलसिलेवार कार्यक्रम यूनियन ने उठाया वह इसी आंदोलन का हिस्सा है। दरअसल, 19 दिसम्बर 1979 से शहीद वीर नारायण सिंह दिवस हर साल मनाने की परम्परा शुरू करके यूनियन ने पूरे आंदोलन को छत्तीसगढ़ की अस्मिता के प्रश्न से जोड़ दिया और इस प्रकार आंदोलन को एक अलग पहचान दी। जब यह सांस्कृतिक पक्ष छत्तीसगढ़ के असमान विकास, पिछड़ेपन और शोषण के परिप्रेक्ष्य को उभारता है तो आंदोलन को न केवल गति मिलती है, वरन् एक सार्थक दिशा भी मिलती है। इसी विचार को मजदूरों और किसानों के बीच फैलाने के लिए 'नवाँ अंजोर' दल ने छत्तीसगढ़ी में 'शहीद वीर नारायण सिंह' नाटक लिखा और इसका मंचन पूरे इलाके में किया। 'नवाँ अंजोर' दल के मजदूर साथी श्री फागूराम यादव ने शुरू से ही अपने गीतों और कविताओं के जरिये छत्तीसगढ़ में एक जन कवि के रूप में ख्याति पायी है। नियोगी की हत्या के बाद फागूरामजी ने पूरी संवेदना के साथ अपने वरिष्ठ कामरेड की याद में बुंदेलखंड के आल्हा की शैली में छत्तीसगढ़ी में आल्हा रचा। इस आल्हा के कुछ अंश इस पुस्तक में यथोचित स्थानों पर दिये गये हैं।

विगत दो वर्षों में जब भिलाई आंदोलन ने जोर पकड़ा तब दल्ली राजहरा के ही समान वहाँ के मजदूरों के बीच में से शक्ति के साथ सांस्कृतिक कर्म की धारा बह निकली। अनेक मजदूर साथियों, पुरुषों और महिलाओं दोनों ने गीतों और कविताओं का अम्बार लगा दिया। दल्ली राजहरा से यहाँ एक फर्क जरूर था। चूँकि भिलाई में मजदूर देश के विभिन्न अंचलों से आये हुए हैं, अतः उनकी रचनाएँ छत्तीसगढ़ी के अलावा अलग-अलग भाषाओं में भी (विशेषकर भोजपुरी में) हैं। नियोगी की हत्या के बाद भिलाई, उरला, टेडेसरा और कुम्हारी के औद्योगिक क्षेत्रों और आस-पास के गाँवों में सैकड़ों स्थलों पर स्वतःस्फूर्त धरने और अनशन आयोजित हुए। वहाँ पर न केवल मजदूरों ने वरन् उनके साथ हमदर्दी रखने वाले आम ग्रामवासियों ने भी अनेकों गीतों और कविताओं की रचना करके आंदोलन के साथ सांस्कृतिक कर्म के द्वंद्वात्मक रिश्ते को परिभाषित किया।

सांस्कृतिक काम करने वाले कार्यकर्ताओं को बटोर लिया है तथा हर साल सांस्कृतिक सम्मेलन चालू कर दिये हैं। इससे हमने समझा कि ' नवाँ अंजोर ' बनने के बाद बी. एस. पी. मैनेजमेंट भी यह महसूस कर रहा है कि आने वाले समय में सांस्कृतिक कार्यक्रम क्रांतिकारी रूप धारण करके उन पर धावा भी बोल सकता है। इसलिए उन्होंने अभी से ही तमाम कलाकारों को बटोरकर अपने पास कर लिया है व सांस्कृतिक सम्मेलन करने लगे हैं। आज हम महसूस करते हैं कि सांस्कृतिक कार्यक्रम का प्रचार गीत व नाटकों के माध्यम से बढ़ रहा है।

❑

जन कवि फागूराम यादव के गीतों के कुछ अंश

1. स्वास्थ्य बर गा संघर्ष करबो

चल संगवारी रे मितान,
स्वास्थ्य बर गा संघर्ष करबो,
ये जिनगी के करबो गा सुधार,
हम गा बीमारी मा काबर मरबो।

ये बीमारी दुश्मन ला दुरिहा हमन टारबो,
कचरा अऊ गंदगी ला बाहिर मा निकारबो।
गाँव के गली अऊ खोर सुघर सफाई करबो।
ये जिनगी के करबो गा सुधार . . . ।

साफ-सुथरा रबो संगी गाँव हमर चमकही,
बुढ़वा मनके दिल मा घलो
जवानी हा भर जाही,
जवानी के सूर्य तेज समाज मा बिखर जाही।
गुलाब असन खिलही लइका मन,
सुंदर फूल असन देखबो
ये जिनगी के करबो गा सुधार . . . ।

(इस गीत में एक छंद और है।)

2. शराबी भइया रे . . .

शराबी भइया रे, झन पीबे बाटल के शराब ला – 2 ।
कर देथे मति ला खराब गा।
शराबी भैया रे . . . ।
दारू के पहली खुराक मा संगी, नशा मा तेहा झुमत रथस,
दूसरा खुराक मा सुवा बरोबर, ज्ञान के बात बतावत रथस,
तीसरा खुराक मा कुकुर बरोबर, गली गली मा भूकत रथस,
चौथा खुराक मा घोड़ा बरोबर, एड़ी मा एड़ीयावत रथस,
चार झन मन्दू देखिन तोला, तीर मा गा तोर आवन लगीन,
माते हस तै दारू ला पीके, हमुला पियाना कहन लगीन,
दू ठन बाटल फेर ते मँगाये, संग मा गा तोर पीयन लगीन,
मस्ती मा सबो झन झुम के संगी, अऊ लान अऊ लान कहन लगीन,
फेर बाटल के उपर बाटल था आगे, कुकरी घलो तराने,
खीसा हा होगे जुच्छा संगी, पइसा सबो सिरागे।
शराबी भैया रे . . . ।

(इस गीत में चार छंद और हैं।)

भिलाई आंदोलन से उपजे कुछ गीत

नारी कहेली नर से परदा हटाव घर से

(भोजपुरी गीत)

सुनी-सुनी मजदूर के बेअनवाँ,
नयनवाँ तरसे।
मजदूर किसान भाई हम सब भाई-भाई,
मिली-जुली जाइले रन के मैदनवाँ,
नयनवाँ तरसे।
नारी कहेली नर से परदा हटाव घर से,
हमहूँ चलब रन के मैदनवाँ,
नयनवाँ तरसे।
जइसे दुर्गावती रहली,
अंग्रेजवा से लड़त रहली,
ओइसे हमहूँ चलब रन के मैदनवाँ,
नयनवाँ तरसे।
लड़िका भुखाइल गईले,
शासन बिकाई गईले,
नाहीं सुने मजदूर के बेअनवाँ,
नयनवाँ तरसे।
कलयुग में काली बनबे,
रनवा में तेगा धरबे,
कटबे हम पापिन के गरदनवाँ,
नयनवाँ तरसे।
बालक कहेले पापा झंडा बनाव,
हम त चलब तोहरे संगवा,
नयनवाँ तरसे।
कहे 'रामलखन' भाई जिला वैशाली,
भाई लिखेला मजदूर के बेअनवाँ,
नयनवाँ तरसे।

– रामलखन

सिम्पलेक्स, टेडेसरा, में कार्यरत ठेका मजदूर

(छमुमो की लोक साहित्य परिषद् द्वारा प्रकाशित 'संघर्ष की पुकार' से साभार।)

कैइसे कानून बनायेस सरकार बाबू . . .

(छत्तीसगढ़ी गीत)

कैइसे कानून बनायेस सरकार बाबू,
कैइसे कानून बनाये जी।
एगा सरकार बाबू,
कैइसे कानून बनायेस जी।

काबर कलम राखेहस बाबू,
काबर राखे दवाद जी,
काबर राखे कापी हो बाबू,
काबर कुर्सी में बैठेस जी ?
कानून कायदा के नइहे ठिकाना,
मजदूर के ऊपर शोषण बरसाना,
सरकार बाबू, कैइसे कानून बनायेस जी,
एगा सरकार बाबू गा,
कैइसे कानून बनायेस जी।

आठ घंटा ले हमन कमाथन बाबू,
खून पसीना बोहाथन जी,
आगी पानी ला कमाके जी ला उबारथन बाबू,
तबले लइका हमर भूख मरथे जी।
मुक्ति के आवाज मजदूर उठाथे तब
ये पुलिस हा जेल में बेड़ दये।
सरकार बाबू, कैइसे-कैइसे कानून

का ब्यौरा था। इसमें लिखा था कि खदानों में आठ हजार लोग कार्यरत हैं। उद्योगपतियों की भावी योजनाओं के बारे में बताया गया था कि वे नयी-नयी मशीनें लाकर मजदूरों की छँटनी करना चाहते हैं। वे यह भी बताते हैं कि बारह सालों में तीन दफा इस तरह के प्रयास किये जा चुके हैं, जो असफल रहे। वे कवि श्याम बहादुर 'नम्र' की कविता से उद्धृत करते हुए लिखते हैं –

"वे आदमी नहीं मशीन चाहते हैं, या आदमी से मशीन होने का यकीन चाहते हैं।"

इसी पर्चे में ब्रेख्त की एक कविता भी उद्धृत है –

कप्तान !
माना कि
तुम्हारा टैंक बहुत ताकतवर है,
वह सैकड़ों आदमियों को कुचल सकता है,
और घने, हरे-भरे जंगलों को जला सकता है,
पर उसमें एक ही कमी है –
उसे एक ड्राइवर चाहिए।
कप्तान !
माना कि
तुम्हारा बॉम्बर जहाज बहुत बलशाली है,
उसकी चाल तूफान को भी मात करती है,
वह हाथी के बराबर वजन उठा सकता है,
पर उसमें भी एक कमजोरी है –
उसे एक मिस्त्री की जरूरत है।
कप्तान !
आदमी बहुत काम की चीज है ;
वह उड़ सकता है,
और बंदूक से गोली भी चला सकता है,
पर उसमें एक ही गलती है –
वह सोचता भी है !

इसी तरह के एक अन्य पर्चे में भिलाई इस्पात संयंत्र के मजदूरों का साथ देने के लिए छमुमो का आह्वान करते हुए वे सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की एक कविता उद्धृत करते हैं –

यदि तुम्हारे घर में आग लगी हो,
तो क्या तुम दूसरे कमरे में सो सकते हो ?
यदि तुम्हारे घर के
एक कमरे में लाश पड़ी हो,
तो क्या तुम
दूसरे कमरे में गा सकते हो ?
यदि तुम्हारे घर के एक कमरे में
लाशें सड़ रही हों,
तो क्या तुम
दूसरे कमरे में प्रार्थना कर सकते हो ?
यदि हाँ,
तो मुझे तुमसे कुछ नहीं कहना है।

न्याय पर आधारित छत्तीसगढ़ का सपना साकार करते पर्चे

नियोगी ने अपने पर्चों में कई बार कहा है कि छोटी-छोटी नदियाँ मिलकर महानदी और फिर सागर बन जाती हैं। इसी तरह छोटे-छोटे संगठन मिलकर बड़े ताकतवर संगठन बन जाते हैं। छोटे-छोटे संगठनों से इंकार नहीं था उन्हें। हाँ, 'ईगो' यानी अहम् के आधार पर संगठनों के बिखरने से इंकार था। उनकी कल्पना में छोटे-छोटे राज्य थे। स्वावलम्बी, अपने पैरों पर खड़े, अपनी जरूरतें खुद पूरी करते एक ताकतवर सूत्र में बंधकर मजबूत राष्ट्र की रचना करते हुए राज्य। ऐसे ही छोटे-छोटे राज्यों में उनकी कल्पना का एक राज्य था – छत्तीसगढ़। वे पर्चों में बताते हैं कि आम जन के सपनों का छत्तीसगढ़ कैसा होगा ? इसके लिए उन्होंने छत्तीसगढ़ी में यह कविता रच डाली –

है . . . . आदि (देखिये पृ. 417)।

हर समाज की अपनी एक कहानी होती है। उसमें उत्सर्ग भी होता है। वही उत्सर्ग समस्याओं से जूझ रही पीढ़ी को अपने युग की समस्याओं से लड़ने की प्रेरणा भी देता है और शोषकों से टकराने की हिम्मत भी। छत्तीसगढ़ ने भी अंग्रेजों के खिलाफ देश की जनता की खातिर कुर्बानियाँ दी हैं। लेकिन उस इतिहास की जानकारी काफी कम लोगों को थी। नियोगी ने पर्चों और पोस्टरों के माध्यम से वीर नारायण सिंह के बलिदान के बारे में जानकारी दी और ' शहीद दिवस ' मनाना शुरू किया।

व्यापक दृष्टिकोण

कई सवाल ऐसे हैं, जिन पर बड़े-बड़े राज्यव्यापी संगठन भी या तो कोई दृष्टिकोण नहीं रखते या रखते हैं तो उसे जाहिर करना जरूरी नहीं समझते। कई कम्युनिस्ट संगठनों और ट्रेड यूनियनों ने तो महिलाओं के सवाल पर कभी खुली दृष्टि नहीं रखी। कभी उनकी समस्याओं को मुख्य धारा की समस्याएँ नहीं माना। छमुमो की दृष्टि अलग किस्म की थी। कोई कार्यक्रम हो, कोई पर्चा या पोस्टर हो, औरतें छूटती नहीं थीं। पोस्टर चाहे खेत मजदूरों की समस्याओं से सम्बंधित हो, चाहे कारखाने के कामगारों से, महिलाएँ जरूर रहती हैं और वे आगे रहती हैं, मुख्य धारा में रहती हैं। पर्चों में वे आयोजकों के रूप में शामिल रही हैं। पोस्टरों में उनकी समस्याओं को प्रधानता मिली है। दरअसल, नियोगी ने महिलाओं को समाज से अलग-थलग नहीं माना, उनकी समस्याओं को पूरे समाज की समस्याएँ माना। इसीलिए तो जब भिन्दो गाँव की बुधकुँवर बाई की इज्जत लूटी गयी तो छमुमो ने अलग से पर्चा निकाल कर बताया कि पुलिस ' गोंडमारू ' बन कर बलात्कारी का पक्ष ले रही है। इसी पर्चे में उन्होंने अपील की है कि गोंड समाज, आदिवासी समाज, किसान समाज एक हो जाओ, हिम्मत करो, संगठन बनाओ, संघर्ष करो, लाल-हरा झंडा तुम्हारे साथ है।

इस पर्चे में यह तो बताया ही गया है कि कैसे बुधकुँवर बाई से बलात्कार किया गया और गर्भवती हो जाने पर चाकू की नोक पर गर्भपात करवाया गया। यह भी बताया गया है कि आदिवासियों पर अत्याचार की कहानी नयी नहीं है। आज से 500 साल पहले अलाउद्दीन खिलजी के जमाने में कुछ जमींदारों ने आदिवासियों पर निर्मम अत्याचार किया था। वे आदिवासियों की सम्पत्ति छीन लेते थे और आदिवासी महिलाओं के साथ बलात्कार करते थे। उनकी बस्ती जला देते थे। इसी वजह से आदिवासी उन्हें ' गोंडमारू ' (गोंड को मारने वाले) कहते थे। बलात्कार एक धनी किसान ने किया था। जब बुधकुँवर बाई से बलात्कार हुआ तब बस्तर [illegible] का मंत्री आदिवासी था, कलेक्टर आदिवासी था, कमिश्नर हरिजन था। फिर भी पूरी व्यवस्था बलात्कारी के साथ थी, ' गोंडमारू ' बन गयी थी। यह सब जानकारी देने के बाद इस पर्चे में आह्वान किया गया है कि तमाम गरीबों ! तमाम अत्याचारों के खिलाफ एक साथ उठो ! बहुत ही कम शब्दों का इस्तेमाल करके तमाम जानकारियों के साथ यह इशारा किया गया है कि सिर्फ आदिवासी या हरिजन प्रतिनिधि चुनकर भेज देने से या प्रशासन उनके हाथों में सौंप देने से अत्याचार खत्म नहीं होते। अत्याचार खत्म करने के लिए एक साथ उठना होता है और संघर्ष करना होता है।

❑

जन शिक्षण सामग्री की बानगी

(एक)

सन् 1990 के विधान सभा चुनावों में छमुमो ने तेरह निर्वाचन क्षेत्रों से, जिनमें बस्तर तक का इलाका शामिल था, अपने उम्मीदवार खड़े किये थे। उस समय हैंडबिल और पोस्टरों द्वारा प्रचार के उद्देश्य से छत्तीसगढ़ी में लिखी गयी कविता का एक अंश यहाँ प्रस्तुत है। — स.

हमर सपना

घर-घर मा खुसियाली आवे,
समाज हमर सुघ्घर बने।
बेरोजगार मन ला काम मिले,
कृषि उपज के कीमत मिले,
अपासी के पानी मिले,
दस गाँव बर एक अस्पताल बने,
स्कूल मन मा मास्टर मिले,
महँगाई के उमर घटे।

गाँव के सियान, भाई, बहिनी, संगवारी मन !

हमर आजादी के उमर 42 बछर हो गेहे,
तभोले
छत्तीसगढ़ के छत्तीसगढ़िया मन
अभी तक ले पसिया बर तरस थें,
खदान मा मशीन लगत हावे,
अफसर मन के दबकी बढ़त हावे,
सहर के सेठ-साहूकार होवथें मालामाल,
जंगलिहा मन डर-डर के दिन ल नहकावथें।

डर के पाछू डर,
जंगल चपरासी के डर,
पटवारी के डर,
दिन उठाथे डर मा,
रात सुतथे डर मा,
आजादी के दिन मा भूलन बूटा खूंदि रहेन,
रद्दा भटकगे डर मा।

सपना के डेना उड़थे अड़बड़,
किसान सोचथे
झिमिर-झिमिर गरज बरस के,
अमृतधारा मा बहावत नहीं खेत-खलिहान।
हमर सपना भर जाथे,
हमर खेत हा दर्रा के पीड़ा ला झेलत रथे,
नई हे जिये के ठौर ठिकाना।
का होइस आजादी मिलिस त,
काय मिलिस कांग्रेसिया राजा बनिस त,
फरक अतका होइस . . .

तीर कमान मा मुहर लगाओ।
किसान-मजदूर के सपना ला,
साकार करे बर,
तीर-कमान ला विजयी बनाओ,
लुटेरा मन ला नाश करे बर,
एही बात ला
छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा बतावथे।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा डहर ले
लाल जोहार . . .

(छमुमो के सौजन्य से।)

रिवोनिया मुकदमे के दौरान अदालत में नेल्सन मंडेला का बयान, 1964

" गोराशाहों को समाप्त करने के लिए
मैंने अपना जीवन समर्पित कर दिया है।
वह एक ऐसा उद्देश्य है
जिसे पूरा होते देखने की हसरत मन में है।

लेकिन 'मी लार्ड'!
यही वह उद्देश्य है
जिसे पूरा करने के लिए
मैं मरने को भी तैयार हूँ। "

(छमुमो के सौजन्य से।)

ऐसे शुरू हुआ भिलाई आंदोलन [1]

राकेश दीवान

दल्ली राजहरा और राजनांदगाँव के बाद छमुमो भिलाई में भी मजदूर आंदोलन को फैलाने के बारे में गम्भीरता से सोच रहा था। दरअसल भिलाई, छत्तीसगढ़ के औद्योगिक विकास का हृदय स्थल है और यहाँ मजदूर आंदोलन के प्रभावशील होने का मतलब है – समूचे छत्तीसगढ़ के औद्योगीकरण की दिशा को प्रभावित कर पाना। इसी समय भिलाई में टाटा समूह की ए. सी. सी. सीमेंट फैक्ट्री के ठेका मजदूरों ने अपने संघर्ष को लेकर छमुमो से भी बातचीत की थी। हालाँकि इस क्षेत्र में भिलाई इस्पात संयंत्र के अलावा ए. सी. सी. ही ऐसी फैक्ट्री है जहाँ ठेकेदारी प्रथा का असर अपेक्षाकृत कम है। लेकिन छमुमो ने यहाँ भी मजदूरों का साथ देना तय किया।

मार्च 1990 में ए. सी. सी. के कोयला-जिप्सम की ढुलाई करने वाले 71 ठेका मजदूरों ने सुरक्षा के साधनों, काम की बेहतर परिस्थितियों और अन्य सुविधाओं को लेकर हड़ताल की शुरूआत की। प्रबंधकों ने मान्यता-प्राप्त इंटक यूनियन और गुंडों को साथ लेकर हड़ताल को तोड़ने की भरसक कोशिश की। लेकिन हड़ताली मजदूरों के साथ छमुमो के मजदूर संगठनों की एकजुटता और शंकर गुहा नियोगी की अनिश्चितकालीन भूख हड़ताल के कारण अंततः प्रबंधकों को समझौते के लिए बाध्य होना पड़ा। 26 जुलाई 1990 को समझौता हुआ और हड़ताल समाप्त की गयी। इस संघर्ष के फलस्वरूप ठेका मजदूरों को महीने में कम-से-कम 20 दिन के काम की गारंटी, सन् 1989 के मुनाफे का 20% बोनस, सरकार द्वारा निर्धारित वेतन, स्वास्थ्य, सुरक्षा और बच्चों की शिक्षा की सुविधाएँ प्राप्त हुईं।

छमुमो के नेतृत्व में भिलाई में हुए इस पहले आंदोलन की सफलता ने मजदूरों के सामने

---

[1] भिलाई आंदोलन को जानने-समझने के लिए इस लेख के साथ देखिये (1) खंड तीन में नियोगी द्वारा लिखित 'भिलाई : चंद तथ्य', पृ. 208-212, (2) खंड छह में नियोगी का भाषण 'रामलाल की जीवन-गाथा', पृ. 295-297 (3) खंड सात में नियोगी का साक्षात्कार 'छत्तीसगढ़ के मजदूरों के पास नेतृत्व की कमी नहीं', पृ. 329-332 (पहले पाँच प्रश्नोत्तर) एवं (4)) इसी खंड में अगली चार प्रस्तुतियाँ, पृ. 453-458 ।

'प्रयोग', अभनपुर की टी. यू. सी. आई. यूनियन, नर्मदा बचाओ आंदोलन, भोपाल गैस पीड़ित महिला उद्योग संगठन, आदि प्रमुख संगठनों ने शहीद दिवस में हिस्सेदारी की।

भिलाई आंदोलन का यह शुरूआती अनुभव उस लम्बी और मजबूत लड़ाई का संकेत देता है जो तब से आज तक लगातार जारी है।

❑

(अगस्त 1992)

छत्तीसगढ़ी आल्हा गीत के अंश / फागूराम यादव

"एकता ला देखिन भिलाई के मजदूर,
मन में संगी करीन विचार,
इही संगठन में मिल जातेन,
तब जाके हमर होही उद्धार,
लाल-हरा झंडा ला संगी,
हाथ में अपन लिये उठाय,
फैक्ट्री के मजदूर एक संग होगे,
एके होके संगठन बनाय,
इंकलाब के होवे आवाज हा,
भिलाई नगर में गूँजे जाय,
सही माँग जब मजदूर राखिस,
मालिक मन के जी कतराय,
यूनियन-फुनियन कुछ नइ जानन,
कहिके मालिक आँख देखाय,
मजदूर ऊपर करे कड़ाई,
छँटनी के नीति अपनाय,
छँटनी करन लगीस मजदूर ला,
मुखिया ऊपर केस चलाय,
बाहर के गा गुंडा बलाके,
मार-पीट मजदूर में कराय,
गुंडा-गर्दी चाकूबाजी,
ये सब आम बात बन जाय,
दलाल यूनियन करे दलाली,
गाँव के मनखे ला ठग-ठग लाय,
तुँहला नौकरी मिलही भिलाई में,
बेरोजगार ला लालच देखाय,
गाँव के मजदूर भिलाई में आगे,
अऊ जुलूस में लाइन लगाय,
काम चाहिए काम चाहिए,
अड़बड़ संगी शोर मचाय,
नवाँ मजदूर ला फैक्ट्री में लेगे,
गड़बड़-सड़बड़ काम करायँ,
कई मजदूर के जान गँवाये,
ऊपर से नीचे गिर जाय,
काम करे के ढंग नइ जाने,
वो मजदूर तो नेवरिया आय,
जुन्ना मजदूर बर काम हा नइये,
ओ सब भूख-भूख रहि जाय,
तभो ले मजदूर लड़न लागिस गा,
लड़त-लड़त बरसों बीत जाय,
कई संगठन करे समर्थन,
मजदूर बर राहत पहुँचाय,
लइका मन बर कापी पुस्तक,
शिक्षा कोष समिति बनाय,
वकील जज अऊ बुद्धिजीवी मन,
कोष समिति सदस्य बन जाय,
अइसे एकता बनीस संगवारी,
गुहा नियोगी के बुद्धि आय।

❑

(छमुमों की लोक साहित्य परिषद् द्वारा प्रकाशित 'शंकर गुहा नियोगी ला संघर्ष करेबो, तोला लाल सलाम', फरवरी 1992, से साभार।)

जीने लायक वेतन / अनिल सद्गोपाल

"राज्य, उपयुक्त विधान या आर्थिक संगठन द्वारा या किसी अन्य रीति से कृषि के, उद्योग के या अन्य प्रकार के सभी कर्मकारों को काम, निर्वाह मजदूरी, शिष्ट जीवन स्तर और अवकाश का सम्पूर्ण उपभोग सुनिश्चित करने वाली काम की दशाएँ तथा सामाजिक और सांस्कृतिक अवसर प्राप्त कराने का प्रयास करेगा और . . . . ."

— अनुच्छेद 43, भारतीय संविधान

भारतीय संविधान में 'राज्य की नीति के निदेशक तत्व' शीर्षक के खंड के तहत अनुच्छेद 43 में दी गयी 'जीने लायक वेतन' ('लिविंग वेज') की अवधारणा की अवहेलना करते हुए सरकार ने 'न्यूनतम मजदूरी' की गारंटी दी — वह भी महज कागज पर। इसके लिए भी मजदूरों को देश भर में जगह-जगह संघर्ष करना पड़ रहा है। विभिन्न मजदूर संघर्षों के दबाव में सरकार द्वारा गठित 'वेज बोर्डों' ने 'यथोचित मजदूरी' ('फेयर वेज') निर्धारित की। दरअसल, मिली तो वह भी तभी जब मजदूर संगठन की जुझारू ताकत के सामने पूँजीवादी ताकतों को झुकना पड़ा। अधिकांश ट्रेड यूनियनों ने 'बातचीत से तय हुई मजदूरी' ('नेगोशिएटेड मजदूरी') ही दिलवाकर संतोष कर लिया, क्योंकि अक्सर वह 'यथोचित मजदूरी' से भी कम रही। परंतु भिलाई आंदोलन के दौरान छमुमो ने 'जीने लायक वेतन' की संवैधानिक माँग पर ध्यान फोकस करके न केवल भिलाई के, वरन् पूरे देश के औद्योगिक तंत्र के सामने 'मजदूर वर्ग की प्रतिष्ठा' का सवाल पेश किया।

भिलाई इस्पात संयंत्र के उच्च वेतनमान पाने वाले कर्मचारी जिस स्थानीय बाजार में खरीद-फरोख्त करते हैं, उसी बाजार में कई गुना कम क्रय शक्ति वाले ठेका मजदूरों की हैसियत क्या होगी? इस परिस्थिति में क्या मजदूरों को संविधान में अनुशंसित 'शिष्ट जीवन स्तर' एवं 'सामाजिक और सांस्कृतिक अवसर' मिल पायेंगे? क्या मजदूरों का वेतन मात्र 'पेट भरने के लिए पर्याप्त कैलोरी' की दृष्टि से तय किया जाना चाहिए? क्या वेतन का उद्देश्य मजदूरों को इस लायक बनाये भर रखना ही है कि वे पूँजीपतियों के कल-कारखाने चलाते रह सकें? न्यूनतम मजदूरी का निर्धारण इसी दृष्टि से केवल 'श्रम शक्ति का पुनर्निर्माण करने व उसको बरकरार रखने' के लिए किया जाता है (देखिये नियोगी का इस विषय पर लेख, पृ. 155-161)। 'जीने लायक वेतन' की अवधारणा के तहत मजदूर को केवल उत्पादन के साधन के रूप में नहीं, वरन् सृजनशील इंसान के रूप में देखा जाना जरूरी है। अतः उसके वेतन का निर्धारण पेट भर भोजन के अलावा उसकी अन्य मानवीय आवश्यकताओं (शैक्षिक, स्वास्थ्य सम्बंधी, सांकृतिक, सामाजिक आदि) की पूर्ति के लिए भी किया जाये — अनुच्छेद 43 का यही आशय है।

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि छमुमो की 'जीने लायक वेतन' की इस माँग को उद्योगपतियों, बुद्धिजीवियों और नौकरशाहों ने नियोगी की उद्योग-विरोधी और बेतुकी राजनीति करार देकर हाशिये में धकेलने की कोशिश की है। जहाँ एक ओर, इस माँग को फोकस में रखकर छमुमो ने मजदूरों की समझ को दिशा देने का प्रयास किया, वहीं दूसरी ओर, व्यावहारिक स्तर पर हमेशा यह तैयारी दिखायी कि तात्कालिक परिस्थितियों और अपनी ताकत का यथार्थवादी आकलन करते हुए वेतन का निर्धारण बातचीत के जरिये हो। छमुमो मानता है कि वेतन की अवधारणा बदलते सामाजिक-आर्थिक हालात एवं मजदूर वर्ग की ताकत व 'राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय पूँजीवाद की पाशविक शक्ति' के बदलते संतुलन के आधार पर बदलती रहेगी। नियोगी के शब्दों में 'मजदूर वर्ग मजदूरी की ऐसी कोई स्थिर परिभाषा नहीं दे सकता, जो बदलावों की प्रक्रिया से विमुख हो (पृ. 158)।' इसी समझ के तहत 'जीने लायक वेतन' का मुद्दा भिलाई के मजदूरों की इज्जतदार जीवन जीने की दीर्घकालीन लड़ाई का अभिन्न अंग बन चुका है। □

दिया था, "हम आधा घंटा भी रेल लाइन पर नहीं बैठना चाहते। आप स्वयं सरकार द्वारा प्रस्तावित समझौते के प्रारूप पर उद्योगपतियों को बुलाकर समझौता करवा दें। हम तत्काल धरना वापस ले लेंगे।" लेकिन एस. पी. और कलेक्टर ने कोई बात नहीं की। वे केवल का. अनूप सिंह और जनकलालजी को गिरफ्तार करना चाहते थे।

उसके बाद चार बजे के आस-पास पुलिस ने अश्रुगैस शुरू की। फिर भी मजदूर आँख में गीला कपड़ा डालकर बैठे रहे। वर्षा के कारण अश्रुगैस का मजदूरों पर कोई खास प्रभाव नहीं पड़ा। जब देखा कि अश्रुगैस के बाद भी मजदूरों ने पटरी नहीं छोड़ी तो पुलिस ने चारों तरफ से पथराव शुरू किया और सामने बैठी 25 महिलाएँ और 3 पुरुष, बोंगड़ेजी सहित बुरी तरह घायल हुए। उन्हें हमारे लोग उठाकर यूनियन आफिस ले जाने लगे। इस सबको आम जनता खड़ी देख रही थी। नौ बजे से बिना खाये-पीये बैठे मजदूरों का पुलिस द्वारा दमन लोगों से देखा नहीं जा रहा था। हमारे लोगों को घायल देखकर भिलाई की आम जनता ने पुलिस पर पथराव शुरू किया। उसी समय बिना वर्दीधारी पुलिस ने सामने जी. ई. रोड पर खड़ी एक बस को जला दिया। ये सब पुलिस की साजिश थी। आधे घंटे तक भिलाई की जनता और पुलिस में संघर्ष चलता रहा। यह सब हम पटरी पर बैठे देखते रहे। उसके बाद पटरी पर बैठे लोगों पर पत्थर, लाठी, अश्रुगैस और बिना चेतावनी के गोली से हमला किया गया। ये सब एक साथ शुरू हुआ। हमारे साथी पटरी पर लेट गये थे। पीछे माल गाड़ी खड़ी थी। इस ट्रेन के ड्राइवर को 5-6 पुलिस वालों ने कहा कि गाड़ी चालू करो। किंतु ट्रेन ड्राइवर बोला कि मैं गाड़ी नहीं चलाऊँगा। चाहे तो आप मेरा इस्तीफा ले लें। उस समय तक सामने की ओर 6-7 लोग बंदूक का निशाना बन चुके थे। तब नेताओं के कहने से भिलाई शहर में रैली निकालने के लिए रेल पटरी छोड़ कर हम लोग बाहर आ गये। लोगों को रेल पटरी छोड़ते देख पुलिसवालों ने अंधाधुंध गोली चलाना शुरू कर दिया। जी. ई. रोड पर ही चार लाशें गिरीं एवं कई लोगों को सीने, सिर, कमर, पैर, जाँघ, व हाथ पर गोली लगी, जिन्हें उठा-उठाकर हमारे साथी भागने लगे। उसी समय हमारे कुछ लोगों ने पुलिस को दूर भगाने के लिए पथराव करना शुरू कर दिया। लेकिन चारों ओर से पुलिस ने घेर लिया था, तब सब लोग भागने लगे। मैं पास के एक घर में भागी जो भाजपा के आदमी का था। उसी के घर में मेरे साथ भगदड़ में तीस महिलाएँ, सात बच्चे और छः पुरुष घुस गये। घर का मालिक हमें भगाने का प्रयास करता रहा। हम लोग नहीं भागे तो उसने खुद पुलिस को बुला लिया। एक गाड़ी भर पुलिस ने आकर हमें बहुत मारा और नियोगी के नाम पर गंदी गालियाँ दीं। महिलाओं की साड़ी उठा-उठाकर मारते रहे। उस कमरे में कोई ऐसा नहीं था जो पुलिस की मार से जख्मी नहीं हुआ होगा। बहुत मारने के बाद कुछ पुलिसवाले बोले अब नहीं मारेंगे, यहाँ से भाग जाओ। बाद में जब हम कमरे से बाहर हुए उस समय चारों ओर से पुलिस ने घेर लिया था। हम जिधर जाते थे उधर से वे मारते थे। मैं भागते समय पुलिस की मार से गिर गयी और एक कोने में पड़ी रही। जब वर्षा हुई, उस समय (रात आठ बजे) होश आया। तब मैंने देखा कि पुलिसवाले घायल लोगों को घसीट-घसीट कर गाड़ी में भर रहे थे। वे लाशों को सफेद एम्बुलेंस में रखते थे। जो थोड़ा-बहुत जिंदा होता था उसे बूट से सिर में कुचल कर मार देते थे। उस समय यह सब देखकर गिरते पानी में मैं शारदापारा (भिलाई का एक मोहल्ला) की ओर गयी जहाँ हमारे दो साथी मिले जिनके यहाँ रात में पनाह ली। यहाँ साथियों ने बताया कि आस-पास

राष्ट्रीय प्रक्रिया की ओर कदम

नियोगी के काम की एक आलोचना यह रही है कि मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा से जुड़े रहने के बावजूद वे एक आंचलिक प्रक्रिया में ही सीमित रह गये और उन्होंने अखिल भारतीय स्तर पर क्रांतिकारी बदलाव की जरूरत को पर्याप्त महत्व नहीं दिया (देखिये पृ. 530-532)। दरअसल, बात कुछ और ही थी। नियोगी को वामपंथ की तीनों धाराओं के संगठनों में काम करने का अनुभव था। इन संगठनों के तौर-तरीकों और दृष्टि से असहमति के कारण अंततः उन्होंने एक अलग रास्ते की तलाश शुरू की और उसको काफी हद तक साकार रूप भी दे पाये। इस संदर्भ में खंड ग्यारह के कई लेख उपयोगी होंगे। अखिल भारतीय स्तर पर राजनैतिक प्रक्रिया कैसी हो, उसका गठन कैसे किया जाये, उसकी प्राथमिकताएँ क्या हों, इन सब प्रश्नों को लेकर नियोगी की अपनी एक कल्पना थी। उन्होंने कभी भारत के समस्त इस्पात मजदूरों को एक मंच पर लाने का प्रयास किया, कभी राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा खड़ा करने की पहल की और कभी छत्तीसगढ़ के आंचलिक स्तर पर ही जन संगठनों को इकट्ठा किया। सन् 1981 में उन्होंने दिल्ली में आयोजित 'अखिल भारतीय निरंकुशता विरोधी सेमिनार' में सक्रिय हिस्सेदारी की और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक 'देशभक्त और जनतांत्रिक राष्ट्रीय मोर्चा' बनाने का प्रस्ताव रखा, हालाँकि इसके अनुसार यह बात आगे नहीं बढ़ी। सितम्बर 1990 में उन्होंने दिल्ली में 'संघवाद पर कन्वेंशन' में भाग लिया। उनके इन प्रयासों में एक सिद्धांत उभरता दिखता है — शोषित जनता को संगठित करने वाले विभिन्न समूहों व ताकतों को एक मंच पर लाकर एक अखिल भारतीय अथवा आंचलिक गठबंधन का निर्माण करना, न कि पहले एक केंद्रीय समूह या दल बनाकर उसकी छत्रछाया में लोगों को बटोरने का तरीका। इसी सोच के आधार पर उन्होंने दिसम्बर 1980 में झारखंड मुक्ति मोर्चा, मार्क्सिस्ट को-ऑर्डिनेशन कमेटी (धनबाद), दिल्ली मुक्ति मोर्चा आदि के साथ मिलकर राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा बनाने की औपचारिक शुरुआत की। अगले दो वर्षों में इस प्रक्रिया में उत्तराखंड संघर्ष वाहिनी, बंधुआ मुक्ति मोर्चा, शेतकरी संघटना (महाराष्ट्र), मुम्बई गिरनी कामगार यूनियन जैसे संगठनों को भी जोड़ने के लिए कदम उठाये गये। आज यह स्पष्ट नहीं है कि यह प्रक्रिया कहाँ, क्यों और कैसे रुक गयी। इस प्रश्न पर खोज करना राजनैतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होगा। अतः हम राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा के उद्घाटन सम्मेलन में पारित प्रस्ताव को एक दस्तावेज़ के रूप में यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं।

अर्थनीति, एक सुसंस्कृत संस्कृति एवं आत्मनिर्णय के अधिकार के लिए गतिशील और दीर्घ-विलम्बित संघर्ष में भाग लेकर व नेतृत्व देकर जन-जीवन में नया उत्थान लाने का संकल्प लिया।

8. बैठक में विभिन्न जाति-सत्ताओं की रचनात्मक प्रगति एवं कामकाज की सुविधा के लिए छोटे राज्यों की माँग को समर्थन दिया एवं इन संघर्षों को मुक्ति संघर्षों के साथ जोड़कर आगे ले जाने का दृढ़ निश्चय किया।

9. बैठक में तमाम विदेशी पूँजी को, सोवियत पूँजी सहित, बिना मुआवजा जब्त करने के दीर्घकालीन कार्यक्रम पर विचार हुआ। बैठक में यह भी निश्चय किया गया कि आदिवासी, उत्पीड़ित दलितों से हड़पी हुई जमीन को अविलम्ब हासिल करने के लिए तत्काल सारे देश के पैमाने पर संघर्ष छेड़ा जायेगा।

10. बैठक में वर्तमान समय में भारत की तमाम संघर्षशील शक्तियों को एकजुट करने का निश्चय किया गया।

11. बैठक में देश के तमाम छात्र-युवा-नारी-मजदूर-किसान को संगठित करने के लिए विशेष कार्यक्रमों पर विचार किया गया।

12. बैठक में इन तमाम कार्यों का संचालन करने एवं देश के व्यवस्था-विरोधी संघर्ष को मार्गदर्शन देने के लिए एक राष्ट्रव्यापी राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा का गठन किया गया। यह देश के लिए एक नया राजनैतिक दल होगा।

13. राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा के अध्यक्ष एवं महामंत्री का चुनाव सर्वसम्मति से सम्पन्न हुआ — का. शिबु सोरेन, संसद सदस्य, एवं का. कृपाशंकर चटर्जी, विधायक, क्रमशः चुने गये। विभिन्न राज्यों से तीन-तीन साथियों को लेकर कार्यकारिणी का गठन हुआ। निकट भविष्य में एक सम्मेलन बुलाकर मोर्चे के राजनैतिक प्रस्ताव, संगठन आदि के बारे में विचार करने का निर्णय लिया गया।

14. राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा के अध्यक्ष का. शिबु सोरेन, सांसद, ने राष्ट्र के तमाम उत्पीड़ित जाति-सत्ताओं के नौजवानों, मेहनतकश मजदूर-किसानों व निम्न पूँजीपतियों से आह्वान किया कि सारे देश के क्रांतिकारी बुद्धिजीवियों एवं देशप्रेमी वर्ग एकजुट हो जाओ। सामंतवादी दलाल पूँजीपतियों के निर्मम, निष्ठुर शोषण एवं अत्याचार की बुनियाद पर आधारित इस देश की अर्द्ध-सामंती व अर्द्ध-औपनिवेशिक व्यवस्था के खिलाफ मुक्ति एवं अधिकार के संघर्ष में हमें भाग लेना होगा। हमारे पास खोने के लिए जंजीरों के सिवाय कुछ भी नहीं है पर पाने के लिए सारी दुनिया है। देश के क्रांतिकारी वर्ग को एकजुट करके कुर्बानी की राह पर कदम-कदम आगे बढ़ते हुए हम विजय हासिल करेंगे।

नये जनवादी लोकतांत्रिक समाज के रास्ते से समाजवादी समाज की स्थापना हमारा लक्ष्य है।

राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा — जिंदाबाद   इंकलाब जिंदाबाद

❑

(झमुमो के सौजन्य से।)

लेकिन अधिकांश जनता तो गाँवों में रहती है। वह इन बड़े-बड़े मुद्दों में व अपनी रोजमर्रा की समस्या में कोई सम्बंध नहीं देखती। अपनी रोजाना जिंदगी में उसे हर कदम पर बिचौलिए को घूस देनी पड़ती है, चाहे वह सिंचाई के लिए हो या बिजली के लिए, रोजगार के लिए या बच्चों की शिक्षा के लिए। जब जीवन के हर क्षेत्र में इतना भ्रष्टाचार व्याप्त है, तो कुछ लोगों को लगता है कि शायद यही बुनियादी समस्या है और बोफोर्स घोटाले का विरोध उन्हें स्थानीय भ्रष्टाचार का विरोध लगता है। **यही भटकाव 'वी. पी. लहर' के रूप में उभरा है, और जिस तरह 'रथयात्रा' व 'सती स्थल' पर भीड़ जुटती है, उसी तरह इन तमाशों में भी भीड़ आती है।**

इस देश में यह लहर की राजनीति कब तक चलती रहेगी और कब तक लोग इन आती-जाती लहरों की ओर खिंचते रहेंगे? इस भटकाव में आजादी के कितने बुनियादी सवाल मुखर नहीं हुए हैं? यह सवाल किसी ने नहीं किया कि गांधीजी जिस 'आजादी' के अगुवा थे, उन्होंने उसी 'आजादी' के उत्सव में हिस्सा लेने से इंकार क्यों किया? कोई यह नहीं पूछता कि सन् 1947 में उस 'आज़ादी' को 'झूठी आजादी' कहने वाली कम्युनिस्ट पार्टी ने पाँच साल बाद अपनी समझ क्यों बदल ली? या वही रणदिवे जिन्होंने **ऐतिहासिक तेलंगाना आंदोलन** के बाद अपना मुखौटा उतारने का वादा किया था, उन्होंने फिर वही मुखौटा क्यों लगा लिया? वही कांग्रेसी जो शुरू में भगत सिंह को रूसी एजेंट कहकर बदनाम करते थे, या वही कम्युनिस्ट जो सुभाषचंद्र बोस को देशद्रोही ठहराते थे, क्यों बाद में उन्हें महान देशभक्त के रूप में सम्मानित करते हैं? यह सवाल कोई क्यों नहीं करता कि जो सरकार गांधी के नाम पर शपथ लेकर शराबबंदी की बात करती है, वही शराब ठेकेदारों को उदारता से लाईसेंस देकर शराब को गाँव-गाँव क्यों पहुँचाती है? या जो सरकार नेल्सन मंडेला के अवैध कारावास का विरोध करती है व उनकी बिना शर्त रिहाई की माँग करती है, वही क्यों अपने ही देश में महिलाओं, मजदूरों व किसानों के शोषण के खिलाफ आवाज उठाने वालों को दमनकारी ताकत व वैधानिक शक्ति, दोनों से दबाती है?

अब समय आ गया है कि बुनियादी सवाल पूछे जायें।

क्या वर्तमान अर्थनीति देश की जनता के हित में है? कौन सी नीति आम व्यक्ति को आर्थिक आजादी की ओर ले जा सकती है?

आजादी के समय एक आशा बंधी थी और आजादी का शुरूआती लक्ष्य भी था कि हमारा समाज, आत्मनिर्भर व स्वतंत्र व्यक्तियों का खुशहाल समाज हो। पर दूसरी ओर अभी तक सरकार कौन सी नीति पर चल रही है? वही नीति जो विश्व बैंक ने तीसरी दुनिया के देशों के लिए तय की है कि पहले देश में पूँजी का संचय हो, यानी पूँजीपति के पास और अधिक पूँजी बने, तो बाकी मेहनतकश व बेरोजगार जनता तक भी उस संचय की कुछ बूँदें पहुँच जायेंगी। कुछ लोगों का बहुत विकास हो जाये तो बाकी लोगों को भी उस विकास का थोड़ा-थोड़ा हिस्सा मिल जायेगा। क्या इस तरह अधिकांश जनता के आश्रित व निर्भर रहते हुए देश आत्मनिर्भर हो सकता है?

हमें यह सोचना है कि इन दो परस्पर विरोधी तरीकों में से किस तरीके से लोगों को आर्थिक आजादी मिल सकती है?

लाल-हरे झंडे की शहादत की कहानी [1]

प्रस्तुति : अनिल सद्गोपाल

पहली शहादत

शहादत की तारीख	–	2-3 जून 1977
शहादत स्थल	–	दल्ली राजहरा (यूनियन दफ्तर के साथ लगा हुआ वर्तमान शहीद पार्क)।
तत्कालीन राज्य सरकार	–	राष्ट्रपति शासन (केंद्र में जनता पार्टी की सरकार, प्रधान मंत्री – श्री मोरारजी देसाई)।
संदर्भ	–	भिलाई स्टील प्लांट की लौह अयस्क व अन्य खदानों में कार्यरत दस हजार ठेका मजदूरों को विभागीयकृत / नियमित मजदूरों की दर पर बोनस का भुगतान, झोपड़ी मरम्मत का भत्ता, फाल बैक वेजेस आदि माँगों को लेकर उनकी प्रतिष्ठा के लिए चले संघर्ष के दौरान यूनियन दफ्तर के बाहर सो रहे (2 जून की रात) नियोगी की धोखे से गिरफ्तारी। उनकी रिहाई की माँग कर रहे मजदूरों पर दो बार गोली चालन – पहली बार 2 जून की रात और दूसरी बार 3 जून की दोपहर।
शहीद संख्या	–	ग्यारह (एक 12-वर्षीय बच्चे और एक महिला सहित)।

---

[1] यहाँ पुलिसिया गोली चालन में केवल मारे गये लोगों का विवरण दिया गया है। हर ऐसी घटना में अनेक लोग गम्भीर रूप से घायल भी हुए। उदाहरण के लिए भिलाई गोलीकांड (जुलाई 1992) में घायल लोगों की संख्या सैकड़ों तक पहुँच गयी थी।

सम्भव नहीं हो सका क्योंकि घुटने से नीचे का भाग देखा ही नहीं जा सकता था। इसके साथ ही भीड़ के तितर-बितर होने का संकेत मिल रहा था और इसीलिए गोली चालन बंद करने का आदेश दिया जाना चाहिए था, किंतु अंधेरा होने के कारण ऐसा भी नहीं किया जा सका। सारांश यह कि मध्य प्रदेश पुलिस विनियम के पैरा 443 के उप पैरा (ख) के उपबंधों और गोपनीय ज्ञाप में दी गयी सम्बंधित हिदायतों का पूर्णतः उल्लंघन किया गया। यह रात को किये गये गोली चालन की सबसे बड़ी त्रुटि थी।

ख) भीड़ को चेतावनी देने के लिए ..... (बिना लाउडस्पीकर के) मुँह से बोलकर ही चेतावनी दी, जिसका परिणाम यह हुआ कि चेतावनी शोर-शराबे में ही खो गयी और उसे भीड़ के सभी या अधिकांश लोग सुन या समझ नहीं पाये। इस प्रकार गोपनीय ज्ञाप के पैरा 15 (ग) तथा (घ) में दिये गये निर्देशों का उल्लंघन किया गया। इस प्रकार चेतावनी व्यर्थ सिद्ध हुई।

ग) घटना स्थल पर कोई डाक्टर, प्रथमोपचार पेटी या मलहम पट्टी की सामग्री आदि नहीं ले जायी गयी और इस प्रकार पैरा 444 के कुछ उपबंधों तथा गोपनीय ज्ञाप के पैरा 16 का उल्लंघन किया गया।

सारांश, यह कि उपर्युक्त पैरा में उल्लेखित सभी आवश्यक बातों का उल्लंघन किया गया। अतः **रात को किया गया गोली चालन निरुद्देश्य, अविवेकपूर्ण तथा ऊपर उल्लेखित उपबंधों और निर्देशों का उल्लंघन था और इस तरह वह किसी भी प्रकार न्यायोचित नहीं था।** तद्नुसार, यह स्वाभाविक रूप से सिद्ध हो जाता है कि इस गोली चालन में किया गया बल प्रयोग अत्यधिक था।

अध्याय — नौ
अनुबंधित श्रमिक-सम्बंधी सिफारिश

..... ठेकेदारों और सहकारी संस्थाओं द्वारा काम पर लगाये गये श्रमिकों के साथ विभागीयकृत श्रमिकों की तुलना में अनेक प्रकार से असमानता एवं भेदभावपूर्ण व्यवहार किया गया है। वे अनेक प्रकार के लाभों तथा सुविधाओं से भी वंचित रहे हैं, जो भिलाई स्टील प्लांट द्वारा प्रत्यक्ष नियोजित कर्मचारियों अर्थात् विभागीयकृत श्रमिकों को उपलब्ध हैं। अनुबंधित श्रमिक (विनियम तथा उन्मूलन) अधिनियम, 1970, काफी पहले से ही प्रवृत्त है, और उक्त अधिनियम की धारा 35 के अधीन निर्मित म. प्र. नियम 1973, 11 मई 1973 को प्रवृत्त हुआ, किंतु दल्ली राजहरा समूह लौह अयस्क खदानों में अनुबंधित श्रमिक उन्मूलन के लिए स्थायी रूप से कुछ भी किया गया प्रतीत नहीं होता। **मेरी यह राय है कि अनुबंधित श्रमिक पद्धति यथासम्भव शीघ्र समाप्त की जानी चाहिए ताकि जिस असमानता और भेदभावपूर्ण व्यवहार के ये श्रमिक शिकार हैं, समाप्त हो जावे** और इन्हें भी वे सभी प्रकार की सुविधाएँ तथा लाभ उपलब्ध कराये जायें, जो भिलाई स्टील प्लांट के विभागीय कर्मचारियों को प्राप्त हैं।

दूसरी शहादत

शहादत की तारीख — 27 सितम्बर 1980

शहादत स्थल — दल्ली राजहरा (केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल की बैरक के पास)।

और उन पर गोली चलाने के लिये विवश किये जाते हैं।

दल्ली राजहरा की घटना का महत्व कहीं व्यापक है। आवश्यकता सम्पूर्ण दमन की इस व्यवस्था को समाप्त करने की है जहाँ शोषित मजदूरों को शांतिपूर्ण आंदोलन करने पर आतंकित नहीं किया जायेगा ..... इसमें अतिशयोक्ति नहीं कि, और हम जाँच अधिकारी के सामने भी इस तथ्य को रखने का प्रयास करेंगे, जिस गोली ने आशाराम नामक गरीब लकड़हारे की जान ली वह गोली सी. आई. एस. एफ. के जवानों द्वारा नहीं, वरन् **भिलाई इस्पात कारखाने के व्यवस्थापकों द्वारा चलायी गयी और बराबर चलायी जायेगी।**

तीसरी शहादत

शहादत की तारीख	— 12 सितम्बर 1984
शहादत स्थल	— राजनांदगाँव (रेल्वे लाइन के पास मोतीपुर एवं तुलसीपुर बस्तियाँ)।
तत्कालीन राज्य सरकार	— कांग्रेस (इ) का शासन; मुख्य मंत्री — श्री अर्जुन सिंह।
संघर्ष	— बंगाल-नागपुर कॉटन मिल्स (बी. एन. सी. मिल्स), राजनांदगाँव, के 3,600 मजदूरों में से 3,000 मजदूरों द्वारा नवगठित राजनांदगाँव कपड़ा मजदूर संघ के नेतृत्व में दि. 14.07.84 से बेहतर कार्य-परिस्थितियों के लिए हड़ताल। दि. 11.09.84 को हड़ताली मजदूरों के जुलूस के पिछले भाग पर इंटक-समर्थकों द्वारा हथियारों से प्राणघातक हमला। दि. 12.09.84 को दोपहर में पुलिस द्वारा एक मालगाड़ी को ढाल के रूप में इस्तेमाल करके गोली चालन।
शहीद संख्या	— चार (एक जुलूस पर हुए हमले में, तीन गोली चालन में मृत)।

शहीद

1. **मेहतरू कलार,** उम्र — 40 वर्ष, बी. एन. सी. मिल्स में मशीनमैन (इंटक-समर्थकों द्वारा जुलूस पर किये गये हमले में)।
2. **घनाराम देवांगन,** उम्र — 45 वर्ष, बी. एन. सी. मिल्स में फिटर।
3. **जगतराम सतनामी,** उम्र — 35 वर्ष, बी. एन. सी. मिल्स में मशीनमैन।
4. **राधे ठेठवार,** उम्र — 12 वर्ष।

राजनांदगाँव गोली चालन पर पी. यू. सी. एल. रपट के कुछ अंश

इस दौर में प्रबंधक राष्ट्रीय कपड़ा निगम का रुख बड़ा ही तकनीकी रहा है, 'इस समस्या को सिर्फ मान्यता-प्राप्त श्रमिक संगठन से बातचीत के दौरान ही हल किया जा सकता है' और

पाँचवीं शहादत

शहादत की तारीख	–	1 जुलाई 1992
शहादत स्थल	–	भिलाई (बम्बई-हावड़ा रेल लाइन)।
तत्कालीन राज्य सरकार	–	भारतीय जनता पार्टी का शासन; मुख्य मंत्री — श्री सुन्दरलाल पटवा।
संदर्भ	–	भिलाई आंदोलन के दौरान दि. 25.05.92 को छमुमो द्वारा प्रस्तावित 'भिलाई महाबंद' को राज्य के उद्योग मंत्री श्री कैलाश जोशी के हस्तक्षेप एवं मजदूरों की माँगें पूरा करवाने के आश्वासन के कारण स्थगित किया गया। अगले 36 दिनों में समस्या हल करने के सारे प्रयास उद्योगपतियों के अड़ियल रवैये के फलस्वरूप विफल। अंततः का. जनकलाल ठाकुर के नेतृत्व में पाँच हजार से अधिक पुरुष-महिला मजदूरों व बच्चों ने दि. 01.07.92 को रेल मार्ग पर शांतिपूर्वक बैठकर दिनभर चक्का जाम किया। शाम को रेल मार्ग खाली कराने के लिए पुलिस द्वारा पहले सत्याग्रही मजदूरों एवं बच्चों पर अंधाधुंध गोली चालन एवं बाद में मजदूरों को खदेड़ते हुए 5 कि. मी. दूर तक के इलाके में लाठी चार्ज, गोली चालन, एवं आतंक का माहौल। रेल लाइन के पास इकट्ठी आम नागरिकों की भीड़ ने पुलिस कार्रवाई पर क्रुद्ध होकर पुलिस पर पथराव किया जिसमें एक पुलिस सब-इंसपेक्टर श्री टी. के. सिंह मारे गये। *(पूरे विवरण के लिए देखिये पृ. 456-458)*
शहीद संख्या	–	सोलह (13 मजदूर, 3 आम नागरिक)।

→

9.

अब ये लोग गोली चलायेंगे

राकेश दीवान

नियोगी को जिलाबदर करने की सरकारी कार्रवाई पर उच्च न्यायालय द्वारा रोक लगाये जाने के बाद एक मित्र ने उनसे पूछा था कि अब आगे क्या होगा। नियोगी का जवाब था, " गोली, अब ये लोग गोली चलायेंगे। " 10 अगस्त 1991 को छत्तीसगढ़ के पाँच जिलों से निष्कासन की कार्रवाई पर उच्च न्यायालय द्वारा लगायी गयी रोक के करीब डेढ़ महीने बाद नियोगी की हत्या कर दी गयी।

नियोगी ने अपनी हत्या की आशंका दुर्घटना से कुछ सप्ताह पहले रिकार्ड किये गये टेप में भी व्यक्त की थी। इसमें उन्होंने अपनी हत्या, हत्यारों के नाम, छमुमो के भावी नेतृत्व को सुझाव और करीबी राजनैतिक दलों से सम्बंध के बारे में अपने विचारों का जिक्र किया है (बयान के लिए देखिये पृ. 304-305)। नियोगी द्वारा व्यक्त आशंका की पुष्टि बाद में सी. बी. आई. द्वारा कोर्ट में प्रस्तुत किये गये आरोप पत्र से भी हो जाती है जिसमें भिलाई के कुछ उद्योगपतियों के नाम हत्या के षड्यंत्रकारियों के रूप में बताये गये हैं। सी. बी. आई. ने भिलाई के एक प्रमुख उद्योगपति के निवास से एक विस्तृत गोपनीय रपट भी बरामद की है जो कि छमुमो के आंदोलन और नियोगी को धीरे-धीरे निष्प्रभावी बना देने या खत्म कर देने की चरणबद्ध योजना का कच्चा चिट्ठा है।

29 अप्रैल 1991 और बाद में 4 जुलाई 1991 को नियोगी को मिले पत्रों में भी किन्हीं अज्ञात शुभचिंतकों ने उन्हें उनकी हत्या के बारे में आगाह किया था। इन पत्रों में लिखा था कि हत्या के लिए डेढ़ लाख रुपये में ठेका दिया जा चुका है और हथियार भी खरीदे जा चुके हैं। हत्याकांड के बाद सुश्री आशा गुहा नियोगी ने अपने पति की हत्या की रपट में हत्यारों की जगह नौ उद्योगपतियों के नाम भी दर्ज करवाये थे। दरअसल, इन तमाम आशंकाओं, आरोपों और सरकारी रपटों के अलावा नियोगी हत्याकांड के पहले की घटनाओं को देखें तो यह बात और स्पष्ट हो जाती है कि जो हालात बनते जा रहे थे उनमें उद्योगपतियों और सरकार के लिए आंदोलन को ठप्प कर देने का एकमात्र यही रास्ता बचा था। इस ' एकमात्र रास्ते ' का अहसास नियोगी सरीखे परिपक्व राजनीतिज्ञ को पहले से होना ही था।

छमुमो के भिलाई में पैर रखने के साथ ही यह बात साफ हो गयी थी कि उद्योगपति ' भिलाई को दल्ली राजहरा ' नहीं बनने देंगे। 29 नवम्बर 1990 को भिलाई की एक पत्रकार वार्ता में ' भिलाई इंडस्ट्रीज एसोसिएशन ' के अध्यक्ष बी. आर. जैन (भिलाई के बी. ई. सी. उद्योग के मालिक) ने मूलचंद शाह, राजेश माथुर, अरविन्द जैन, राजेश गुप्ता आदि उद्योगपतियों की उपस्थिति में खुलासा कर दिया था कि वे राजहरा के ' कथित मजदूर नेता से किसी प्रकार का समझौता नहीं कर सकते हैं। '

छमुमो को नकारने की इन कोशिशों में सरकारी अमले ने भी उद्योगपतियों का खुलकर

नियोगी के विरुद्ध उद्योगपतियों द्वारा सरकार के जरिये की गयी कार्रवाई का दूसरा कदम था नियोगी को छमुमो के कार्यक्षेत्र दुर्ग और सीमावर्ती चार जिलों से बाहर करना। अंग्रेजी राज के जमाने के कुख्यात कानून 'मध्य प्रांतों और बरार गुंडा अधिनियम – 1946' की तर्ज पर 'मध्य प्रदेश राज्य सुरक्षा अधिनियम' बनाया गया है। इसी अधिनियम की धारा पाँच के अंतर्गत दुर्ग जिलाधीश ने जुलाई 1991 में हास्यास्पद और मनगढ़ंत आरोप लगाकर नियोगी को जिलाबदर का नोटिस दिया था।

दुर्ग, राजनांदगाँव, बिलासपुर, रायपुर और बस्तर से जिलाबदर करने के लिए लगाये गये आरोपों में कहा गया था कि नियोगी ने मजदूरों में धीरे-धीरे अपना स्थान बनाया तथा सियाराम मजदूर की लड़की को आशा नाम देकर उससे विवाह कर लिया। इस तरह मजदूरों के बीच भावनात्मक रिश्ता जोड़कर अपना कार्यक्षेत्र राजहरा माईन्स तक बढ़ा लिया ! मजदूर की लड़की से विवाह करने, मजदूरों से भावनात्मक रिश्ता जोड़ने और मजदूरों के बीच काम करने को अपराध मानकर दिये गये जिलाबदर के आदेश पर एक बार फिर उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश श्री एस. के. झा और न्यायमूर्ति श्री आर. डी. शुक्ला ने 10 अगस्त 1991 को रोक लगा दी।

मजदूरों की छँटनी और उन पर दमन करने, उन्हें कानूनी अधिकारों से वंचित रखने, नियोगी को जेल तथा जिलाबदर के जरिये कार्यक्षेत्र से बाहर रखने की कोशिशों की विफलता के बाद अब उद्योगपतियों के पास एकमात्र विकल्प बचा था – नियोगी की हत्या। उद्योगपतियों को पूरा भरोसा था कि इससे एक तो छमुमो का नेतृत्व स्थायी रूप से छिन्न-भिन्न हो जायेगा और दूसरे, अपने प्रिय नेता की मृत्यु से मजदूर भड़कर हिंसक हो जायेंगे। तब कानून व्यवस्था का डंडा लेकर आंदोलन से निपटना आसान हो जायेगा। लेकिन छमुमो के परिपक्व नेतृत्व ने इन तमाम घिनौनी आशाओं पर पानी फेर दिया और आज नियोगी मरकर भी एक संयत और परिपक्व छमुमो के रूप में जीवित हैं।

❑

(अगस्त 1992)

दस्तावेज

राष्ट्रपति से अपील जो बेअसर साबित हुई

नीचे हम एक ज्ञापन प्रस्तुत कर रहे हैं जो नियोगी ने अपनी हत्या के मात्र 17 दिन पहले राष्ट्रपति को स्वयं दिल्ली जाकर सौंपा था। उसके तुरंत बाद ऐसे ही ज्ञापन प्रधान मंत्री श्री पी. वी. नरसिंह राव, संसद में विपक्ष के नेता श्री लालकृष्ण आडवाणी एवं पूर्व प्रधान मंत्री श्री वी. पी. सिंह को भी दिये। श्री आडवाणी से तो उनकी अपनी पार्टी, यानी भाजपा की म. प्र. सरकार को न्याय के रास्ते पर

2) उद्योग एवं क्षेत्र के आधार पर मजदूरों के लिए 'जीने लायक वेतनमान' तय किया जाये।

अधिकांश मालिकों ने माँग पत्र लेने से ही इंकार कर दिया। फिर भी सहायक श्रमायुक्त के पास ये माँग पत्र दिये गये, ताकि मजदूरों के ट्रेड यूनियन बनाने के अधिकार एवं उनकी जायज माँगों को सुनिश्चित किया जा सके। उद्योगपतियों ने मजदूरों के संगठन को तोड़ने के लिए हर सम्भव प्रयास किये। मगर इसके बावजूद जब संगठन नहीं टूटा तो उन्होंने शारीरिक हिंसा का सहारा लिया और अतंतः मजदूरों की हत्या करवाने के स्तर तक उतर आये। उनके मालिकों के इशारों पर छत्तीसगढ़ डिस्टिलरीज के श्री केशवराव एवं सिम्पलेक्स ग्रुप के श्री मनीराम की हत्या हुई। इसके अलावा श्री रवीन्द्र शुक्ला, श्री जगदीश वर्मा, श्री पुरुषोत्तम आदि मजदूरों पर चक्कुओं से प्राणघातक प्रहार किये गये। अभी हाल में 25 जून को, उद्योगपतियों के इशारों पर पुलिस द्वारा मजदूरों पर बर्बर लाठी चार्ज किया गया। इस लाठी चार्ज के दौरान मजदूर नेताओं को चुन-चुन कर अमानवीय यातनाएँ दी गयीं। अब जब ये सभी कोशिशें विफल हो चुकी हैं तो उद्योगपति भयंकर खून-खराबा करने पर उतारू हो गये हैं, जिससे मजदूरों एवं मजदूर नेताओं के जीवन एवं देह को खतरा पैदा हो गया है। 19 अगस्त को प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ (भिलाई) के उपाध्यक्ष श्री उमाशंकर राय को मालिकों के भाड़े के गुंडों ने घेर कर उन पर चाकू व लोहे की छड़ों से प्रहार किया और उन्हें मृत समझकर सड़क पर छोड़ कर चले गये। 24 अगस्त को प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ (उरला) के उपाध्यक्ष श्री एस. के. सिंह, सचिव श्री हलधर व कोषाध्यक्ष श्री सुखलाल पर सोते हुए में तलवारों एवं लोहे की छड़ों से जानलेवा हमला कर उन्हें भयंकर रूप से घायल कर दिया।

इस दौरान पुलिस हमेशा अपराधियों को संरक्षण देती रही है। भिलाई की पुलिस ने तो आज तक एक भी अपराधी को गिरफ्तार नहीं किया है, उलटे उन्हें संरक्षण देने का ही काम किया है।

ऐसी परिस्थिति में मजदूरों एवं मजदूर नेताओं के समक्ष जीवन एवं देह की सुरक्षा की समस्या पैदा हो गयी है।

अतः महामहिम से निवेदन है कि उद्योगपतियों की इन 'हिंसक हरकतों' पर रोक लगवायी जाये और केंद्रीय जाँच ब्यूरो द्वारा जाँच करवायी जाये, ताकि मजदूर अपने संवैधानिक अधिकारों से वंचित न हों।

हम हैं—

भिलाई, दल्ली राजहरा, राजनांदगाँव, उरला, टेडेसरा, बालोदा बाजार व हिर्री के मजदूर एवं छत्तीसगढ़ के नागरिक।

(50,000 हस्ताक्षर संलग्न)

❑

(छमुमो के सौजन्य से; मूल अंग्रेजी से अनूदित।)

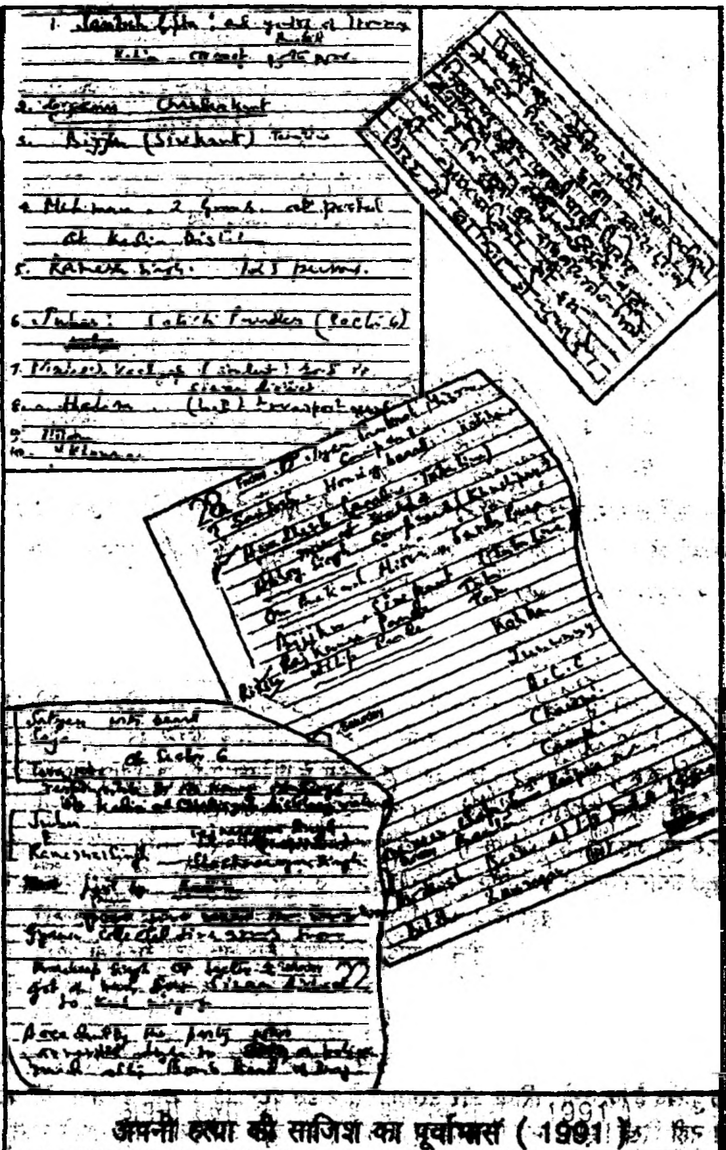

2. Chitrakoot
3. Bijju (Sivkant)
5. RAkesh Singh 125 persons

अपनी हत्या की साजिश का पूर्वाभास (1991)

शहादत की पृष्ठभूमि और उसके मायने

छत्तीसगढ़ आंदोलन समर्थन मोर्चा (नयी दिल्ली) द्वारा गठित ' भिलाई में औद्योगिक अशांति पर नागरिक समिति ' ने नवम्बर 1991 में भिलाई औद्योगिक क्षेत्र का दौरा किया। इस पाँच-सदस्यीय समिति के निम्नलिखित सदस्य थे –

1) *श्री डी. एस. तेवतिया, पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय और बाद में कलकत्ता उच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश।*
2) *श्री कुलदीप नैय्यर, वरिष्ठ पत्रकार एवं ब्रिटेन में भारत के पूर्व उच्चायुक्त।*
3) *श्री विजय तेंदुलकर, प्रसिद्ध रंगकर्मी एवं नाट्य लेखक।*
4) *डॉ. अनिल सद्गोपाल, शिक्षाविद एवं समाजकर्मी।*
5) *श्री राकेश शुक्ल, उच्चतम न्यायालय के अधिवक्ता एवं समिति के सदस्य-सचिव व आयोजक।*

इस समिति ने मार्च 1992 में ' बिहाईन्ड द इंडस्ट्रियल स्मोकस्क्रीन ' (' औद्योगिक कोहरे के पीछे ') शीर्षक की अपनी तथ्य-परक रपट जारी की। उस रपट का ' उपसंहार ' वाला अंश यहाँ प्रस्तुत है। — स.

नियोगी की हत्या मध्य प्रदेश की पहली जघन्य ' राजनैतिक हत्या ' थी। प्रदेश में इससे पहले कभी किसी ट्रेड यूनियन नेता की हत्या इतने सुनियोजित ढंग से क्रियान्वित नहीं की गयी और वह भी इस तरह निर्लज्जतापूर्वक छल-कपट व धूर्तता से परिपूर्ण एवं अपनी मनमानी करने के लिए। उनका कत्ल इसलिए कर दिया गया चूँकि वे एक निराले व्यक्ति थे जो एक ऐसे दायरे में सक्रिय हुए जहाँ इसके पहले किसी ने उस ताने-बाने को ललकारने का साहस नहीं किया था जिसे कुछ उद्योगपतियों ने मजदूरों को उनकी बुनियादी आवश्यकताओं और ' जीने लायक वेतन ' से वंचित रखने के लिए खड़ा किया था। उनका सबसे बड़ा अपराध यह था कि उन्होंने बिक जाने या अनैतिक रूप से प्रभावित होने से स्पष्ट इंकार कर दिया था। इसीलिए उन्हें अंततः ऐसी कीमत चुकानी पड़ी जो देश में औद्योगीकरण के प्रारम्भ से अन्य इलाकों में अनेक ईमानदार और कर्तव्यनिष्ठ मजदूर नेताओं ने चुकायी है।

यह खेदजनक है कि नियोगी जैसे व्यक्ति का अंत इस प्रकार हुआ, परंतु इससे भी अधिक दुःखद है कि उद्योगपतियों और सत्ताधारियों में इस घटना के बावजूद पश्चाताप की कोई भावना नहीं दिखी। हमारे मन में कतई शंका नहीं है कि कुछ उद्योगपति उन्हें अपने रास्ते से हटाना चाहते थे, क्योंकि नियोगी ने उनको देश के कानून के तहत मजदूरों को दी गयी सुविधाएँ देने के लिए ललकारा था। उनमें से किसने वास्तव में नियोगी की हत्या के लिए भाड़े

सुश्री आशा गुहा नियोगी की रिपोर्ट

थाना प्रभारी,

आरक्षी गृह राजहरा, म. प्र.

महोदय,

मैं आशा गुहा नियोगी पत्नी स्वर्गीय शंकर गुहा नियोगी, उम्र 40 वर्ष, निवास – मगोलीपारा, कैम्प – दल्ली राजहरा, पुलिस में प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करती हूँ कि :

मेरे पति की भिलाई में हमारे निवास, एम. आई. जी. I / 55 में 28.09.91 की सुबह 3:45 बजे, खिड़की से गोली मारकर हत्या कर दी गयी है। मेरे पति के पूर्व वक्तव्य के आधार पर उनको मारने के लिए भिलाई में षड्यंत्र रचा जा रहा था और इस षड्यंत्र के पीछे वे कुछ मालिकों का नाम भी लेते थे, जो इस प्रकार हैं :

कैलाशपति केडिया, मूलचंद शाह, अरविन्द शाह, नवीन शाह, बी. आर. जैन, एच. पी. खेतावत, विजय गुप्ता, कुलदीप गुप्ता, विनय केडिया आदि।

आपसे अनुरोध है कि इस रिपोर्ट के आधार पर मेरे पति के कातिलों के खिलाफ तुरंत उचित कार्रवाई करें।

दिनांक
30.09.1991

हस्ताक्षर
आशा गुहा नियोगी

उपरोक्त रिपोर्ट में इंगित उद्योगपति एवं उनके उद्योग

उद्योगपति	उद्योग
1. श्री मूलचंद शाह 2. श्री अरविन्द शाह 3. श्री नवीन शाह	सिम्पलेक्स उद्योग समूह, भिलाई-उरला-टेडेसरा
4. श्री कैलाशपति केडिया 5. श्री विनय केडिया	छत्तीसगढ़ डिस्टिलरीज़, कुम्हारी केडिया डिस्टिलरीज़, भिलाई
6. श्री बी. आर. जैन [1]	भिलाई इंजीनियरिंग कार्पोरेशन, भिलाई-उरला
7. श्री एच. पी. खेतावत	भिलाई वायर्स, भिलाई-उरला
8. श्री कुलदीप गुप्ता 9. श्री विजय गुप्ता	बीके इंजीनियरिंग समूह, भिलाई बीके सर्जिकल्स, उरला

[1] अध्यक्ष, भिलाई इंडस्ट्रीज एसोसिएशन

लाने के लिए विशेष अपील की गयी। ऐसा मानना भूल होगी कि नियोगी जैसे अनुभवी नेता को इन ज्ञापनों की निरर्थकता का पूर्वाभास नहीं रहा होगा, किंतु वे संविधान में उपलब्ध लोकतांत्रिक गुंजाइश को लगातार परखते रहने और उसके दायरे को बढ़ाने के सृजनात्मक तरीके खोजने को भी आवश्यक मानते थे। — स.

11 सितम्बर 1991 को नियोगी के नेतृत्व में छमुमो के एक प्रतिनिधिमंडल ने तत्कालीन राष्ट्रपति श्री आर. वेंकटरमन को 50,000 हस्ताक्षरों सहित एक ज्ञापन देकर अपील की कि भिलाई में उद्योगपतियों की हिंसक हरकतों पर रोक लगायी जाये। उक्त अपील यहाँ प्रस्तुत है।

प्रति,
महामहिम राष्ट्रपति महोदय,
भारत सरकार,
नयी दिल्ली

विषय :- मजदूरों की दीर्घकालीन समस्याओं का समाधान करने और भारतीय संविधान के
1) अनुच्छेद 21 के तहत 'जीवन एवं देह की सुरक्षा का अधिकार', एवं
2) अनुच्छेद 19 (1) (क), (ख) व (ग) के तहत मजदूर संगठन (ट्रेड यूनियन) बनाने का अधिकार

सुनिश्चित करने के लिए।

महामहिम,

आपको अत्यंत दुःख के साथ हम सूचित करते हैं कि मध्य प्रदेश के रायपुर, राजनांदगाँव, दुर्ग और भिलाई इलाके के चार-पाँच नव-धनाढ्य उद्योगपति अपने इंजीनियरिंग व फाउंड्री उद्योगों या शराब बनाने जैसे रासायनिक उद्योगों में कार्यरत मजदूरों का पिछले 25 वर्षों से भयंकर शोषण करते रहे हैं। अभी तक इन्होंने अपने कारखानों में मजदूरों के यूनियन बनाने के अधिकार को स्वीकार नहीं किया है। पहले मजदूर नेताओं को खरीद कर, फिर मजदूर नेताओं को जान से मारने की धमकी देकर और जब उससे भी कुछ नहीं निकला तो पुलिस की सहायता से मार-पीट करवाकर इन उद्योगपतियों ने मजदूरों द्वारा पूर्व में यूनियन बनाने की कोशिशों को कुचला है।

पिछले वर्ष इन उद्योगों के मजदूरों ने एक बार फिर से संगठन बनाया एवं मुख्यतः दो माँगें रखी हैं —

1) उद्योगों में जहाँ कार्य स्थायी किस्म का है, वहाँ मजदूरों को स्थायी किया जाये।
[ठेका मजदूरी (नियंत्रण एवं उन्मूलन) अधिनियम के अनुच्छेद 10 (क) के अनुसार।

हाथ बँटाया। ए. सी. सी. सीमेंट फैक्ट्री में छमुमो के नेतृत्व में मजदूरों की जीत होने के बाद दूसरे उद्योगों के मजदूरों ने भी तेजी से लाल-हरे झंडे तले एकजुट होना शुरू कर दिया था। भिलाई के मजदूरों को लेकर पंजीकृत की गयी चार यूनियनों में बड़े पैमाने पर मजदूरों द्वारा सदस्यता ले लेने के बावजूद उद्योगपतियों ने उन्हें मान्यता प्रदान नहीं की थी। उलटे उद्योगपतियों और उनकी हाँ-में-हाँ मिलाने वाली जेबी यूनियनों को मान्यता दे दी गयी। इस सिलसिले में श्रमायुक्त श्री पांडे का कथन गौरतलब है। उन्होंने जून 1992 में छमुमो के उपाध्यक्ष का. गणेशराम चौधरी से कहा था कि छमुमो के आंदोलन के दबाव में सिम्प्लेक्स उद्योग समूह ने कम-से-कम एटक की यूनियन को पहली बार मान्यता दी है।

छमुमो के प्रभाव को रोक पाने में असफल इन तरकीबों के बाद उद्योगपतियों ने तरह-तरह के मनगढ़ंत आरोप लगाकर मजदूरों की छँटनी शुरू कर दी। एक ही दिन में विभिन्न उद्योगों से सैकड़ों मजदूरों को निकाला गया। अब तक बर्खास्त किये गये मजदूरों की संख्या 4,200 तक पहुँच गयी है। इन मजदूरों का अपराध केवल इतना था कि वे छमुमो की यूनियनों की सदस्यता ले रहे थे। इसके बावजूद जब छमुमो के साथ मजदूरों के जुड़ाव की प्रक्रिया नहीं रुकी तो उन पर शारीरिक हमले शुरू किये गये। उद्योगपतियों की निजी सेनाओं, गुंडों तथा पुलिस ने मिल-जुल कर लगातार महिला-पुरुष मजदूरों और उनके वरिष्ठ साथियों पर तलवारों, लाठियों, लोहे के सरियों और चाकुओं से घातक हमले किये। छमुमो का आँकड़ा है कि मार्च 1990 से लेकर आज तक इन हमलों में नियोगी के अलावा चार अन्य साथियों को भी अपनी जान गँवानी पड़ी। सैकड़ों मजदूर गम्भीर रूप से घायल हुए और कई तो आज तक स्वस्थ नहीं हो पाये हैं। भिलाई में औद्योगिक अशांति का अध्ययन करने हेतु गठित **नागरिक समिति** की मार्च 1992 में प्रसारित रपट, '**औद्योगिक कोहरे के पीछे**' में आंदोलनरत मजदूरों पर पुलिस के समर्थन में (और सीधे पुलिस के द्वारा भी) उद्योगपतियों के इशारे पर सक्रिय गुंडों द्वारा की गयी बर्बर हिंसा के आँकड़े दिये गये हैं। इनको देखकर न केवल रोंगटे खड़े हो जाते हैं, बल्कि भारत के संविधान और लोकतंत्र पर किये जा रहे कुठाराघात भी उजागर होते हैं।

मजदूरों पर दमन के इन हथकंडों से जब उद्योगपतियों को कोई फायदा नहीं हुआ तो उन्होंने छमुमो के वरिष्ठतम साथी शंकर गुहा नियोगी पर सरकार के साथ मिलकर हमले शुरू किये। सबसे पहले 4 फरवरी 1991 को उन्हें बालोद (जिला दुर्ग) तथा राजनांदगाँव में लम्बित 5 से 9 साल पुराने प्रकरणों में न्यायालय से अनुपस्थित रहने के आरोप में गिरफ्तार कर लिया गया।

भिलाई में छमुमो के अपेक्षाकृत ताजा पैर जमाते आंदोलन से उसके प्रमुख नेता को कानून के सहारे दूर रखने का षड्यंत्र सिर्फ दो महीने ही चल पाया। 27 मार्च 1991 को उच्च न्यायालय ने नियोगी को जमानत पर रिहा करने का आदेश दिया जिसके कारण 3 अप्रैल 1991 को शासन नियोगी को रिहा करने को बाध्य हुआ। उच्च न्यायालय के आदेश में स्पष्ट कहा गया था, "चूँकि आवेदक एक प्रतिष्ठित श्रमिक नेता है, इसलिए यह न्यायालय उसे व्यक्तिगत मुचलके पर रिहा करने का आदेश देता है।" इस आदेश में यह भी कहा गया, "नियोगी एक जाना-माना मजदूर नेता है, जो समाज के निचले तबके के हित में कार्यरत है। उसे जेल में ठूँसकर रखना न्याय के हित में कतई नहीं होगा।"

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा
की प्रेस विज्ञप्ति से उद्धृत कुछ अंश

" नियोगीजी कल रात लगभग दो बजे हुडको स्थित अपने आवास पर लौटे थे। जब वे अपने कमरे में सो रहे थे तो प्रातः लगभग 3:45 बजे हत्यारों ने खिड़की से वार कर उनके शरीर में बंदूक की छह गोलियाँ उतार दीं। बगल के कमरे में सोये हुए उनके साथी बहलराम साहू बंदूक की आवाज सुन कर उनके कमरे की ओर लपके। इसी बीच उन्हें नियोगीजी की आवाज सुनायी दी, ' ओ, मा गो '। उन्होंने अंदर जाकर देखा कि नियोगीजी की गर्दन के नीचे घाव हुआ था और उनके सिर और मुँह से खून निकल रहा था और वे छटपटा रहे थे। पड़ोसियों की मदद से और इस घर से लगभग एक किलोमीटर दूर यूनियन दफ्तर में सोये हुए अन्य सदस्यों की मदद से नियोगीजी को भिलाई इस्पात संयंत्र के सेक्टर-9 स्थित अस्पताल पहुँचाया गया, जहाँ डाक्टरों ने उन्हें मृत घोषित कर दिया। "

" इस अंचल के हर जागरूक नागरिक का यह मानना है कि इस जघन्य हत्या के पीछे उद्योगपतियों के उस गिरोह का हाथ है जिनके विरुद्ध नियोगीजी के नेतृत्व में मजदूर पिछले एक वर्ष से आंदोलनरत हैं। छत्तीसगढ़ की उद्योग नगरी — भिलाई — में मजदूर आंदोलन को कुचलने के लिए [illegible] का हर [illegible] सकता था, सिवाय इसके कि वे मुक्ति की [illegible] आवाज को बंदूक के जरिये [illegible] कर दें। छमुमो इस बात पर अडिग है कि छत्तीसगढ़ के नव-धनाढ्य उद्योगपति-माफिया ही इस हत्या के लिए जिम्मेदार हैं। पिछले एक वर्ष से नियोगी-समर्थित यूनियनों के पदाधिकारियों पर उद्योगपतियों के किराये के गुंडों द्वारा प्राणघातक हमले किये गये। फिर भी प्रदेश में भाजपा सरकार चुप्पी साधे रही। इसलिए इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि नियोगीजी की हत्या के पीछे एक सुनियोजित साजिश है जिसमें सरकार, सत्तारूढ़ पार्टी और नव-धनाढ्य उद्योगपतियों का हाथ है। "

" छमुमो अपने सभी सदस्यों से शांति बनाये रखने की अपील करता है। नियोगीजी की अंत्येष्टि रविवार 29.09.91 को प्रातः 10 बजे दल्ली राजहरा में होगी, जहाँ से उन्होंने सन् 1977 में एक महत्वपूर्ण मजदूर संगठन खड़ा करके देश में एक विशेष योगदान किया है। आज सायंकाल 7:00 बजे भिलाई [illegible] सेंटर में नियोगीजी का शव अंतिम दर्शन के लिए रखा जायेगा। "

भिलाई,
28 सितम्बर 1991

जनकलाल ठाकुर
अध्यक्ष
छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा

भिलाई गोलीकांड के शहीद

1. **असीम दास,** उम्र – 36 वर्ष, सिम्पलेक्स इंजीनियरिंग में मशीन आपरेटर।
2. **के. एन. प्रदीप कुट्टी,** उम्र – 25 वर्ष, केडिया डिस्टिलरीज़ में इलेक्ट्रीशियन।
3. **केशव प्रसाद गुप्ता,** उम्र – 43 वर्ष, ए. सी. सी. ठेकेदार लक्ष्मीदास के ड्राइवर।
4. **किशोरी चौधरी,** उम्र – 25 वर्ष, केडिया डिस्टिलरीज़ में श्रमिक।
5. **लक्ष्मण वर्मा,** उम्र – 32 वर्ष, बी. ई. सी. कम्पनी में लेथ मशीन आपरेटर।
6. **मधुकर चौधरी,** उम्र – 55 वर्ष, सेलून दुकानदार।
7. **कुमार वर्मा,** उम्र – 25 वर्ष, केडिया डिस्टिलरीज़ में श्रमिक।
8. **रामाज्ञा चौहान,** उम्र – 20 वर्ष, ट्रेक्टर ड्राइवर।
9. **प्रेम नारायण,** उम्र – 25 वर्ष, छत्तीसगढ़ डिस्टिलरीज़ में श्रमिक।
10. **जोगो यादव,** उम्र – 40 वर्ष, रिक्शा चालक।
11. **पुराणिक लाल,** उम्र – 32 वर्ष, छत्तीसगढ़ डिस्टिलरीज़ में श्रमिक।
12. **मनहरण वर्मा,** उम्र – 32 वर्ष, ए. सी. सी. में श्रमिक।
13. **इंद्रदेव चौहान,** उम्र – 25 वर्ष, केडिया डिस्टिलरीज़ के निलम्बित श्रमिक।
14. **रामकृपाल मिश्र,** उम्र – 32 वर्ष, केडिया डिस्टिलरीज़ में श्रमिक।
15. **हिरऊ राम,** उम्र – 45 वर्ष, ए. सी. सी. में श्रमिक।
16. **धीरपाल सिंह ठाकुर,** उम्र – 27 वर्ष, ए. सी. सी. में श्रमिक।[1]

शहीदों ! लाल जोहार, लाल जोहार !!

शहीद अमर है / हरेन्द्र नाथ चट्टोपाध्याय[2]

शहीद अमर है
वो जिंदा है जनता के बीच
जनता जन्म देती है शहीदों को
ओ हत्यारो !
तुम जान ले सकते हो विप्लवियों की
लेकिन
क्या तुम मार सकते हो
विचारों को।

(मूल अंग्रेजी से नीलिमा शर्मा एवं ब्रजमोहन द्वारा अनूदित कविता का अंश।)

---

[1] गोली के जख्मों से उत्पन्न बिमारियों के फलस्वरूप शहीद अस्पताल में दि. 18.01.93 को मृत्यु।

[2] यह कविता अविभाजित भाकपा के नेतृत्व में चले तेलंगाना सशस्त्र संघर्ष के संदर्भ में लिखी गयी थी। नियोगी की शहादत के बाद अक्तूबर 1991 में निशांत नाट्य मंच (दिल्ली) की ओर से साथी शम्सुल इस्लाम ने दल्ली राजहरा जाकर इसे कपड़े की पट्टी पर लिखकर यूनियन हाल में नियोगी के अस्थि कलश के पीछे दीवार पर टाँग दिया (देखिये खंड चित्र, पृ. 561)। निशांत नाट्य मंच की यह श्रद्धांजलि आज भी छमुमो के मजदूरों को तेलंगाना से भिलाई तक के संघर्षों के अनवरत सिलसिले और उनमें हुई अनगिनत कुर्बानियों की याद दिला रही है।

सदियों पुराना तर्क दिया जाता है कि 'मिल तो चालू है; श्रमिकों को काम पर आना चाहिए'।..... पर अधिकारीगण अपनी जिम्मेदारी को राजनांदगाँव से भोपाल और भोपाल से दिल्ली की ओर टरकाते रहे हैं।..... समस्या की जड़ों तक न जाकर उसे केवल 'कानून और व्यवस्था' या 'राष्ट्रीय सुरक्षा' या 'राष्ट्रीय एकता' और कुछ नहीं तो 'विदेशी हाथ' की संज्ञा देकर निरर्थक बना दिया जाता है। इस लम्बी हड़ताल के दौरान कोई भी सत्ताधारी राजनीतिज्ञ पीड़ितों अथवा प्रभावित क्षेत्रों में आज तक नहीं गया।..... जनता से दूरी बढ़ने पर ही सत्ताधारी अमानवीय और क्रूर हथकंडों को अपनाते हैं। यही कारण था कि प्रशासन ने संघर्षरत मजदूरों और किसानों पर संगठित हिंसा का उपयोग किया। यह संगठित हिंसा उस त्रिकोणीय सम्बंध का परिणाम है जो प्रशासन, प्रबंधक और राजनैतिक दलों के बीच बढ़ रहा है। पुलिस, राजकीय दमन का केवल एक प्रतीक मात्र ही है। इस दमनात्मक रवैये ने हड़ताली मजदूरों के मन में असुरक्षा और डर पनपाने के बजाय कुछ नये क्रांति-दूत पैदा कर दिये हैं। अब धीरे-धीरे लोग यह महसूस करने लगे हैं कि इस व्यवस्था के तहत सामाजिक न्याय गरीबों की चौखट पर नहीं पहुँचाया जा सकता।..... इसका असर यह है कि उनमें एक नयी राजनीतिक चेतना का संचार हो रहा है। खासकर नयी पीढ़ी के लोगों के बीच, जो राज्य की संगठित हिंसा और सत्ताभोगियों के हथकंडों का शिकार बनकर आज की व्यवस्था का सही रूप पहचान रहे हैं। वे आशा करते हैं कि इस संघर्ष के माध्यम से वे एक नया विकल्प ढूँढ़ने में सफल होंगे।

(म. प्र. लोक स्वतंत्रता संगठन, यानी म. प्र. पी. यू. सी. एल., की रपट, 'राजनांदगाँव में श्वेत आतंक' से साभार।)

चौथी शहादत

शहादत की तारीख — 28 सितम्बर 1991

शहादत स्थल — भिलाई (सेक्टर-9 की हुडको कालोनी का मकान)।

तत्कालीन राज्य सरकार — भारतीय जनता पार्टी का शासन; मुख्य मंत्री — श्री सुन्दरलाल पटवा।

संघर्ष — भिलाई आंदोलन के बढ़ते हुए दबाव के कारण नव-धनाढ्य उद्योगपतियों के इशारे पर आंदोलन के वरिष्ठतम साथी की उनके घर में सोते हुए भाड़े के गुंडों द्वारा गोली दाग कर हत्या। *(पूरे विवरण के लिए खंड नौ देखिये।)*

शहीद संख्या — एक।

शहीद

शंकर गुहा नियोगी, उम्र — 49 वर्ष, छमुमो के जनप्रिय नेता

तत्कालीन राज्य सरकार — कांग्रेस (इ) का शासन; मुख्य मंत्री — श्री अर्जुन सिंह।

संदर्भ — दि. 27.09.80 को दोपहर में खदानों के पास के जंगल में ड्यूटी पर तैनात केंद्रीय आद्योगिक सुरक्षा बल (सी. आई. एस. एफ.) के जवानों द्वारा एक नाबालिग आदिवासी लड़की के साथ बलात्कार के प्रयास का खदान मजदूरों (महिला मजदूरों की अगुवाई में) द्वारा विरोध करने और अपराधी जवानों की गिरफ्तारी की माँग करने पर 'बल' के जवानों द्वारा मजदूरों पर गैर-कानूनी गोली चालन।

शहीद संख्या — एक।

शहीद

आशाराम, उम्र — 30 वर्ष, लकड़हारा

सितम्बर 1980 गोली चालन पर जन समिति की रपट के अंश

उक्त गोली चालन की घटना की जाँच करने के लिए नागरिक स्वतंत्रता एवं जनतांत्रिक अधिकारों की जन समिति (रायपुर) ने एक जाँच आयोजित की। जाँच रपट के कुछ अंश यहाँ उद्धृत किये जा रहे हैं। — स.

केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल (सी. आई. एस. एफ.) के जवानों द्वारा गोलीबारी और शीलभंग का यह पहला मौका नहीं है। इसके पीछे गम्भीर सामाजिक और पारिवारिक कारण हैं। . . . . . जवानों को बैरक में इस प्रकार रखा जाता है कि वे स्वस्थ मानवीय जीवन नहीं जी सकते। उनके लिए मनोरंजन के उचित साधन उपलब्ध नहीं रहते। यह स्वाभाविक ही है कि ऐसी परिस्थितियों में उनकी पाशविक प्रवृत्तियाँ जागृत होती हैं और वे यौन पूर्ति के लिए बलात्कार का सहारा लेते हैं।

जिस प्रकार के सम्बंध जवानों के मजदूरों के साथ होते हैं, उन सम्बंधों में भी अमानवीय तथा निर्ममता के सम्बंधों को महत्व दिया जाता है और इस प्रकार की घटनाओं को जवान पुरुष का पौरुष कहकर अधिकारी और सहयोगियों द्वारा भुला दिया जाता है। . . . . . दल्ली राजहरा की घटना केवल वहाँ के सी. आई. एस. एफ. के जवानों की क्रूरता और निर्ममता का परिचायक नहीं है। वह हमारे औद्योगीकरण के चेहरे पर काला धब्बा है . . . . . इस प्रकार के अर्द्धसैनिक संगठनों में स्थानीय लोगों को नहीं रखा जाता जिससे कि वे मजदूरों के प्रति मित्रता और सहानुभूतिपूर्ण रवैया न अपनावें, समय आने पर निर्ममतापूर्वक कुचलने से इंकार न करें।

शोषण, मजदूरों और सी. आई. एस. एफ. के जवानों, दोनों का किया जा रहा है। विडम्बना यह है कि एक शोषित वर्ग के सदस्य दूसरे शोषित वर्ग के सदस्यों का दमन करते

शहीद

1. अनुसूइया बाई
2. सुदामा (बालक)
3. जगदीश (यूनियन उपाध्यक्ष)
4. टीभूराम
5. सोनउदास
6. रामदयाल
7. हेमनाथ
8. समारू
9. पुनऊराम
10. डेहरलाल
11. जयलाल

यूनियन दफ्तर के बाहर शहीद स्तम्भ का आलेख

तुम्हें
जिन कसाइयों ने कत्ल किया,
आज की
अदालत उनकी ही है।
हम तुम्हारे
कत्ल का मुकदमा कातिलों के
हाथ में न देंगे।
हम लड़ेंगे, हम जूझेंगे, हम जीतेंगे,
हमारी अदालत
कसाइयों को सजा देगी —
सजा-ए-मौत !

रज्जाक आयोग की रपट के अंश

जून 1977 के गोलीकांड की न्यायिक जाँच के लिए दि. 04.06.77 को तत्कालीन राष्ट्रपति शासन ने अधिसूचना जारी करके म. प्र. उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश न्यायमूर्ति श्री एम. ए. रज्जाक की अध्यक्षता में एक-सदस्यीय जाँच आयोग गठित किया। इस आयोग ने दि. 26.02.79 को अपनी रपट शासन को पेश की। कानून के अनुसार रपट को अगस्त 1979 तक विधान सभा में प्रस्तुत करना जरूरी था। परंतु लगभग चार सालों तक क्रमशः तीन मुख्य मंत्रियों — श्री वीरेन्द्र कुमार सखलेचा, श्री सुन्दरलाल पटवा और श्री अर्जुन सिंह — की सरकारें यह करने का साहस नहीं जुटा पायीं। अंततः विधान सभा में उठे कई प्रश्नों के बाद दि. 17.03.83 को राज्य मंत्रीमंडल ने इसे विधान सभा में पेश करने की स्वीकृति दी। सरकार की आलोचना करने वाले रपट के अंशों को यहाँ उद्धृत किया जा रहा है।

— स.

अध्याय — दस

क) रात के गोली चालन के मामले में गोली चालन के ठीक पहले की स्थिति से निपटने के लिए पर्याप्त कदम उठाये नहीं गये थे।..... यह सावधानी नहीं बरती जा सकी कि किसी निर्दोष व्यक्ति को चोट न लग जाये। इसके साथ ही नियंत्रित गोली चालन, अर्थात् घुटने के नीचे गोली मारना ताकि भीड़ के अगुवा नेताओं और हिंसक लोगों को अक्षम बनाया जा सके,

इस देश में पिछले चालीस वर्षों में हमने कई लहरों को देखा है।

आजादी लहर गयी तो नेहरू लहर आयी, गरीबी हटाओ लहर के बाद जनता लहर, इंदिरा लहर, राजीव लहर, और अब हम देख रहे हैं वी. पी. लहर। लेकिन आम जनता की हालत में इससे भी कोई विशेष अंतर आने वाला नहीं है बल्कि हमें जो बुनियादी सवाल पूछने हैं, वे हैं कि आजादी का असली मतलब क्या है ? जब तक देश के लोग अपने पैरों पर खड़े नहीं हो जाते, तब तक देश आत्मनिर्भर कैसे बन सकता है ? देश को सही रूप में आत्मनिर्भर व आजाद बनाने के लिए क्या करना होगा ?

इतिहास के इस निर्णायक मोड़ पर मैं नीचे लिखे सवालों के आधार पर साथियों से एक विकल्प खोजने की अपेक्षा करता हूँ –

1. औद्योगिक विकास का स्वरूप क्या हो ? किस हद तक तकनालाजी व मशीनीकरण द्वारा जनता की बुनियादी समस्याओं का हल किया जा सकता है ? कपड़ा, इस्पात, रेल्वे, पटसन आदि उद्योगों के लिए कैसी विशेष नीतियों की जरूरत है ?
2. किस तरह से कृषि-योग्य भूमि के कम-से-कम 50 प्रतिशत हिस्से पर सिंचाई उपलब्ध करायी जा सकती है। कृषि उपज का मूल्य-निर्धारण किस तरह से हो ?
3. किस तरह से देश की विभिन्न उप-राष्ट्रीयताएँ अपनी आन और पहचान को सुरक्षित रख सकती हैं और किस तरह उनके बीच एकता बनायी जा सकती है ?
4. हमारी स्वास्थ्य नीति क्या होनी चाहिए ?
5. हमारी पर्यावरण नीति क्या होनी चाहिए ?
6. हमारी शिक्षा नीति क्या होनी चाहिए ?
7. आयात-निर्यात के बारे में हमारी नीति क्या होनी चाहिए ? और पड़ोसी देशों से सम्बंधों के विषय में क्या नीति होनी चाहिए ?
8. आदिवासी पिछड़ों व इलेक्ट्रॉनिक साधनों जैसी विपरीत स्थितियों को ध्यान में रखते हुए हमारे संचार साधन कैसे होने चाहिए ?
9. हमारी रोजगार नीति क्या होनी चाहिए ?
10. लोगों के सांस्कृतिक-उद्भव के लिए क्या कार्यक्रम होने चाहिए ?

मुझे विश्वास है कि यदि उपरोक्त सवालों के जवाब मिल जाते हैं तो साम्प्रदायिकता, बेरोजगारी, आतंकवाद, भ्रष्टाचार जैसी समस्याएँ भी हल की जा सकती हैं। ये तो बीमार सामाजिक-आर्थिक ढाँचे के लक्षण मात्र हैं।

अब समय आ गया है कि विभिन्न क्षेत्रों में जन आंदोलनों से जुड़े साथी लोग इन मुद्दों पर चर्चा करें और विचारों व सुझावों के साथ आगे आयें ताकि हम सब एक होकर, इस लहर की राजनीति की जगह एक सही विकल्प जनता के सामने ला सकें।

आपका शुभचिंतक

(शंकर गुहा नियोगी)

(जनवादी सूचना केंद्र, रायपुर, के सौजन्य से।)

आजादी का असली मतलब क्या है ?

इस पत्र की निश्चित तारीख हम खोज नहीं सके हैं, परंतु अनुमान है कि यह सन् 1988-89 के दौरान कभी लिखा गया होगा। यही वह समय था जब नियोगी दल्ली राजहरा की व्यस्तताओं के बावजूद एक बार फिर राष्ट्रव्यापी प्रक्रिया की पहलकदमी में लगे हुए थे। यह पत्र मध्य प्रदेश और देश भर के कई संगठनों व अन्य प्रगतिशील व्यक्तियों को सम्बोधित है। —स.

दल्ली राजहरा,
जिला दुर्ग, म. प्र.

प्रिय साथियो ,

चालीस वर्ष पहले जब देश ' आजाद ' हुआ, तो लोगों के मन में एक सपना जगा था। आम जनता को आशा थी कि आजादी के साथ उन्हें आर्थिक आजादी मिलेगी, न्याय मिलेगा। सोचा था कि उत्पादन का फल सबको मिलेगा। तभी तो राजनैतिक आजादी का कोई मतलब है।

लेकिन आज, चालीस साल बाद कड़वे यथार्थ ने उस स्वप्न को धूमिल कर दिया। अंग्रेजी राज खत्म हुआ तो आया कांग्रेसी राज। बीच के कुछ वर्षों को छोड़कर कांग्रेसी राज ही चला है। इस दौरान कांग्रेस सरकार के पास पूरा मौका था कि वह आजादी के समय के अपने लक्ष्य लागू कर सके। मगर सच्चाई यह है कि आज देश में 10 करोड़ बेरोजगार हैं, 50 करोड़ सूखे या बाढ़ से पीड़ित, 50 लाख बंधुआ मजदूर हैं। परम्परागत उद्योग खत्म हो रहे हैं और जो तकनालाजी आयात की जा रही है वह जनता के हित में नहीं है, क्योंकि उससे आम जनता की हालत नहीं सुधरती। पिछले एक दशक से जो कारखाने लग रहे हैं वे विदेशी पूँजी को जोड़ने के अलावा और कुछ नहीं हैं। साधारण दवा से लेकर आधुनिकतम कम्प्यूटरों तक का उत्पादन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के हाथ में है।

हमारे विश्वविद्यालयों से बेहतरीन छात्र विदेश जा रहे हैं। स्वास्थ्य के क्षेत्र में देखते हैं कि हजारों लोग कुपोषण के शिकार हो रहे हैं व अन्य हजारों खूनी पेचिश व मलेरिया के। लेकिन जनता को, पूरे भोजन की बात तो दूर, पीने के साफ पानी के लिए भी लगता है 21वीं सदी का इंतजार करना पड़ेगा।

इस स्थिति में शहरी मध्यम वर्ग ' बोफोर्स ' व ' फेयरफैक्स ' कांड व उच्च स्तर पर हो रहे भ्रष्टाचार जैसे मामलों को लेकर उत्तेजित है।

12-13 दिसम्बर 1980 को भारत के विभिन्न प्रांतों से आये आदिवासी-हरिजन-दलित वर्ग एवं मजदूर-किसानों तथा जुझारू संघर्षों के अगुवाओं की एक बैठक पटना (बिहार) में हुई। बैठक की अध्यक्षता श्री शिबु सोरेन, संसद सदस्य, ने की। बैठक में सर्वसम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किया गया —

1. आज सारे भारत में अर्द्ध-सामंती एवं अर्द्ध-औपनिवेशिक अर्थनीति से विभिन्न जन-जातियों तथा मेहनतकश मजदूरों का जीवन त्राहि-त्राहि कर उठा है और मेहनतकश मजदूर-किसानों के जीवन में घोर निराशा घर कर गयी है। कमर-तोड़ महँगाई, बेरोजगारी एवं सर्वोपरि, भूख के कष्ट से मुक्ति पाने की तीव्र इच्छा आम जनता में बढ़ती ही जा रही है।

2. प्रतिक्रियावादी राज्य मशीनरी, विभिन्न पार्टियाँ — कांग्रेस (अर्स), कांग्रेस (इ), जनता, सी. पी. आई. , सी. पी. एम. आदि — की सील-मुहर लगवाकर तानाशाही कानून एवं बल प्रयोग द्वारा देश में बढ़ते हुए जनवादी संघर्षों का गला दबाकर उसे खत्म करने पर तुली हुई है। रोज अखबारों में पुलिस अत्याचार एवं गोलीकांड की घटनाएँ उसके ' जीते-जागते ' सबूत हैं।

3. आज तक भारत के दलित वर्ग (आदिवासी, हरिजन एवं मेहनतकश मजदूर-किसान) की आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक मुक्ति के तमाम प्रयासों को शोषक वर्ग की राज्य सत्ता ने इसलिए कुचल डाला है क्योंकि इन उत्पीड़ित जाति एवं मजदूर वर्ग के पास वैज्ञानिक सिद्धांत एवं ईमानदार नेतृत्व का अभाव था।

4. कम्युनिस्ट पार्टी ने भारत के मेहनतकश एवं दलित उत्पीड़ित वर्ग को सही नेतृत्व देने में अपने को असफल पाया। इस पार्टी ने दरअसल निम्न पूँजीपति विचारधारा के धारक एवं वाहक का काम किया है। इस पार्टी में मजदूर वर्ग के अगुवाओं का समावेश अब तक नहीं किया गया है। कम्युनिस्ट पार्टी का निम्न पूँजीवादी नेतृत्व अंतर्राष्ट्रीयतावाद की दुहाई देकर प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सामाजिक साम्राज्यवाद का पिछलग्गू बनकर रह गया है।

5. आज अस्त-व्यस्त अर्थनीति एवं राजनैतिक अस्थिरता के काल में स्थिर सरकार का भुलावा देकर तानाशाही-नौकरशाही दलाल पूँजीवादियों का दिल जीतने के लिए विभिन्न राजनीतिक दल आपस में होड़ लगा रहे हैं। का. चारु मजुमदार के नेतृत्व के दौरान भारत के तमाम संशोधनवादियों एवं प्रतिक्रियावादियों के दिलों में धड़कन जरूर पैदा हुई थी एवं देश के लाखों नौजवानों, किसानों व मजदूरों के दिलों में आत्मत्याग की भावना पैदा हुई थी, फिर भी आखिर वे भी नये क्रांतिकारी आंदोलन को सही दिशा नहीं दे पाये।

6. सदस्यों ने बैठक में भारत के विशेष राजनैतिक एवं आर्थिक पहलुओं पर ध्यान दिया। सदस्यों ने भारत में अब तक घटित किसान विद्रोह, आदिवासी विद्रोह, दलित एवं मजदूर आंदोलन के बारे में गहराई से विचार किया। विगत क्रांतिकारी आंदोलनों के बारे में भी गहराई से विचार किया। इन क्रांतिकारी संघर्षों से खुद शिक्षित होने एवं जनता को शिक्षित करने की इच्छा प्रकट की।

7. बैठक में भारत की विभिन्न उत्पीड़ित जाति-सत्ताओं [1] की एक स्वावलम्बी नयी

[1] सम्भवतः इससे आशय भारत की विभिन्न ' राष्ट्रीयताओं ' अथवा ' उप-राष्ट्रीयताओं ' से था। इस अवधारणा की व्याख्या के लिए खंड तीन में नियोगी द्वारा लिखित ' छत्तीसगढ़ और राष्ट्रीयता का प्रश्न ' शीर्षक का लेख (पृ. 135-142) देखिये।

के कई घरों में पुलिस ने ऐसे ही घुस कर मारा है और कई जगह मकान मालिकों को भी पीटा गया है। चारों तरफ कर्फ्यु लगा था। घायल लोग घर के अंदर ही कराह रहे थे। फिर हम लोगों ने भिलाई के शम्भू डाक्टर से बातचीत की और कई बच्चों, महिलाओं व पुरुषों का वहीं इलाज हुआ। शारदापारा में हम 98 लोग थे। हमें शारदापारा के लोगों ने चावल चंदा करके चार दिन तक खिलाया। सब कोई अपने-अपने घरों में सुलाते थे। सब परेशान रहते थे क्योंकि किसी का बच्चा, किसी का पति, किसी की पत्नी नहीं मिल रहे थे। कर्फ्यु के कारण एक-दूसरे से नहीं मिल पा रहे थे। क्योंकि 1 जुलाई को जितनी पुलिस थी उससे कहीं और ज्यादा पुलिस आ गयी थी। पुलिस गलियों में घूमती थी। तीन तारीख को एक महिला नहा रही थी, तब पुलिस ने उसे मारा। मैदान गये हुए लोगों को भी वे दौड़ा-दौड़ाकर मारते थे।

भिलाई में जिस कमरे में मैं थी उसमें टेडेसरा की जानकीबाई भी थी। उसका पूरा शरीर लाठी की मार से फूट गया था तथा हाथ में फ्रेक्चर हो गया था। उसने बताया कि गोली चालन की रात में हमारी पिटाई के बाद दो महिलाएँ मर गयी थीं। रात भर 28 महिलाओं और उनके साथ 9 बच्चों को बिना खिलाये-पिलाये भिलाई की पुलिस चौकियों में घुमाया गया तथा 2 जुलाई की सुबह 7 बजे दुर्ग जेल में डाला गया। इनमें जो महिला-पुरुष घायल हुए थे और जिनका सिर फटा था उन्हें सिर्फ पट्टी बाँधी गयी थी। 1 जुलाई की रात से 10 जुलाई तक उनको कोई इलाज नहीं दिया गया। जेल में भी कोई खाना-पीना ठीक से नहीं देता था। 8 जुलाई को 19 महिलाओं व 7 बच्चों को रात 12 बजे घर छोड़ने के बहाने सेंट्रल जेल में लाया गया। और 2 दिन रखने के बाद 10 तारीख की रात 9:30 बजे छोड़ दिया गया। इसकी सूचना किसी को नहीं दी गयी।

केडिया डिस्टिलरीज़ में काम करने वाला एक तीस वर्ष का मजदूर कुमार वर्मा शहीद हुआ। हमने उसके घर जाकर बात की। बड़े गर्व से शहीद कुमार वर्मा के माता-पिता ने कहा कि हमारा बेटा मरा नहीं, अमर हुआ है। वह अपने अधिकार के लिए लड़ते-लड़ते शहीद हो गया। कुमार वर्मा की माँ बोल रही थी कि मेरी बहू की दोबारा शादी मैं ऐसे संघर्षशील मजदूर से करूँगी जो आखिरी दम तक लड़ता रहे।

कर्फ्यु में ढील के समय मैं जब करुणामयी अस्पताल गयी, उस समय आठ पुलिसवालों से मिली जो माना में ट्रेनिंग ले रहे हैं। ये लोग दंतेवाड़ा (बस्तर) के हैं। उनसे हल्बी भाषा में मैंने बात की। मैंने उनसे कहा कि पुलिसवाले बहुत बेदर्द होते हैं। इंसान को इंसान से मरवाने की ऐसी नौकरी मैं कभी नहीं करूँगी। तो इसके जवाब में पुलिस के जवानों ने कहा कि दीदी, हम भी इंसान हैं। मारना नहीं चाहते। जब हम भागते थे। तो हमारे अधिकारी हमको पीछे से मार-मारकर जनता को मारने के लिए खदेड़ते थे।

अश्रुगैस, लाठी चार्ज और गोली चालन के दौरान महिला पुलिस का इस्तेमाल नहीं हुआ। वे डंडा पकड़कर खड़ी-खड़ी चुपचाप देखती रहीं।

❑

(भिलाई गोलीकांड पर राकेश दीवान की शुरूआती रपट, 'लहूलुहान नज़ारों से उठते सवाल', अगस्त 1992, से संशोधित एवं साभार।)

भिलाई नरसंहार

राजिम तांडी [1]

बाईस माह से छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के नेतृत्व में लड़ रहे भिलाई के निजी कारखानों के मजदूरों ने सिर्फ इज्जत के साथ दो रोटी की माँग की थी, किंतु भिलाई के उद्योगपतियों और पटवा प्रशासन ने मिलकर उन्हें बंदूक की गोली दी। 1 जुलाई 1992 की सुबह 9:15 बजे जनकलाल ठाकुर, भीमराव बाँगड़े और अनूप सिंह के नेतृत्व में हम लाल मैदान छोड़कर अपना अगला पड़ाव रेल पटरी [2] मानकर शांतिपूर्वक बैठ गये। यह हमारा पाँचवा पड़ाव था। इसके पहले हम जामुल, शारदापारा, छावनी और लाल मैदान में पड़ाव डाल चुके थे।

हमारे नेताओं और मजदूरों को कोई शौक नहीं था रेल की पटरी पर बैठने का। किंतु उद्योगपतियों और सरकार ने हमें मजबूर कर दिया कि हम 'करो या मरो' की सीधी कार्रवाई के लिए रेल की पटरी पर जा बैठे और हमारे कुछ लोग गोली का निशाना बने। उस दिन की कड़ी धूप और वर्षा में हम पाँच हजार मजदूर, महिलाओं और बच्चों के साथ 'नियोगीजी का रास्ता अमल करो', 'शहीदों का रास्ता अमल करो' आदि नारे लगाते हुए रेल की पटरी के पास पहुँचे। उस समय रायपुर की ओर से आने वाली लोकल और दुर्ग की ओर जाने वाली टाटा नगर-गोंदिया पैसेंजर स्टेशन पर पहुँची थी। किंतु हम लोगों ने उसे निकल जाने दिया।

उसके बाद हम लोग क्षेत्रवार आगे महिला और बच्चे, पीछे पुरुष, कतार से बैठ गये और क्रांति के गीत गाते और नारे लगाते रहे। रेल्वे स्टेशन की तरफ सारनाथ एक्सप्रेस खड़ी थी तथा पीछे की तरफ माल गाड़ी। डेढ़ बजे तक कोई अधिकारी हमसे मिलने नहीं आया, बल्कि भारी संख्या में पुलिस की भीड़ लगने लगी जो मजदूरों को चारों ओर से घेरे हुई थी। करीब दो बजे कलेक्टर व एस. पी. पटरी पर पहुँचे और बोले कि बीस मिनट के अंदर पटरी छोड़ो, नहीं तो लाठी चार्ज होगा। उस समय बाँगड़ेजी ने हम सभी लोगों को बताया कि यहाँ का प्रशासन हमारी माँगों के बदले में हमें लाठी से पीटना चाहता है। तब सब मजदूरों ने कहा कि हम लाठी खाने को तैयार हैं पर बिना माँगों की मंजूरी के नहीं जायेंगे। एस. पी. और कलेक्टर ने जनकलालजी और का. अनूप सिंह को बातचीत के लिए बुलवाया। यह उनकी चाल थी कि इनको बातचीत के बहाने बुलाकर गिरफ्तार कर लें। श्री ठाकुर ने कहा, "इन बाईस महीनों के दौरान हमने बहुत बात की है, ज्ञापन दिये हैं, रैली व भूख हड़ताल की है, राष्ट्रपति के पास गये हैं, सभी मंत्रियों को अपना दुःख सुनाया है। फिर भी आज तक कोई समझौता नहीं हुआ। यदि आप लोग कहते हैं तो हमारे प्रतिनिधिमंडल के पाँच सदस्य[3] आप लोगों से चर्चा करेंगे।" छमुमो ने स्पष्ट कर

---

[1] सुश्री राजिम तांडी छत्तीसगढ़ आंदोलन से जुड़ी हुई सक्रिय कार्यकर्ता हैं। जुलाई 1992 के भिलाई गोलीकांड (जिसमें 16 लोग शहीद हुए) के दौरान वे मजदूरों के साथ रेल पटरी पर सत्याग्रह में शामिल थीं और स्वयं पुलिसिया हिंसा में घायल हुईं। घटना के तत्काल बाद उनके द्वारा लिखे गये वक्तव्य को हम जस-का-तस प्रस्तुत कर रहे हैं। — स.

[2] बम्बई-हावड़ा रेल मार्ग पर भिलाई पावर हाऊस रेल्वे स्टेशन के पास।

[3] का. नीलरतन घोषाल, का. शेख अंसार, डॉ. शैवाल जाना, का. मेघनाथ वैष्णव और का. भीमराव बाँगड़े।

भिलाई आंदोलन का माँग पत्र [1]

इस माँग पत्र में उठाये गये मुद्दों का संदर्भ एवं महत्व जानने के लिए इस पुस्तक में भिलाई आंदोलन पर अन्यत्र प्रस्तुत सामग्री को देखिये जिसका उल्लेख पृ. 451 पर दी गयी पादटीप (फुटनोट) में किया गया है। — स.

1. गैर-कानूनी ठेका मजदूरी प्रथा को समाप्त कर सभी ठेका मजदूरों को (जिनमें दिहाड़ी मजदूर शामिल हैं) स्थायी रोजगार और उसके साथ अन्य सभी सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए। स्टैंडर्ड स्टैंडिंग आर्डर में टिकट, कार्ड, सर्विस बुक आदि के जो भी प्रावधान हैं, वे उन्हें उपलब्ध कराये जाने चाहिए। वेतन पर्ची और सी. पी. एफ. पर्ची भी उन्हें दी जानी चाहिए।
2. पूर्व प्रभावी उचित वेतन और अन्य सुविधाएँ भी उन्हें उपलब्ध करायी जानी चाहिए। [2]
3. सभी मजदूरों को मकान बनाने / पाने के लिए ऋण की सुविधा प्रदान की जानी चाहिए।
4. क) 1989-90 वर्ष का वार्षिक बोनस 20 प्रतिशत की दर से दिया जाना चाहिए।
   ख) यूनियन के साथ बैठकर माहवारी प्रेरक बोनस की योजना को भी बनाना चाहिए।
5. सी. पी. एफ. और ग्रेच्युइटी भुगतान की व्यवस्था कर सभी श्रमिकों के हित में इसे पूर्व प्रभावी ढंग से लागू करना चाहिए।
6. छुट्टी और धार्मिक पर्वों पर अवकाश की सुविधा निम्न प्रकार दी जानी चाहिए —
   क) आकस्मिक अवकाश – 15 दिन।
   ख) त्यौहार की छुट्टियाँ – 10 दिन।
   ग) मजदूरों और उनके परिवारों को भिलाई इस्पात संयंत्र के अस्पताल में उचित स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध करायी जानी चाहिए तथा स्वास्थ्य लाभ के लिए छुट्टी 30 दिन तक की दी जाये।
   घ) नियमानुसार काम के दिनों पर कमायी जाने वाली छुट्टी (अर्जित अवकाश)।
   च) चोट लगने पर पूरी दैनिक पगार के साथ पूर्व प्रभावी ढंग से छुट्टी देना चाहिए।
7. काम के स्थान पर किसी भी दुर्घटना से बचने के सभी उपाय किये जाने चाहिए।
8. कानून के अनुसार केवल आठ घंटे काम लिया जाना चाहिए और काम की पाली का समय प्रातः छह बजे से दोपहर दो बजे तक, दोपहर दो बजे से रात्रि दस बजे तक और रात्रि दस बजे से प्रातः छह बजे तक निर्धारित किया जाना चाहिए।
9. आजकल मजदूरों पर दमन और उन्हें प्रताड़ित करने के मामले आम होते जा रहे हैं। इसलिए छँटनी किये गये सभी मजदूरों को पूर्व प्रभावी ढंग से नौकरी पर बहाल किया जाना चाहिए।

□

---

[1] प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ (छमुमो से सम्बद्ध) द्वारा 15 अक्तूबर 1990 को सिम्पलेक्स कास्टिंग्स लि. को दिये गये माँग पत्र पर आधारित।

[2] छमुमो द्वारा प्रस्तावित वेतनमान बी. एस. पी. में समकक्ष पदों और तुल्य कुशलताओं के लिए निर्धारित वेतनमानों के परिप्रेक्ष्य में था, किंतु भिलाई आंदोलन ने 'जीने लायक वेतन' की अवधारणा से प्रेरणा ली (देखिये पृ. 455)।

तीन बातें उजागर कर दी थीं। पहली, छमुमो के साथ रहने से सीधे-सीधे फायदे होते हैं। दूसरी, छमुमो का इलाके भर में फैला हुआ सहयोगी ढाँचा संघर्षरत मजदूरों को लगातार समर्थन-सहयोग देता रहता है। तीसरी, छमुमो के वरिष्ठतम साथी भी आंदोलन की स्थानीयता और अपेक्षाकृत छोटा होने का ध्यान रखे बिना मजदूरों के हित में जान की बाजी लगा सकते हैं। सिर्फ 77 मजदूरों के हितों के लिए छमुमो के वरिष्ठतम साथी का. शंकर गुहा नियोगी की अनिश्चितकालीन भूख हड़ताल ने मजदूरों के सामने यह बात साफ कर दी थी।

इन बातों और मजदूरों के प्रति ईमानदार सरोकार को देखकर भिलाई औद्योगिक क्षेत्र के मजदूरों में छमुमो से जुड़ने की होड़ शुरू हो गयी थी। भिलाई, कुम्हारी, उरला, टेडेसरा, जामुल आदि औद्योगिक क्षेत्रों के ठेका और अनियमित मजदूर लगातार छमुमो के संगठन में शामिल होते जा रहे थे। इन विभिन्न उद्योगों के मजदूरों के हितों और उनके संगठन के लिहाज से छमुमो के झंडे तले निम्नांकित चार नयी यूनियनों का पंजीकरण करवाया गया –

1) प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ, 2) छत्तीसगढ़ केमिकल मिल मजदूर संघ,
3) प्रगतिशील सीमेंट श्रमिक संघ और 4) छत्तीसगढ़ श्रमिक संघ।

जुलाई 1990 में ए. सी. सी. सीमेंट फैक्ट्री के मजदूरों की जीत के बाद 17 सितम्बर 1990 को छमुमो की यूनियन, प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ, के नेतृत्व में विश्वकर्मा दिवस पर एक रैली तथा आम सभा का आयोजन किया गया। इस रैली में मजदूरों की एकजुटता और ताकत को देखकर उद्योगपतियों ने मजदूरों तथा छमुमो के नेतृत्व पर हमले शुरू कर दिये। सबसे पहले छमुमो के साथ जुड़ने और विश्वकर्मा दिवस की रैली में शामिल होने के तथाकथित अपराध में मजदूरों को बर्खास्त करना शुरू किया गया। मजदूरों की रोजगार से बेदखली का जब कोई असर नहीं हुआ तो मजदूरों तथा उनके नेताओं पर सीधे घातक हमले किये गये।

2 अक्तूबर 1990 को गांधी जयंती पर छमुमो ने भिलाई में विशाल प्रदर्शन की योजना बनायी थी, लेकिन आखिरी क्षणों में दुर्ग के जिलाधीश ने इस रैली की अनुमति नहीं दी। प्रशासन से सीधा टकराव टालने की गरज से छमुमो ने उक्त रैली को रायपुर में करने का फैसला किया। पूरी तैयारी के बाद बेहद कम समय में रैली का स्थान परिवर्तन और उसके बावजूद रायपुर में प्रभावशाली रैली निकाल पाने में छमुमो के अनुशासन और प्रशासनिक क्षमताओं के साथ ही एक और बात गौरतलब है। छमुमो को अनुमति न देकर दुर्ग के जिलाधीश ने उसी दिन शिव सेना को भिलाई में रैली निकालने की अनुमति सहजता से दे दी थी।

अपनी ताकत को तोलने और माँगों की अहमियत को समझाने के बाद छमुमो के प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ ने सिम्पलेक्स उद्योग को 15 अक्तूबर 1990 को अपना पहला माँग पत्र सौंपा (देखिये पृ. 454)। उल्लेखनीय है कि यही माँग पत्र बाद में भिलाई के विभिन्न उद्योगों को दिये गये माँग पत्रों का आधार बना। भिलाई गोलीकांड के दौर में जिस नौ-सूत्री माँग पत्र की सर्वाधिक चर्चा हो रही है उसका आधार भी यही माँग पत्र है।

2 अक्तूबर 1990 की रैली में छमुमो ने घोषित किया था कि उस साल 19 दिसम्बर को आयोजित होने वाला वीर नारायण सिंह दिवस हर हालत में भिलाई में ही मनाया जायेगा। 19 दिसम्बर 1990 को भिलाई में हुए इस कार्यक्रम में पूरे छत्तीसगढ़ तथा म. प्र. के विभिन्न अंचलों में काम कर रहे जनांदोलनों, स्वयंसेवी संगठनों और मजदूर यूनियनों ने हिस्सा लिया। छत्तीसगढ़ में कार्यरत एकता परिषद् , बंधुआ मुक्ति मोर्चा, छत्तीसगढ़ महिला जागृति संगठन,

(दो)

नियोगी की हमेशा कोशिश रहती थी कि उनके मजदूर साथियों की जानकारी और प्रेरणा स्रोत का क्षितिज केवल छत्तीसगढ़ तक ही सीमित न रह जाये, वरन् पूरी दुनिया को जानने और समझने की क्षमता उनमें विकसित हो। इसी क्रम में छमुमो ने नेल्सन मंडेला को अपना प्रेरणा स्रोत बनाया और मजदूर सभाओं में शहीद वीर नारायण सिंह, भगतसिंह आदि के साथ नेल्सन मंडेला का भी चित्र रखा। सन् 1990 के पूर्वार्द्ध में ऐसी ही एक सभा में प्रसारित आलेख यहाँ पेश है।

— स.

नेल्सन मंडेला को लाल जोहार

नेल्सन मंडेला को लाल जोहार !

जिन्होंने 27 वर्ष की जेल यातना के बावजूद किसी भी शर्त के साथ रिहा होने का प्रस्ताव ठुकरा दिया था।

गोराशाही के खिलाफ संघर्षरत दक्षिण अफ्रीका के मुक्ति योद्धा जिंदाबाद।

नेल्सन मंडेला की एक ऐतिहासिक चिट्ठी और एक बयान को उनके खुली हवा में आने के शुभ अवसर पर पढ़कर हम नस्लवादी तानाशाहों के खिलाफ संघर्ष करने के लिए प्रेरणा लेते हैं।

(1)

राष्ट्रपति पीटर बोथा के प्रस्ताव के जवाब में नेल्सन मंडेला का जनता के नाम संदेश, 1985

" मुझे भी जिंदगी से उतना ही प्यार है
जितना आपको,
लेकिन मैं अपने और जनता की आजादी के
जन्मसिद्ध अधिकार को
बेच नहीं सकता हूँ।

मैं अपनी खुद की आजादी के प्रति
जितना ख्वाहिशमंद हूँ,
उससे ज्यादा मुझे
आपकी आजादी प्यारी है।

मैं किसी भी शर्तनामे को
स्वीकार नहीं कर सकता।
आपकी आजादी से मेरी आजादी को
अलग नहीं किया जा सकता। "

गरीब गोंड आदिवासी कुँवारी लड़की की अस्मत, इज्जत एक धनी गुंडे ने लूट ली।

- यहाँ का मंत्री आदिवासी
- यहाँ कलेक्टर आदिवासी
- यहाँ का कमिश्नर हरिजन

पर इन सब ने धनी गुंडों का साथ दिया।

छत्तीसगढ़ में बंदूक का राज नहीं,
जनवाद चलेगा

छोटी-छोटी नदियाँ मिलकर महानदी बनती है। अनेक कल-कारखानों के मजदूर मिलकर महातीर्थ बनता है। एकता की पुकार लेकर आओ! हम नया भिलाई बनाएँ।

मजदूर का संगठन हड़बड़ी नहीं जानता है,

कालाधन के पहाड़ पर विराजमान नवधनाढ्य उद्योगपति व उनकी आका बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ आज अपने राजनैतिक प्रतिनिधियों के जरिये उग्र साम्प्रदायिकता, अराजकता, व हिंसा की राजनैतिक संस्कृति फैला रहे हैं। वे हमारे नौजवानों के हाथ में कुदाली, हथौड़ा या लेथ मशीन का हैंडल थमाने के बजाय चक्कू, कट्टा व ए. के. ४७ थमाकर अंधे कुएँ का रास्ता दिखा रहे हैं।

मोंगरा के बांध ल बनन नहिंदन भइया।
गाँव ल अपन डूबन नहिंदन भइया।।
पुरखा के डीह छोड़न नहिं भइया।।
मोंगरा . . .

खेत ल बचाओ, खार ला बचाबो;
गाँव ल बचाबो, गवईहां ला बचाबो।
इही किसान सारे जग के पोसइय।।
मोंगरा . . .

मजदूरों के लिए शराब शोषक वर्ग का उपहार है

शराब अधिकार को भुला देता है।
शराब मृत्यु है।
शराब समाज को बेहोश बना देता है।
अपने अक्ल को ढाको मत।
अधिकार को पहचानो।
शराब पिलाने वाली व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करो।

नादिया मठ का इतिहास –
आज से करीब २०० साल पहले
नादिया गाँव में एक कबीर पंथी संत आये।

शहीद मन के लहू फोकट नई होए, न कभू होइस
जोन भुइयाँ मा शहीद मन के लहू गिरे हे,
वो माटी हा चंदन बन गेहे।

शहीद भगत सिंह ने कहा था . . .

बस्तर के किरंदुल खदान में [illegible] हजार स्थानीय मजदूर कार्यरत थे, आज वहाँ सिर्फ ५ हजार मजदूर ही काम कर रहे हैं। बेरोजगारी से त्रस्त नवयुवक बंदूक उठा रहे हैं। आठ वर्ष पहले जब [illegible] लाख टन क्षमता वाले भिलाई इस्पात संयत्र में ६६ हजार मजदूर कार्यरत थे, मशीनीकरण (आधुनिकीकरण) के चलते आज ४२ लाख टन क्षमता होने के बाद भी मात्र ५८ हजार मजदूर ही कार्यरत हैं।

माफिया कार्य पद्धति कैसे होता है ?

९. कालाधन के जरिये सामान्य प्रशासन कार्य ठप्प

९. भिलाई इस्पात संयंत्र – कोक अवन

२७ वर्ष के इतिहास में इतनी भीषण दुर्घटना नहीं हुई लेकिन आज क्यों ? और कैसे ?

एक सर्वेक्षण के आधार पर गोंदली
गंगरेल, खरखरा और तांदुला के पानी से
छत्तीसगढ़ के तीन जिले, दुर्ग [illegible]

पर्चे-पोस्टरों की बानगी

जहाँ सब ला पीये के पानी . . . .

. . . . छत्तीसगढ़ में राज होही।

(पूरी कविता के लिए देखिये पृ. 69)

पर्चों और पोस्टरों के माध्यम से स्थानीय बोली में बड़ी सहजता के साथ वे बता जाते थे कि छत्तीसगढ़, जिसके लिए लोग लड़ रहे हैं, वहाँ हर व्यक्ति को पीने का पानी, हर हाथ को काम, हर खेत को सिंचाई का साधन, हर किसान को पैदावार की सही कीमत, हर गाँव को अस्पताल, हर बच्चे को स्कूल (वह भी ' सही पढ़ाई ' वाला), हर किसी को जमीन और घर मिलेगा, जहाँ गरीबी, शोषण और पूँजीवाद नहीं होगा। ऐसा छत्तीसगढ़ कब बनेगा ? जब छत्तीसगढ़ में मजदूर-किसान का राज होगा। उनके द्वारा लिखे गये पर्चों व पोस्टरों में शब्दों से खेला नहीं गया है, बल्कि शब्दों का सही इस्तेमाल किया गया है। वे सपनों को ठोस रूप में रख सकने की क्षमता रखते थे और कोशिश करते थे कि सारे लोग अपने सपनों के छत्तीसगढ़ को देख सकें। हर पर्चे-पोस्टर में शब्दों के खेल से दूर रहकर कहने की कोशिश की है कि उन्हें कैसा छत्तीसगढ़ चाहिए।

आधा-अधूरा नहीं, समूचा छत्तीसगढ़

समग्र क्रांति या सम्पूर्ण क्रांति का, बतौर नारा उन्होंने कभी इस्तेमाल नहीं किया। शायद किसी भी पर्चे या पोस्टर में उन्होंने इस शब्द का इस्तेमाल नहीं किया। लेकिन हर पर्चे में, हर पोस्टर में पूरे छत्तीसगढ़ को समेटने की कोशिश जरूर दिखलायी पड़ती है। हर कोशिश में नजरिया भी झलकता है। वे लिखते हैं कि छत्तीसगढ़ में राज तो मजदूरों, किसानों का होगा लेकिन कोई बेघर या भूमिहीन नहीं होगा। ऐसा नहीं कि जो किसान या मजदूर नहीं होगा वह बेघर होगा या अन्याय का भागीदार होगा।

लाल-हरा झंडा

कामगार आंदोलन का प्रतीकात्मक रंग लाल है। उसकी अपनी ऐतिहासिकता है। समूचा देश ही नहीं, पूरे विश्व से जुड़ने और जुड़े रहने की गजब की भूख थी उनमें। इसी भूख ने लाल रंग को कामगारों के संघर्ष के रूप में स्वीकार भी किया। लेकिन खेतों-खलिहानों में खट रहे किसान-मजूरों के प्रतीक हरे रंग को भी जोड़ा और लाल तथा हरा रंग मिला कर लाल-हरा झंडा बना कर समर्पित कामगारों का कैडर भी खड़ा कर दिया। लाल-हरी ड्रेस में ऐतिहासिक सच्चाइयों को स्वीकारते हुए, उनसे सीखते हुए अपनी ओर से कुछ जोड़ने का दायित्व भी पूरा किया। बातचीत में नियोगी कहा करते थे कि इतिहास में कुछ पन्ने हमें भी तो जोड़ने चाहिए।

इतिहास और संस्कृति की कहानी थी उनके पर्चों में

नियोगी की खासियत थी सीखना और सिखाना। वे कहाँ से सीख रहे हैं, किससे सीख रहे हैं इस बारे में कोई सीमा नहीं थी। शराबबंदी का आंदोलन चलाने के पहले वे सर्वोदय वालों से भी मिले थे। शराब कैसे असर करती है यह जानने के लिए प्राणि विज्ञान के विद्वानों से मिले। फिर बड़ी सहजता से एक पोस्टर में बता दिया कि शराब पीने से बाल झड़ते हैं, मुँह से बदबू आती है, मांसपेशियाँ सूख जाती हैं, पीलिया की बीमारी हो जाती है, पैरों में सूजन आ जाती

तक सूचना पहुँचाने का काम तो करता ही था, पाठशाला का काम भी करता था।

आमतौर पर व्यवस्था के खिलाफ लड़ने वाले 'माफिया' और 'कालाधन' जैसे शब्दों का इस्तेमाल करते हैं। लेकिन शायद ही किसी आंदोलन की ओर से प्रसारित पर्चे में सहज भाषा में या स्थानीय बोली में इनके अर्थ समझाने की कोशिश की गयी होगी। नियोगी की यह खासियत थी कि जो शब्द आंदोलन के दौरान इस्तेमाल किये जाते थे उनकी व्याख्या भी पर्चों, पोस्टरों में की जाती थी। फिर ये पर्चे, पोस्टर छत्तीसगढ़ की हर दीवार पर चिपके होते थे, हर खेत-खलिहान व खदान में पढ़े जाते थे।

छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ की ओर से एक पर्चा प्रकाशित किया गया था — माफिया आतंक। इसमें ऐलान किया गया था कि दल्ली राजहरा के मजदूर माफिया गैंग को बर्दाश्त नहीं करेंगे। व्यापक जन आंदोलन के ज्वार से माफिया गैंग के प्रमुखों को मिट्टी में मिला दिया जायेगा।

इस पर्चे में एक-एक करके आठ बिंदु गिनाये गये हैं कि माफिया कौन है। उनकी माफिया की परिभाषा पर भी एक नजर डालें —

जो **काले धन के जरिये** सामान्य **प्रशासनिक कार्य ठप्प** करवा देता है। जो तलवार, बंदूक, सोडे की बोतलों आदि **गैर-कानूनी हथियारों का खुला उपयोग** कर अपनी **विनाशकारी ताकत का प्रदर्शन करता है**। जो **साम्प्रदायिकता** फैलाता है, मजदूर का **निर्मम आर्थिक शोषण** करता है, **महिलाओं का शारीरिक-नैतिक शोषण** करता है, उद्योग में मनमाना रवैया चला कर **उत्पादन कार्य को क्षति** पहुँचाता है, आवारागर्दी, गुंडागर्दी से **समाज को धमकाता** है और जो शराब के धंधे के जरिये अपनी **ताकत का प्रदर्शन करता है**। ऐसे ही माफिया गैंग के प्रमुखों को मिट्टी में मिला देने का संकल्प किया गया है इस पर्चे में।

पर्चा सिर्फ पर्चा नहीं, अखबार भी

नियोगी ने आंदोलन के पर्चों से तब-तब अखबार का काम लिया है जब-जब अखबारों ने पक्षपात किया और उद्योगपतियों के बयानों को समाचार बनाकर छापा और कामगारों के बीच घटी घटनाओं को अनदेखा कर दिया। 22 फरवरी 1989 को जब एटक के नेताओं के नेतृत्व में ठेकेदारों ने यात्रा निकाली तो यह खबर अखबारों में छपी। पर यह खबर नहीं छपी कि यात्रा की शुरूआत यात्रियों ने क्रशर के श्रमिकों की मारपीट करके की। यह खबर भी नहीं छपी कि 4 मई 1989 को एक अपराधी गिरोह ने सात साल की मासूम बच्ची नेमिन बाई का सर फोड़ दिया और यह भी नहीं छपा कि नेमिन का पिता परदेसी राजहरा में ठेला चलाता है। आंदोलन की ओर से प्रकाशित पर्चे में काफी संक्षिप्त शब्दों में यह खबर लड़की की तस्वीर के साथ दी गयी और साथ में यह सवाल भी पूछा गया कि क्या कसूर है इस बच्ची का ? क्या मजदूर की लड़की होना गुनाह है ?

सिर्फ जानकारियाँ नहीं, सिर्फ सहजता नहीं, शैली भी

शंकर गुहा नियोगी न्याय-आधारित व्यवस्था चाहते थे। इसीलिए कामगारों को, महिलाओं को, बच्चों को संगठित कर रहे थे। लेकिन वे साहित्य व संस्कृति से कटे हुए नहीं थे। उनके द्वारा लिखे गये और छमुमो द्वारा जारी किये पर्चे लोगों में साहित्यिक अभिरुचि और पढ़ने की भूख भी जगाते हैं। एक पर्चे में दल्ली राजहरा की खदानों में गत 20 सालों से कार्यरत मजदूरों

बनायेस सरकार बाबू।
सूत के उठ्यन सरकार बाबू ,
कम्पनी में डिप्टी हमन जायन जी,
लोहा लक्कड़ ला हम उठायन बाबू ,
तबले पसिया बिना तरसथन जी।
कैइसन कानून बनायेस सरकार बाबू।
सूत के उठ्यन हमन हर बाबू ,
लाँघन भूखन हमन डिप्टी जायन जी,
लोहा लक्कड़ ला हमन उठायन बाबू ,
लोहा मजदूर के ऊपर गिरथे जी,
वोही में दबके हमन मर जायन,
मजदूर लाश नजर आये सरकार बाबू।
कैइसे कानून बनायेस जी।

– कौशल्याबाई

ए. सी. सी. सीमेंट फैक्ट्री, जामुल, में कार्यरत ठेका मजदूर

(छमुमो की लोक साहित्य परिषद् द्वारा प्रकाशित ' संघर्ष की पुकार ' से साभार।)

कबले जुल्मी अत्याचारिया चलबे करी ?

(भोजपुरी गीत)

चलबे करी ऐ साथी, चलबे करी !
कबले जुल्मी अत्याचारिया चलबे करी ?

खेत में किसानी करीं, बोईं हम धनवाँ,
कड़कल धूप में चुवाइलीं पसीनवाँ,
सोचीलीं पेट अब भरबे करी !
कबले जुल्मी अत्याचारिया चलबे करी ?

खेत खार बेंचीं, आपन लइका पढ़ाईं,
घूस के जमाना बाटे, पइसा कहाँ पाईं !
कईसे के दुःख मोरा टरबे करी !
कबले जुल्मी अत्याचारिया चलबे करी ?

कल कारखनवाँ में कमवाँ करावें,
आधा पेट भोजन पे दिन भर खटावें,
केकरा से दुःख हम कहबे करीं !
कबले जुल्मी अत्याचारिया चलबे करी ?

रोटी के सवाल करीं, पुलिस बोलावें,
भेजी के जेलीया में हमें तड़फावें,
केहु न दुःखवा मोरा सुनबे करी !
कबले जुल्मी अत्याचारिया चलबे करी ?

मजदूर किसान मिली एकता बनाव,
सबके ही दुःखवा में हथवा बटाव,
तब हो त सुख के सूरज उगबे करी !
कबले जुल्मी अत्याचारिया चलबे करी ?

– मधुसूदन विश्वकर्मा

सिम्पलेक्स, टेडेसरा, में कार्यरत ठेका मजदूर

(छमुमो की लोक साहित्य परिषद् द्वारा प्रकाशित ' संघर्ष के सात गीत ' से साभार।)

3. मोर भारत मा मशीनीकरण . . . बरबादी रे

मोर भारत मा मशीनीकरण बड़े होगे हावी रे,
मेहनतकश संगवारी मनके हे बरबादी रे।

बैलाडीला मा लोहा खदान हे क्रेसिंग प्लांट बनाये हावे,
छँटनी कर दीस सब मजदूर ला बेरोजगार बनाये हावे,
मजदूर मनके छाती मा संगी बंदूक के गोली चलाइन गा,
लइका मन ला झोपड़ी मा फेंक लगादीन आगी रे।
मेहनतकश संगवारी . . . ।

भोपाल मा विदेशी मशीन लगाइन कारखाना दवा के बनाइन गा,
कीरा मारे के दवा बनाइन, पूँजीपति पइसा कमाइन गा,
एक दिन गैस निकलगे जहर के हाहाकारी छागे रे।
मेहनतकश संगवारी . . . ।

जहर के गैस मा कतको मरगे काला कहौं मैं संगवारी,
पियत पियत लइका हा मरगे दूध पियावत महतारी,
जेहा सुते रीहिस संगवारी सुते के सुते वो रहीगे गा,
दाई बहिनी के माँग के सेन्दूर पोंछागे लाली रे।
मेहनतकश संगवारी . . . ।

भगदड़ मचगे नगर भोपाल मा कतको बस्ती उजरगे गा,
कोई कोई घर के जम्मो मरगे लाश हा भीतरी मा सरगे गा,
नइहे चिन्हारी कोन काकर हे मोर संगवारी रे।
मेहनतकश संगवारी . . . ।

माटी देबर जगा नई मिलिस कतको लाश ला फेंक डारीन,
तीन सौ चार सौ लाश ला एक संग माटी तेल मा लेश डारीन,
धार बोहागे आँसू के संगी सब जनता के आँखी ले,
थर थर थर थर काँप उठीस ये भुँइया महतारी रे।
मेहनतकश संगवारी . . . ।

उही नीत ला ये सरकार हा जगा जगा अपनावत हे,
बेरोजगार ला पैदा करत हे बेधड़क मशीन लगावत हे,
रोजगार देवे के बात बताये फेर होवाये उल्टा पुल्टा गा,
भूख मा जनता तरसत हावे ये कइसन आजादी रे।
मेहनतकश संगवारी . . . ।

❑

(उपरोक्त तीनों गीत छमुमो द्वारा प्रकाशित 'फागूराम यादव के चुने हुए गीत' से साभार।)

इस पूरे सांस्कृतिक सृजन में नियोगी के ये शब्द साकार हो उठते हैं, "संघर्ष से नये समाज की सृष्टि होती है, जन संघर्ष से जन्म लेती है नयी जन संस्कृति . . . ." (सांस्कृतिक कर्म पर नियोगी के वक्तव्य के लिए देखिये पृ. 327-328)।

इसी संदर्भ में नीचे प्रस्तुत है 'नवाँ अंजोर' दल के मजदूर साथी रामलाल विश्वकर्मा के अपने शब्दों में उनके अनुभवों की कहानी।

❑

नवाँ अंजोर और भिलाई स्टील प्लांट [1]

रामलाल विश्वकर्मा

छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ व छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के बैनर तले दल्ली राजहरा के मजदूर इकट्ठे हुए और उसमें किसानों को भी जोड़ने का प्रयास किया गया। किसान जुड़े भी, उसी दरम्यान नियोगीजी ने 17 विभागों में से एक सांस्कृतिक विभाग भी बनाया और इस विभाग के माध्यम से जन चेतना का काम करने की कोशिश की। जन चेतना मजदूर-किसान व अन्य मेहनतकशों के दिलों तक पहुँचनी चाहिए, इस बारे में उन्होंने मुझसे बात की। उस समय फागूरामजी हर सभा व मीटिंग में गीत गाते थे और मैं उनके सहयोगी के रूप में भाग लेता था। 4-5 साल तक हम इसके लिए प्रयास करते रहे। नियोगीजी इसके लिए हमें अपने साथ मद्रास तक ले गये जहाँ एक सम्मेलन था जिसमें बड़े-बड़े कार्यक्रम पेश किये गये थे। हमने उन्हें देखा व समझा हालाँकि वे हिन्दी या छत्तीसगढ़ी भाषा में नहीं थे, तमिल भाषा थी पर हम उसका असर समझ पाये। दल्ली राजहरा लौटकर हमने कोशिश की और सांस्कृतिक कार्यक्रम 'नवाँ अंजोर' तैयार किया। उसके दूसरे साल बी. एस. पी. मैनेजमेंट ने मजदूरों को एक सर्क्युलर (परिपत्र) के माध्यम से प्रस्ताव भेजा कि जो लोग सांस्कृतिक कार्यक्रम में रुचि रखते हों उनसे मिलें, वे उन्हें सुविधाएँ उपलब्ध करायेंगे। हम जानते थे कि बी. एस. पी. मैनेजमेंट की इस बात में जरूर कोई चाल है। हमने नियोगीजी को जाकर यह बात बतायी और पूछा कि अब क्या करें ? उनका कहना था कि यह उनकी संगठन को तोड़ने की चाल है, उसमें हिस्सा न लो; संगठन के माध्यम से तुम तो सांस्कृतिक कार्यक्रम तैयार कर ही रहे हो; अपने कार्यक्रम पर ध्यान दो, सांस्कृतिक दल तैयार करो। 'नवाँ अंजोर' सांस्कृतिक कार्यक्रम में हमने सबसे पहले छत्तीसगढ़ के महान सेनानी वीर नारायण सिंह का नाटक प्रस्तुत किया। इस नाटक को हमने छत्तीसगढ़ की 100 अलग-अलग जगहों पर खेला। इसके माध्यम से बहुत से किसान और मजदूर जुड़े। इस सांस्कृतिक कार्यक्रम से हमने महसूस किया कि इससे जनता को काफी लाभ मिला है। जब यह कार्यक्रम दो साल आगे बढ़ा तो हमने देखा कि बी. एस. पी. मैनेजमेंट ने छत्तीसगढ़ के तमाम

[1] 'विकास के विकल्प' विषय पर 16-18 दिसम्बर, 1991 को दल्ली राजहरा में आयोजित छमुमो कार्यकर्ताओं के सम्मेलन के एक कैसेट के आधार पर शशि मौर्य द्वारा प्रस्तुत।

पर पूरी समिति व इनके परिजनों को महामाया में जाकर बसना होता जिससे इनके परिवारों व यूनियन के कामों में काफी परेशानी आती। श्रमिक सहकारी समिति पहले भी आरीडोंगरी से स्थायित्व के आश्वासन पर कच्चे गाँव से दल्ली राजहरा में आकर बसी थी। श्री संगमेश्वरन का आदेश यूनियन में सक्रिय सहकारी समिति के सदस्यों को परेशान करने के लिए था।

इस समय कई कारणों से ' मितान ' का प्रकाशन स्थगित था और यूनियन पर काफी आर्थिक दबाव भी था। इधर माईन्स आफिस के सामने मजदूरों का सामूहिक धरना जारी था। इन परिस्थितियों में ' मितान की आवाज ' ने एक नयी भूमिका अदा की। इस श्रृंखला में कुल 9 कैसेट बने थे। हर कैसेट में 30 मिनट का एक-एक प्रोग्राम था जिसमें लोहा खदान, इस्पात उद्योग, ट्रेड यूनियन जैसे कुछ गम्भीर विषयों पर एक वक्तव्य के साथ-साथ गीत, कविता, हँसी-मजाक भी रहता था। ' समाचार गरम-गरम ' शीर्षक से चार मिनिट के भाग में राजनीतिज्ञों व खदान प्रबंधकों के कार्यकलापों पर हँसने-हँसाने वाली टिप्पणीयाँ होती थीं। इस अवसर पर कई नये गीत ' आल्हा ' आदि रचे गये और कई पुराने गीत दोहराये गये। कार्यक्रम का पहचान गीत था भागाताई का गीत —

" जागो जागो रे किसान, जागो जागो रे जवान,
एकता के झंडा लाल-हरा हावे गा। "

ये कैसेट धरना स्थल पर माईक / लाउड स्पीकर के माध्यम से दिन भर बजाये जाते और ' प्रोडक्शन टीम ' पर हर दूसरे-तीसरे दिन नया कैसेट निकालने का दबाव रहता था। यह श्रृंखला बहुत ही लोकप्रिय रही। कई मोहल्ला कमेटियों ने व राजनांदगाँव की यूनियन ने अपनी पहल पर इनकी प्रतियाँ बनाकर अपने इलाके के अन्य कार्यक्रमों के अवसर पर बजाया। सहकारी समिति के आंदोलन के सफलतापूर्वक समापन के साथ ही ' मितान की आवाज ' का इस रूप में निकलना बंद हुआ।

3. कार्यकर्ता प्रशिक्षण

एक ढंग से आम सभाएँ, मुखिया मीटिंग आदि कार्यकर्ता प्रशिक्षण के ही अंग हैं, पर कई बार कार्यकर्ता प्रशिक्षण के लिए विशेष प्रयास भी किये गये हैं। सन् 1983-84 में स्लाइड प्रोजेक्टर द्वारा बड़े आकार में फोकस करके विभिन्न प्रकार के इतिहास व क्रांतिकारी साहित्य को मोहल्लों में पढ़ने का भी दौर चला। सन् 1985 में दो बार दानीटोला खदान में ' कार्यकर्ता प्रशिक्षण शिविर ' लगे, जिनमें दल्ली, दानीटोला, राजनांदगाँव बी. एन. सी. मिल्स, ग्लूकोज फैक्ट्री आदि के साथियों ने भाग लिया। इनमें भूगोल, इतिहास व मजदूर आंदोलन पर छह-छह दिन की विस्तृत चर्चाएँ पच्चीस-तीस प्रशिक्षणार्थियों के एक-एक गुट के साथ हुई। ऐसे शिविर आंदोलन के कई विशेष चरणों पर आंदोलन की रूपरेखा व कार्यकर्ताओं को तैयार करने के लिए अनेक बार लगे।

छमुमो को अलग-अलग चरणों में कई प्रगतिशील बुद्धिजीवियों का साथ मिला जिनके संगठन के साथ किये गये प्रयासों का फल है कि उपरोक्त शैक्षणिक प्रयोग साकार हुए।

❑

(सितम्बर 1992)

यूनियन की पत्रिका 'मितान' सन् 1977 से 1992 के बीच कई बार सिलसिलेवार निकली, आमतौर पर संघर्ष जब-जब तेज रहा तब। कानूनी पंजीयन सम्बंधी जरूरतों के कारण कई बार मितान को 'छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा बुलेटिन' के नाम से निकालना पड़ा। मितान को नियमित बनाने में, इसके प्रकाशन में लगे पैसों की समय पर वसूली की समस्या थी। मितान का प्रसार क्षेत्र बड़ा था – जहाँ-जहाँ लाल-हरे झंडे की यूनियनें व संगठन थे (जैसे राजनांदगाँव, बाराद्वार, नादिया आदि में) – इतने फैले हुए क्षेत्र में आवक-जावक में समय लगता था।

2. सांस्कृतिक माध्यमों पर आधारित प्रयास

नाटक व गीत – 'नवाँ अंजोर' मंडली का गठन सन् 1981 में हुआ था और मंडली सन् 1986 तक सक्रिय रही।[1] 'नवाँ अंजोर' का 'शहीद वीर नारायण सिंह' नाटक एक जबर्दस्त राजनैतिक शिक्षण का माध्यम था और जिसने भी इस नाटक में नारायण सिंह का डायलाग सुना, इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। नारायण कहते हैं, "संगवारी हो – आज मोला अतका उमंग होगे हे कि झूमर-झूमर के नाचे के मन हा होथे। . . . . अभी हमला वो साहूकार मन के घर जाना हे, जेमन तुहर कमाय चीज ला अपन गोदाम मा भरे हे। हम अनाज के पैदा करइया किसान भूख मा मरबो, अऊ जेहर कभू नांगर नइ धरे हे तेहर आराम से खाही ! अइसन कभू नइ हो सके . . . . अपन आजादी बर, अपन अधिकार बर लड़बोन कि नइ लड़बोन।" इसके जवाब में जब सब आदिवासी किसान मिलकर एक स्वर में हुँकार भरते हैं 'लड़बोन ठक्कुर – तन मन दे के लड़बोन !', तो लगता है कि वास्तव में किसान क्रांति अब करीब आ गयी है। इसी नाटक में 'जन संगठन, जन आंदोलन, जन युद्ध के रस्ता मा आघू बढ़ो' (पृ. 46) व 'चल मजदूर, चल किसान, देश के हो महान' (पृ. 349-350) गीत भी उपयोग में लाये गये हैं। नाटक के अलावा भी आंदोलन के हर आयाम पर 'नवाँ अंजोर' व प्रमुख साथी फागूराम के गीत बने और गाये गये हैं, जैसे –

स्वास्थ्य पर :

"चल संगवारी रे मितान, स्वास्थ्य बर गा संघर्ष करबो,
ये जिनगी के करबो गा सुधार, हम गा बिमारी मा काबर मरबो ।"
(पृ. 439)

शराबबंदी पर :

"शराबी भइया रे, झन पीबे बाटल के शराब ला,
कर देथे मती ला खराब गा।" (पृ. 439)

नादिया मठ की लड़ाई पर :

"नांदगाँव शहर के तीर मा हावे एक ठन नादिया गाँव,
महंत के अत्याचार मा संगी हावे रे बदनाम।"

शहीद अस्पताल की सांस्कृतिक मंडली ने भी कई सारे गीत बनाये व गाये जैसे –

"रहत हव मेहर गवई में, मर गँव गा महँगाई में,
कैसे कराहूँ संगी मेहर पइसा में इलाज . . . ."

[1] 19 दिसम्बर 1992 (शहीद वीर नारायण सिंह दिवस) से यह दल फिर सक्रिय हो गया है।

स्कूली शिक्षा

मजदूर समुदाय की अगली पीढ़ी को शिक्षा से वंचित न रहना पड़े इसके लिए यूनियन और खास करके नियोगीजी खुद सदा सचेत रहे। सन् 1977 के तुरंत बाद, संगठन ने मोहल्ला-मुखियाओं से आग्रह किया कि मोहल्ले-मोहल्ले में मजदूर बच्चों के लिए प्राथमिक शालाएँ स्थापित की जायें। इस समय कैम्प इलाके में बी. एस. पी. की तरफ से केवल 22 प्राथमिक शालाएँ चलती थीं, और ठेका मजदूर परिवारों के बच्चे इसका लाभ लगभग नहीं उठा पाते थे। मोहल्ला कमेटियों में जो बातचीत चली उसका सार यह था कि वे खुद प्राथमिक शाला स्थापित करने और इनका संचालन करने की जिम्मेवारी लें और यदि मोहल्लों में इस काम के लिए उपयुक्त भवन उपलब्ध नहीं हों तो भवन-निर्माण या सुधार की जिम्मेवारी यूनियन उठायेगी। इसी प्रक्रिया से सन् 1977-78 में शुरू हुए भगोली पारा स्थित भंडारी स्कूल, पंडरीदल्ली स्थित शहीद अनुसुइया स्कूल, रामनगर, केलाबाड़ी, राजवाड़ा व कोंडे के प्राथमिक स्कूल हैं। इनमें से रामनगर की प्राथमिक शाला को छोड़कर बाकी शालाएँ अगले 3 वर्षों में राज्य सरकार के आदिवासी कल्याण विभाग को सौंप दी गयीं। विभाग की तरफ से कहीं एक, तो कहीं दो शिक्षक नियुक्त किये गये। शाला विकास समितियों का नियंत्रण मोहल्ला समितियाँ करती रहीं और भवन-प्रबंधन की जिम्मेदारी यूनियन आज तक निभा रही है। यूनियन ने नियोगीजी की हत्या के एक साल पहले ही केलाबाड़ी स्कूल का पक्का भवन बनवाया और सन् 1984 के बाद सभी शालाओं के लिए भवन मरम्मत व नवीनीकरण का कार्यक्रम चलाया।

संगठन द्वारा समर्पित स्कूलों में पहला नम्बर हेमन्त पाठशाला का है। सामान्य कार्यप्रणाली से हटकर, इस स्कूल का संचालन सन् 1977 के पहले से ही श्रमिक सहकारी समिति के हाथों में था। समिति ने अपने काम के अभिन्न अंग के रूप में शाला को भी संचालित किया। समिति के पदाधिकारी व कर्मचारी यहाँ शिक्षकों की कमी को दूर करने में लगे रहे, भवन निर्माण व रख-रखाव की जिम्मेदारी भी समिति ने बढ़िया ढंग से निभायी। शाला को सरकारी मान्यता दिलवाने में काफी अड़चनें आयीं और इस प्रक्रिया को पूरा करवाने में यूनियन ने साथ दिया। आज हेमन्त स्कूल समिति द्वारा संचालित मान्यता-प्राप्त शिक्षण संस्थान है, जहाँ पाँचवीं कक्षा तक विद्यार्थी पढ़ते हैं।

यूनियन ने जैसा प्रस्ताव दल्ली राजहरा के मोहल्लों में रखा था, लगभग उसी प्रकार का प्रस्ताव सन् 1977 में कुसुमकसा, अरमुरकसा व पथराटोला गाँवों के मुखियाओं के सामने भी रखा था। इनमें पथराटोला गाँव के सयानों ने इस प्रस्ताव पर गौर किया और वहाँ एक शाला बनी। शाला के भवन निर्माण आदि में यूनियन ने मदद की। आज से लगभग चार वर्ष पहले ही इस शाला ने पूर्व माध्यमिक (मिडिल) स्कूल का दर्जा प्राप्त कर लिया है। इस अवसर पर आयोजित कार्यक्रम की अध्यक्षता तत्कालीन विधायक जनकलाल ठाकुर ने की थी।

एक बात उल्लेखनीय है कि स्कूली शिक्षा में सी. एम. एस. एस. के प्रयासों में अब तक सांगठनिक पहलू प्रमुख रहा है। लेकिन शिक्षा की विषयवस्तु या मूल्यबोध के मामले में वैकल्पिक दिशा खोजने का प्रयास इस ढंग से नहीं किया गया है। पर शायद शिक्षा को एक अलग-थलग प्रक्रिया के रूप में देखना पूर्णतया सही नहीं होगा। आज दल्ली राजहरा की मजदूर बस्तियों व निकटवर्ती ग्रामीण इलाकों में पले बच्चों, युवकों और युवतियों पर पिछले 15 साल के ' संघर्ष

का प्रयास रहा है।

स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड की स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना भी ऐसा ही एक हथकंडा है। इसके तहत जो मजदूर 15 वर्ष से अधिक काम कर चुके हैं, वे स्वेच्छा से अवकाशग्रहण कर सकते हैं जिसके लिए मैनेजमेंट उन्हें तयशुदा एकमुश्त धनराशि देता है। कई खदानों में मैनेजमेंट पति को विभागीयकृत करके उसे कहीं और (अक्सर भिलाई) स्थानांतरित कर देता है और पत्नी पर स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना के तहत अवकाशग्रहण करने का दबाव डालता है। इस प्रकार वह उत्पादन में भागीदारी और पारिवारिक हित के बीच अंतर्विरोध पैदा करता है। सन् 1985-86 में मैनेजमेंट ने इस तरीके से हिर्री डोलोमाइट खदानों को मशीनीकरण के लिए खाली कराना शुरू किया। पूरी ट्रेड यूनियन ने इस हमले का जमकर विरोध किया क्योंकि यूनियन की साफ समझ थी कि जब तक उत्पादन प्रक्रिया में मजदूर महिला बराबर की सहभागी नहीं होती, तब तक सामाजिक विकास असम्भव है। दिसम्बर 1986 में महिला मुक्ति मोर्चे ने हिर्री माईन्स में एक महिला सम्मेलन किया जिसमें स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना वापिस लेने, पति-पत्नी को एक जगह काम देने व महिला के स्थान पर महिलाओं की ही भर्ती करने की माँगें रखी गयीं और बेरोजगारी की समस्या हल होने तक खदानों व उद्योगों में मशीनीकरण रुकवाने का संकल्प लिया। हिर्री की एक महिला मेत्री, अपने पति के स्थानांतरण के बावजूद वहीं रहकर काम करती रही और आज भी महिलाओं को संगठित कर रही है।

महिला-पुरुष में अंतर करने की मैनेजमेंट की नीति और ऐसा अंतर करने वाले (वेतनमान और अन्य सुविधाओं के) हर प्रस्ताव का सी. एम. एस. एस. व छमुमो से जुड़ी अन्य ट्रेड यूनियनों द्वारा तीव्र विरोध हुआ है, चाहे इसके लिए लड़ाई को लम्बा क्यों न खींचना पड़ा हो।

महिला मुक्ति मोर्चे का लक्ष्य सभी शोषित तबकों का साथ देना तथा ' संघर्ष और निर्माण ' की सम्पूर्ण नीति को आगे बढ़ाना है। सन् 1989 में राजहरा डैम से ग्राम नर्राटोला तक डेढ़ कि. मी. लम्बी नाली खोदकर धान की फसल बचाने के काम में महिलाओं ने पुरुषों के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर काम किया। इस प्रकार से आगे आयी हुई महिलाओं ने सन् 1992 में नर्राटोला में अतिक्रमण हटाने के नाम पर लगभग ढाई सौ घरों पर भाजपा प्रशासन द्वारा बुलडोजर चलाने का तीव्र विरोध किया। ग्रामीण इलाकों में जंगल विभाग के अत्याचार व भ्रष्टाचार के खिलाफ महिलाओं की आवाज, वहाँ की महिलाओं की भाषा में, जंगलवालों को दुर्गावती की याद दिला रही है।

सन् 1978-79 में दल्ली राजहरा की बस्तियों में प्रायमरी स्कूल खड़ा करने में महिलाओं की अग्रणी भूमिका रही है। दिसम्बर 1977 में कामरेड कुसुमबाई की जचकी के दौरान बी. एस. पी. अस्पताल (राजहरा) में लापरवाही से हुई दर्दनाक मृत्यु की घटना थी जिसने मजदूरों में आक्रोश और ' अपना शहीद प्रसूति भवन ' बनाने का दृढ़ निश्चय पैदा किया। यही आगे चलकर ' शहीद अस्पताल ' बना जिसमें आज भी जच्चा-बच्चा का स्वास्थ्य, जचकी के दौरान लगाये जाने वाले खतरनाक ' पिटोसीन ' जैसे इंजेक्शनों का विरोध, माँ के दूध के महत्व की जानकारी आदि महिला स्वास्थ्य से जुड़े सवालों को प्राथमिकता दी जाती है।

सबसे महत्वपूर्ण यह है कि महिलाएँ मजदूर वर्ग में नये मूल्यों को विकसित करने की लड़ाई लड़ती आ रही हैं। ट्रेड यूनियन को अर्थवाद से बचाने में और सदा सामाजिक मुद्दों को फोकस में रखने में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। मजदूर वर्ग को कमजोर बनाने वाला हर नशा — चाहे वह शराब हो, लाटरी-सट्टा हो या दूषित संस्कृति हो — उसके खिलाफ वे आवाज उठा रही हैं। सन् 1979-80 के सशक्त शराबबंदी आंदोलन में महिलाओं ने अगुवाई की और

आखिर में एक महत्वपूर्ण बात पर ध्यान देना जरूरी है। दल्ली राजहरा का स्वास्थ्य आंदोलन कई हजार मजदूरों, सैकड़ों मजदूर नेताओं, दर्जनों चिकित्साकर्मियों के सामूहिक प्रयास का फल है। स्वास्थ्य आंदोलन से सम्बंधित सभी लोग इस बात को हमेशा याद रखते हैं एवं व्यक्तिगत हितों से ऊपर उठकर संगठन व राजनीति को स्थान देते हैं।

❑

(शहीद अस्पताल के सभी स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं, चिकित्साकर्मियों एवं डाक्टरों के सामूहिक प्रयास से प्रस्तुत।)

खर्चा कहाँ से आता है / शैबाल जाना

3 जून 1983 को शहीद अस्पताल का उद्‌घाटन हुआ। नियोगीजी ने मजदूरों के सामने सवाल रखा कि अस्पताल तो तैयार हो गया है, लेकिन इसे चलाने के लिए पैसे कहाँ से आयेंगे ? मजदूरों ने उसी समय घोषणा की कि अस्पताल चलाने के लिए एक महीने का 'माईन्स एलाउन्स' देंगे। करीब साढ़े तीन लाख रुपये मात्र आधे घंटे में इकट्ठा हुए। उन पैसों में से एक ट्रक (क्र. एम. पी. व्ही. 9291) खरीदा गया। यह ट्रक खदानों में रोज माल ढुलाई के काम में लगाया जाता है। इससे अस्पताल के लिए महीने भर में पाँच-सात हजार रुपये आ जाते हैं। अस्पताल के विस्तार के लिए मरीजों से प्रतिदिन तीन रुपये शुल्क लिया जाता है। डाक्टर, नर्स व अन्य अस्पताल-कर्मियों का वेतन ट्रक चालकों व मजदूरों के चंदे और अस्पताल की आय में से दिया जाता है। भवन निर्माण एवं अन्य सामग्री खरीदने के लिए मजदूर समय-समय पर अलग से चंदा देते हैं।

❑

मजदूर आंदोलन में महिलाओं की भूमिका

लीलाबाई ● सुधा भारद्वाज

दल्ली राजहरा की लौह अयस्क खदानों में आरम्भ से ही छत्तीसगढ़ की खेतिहर परम्परा के अनुसार महिलाएँ उत्पादन में बराबर की सहभागी थीं। खदानों में अक्सर पति-पत्नी की जोड़ी में काम किया जाता रहा है चूँकि इससे लोहा पत्थर तोड़ने (रेजिंग) का काम सुगम हो जाता है। इस प्रकार शुरू से ही मैन्युअल खदानों में लगभग आधे मजदूर महिलाएँ थीं। सी. एम. एस. एस.

में सुई नहीं लगायी जाती, इसलिए शुरू में अस्पताल को श्रमिक संघ के ही कमज़ोर सदस्यों के विरोध का सामना करना पड़ता था। फलतः दवाइयों के विकल्प घरेलू इलाजों के प्रचार पर जोर दिया गया, जैसे कि टट्टी-उल्टी में दवाएँ नहीं, बल्कि नमक-शक्कर का शरबत ; खाँसी में कफ सिरप नहीं, बल्कि गरम पानी की भाप ; बुखार में एनालजिन आदि खतरनाक दवाएँ नहीं, वरन् ठंडे पानी का पोंछा। इन घरेलू इलाजों को अस्पताल में अमल में लाया गया, लोग इन इलाजों का महत्व समझने लगे।

शहीद अस्पताल में विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यू. एच. ओ.) की जरूरी दवाओं की सूची के बाहर की दूसरी दवाओं का इस्तेमाल नहीं होता है। मिली-जुली दवाइयों (कम्बीनेशन ड्रग) का भी इस्तेमाल नहीं होता है। प्रतिबंधित दवाओं का यथासम्भव इस्तेमाल न करने की कोशिश की जाती है।

ख) जन शिक्षण के लिए कई तरीके अपनाये जाते हैं। 'आउटडोर' व 'इनडोर' के मरीज व उनके परिवारों के साथ डाक्टर व स्वास्थ्यकर्मी रोग के कारण व इलाज के बारे में चर्चा करते हैं। आस-पास के गाँवों एवं मोहल्लों में स्वास्थ्य प्रचार किया जाता है। प्रचार के क्रम में पोस्टर, पोस्टर प्रदर्शनी, स्लाइड, जादू-विरोधी प्रदर्शन, दीवार पत्रिका ('स्वास्थ्य संगवारी'), स्वास्थ्य पुस्तिकाओं ('लोक स्वास्थ्य शिक्षा माला') का इस्तेमाल किया जाता है।

जन शिक्षण में निम्नलिखित मुद्दों पर जोर दिया जाता है -

- स्वास्थ्य-सम्बंधी अंधविश्वासों व कुसंस्कारों को बेनकाब करना ;
- मुनाफाखोर चिकित्सकों की अवैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति को बेनकाब करना ;
- चिकित्सा विज्ञान की जानकारी लोगों तक पहुँचाना जिससे वे छोटी-मोटी स्वास्थ्य समस्या का इलाज अपने-आप कर सकें ; एवं
- देशी-विदेशी दवा कम्पनियों के शोषण के बारे में लोगों को जागरूक बनाना।

शिक्षण कार्यक्रम के तहत स्वास्थ्यकर्मियों को प्रशिक्षित किया जाता है। स्वास्थ्यकर्मी असल में लौह अयस्क खदानों के मजदूर हैं। ये स्वास्थ्य प्रचार का काम करते हैं, लेकिन अपने-अपने मोहल्लों में आम स्वास्थ्य समस्याओं के इलाज करने में भी ये सक्षम हैं। अब मजदूर परिवारों के बच्चों को ट्रेनिंग देने का कदम उठाया जा रहा है। शहीद अस्पताल के चिकित्साकर्मी-प्रशिक्षण (नर्स-प्रशिक्षण) के लिए सात महीने का एक नियमित कार्यक्रम है, जिसमें मुख्य रूप से मजदूर-किसान परिवारों के लड़के-लड़कियों को प्रशिक्षित किया जाता है।

ग) स्वास्थ्य कार्यक्रम हमेशा मेहनतकशों के संघर्ष के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर आगे बढ़ रहा है। लाल-हरा परिवार का कोई भी संगठन जब संघर्ष या हड़ताल में होता है तो संगठन के सदस्यों और उनके परिवारों के इलाज की जिम्मेदारी शहीद अस्पताल लेता है। भोपाल के गैस पीड़ितों का संघर्ष हो या नर्मदा बचाओ आंदोलन, पूरे राज्य के अन्य जनतांत्रिक कार्यक्रमों को भी दल्ली राजहरा का स्वास्थ्य आंदोलन मदद करता रहा है।

पहले दल्ली राजहरा में सरकारी अस्पताल नहीं था। भिलाई इस्पात संयंत्र का अस्पताल भी अपर्याप्त था। मजदूर अस्पताल की बढ़ती लोकप्रियता को देखकर शासन ने राजहरा में एक एवं डौंडी लोहारा विकास खण्ड क्षेत्र में सात स्वास्थ्य केंद्र बनाये। इस्पात संयंत्र

सभी कामों में यूनियन के प्रतिनिधि मजदूर महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे।

' स्वास्थ्य के लिए संघर्ष ' का प्रतीक

स्वास्थ्य आंदोलन में काम करने के साथ-साथ इसे बढ़ाने के लिए आर्थिक स्रोत भी पूरी तरह से मजदूरों द्वारा ही जुटाये गये हैं। जब-जब किसी आर्थिक संघर्ष में उन्होंने जीत हासिल की, तब-तब स्वास्थ्य आंदोलन और शहीद अस्पताल को आगे बढ़ाने के लिए चंदा दिया। इस चंदे से ही गैरेज में चलायी जाने वाली डिस्पेंसरी से शुरू करके नौ सालों में 15 बिस्तरों वाले अस्पताल से होते हुए आज अत्याधुनिक प्रयोगशाला, आपरेशन थियेटर, एम्बुलेंस सहित 45 बिस्तरों वाला दो मंजिला अस्पताल बन पाया है। निर्माण की इस शृंखला में अस्पताल यहीं नहीं रुक गया है। अस्पताल की तीसरी मंजिल, बाहर से आये मरीजों के साथ आये लोगों को रहने व खाना बनाने के लिए मकान का निर्माण कार्य करीब-करीब पूरा हो गया है। जरूरत के हिसाब से इस प्रकार प्रगति होती रहेगी।

इन नौ सालों में प्रगति की इस रफ्तार को देखकर सरकारी और गैर-सरकारी, देशी और विदेशी मदद के कई प्रस्ताव बार-बार आते रहे, परंतु यूनियन इन प्रस्तावों को ठुकराते हुए खुद के बल-बूते पर कार्यक्रम को बढ़ाती रही है। इसके पीछे यूनियन का यह सोच है कि बाहरी आर्थिक मदद लेने पर अपने कार्यक्रम पर बाहरी नियंत्रण हो जायेगा जिसे यूनियन स्वीकार नहीं करती है।

सार्थक स्वास्थ्य प्रणाली की ओर

' स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करो ' कार्यक्रम जब शुरू हुआ तो निश्चित रूप से रोग के इलाज और उसकी रोकथाम में से किसे प्राथमिकता देना है, इस विषय पर लम्बी बहस स्वास्थ्यकर्मियों के बीच छिड़ गयी। अस्पताल बनाना है या नहीं, इस विषय पर कुछ स्वास्थ्यकर्मियों का स्पष्ट मानना था कि अस्पताल बनाने से जन स्वास्थ्य के प्रचार का काम मार खायेगा और ' स्वास्थ्य के लिए संघर्ष ' पिछड़ जायेगा। परंतु एक बार सर्वसम्मति से अस्पताल का काम शुरू होने के बाद पिछले नौ सालों का हमारा अनुभव रहा है कि ' स्वास्थ्य के लिए संघर्ष ' और ' स्वास्थ्य चेतना ' के काम में लोगों का विश्वास जीतने में अस्पताल कारगर रहा है। स्थानीय स्वास्थ्य-सम्बंधी अवैज्ञानिक धारणाओं और अंधविश्वासों के खिलाफ तथा मुनाफाखोर डाक्टरों के साथ अवैज्ञानिक तौर-तरीकों के इस्तेमाल के खिलाफ वैज्ञानिक, सुखी, सस्ती और तार्किक चिकित्सा पद्धति के पक्ष में जनमत तैयार करने में डिस्पेंसरी व अस्पताल की भूमिका महत्वपूर्ण एवं मददगार रही है। आज अस्पताल और ' स्वास्थ्य के लिए संघर्ष ' एक दूसरे से कंधे-से-कंधा मिला कर आगे बढ़ रहे हैं।

राजहरा का ' स्वास्थ्य के लिए संघर्ष ' का आंदोलन, मेहनतकश जनता के अपने अधिकारों के लिए चलने वाले एक बड़े आंदोलन का हिस्सा है। यहाँ आंदोलनरत मजदूरों ने अपने अनुभवों से सीखा है कि अधिकांश स्वास्थ्य समस्याएँ मूल रूप से आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक समस्याएँ हैं और इसलिए अगर मौजूदा ढाँचे में बदलाव नहीं होता है, तो मौजूदा स्वास्थ्य समस्याएँ वैसी की वैसी ही रहेंगी। चूँकि स्वास्थ्य की समस्याएँ अन्य समस्याओं से सीधे-सीधे जुड़ी हैं, इसलिए स्वास्थ्य आंदोलन अन्य समस्याओं को हल करने के लिए चलाये

' स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करो ' आंदोलन

15 अगस्त 1981 की एक सार्वजनिक सभा में नियोगी ने ' स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करो ' आंदोलन शुरू करने का आह्वान किया। उस समय मजदूरों को बाँटा गया पर्चा यहाँ प्रस्तुत है। *— सं.*

संगवारी,

हम केवल पैसे के लिए नहीं, पर एक नया समाज और एक नयी व्यवस्था के लिए लड़ रहे हैं। इस नये समाज में पैसा और मुनाफा नहीं परंतु आदमी की जिंदगी ही सब से मूल्यवान वस्तु समझी जायेगी। इस लड़ाई के अंतर्गत हम एक नयी स्वास्थ्य व्यवस्था भी तैयार करना चाहते हैं, जो इन नये विचारों पर ही आधारित होगी। यह नयी स्वास्थ्य व्यवस्था एक दिन में नहीं तैयार होगी और न यह किसी के व्यक्तिगत प्रयास से तैयार होगी। बल्कि हम सब की संगठित ताकत इस प्रयास और इस लड़ाई में जब लगेगी तब ही यह सफल हो सकता है। **आओ, स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करें।**

' स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करो ' आंदोलन में हम अभी आठ मुद्दों को लेकर काम चलाने की बात सोच रहे हैं। ये मुद्दे कोई बंधे हुए नहीं हैं, पर इन पर आप सब का सुझाव मिलना चाहिए —

1. टी. बी. (क्षय रोग) के जितने रोगी हैं, उनका निदान करना और इलाज का इंतजाम करना।
2. गर्भवती औरतों को पंजीकृत करना और उचित समय पर उनकी देखभाल करना ताकि प्रसव सुरक्षित हो और बच्चे स्वस्थ हों।
3. छोटे बच्चों की देख-रेख और उचित पालन-पोषण का इंतजाम करना। बच्चों को सही समय पर टीका इत्यादि लगाने का इंतजाम करना।
4. एक डिस्पेंसरी चलाना, खास करके उन लोगों के लिए जिनको बी. एस. पी. के इलाज की सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं।
5. एक अस्पताल बनाना जिसमें गाँव के किसानों को अपने स्वास्थ्य कार्यक्रम के अंतर्गत जरूरी सेवाएँ उपलब्ध हों।
6. अपने पर्यावरण को स्वस्थ बनाना, खास करके पीने का स्वच्छ पानी प्राप्त करने की जानकारी और सुविधा हर घर में पहुँचाना; इस तरीके से हैजा तथा अन्य बीमारियों की मात्रा घटाना।
7. अपने संगठन और आंदोलन में भागीदार हर परिवार के स्वास्थ्य के बारे में जानकारी इकट्ठा करना और उसका विश्लेषण करना।
8. अपने संगठन में उन लोगों को, जो इस काम में खास रुचि लेते हैं, प्रशिक्षण देना और " स्वास्थ्य संरक्षक " तैयार करना। उसके माध्यम से विभिन्न जगहों में प्राथमिक उपचार तथा अन्य स्वास्थ्य सेवाएँ फैलाना।

किशोर भारती (होशंगाबाद) संस्था की तरफ से उनके प्रतिनिधि डॉ. बिनायक सेन (एम. बी. बी. एस., एम. डी.) हमारे इस कार्यक्रम का संचालन करेंगे।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा दल्ली राजहरा **छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ**

□

(छमुमो के सौजन्य से।)

तमाशबीन बना रहा और राजनेता बयान देते रहे। केस भी मजदूरों पर ही दायर हुए।

अंत में ऐसे ही एक माफिया षड्यंत्र ने नियोगी को मार डाला।

एक विडम्बना। भिलाई के पाँच उद्योगपतियों में से एक दारू का सौदागर है — राजहरा के शराब ठेकेदार से कई गुना अधिक बड़ा। फर्क यही है कि वह स्वयं शराब का निर्माता है। उसकी बनायी दारू राजहरा का ठेकेदार बेचता है।

एक फर्क और। भोपाल में अब इंका सरकार नहीं है। भिलाई की माफिया राजनीति भाजपा सरकार के भी संरक्षण में फल-फूल रही है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के घोषित जीवन-मूल्यों की शपथ खाने वाली भाजपा सरकार शराब के उस सौदागर, कैलाशपति केडिया, को न केवल दारू उत्पादन में सक्रिय सहयोग दे रही है, बल्कि उसे 'साहित्य सेवा' के नाम पर पुरस्कृत भी कर रही है।

विडम्बना यह भी है कि श्रम व औद्योगिक कानूनों का मखौल उड़ाकर एवं मजदूर आंदोलन को आतंकित करके कमाये गये धन पर आधारित 'केडिया पुरस्कार' हिन्दी के एक प्रसिद्ध साहित्यकार को 'सुशोभित' कर रहा है।

सिर्फ दल्ली राजहरा ही नहीं, वरन् छत्तीसगढ़ का सारा औद्योगिक अंचल तेजी से धनबाद बन रहा है।

❑

(सितम्बर 1992)

छत्तीसगढ़ी आल्हा गीत के अंश / फागूराम यादव

" शोषित पीड़ित जनता मनहा,
ये संगठन ला मन से भाय,
नांदगाँव कपड़ा मिल मजदूर,
दउड़ के भइया दल्ली आय,
अपन हाथ में गा मोर भइया,
लाल-हरा झंडा ला उठाय,
फिर लड़ीन लड़ाई उहाँ के मजदूर,
अपन छाती ला दिये अड़ाय,
अधिकार के बात करीन संगवारी,
भले पुलिस के डंडा खाय,
मजदूर के जब एकता देखीन,
उँहचो शासन गोली चलाय,
चार झन साथी ला शहीद बनाइन,
गुहा नियोगी ला जेल भिजवाय,

तभो मजदूर लड़त रहिन गा,
नेता ला अपन लिये छुड़ाय,
अइसन ताकत एकता में होथे,
जेहा अपन अधिकार ला पाय,
उँहचो विजय होइस मजदूर के,
ये सब एकता के ताकत आय,

लाल रंग हे मजदूर मन के,
अउ हरियर रंग हा किसान के आय,
दोनों ताकत एक में मिलके,
अग्नि कस गोला बन जाय,
अइसे बनाइस एकता नियोगी,
छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा कहाय,
संघर्ष के खातिर करे निर्माण ला,
निर्माण के खातिर युद्ध उठाय,

और यूनियन की इससे अपेक्षाओं के बारे में निम्नलिखित रपट दी है –

"1. सन् 1980-81 में मजदूरों ने स्थानीय पंजाब सिंध नेशनल बैंक और अन्य बैंकों में 1,000 से अधिक नये फिक्स्ड डिपाजिट खाते खोले।

2. छोटे-छोटे दुकानदार छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ से अत्यंत खुश हैं चूंकि अभियान के वर्षों में उनकी बिक्री बढ़ गयी थी।

3. कई मजदूरों ने आस-पास या तो नयी जमीनें खरीदी हैं या गिरवी रखी हुई जमीनें छुड़वा ली हैं।

4. यूनियन के विभिन्न रचनात्मक कामों में अचानक अधिक आर्थिक जरूरत आ जाने के कारण यूनियन ने मजदूरों से लगभग 50,000 रुपये उधार लिये।

5. 'कुछ लोग लुक-छिप कर पीते हैं', इससे शराब की सामाजिक मान्यता खत्म होने का ही तथ्य उजागर होता है।

6. मजदूरों के रहन-सहन के स्तर और बच्चों की शिक्षा के प्रति मजदूरों की जागरूकता में वृद्धि हुई है और श्रमिक महिलाओं पर पारिवारिक अत्याचारों में कमी आयी है।

7. नौजवानों और बच्चों के जीवन पर इस अभियान का दीर्घकालीन असर होगा।

8. मजदूरों की सक्रिय भागीदारी से चलने वाला यह दीर्घकालीन अभियान है जो मजदूर परिवारों में सामाजिक व राजनैतिक शिक्षण का आधार है।"

('जनवादी आंदोलन बनाम हिंसा की राजनीति', पी. यू. सी. एल., म. प्र., की रपट, मई 1982, से उद्धृत।)

शराब माफिया की प्रतिक्रिया

शराबविरोधी अभियान की वजह से शराब के ठेकेदारों को लाखों का घाटा हुआ। यहाँ तक कि ठेके की नीलामी में दिये गये पैसे तक वसूलना मुश्किल हो गया था। जाहिर है कि वे यूनियन के कट्टर विरोधी बन गये। चूंकि इन ठेकेदारों के आर्थिक हित खदान के ठेकेदारों से फर्क नहीं थे, अतः उनका इस विरोध में जुड़ना स्वाभाविक था, खासकर तब जब खदान में चल रहे मजदूरों के आर्थिक संघर्ष के कारण खदानों के ताकतवर ठेकेदारों को कई बार झुकना पड़ चुका था। शराब के मुख्य ठेकेदार (सरदार गुलबीर सिंह भाटिया) की राजनीति में अच्छी घुसपैठ थी – वे स्वयं दल्ली राजहरा की कांग्रेस (इ) की नगर कमेटी के उपाध्यक्ष थे। इनको प्रदेश की तत्कालीन इंका सरकार के उद्योग मंत्री श्री झुमुकलाल भेड़िया (दल्ली राजहरा के क्षेत्रीय विधायक भी) का सक्रिय समर्थन प्राप्त था। इस प्रभाव के सहारे इन्होंने अपने ठेके पर शराब सस्ती करवा ली थी। आलम यह था कि जो बोतल राजहरा में मात्र चौदह रुपये में मिलती थी, वही बोतल सिर्फ 24 कि. मी. दूर महामाया की सरकारी दुकान में बाईस रुपये में बिक रही थी। शराब के रेट कम करवाने का मकसद इलाके के बाहर के लोगों को अपने ठेके पर आकर्षित करना था। जब यूनियन ने ऐसी हरकतों का खुलकर विरोध किया तो शराब माफिया ने स्थानीय नौकरशाही और इंका नेतृत्व के साये में खदान ठेकेदारों के साथ मिलकर यूनियन पर हर प्रकार के हमले शुरू किये। यहाँ तक कि स्वयं नियोगी को हत्या की अनेक धमकियाँ मिलीं।

अप्रैल 1982 में अखिल भारतीय नशाबंदी परिषद की राजहरा शाखा के अध्यक्ष और यूनियन के शराब-विरोधी अभियान में सक्रिय श्री बाबूलाल शर्मा को बालोद-राजहरा मार्ग पर

1. हालाँकि शराब का विरोध नैतिक आधारों पर भी किया गया, पर इसे मात्र एक नैतिक आंदोलन के रूप में देखना उचित नहीं होगा। शराब के विरोध को सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनैतिक नींव पर खड़ा किया गया। नैतिकता भी जो उभरी वह भी इन्हीं स्रोतों से उपजी।

2. शराब-विरोधी अभियान एक सांस्कृतिक-सामाजिक आंदोलन है पर यह सफल इसलिए हो पाया चूँकि इसको मजदूरों के सामाजिक-आर्थिक विकास के संदर्भ में चलाया गया और चलाने वाली यूनियन ने मजदूर समाज में अपनी विश्वसनीयता सामाजिक-आर्थिक संघर्ष को सफल बनाकर अर्जित कर ली थी।

3. शराब को मजदूर-विरोधी राजनैतिक गठजोड़ (ठेकेदार-अफसरशाही-राजनीतिज्ञ) के हथियार के रूप में प्रस्तुत करके इसके विरोध को मजदूरों की बढ़ती हुई राजनैतिक चेतना से जोड़ा गया। इस प्रकार यह अभियान वर्ग संघर्ष से प्रेरित हुआ।

4. जो शैक्षिक तरीके अपनाये गये उनके पीछे छत्तीसगढ़ी समाज, विशेषकर आदिवासी समाज, की संस्कृति और सामाजिक परम्पराओं की गहरी समझ झलकती है।

5. यहाँ भी विकल्प के खोज ने प्रभावकारी भूमिका निभायी। सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से मजदूरों के लिए वैकल्पिक मनोरंजन की व्यवस्था की गयी और उनकी अतिरिक्त ऊर्जा का उपयोग संगठन के रचनात्मक कार्यक्रमों में किया गया।

6. चूँकि शराब का सबसे बुरा असर महिलाओं और बच्चों के जीवन पर होता है, अतः महिलाओं ने इस अभियान में अगुवाई की। छमुमो के महिला मोर्चे के गठन के बीज भी यहीं अंकुरित होने लगे थे।

अभियान कितना [illegible] ?

[illegible] एक हिंदी [illegible] समाचार पत्री ने लिखा कि सन् 1980-82 के दौरान 10 से 15 हजार मजदूरों ने शराब पीना छोड़ दिया। एक पत्रकार ने 20 जनवरी 1981 को पाया कि जिस शराब भट्ठी पर वेतन के दिन शराब की 5,000 बोतलों की बिक्री होती थी, उसी पर सिर्फ 40-50 बोतलें बिक पा रही थीं। उसी पत्रकार के अनुसार वर्ष 1980-81 में [illegible] ठेकेदारों को लाखों का घाटा हुआ। पी. यू. सी. एल. (मध्य प्रदेश) की जाँच टीम ने मई 1982 में लिखा, "चाँदी के गहने बेचने वाले एक दुकानदार के अनुसार लगभग 50% मजदूर शराब छोड़ चुके हैं। उसने तो यहाँ तक [illegible], शनिवार (साप्ताहिक भुगतान का दिन) की रात को शहर के फुटपाथों पर नशे में धुत मजदूर चारों ओर पड़े रहते थे और अब ऐसा लगभग नहीं होता है। इस कथन का सबूत जाँच समिति को मिला क्योंकि शनिवार की रात जाँच समिति राजहरा में ही थी और वहाँ किसी को शराब के नशे में धुत घूमते हुए नहीं देखा गया। मजदूरों के साथ अलग बैठकर चर्चा [illegible] लगभग सबने शराब पीनी छोड़ दी है। केवल एक मजदूर ने कहा, 'बुरा [illegible] [illegible] नहीं छोड़ पाया हूँ। कभी-कभी छिपकर थोड़ी पी लेता हूँ परंतु अब [illegible] रही है'।"

उसी टीम ने यूनियन के पदाधिकारियों से साक्षात्कार के आधार पर अभियान के प्रभाव

शराब की लत छुड़ायी संगठन ने

अमन कुमार नम्र • अनिल सद्गोपाल

छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ द्वारा सन् 1977 से किये गये संघर्षों के फलस्वरूप दल्ली राजहरा के खदान मजदूरों की दैनिक औसत मजदूरी तीन-साढ़े तीन रुपये से बढ़कर सन् 1981-82 में बीस से तेईस रुपये हो गयी। लेकिन इसके साथ-साथ दल्ली राजहरा क्षेत्र में शराब की खपत भी तेजी से बढ़ने लगी। यूनियन नेतृत्व का स्पष्ट मत था कि यदि मजदूरी बढ़ने का लाभ उनके पारिवारिक जीवन को सुधारने में मिलना है तो खून-पसीने की इस कमाई को शराब में बहने से रोकना होगा। जब सन् 1978 में यूनियन ने अपने 17 विभिन्न विभाग खोले तो उनमें एक 'नशाबंदी विभाग' भी था। इस विभाग के तहत यूनियन ने एक जबर्दस्त शराब-विरोधी अभियान शुरू किया।

जन शिक्षण

यूनियन दफ्तर की दीवारें शराब-विरोधी पोस्टरों एवं नारों से ढँक गयीं। इस अभियान के दौरान चलायी गयी शैक्षिक प्रक्रिया के बारे में मई 1982 में एक नागरिक अधिकार जाँच दल द्वारा प्रसारित रपट ने लिखा है,

> "हजारों मजदूरों को सामूहिक रूप से शराब पीने के खिलाफ राष्ट्रीय शहीदों के नाम पर कसमें दिलवायी गयीं। शराब पीने वालों पर अर्थदंड लगाने और उनका सामाजिक बहिष्कार करने की व्यवस्था की गयी। इस अभियान की खासियत यह रही है कि शराब की आदत छुड़वाने के लिए राजनैतिक चेतना का भी सहारा लिया गया है। मजदूरों का ध्यान इस बात की ओर आकर्षित किया गया कि उनके गाढ़े पसीने की कमाई किस प्रकार शराब के जरिये पूँजीपतियों के पास पहुँचकर मजदूर-विरोधी गठबंधन को और अधिक मजबूत करती है।"
>
> यूनियन नेताओं और मजदूरों से शराब-विरोधी अभियान के कुछ अद्भुत तरीकों के बारे में पता चला। जब कोई व्यक्ति शराब के नशे में पाया जाता है तो यूनियन की मीटिंग में सब लोगों के सामने उसे खड़ा करके शराब पीने के पक्ष में आधा घंटा भाषण देने को कहा जाता है। आत्म-आलोचना से चेतना जगाने का यह एक दिलचस्प उदाहरण है। नशे की हालत में पकड़े जाने पर अक्सर यूनियन की ओर से दंडस्वरूप जुर्माना लगाया जाता है, किंतु कुछ समय बाद जुर्माने का अधिकांश हिस्सा जुर्माना भरने वाले मजदूर की पत्नी को लौटा दिया जाता है। यह अभियान इतना लोकप्रिय हुआ है कि महिलाएँ और बच्चे अपने घर के पुरुषों को नशे की हालत में पकड़कर यूनियन दफ्तर ले आते हैं। चोरी से शराब पी लेने वाले लोगों को यूनियन के नेता कई दिनों तक हर शाम अपने साथ रखकर घुमाते हैं, जिससे शराब पीने का समय तो टलता ही है, साथ ही नेताओं के साथ रहने का एक मनोवैज्ञानिक असर भी होता है। या फिर उन्हें यूनियन के कामों की ड्यूटी दे दी

के बीच की खाई को और बढ़ा दिया है।

जंगलों की बेतहाशा कटाई के चलते आदिवासियों से उनके जीविकोपार्जन के प्राथमिक स्रोत छिन रहे हैं। ऐसी जंगल कटाई और साथ में दोषपूर्ण जल प्रबंध ने इन इलाकों को सूखे व अकाल के गर्त में धकेल दिया है। खदानों के बेतरतीब ढंग से किये जा रहे मशीनीकरण के कारण बढ़ रही बेरोजगारी की भीषण समस्या को हमें इसी पृष्ठभूमि में देखना होगा। इसने बेरोजगार युवाओं को या तो बंधुआ मजदूर और कंगाल बना दिया है या फिर उन्हें रोजगार की तलाश में बाहर पलायन करने को मजबूर कर दिया है, जिसके परिणामस्वरूप गाँव व समाज का पूरा ताना-बाना ही बुरी तरह छिन्न-भिन्न हो रहा है। अपने बच्चे बेचने को मजबूर माँ-बाप और वेश्यावृत्ति अपनाने को मजबूर नौजवान व नाबालिग लड़कियाँ, यहाँ आम बातें हो गयी हैं।

'सेल' प्रबंधन की, और खासकर भिलाई स्टील प्लांट के प्रबंधन की, स्थानीय लोगों की इस दुर्दशा के प्रति तनिक भी हमदर्दी नहीं है।

यह बात भी गौर करने की है कि जब जापान व अन्य विकसित देश इस्पात उद्योग में ऊर्जा की खपत में कमी ला रहे हैं, हमारा इस्पात प्रबंधन ठीक उल्टा काम कर रहा है। हम यहाँ विभिन्न मदों में लागत का एक तुलनात्मक आँकड़ा (प्रतिशत में) उदाहरणस्वरूप पेश कर रहे हैं –

		'सेल'	जापान
सामग्री	–	20	22
ऊर्जा	–	43	35
श्रम	–	7	24

(स्रोत: बिज़नेस इंडिया, 10-23 अगस्त 1987)

जब हमारी यूनियन के प्रतिनिधियों ने इस मामले (यानी, खनन के मशीनीकरण) पर उन विशेषज्ञों से बात की, जिनमें से लगभग सभी को हाल ही में 'सेल' मंत्रालय ने 'मूल्य निर्धारण एवं विकास' के काम के लिए प्रतिनियुक्ति पर भेजा है, तो उन्होंने हताशा के साथ बताया कि 'सेल' के वर्तमान अध्यक्ष (श्री कृष्णमूर्ति)[1] बेवजह मशीनीकरण को तरजीह दे रहे हैं; जबकि विशेषज्ञों द्वारा ऊर्जा की खपत में बचत करने के लिए दिये गये कई संशोधन प्रस्तावों को दरकिनार कर दिया गया है। वे ऐसा इसलिए कर पाये हैं क्योंकि उनकी पहुँच सीधे राजीव गांधी तक है।

यह भी सच है कि हम पहले ही कुद्रेमुख लौह अयस्क परियोजना में 750 करोड़ रुपये से भी ज्यादा पूँजी लगा चुके हैं। हम निम्न किस्म के लौह अयस्क की गुणवत्ता को बढ़ाने में अपने बेहतरीन व सीमित संसाधनों को झोंक रहे हैं (जबकि हमारे देश में बेहतर गुणवत्ता वाले अयस्कों की प्रचुरता है) और यह भी इसलिए कि उन्हें दूसरे देशों के इस्पात संयंत्रों को भेजा जा सके। निश्चित ही, यह सब औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था में ही सम्भव है।

---

[1] वर्तमान प्रतिभूति घोटाले के एक अभियुक्त श्री वी. कृष्णमूर्ति जो सन् 1985-90 में 'सेल' के अध्यक्ष थे और बाद में योजना आयोग के सदस्य बने। सन् 1980-81 में नव-निर्वाचित प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने मारुति उद्योग लि. के गठन की पूरी कमान इनके हाथों में सौंप दी थी; 'छोटी कार' के नाम पर जापानी तकनालाजी से मारुति कार का निर्माण इन्हीं की पहल का नतीजा था। प्रतिभूति घोटाले के जगजाहिर होने के दो-ढाई वर्ष पूर्व दी गयी नियोगी की यह चेतावनी उल्लेखनीय है।

व जन-विरोधी नीतियों को प्रोत्साहन देना फैशन की बात बन गयी थी। वे ऐसे कदमों के द्वारा 'प्रगति दर' के सिर्फ झूठे आँकड़े गढ़ते हुए राष्ट्रीय / स्थानीय बुनियादी जरूरतों को नजरअंदाज करते रहते थे।

मैं यहाँ मैन्युअल (मानवीकृत) और मशीनीकृत खनन के तुलनात्मक अध्ययन की एक रूपरेखा पेश करना चाहूँगा।

मैन्युअल (मानवीकृत) प्रणाली	मशीनीकृत प्रणाली
1. परिमाण (उत्पादन की मात्रा)	
क) जब भिलाई स्टील प्लांट का प्रबंधन पूरी तरह मैन्युअल प्रणाली पर निर्भर था, तब सिर्फ दल्ली राजहरा की खदानों से ही इतना उत्पादन होता था कि भिलाई स्टील प्लांट की जरूरतों को पूरा करने के बाद भी खदानों में उसका स्टॉक यार्ड हर साल लबालब भर जाता था। उसने कई बार अन्य इस्पात संयंत्रों को भी अयस्क की आपूर्ति की है। ख) सन् 1978 के पहले बैलाडीला की एन. एम. डी. सी. खदानों से मैन्युअल खनन द्वारा निकाला गया अयस्क जापान तक भेजा जाता था। ग) अपनी उत्पादकता के लिए सदा से मशहूर रहे भिलाई स्टील प्लांट को लौह अयस्क की कमी के कारण कभी नुकसान नहीं उठाना पड़ा।	क) देश के उन सभी स्टील प्लांटों में, खासतौर पर दुर्गापुर, राउरकेला और बोकारो के संयंत्रों में, जहाँ अयस्क आपूर्ति केवल मशीनीकृत खदानों से होती थी, वहाँ अयस्क का अभाव रहा। अंततोगत्वा उन्हें निजी खान मालिकों पर निर्भर होना पड़ता था। निजी खान मालिक तकनीकशाहों को कमीशन देकर खुश कर देते थे, लेकिन वे लोग श्रम कानूनों और खनन-सम्बंधी कानूनों का पालन करने के मामले में काफी बदनाम रहे हैं। बार-बार छँटनी और गैर-जिम्मेदाराना खनन ने झारखंड व छत्तीसगढ़ जैसे पिछड़े आदिवासी इलाकों की अर्थव्यवस्था को चौपट कर दिया है।
2. गुणवत्ता	
क) दल्ली राजहरा ने अपनी शुरुआत से ही श्रेष्ठ किस्म का उत्पाद देने का अपना रिकार्ड बरकरार रखा है। ख) मैन्युअल खदानों में हाथ से थोड़ी-थोड़ी मात्रा में उत्पादन करने की वजह से समुचित ब्लेन्डिंग[1] सम्भव हो जाती है जिसके कारण बेहतर किस्म का उत्पाद दिया जा सकता है।	क) अपनी बंधक खदानों के केवल मशीनीकृत खनन पर निर्भर 'सेल' के इस्पात संयंत्रों को मिलने वाले अयस्क में लोहे की मात्रा सिर्फ 60 से 64 प्रतिशत रही है। ख) इससे उत्पादन की लागत पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है और ब्लास्ट फर्नेस में ईंधन की खपत बढ़ जाती है।

[1] विभिन्न गुणवत्ता (लौह प्रतिशत, साइज़ आदि) वाले अयस्कों को मिलाकर धमन भट्ठी के लिए उपयुक्त किस्म का माल तैयार करने की प्रक्रिया।

– 16 जुलाई : खदानों में एक दिन की प्रतीकात्मक हड़ताल।

– 18 जुलाई : विशाल जन सभा।

– 21 जुलाई : अनशन के उन्नीसवें दिन जनकलालजी की तबियत बहुत खराब हो गयी। प्रशासन बार-बार अनशन भंग करने का अनुरोध करने लगा।

– 23 जुलाई : जनकलालजी जिन माँगों को लेकर अनशन पर बैठे थे, उनमें बी. एस. पी. से की गई माँगों के अलावा राज्य सरकार से भी कुछ माँगें की गयी थीं। जिला प्रशासन ने वे माँगें मान लीं और वायदा किया कि वे बी. एस. पी. मैनेजमेंट पर समझौते के लिए दबाव डालेंगे। 7,000 मजदूरों की सभा ने जनकलालजी का अनशन समाप्त करने का निर्णय लिया। उन्हें शहीद अस्पताल में भर्ती किया गया। इसी दिन से नियोगी अनशन पर।

अगस्त 1989

– 1 अगस्त : नियोगी का स्वास्थ्य तेजी से बिगड़ने पर पुलिस ने अनशन तुड़वाने के लिए उन्हें गिरफ्तार करके डौंडी अस्पताल में भर्ती कर दिया। श्रमिकों ने क्रमिक अनशन शुरू किया और मैनेजमेंट को बता दिया कि अगर 72 घंटों के अंदर उनकी माँगें पूरी नहीं होती हैं तो लोहा-पत्थर ढोने वाली ट्रेनों का रास्ता रोका जायेगा।

– 2 अगस्त : जिला अदालत ने यूनियन को 14 तारीख तक का स्थगन आदेश दिया कि मजदूर रेल न रोकें।

अदालत का एक पूर्व निर्देश था कि सी. एम. एस. एस. के सदस्य बीके कम्पनी की मशीनों या श्रमिकों का रास्ता नहीं रोकेंगे। इसी के बल पर बीके कम्पनी ने इस दिन मशीनों से लदी तीन ट्रकें दल्ली खदान पर भेजने की कोशिश की। सी. एम. एस. एस. के सदस्यों ने अदालत के आदेश को अनसुना करके रास्ता रोका।

– 3 अगस्त : एटक ने बीके कम्पनी में काम कर रहे मजदूरों को जुलूस बनाकर ट्रकों के साथ भेजा। सी. एम. एस. एस. सदस्यों ने एक बिगड़ी हुई ट्रक इस तरह रास्ते में रख दी कि ट्रकों को लेकर जुलूस जाने न पाये।

– 10 अगस्त : म. प्र. सरकार के मुख्य सचिव ने बी. एस. पी. के मैनेजिंग डायरेक्टर और दुर्ग के जिला मैजिस्ट्रेट व एस. पी. को भोपाल बुलाया। आने वाले चुनाव के परिप्रेक्ष्य में बी. एस. पी. पर सी. एम. एस. एस. की माँगों को मान लेने के लिए दबाव डाला।

– 12 अगस्त : रात के नौ बजे सी. एम. एस. एस. और बी. एस. पी. के बीच समझौते के करारनामे पर दस्तखत किये गये।

– 13 अगस्त : रायपुर के सहायक श्रम आयुक्त (असिस्टेंट लेबर कमिश्नर) के सामने समझौता हुआ।

– 14 अगस्त : विजय दिवस व शपथ दिवस। शपथ — मशीनीकरण के विरुद्ध निरंतर संघर्ष करते रहने की।

शांत मुद्रा में विरोध प्रदर्शन करते रहे।

कोर्ट के आदेश में सिर्फ 'पहुँचाते समय' सुरक्षा देने की बात लिखी थी, इसलिए पुलिस बल इन 170 लोगों को काम पर 'पहुँचा कर' लौट आया। ये मजदूर काम की जगह पर बंदी हो गये।

– 2 अप्रैल से पहली मई तक सी. एम. एस. एस. ने 'स्लो डाउन' किया था। 2 मई से सी. एम. एस. एस. ने पूरी तरह काम बंद कर दिया। भिलाई इस्पात संयंत्र को हर रोज 40 लाख रुपये का नुकसान होने लगा (बी. एस. पी. के मैनेजिंग डायरेक्टर के वक्तव्य के अनुसार)।

– केंद्रीय इस्पात व खान मंत्री श्री माखनलाल फोतेदार ने सी. एम. एस. एस. के नेताओं को बातचीत के लिए दिल्ली बुलाया।

– 22 मई : श्री फोतेदार के साथ नियोगी की बातचीत हुई। श्री फोतेदार ने पूरी बात सुनकर कहा कि मशीनीकरण को खत्म करने की क्षमता उनके पास नहीं है, क्योंकि वह राष्ट्रीय औद्योगिक नीति का एक भाग है। विभागीयकरण की माँग को उन्होंने जायज माना। परंतु उन्होंने कहा कि मंत्रालय के स्तर पर दल्ली राजहरा के 10 हजार ठेका मजदूरों को अगर विभागीय बना लिया जाता है, तो समूचे भारत में खदानों में काम करने वाले अन्य लगभग एक लाख ठेका मजदूरों के विभागीयकरण का भी दायित्व मंत्रालय पर आ जायेगा। अतः इस मामले में निर्णय बी. एस. पी. के स्तर पर ही लिया जा सकता है।

– 24 मई : 2 मई से सी. एम. एस. एस. ने एटक यूनियन द्वारा की जा रही हिंसा की घटनाओं के विरोध में हड़ताल की थी। कानून और व्यवस्था की स्थिति काफी सुधर जाने पर सी. एम. एस. एस. के मजदूर 24 मई को काम पर लौट गये। पर बी. एस. पी. पर दबाव बनाये रखने के लिए 'स्लो डाउन' चालू रखा।

– 25 मई : 6 मई से बीके कम्पनी के मजदूर वस्तुतः काम की जगह पर बंदी थे। अगर कोई काम की जगह से घर लौटना चाहता तो उसे लौटने दिया जाता था, परंतु दुबारा काम पर जाने की कोशिश करने पर, या अगर नया कोई काम पर जाना चाहता तो उसे रोका जा रहा था।

एस. के. एम. एस. की हालत काफी खराब हो गयी थी। उन्होंने अपना आखिरी हमला किया 25 मई को। गाँव से आने वाले सी. एम. एस. एस. के 4-5 मजदूरों की एस. के. एम. एस. के दफ्तर के सामने पिटाई की गयी। उसके बाद उन्होंने स्थानीय व्यापारियों पर दबाव डाला कि सी. एम. एस. एस. के सदस्यों को कुछ न बेचें। जब व्यापारियों ने इस पर एतराज किया, तो एस. के. एम. एस. के गुंडों ने दो व्यापारियों की पिटाई की।

सी. एम. एस. एस. के दफ्तर में साथियों पर हुए हमले की खबर पहुँचते ही 2,000 श्रमिकों ने चारों तरफ से गुंडों को घेर लिया और उनकी पिटाई की, गुंडे बिखर गये। उधर व्यापारियों की पिटाई की खबर पाकर क्रुद्ध व्यापारियों ने एकजुट होकर एस.

विरोध किया।

- सी. एम. एस. एस. ने अनौपचारिक चर्चा के दौरान बीके कम्पनी को सूचित कर दिया कि यह मामला कम्पनी व यूनियन के बीच नहीं है, वरन् मैनेजमेंट के साथ है। यह मजदूरों के स्थायित्व एवं तकनालाजी चयन का सवाल है। बीके कम्पनी द्वारा लगाये जा रहे क्रशिंग प्लांट के खड़े हो जाने पर मजदूरों की छँटनी शुरू हो जायेगी।
- अपने काम में असफल होने पर बीके कम्पनी ने दुर्ग जिला अदालत में यूनियन की कार्रवाई पर स्थगन आदेश हेतु आवेदन दिया।
- एटक ने दल्ली के दूसरे क्रशिंग प्लांट में अपनी देख-रेख में काम शुरू करवाने का जिम्मा लिया और गाँव-गाँव से बेरोजगार युवकों को इकट्ठा किया।
- 22 फरवरी : एटक के शीर्ष नेताओं ने बेरोजगार युवकों के साथ जाकर राजहरा साइडिंग के क्रशर पर कार्यरत सी. एम. एस. एस. से जुड़े मजदूरों के साथ मारपीट की। मामला गम्भीर होता जा रहा था।

मार्च 1989

- बीके कम्पनी के 97 मजदूर अपनी दिहाड़ी बढ़ाने की माँग पर हड़ताल पर चले गये।
- एटक द्वारा 700-800 बेरोजगार युवकों को लेकर उनके [illegible] की माँग गैर-तार्किक रूप से उठाकर जुलूस व आम सभा। साथ में दल्ली खदान समूह में दूसरा क्रशिंग प्लांट बनाने की जरूरत पर जोर, यानी पूर्ण मशीनीकरण का समर्थन।
- 14 मार्च : मैनेजमेंट ने अपना असली चेहरा उजागर किया। दल्ली समूह की कोंडेकसा 'बी' खदान में कार्यरत एक रेजिंग सहकारी समिति डी. के. एम. एस. एस. (सी. एम. एस. एस. से सम्बद्ध) को बंगाल की महुरपानी खदान में स्थानांतरित करने का निर्णय लिया। यह कोंडेकसा 'बी' खदान को मशीनीकरण हेतु खाली कराने की ओर एक कदम था।
- 15-16 मार्च : सी. एम. एस. एस. ने मैनेजमेंट के उपरोक्त फैसले के विरोध में पूरी खदान में हड़ताल घोषित कर दी। डी. के. एम. एस. एस. अपने कार्यस्थल से नहीं हटी।
- 18 मार्च : मैनेजमेंट ने डी. के. एम. एस. एस. की खदान में ट्रांसपोर्टिंग का काम कर रहे मजदूरों (ये के. एम. एस. एस. सहकारी समिति के सदस्य थे) को [illegible] [illegible] यानी [illegible] डी. के. एम. एस. एस. द्वारा किये जा रहे रेजिंग के [illegible] को भी रोकना लिया।
- सी. एम. एस. एस. ने जुलूस-प्रदर्शन एवं आम सभाओं का सिलसिला तेज कर दिया।

अप्रैल 1989

- 1 अप्रैल : एटक ने 800 बेरोजगारों को इकट्ठा किया और उन्हें जुलूस की शक्ल में बीके कम्पनी में काम करने ले गयी। मैनेजमेंट ने इन 800 मजदूरों को इस लड़ाई के बीच में लाकर खड़ा कर दिया था, ताकि आक्रमण का वार उन पर ही हट जाये। अतः मजदूर-मजदूर की मारपीट न हो इस दृष्टि से सी. एम. एस. एस. ने अलग स्थान

की खदानों से लौह अयस्क की आपूर्ति बढ़ाने के लिए मैनेजमेंट ने अपनी ओर से एक सोच पैदा कर लिया है जिसकी दलीलें इस प्रकार हैं –

1. दल्ली खदान समूह वर्तमान में 25 लाख टन लौह अयस्क की आपूर्ति करता है। भविष्य में इन्हीं खदानों से 42 लाख टन परिशोधित अयस्क की आपूर्ति करना जरूरी हो जायेगा।
2. 42 लाख टन परिशोधित अयस्क का उत्पादन करने के लिए इन खदानों की उत्पादन क्षमता बढ़ाकर 50 लाख टन करनी होगी।
3. इस उद्देश्य से मैनेजमेंट सिर्फ परिशोधन करने की क्षमता बढ़ा रहा है।
4. आज की मानवीकृत खनन पद्धति से यह प्रस्तावित उत्पादन सम्भव नहीं है।
5. इस्पात कारखाने में स्थापित की जा रही सातवीं ' ब्लास्ट फर्नेस ' (धमन भट्ठी) के लिए और अच्छी किस्म का लोहा पत्थर चाहिए जो मानवीकृत पद्धति से सम्भव नहीं है।
6. इसलिए दल्ली खदान समूह का एक हिस्सा मशीनीकृत पद्धति के लिए खाली कराना होगा, यानी वहाँ से मजदूरों को हटाना होगा। फिलहाल वहाँ केवल ' ओवरबर्डन ' हटाने का काम मशीनों से किया जायेगा।

सी. एम. एस. एस. ने इस बार भी मैनेजमेंट की हर दलील, हर वक्तव्य का अपनी दलील, अपने वक्तव्य से खंडन किया है।

मूल लेख में यहाँ पर मैनेजमेंट की दलीलों के यूनियन द्वारा दिये गये उत्तर आँकड़ों सहित प्रस्तुत किये गये हैं जो खंड तीन में नियोगी के निम्नलिखित लेखों में दिये जा चुके हैं – 1. किरंदुल के अग्निगर्भ से (पृ. 100-115), 2. खदानें, मशीनीकरण एवं लोग (पृ. 145-154), 3. आखिर दल्ली राजहरा की लोहा खदानों की समस्या क्या है ? (पृ. 167-175) एवं 4. मशीनीकरण की वेदी पर मजदूरों की कुर्बानी हमें मंजूर नहीं (पृ. 181-183)। इनके अलावा इस लेख की ठीक अगली प्रस्तुति, ' पूर्ण मशीनीकरण किस कीमत पर ? ' (पृ. 409-413) भी देखें। – सं.

यह तो रहीं सी. एम. एस. एस. की जवाबी दलीलें, हमारे जवाबी वक्तव्य। पर वास्तव में लड़ाई के मैदान में सी. एम. एस. एस. कैसे लड़ रहा है, यह समझना होगा।

विगत वर्षों में मैनेजमेंट ने सन् 1981, 1985-86 और फिर 1989 में अर्द्ध-मशीनीकृत पद्धति को खत्म करने के लिए यूनियन पर सीधे हमले किये। हर बार यूनियन ने इन हमलों को सफलतापूर्वक झेला और श्रम-प्रधान तकनालाजी को जिंदा रखा। हम उदाहरण के लिए सन् 1989 में मैनेजमेंट द्वारा किये गये हमलों एवं यूनियन द्वारा उन्हें झेलने का घटनाक्रम व तौर-तरीके यहाँ पेश कर रहे हैं।

मशीनीकरण-विरोधी आंदोलन का घटनाक्रम

दिसम्बर 1988

इस बार मैनेजमेंट ने अपनी कार्रवाई की पृष्ठभूमि बहुत सावधानीपूर्वक तैयार की।

- प्रबंधन ने सातवीं ब्लास्ट फर्नेस में लौह अयस्क की आपूर्ति का तर्क देकर सार्वजनिक

फालतू हो जाते हैं।

इसके विपरीत अर्द्ध-मशीनीकृत पद्धति में मैन्युअल (मानवीकृत) पद्धति की तरह ही ड्रिलिंग, ब्लास्टिंग, रेजिंग, लोडिंग एवं ट्रांसपोर्टिंग के काम किये जाते हैं। इस चरण तक उसी प्रकार की छोटी मशीनों और हाथ के औजारों का उपयोग होता है और रेजिंग व ट्रांसपोर्ट मजदूरों की भूमिका भी वही रहती है। फर्क केवल यह है कि मैन्युअल पद्धति में टिप्पर ट्रक दल्ली पहाड़ से अयस्क को नीचे रेल्वे साइडिंग तक ढोते थे जहाँ से उसे भिलाई स्टील प्लांट भेजा जाता था। अयस्क को भिलाई में 'ओर हैंडलिंग प्लांट' में स्टैकर-रिक्लेमर यंत्रों की मदद से छानकर 'ब्लास्ट फर्नेस ग्रेड' एवं 'सिंटर फाइन ग्रेड' का बनाया जाता था। अर्द्ध-मशीनीकृत पद्धति में दल्ली पहाड़ से अयस्क को टिप्पर ट्रकों द्वारा उसी पहाड़ी के निचले भाग में ही लगाये गये दैत्याकार व स्वचालित 'क्रशिंग प्लांट' के बंकर (मुख) में डाल दिया जाता है। यह प्लांट अयस्क को तोड़कर, छानकर और धोकर 'ब्लास्ट फर्नेस ग्रेड' एवं 'सिंटर फाइन ग्रेड' में बदलता है। भिलाई को केवल यह परिष्कृत माल ही भेजा जाता है।

अर्द्ध-मशीनीकृत पद्धति में रेजिंग मजदूरों द्वारा तोड़े जाने वाले लोहा पत्थर का आकार क्रशिंग प्लांट की जरूरत के मुताबिक बदलना पड़ा। अब लोहा पत्थर को 'लम्प्स' (8 से 300 मि. मी.) और 'फाइन्स' (8 मि. मी. से कम) दो हिस्सों में तैयार करना पड़ता है। 'लम्प्स' को क्रशिंग प्लांट भेजा जाता है या 'रोजी' नामक भंडार में भावी उपयोग के लिए जमा किया जाता है। इसके विपरीत 'फाइन्स' को दल्ली पहाड़ की एक ढाल पर 'फेंक' दिया जाता है। 'फाइन्स' के रूप में न केवल बहुमूल्य लौह तत्व (58%) फिलहाल बेकार जा रहा है, वरन् दल्ली पहाड़ पर एक विकराल पर्यावरणीय समस्या भी खड़ी हो रही है। यह सब इसलिए चूँकि क्रशिंग प्लांट की तकनालाजी 'फाइन्स' के लिए अनुपयुक्त है — इसे तो शावेल-डम्पर आधारित मशीनीकृत खनन से निकलने वाले 1,000 मि. मी. तक साइज के पत्थरों के लिए डिजाइन किया गया था। यह उल्लेखनीय है कि शुरू से ही यूनियन ने आग्रह किया था कि क्रशिंग प्लांट में मानवीकृत खनन के अनुसार तकनीकी परिवर्तन किये जायें। परंतु स्टील प्लांट के तकनीकशाहों ने इस सुझाव को अनदेखा किया, शायद इस उम्मीद में कि एक दिन आंदोलन कमजोर पड़ जायेगा और तब पूर्ण मशीनीकरण को लागू किया जा सकेगा।

'फाइन्स' का प्रश्न समाज-विरोधी सरकारी तकनालाजी नीति और तकनीकशाहों द्वारा खड़ी की गयी दुःखद विकृति का जीता-जागता उदाहरण है।

अर्द्ध-मशीनीकरण के इस सफल प्रयोग के कारण एक ओर हजारों मजदूरों का रोजगार बरकरार रह पाया और दूसरी ओर भिलाई स्टील प्लांट की बढ़ती हुई उत्पादन क्षमता व बेहतर किस्म के अयस्क की जरूरत भी पूरी हो सकी है। इसी मिसाल से समझा जा सकता है कि नियोगी ने क्यों पूर्ण मशीनीकरण को **बेरोजगारी तकनालाजी** और अर्द्ध-मशीनीकरण को **रोजगारी तकनालाजी** के नाम दिये थे।

परंतु विडम्बना यह है कि अप्रैल 1979 के समझौते में इंगित इस दो-वर्षीय प्रयोग का 'पुनरावलोकन' किया जाना था और उसके परिणाम के आधार पर भावी नीति तय होनी थी। भिलाई और 'सेल' के तकनीकशाह आज तक इस 'पुनरावलोकन' से कन्नी काटते रहे हैं, परंतु बिना किसी वैज्ञानिक मूल्यांकन के पूर्ण मशीनीकरण को थोपने की बार-बार कोशिश करते रहते हैं। इस विडम्बना को हल करना 'संघर्ष और निर्माण' की राजनीति के सामने अगली बड़ी चुनौती है।

❑

निर्माण कार्य पिछड़ जाने से प्रबंधन अभी भी मैन्युअल खदानों को कुछ और समय के लिए चालू रखने की जरूरत महसूस कर रहा था। मैनेजमेंट का सोच यही था कि आज नहीं, तो कल इन तमाम मजदूरों को बैलाडीला (किरंदुल) की तरह छँटनी कर निकाल दिया जायेगा। इस सोच के कारण मार्च 1977 में इंटक-एटक की स्थानीय यूनियनों से विद्रोह करके अलग हुए मजदूरों के नेतृत्व को प्रबंधन ने कुछ और समय की समस्या मान कर सहना स्वीकार लिया था। परंतु शंकर गुहा नियोगी के नेतृत्व में यूनियन ने भारत के तकनालाजी के इतिहास में अर्द्ध-मशीनीकरण की नयी अवधारणा जोड़कर खदान मजदूरों के आंदोलन को एक नया आयाम दे दिया था।

देश के अधिकांश औद्योगिक क्षेत्रों में उत्कृष्ट राजनैतिक गुणों के अभाव में 'वोट के लिए तिरंगा झंडा और पेट के लिए लाल झंडा' की बिना मूल्यों वाली अवधारणा चलती रही है। जहाँ-जहाँ एटक-समर्थित यूनियनें रहीं, वहाँ मजदूरों को खदानों के पूर्ण मशीनीकरण की नीति के पक्ष में करने के लिए समझाया गया कि 'यह सोवियत रूस की तकनालाजी है, समाजवादी देश की पूँजी है और बिना इसके विकास सम्भव नहीं है।' इसके विपरीत जहाँ-जहाँ इंटक-समर्थित यूनियनें रहीं, वहाँ मशीनीकरण का विरोध रोकने के लिए मजदूरों को बताया गया कि 'चूँकि यह राष्ट्रीय कार्यक्रम है, हमारी ही पार्टी का कार्यक्रम है, अतः हमें इसका विरोध नहीं करना चाहिए।' इंटक-एटक की स्थानीय यूनियनों की इन नीतियों के कारण सत्तर और अस्सी के दशकों में मशीनीकरण के नाम पर हजारों मजदूरों की छँटनी होती रही। जहाँ मजदूरों ने इसे चुपचाप सहन कर लिया, वहाँ किसी को पता ही नहीं चला। जहाँ मजदूरों ने प्रतिरोध किया, वहाँ सरकार ने गोली चलाकर मजदूरों को ठिकाने लगा दिया। बोकारो, कानपुर, झारखंड, बैलाडीला आदि इन त्रासदायक घटनाओं के प्रमाण हैं।

हमारे देश के नौकरशाह और तकनीकशाह अभिजात स्कूलों की पृष्ठभूमि से पढ़कर आते हैं। उनका रहन-सहन आम जनता के रहन-सहन से बहुत फर्क होता है। वे जिस स्तर पर होते हैं, उस स्तर पर खड़े होकर ही विकास की कल्पना कर सकते हैं। आम तौर पर उनका मानस विदेशी सोच से ग्रसित, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के दबाव से प्रभावित, और सम्भावित 'कमीशनों' से आकर्षित रहता है। इसीलिए तकनालाजी का चयन करते हुए, वे गुणवत्ता एवं उत्पादकता का हौवा खड़ा करके श्रम-आधारित तकनालाजी की उपेक्षा करते हैं। उनके पास हमारी देशज तकनालाजी को आज की सामाजिक-आर्थिक परिस्थिति के अनुकूल विकसित करने का नजरिया ही नहीं होता है। वे आयातित तकनालाजी को बिना परखे ही सर्वोपरि मान कर उसके भ्रमजाल में खुद तो फँस ही जाते हैं, किंतु साथ-साथ देश के अन्य वर्गों के लोगों को, विशेषकर मेहनतकश जनता को, इसी भ्रमजाल में उलझा देते हैं।

एक लम्बे संघर्ष के बाद 20 अप्रैल 1979 को सी. एम. एस. एस. और स्टील प्लांट के प्रबंधन के बीच एक ऐतिहासिक समझौता हुआ। इसके तहत प्रबंधन ने भारत में पहली बार खदानों के पूर्ण मशीनीकरण के स्थान पर अर्द्ध-मशीनीकृत पद्धति को दो वर्ष के लिए प्रयोग बतौर चलाने की स्वीकृति दी और साथ में मजदूरों की छँटनी न करने का आश्वासन भी। इस विजय से दल्ली राजहरा के मजदूरों में काफी जोश एवं आत्मसम्मान का भाव पैदा हुआ। तकनीकशाहों के आँकड़ों के भ्रमजाल को ध्वस्त करते हुए मजदूरों ने अर्द्ध-मशीनीकृत पद्धति

कपड़ा मिलों और इस्पात संयंत्र में विभिन्न ठेकों या अकुशल विभागीय कामों में रोजगार पा लिया था, उन्हें भी छँटनी की धमकी दी जा रही है। भिलाई संयंत्र में पाँच प्रतिशत से भी कम मजदूर स्थानीय हैं। दल्ली की मैन्युअल (मानवीकृत) खदानों में जिन थोड़े-से छत्तीसगढ़ियों (जिनमें आदिवासी भी हैं) को ठेकेदारी प्रथा के अंतर्गत काम मिला है, उन्हें मैनेजमेंट के द्वारा इस हद तक परेशान किया जा रहा है कि या तो उन्हें अपना काम छोड़कर गाँव भाग जाने के लिए बाध्य होना पड़ेगा या फिर भुखमरी की खौफनाक सम्भावना से जूझना पड़ेगा। हम अपने पिछले पत्र में आपका ध्यान इस ओर आकर्षित कर चुके हैं कि किन गैर-कानूनी तौर-तरीकों से दल्ली राजहरा के खदान मजदूरों को रोजगार और उनकी मजदूरी से वंचित किया जा रहा है। अभी सिर्फ नौ साल पहले तक, इन मजदूरों को तीन से चार रुपये तक रोज मजदूरी मिलती थी। हमारे संगठन के प्रयासों के फलस्वरूप वे आज 36 रुपये प्रतिदिन कमा लेते हैं। पिछले छह-सात सालों से हमारे मजदूरों को दो जून भरपेट रोटी की चिंता नहीं करनी पड़ी है। परंतु जब से श्री संगमेश्वरन बी. एस. पी. के मैनेजिंग डायरेक्टर बने हैं, तब से दल्ली राजहरा की झुग्गी-बस्तियों पर भूख और बदहाली का साया मंडराने लगा है। पिछले डेढ़ सालों में मजदूरों को भयंकर परेशानियाँ झेलनी पड़ी हैं। अंततः अब उनके पास कोई चारा नहीं बचा है और वे अपना धीरज पूरी तरह खो चुके हैं।

इसलिए आज हम आपसे, स्थिति हाथ से बाहर होने के पहले, हस्तक्षेप करने और निम्नलिखित समस्याओं का समाधान करने की अपील करते हैं –

1. दल्ली राजहरा के जो खदान मजदूर विगत 15-18 वर्षों से ठेकेदारी प्रथा के तहत एक ही किस्म का काम करते चले आ रहे हैं, उन्हें पूर्व में हुए समझौतों के अनुसार तत्काल नियमित विभागीयकृत काम दिया जाये।
2. राजनांदगाँव की बी. एन. सी. मिल्स में हमारी यूनियन के मजदूरों पर हो रहे गैर-कानूनी हमले तुरंत बंद किये जायें। हर तरह का दमन खत्म हो और सभी लम्बित समस्याओं को बातचीत के जरिये हल किया जाये। नौकरशाहों के तानाशाही तौर-तरीकों पर रोक लगायी जाये।
3. दानीटोला खदान मजदूरों के बाबत दिया गया औद्योगिक ट्रिब्युनल का पंचाट (' अवार्ड ') लागू किया जाये। विगत 10-12 वर्षों से ' भिलाई स्लैग डम्प ' में काम करने वाले मजदूरों की छँटनी करने के बजाय, उन्हें नियमित रोजगार दिया जाये।
4. बाराद्वार क्वार्ट्ज़ाइट खदानों के मजदूरों के विभागीयकरण के बारे में हमारी ट्रेड यूनियन, सी. एम. एस. एस., के साथ दि. 09.04.1985 को हुए समझौते को लागू किया जाये।

सधन्यवाद। शुभकामनाओं सहित,

भवदीय,

शंकर गुहा नियोगी

(उपर्युक्त दोनों पत्र मूल अंग्रेजी से शहीद अस्पताल के डॉ. राजीव लोचन द्वारा किये गये अनुवादों का परिमार्जित स्वरूप हैं।)

पर आक्रमण करते हैं और औद्योगिक अशांति फैला कर अपने गैर-जिम्मेदाराना व्यवहार को बिगड़े हुए औद्योगिक रिश्तों की आड़ में ढकने की कोशिश करते हैं। इन अधिकारियों की 'कार्यकुशलता' अत्यधिक कीमतों पर ठेके देने के दाँव-पेचों और उसके बाद लाभान्वित ठेकेदार के साथ इस लूटमार में हिस्सा बाँटने तक सीमित रहती है।

(यहाँ पर मूल पत्र में दल्ली राजहरा की खदानों से इस लूटमार के तीन ठोस उदाहरण दिये गये हैं। — स.)

तो फिर ये हालात हैं राजहरा में। भिलाई की स्थिति तो और भी बदतर है — वहाँ 'मछली चुराते-चुराते पूरा पोखर ही उठा ले जाने' वाली कहावत चरितार्थ होती है। इस प्रकार सार्वजनिक क्षेत्र की तिजोरी से करोड़ों रुपयों की चोरी हो रही है। हालात कितने खराब हैं इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि भिलाई में 'सेल' (स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड) को अब 'संगमेश्वरन अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड' (भिलाई इस्पात संयंत्र के प्रबंध निदेशक श्री संगमेश्वरन के नाम पर) की संज्ञा दे दी गयी है।

इन प्रबंधकों की 'कार्यकुशलता' की कसौटी सिर्फ एक ही है : **ठेका मजदूरों को भूखा रखने का षड्यंत्र** ! खदानों में उत्पादन लक्ष्य (जो पहले से ही उनकी तयशुदा उत्पादन क्षमता से 40-50 प्रतिशत कम करके रखा जाता है) का मात्र 60-70 प्रतिशत ही पूरा हो पाता है। यह औद्योगिक माहौल बनाने के लिए ऐसे हालात पैदा कर दिये जाते हैं जिनमें मजदूर हड़ताल पर जाने को विवश हो जाते हैं या फिर ठेकेदारों को फायदा पहुँचाने के उद्देश्य से 'निविदा उलझनों' के प्रावधान का बहाना लगाकर हमारे मजदूरों को लगातार महीनों तक भूखे ही सोने के लिए बाध्य कर दिया जाता है।

(यहाँ पर मूल पत्र में सन् 1985-86 की एक तालिका प्रस्तुत की गयी है जिसमें विभिन्न ठेकेदारों / सहकारी समितियों द्वारा की गयी लगभग पाँच हजार मजदूरों की छँटनी के आँकड़े दिये गये हैं। — स.)

आखिर यह अघोषित छँटनी के अलावा और क्या है ? कब तक इन असहनीय परिस्थितियों को चलने दिया जायेगा ? 'उत्पादकता', 'उत्पादन लागत', 'उत्पादन की गुणवत्ता', आदि भ्रमित करने वाले बड़े-बड़े और 'हवाई' शब्दों में उलझकर हमने काफी अर्से से दमन सहने और भ्रष्ट मैनेजमेंट के साथ सहयोग करने की भरपूर कोशिश की है। लेकिन अब मजदूर बस्तियाँ पीड़ा और बेचैनी से व्याकुल हैं। हम आपके द्वारा हस्तक्षेप करने का अनुरोध करते हैं और चाहते हैं कि लम्बे समय से ठेका मजदूरों की चली आ रही विभागीयकरण की माँग को पूरा किया जाये।

राजनांदगाँव

राजनांदगाँव की नेशनल टेक्सटाइल कार्पोरेशन के तत्वावधान में संचालित 'दी बंगाल नागपुर कॉटन मिल्स' (बी.एन. सी. मिल्स) इस पूरे इलाके की एक मात्र कपड़ा मिल है। यहाँ पर मच्छरदानियाँ बनायी जाती हैं जो पूरे एशिया में अपनी उत्कृष्टता के लिए विख्यात हैं।

नियोगीजी कौन होता है ? / राजेन्द्र कुमार सायल

फरवरी 1981 में नियोगी और यूनियन के तत्कालीन अध्यक्ष श्री सहदेव साहू राष्ट्रीय सुरक्षा कानून के अंतर्गत गिरफ्तार कर लिये गये थे। जब नियोगी सागर जेल में थे तब अपने नेताओं की रिहाई के लिए राजहरा के मजदूरों ने आंदोलन किया। सजा बतौर राज्य शासन ने यूनियन से सम्बद्ध सातों सहकारी समितियों को भंग कर दिया जिसके फलस्वरूप खदानों का काम ठप्प हो गया। हजारों मजदूर बेरोजगार हो गये। नियोगी ऐसा मानते थे कि लोगों ने उनकी गिरफ्तारी के विरुद्ध काफी प्रदर्शन कर लिया और अब खदानों में उत्पादन चालू होना चाहिए। यह सोचकर नियोगी ने जेल से आंदोलन वापस लेने का सुझाव देते हुए एक तार भेजा। उस समय पूरे राजहरा इलाके में सैकड़ों की तादाद में महिलाओं और बच्चों सहित लोग रोज धारा 144 तोड़ते थे और गिरफ्तारी देते थे। पुलिस उन्हें अक्सर कई मील दूर मानपुर के जंगलों में ले जाकर छोड़ आती थी। मीलों पैदल चलकर, भूखे-प्यासे रहकर लोग घर वापस लौटते थे। इसके बावजूद आंदोलन जारी रखने के प्रश्न पर सब एक मत थे। नियोगी का तार देखकर मजदूरों ने गुस्सा होते हुए कहा, " नियोगीजी कौन होता है कि जेल से हमको बताये कि हम यहाँ क्या करेंगे ? यह हमारी जवाबदारी है कि एक तानाशाही हुकूमत के विरुद्ध हम संघर्ष जारी रखें और रासुका में गिरफ्तार अपने नेताओं को रिहा करा लें। "

कई लोगों को यह भ्रम है कि नियोगी के मुँह से निकला हर शब्द छमुमो के लिए आदेश बन जाता था। लेकिन सच यह है कि नियोगी ने सामूहिक सलाह-मशविरे के आधार पर लोकतांत्रिक तरीके से निर्णय लेने की जो प्रक्रिया स्थापित की थी उसे मजदूरों ने पूर्णतः आत्मसात कर लिया था। उनके द्वारा जेल से भेजे गये तार के संदेश को न मानना इस बात का एक छोटा-सा सबूत है। ❑

(राजेन्द्र कुमार सायल के बयान पर आधारित।)

शाखा के उद्घाटन सम्मेलन में छमुमो नेताओं की रिहाई एक प्रमुख विचारणीय विषय था। उसी सम्मेलन को दो महत्वपूर्ण संदेश भी प्राप्त हुए जिनका रिहाई के पक्ष में जनमत बनाने में उल्लेखनीय योगदान रहा। अतः हम इनके कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं। *— स.*

(1)

श्री पी. एन. हक्सर

सुप्रसिद्ध राजनयिक, प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी के भूतपूर्व प्रमुख सचिव एवं योजना आयोग के पूर्व उपाध्यक्ष

"मैं इससे सचमुच अत्यंत दुःखी हुआ हूँ कि रासुका का उपयोग राजनैतिक उद्देश्यों के लिए किया जा रहा है।

मुझे पूरी उम्मीद है कि परिपक्व ढंग से विचार करने पर सरकार सद्बुद्धिपूर्ण कदम उठा पायेगी और सर्वश्री शंकर गुहा नियोगी व सहदेव साहू को रिहा कर दिया जायेगा। यह अजीबोगरीब बात है कि अभी कुछ साल पहले ही श्री नियोगी और उनके साथियों का मध्य प्रदेश की वर्तमान सरकार के कुछ सदस्यों द्वारा पक्ष लिया गया था, परंतु अब उन्हीं को इन लोगों की भर्त्सना करना राजनैतिक दृष्टि से लाभदायक लग रहा है।

इस मामले से सम्बंधित तथ्यों की पूरी सावधानी एवं बारीकी से छानबीन करने के बाद मैं इस अहसास से विचलित हूँ कि सरकार के बार-बार आश्वासनों के बावजूद रासुका का राजनैतिक उद्देश्यों के लिए उपयोग किया जा रहा है। **सरकारें राज्य की दमनकारी ताकत के सहारे नहीं, वरन् अपनी मंशा और उद्देश्यों के बारे में जनता के बीच सावधानीपूर्वक विश्वसनीयता बनाकर ही टिकती हैं।**"

नयी दिल्ली,
3 मार्च 1981

(2)

स्वर्गीय आचार्य जे. बी. कृपलानी

वरिष्ठ गांधीवादी विचारक एवं स्वतंत्रता सेनानी

"मुझे यह जानकर अत्यन्त दुःख हुआ है कि मध्य प्रदेश सरकार ने रासुका का उपयोग हाल में छत्तीसगढ़ के आदिवासी खदान मजदूरों के नेताओं को गिरफ्तार करने के लिए किया है। प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी और गृह मंत्री श्री जैल सिंह ने बार-बार संसद के अंदर और बाहर जनता को आश्वासन दिया है कि इस कानून का उपयोग केवल असामाजिक और राष्ट्र-विरोधी तत्वों पर नियंत्रण रखने के लिए ही किया जायेगा। यह आश्चर्य की बात है कि

ऐसी घटनाएँ फिर कभी नहीं होंगी। श्री नियोगी ने स्पिनिंग विभाग में मौजूद भयावह परिस्थितियों की चर्चा की। पानी के स्प्रे-नोज़ल काम नहीं कर रहे थे और मजदूर पिछले कई महीनों से काम की परिस्थितियों में सुधार करने का आग्रह कर रहे थे, लेकिन इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया। इससे मजदूर भड़क उठे और वह अप्रिय घटना घटी। मिलों के काम को सुचारू रूप से चलाने के लिए मजदूरों के साथ सौहार्दपूर्ण सम्बंध बनाये रखना जरूरी है। अगर हम दमन के बलबूते मिल चलाने में सफल हो भी जायें, तो भी स्थायी शांति कायम नहीं हो सकती। श्री नियोगी ने यह भी स्पष्ट किया कि वह भीड़ द्वारा की गयी कार्रवाई थी, फिर इन 17 मजदूरों के ही खिलाफ भेदभाव क्यों बरता गया। मैं मानता हूँ कि एक सार्वजनिक प्रतिष्ठान के प्रशासक की हैसियत से आपकी अपनी सीमाएँ हैं। लेकिन ऐसे कुछ मामलों में, जिनका कोई वित्तीय प्रभाव नहीं पड़ने वाला, आप स्वयं निर्णय ले सकते हैं। मुझे विश्वास है कि अगर आप और श्री नियोगी मिल-बैठकर प्रयास करें तो इस मामले को आसानी से सुलझाया जा सकता है। मैं तो कल ही इस मामले को निपटा देना चाहता था, लेकिन चूँकि आप हेड आफिस से अनुमति लेना चाहते थे, अतः मीटिंग नहीं की जा सकी। मुझे भरोसा है कि अब आप बातचीत के लिए तैयार हो चुके होंगे, ताकि राजनांदगाँव को तबाही से बचाया जा सके। मैंने पहले भी इस मिल को अपने पैरों पर खड़ा किया है और आज भी इस मिल को फलता-फूलता देखना चाहता हूँ।"

❑

(छमुमो के सौजन्य से ; मूल अंग्रेजी से ध्रुव नारायण द्वारा अनूदित।)

दस्तावेज

आंदोलन से उपजी उत्पादकता

राजनांदगाँव आंदोलन की सफलता के बाद राजनांदगाँव कपड़ा मजदूर संघ ने बंगाल-नागपुर कॉटन मिल्स को उत्पादन बढ़ाने में सहयोग दिया। उद्योगों में मजदूर हित के प्रति समर्पित होने के साथ-साथ नियोगी उत्पादन को भी व्यापक सामाजिक हित से जोड़कर देख पाते थे। उनके इस रचनात्मक दृष्टिकोण को नीचे प्रस्तुत दोनों पत्र रेखांकित करते हैं। पहला पत्र उनको 10 जुलाई 1990 को कलकत्ता से नेशनल टेक्सटाइल कार्पोरेशन (डब्ल्यू. बी. ए. बी. ओ.) लि. के निदेशक (तकनीकी) श्री कनक राय ने लिखा था। दूसरा पत्र उनको 23 मई 1991 को इन्दौर से नेशनल टेक्सटाइल कार्पोरेशन (मध्य प्रदेश) लि. के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री पी. सरावनन ने लिखा था। — स.

पदार्थों से दूर रहूँगा। हर तरह की अश्लीलता से दूर रहकर, वैभव को छोड़कर सादगीपूर्ण, शालीन जीवनयापन करूँगा। मैं यदि लोकसभा या विधानसभा हेतु निर्वाचित हुआ तो भी क्षेत्र की जनता के आदेश पर पद त्यागकर जन आंदोलन एवं संघर्ष हेतु तत्पर रहूँगा। हर जन आदेश मुझे मान्य होगा।

* मैं यह जानता हूँ कि द्वंद्व या विरोध दो तरह का होता है – पहला, शत्रुतामूलक द्वंद्व, जो शोषक, देशद्रोही ताकतों के खिलाफ होता है ; दूसरा, मित्रतामूलक द्वंद्व, जो अपने ही समुदाय के सदस्यों के बीच उठता रहता है। शत्रुतामूलक द्वंद्व का निपटारा जन संघर्ष से किया जाता है और मित्रतामूलक द्वंद्व का समाधान आपसी चर्चा से किया जाना श्रेयस्कर है। इस तथ्य को हृदयंगम करते हुए मैं संगठन के भीतर के विरोध को तब तक प्रसार माध्यम को व्यक्त नहीं करूँगा जब तक मुझे यह तसल्ली न हो जाये कि संगठन के साथियों द्वारा यथेष्ट चर्चा किये जाने पर भी मेरी शंकाओं का समाधान नहीं हो पाया। साथ ही मैं इस बारे में भी सतर्क रहूँगा कि मेरे द्वारा प्रसार माध्यम (प्रेस आदि) को दी गयी कोई भी सूचना संगठन के आदर्शों के विरुद्ध नहीं हो।

* जन प्रतिनिधि के रूप में कभी भी चुने जाने के बाद संगठन के भीतर से ही नये नेतृत्व को उभारने का अधिक अवसर प्रदान करने के लिए दुबारा चुनाव लड़ने की कोशिश नहीं करूँगा।

* मैं सादगीपूर्ण सामान्य जीवनयापन करूँगा एवं सामाजिक विकास के लिए ही कार्य करूँगा। व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा को त्यागकर मैं सामाजिक महत्वाकांक्षा का पक्षधर बना रहूँगा एवं एक शोषणविहीन सुख-शांति वाली समाज व्यवस्था की प्राप्ति हेतु अडिग रहूँगा।

* दल्ली राजहरा एवं राजनांदगाँव के मजदूर आंदोलनों के शहीदों के खून की गरिमा बनाये रखकर मैं सदैव उनके द्वारा बताये गये कुर्बानी के रास्ते पर चलता रहूँगा।

□

(छमुमो के सौजन्य से।)

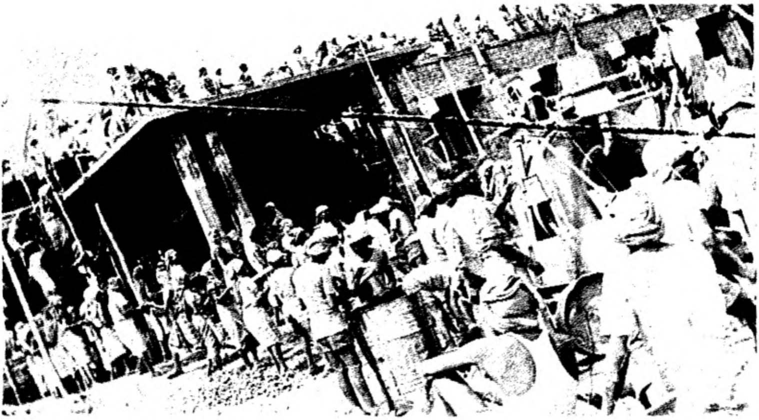

अपने हाथों से शहीद अस्पाल का निर्माण करते यूनियन सदस्य

दल्ली राजहरा में गतिविधियाँ व जन-विकल्प

शहीद अस्पताल के निर्माण
में बच्चे भी शामिल

शहीद अस्पताल की
एम्बुलेंस सेवा

शहीद अस्पताल (दिसंबर 1991)

'नवाँ अंजोर' द्वारा नुक्कड़ नाटक

जनकवि फागूराम यादव

शहीद वीर नारायण सिंह दिवस (19 दिसम्बर 1981) : रिलो नाच

छमुमो और चुनाव

लाल-हरे झंडे और इससे सम्बद्ध संगठनों ने शुरू से ही चुनावों में भाग लिया है। सी. एम. एस. एस. के गठन के मात्र एक माह बाद, मई-जून 1977 में, यूनियन ने 'छत्तीसगढ़ किसान-मजदूर मोर्चा' के नाम से दो निर्दलीय उम्मीदवार विधानसभा चुनाव में खड़े किये। सन् 1980 में डोंडी लोहारा क्षेत्र से छमुमो अध्यक्ष श्री जनकलाल ठाकुर ने विधान सभा के लिए चुनाव लड़ा। दिसम्बर 1984 के लोकसभा चुनाव में छमुमो ने राजनांदगाँव क्षेत्र से स्वामी अग्निवेश को अपना समर्थन दिया। मार्च 1985 में श्री जनकलाल ठाकुर ने छमुमो की ओर से डोंडी लोहारा क्षेत्र से विधानसभा का चुनाव लड़ा और निर्वाचित भी हुए। सन् 1989 के लोकसभा चुनाव में श्री जनकलाल ठाकुर ने काँकेर (बस्तर) लोकसभा क्षेत्र से चुनाव लड़ा। मार्च 1990 में छमुमो ने विधान सभा चुनाव में अपने 13 उम्मीदवार एक साथ खड़े किये, जिनमें से चार उम्मीदवार बस्तर के निर्वाचन क्षेत्रों से भी थे। आमतौर पर गैर-दलीय जन संगठनों ने चुनावों से दूरी बनाकर रखी है। अतः इस मामले में छमुमो का दृष्टिकोण समझना उपयोगी होगा। छमुमो के अनुसार चुनावों में भाग लेना अपने विचारों को जनता तक पहुँचाने और जन शिक्षण करने का एक और माध्यम है। इसीलिए चुनावी अभियान में जन शिक्षण की दृष्टि से छमुमो ने हमेशा विशेष साहित्य तैयार किया और अपनी भावी योजनाओं को ध्यान में रखकर मुद्दे भी उठाये। यहाँ छमुमो की एक और परम्परा उल्लेखनीय है। चुनाव अभियान शुरू करने से पूर्व छमुमो के उम्मीदवार को एक सार्वजनिक सभा में कुछ विशेष सिद्धांतों और उद्देश्यों के प्रति अपनी निष्ठा बनाये रखने की शपथ लेनी पड़ती है। सन् 1977 के चुनाव में दोनों उम्मीदवारों ने एक ऐसे ही शपथपत्र पर अपने शरीर से खून की बूँद निकालकर दस्तखत किये थे। शपथ लेने की प्रक्रिया को महज रस्म अदायगी के रूप में देखना भूल होगी, चूँकि सार्वजनिक रूप से शहीदों के नाम पर शपथ दिलवाने से छमुमो अपने उम्मीदवारों को सीधे जनता के प्रति जवाबदेह बना देता है। सन् 1990 के विधानसभा चुनाव में छमुमो के 13 उम्मीदवारों ने एक ही सार्वजनिक समारोह में वीर नारायण सिंह, भगत सिंह और नेल्सन मंडेला के चित्रों के सामने सामूहिक रूप से शपथ ली। वह शपथपत्र यहाँ प्रस्तुत है।

— स.

4. छत्तीसगढ़ स्टूडेन्ट्स फ़ेडरेशन

युवकों के साथ-साथ छात्रों के बीच काम करने के लिए इसका गठन सन् 1988 में किया गया। इसका कार्यक्रम –

1. पूरे छत्तीसगढ़ के छात्र-छात्राओं को संगठित कर नये छत्तीसगढ़ के निर्माण के लिए आंदोलन करना।
2. हम वर्तमान गलत शिक्षा नीति के खिलाफ संघर्ष करेंगे। हम संघर्ष करेंगे,
   - क) गाँव व शहर की शिक्षा सुविधाओं में समानता लाने के लिए,
   - ख) तकनीकी ज्ञान देने वाली एवं आत्मनिर्भर इंसान बनाने वाली शिक्षा प्रणाली की स्थापना के लिए,
   - ग) जनोपयोगी शिक्षा व्यवस्था लागू करने के लिए,
   - घ) शिक्षा के क्षेत्र में भ्रष्टाचार को रोकने के लिए,
   - च) अपसंस्कृति और अंधविश्वास के खिलाफ, ढुसुम-ढुसुम, कराटे, कुंफू व यौनिक संस्कृति के खिलाफ, नयी जनवादी संस्कृति के निर्माण के लिए।

जिन क्रांतिकारियों ने नये भारत के निर्माण के सपनों को लेकर हमें बलिदान की भावना से प्रेरित किया है, उनके जीवन व कर्म से शिक्षा लेते हुए हम उनके अधूरे सपनों को सफलता की मंजिल तक पहुँचाने वाली प्रेरणामूलक शिक्षा पद्धति का कार्यक्रम प्रस्तुत करेंगे।

5. लोक साहित्य परिषद्

इसकी स्थापना 3 जून 1990 को हुई। मजदूर-किसानों को सरल भाषा एवं कुछ हद तक स्थानीय भाषा में छोटी-छोटी पुस्तिकाओं के माध्यम से संघर्षों, विचारों और रचनात्मक कार्यक्रमों की जानकारी परिषद् पहुँचा रही है। इसके पहले सी. एम. एस. एस., छमुमो आदि स्वयं आंदोलन की सामग्री प्रकाशित करते रहे हैं। लोक साहित्य परिषद् के गठन के बाद से इस काम में गति व स्थायित्व आया है।

6. शहीद अस्पताल

सन् 1981 के 'स्वास्थ्य के लिए संघर्ष करो' आंदोलन की शुरूआत में मजदूरों के मन में जिस 'प्रसूति गृह' की कल्पना थी, वह अंततः 3 जून 1983 को शहीद अस्पताल के रूप में सामने आयी। यह अस्पताल आज प्रगति पर है। इसकी विस्तृत जानकारी 'दल्ली राजहरा का जन स्वास्थ्य आंदोलन' शीर्षक के लेख में है (पृ. 423-428)। इसके संचालन की पूरी जिम्मेदारी छमुमो के तहत अस्पताल के डाक्टर, नर्स एवं स्वास्थ्यकर्मी मिलकर सामूहिक रूप से निभाते हैं।

7. शहीद गैरेज एवं ट्रेनिंग सेंटर

सन् 1982 में निजी गैरेज मालिकों के खिलाफ आंदोलन करने के कारण काम से निकाले गये युवा मेकेनिकों को एक विकल्प देने के लिए एक ट्रेनिंग सेंटर के रूप में इसकी शुरूआत की गयी। इस गैरेज को जूनियर पॉलिटेक्निक बनाने का लक्ष्य यूनियन ने तय किया था, पर राज्य सरकार ने इस प्रस्ताव को मान्यता देने से इंकार कर दिया। बहरहाल, स्थानीय जरूरत का तकनीकी प्रशिक्षण यहाँ जारी है जिसमें से कई नौजवान प्रशिक्षित होकर रोजगार में लग गये हैं।

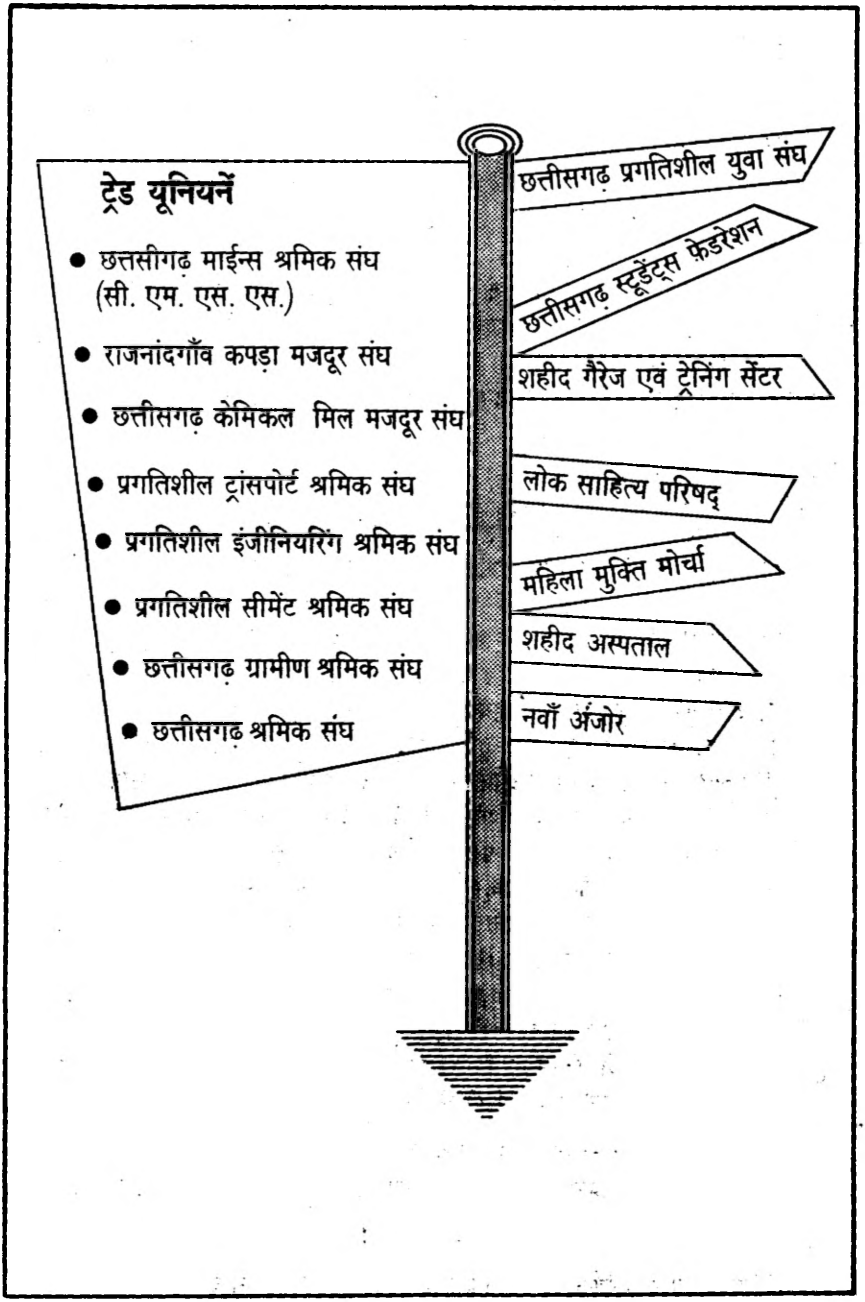

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के अंग

नीति के विकल्प के लिए संघर्ष किया है। 'संघर्ष और निर्माण' की राजनीति की शुरूआत भी इसी यूनियन ने की।

2. **राजनांदगाँव कपड़ा मजदूर संघ (आर. के. एम. एस.)** की स्थापना 8 जुलाई 1984 को हुई। सी. एम. एस. एस. के बाद यह दूसरी बड़ी यूनियन राजहरा के बाहर बनी। इसके नेतृत्व में बी. एन. सी. मिल्स के मजदूरों ने बेहतर कार्य दशाएँ, वेतन आदि के लिए जोरदार संघर्ष किया।

3. **प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ (पी. ई. एस. एस.)** का गठन सितम्बर-अक्तूबर 1990 में शुरू हुआ, किंतु इसका पंजीयन 1 अक्तूबर 1991 को सम्पन्न हुआ। इसके नेतृत्व में सिम्प्लेक्स, बीके, बी. ई. सी., खेतावत आदि इंजीनियरिंग उद्योग समूहों की भिलाई, उरला व टेडेसरा क्षेत्रों की इकाइयों में कार्यरत करीब 6,000 मजदूर संगठित हुए और भिलाई के वर्तमान आंदोलन में अगुवाई कर रहे हैं।

4. **छत्तीसगढ़ केमिकल मिल मजदूर संघ (सी. सी. एम. एम. एस.)** का गठन सन् 1984 में राजनांदगाँव की राजाराम मेज़ फैक्ट्री (ग्लूकोज़ फैक्ट्री) के मजदूरों को लेकर हुआ। फिर जुलाई-अगस्त 1990 में भिलाई आंदोलन का जो उभार आया, उसमें यह ट्रेड यूनियन कई रसायन-आधारित उद्योगों में फैल गयी। आज इसके तहत छत्तीसगढ़ डिस्टिलरीज़ लि. (कुम्हारी), केडिया डिस्टिलरीज़ लि. (भिलाई) एवं भिलाई के पुंजस्यार, गोलछा केमिकल्स, के. एन. ऑयल मिल, ज्योति मिनरल्स आदि उद्योगों के लगभग 3,000 मजदूर संगठित हुए हैं।

5. **प्रगतिशील सीमेंट श्रमिक संघ (पी. सी. एस. एस.)** की शुरूआत ए. सी. सी. के जामुल सीमेंट व्रक्र्स (भिलाई) में मार्च-जुलाई 1990 के दौरान चले संघर्ष से हुई (पंजीयन – जून 1990)। लगभग 3,000 श्रमिकों ने मान्यता-प्राप्त इंटक यूनियन को त्याग कर इसकी बुनियाद डाली। बाद में बालोदा बाजार (जिला रायपुर) के मोदी सीमेंट लि. के 800 मजदूर भी इसमें शामिल हो गये।

6. **छत्तीसगढ़ श्रमिक संघ (सी. एस. एस.)** की शुरूआत अस्सी के दशक में बी. एस. पी. के स्लैग डम्प में लौह पिंडों को काटने और ढोने वाले ठेका मजदूरों को संगठित करके हुई। बाद में बी. एस. पी. के अन्य मजदूर भी जुड़े। इसके तहत लगभग 2,000 मजदूर संगठित हैं।

7. **प्रगतिशील ट्रांसपोर्ट श्रमिक संघ,** बी. एस. पी. से ए. सी. सी. की सीमेंट फैक्ट्री तक 'स्लैग' ढोने वाले ट्रकों के ड्राइवरों व हेल्परों का संगठन है जिसका गठन सन् 1988 में हुआ था। इसके नेतृत्व में ड्राइवरों व हेल्परों ने अपने हकों के लिए संघर्ष करके सन् 1989 के शुरू में विजय भी हासिल की और फिर भिलाई आंदोलन खड़ा करने में उल्लेखनीय प्रारम्भिक भूमिका निभायी।

12. छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की ओर से ग्रामीण विकास में रचनात्मक प्रयोग किये जायें।

13. कोरंडम एवं टिन की तस्करी और निर्यात पर तुरंत रोक लगायी जाये।

14. तेंदू पत्ता की तुड़ाई, चुनाई करने वाले मजदूरों को न्यूनतम वेतन दिलाने के लिए संगठित किया जाये।

15. छत्तीसगढ़ क्षेत्र में वैकल्पिक कृषि, जैसे कपास, गन्ना आदि की खेती, बढ़ायी जाये।

16. मशीनीकरण का विरोध कर श्रम-आधारित उद्योगों की स्थापना की जाये।

17. 'नवाँ अंजोर' सांस्कृतिक मंडली की गाँव-गाँव में शाखा खोली जाये, जिससे परम्परागत संस्कृति की रक्षा और विकास हो सके और बम्बइया फिल्मी संस्कृति पर अंकुश लगे।

18. हर गाँव में पीने के पानी के प्रबंध हेतु सरकार पर दबाव डाला जाये।

19. क्षय रोग (टी. बी.) और कुष्ठ रोग के बारे में सही आँकड़े संकलित किये जायें एवं इनके रोगियों को सरकार के द्वारा उपचार हेतु संगठित किया जाये।

20. इन तमाम रचनात्मक कार्यों को अमल में लाने के लिए मुक्ति सेना का गठन किया जाये।

उपरोक्त कार्यक्रम समय-समय पर देश के राजनैतिक हालात और क्षेत्र की सामाजिक जरूरतों व जन आकाँक्षाओं के अनुसार विकसित होता रहा है और बदलता रहा है।

हालाँकि छमुमो की शुरूआत सी. एम. एस. एस. की पहल पर हुई, किंतु आज छमुमो कई प्रकार के जनवादी संगठनों के लिए एक व्यापक बैनर बन गया है (अब सी. एम. एस. एस. की गिनती भी इन्हीं में होती है)। इन संगठनों में ट्रेड यूनियनों ने प्रमुख भूमिका निभायी है। छमुमो के बैनर में कार्यरत विभिन्न संगठनों को पृ. 380 पर चित्र के सहारे दर्शाया गया है। हम पहले विभिन्न ट्रेड यूनियनों का विवरण देंगे, फिर अन्य प्रकार के संगठनों का।

छमुमो के मजदूर संगठन (ट्रेड यूनियन)

1. **छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ (सी. एम. एस. एस.)** लाल-हरे झंडे की पहली और सबसे बड़ी ट्रेड यूनियन है। इसकी स्थापना एक ऐतिहासिक माहौल में भिलाई इस्पात संयंत्र की बंधक लौह अयस्क खदानों के लगभग दस हजार ठेका मजदूरों द्वारा एटक-इंटक यूनियनों के स्थानीय नेतृत्व की मजदूर-विरोधी नीतियों के खिलाफ विद्रोह करते हुए मार्च-अप्रैल 1977 में दल्ली राजहरा में हुई। यूनियन ने अपने लिए एक 7-सूत्री मार्गदर्शिका बनायी है जो नीचे प्रस्तुत है।

> हम इस संगठन में **व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए नहीं, बल्कि पूरे समाज के लिए** लड़ रहे हैं। हम एक ऐसे समाज के लिए लड़ रहे हैं जहाँ इंसान द्वारा इंसान का शोषण न हो, जहाँ उत्पादन के साधनों पर इने-गिने लोगों का ही कब्जा न हो, और जहाँ बराबरी, भाई-चारा और मानवीयता रहे। हमारी इस लड़ाई के 7 प्रमुख पहलू हैं —
>
> **क) वर्ग संघर्ष** – छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ शोषित मजदूर वर्ग का संगठन है। शोषणकर्त्ताओं के खिलाफ लगातार संघर्ष छेड़ना हमारा फर्ज है। इस फर्ज को हम

— इसके अलावा ऐसे ही ज्ञापन प्रधान मंत्री श्री पी. वी. नरसिंह राव, विपक्ष के नेता श्री लालकृष्ण आडवाणी (जिनकी पार्टी भाजपा उस समय म. प्र. में सत्तारूढ़ थी) एवं पूर्व प्रधान मंत्री श्री वी. पी. सिंह को भी सौंपे।

— श्रम मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारियों से भी भेंट व उनको ज्ञापन।

— 'दिल्ली यूनियन ऑफ वर्किंग जर्नलिस्ट्स' के साथ बातचीत (देखिये पृ. 336-338 पर चर्चा सार) एवं अनेक स्वयंसेवी संगठनों से समर्थन लेने हेतु चर्चा।

- 18/9 – लौटती यात्रा में नियोगी द्वारा भोपाल में मुख्य मंत्री श्री सुंदरलाल पटवा से मिलने की पेशकश, पर मुख्य मंत्री के पास समय नहीं था। अंततः म. प्र. के श्रम मंत्री से भेंट।

- 19/9 – बनखेड़ी (जिला होशंगाबाद) में वनकर्मियों, पुलिस एवं स्थानीय गुंडों द्वारा हरिजन-आदिवासियों के एक प्रदर्शन पर कुछ दिन पूर्व किये गये हिंसक हमले के संदर्भ में नियोगी प्रभावित क्षेत्र में घूमे ; शाम को पिपरिया में आयोजित एक आम सभा को सम्बोधन (देखिये भाषण का सार, पृ. 299-303)।

- 21/9 – भारत के विभिन्न अंचलों में सक्रिय कई मजदूर संगठनों के प्रतिनिधियों की दल्ली राजहरा में आयोजित एक संयुक्त बैठक में नियोगी द्वारा भागीदारी। उद्देश्य — अखिल भारतीय स्तर पर मजदूरों का एक अपना अखबार निकालना।

- 28/9 – भिलाई में नियोगी की उनके हुडको कालोनी में स्थित घर में प्रातः 3:45 बजे छह गोलियाँ दाग कर हत्या।

❑

लाल-हरे झंडे के संगठन [1]

प्रस्तुति : हरि जोशी ● अनिल सद्गोपाल

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा (छमुमो) की स्थापना सी. एम. एस. एस. के गठन के लगभग दो वर्ष बाद सन् 1979 में हुई। यूनियन ने अपने प्रारम्भिक काल में ही महसूस किया कि छत्तीसगढ़ के समग्र विकास के लिए किसानों को संगठित करना और गाँवों को जागरूक बनाना आवश्यक होगा। इस समझ के आधार पर खदान मजदूरों की अगुवाई में छमुमो बना। यह छत्तीसगढ़ के

---

[1] छमुमो एवं उसके विभिन्न संगठनों के द्वारा प्रसारित पुस्तिकाओं, पर्चों एवं अन्य सामग्री पर आधारित।

- 2/10 – छत्तीसगढ़ के जल-जमीन-जंगल पर लोगों का हक स्थापित करने एवं बेरोजगारों को रोजगार दिलाने के उद्देश्य से अगस्त में नव-निर्मित संयुक्त मंच की ओर से भिलाई में रैली का आह्वान। किंतु ऐन मौके पर कलेक्टर द्वारा ' कानून एवं व्यवस्था ' को खतरे का बहाना लेकर अनुमति देने से इंकार करना। बहुत ही कम समय में वह विशाल रैली रायपुर में आयोजित करके छमुमो द्वारा अपनी संगठन-क्षमता का प्रदर्शन।

- 15/10 – ' प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ ' द्वारा भिलाई आंदोलन का पहला माँग पत्र सिम्पलेक्स स्टील कास्टिंग्स लि. को प्रस्तुत (देखिये पृ. 454)।

- अक्तूबर से दिसम्बर तक भिलाई, कुम्हारी, उरला व टेडेसरा के कई उद्योगों में छमुमो की यूनियनों का गठन और इनका सदस्य बनने पर उद्योगपतियों द्वारा सैकड़ों की संख्या में मजदूरों को गैर-कानूनी रूप से काम से निकाला जाना (यह संख्या अब तक 4,200 तक पहुँच गयी है)। उद्योगपतियों की ओर से भाड़े के गुंडों द्वारा मजदूर-कार्यकर्त्ताओं पर प्राणघातक हमलों का सिलसिला भी शुरू।

- 29/11 – अध्यक्ष, भिलाई इंडस्ट्रीज़ एसोसिएशन द्वारा छमुमो की यूनियनों से समझौता-वार्ता करने से इंकार करने की घोषणा।

- 19/12 – भिलाई में पहली बार शहीद वीर नारायण सिंह दिवस सफलतापूर्वक मनाया गया। इसमें भाग लेने की सजा में अगले दिन बड़ी तादाद में मजदूरों की ' छुट्टी ' कर दी गयी।

- दिसम्बर – सी. एम. एस. एस. से सम्बद्ध सात सहकारी समितियों को राज्य प्रशासन ने अपने कब्जे में ले लिया। इसके लिए अप्रासंगिक या निराधार आरोप लगाये गये (एक सोसायटी द्वारा स्कूल चलाना भी इन आरोपों में शामिल था)।

- दिसम्बर – सरदार सरोवर के विरोध में ' नर्मदा बचाओ आंदोलन ' द्वारा ' बड़वानी से बाँधस्थल ' तक आयोजित संघर्ष यात्रा में छमुमो की ओर से बड़ी संख्या में मजदूरों ने भाग लिया और शहीद अस्पताल ने एक डाक्टर-स्वास्थ्यकर्मी टीम भेजी जो पूरी यात्रा के दौरान आंदोलनकारियों के इलाज के लिए साथ रही।

- भिलाई आंदोलन के दौरान शहीद अस्पताल की टीम हर हफ्ते नियमित रूप से औद्योगिक क्षेत्रों में निलम्बित मजदूरों और उनके परिवारों के लिए निःशुल्क मेडिकल केम्प लगाती रही ; यह प्रक्रिया आज भी जारी है।[1]

1991

- 28/1 – भिलाई इंडस्ट्रीज़ एसोसिएशन द्वारा छमुमो की यूनियनों से बातचीत न करने का औपचारिक निर्णय।

[1] दि. 14.02.93 से भिलाई औद्योगिक क्षेत्र में शहीद अस्पताल की ओर से एक नियमित डिस्पेंसरी शुरू की गयी।

पर किस हत्यारे को भेजा, यह सवाल केवल इस अपराध की जिम्मेदारी सुनिश्चित करने तक ही प्रासंगिक है। इस पहलू पर केंद्रीय जाँच ब्यूरो सक्रिय है। परंतु यह खुलासा हो चुका है कि वे एक ऐसे माहौल और परिस्थिति का शिकार बने जो कुछ उद्योगपतियों ने भिलाई औद्योगिक क्षेत्र में खड़ी कर दी थी।

यह हमारी समझ के परे है कि नियोगी को सुरक्षा क्यों नहीं प्रदान की गयी जबकि उन्होंने अपने जीवन पर मंडराते खतरे की बात बार-बार दोहरायी थी। . . . . . इसके बावजूद सत्ता में बैठे किसी भी व्यक्ति ने उनकी सुरक्षा के लिए कोई कदम नहीं उठाये। इस बात को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है कि जिनके भी हाथ में सत्ता की बागडोर थी, उन्होंने यह मसला जाँच हेतु केंद्रीय जाँच ब्यूरो को सौंपने में काफी देर कर दी। इसके साथ ही मुख्यमंत्री श्री सुन्दरलाल पटवा और उनके विभिन्न मंत्रीमंडलीय सहयोगियों ने भी हत्या के बाद के दिनों में अनेक विरोधाभासी बयान दिये जबकि उस स्थिति में किसी भी संशय या अस्पष्टता के लिए कोई भी गुंजाइश नहीं बची थी।

यदि औद्योगिक शांति और ट्रेड यूनियन गतिविधियों, या यूँ कहिये कि एक सभ्य समाज के मूलभूत तत्वों को सुरक्षित रखना है तो हर व्यक्ति को सतर्क रहना होगा और लोकतांत्रिक राजनीति के मूल्यों के अनुसार चलने व चुनौती सामने आने पर साहस के साथ खड़े रहने के लिए तैयार होना पड़ेगा। हम यह देखकर निराश हुए कि वहाँ कई लोग व्यवस्था के अंग बन चुके थे। उद्योगपतियों और माफिया ने धन और बाहुबल के बूते पर, प्रेस की एक पांत समेत, समाज के कर्णधारों तक की वस्तुनिष्ठता और स्वायत्तता को पंगु बना दिया है।

हमने मजदूरों में असुरक्षित होने का भाव देखा। उन्हें कम मजदूरी और अमानवीय कार्य परिस्थितियाँ स्वीकारने के लिए मजबूर होना पड़ा है, चूंकि इसके विकल्प में बेरोजगारी है। जब-जब मजदूरों को उचित मजदूरी देने और उनके काम के हालात सुधारने का मसला सामने आया, तब-तब नव-धनाढ्य उद्योगपतियों ने भोग-विलास में डूबे हुए सामंतों जैसा व्यवहार किया। दूसरी तरफ, मजदूरों को मजबूरन वह स्वीकारना पड़ा जो उनको दिया गया — एक कठोर जीवन जिसमें बुनियादी जरूरतों की भी पूर्ति नहीं हो सकती थी। यह एक [illegible]जनक बात है कि भिलाई क्षेत्र के निजी उद्योगों में आज भी अधिकांश मजदूर ऐसे [illegible] से भर्ती किये जाते हैं जो कि आम तौर पर उद्योगपतियों के ही कर्मचारी [illegible] 'कानूनी जामा' पहनाकर मजदूरों को कानून के तहत [illegible] ठगा [illegible] एक नया तरीका है। ठेकेदार केवल 'वफादार' मजदू[illegible] और जो भी अपना अधिकार माँगता है उसे निकाल बाहर करते हैं। उद्योगपति [illegible] जाते हैं कि यह विवाद तो ठेकेदारों और मजदूरों के बीच का है। [illegible] उनकी पिटाई की गयी, कई गम्भीर रूप से घायल हुए और कई मारे गये। [illegible] के गुंडों द्वारा किया गया, जबकि पुलिस ने इसे या तो अनदेखा कर दिया [illegible] इसमें हिस्सा लिया।

यह दुर्भाग्य है कि वामपंथी विचारधारा की बिल्ला लगायी हुई कुछ स्थानीय [illegible] ने उद्योगपतियों के हाथों में कठपुतली बनकर काम किया है। मजदूरों के शोषण के [illegible] संघर्ष में शामिल होने की जगह ये प्रबंधन की जेबी [illegible] के रूप में, सामने आयी हैं। इससे यह भी समझ आ जाता है कि भिलाई के उद्योगपति कुछ ट्रेड यूनियनों को क्यों पसंद करते हैं और बाकी से क्यों परहेज रखते हैं। नियोगी ने इस दुष्ट

नियोगी [illegible]

संवेदना और एकजुटता का सैलाब

राकेश दीवान

नियोगी की हत्या के तत्काल बाद शहीद अस्पताल के साथी डॉ. पुण्यब्रत गुण ने अनौपचारिक बातचीत में टिप्पणी की थी, "नियोगी के जीते जी हमें कभी यह अहसास ही नहीं हुआ था कि हम कितने बड़े व्यक्तित्व के साथ रह रहे हैं। उस सरल एवं पारदर्शी व्यक्तित्व की अहमियत उसके जाने के बाद ही समझ में आयी।" नियोगी की शहादत के बाद आयी उन तमाम-तमाम लोगों की प्रतिक्रियाओं से भी जिन्होंने नियोगी को अपने-अपने तरीकों से जाना, समझा और उनका साथ लिया-दिया था, कमोबेश यही बात उभरी है।

28 सितम्बर 1991 की भोर में मिली इस मनहूस खबर ने देश भर के संगी-साथियों को स्तब्ध कर दिया था कि नियोगी अब उनके बीच नहीं रहे। अपने-अपने साधन-स्रोतों से कल तक अपने सुख-दुःख के साथी की क्रूर हत्या की खबर पक्की करके छत्तीसगढ़ और देश भर के लोग भिलाई की तरफ चल पड़े थे। भिलाई के सिविक सेंटर में अंतिम दर्शनों के लिए रखे नियोगी के शव को करीब 50 हजार लोगों ने दुःख और कातरता के साथ अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की थी। दूसरे दिन दल्ली राजहरा की उन गलियों से जहाँ नियोगी ने मजदूरों के राज का सपना सँजोया था, उनकी शवयात्रा निकाली गयी। शहीद चौक में, जहाँ जून 1977 के गोलीकांड के 11 शहीदों की अंत्येष्टि की गयी थी, छमुमो के इस वरिष्ठतम तथा प्रिय साथी की भी अंत्येष्टि की गयी। उस दिन आखिरी सलाम देने आये वालों में नर्मदा बचाओ आंदोलन, उत्तराखंड संघर्ष वाहिनी, आई. पी. एफ., टी. यू. सी. आई., एकता परिषद् आदि संगठनों के लोग और मेधा पाटकर, श्याम बहादुर 'नम्र', फिलिप कोशी, रत्नेश्वर नाथ, शमशेर सिंह बिष्ट और डॉ. बी. एस. यदु सरीखे वरिष्ठ सामाजिक-राजनीतिक कार्यकर्ता शामिल थे।

नियोगी के शोक में और हत्यारों को गिरफ्तार करने की माँग लेकर छत्तीसगढ़ के विभिन्न उद्योगों में स्वतःस्फूर्त हड़तालें शुरू हुईं जो करीब सप्ताह भर तक चलीं। अगले दिन छमुमो की मुखिया बैठक में तय किया गया कि नियोगी की अस्थियों को भिलाई के मजदूरों की माँगें पूरी होने तक विसर्जित नहीं किया जायेगा।

छमुमो के दल्ली राजहरा कार्यालय में रखा यह अस्थिकलश और उसके साथ जलता हुआ दीपक मजदूरों को अपने संघर्ष के लिए लगातार प्रेरित करता जा रहा है।

5 अक्तूबर 1991 से भिलाई तथा छत्तीसगढ़ की करीब 120 बड़ी-छोटी औद्योगिक इकाइयों के सामने क्रमिक अनशन शुरू हुआ। अनशन के मुद्दे थे –

भिलाई के मजदूरों की जायज माँगें पूरी की जायें और नियोगी की हत्या का प्रकरण केंद्रीय जाँच ब्यूरो को सौंपा जाये।

इसी तरह के क्रमिक अनशन सहयोगी संगठनों (उदा. एकता परिषद्) की पहल पर पूरे छत्तीसगढ़ के करीब चार हजार स्थलों पर भी चले।

राज्य की तरह राष्ट्रीय स्तर पर भी नियोगी हत्याकांड का व्यापक विरोध हुआ। 28 सितम्बर को घटना की जानकारी मिलते ही दर्जनों राजनैतिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक संगठनों के प्रतिनिधि दिल्ली के कांस्टीट्यूशन क्लब के मैदान में जमा हुए। वहाँ दोपहर को हुई शोकसभा में तत्काल 'छत्तीसगढ़ आंदोलन समर्थन मोर्चा' का गठन किया गया। इस समर्थन मोर्चे की पहल पर ही बाद में एक नागरिक समिति गठित की गयी थी जिसने भिलाई क्षेत्र का दौरा करके प्राप्त जानकारियों के आधार पर मार्च 1992 में 'औद्योगिक कोहरे के पीछे' शीर्षक की एक रपट प्रकाशित की। इस रपट में उन तमाम कारणों पर भी प्रकाश डाला गया है जिनके चलते नियोगी को अपनी जान गँवानी पड़ी। दिल्ली की तरह अन्य जगहों पर भी शोकसभाएँ, जुलूस तथा विरोध प्रदर्शन किया गया। इनमें लुधियाना, दुर्गापुर, भोपाल, मुर्शिदाबाद, कलकत्ता, कानपुर, पटना, बम्बई, श्रीरामपुर, कृष्णनगर, खड़गपुर, बंगलौर, धारवाड़, त्रिवेन्द्रम, मद्रास, उदयपुर, अजमेर आदि जगहों पर हुई शोकसभाएँ तथा विरोध प्रदर्शन शामिल हैं।

नियोगी की हत्या के बाद छमुमो को मिला समर्थन और सहयोग का यह सैलाब दरअसल देश में उभरती हुई एक वैकल्पिक राजनैतिक ताकत को मिली एकजुटता की मिसाल है। नियोगी और छमुमो इस वैकल्पिक राजनीति का मॉडल बन कर देश के सामने उभरे हैं। सवाल यह है कि 'संघर्ष और निर्माण' के इस मॉडल को समझ-बूझकर अपनी परिस्थितियों के हिसाब से कौन-कौन से संगठन स्वीकार करते हैं। नियोगी की शहादत के लिए शायद यही सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

(अगस्त 1992)

छत्तीसगढ़ी आल्हा गीत के अंश / फागूराम यादव

" शंकर गुहा नियोगी ऊपर,
कई ठन शासन केस बनाय,
दू महीना ले जेल में राखीन,
अऊ जिलाबदर के नियम बताय,
येकर विरोध करीन जनता मन,
तब जिलाबदर घलो रुक जाय,
छत्तीसगढ़ के मजदूर मन सन,
गुहा नियोगी दिल्ली जाय,
कइसे शोषण होवत हावे,
राष्ट्रपति ला जाके बताय,
सबो पार्टी के नेता मन ला,
छत्तीसगढ़ के बात बताय,
नइहे सुरता योसको उआँ,
कभू कहीं कोन्हों मर जाय,
दिल्ली भोपाल सबो जगह में,
गुहा नियोगी खबर कोरे आवे।
पूँजीपति अऊ शासन मिलके,
खतरनाक एक साजिश बनाय,
28 सितम्बर गुंडा लगाके,
गुहा नियोगी ला दे मरवाय,
शहीद होगे गुहा नियोगी,
देश भर सब शोक मनाय . .

(छमुमो की लोक साहित्य परिषद् द्वारा प्रकाशित 'शंकर गुहा नियोगी ला भइया करथौं मेंहा लाल सलाम', फरवरी 1992, से साभार।)

10.

विरासत का प्रश्न

छमुमो ने शुरू से ही पूरी ईमानदारी के साथ एक ऐसी लोकतांत्रिक पद्धति अपनायी जिसमें निर्णय के हर कदम में हजारों मजदूरों और उनके सैकड़ों मुखियाओं की सक्रिय भागीदारी रही है। नियोगी ने स्वयं भी नेतृत्व के प्रति जनता में प्रचलित व्यक्तिवादी विचारधारा के खिलाफ संघर्ष किया। अतः प्रश्न यह होना चाहिए कि नियोगी की हत्या के बाद छमुमो के हजारों मजदूरों और उन्हीं में से उपजे स्थानीय नेतृत्व ने आंदोलन के विचारों और परम्पराओं को कहाँ तक बरकरार रखा है और आगे बढ़ाया है। इस खंड में प्रस्तुत सामग्री जनवादी राजनैतिक संस्कृति के संदर्भ में इस प्रश्न का उत्तर खोजती है।

हालाँकि नियोगी की हत्या को हुए इतना कम समय गुजरा है कि आंदोलन की भविष्य से जूझने की क्षमताओं का वस्तुनिष्ठ आकलन करना न तो उचित होगा और न ही सम्भव है। वैसे भी आंदोलन में जनवादी केंद्रीयता के सिद्धांत का जो व्यवहार में रूप है, उस पर अभी और अध्ययन और बहस की गुंजाइश से कोई इंकार नहीं कर सकता। तब भी यह मानना पड़ेगा कि **आम मजदूरों की समझ और उनकी संघर्ष की क्षमता को उजागर करके और व्यक्ति विशेष के बजाय विचार, संघर्ष और परम्परा को महत्व देकर छमुमो ने राजनैतिक विरासत की बहस को एक नये धरातल पर ला खड़ा किया है।** यह खंड इस बहस को आगे बढ़ाने और इस बिंदु पर छमुमो के योगदान को समझने के लिए उपयोगी आधार दे पायेगा, यह हमारी उम्मीद है। ❑

<u>दस्तावेज</u>

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा
की प्रेस विज्ञप्ति से उद्धृत कुछ अंश

"छत्तीसगढ़ के हजारों मजदूरों और किसानों को उनके प्रिय नेता शंकर गुहा नियोगी की मृत्यु पर दुख एवं पीड़ा है। जैसे ही नियोगीजी की हत्या की खबर गाँवों और शहरों में फैली, वैसे ही लाल हरा झंडा लेकर लोगों का तांता भिलाई की ओर निकल पड़ा। शांति और संयम बनाये हुए छमुमो की सभी इकाइयों के मजदूरों ने नियोगीजी द्वारा स्थापित आदर्शों और अनुशासन का परिचय देते हुए उन सभी दरिंदों की साजिश पर पानी फेर दिया जिन्होंने उनके प्रिय मजदूर नेता की हत्या कर यहाँ अशांति और उपद्रव फैलाने का भी प्रयास किया था।"

"छमुमो ने छत्तीसगढ़ के प्रजातांत्रिक और प्रगतिशील संगठनों का आह्वान किया है कि इस अंचल में बढ़ती हुई संगठित हिंसा के विरोध में एक सशक्त आंदोलन खड़ा करके नियोगीजी के नये छत्तीसगढ़ के विकास के सपने को साकार करें।"

"छमुमो के मुखिया साथियों की बैठक के पश्चात् आंदोलन की भावी रणनीति तैयार की जायेगी।"

भिलाई,
28 सितम्बर 1991

जनकलाल ठाकुर
अध्यक्ष

के लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उकसाते भी हैं। एक बार हिंसक हो जाने के बाद सरकार के लिए जनांदोलनों से निपटना आसान हो जाता है। एक तो सरकार की हिंसक ताकत जनांदोलनों की ताकत से कई गुना अधिक होती है। दूसरे, ऐसी स्थिति में संघर्ष के मूलभूत मुद्दों को दरकिनार कर आंदोलन को मामूली कानून और व्यवस्था की समस्या में बदला जा सकता है। कथित कानून व्यवस्था बनाये रखने के लिए सरकार के पास फौज, पुलिस, कोर्ट-कचहरियाँ, प्रचार माध्यम और तरह-तरह के अत्याधुनिक हथियार होते हैं जो किसी भी जनांदोलन को कुचलने या उसका मूलस्वरूप मटियामेट करने में सक्षम होते हैं।

नियोगी की हत्या के बाद भिलाई में भी पुलिस का भारी बंदोबस्त किया गया था। कानून और व्यवस्था की तथाकथित समस्या से निपटने के लिए सरकार अपने तामझाम के साथ हाजिर तो हुई लेकिन छमुमो की शांतिपूर्ण रणनीति और आत्मसंयम से उभरी जिस ताकत का उसे सामना करना पड़ा, उसका जवाब आज तक कोई भी सरकार नहीं खोज पायी है। शहीद नियोगी के अंतिम दर्शन के कार्यक्रम में अंततः जिलाधीश को तमाम जिम्मेदारी छमुमो के कंधों पर यह कहते हुए छोड़नी पड़ी कि **अब भिलाई और दुर्ग में कानून व्यवस्था बनाये रखना छमुमो के नेतृत्व के ही बस की बात है।** बाद में सब शांतिपूर्वक निपट जाने का धन्यवाद देने आये जिलाधीश से छमुमो के वरिष्ठ कार्यकर्ताओं ने नियोगी के शव की ओर इशारा करते हुए कहा था, "**यदि धन्यवाद देना है तो उसे दीजिये जिसने हमें ऐसे संस्कार और समझ दी है।**"

आत्मसंयम और शांतिपूर्ण तौर-तरीकों की इस रणनीति के चलते भिलाई के मजदूरों की माँगों का महत्व छमुमो ने आज तक रत्ती भर भी घटने नहीं दिया है। भिलाई गोलीकांड, आंदोलन को हिंसक रास्तों की ओर धकेलने की ही कोशिश थी। लेकिन 1 जुलाई 1992 को रेल की पटरियों पर गोली खाते और बाद में भी मजदूरों ने कोई ऐसी हरकत नहीं की जिससे उनकी माँगों को मामूली कानून व्यवस्था की समस्या में बदला जा सकता। मजदूर आज भी सरकार और उद्योगपतियों पर पूरी क्षमता के साथ अपनी माँगों को हल करने का दबाव बनाये हुए हैं।

छमुमो की रणनीति का एक अंग है — **संवाद बनाये रखना ताकि दूसरे पक्ष को, जो बहरे हैं, समस्या को हल करने का मौका मिले।** जनवादी प्रक्रिया में विश्वास रखने वाले छमुमो ने संवाद बनाये रखने की इसी रणनीति के कारण कई बार अपने प्रमुख और बड़े आंदोलनों को सरकार या प्रशासन के आश्वासनों के आधार पर वापस लिया है। 15 नवम्बर 1991 को भिलाई के उद्योगपतियों के नेहरू नगर स्थित आवासों का घेराव, 20 नवम्बर 1991 को अनिश्चितकालीन जेल भरो आंदोलन, 26 दिसम्बर 1991 को भाजपा अध्यक्ष डा. मुरली मनोहर जोशी की 'एकता यात्रा' को भिलाई में रोकना, 25 जनवरी 1992 को [illegible] छमुमो के अध्यक्ष डा. जनकलाल ठाकुर का आमरण अनशन, ये सभी इसी जनवादी प्रक्रिया के तहत आश्वासनों व वायदों के आधार पर वापस ले लिये गये। इसका एक और महत्वपूर्ण उदाहरण 25 मई 1992 को प्रस्तावित 'भिलाई बंद' कार्यक्रम है। मध्य प्रदेश के तत्कालीन ऊर्जा एवं उद्योग मंत्री श्री कैलाश जोशी के इस वायदे पर यह कार्यक्रम वापस लिया गया था कि वे त्रिपक्षीय समझौता वार्ता के जरिये मजदूरों की माँगों को हल करवाने की ओर जरूरत होगी तो वे खुद व्यक्तिगत रूप से हस्तक्षेप करेंगे।

हैं। 15 जुलाई 1992 को भिलाई गोलीकांड में शहीद हुए मजदूरों के लिए छमुमो द्वारा भिलाई में आयोजित श्रद्धांजलि सभा और 29 जुलाई को रायपुर में छमुमो के नेतृत्व में निकली रैली में रामो-वामो गठबंधन द्वारा सक्रिय हिस्सा लेना इस नयी एकजुटता का ही सबूत है।

छमुमो के जनांदोलन की विरासत को सँभालने वाले नेतृत्व और संगठन की तैयारी को समझने के लिए दो और उदाहरण उपयोगी होंगे। एक है पर्चों, हैंड बिलों, फोल्डरों, पोस्टरों आदि द्वारा **लगातार जारी जन शिक्षण की प्रक्रिया**। छमुमो तथा अन्य आंदोलनों और राजनैतिक दलों की ऐसी प्रचार सामग्री में मूलभूत अंतर है। जहाँ परम्परागत राजनैतिक जमातें प्रसार सामग्रियों में अपने आंदोलन के मुद्दों और संघर्ष की गतिविधियों के विवरण तक ही सीमित रहती हैं, वहीं छमुमो की प्रसार सामग्री में न सिर्फ मुद्दे बल्कि उनका प्रभाव, समाज तथा देश का विश्लेषण और अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक-राजनैतिक परिस्थितियों से उनका सम्बंध भी दिखाया जाता है। भिलाई के मजदूर आंदोलन के दौरान निकाले गये दर्जनों पर्चे, फोल्डर, पुस्तिकाएँ या पोस्टर मिल जायेंगे जिनमें मजदूरों की माँगों के अलावा इन माँगों का राज्य, देश तथा अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों से सम्बंध, खुले बाजार और निजीकरण की नयी अर्थनीति, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार तथा आर्थिक उथल-पुथल आदि तमाम व्यापक महत्व के मुद्दों को दर्शाया गया है। यह प्रक्रिया नियोगी की अनुपस्थिति में भी जारी है और बेहद कारगर भी है। इसी प्रकार जून 1990 में गठित 'लोक साहित्य परिषद्' ने अपनी जन शिक्षण पुस्तिकाओं का सर्वाधिक प्रकाशन नियोगी की हत्या के बाद किया है।

इस सिलसिले में दूसरा उदाहरण है **छमुमो की स्वास्थ्य सेवाओं** का। छमुमो का शहीद अस्पताल जितना आंदोलन पर निर्भर है, उतना ही आंदोलन भी शहीद अस्पताल पर। भिलाई आंदोलन के साथ ही यह प्रक्रिया और भी तेज हुई है। ऐसे दर्जनों उदाहरण हैं, जब शहीद अस्पताल की तमाम साधन-सामग्री के साथ समूचा स्टाफ कंधे-से-कंधा मिलाकर आंदोलन के साथ संघर्ष में कूदा है। भिलाई आंदोलन के दौरान मई-जून 1992 में 36 दिनों तक धरने पर बैठे मजदूरों में पेचिश की बीमारी फैल गयी थी। ऐसे में शहीद अस्पताल के साथी पेचिश के इलाज और उससे बचने के उपाय बताने न आये होते तो सम्भवतः भिलाई का धरना शुरूआत में ही टूट जाता।

छमुमो के वर्तमान नेतृत्व के अलावा यहाँ उन लाखों मजदूरों, सरोकार रखने वाले आम नागरिकों और सैकड़ों असम्बद्ध लोगों की उस पीढ़ी की बात करना महत्वपूर्ण होगा, जिसे जनांदोलनों की विरासत सौंपने की बात नियोगी ने कही थी। गोलीकांड के तीसरे दिन शहीदों के परिवारों से मिलने गये कुछ साथियों से शहीद कुमार वर्मा के माँ-पिता ने कहा, "हमारा बेटा मरा नहीं, बल्कि शहीद हुआ है।" अपनी युवा विधवा बहू की ओर इशारा करते हुए इसी शहीद की बुजुर्ग माँ ने कहा, "मैं चाहूँगी कि मेरी बहू की शादी दोबारा छमुमो के ही किसी आंदोलनकारी मजदूर से हो।" शहीद असीम दास की युवा पत्नी ने मजदूर आंदोलन को आगे बढ़ाने और उसमें खुद सक्रिय रूप से शामिल होने की बात कही। शहीद प्रेम नारायण के गाँव पेण्डरी के लोगों ने अपने शहीद और मजदूरों की लड़ाई का स्मृति स्तम्भ बनाकर उन्हें एक प्रतीक बना दिया।

भिलाई गोलीकांड के तत्काल बाद समूचे इलाके में कर्फ्यु लग जाने के कारण आंदोलनकारी मजदूर वापस अपने घरों को नहीं लौट पाये। यहाँ-वहाँ साथियों और दूसरे मजदूरों

आंदोलन के लिए नेता निमित्त मात्र हैं

राहुल बनर्जी ● चित्तरूपा पालित

पश्चिमी म. प्र. के झाबुआ जिले में कार्यरत संगठन 'खेडुत मजदूर चेतना संगठ' के दो कार्यकर्त्ताओं ने भिलाई गोलीकांड के संदर्भ में 18-19 जुलाई 1992 को भिलाई तथा कुम्हारी क्षेत्र का दौरा किया था। उनकी रपट के कुछ अंश प्रस्तुत हैं।

— स.

बरसात से भीगे धान के खेतों के बीच से गुजरती हुई पगडंडी गाँव में पहुँचकर एकदम से मिट्टी के ऊँचे-ऊँचे मकानों से घिर कर सहम गयी थी। सौंकरा गाँव की सँकरी गलियों में से चलते हुए हम एक चौक पर पहुँचे जहाँ एक पीपल का पेड़ था। कुछ लोग बैठे बात कर रहे थे। जैसे ही हमने उनसे भिलाई गोलीकांड के शहीद पुराणिक लाल के मकान की दिशा पूछी तो उन सबने जोश से हमें 'लाल जोहार' का अभिवादन कर स्वागत किया। फिर हमें पुराणिक लाल के घर ले गये।

"हम तो, आज कहें तो आज ही, भिलाई वापस जाने को तैयार हैं। पुलिस को अभी कुछ सिखाना बाकी है।" यह था लखनलाल, सौंकरा गाँव में छमुमो का मुखिया। कुम्हारी क्षेत्र के चार-पाँच कारखानों में 'मुक्ति मोर्चा' के सदस्य हैं, और ये सब करीब 40-50 गाँव के बाशिंदे हैं। ये मजदूर, किसान भी हैं। इसलिए इनके गाँवों में किसानों के बीच भी 'मुक्ति मोर्चा' का प्रभाव फैला है। यही कारण है कि डेढ़ साल से अधिक समय से हड़ताल पर रहकर भी ये मजदूर अपने संकल्प पर अडिग हैं। इसके अलावा 'मुक्ति मोर्चा' की लड़ाकू, शोषण-विरोधी आवाज लोगों में नशे की तरह चढ़ गयी है — एक ऐसा नशा जो इन सबको जान की बाजी तक लगाने के लिए प्रेरित करता है।

"पुराणिक के सिर में गोली लगी। उनको उठाकर लाने गये दो और मजदूरों को भी भून दिया गया था। एक जुलाई के महासंघर्ष के समय हम यह तय कर रेल पटरी पर बैठे थे कि किसी भी हालत में शांति भंग नहीं की जायेगी। पुलिस ने ही पत्थर, लाठी और आँसू गैस का प्रयोग किया। इस दौरान आस-पास खड़ी जनता में घुसे हुए गुंडों ने पुलिस पर पथराव किया और जी. ई. रोड पर बस जला दी। इससे पुलिस को दमन का एक बहाना मिल गया। चेतावनी दिये बिना ही आठवें घंटे के बाद अंधाधुंध गोली चलायी गयी", लखनलाल ने अपनी बात पूरी की।

फिर हम खपरी गाँव पहुँचे। वहाँ 'मुक्ति मोर्चा' की महिला साथी भगवन्तीन बाई के घर जोश-खरोश के साथ हमारा स्वागत किया गया। भगवन्तीन बाई और मिली बाई एक जुलाई

दूसरे दिन हम भिलाई में छमुमो के प्रधान कार्यालय पहुँचे और वहाँ से एक परिचय पत्र लेकर जामुल की ओर रवाना हो गये। जामुल एक बड़ा औद्योगिक क्षेत्र है। सिम्पलेक्स, बीके, ए. सी. सी. आदि के बड़े-बड़े कारखाने यहीं हैं। मजदूरों की बस्ती इन्हीं कारखानों के बीच की जगहों में है। यहाँ के मजदूर सबसे ज्यादा लड़ाकू हैं। इसलिए गोलीकांड के बाद पुलिस का दमन यहीं सबसे अधिक हुआ है। 'मुक्ति मोर्चा' का संगठन तोड़ने के लिए पुलिस की निगाह संगठन के मुखियाओं पर है। जामुल के 66 मोहल्लों के मुखियाओं में से करीब 17-18 पकड़े गये हैं। इनकी जामुल और छावनी थाने पर बेरहमी से पिटाई की जा रही है। 6-7 दिन से थाने में ही रखा गया है और परिवार वालों के अलावा और कोई उनसे मिल नहीं पा रहे हैं।

"शौक से निकलेंगे हम और भिलाई को हिला कर रख देंगे" — यह था लोगों का जवाब, जब उनसे पूछा गया कि आतंक कम होने पर आगे की कार्रवाई क्या होगी? उन्होंने कहा कि रणनीति के तहत यह तय हुआ है कि अभी आंदोलन कुछ समय के लिए स्थगित रखना है। वरना इसी वक्त अगर आदेश आ जाये तो पुलिस को ताक पर रखकर फिर से हजारों की संख्या में लोग लाठी और गोली का सामना करने निकल सकते हैं। फिर भी अगर पुलिस ज्यादा समय तक परेशान करती रही तो लोग अब सहेंगे नहीं। "अगर एक-एक करके मुखियाओं को उठा लिया गया तो हम कहीं के नहीं रहेंगे। इसलिए हम सब उठेंगे और जेलें भर देंगे। अभी तो भिलाई की जनता भी हमारे साथ है, इसलिए सिर्फ इशारे भर की जरूरत है।"

जब हम गोलीकांड की खबर सुनकर भिलाई के संग्रामी साथियों से मिलने आये थे, तब हम यह सोच रहे थे कि शायद लोग डरे हुए होंगे और उन्हें सांत्वना की जरूरत होगी। लेकिन हमें जो देखने को मिला उससे यहाँ के साथियों को जो कुछ सांत्वना हम दे पाये, उससे कहीं ज्यादा हम खुद उनसे प्रेरणा लेकर वापस जा रहे हैं। बेहद साधारण मजदूर और किसान, प्रशासन और मालिकों की शक्ति को अनदेखा करके मुक्ति के नशे में झूम रहे हैं। पुलिस आतंक के बावजूद संगठन की एक मुख्य पहचान — विभिन्न स्तरों पर मीटिंगें नियमित रूप से करना — बनाये रखते हैं। साहस और अनुशासन से ढाढ़स बाँधकर, शत्रुओं को करारा जवाब देने के लिए फिर से तैयारी कर रहे हैं। भोपाल-दिल्ली में आजकल चर्चा हो रही है कि छमुमो के नेताओं में फूट है और इसलिए यह आंदोलन ज्यादा नहीं चलेगा। परंतु हमारा आकलन है कि जहाँ जनता इतनी सचेत, साहसी और स्व-अनुशासित है, वहाँ आंदोलन के लिए नेता निमित्त मात्र हैं। यह वास्तविकता, परम्परागत बुर्जुआ राजनीति के अभ्यस्त लोगों को कभी समझ में नहीं आती।

(जुलाई 1992)

गुजरने दिया जाये। **उस रात ट्रक ड्राइवरों और मुखियाओं में आत्मसंयम और अनुशासन की जो झलक देखने को मिली वह केवल फौज में ही मिल सकती है।** परंतु कोई यह न समझ बैठे कि फौजी रंगरूटों की तरह यूनियन के लोग भी आँख मूँदकर अपने अध्यक्ष की आज्ञा का पालन करते हैं। तीन दिन बाद उसी हाल में वे मुखिया फिर इकट्ठा हुए। इस बार मुद्दा था कि हमारे नेताओं ने 26 दिसम्बर का कार्यक्रम क्यों वापिस लिया। **सामूहिक निर्णय का यह लोकतांत्रिक सिद्धांत और खुली बहस की तैयारी ही शायद आंदोलन की सबसे बड़ी विरासत है।**

* * *

3 जनवरी 1992। हम लोग यूनियन की जीप में राजहरा से भिलाई लौट रहे थे। अगली सीट पर मेरे साथ उरला औद्योगिक क्षेत्र के युवा संगठक शेख अंसार थे। वे कह रहे थे कि आप हमारी मदद क्यों नहीं करते। आपकी पढ़ाई-लिखाई का हमें क्या फायदा? आप हम जैसे युवा कार्यकर्त्ताओं को ट्रेनिंग क्यों नहीं देते? जब मैंने पूछा कि कैसी ट्रेनिंग? तो शेख अंसार ने समझाया, "देखिये, हमारे औद्योगिक क्षेत्र के अनेक कारखानों में विज्ञान और तकनालाजी की जटिल प्रक्रियाएँ चलती हैं। जब हम वहाँ के मजदूरों के हितों के सवाल उठाते हैं तो बिना वैज्ञानिक व तकनीकी जानकारी के इन सवालों पर संघर्ष बढ़ाना मुश्किल हो जाता है।" फिर उन्होंने रासायनिक और इंजीनियरिंग कारखानों के अनेक उदाहरण देकर समझाया कि यदि उन्हें जानकारी होती तो किस प्रकार वे संघर्ष को नया आयाम दे सकते थे। **संघर्ष में वैज्ञानिक जानकारी की भूमिका की यह स्पष्ट समझ मोर्चे ने वर्षों के संघर्ष से पायी है।**

* * *

8 अगस्त 1992। इस पुस्तक की तैयारी में मैं छमुमो के भिलाई आफिस में बैठा हुआ था। वहाँ उपस्थित 3-4 कार्यकर्त्ता सुधा भारद्वाज के निर्देशन में अत्यंत व्यस्त थे। मैंने सोचा कि ये जरूर गोलीकांड के सिलसिले में मजदूरों पर लगे झूठे केस, जमानत की दरख्वास्त आदि मामलों में उलझे होंगे। परंतु उनके हाथों में बच्चों की किताब-कापियाँ और लम्बी-लम्बी सूचियाँ देखकर मेरी जिज्ञासा जागी। पता चला कि विभिन्न फैक्ट्रियों से यूनियन गतिविधियों के कारण काम से निकाले गये हजारों मजदूरों के बच्चों को मोर्चे की ओर से किताब-कापियाँ देने की निःशुल्क व्यवस्था की जा रही थी। नियोगी की हत्या से कुछ सप्ताह पूर्व ही शिक्षायी मदद के लिए मोर्चे ने देशभर में अपने मित्रों से दान इकट्ठा किया था। उस समय भी दान के लिए भेजा गया पत्र आश्चर्यचकित करने वाला था — **लगभग एक साल से चल रहे आंदोलन में मोर्चे ने पहली बार मदद माँगी तो वह बच्चों की शिक्षा के लिए।** और गोलीकांड के बाद जब राज्य सरकार और उद्योगपति यह तय कर चुके हैं कि मोर्चे की रीढ़ की हड्डी तोड़ दी जायेगी, आधे से अधिक नेता झूठे आरोपों में जेलों में बंद हैं और शेष मजदूर बस्तियों में भूमिगत। भिलाई दफ्तर की दीवार पर लाल-हरे रंग में गोलीकांड के पंद्रह शहीद मजदूरों के नाम लिखे हुए हैं। उस रोंगटे खड़े करने वाली पहली जुलाई की घटना के मात्र पाँच सप्ताह बाद शहीदों

समुद्र में उठती लहरों पर झाग / नागभूषण पटनायक

देश के वरिष्ठ क्रांतिकारी नेता एवं इंडियन पीपुल्स फ्रंट के वर्तमान अध्यक्ष श्री नागभूषण पटनायक 3 जून 1983 को शहीद अस्पताल के उद्घाटन समारोह में भाग लेने दल्ली राजहरा गये थे। उनका भाषण कैसेट पर रिकार्ड कर लिया गया था। उसी का एक अंश यहाँ प्रस्तुत है। — स.

"यह तमाम-तमाम मेहनतकश जनता है जो देश की आबादी का अधिकांश भाग है। वह एक समुद्र, एक बहुत बड़े सागर के समान है। इस समुद्र के ऊपर जो लहरें उठती हैं, वे मेहनतकश जनता के द्वारा किये जाने वाले संघर्षों के समान हैं। इस पानी के ऊपर, समुद्र के ऊपर जो कुछ झाग बन जाती है वह जनता के नेतृत्व, जनता के अगुआ के समान है। जब तक पानी नहीं होगा, अथाह पानी नहीं होगा, तब तक उसके अंदर लहरें पैदा होने का सवाल ही नहीं उठता और जब तक लहरें नहीं होंगी, तरंगें नहीं होंगी, तब तक झाग बनने का भी सवाल नहीं उठता।

एक बात बिल्कुल साफ है कि मेहनतकश जनता के बगैर कोई आंदोलन सफल नहीं हो सकता। और जब मेहनतकशों का आंदोलन आगे नहीं बढ़ेगा, तब मेहनतकशों का नेतृत्व उभरना, उनका अगुआ बनना, उनका सत्ता में आना सम्भव नहीं है।

यहाँ पर मैं कामरेड नियोगी को बधाई देता हूँ कि इस आंदोलन में जिस तरह से मजदूरों में नेतृत्व का बीज बोया गया है, वह धीरे-धीरे पनपा है और मजदूरों में से उभरकर जो नेतृत्व सामने आ रहा है, उसके लिए मैं इस संगठन को बधाई देता हूँ।" □

(अमन कुमार नम्र द्वारा कैसेट से उतारा गया।)

11.

मूल्यांकन और दिशा

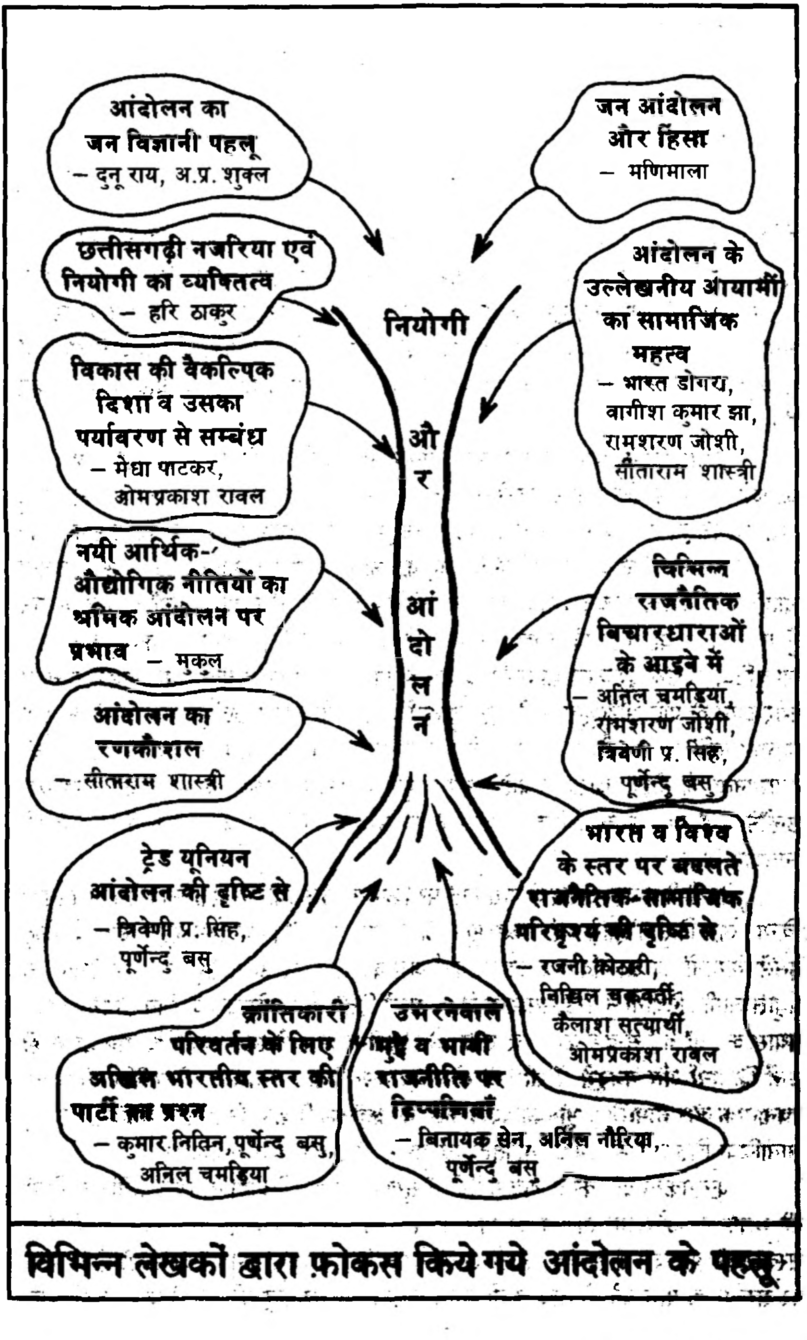

विभिन्न लेखकों द्वारा फ़ोकस किये गये आंदोलन के पहलू

अगर धन है तो वह नर्मदा बाँध जैसी योजनाओं के लिए है। इन्हीं घटनाओं ने नियोगी को बड़े बाँधों पर होने वाले धन के विनाश का कट्टर विरोधी बना दिया। वे सिंचाई के लिए छोटे-छोटे बाँध ग्रामीणों के सहयोग से बाँधने के पक्षधर थे। ऐसे कार्यक्रमों से ग्रामीणों का आत्मविश्वास लौटता है, स्वावलम्बन की प्रवृत्ति जागृत होती है, रचनात्मक कार्यों के प्रति दायित्व बोध पनपता है। नर्मदा बाँध के विरोध में किये जा रहे जन आंदोलन से नियोगी और उनका छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा इसीलिए घनिष्ठ रूप से जुड़ा रहा। बाबा आमटे ने नियोगी की तुलना उन लोगों से की है जो सही विकास के पैमाने के रूप में दूरदर्शिता और ईमानदारी रखते हैं और समतावादी समाज के पथ प्रदर्शक के रूप में कार्य करते हैं जिससे सर्वांगीण विकास हो सके। उन्होंने नियोगी के विषय में लिखा है, "**नियोगी जैसे लोग हमारे राष्ट्र के सही विकास में अग्रणी हैं।**"

श्रमिक आंदोलन के सिलसिले में नियोगी को तोड़ने के लिए हर सरकार ने उन पर व उनके सहयोगियों पर कहर ढाये। झूठे और मनगढ़ंत आरोप लगा कर दर्जनों मुकदमों में फँसाया गया। उन्हें बार-बार जेल में डालकर यातनाएँ दी गयीं। उनके मनोबल को कुचलने का प्रयास किया गया ताकि शोषितों और दलितों की रक्षा में किया जाने वाला जन आंदोलन शिथिल होकर बिखर जाये। लेकिन जितनी बार नियोगी के व्यक्तित्व को आग में तपाया गया, हर बार वह अधिक खरा हो कर निखरा। उनके नेतृत्व में जन आंदोलन और सशक्त हुआ, उसके क्षितिज का और विस्तार हुआ।

नियोगी तलवार की धार पर चलने वाले नेता थे। इसलिए नरम कालीनों पर चलने वाले नेता नियोगी की महानता को कभी समझ नहीं सकते। **नियोगी की ईमानदारी और संघर्ष क्षमता को देख-परख कर ही श्रमिक और किसान उनके लाल-हरे झंडे के नीचे एकत्र होते चले गये।** यदि उनमें ये गुण नहीं होते तो पचास-साठ हजार श्रमिक उनके पीछे अपने प्राण तक न्यौछावर करने को कभी तैयार नहीं होते।

नियोगी में मानवीय गुणों का समुच्चय था। वे अत्यंत संवेदनशील विचारक थे। **उनकी आँखों में एक स्वस्थ, सुखी और समतायुक्त समाज का सपना तैरता था।** वे कोई साधु-संत नहीं थे किंतु उनका सादा जीवन त्याग और तपस्या से परिपूर्ण था।

मुझे नियोगी के जिस गुण ने सबसे अधिक प्रभावित किया था, वह थी उनकी अतिशय नम्रता। **हर बुजुर्ग, बुद्धिजीवी और कलाकार के प्रति उनके मन में असीम सम्मान का भाव था।** अपने संगठन से जुड़े हर कलाकार के भीतर छिपी प्रतिभा को वे खींच कर बाहर उजागर करने के लिए छटपटाते थे। खदान मजदूर फागूराम में उन्होंने एक गायक-कवि के अंकुर छिपे देखे। नियोगी ने फागूराम को न केवल ऊपर उठाया बल्कि उनके गीतों को संकलित कर पुस्तक के रूप में प्रकाशित करने की व्यवस्था भी की। न जाने कितने लोक कलाकारों, गायकों, चित्रकारों को वे आगे लाने के लिए छटपटाते रहे। अब उनके लिए छटपटाने वाला नियोगी इस संसार में नहीं है।

क्रांतिकारियों के इतिहास से उन्होंने बहुत कुछ सीखा और प्रेरणा ली थी। अमर शहीद भगत सिंह से लेकर खुदीराम बोस, बिरसा मुंडा से लेकर शहीद वीर नारायण सिंह के इतिहास ने नियोगी के क्रांतिकारी मानस को गढ़ा था। नारायण सिंह के बारे में जानकारी जुटाने के लिए वे कई सप्ताह तक सोनाखान के जंगलों में भटकते रहे। **शहीद वीर नारायण सिंह को इतिहास**

अजीब बात है। जिसने कभी हिंसा में यकीन नहीं किया। जिसने कभी हथियार नहीं उठाये। जिसने कभी किसी को एक पत्थर तक नहीं मारा। जिसने किसी के लिए अपशब्दों तक का इस्तेमाल नहीं किया। जिसने कोई पूँजी जमा नहीं की। जिसने कभी किसी को डराया नहीं। डराना जिसकी जीवन शैली में शामिल नहीं था। जिसने अपने-आपको कभी किसी पर थोपा नहीं। जिसने कभी आखिरी सच होने का दावा नहीं किया। जुलूसों में, पदयात्राओं में जो कभी आगे-आगे नहीं चला, वैसा एक सीधा-सादा, सहज, आर-पार दिखने वाला इंसान इस व्यवस्था के लिए इतना बड़ा आतंक कैसे हो गया कि व्यवस्था के काले अदृश्य हाथों ने सोये हुए नियोगी को गोली मार कर शहीद बना दिया। जागने की प्रतीक्षा तक नहीं की। जैसे व्यवस्था के इन काले हाथों को इसका अहसास था कि जागे हुए नियोगी को मारा नहीं जा सकता है।

जब व्यवस्था आतंकित होती है तो 'आतंक' को खत्म कर देती है। बोथा सरकार कलम के हर सिपाही को सूली पर नहीं चढ़ाती है। बेंजामिन मोलाईस को चढ़ाती है। जिसकी कलम से डरती है, उसे ही सरकारें सूली पर चढ़ाया करती हैं। जिसके काम, जिसकी जीवन शैली, जिसके संकल्प, जिसकी तपस्या से यह व्यवस्था डरती है, उसे यह व्यवस्था कत्ल कर देती है। **जाहिर है नियोगी की तपस्या और त्याग में, काम और काम के तरीके में, जीवन और जीवन शैली में यह ताकत थी कि बिना हथियार उठाये वे हथियारबंद व्यवस्था को डरा सके।**

❑

(मूल लेख से उद्धृत अंश ; 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 3 नवम्बर 1991, से साभार।)

संघर्ष का कुशल सारथी

सीताराम शास्त्री

शंकर गुहा नियोगी के नेतृत्व में विकसित मजदूर आंदोलन भारत के मजदूर आंदोलन के इतिहास का वह स्वर्णिम अध्याय है, जिससे मजदूर आंदोलन के कार्यकर्ताओं को प्रेरणा लेने, मार्गदर्शन पाने और सीखने की बहुत सारी बातें मिलती हैं।

नियोगी की सबसे बड़ी प्रतिभा इस बात में थी कि वे कठिन से कठिन संघर्ष को सफलता की दिशा में ले जाते थे। पिछड़ा अंचल, पिछड़े लोग, चारों तरफ दुश्मन, मजदूरों की कमजोर आर्थिक स्थिति, किसी व्यापक व बड़े राजनैतिक दल और राष्ट्रीय मजदूर संगठन का अभाव। इतनी कठिन परिस्थिति में संघर्ष को सफल बनाने की नियोगी की रणनीति, रणकौशल क्या थे, यह समझने की जरूरत है। नियोगी मजदूरों के अंदर की एवं बाहर की तमाम शक्तियों को पूँजीमूल

नियोगी ने जनजीवन के एक अन्य आयाम — राष्ट्रीयता — के महत्व को समझते हुए छत्तीसगढ़ की अस्मिता और गौरव के प्रश्न को काफी मजबूती से उठाया और इस पिछड़े अंचल की जनता को एक सम्बल प्रदान किया।

शायद ही कोई व्यक्तित्व सम्पूर्ण होता है। नियोगी भी दोषरहित नहीं थे। उनके अंदर भी खामियाँ व कमजोरियाँ थीं। समझ व योग्यता के विभिन्न स्तरों को समायोजित करने की प्रक्रिया में उनका व्यक्तिवादी रुझान प्रकट होता रहता था। जनता के समग्र आंदोलन के कई पहलुओं को उन्होंने पर्याप्त महत्व नहीं दिया।

लेकिन नियोगी एक खुले व्यक्तित्व थे। विभिन्न स्तरों के लोगों से व्यापक रूप से परस्पर आदान-प्रदान करने की प्रक्रिया में उन्होंने अपनी सीखने की प्रक्रिया को लगातार जारी रखा।

सबसे बड़ी बात तो यह है कि **नियोगी ने छत्तीसगढ़ के पिछड़े अंचल के हजारों मजदूरों को हिम्मत और आत्मसम्मान के साथ अपनी आवाज बुलंद करना, लड़ना और संगठन बनाना सिखाया।**

❑

(मूल लेख से उद्धृत अंश ; ' हिन्दुस्तान ', पटना, 10 अक्तूबर 1991, से साभार ।)

बिखरी श्रमिक मानवता के बेजोड़ रणनीतिज्ञ

रामशरण जोशी

शंकर गुहा नियोगी की हत्या एक ऐसे मोड़ पर की गयी है जब छत्तीसगढ़ को अपनी बहुआयामी अस्मिता का बोध होने लगा है। छत्तीसगढ़ को इस बात का अहसास होने लगा है कि मध्य प्रदेश के सामाजिक-आर्थिक-राजनैतिक निज़ाम में उसकी हैसियत कहाँ है। **एक उत्पीड़ित, शोषित और दबे-कुचले छत्तीसगढ़ की एक ऊर्जायुक्त, गतिशील एवं सम्भावनाओं से भरे छत्तीसगढ़ के साथ मुलाकात के श्रेय के पात्र निश्चित ही नियोगी हैं।** और नियोगी की यही भूमिका उन तत्वों को पसंद नहीं आयी जो छत्तीसगढ़ को जड़ता, सामाजिक-उत्पीड़न, आर्थिक शोषण और राजनैतिक दासता का एक सुरक्षित गढ़ बनाये रखने पर आमादा हैं। उन्होंने अपनी इस रणनीति के तहत नियोगी को छत्तीसगढ़ के दृश्य से हटाकर ही दम लिया।

दरअसल, नियोगी ने एक परम्परागत श्रमिक नेता की तमाम सरहदों को लाँघ डाला था। वे कर्म के एक ऐसे क्षेत्र में दाखिल हो चुके थे जहाँ वे श्रमिक नेता से इतर भी कई भूमिकाएँ निभाने लगे थे। और उनके इस बहुआयामी हस्तक्षेप की वजह से छत्तीसगढ़ की नयी अस्मिता सामाजिक-आर्थिक-राजनैतिक क्षितिज पर उभरने लगी थी। अपनी भूमि, अपने श्रम, अपने

आंदोलन सबसे शक्तिशाली हथियार साबित हुआ। सतही तौर पर इस तरह के आंदोलन गैर-क्रांतिकारी एवं संशोधनवादी लग सकते हैं। लेकिन, पिछड़े समाजों के लिए इस तरह के आंदोलन क्रांतिकारी सिद्ध हुए हैं। **माओ** ने स्वयं स्त्री शिक्षा पर जोर दिया। चीनी अफीमचियों के खिलाफ आंदोलन किया। वेश्यावृत्ति के खिलाफ आवाज उठायी। **लेनिन** ने भी अपने आरम्भिक कालों में ऐसे विषयों पर लेख लिखे हैं जिन्हें समाज सुधार की श्रेणी में रखा जा सकता है। भारत में **महात्मा गांधी** ने तो इस क्षेत्र में कई अभिनव प्रयोग किये हैं। उन्होंने कभी भी रचनात्मक या समाज सुधार कार्यों (हरिजन उद्धार, चर्खा आंदोलन, बुनियादी शिक्षा इत्यादि) को संघर्ष की रणनीति से काटकर नहीं रखा। उन्होंने दोनों को परस्पर पूरक माना।

नियोगी ने भी आंदोलनात्मकता और रचनात्मकता को एक दूसरे से रूपांतरित करके अपनी रणनीति तैयार की। लेकिन, गांधीजी और नियोगी की रणनीतियों में एक बुनियादी फर्क जरूर है। **गांधीजी ने जहाँ द्वंद्व या अंतर्विरोध के अस्तित्व को स्वीकार नहीं किया, और वर्ग सहयोग की दृष्टि से काम लिया, वहीं नियोगी ने अंतर्विरोधों के अस्तित्व को स्वीकार कर अपनी रणनीति निर्धारित की।** यदि गांधीजी ने परोक्ष रूप से अंतर्विरोध के अस्तित्व को स्वीकार भी किया तो उन्होंने इसके ' समाधान ' की नहीं, ' डिफ्यूज़न '[1] की कोशिश की। इसके विपरीत, नियोगी ने अंतर्विरोधों के समाधान की रणनीति तैयार की। यही वजह है कि नशाबंदी, समाज सुधार या रचनात्मक कार्यक्रम भी शासक वर्ग के लिए असहनीय बन गये। क्योंकि, नियोगी ने इस कदम के जरिये शासक वर्ग की अर्थसत्ता पर जबर्दस्त प्रहार किया था। अंततः उन्हें इसका मूल्य अपने प्राणों का उत्सर्ग करके चुकाना पड़ा।

सांस्कृतिक मुक्ति का संघर्ष आर्थिक एवं राजनैतिक मुक्ति के संघर्ष से किसी भी तरह कम नहीं होता है। **जब ये तीनों संघर्ष एकाकार हो जायें तब पिछड़े समाजों में बदलाव का जबर्दस्त विस्फोट होता है।** नियोगी के इस त्रिमूर्ति, सांस्कृतिक-आर्थिक-राजनैतिक प्रयोग ने छत्तीसगढ़ में ऐसे ही विस्फोट की जमीन तैयार कर दी थी। इसलिए शासक वर्ग को उनके खिलाफ यह कार्रवाई करनी पड़ी। इस संदर्भ में **सफदर हाशमी** की भूमिका को भी याद किया जा सकता है। स्व. हाशमी ने भी सांस्कृतिक संघर्ष के जरिये आर्थिक एवं राजनैतिक चेतना का विस्तार किया था, हालाँकि वह लघु स्तर पर किया गया एक प्रयास था। लेकिन, संघठित क्षेत्र के शासक वर्ग को सफदर का यह लघु हस्तक्षेप भी असहनीय लगा और देश की राजधानी दिल्ली की ठीक नाक के नीचे साहिबाबाद में सफदर की भी वही नियति हुई, जो आज करीब पौने तीन बरस बाद नियोगी की हुई है।

याद रखना चाहिए , शासक वर्ग भौगोलिक दूरियों को मान्यता नहीं देता है, मान्यता देता है सिर्फ अपने वर्गीय हितों को। इनकी हिफाजत के लिए उसे बीस कि. मी. पर कत्ल करना पड़े या डेढ़ हजार कि. मी. दूरी के फासले पर, दोनों फासले एक-से हैं।

(मूल लेख से उद्धृत अंश ; ' प्रतिपक्ष ', नवम्बर 1991, से साभार।)

---

[1] बिखेरना, छितराना।

हो जाता है, वह प्रायः मिट्टी की महक से बहुत दूर का होता है।

वर्ष 1977 से 1991 तक नियोगी ने छत्तीसगढ़ में जो काम किया, कितने मजदूरों-किसानों को एक जन आंदोलन से जोड़ा, वह सब के सामने है। पर जो सामने नहीं है वह है इससे पहले का जबर्दस्त मंथन, तरह-तरह के उतार-चढ़ाव और उसके बीच हुआ गहरा चिंतन-मनन, ऐसा चिंतन जो सदा लोगों और उनकी समस्याओं के बीच में रह कर हुआ (जेल-यात्राओं के दौरान जो लोगों से जबर्दस्ती अलग रखा गया वह बात अलग है)। अपने लोगों के इतना नजदीक रहने का ही परिणाम था कि **नियोगी मोटे-मोटे मार्क्सवादी ग्रंथ पढ़कर इस बारे में बड़े मजे से किसी भी दावे में बात कर सकते थे कि उनके यहाँ की मौजूदा परिस्थिति में उनमें से कौन सी बातें लागू होती हैं और कौन सी नहीं।** अपने आस-पास की गहरी पहचान और समझ के बल पर ही नियोगी और उनके साथी बेहद तनाव और संकट के वर्षों में एक सफलता से दूसरी सफलता की ओर बढ़ सके।

इस आंदोलन की एक खास बात यह थी कि सामाजिक बुराइयों की जड़ क्या है, आर्थिक लूट करने वालों और सामाजिक बुराइयाँ फैलाने वालों का अंतःसम्बंध क्या है, इसकी एक समग्र समझ उन्होंने विकसित की थी। यही कारण था कि इन कामों को ढुलमुल ढंग से करने के स्थान पर वे इसे संगठित ढंग से कर सके और सामाजिक बुराइयों को दूर करने में जिन निहित स्वार्थों का सामना करना पड़ेगा, इसके बारे में सचेत रहे।

नियोगी को प्रायः एक श्रमिक नेता के रूप में देखा गया है, जो वे थे, पर इसके अतिरिक्त भी बहुत कुछ थे। देश की अनेक पेचीदा समस्याओं के बारे में बहुत सुलझी हुई समझ उनमें थी जिसे अपने क्षेत्र में उन्होंने व्यावहारिक रूप भी दिया। एक पिछड़े और बुरी तरह लूटे गये क्षेत्र और उसके लोगों की समस्यायें पूरे जोर-शोर से उठायी जायें पर उन्हें अलगाववाद, आतंकवाद आदि प्रवृत्तियों से अलग कैसे रखा जाये, यह भी छत्तीसगढ़ के जन आंदोलन ने दिखाया है। **छत्तीसगढ़ के लोग अपने हकों की बात करें, साथ ही देशभक्ति की बात भी करें और दोनों में कहीं कोई विरोध न नजर आये, यह रास्ता जन आंदोलन ने दिखाया है।** सारे देश के मान्य जुझारू नेताओं जैसे भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद आदि को पूरा मान इस आंदोलन में मिलता रहा है और साथ ही छत्तीसगढ़ क्षेत्र के स्वतंत्रता सेनानियों की (जिन्हें बहुत से लोग भूल चुके थे) पहचान भी इस आंदोलन ने की।

ऐसे समय में, जबकि निराशावादी बार-बार यह दुहरा रहे थे कि मौजूदा माहौल में सच्चे बदलाव के लिए कोई भी जन आंदोलन विभिन्न वीभत्स विकृतियों से मुक्त नहीं रह सकता, लेकिन शंकर गुहा नियोगी सन् 1977 से लेकर अपनी मृत्यु तक, 14 सालों तक ऐसा आंदोलन चलाने में कामयाब रहे। अब यह हमारी जिम्मेदारी है कि हम यह देखें कि उनके सपने नष्ट नहीं हों और उनके द्वारा जलाया गया दीया अंधकार को दूर करता रहे। ❑

(इंडियन एक्सप्रेस एवं प्रतिपक्ष, अक्तूबर–नवम्बर 1991, में प्रकाशित लेखों पर आधारित एवं साभार।)

वृहत आयाम में नियोगी

रजनी कोठारी

पिछले कुछ सालों से हम सत्ता सम्बंधों के मामले में काफी उथल-पुथल और अस्थिरता के दौर से गुजर रहे हैं। यह उथल-पुथल और अस्थिरता अंतर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय स्तरों के साथ-साथ उप-राष्ट्रीय स्तर पर भी है एवं शासक वर्ग और आम लोगों के सम्बंधों में व खुद अभिजात वर्गों के भीतर भी दिखायी देती है। इस दौरान आये बदलावों में से कइयों का पूर्वानुमान लगा पाना भी सम्भव नहीं हुआ है और कई तो हमारे चिरवांछित मूल्यों और सार्वजनिक नीति में भारी उलटाव को इंगित करते हैं। बहुधा ये बदलाव जनतांत्रिक, सामाजिक रूप से प्रगतिशील और कल्याणकारी होने का भ्रम पैदा करते हैं, लेकिन हकीकत में उनके परिणाम ठीक उलटे हुए हैं। कई बार अन्य किस्म के प्रतीकों का इस्तेमाल किया गया और राष्ट्रीय एकता, विकास, औद्योगिक शांति और जनसमुदाय के विभिन्न तबकों व समुदायों के बीच सौहार्द की गुहार लगायी गयी। इस प्रक्रिया के दौरान विभिन्न हितों के बीच बुनियादी अंतर्द्वंदों, मजदूर वर्ग व अन्य वंचित समूहों के शोषण और मौजूदा सामाजिक व आर्थिक सत्ता तंत्र के शिकार लोगों के खिलाफ चल रही सुनियोजित हिंसा व दमन के बारे में बढ़ती हुई चेतना को दबाया गया।

हालाँकि यह सच है कि भारतीय समाज बहुसंख्यकों के प्रति कभी भी सही मायने में न्यायपूर्ण और समतामूलक नहीं रहा, और यह भी सच है कि आजादी के बाद बीते दशकों के दौरान गरीब व अमीर के बीच की खाई वायदों के बावजूद घटने के बजाय बढ़ी ही है, फिर भी यह हाल के वर्षों की ही बात है कि राज्य ने समाज के कमजोर व असंरक्षित तबकों को न्यूनतम सुरक्षा भी प्रदान करना बंद कर दिया है और स्थानीय व अंतर्राष्ट्रीय निहित स्वार्थों से अपनी अपेक्षाकृत स्वायत्तता को भी खो दिया है। आपातकाल के समय से ही यह तस्वीर बदलने लगी थी। बदलाव की यह प्रक्रिया अस्सी के दशक के दौरान खास तौर पर तब स्पष्ट हो गयी, जब राज्य सामाजिक बदलाव के प्रधान अभिकर्ता (एजेंट) और एक ऐसी संस्था की भूमिका को त्यागने लगा, जिससे गरीब व वंचित लोग मदद की आशा कर सकते थे। उलटे अब उसने संगठित पूँजीपति वर्ग के प्रभुत्व और विश्वव्यापी तकनालाजी प्रवाह को स्वीकार लिया। इसके फलस्वरूप क्षेत्रीय व स्थानीय स्तर पर निम्न पूँजीपति वर्ग और लम्पट व्यापारी तबके की ही पकड़ मजबूत हुई। इस प्रकार बढ़ते हुए क्रम में स्थानीय स्तर पर सत्ता तंत्र में एक प्रकार का माफिया हावी होता गया। यह छोटे उद्योगपतियों, शराब ठेकेदारों, पार्टी राजनीतिज्ञों के साथ-साथ स्थानीय नौकरशाहों और निःसंदेह, पुलिस व अपराधी ('असामाजिक') तत्वों के बीच विकसित होते हुए गठजोड़ को प्रतिबिम्बित करता है।

उच्चतर स्तरों पर बैठे लोगों ने स्थानीय (शहरी व ग्रामीण, दोनों ही) स्तरों पर बढ़ते हुए इस अपराधीकरण को रोकने की कोई कोशिश नहीं की है। उलटे, केंद्र सरकार और उसके प्रमुख प्रवक्ताओं ने हमेशा जन आंदोलनों, मानवाधिकार समाजकर्मियों और जनतांत्रिक

व क्षुद्र बातें भी हैं। आज एक तरफ जनतांत्रिक चेतना, आंदोलनात्मक राजनीति और जनता को गोलबंद करने के नये तौर-तरीकों में उभार का माहौल दिखता है, तो दूसरी तरफ संगठित पूँजीवादी व्यवस्था द्वारा अपराधी गिरोहों और हिंसा के सौदागरों के इस्तेमाल के जरिये अपने को सुदृढ़ बनाने व प्रतिक्रियात्मक हमलों की तैयारी करने का प्रयास भी दिखता है। आज समय का यह तकाजा है कि **हम अपने-आपको और अपने तमाम प्रयासों को उपर्युक्त दो परस्पर विरोधी परिघटनाओं से भरे इस वृहत्तर ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखें।**

शंकर गुहा नियोगी की महान उपलब्धियों और त्रासदी को, जो मजदूर वर्ग के आंदोलनों के इतिहास की सचमुच एक ऐतिहासिक घटना है, केवल भारत ही नहीं वरन् तीसरी दुनिया के बहुत सारे अन्य देशों में भी मौजूद उस परिस्थिति के संदर्भ में आँका जाना चाहिए , जिसकी मैंने इस संक्षिप्त लेख में व्याख्या करने की कोशिश की है। हालाँकि मेरी यहाँ नियोगी द्वारा छमुमो के लिए और भिलाई व दूसरी जगहों के संघर्षों में विकसित तौर-तरीकों और रणनीति की विस्तार से चर्चा करने की कोई मंशा नहीं है (क्योंकि इस विषय पर अन्य लोगों ने इसी पुस्तक में लिखा है), फिर भी मैं नियोगी के तौर-तरीकों और रणनीति के एक पहलू को रेखांकित करना चाहूँगा और साथ में उस वृहत्तर सामाजिक व राजनैतिक परिप्रेक्ष्य को भी, जिसका उन्होंने अपने काम एवं जीवन में समावेश किया था। वह यह है कि **वे मजदूर वर्ग के आंदोलन में उस ठेठ ' अर्थवादी ' दृष्टिकोण से कभी भी संतुष्ट नहीं थे, जो दुर्भाग्यवश हमारी अधिकतर ट्रेड यूनियनों को ग्रसे हुए है।** इसी वजह से आज जबकि जरूरत इस बात की है कि प्रतिक्रियावादी व फासीवादी प्रवृत्तियों के खिलाफ संघर्ष के लिए मजदूर वर्ग की संगठित ताकत का इस्तेमाल हो, इस दिशा में नाम मात्र के प्रयास ही दिखायी देते हैं।

दरअसल, नियोगी सिर्फ एक ट्रेड यूनियन नेता ही नहीं थे। वे मूलतः एक ऐसे सामाजिक क्रांतिकारी थे, जो बदलाव की चुनौती को समग्रता में देखता हो। उनके लिए न्यूनतम मजदूरी और जीवन की बेहतर परिस्थितियों हेतु संघर्ष, मजदूर वर्ग और उससे सम्बंधित पक्षों को सत्यनिष्ठा, आत्मनिर्भरता और जनतांत्रिक भागीदारी की ओर ले जाने वाले आंदोलन का अग्रदूत बनाने की प्रक्रिया का हिस्सा मात्र था। इस प्रक्रिया में उनका यह भी प्रयास था कि जन-जीवन उपभोक्ता बाजार के विकृत अमानवीयकरण से मुक्त और निर्मल बने, लोग संघर्ष के ही जरिये उदात्त बनें और न केवल देश भर के, बल्कि सारी दुनिया के संघर्षशील जन समुदायों के साथ दृढ़ता से एकजुट हों। अगर आज इन सरोकारों के लिए नियोगी की शहादत के एक साल बाद भी उनके द्वारा चलाया आंदोलन पूरे जोशोखरोश के साथ जारी है और शराब लॉबी व भोपाल में बैठी भाजपा सरकार के समर्थन से चल रहे मध्य प्रदेश पुलिस के द्वेषपूर्ण दमन और बहुतेरे मजदूरों की कुर्बानियों के बावजूद टिका हुआ है, तो इसका श्रेय बहुत हद तक उस विपुल ऊर्जा, कल्पनाशीलता और दृढ़ निश्चय को जाता है जिसे कामरेड नियोगी विरासत में पीछे छोड़ गये हैं।

❑

(जुलाई 1992; मूल अंग्रेजी से अनूदित।)

गतिविधियों में आयी इस गिरावट को सिर्फ दलों के ही नहीं बल्कि ट्रेड यूनियन व किसान सभा जैसे जन संगठनों के मामले में भी देखा जा सकता है। बावजूद इसके कि आजादी के पहले के दिनों में हालात कई मायनों में अत्यंत दुष्कर थे, तब भी जानी-मानी ट्रेड यूनियनों और किसान सभाओं ने अपने-आपको मजदूरी या काम की परिस्थितियों जैसे मुद्दों तक ही सीमित नहीं रखा था। **ट्रेड यूनियन आंदोलन के निर्माताओं ने मजदूरी एवं काम व जीवन की बेहतर परिस्थितियों के लिए संघर्ष पर जोर देने के साथ-साथ कई मामलों में मेहनतकशों के व्यक्तित्व के उत्थान और उनके द्वारा समाज में एक सम्मानित सदस्य के रूप में अपना स्थान बनाने की जरूरत पर भी जोर दिया था।** मिसाल के तौर पर रात्रि-पाठशालाओं का आयोजन सभी ट्रेड यूनियनों की खासियत थी। मेहनतकश लोगों का सांस्कृतिक उत्थान हर सक्रिय किसान सभा के उद्देश्यों में से एक होता था। दरअसल, प्रगतिशील आंदोलन से जुड़े बहुत सारे लेखकों व कलाकारों का सीधा प्रेरणा स्रोत ट्रेड यूनियनों व किसान सभाओं के साथ उनका सक्रिय जुड़ाव था। तीस और चालीस के दशक में मजदूरों व किसानों के संघर्षों में किसी कवि या कलाकार या फोटोग्राफर का सक्रिय रूप से जुड़ा हुआ होना कोई अनहोनी बात नहीं थी।

* * *

आजादी के बाद के वर्षों में यह परम्परा धीरे-धीरे खत्म हो गयी। जबकि राजनैतिक दल मजबूत और साधन-सम्पन्न बन गये, लेकिन उन्होंने अपने-आपको विशुद्ध चुनावी गलियों में समेट लिया। ट्रेड यूनियनों व किसान सभाओं ने भी जिस रास्ते पर अमल किया, वह विशुद्ध अर्थवाद के सिवा और कुछ नहीं था। इसका असर यही था कि ट्रेड यूनियन आंदोलन ने अपने-आपको लगभग पूरी तरह मजदूरी व मालिकों द्वारा मजदूरों को प्रताड़ित किये जाने के मुद्दों तक सीमित कर लिया। उदाहरण के लिए , आजादी के बाद से ट्रेड यूनियन नेतृत्व ने हमारे देश में मजदूरों की शिक्षा के लिए आंदोलन खड़ा करने में कोई योगदान नहीं दिया है — उस प्रकार का भी नहीं जैसा कि ब्रिटिश लेबर आंदोलन के भीतर फेबियन समाजवादियों ने दिया था।

देश की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में किसी उद्योग विशेष का क्या स्थान है, इसके बारे में मजदूर वर्ग के किसी भी तबके को शिक्षित करने का कोई सतत प्रयास कभी नहीं हुआ है। जब पचास के दशक के मध्य में सार्वजनिक क्षेत्र की उपादेयता पर बहस हमारी राष्ट्रीय राजनीति का केंद्र बिंदु बनी हुई थी, तब भी ट्रेड यूनियनों ने इसमें कोई भूमिका नहीं अदा की। सन् 1969 में बैंक राष्ट्रीयकरण का फैसला भी कांग्रेस पार्टी के अंदरूनी तनावों का प्रतिफल था, न कि किसी ट्रेड यूनियन आंदोलन का परिणाम। वह बैंक कर्मचारियों की शक्तिशाली यूनियनों के प्रयासों का नतीजा भी नहीं था। बैंक कर्मचारियों के आंदोलन के खोखलेपन का पता इसी तथ्य से लग जाता है कि बैंक के रोजाना के कामकाज से जुड़े रहने के बावजूद उन्होंने थैलीशाहों की चालबाजियों के बारे में लोगों को जागरूक बनाने की दिशा में कुछ भी नहीं किया। बैंक कर्मचारियों के आंदोलन ने बड़े व्यावसायिक घरानों के उन कार्यकलापों का पर्दाफाश करने में रंच मात्र भी योगदान नहीं दिया, जिनके कारण ' एकाधिकार आयोग ' की स्थापना हुई। यहाँ तक कि हाल के ' प्रतिभूति घोटाले ' को उजागर करने में भी बैंक कर्मचारी आंदोलन के शायद ही किसी योगदान का जिक्र हुआ हो, हालाँकि उसमें शीर्षस्थ बैंकों का प्रत्यक्ष हाथ रहा है।

इसीलिए आश्चर्य की बात नहीं कि हमारे इस दूर-दूर तक फैले देश में विभिन्न दृष्टिकोण वाले किस्म-किस्म के सैकड़ों समाजकर्मी समूह (ऐक्टिविस्ट ग्रुप्स) अपनी-अपनी समझ के मुताबिक समाज की भलाई में जुटे हुए हैं। चाहे वह साक्षरता के प्रसार का मसला हो, या वैज्ञानिक जानकारी को फैलाने और अनुकूल प्रौद्योगिकी को लोकप्रिय बनाने का मसला हो, या पर्यावरण की रक्षा के लिए जूझने या महिलाओं के अधिकारों को सुनिश्चित करने और दहेज व वधु-दहन जैसी सामाजिक बुराइयों के खिलाफ लड़ने या बाल-कल्याण कार्यक्रमों को आगे बढ़ाने का मसला हो – **इन समाजकर्मी समूहों की गतिविधियों का कुल दायरा आज चुनावी धंधेबाजी में फँसे हुए स्थापित राजनैतिक दलों के दायरे से कहीं ज्यादा आगे बढ़ गया है।** हमारी सार्वजनिक गतिविधियों के संतुलन में आये इस बदलाव पर गौर करने से भारतीय समाज में – इसके सभी राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक आयामों में – हो रहे रूपांतरण की दिशा के संकेत मिल जायेंगे। आगे जाकर यह घटनाक्रम क्या रूप लेगा, इसके बारे में कोई भविष्यवाणी करने का समय अभी नहीं आया है या फिर ऐसा करना शायद बड़बोलापन भी होगा।

इस परिप्रेक्ष्य में शंकर गुहा नियोगी – एक व्यक्तित्व और पददलित लोगों के एक विशिष्ट प्रकार के आंदोलन के जन्मदाता के रूप में – नवजागरण के भगीरथ बनकर उभरते हैं। उनकी शहादत और उनके द्वारा विकसित आंदोलन को आज जिस दमन का सामना करना पड़ रहा है, उसमें सम्भवतः हम अपने महान देश की वंचित-उपेक्षित मानवता के अंदर उठने वाले पुनरुत्थान के ज्वार का आभास पा सकते हैं।

❑

(जुलाई 1992 ; मूल अंग्रेजी से ध्रुव नारायण द्वारा अनूदित।)

बदलते परिप्रेक्ष्य की चुनौती

कैलाश सत्यार्थी

नियोगी की हत्या को दो महत्वपूर्ण परिप्रेक्ष्यों में समझने की जरूरत है। पहला, देश की वर्तमान आर्थिक नीति और उससे भी बढ़कर तेजी से बदल रही आर्थिक संस्कृति तथा विकास मूल्य। आर्थिक नीति सरकारी कागजातों और उस पर देश के पूँजीपतियों द्वारा अमल किये जाने का हिस्सा है। लेकिन यह आर्थिक नीति तो उस अर्थव्यवस्था का परिणाम है, जिसकी आधारशिला नेहरू ने रखी थी। राजीव गांधी ने सन् 1984 में सत्ता में आते ही इसे तेजी से बढ़ाने का बीड़ा उठाया – बाहर से कर्जा लेकर, आम आदमी की मेहनत और क्षेत्रीय संसाधनों को चूसकर, अधिकार माँगने वालों के मुँह तोड़कर, मध्यमवर्गीय उपभोक्तावाद की संस्कृति को प्रोत्साहित कर। इस काम में सरकार ने नयी आर्थिक नीति की घोषणा करके उसमें चार चाँद लगा दिये। किसी भी तरीके से पैसा कमाने की उद्योगपतियों को छूट देने की खुल्लमखुल्ला वकालत जितनी

जरूरी है कि नियोगी की धारा है क्या ?

छमुमो भिड़ा है वैचारिक क्रांति में। उसके संघर्षों का लक्ष्य है एक समतामूलक समाज की पृष्ठभूमि बनाना। स्थापित ट्रेड यूनियनों और राजनैतिक नेताओं से उनके टकराव का यही रहस्य है। उनकी हत्या के पीछे भी व्यवस्था की घबराहट है जो बढ़ती हुई जन जागृति को बर्दाश्त नहीं कर सकी। **वर्तमान ट्रेड यूनियन और राजनैतिक दल स्थापित व्यवस्था के अंग बन गये हैं, चाहे वे कितने ही एक-दूसरे के विरोधी दिखायी देते हों।** नियोगी का आंदोलन इस तथाकथित मुख्य धारा से एकदम भिन्न था।

नियोगी के मस्तिष्क में देश बदलने का एक सपना था। इस सपने के लिए ही वे जी रहे थे और संघर्ष कर रहे थे। वे कहते थे कि वर्तमान **देशद्रोही आधुनिकीकरण की व्यवस्था के स्थान पर देशप्रेमी आधुनिकीकरण की व्यवस्था को लाना होगा।** यही कारण था कि चाहे भोपाल गैस कांड के विरोध में मोर्चा हो या नर्मदा आंदोलन का मोर्चा हो, छमुमो हमेशा अग्रणी रहा है। इस तरह वे वर्तमान वामपंथी नेताओं से एकदम भिन्न थे, जो बात तो समता की करते हैं लेकिन ऐसी विकास की पद्धति की वकालत करते हैं जो पश्चिमी आधुनिकीकरण और उपभोक्ता एवं भोगवादी संस्कृति पर आधारित है। **नियोगी की तरह कितने ऐसे राजनेता हैं जो यह अहसास करते हैं कि एक देश में दो देश बन गये हैं। एक है भोगवादी ' आधुनिक ' देश और दूसरा है उसका आंतरिक उपनिवेश।** इस आंतरिक उपनिवेश की मुक्ति के लिए लड़ाइयाँ चल रही हैं और नियोगी भी इन लड़ाइयों के एक प्रमुख सेनापति थे। वे नक्सलवादियों से भी इस मायने में भिन्न थे कि उनका विश्वास गांधीवादी अहिंसक तरीके में था। मृत्यु के पूर्व जो वसीयत वे रिकार्ड करा चुके थे, उसमें भी उन्होंने यही कहा था कि यद्यपि हथियारी क्रांति की भी जरूरत हो सकती है लेकिन तभी जब सभी लोकतांत्रिक रास्ते समाप्त हो गये हों।

असल में देश में दो धाराएँ हैं। दो देश हैं, इसलिए दो धाराएँ हैं। एक धारा वह जो मंदिर और मस्जिद का सवाल उठाती है। मंडल का प्रश्न उठाती है। केंद्रीकृत व्यवस्था उसका लक्ष्य है। सारा हिमालय चाहे भूकम्पित हो जाये, लोग तबाह हो जायें लेकिन ये बेशर्मी से कहते रहेंगे कि टिहरी बाँध तो बनेगा। ये शक्तियाँ एक-दूसरे की विरोधी बनकर लड़ाइयाँ भी लड़ती हैं, लोग मारे भी जाते हैं, गिरफ्तारियाँ भी होती हैं, लेकिन कुर्सी पाने की लालसा एक ऐसी कड़ी है जो सबमें समान है। **व्यवस्था को इनसे कोई खतरा नहीं क्योंकि वह अच्छी तरह जानती है कि उनकी लड़ाइयाँ नकली हैं।**

एक दूसरी धारा भी है जो न्यूनतम मजदूरी का सवाल उठाती है। बंधुआ मजदूर की आवाज देती है। सार्वजनिक भूमि पर औद्योगिक आक्रमण का विरोध करती है, मशीन के द्वारा बेदखल, बेजुबान लोगों के लिए लड़ती है, कुदरती संसाधन छीने जाने पर रोष प्रगट करती है। वह सवाल उठाती है कि कुछ लोगों की लिप्सा के लिए प्रकृति द्वारा प्रदत्त हवा, पानी और जमीन को नष्ट करने और जहरीला बनाने का अधिकार उन्हें किसने दिया है ? **किसकी कीमत पर किसका विकास — इस प्रश्न को उठाकर वह स्थापित व्यवस्था के ढोंग का पर्दाफाश करती है।** जैसे-जैसे यह धारा फैलती है, गाँवों से लेकर शहर तक ठेकेदारों, साहूकारों, भ्रष्ट अधिकारियों, उद्योगपतियों और भ्रष्ट राजनेताओं की चूलें हिलने लगती हैं। इसलिए भेड़िया

भी आजादी के पूर्व के चीनी समाज को स्वतंत्र भारतीय समाज व्यवस्था पर प्रत्यारोपित करने वाली अवधारणाओं के कारण मृत्युपर्यंत बना रहा। उन दिनों औद्योगिक मजदूरों के बीच संगठन बनाने का काम चारुवादियों की दृष्टि में गद्दारी के सिवाय कुछ भी न था। सन् 1970 के 'लिबरेशन' के अंकों को देखने से सहज ही पता लग जाता है कि तब एक एम. एल. क्रांतिकारी के लिए औद्योगिक मजदूरों के बीच संगठन बनाने का काम करना कितना असहज था। शंकर ने उन दिनों भिड़ंत का रास्ता न अपनाते हुए भी एक सही सोच के साथ इस ओर मजबूती से कदम बढ़ाये। तब तक यह बिलकुल नया पौधा था। तब उग्रवाद की वेगवती धारा के खिलाफ चट्टान की तरह अड़ने का इरादा शंकर जैसे लोगों के ही मन में पैदा होता है।

दुनिया के पैमाने पर जिस तरह की घटनाएँ घट रही हैं और इसके विपरीत अर्थवाद में फँसे भारतीय मजदूर वर्ग का जितना व्यापक विभाजन हो रहा है, उससे लगता है कि दुश्मन वर्ग के हमले और तेज होंगे और व्यक्तिगत कायरतापूर्ण हत्याओं में बढ़ोतरी होगी। मरने के क्षण तक शंकर भिलाई के हड़ताली मजदूरों का नेतृत्व कर रहे थे और इस हत्या का उन्हें पूर्वाभास था और व्यावहारिक अनुभवों में वे भाड़ में अकेला चना होने का अहसास पा चुके थे। वे समाजवाद के लिए संकल्पित ट्रेड यूनियनों की एक जमात बनाने के पक्षधर थे।

कामरेड शंकर गुहा नियोगी की हत्या के सबक क्या हैं ? मैं एक छोटे से उदाहरण के साथ इसे रखना चाहता हूँ। गत 25 अक्तूबर को अहमदाबाद (गुजरात) में जॉर्ज फर्नाण्डिस मजदूर कार्यकर्ताओं की एक मीटिंग को सम्बोधित कर रहे थे। सभा में कोई तीन सौ के आस-पास लोग थे और ज्यादातर नौजवान साथी थे। जॉर्ज साहब ने अपने भाषण की शुरुआत ही एक सवाल से की, " आप में से कितने लोगों ने शंकर गुहा नियोगी का नाम सुना है ? " सिर्फ दो हाथ उठे। एक ने बताया कि वे फिल्म में काम करने वाले कोई एक्टर थे। दूसरे ने बताया कि टी. वी. पर उनका नाम सुना था। दूसरा सवाल पूछा गया, " राजीव गांधी के दोनों बच्चों और उनकी पत्नी के नाम कितने लोग जानते हैं ? " कहने की जरूरत नहीं कि सभी को मालूम था। मुल्क की सबसे बड़ी औद्योगिक बस्तियों में एक, अहमदाबाद के मजदूरों की चेतना का यह हाल है। यदि मजदूर वर्ग की चेतना का हाल यही रहा तो यह निश्चित है कि समाज और इस मुल्क को फिर से बँटने से कोई भी रोक नहीं सकता।

शंकर की हत्या की एक दूसरी शिक्षा भी है। एक हत्या उनकी भी हुई थी जिनके चुनाव फंड में शराब आदि के काले व्यापारी करोड़ों जमा करते हैं और जिनके खून की आखिरी बूँदें अपनी ही औलाद को हुकूमत की गद्दी पर बिठाने के लिए गिरती हैं। और एक शहादत यह भी है कि जिसने खून के एक-एक कतरे से मजदूर बस्ती को ही सींचा। जब तक भारतीय मजदूर वर्ग की आँखें इस फर्क को देख नहीं पायेंगी तब तक शंकर ही नहीं, देश और समाज की हत्या को भी रोका नहीं जा सकता।

(मूल लेख से उद्धृत अंश ; 'प्रतिपक्ष', नवम्बर 1991, से साभार।)

रहे इसी किस्म के संघर्षों के साथ व्यावहारिक धरातल पर एकता बनाने की कोशिशों के बावजूद पूरे देश के पैमाने पर क्रांतिकारी बदलाव के बारे में उनका नजरिया साफ नहीं था। वे इस बात को पूरी गहराई में समझने में असफल रहे कि पूँजीवादी राज्य और व्यवस्था की समूल समाप्ति या समाजवाद के क्रांतिकारी विज्ञान पर आधारित बदलाव को सफल बनाने के लिए तथा दुनिया के किसी भी कोने से मुनाफे और लूट का राज खत्म कर सर्वहारा तथा अन्य मेहनतकश वर्गों का राज कायम करने के लिए सर्वहारा की सभी ताकतों को मुल्क के अंदर की अन्य सभी क्रांतिकारी ताकतों के साथ एक ही पार्टी में मिलाकर ही आगे बढ़ा जा सकता है। तभी पूँजीवाद पर निर्णायक जीत हासिल की जा सकती है।

सर्वहारा वर्ग के इस सबसे उन्नत, सबसे संगठित और हिरावल दस्ते के बिना आंशिक माँगों के लिए हुकूमत से संघर्ष, आंशिक रियायतों की जीत अर्थात् जनता की दुश्मन ताकतों पर छोटी-छोटी मुठभेड़ों में जीतों की उम्मीद तो की जा सकती है। लेकिन राज्य और व्यवस्था के पूरे तंत्र को देखते हुए कुल मिलाकर यह बाहर की चौकियों पर छोटी-छोटी टक्करें ही साबित होती हैं। निपटारे की लड़ाई के लिए एक क्रांतिकारी पार्टी, जनता के विभिन्न तबकों के साथ संयुक्त मोर्चे का निर्माण और हथियारबंद ताकतों की अनिवार्य जरूरत होती है।

और अगर किसी मुल्क के अंदर एक क्रांतिकारी पार्टी का अस्तित्व न हो, क्रांतिकारी संगठन अलग-अलग धाराओं में बँटे हों, अलग-अलग क्रांतिकारी पार्टी संगठन का वजूद बना हुआ हो तो सबसे अहम मसला हो जाता है विभिन्न क्रांतिकारी धाराओं के बीच सही विचारधारा, क्रांति का कार्यक्रम और मार्ग के व्यापक मुद्दों, राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति के विस्तृत आकलन और सांगठनिक सिद्धांतों और व्यवहार पर गम्भीर तथा तीखे राजनैतिक विवादों की प्रक्रिया से गुजरते हुए, आपसी सहमति कायम करते हुए पूरे देश के पैमाने पर क्रांतिकारी पार्टी निर्माण की दिशा में आगे बढ़ा जाये।

भारत के अंदर नक्सलबाड़ी जन-उभार के साथ खड़े हुए कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आंदोलन ने सी. पी. आई., सी. पी. एम. जैसी संशोधनवादी पार्टियों द्वारा अपनाये गये संसदवाद और अर्थवाद के रास्ते का परित्याग किया था। और राज्यसत्ता का सवाल तथा क्रांतिकारी पार्टी निर्माण का सवाल भारतीय क्रांति के एजेंडा पर रखा था। आज भी अपनी तमाम सैद्धांतिक, विचारधारात्मक-सांगठनिक कमजोरियों के बावजूद अलग-अलग ग्रुपों में बंटी हुई कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आंदोलन की धारा इन्हीं सवालों से जूझती दिखायी दे रही है।

शंकर गुहा नियोगी भले ही शुरुआती दौर में कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आंदोलन से जुड़े रहे हों, मगर उसके बाद क्रांतिकारी पार्टी निर्माण की प्रक्रिया में वे भागीदार नहीं बन सके। ऐसा नहीं है कि कम्युनिस्ट क्रांतिकारी धारा के विभिन्न ग्रुपों के साथ उनके संबंध कायम नहीं थे, मगर इन रिश्तों का दायरा व्यावहारिक क्रियाकलापों तक सीमित रहा। हिन्दुस्तान के अंदर छोटे-छोटे समूहों, ग्रुपों या इंकलाबी जमातों के जरिये व्यवस्था में आमूलचूल बदलाव लाने के लिए समर्पित हर कार्यकर्त्ता को शंकर गुहा नियोगी जैसी तूफानी शख्सियत की इन सीमाओं, शंकर गुहा नियोगी के जीवन की इस महान त्रासदी को समझना होगा।

और क्या शंकर गुहा नियोगी की मौत कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आंदोलन से जुड़े लोगों को भी आत्मचिंतन के लिए मजबूर नहीं कर रही है? क्या यह इस आंदोलन

गांधीवादी-मार्क्सवादी का भी विशेषण दिया।

वामपंथी या कम्युनिस्ट क्रांतिकारी या नक्सलवादी मजदूर नेता नियोगी को चाहे जिस रूप में परिभाषित करें लेकिन नियोगी अपने बारे में बताने में कोई संकोच नहीं करते थे। **नियोगी का अपने बारे में कहना था कि वे मार्क्सवाद के द्वंद्वात्मक भौतिकवाद के सिद्धांत को पूरी तरह से मानते हैं क्योंकि यह एक विज्ञान है। इसके साथ ही नियोगी मजदूरों के हित को सर्वोपरि मानते थे।**

नियोगी का विभिन्न शक्तियों द्वारा मूल्यांकन करने का क्या आधार रहा है, इस पर ज्यादा बहस की जरूरत नहीं है। इस बात की गहराई में भी शायद जाने की जरूरत नहीं कि विभिन्न मुद्दों पर इनकी अवधारणा कितनी बदली है और नियोगी के रास्ते पर चाहे देर से ही सही, यह चलने की मजबूरी में आ गये हैं। यहाँ जरूरत इस बात की है कि नियोगी ने अपने बीस वर्ष से ज्यादा अवधि के मजदूर आंदोलन में क्या किया और इस पूरे आंदोलन की दिशा क्या रही है।

लेनिन एक तरफ कम्युनिस्ट पार्टी और दूसरी तरफ मजदूर वर्ग के गैर-पार्टी संगठन-ट्रेड यूनियन के बीच के भेदों पर एकाधिक बार जोर देते रहे हैं। ट्रेड यूनियनों में विभिन्न राजनैतिक, राष्ट्रीय और धार्मिक विचारों के मजदूर संगठित होते हैं। कम्युनिस्ट यह मानते हैं कि अपने वर्गीय हितों के आधार पर सभी मजदूरों का संगठित होना आवश्यक है। इसके साथ ही यह भी मानना रहा है कि पूँजीवाद की परिस्थितियों में वैज्ञानिक-तकनीकी क्रांति के परिणाम आर्थिक अस्थिरता, मुद्रास्फीति, मेहनतकशों की सामाजिक उपलब्धियों पर इजारेदारों के प्रहार से सामाजिक तनाव बढ़ता है और वर्ग संघर्ष होता है। मजदूर वर्ग में विद्यमान समाज में आमूल परिवर्तन लाने की आकाँक्षा बढ़ती है। ट्रेड यूनियनों में संगठित मजदूर नये कार्यस्थल बनाने, डाक्टरी सेवा और शिक्षा पद्धति में सुधार लाने की माँग करते हैं। दरअसल इन्हीं बिंदुओं के आसपास नियोगी के आंदोलन का मूल्यांकन करने की जरूरत है।

यह सही है कि नियोगी किसी भी कम्युनिस्ट पार्टी से नहीं जुड़े थे। वह मात्र ट्रेड यूनियन आंदोलन संचालित करते थे। **लेकिन उनके पूरे आंदोलन की प्रक्रिया यह कहीं से कहने की इजाजत नहीं देती कि वे एक कम्युनिस्ट पार्टी के निर्माण की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तैयार नहीं कर रहे थे।** कम्युनिस्ट पार्टियों के बीच यह मान्यता रही है कि ट्रेड यूनियन आंदोलन पार्टी के नेतृत्व में होना चाहिए, जिसका अभाव नियोगी के नेतृत्व वाले आंदोलन में रहा है।

सिद्धांतों की व्याख्या के अपने आयाम होते हैं। यह बात भारतीय वामपंथियों के आंदोलन के संदर्भ में उभरती रही है। यह सही है कि सिद्धांत के अभाव में किसी भी पार्टी या राजनैतिक संगठन का टिके रहना और अपनी मंजिल तक पहुँचना शायद सम्भव नहीं। लेकिन सवाल यह भी है कि कोई सिद्धांतों को किस रूप में व्याख्यायित करता है और उनका व्यावहारिक धरातल के साथ तालमेल बैठाने में कितना कुशल होता है।

इस आधार पर यहाँ की तमाम धाराओं के ट्रेड यूनियन आंदोलन का विश्लेषण और मूल्यांकन करने का हमारा कोई इरादा नहीं है, बल्कि हम इसे छत्तीसगढ़ और उसके आस-पास के इलाके में ही चलकर देखना व समझना चाहते हैं। वह भी बिल्कुल व्यावहारिक धरातल पर। इसका मतलब यह नहीं कि व्यवहारतः सफलता सिद्धांत के सफल होने की कसौटी है। लेकिन

जनता की सूझ-बूझ और उसका चित्रकार

दुनू राय

दल्ली राजहरा में लौह अयस्क खोदा गया। भिलाई की भट्ठियों में गला कर उसे इस्पात बनाया गया। रायपुर के औद्योगिक क्षेत्र में इस्पात से उन मशीनों का निर्माण हुआ जिन्होंने मजदूरों की छँटनी करवायी। जबलपुर में इस्पात से बंदूकें बनीं, जिन बंदूकों से मध्य प्रदेश की पुलिस ने छत्तीसगढ़ के इंकलाबी मजदूरों को चुन-चुन कर मारा। आज के समाज में शायद यही 'मेहनत का फल' है, यही 'विज्ञान का कमाल' है और शायद इसी को पहचान कर नियोगीजी ने छमुमो के साथियों को एक नया समाज बनाने के लिए प्रेरणा दी। एक ऐसा समाज जहाँ मेहनत करने वालों की इज्जत होती हो। एक ऐसा समाज जिसमें विज्ञान का इस्तेमाल जनता के हित में होता हो। लाखों लोगों के सपनों को नियोगीजी ने कितने साफ और सुंदर शब्दों में सबके मन में रेखांकित किया। शायद यही एक महान जन-कलाकार की पहचान है।

जिस तस्वीर को बनाने में नियोगीजी ने मदद की थी, उसका पहला हिस्सा इसी बात पर केंद्रित था कि आज ज्ञान का इस्तेमाल जनता के हित में नहीं हो रहा है। यही सोच सी. एम. एस. एस. की पहली लड़ाई की बुनियाद में भी था। जब ठेकेदारी प्रथा को चुनौती दी गयी और खदान में काम करने वाले हजारों लोगों को उनका उचित वेतन भी मिलने लगा, लेकिन कहीं यह वेतन जुआ और शराब में बहकर ठेकेदारों की जेब में वापिस न चला जाये! इसीलिए सी. एम. एस. एस ने शराब-विरोधी आंदोलन भी चलाया और उस सूझबूझ का अंजाम यह हुआ कि घर-घर में भोजन, शिक्षा, और अच्छी जिंदगी पर पैसा खर्च होने लगा। क्या इस सूझबूझ के पीछे के सोच को 'विज्ञान' या 'जन विज्ञान' के नाम से नहीं पुकारा जा सकता?

लेकिन विज्ञान का इस्तेमाल आम तौर पर लोगों के भले के लिए क्यों नहीं किया जाता? खदानों में मशीनीकरण की चाल से तो साफ समझ में आता है कि इसके पीछे मालिकों का आर्थिक स्वार्थ है — उत्पादन बढ़ेगा, मजदूरों पर खर्चा कम होगा, मुनाफा अधिक मिलेगा। परंतु नियोगीजी की अगुवाई में छमुमो के साथियों की यह भी समझ बनी कि मामला केवल आर्थिक नहीं है, उसके पीछे गहरी सामाजिक और राजनैतिक चाल भी है। इस चाल का मूल मंत्र है कि मेहनतकश जनता को हर तरह से वश में रखा जाये।

इस सामाजिक तंत्र के खिलाफ भी लड़ना है। इस बात का परिचय नियोगीजी ने सन् 1980 में दिया जब उन्होंने बताया कि दल्ली की मजदूर बस्ती का निर्माण प्रबंधकों के इशारे पर हुआ था। यानी कि रहने की जगह की बनावट, घरों के बीच का आपस में सम्बंध, बस्ती का बाहरी दुनिया (बाजार, बस स्टैंड इत्यादि) से रिश्ता — कुछ भी बस्ती में रहने वालों के हाथ में नहीं था। इस मामले को सुधारने के लिए सी. एम. एस. एस. ने चंद समझदार और जानकार व्यक्तियों के लिए अपील जारी की, जो बस्ती के नये रूप का नक्शा बना सकें। ऐसा नक्शा जो रहने वालों की जरूरतों के साथ मेल खाता हो। परंतु सन् 1980 में ऐसे समझदार व्यक्तियों की हमारे

सुंदर दुनिया का सपना देखता एक जन विज्ञानी

अ. प्र. शुक्ल

" जहाँ सब ला पीये के पानी मिलही ,
. . . . . अइसन छत्तीसगढ़ कब बनही ?
जब किसान-मजदूर के छत्तीसगढ़ में राज होही। "
(छमुमो का लोकप्रिय गीत; पूरे गीत के लिए देखें पृ. 69)

शहीद नियोगी की आँखों के सामने यह सुनहरा सपना हमेशा रहता था। इसी सपने की लगन उन्होंने छत्तीसगढ़ की जनता के अंदर भी देखी। हर आंदोलन और कुर्बानी के साथ यह लगन और जोश बढ़ता ही गया। समूची मानव जाति के भविष्य का सपना और सम्यक मानव-संवेदना, तार्किकता की सर्वोच्च अभिव्यक्ति होती है, और किसी भी जन विज्ञान आंदोलन की प्रेरणा का स्रोत होनी चाहिए। यही तार्किकता उस छत्तीसगढ़ आंदोलन का आधार बन गयी जिसके केंद्र में शहीद नियोगी थे। उन्होंने ट्रेड यूनियन लड़ाइयों से नयी चेतना पैदा करने की प्रक्रिया की नींव डाली और देखा कि अर्थवाद के दलदल से बचने के लिए जरूरी है कि ट्रेड यूनियन के आर्थिक आंदोलन को जनता के सामाजिक आंदोलनों के साथ मजबूती से जोड़ा जाये। **एक सम्यक नजरिया तभी बनेगा जब उपरोक्त दोनों आंदोलनों का सही तालमेल, राजनैतिक और वैचारिक (दार्शनिक) आंदोलनों के साथ हो।** छत्तीसगढ़ का आंदोलन हिन्दुस्तान के ट्रेड यूनियन आंदोलन के इतिहास में एक निर्दिष्ट लक्ष्य की प्राप्ति के लिए इतने विविध, पेचीदा और अलग-थलग दिखनेवाले आंदोलनों के अंतःसम्बंधों की एक बेजोड़ मिसाल है।

इसके प्रमाणस्वरूप यहाँ लेखक ने छमुमो के निम्नलिखित आंदोलनों / कार्यक्रमों का विवरण दिया है — शराबबंदी का सामाजिक आंदोलन, अर्द्ध-मशीनीकरण और विकास की अवधारणा, जनशक्ति और आत्मनिर्भरता का स्मारक शहीद अस्पताल, मजदूर-किसान एकता, शिक्षा के कार्यक्रम एवं पर्यावरण कार्यक्रम। हम स्थानाभाव के कारण मूल लेख के इस अंश को नहीं दे रहे हैं, चूँकि यह सारा विवरण इस पुस्तक में अन्यत्र आ चुका है (विशेषकर देखिये पृ. 223-236, 397-402, 414-428, 431-436 और 443-451)। — स.

निस्संदेह, जिस संगठनात्मक परिप्रेक्ष्य के तहत उपर्युक्त कार्यक्रम शुरू किये गये उनके प्रेरणा स्रोत नियोगीजी थे। वे सच्चे मायने में जन विज्ञानी थे। **उन्होंने एक आदर्श समाज का सपना संजोया था, और उसके साकार होने की लम्बी और पेचीदा प्रक्रिया से वे भलीभाँति परिचित थे।** वे जानते थे कि जोखिम भरे सामाजिक प्रयोगों से ही, शायद सैकड़ों सालों के संघर्ष और निर्माण के बाद ही वह सपना साकार होगा। उनमें इन प्रयोगों के प्रति ईमानदारी थी। वे

सही विकास के लिए संघर्ष

मेधा पाटकर

आज एक अविस्मरणीय मजदूर नेता के नाते शंकर गुहा नियोगी का नाम हरेक परिवर्तनवादी, समतावादी संगठन और कार्यकर्ताओं के होठों पर है। दल्ली राजहरा की खदानों से लेकर भिलाई के इस्पात और सम्बंधित औद्योगिक क्षेत्रों में एक लाख से भी अधिक लोगों का एक गहरा संगठन बाँधने का अधिकांश श्रेय नियोगी के नेतृत्व को ही देना होगा। मजदूर संगठनों के इतिहास में केवल करीब दो दशकों का नियोगी का कार्य आज एक विचारधारा और रणनीति का आदर्श माना जाता है । रूढ़ीवादी एवं तथाकथित मार्क्सवादी विचारधारा और राजनीति से आगे बढ़कर नियोगी ने अपनी प्रभावी निर्दलीय राजनीति का असर अपने पीछे छोड़ा है। एक तरफ दलीय राजनीति की बढ़ती हुई मूल्यहीनता तथा व्यवस्था में मूलभूत परिवर्तन लाने में उसकी जानी-मानी अक्षमता और दूसरी ओर निर्दलीय राजनीति में विश्वसनीय विकल्प की कमी देखना, इस तरह की भ्रमावस्था में पड़े कई साथियों के लिए नियोगी का कार्य समांतर और प्रभावशाली निर्दलीय राजनीति की झलक काफी देर तक दिखाता रहा। किंतु दलीय राजनीति न नकारने के कारण, छमुमो को एक राजनैतिक दल का अधिकृत रूप देने का उनका विशेष निर्णय भी भूमिका परिवर्तन या भ्रम का प्रतीक नहीं है, बल्कि इसे उनके मन की प्रक्रिया की दिशा का प्रतीक समझा जाना ही सही होगा। अलबत्ता, एक दल के नाते छमुमो की प्रगति और प्रभाव का उनका सोच क्या था और वह कितना सच निकला ; उनके उद्‌देश्य, सम्भावित गति और प्रभाव की तुलना में वास्तविकता कितनी संगत या विसंगत रही, इसे तो उनके करीब के साथी ही परख सकते हैं, बता सकते हैं।

मजदूरों की ताकत पर दलीय राजनीति के द्वारा और वैसे भी छमुमो ने नियोगी के नेतृत्व में जो हासिल किया, उसकी अन्य मजदूर संगठनों और अपने देश के मजदूर आंदोलन की आम दिशा से कुछ अलग हटकर जो विशेषता है, उसकी मेरी और 'नर्मदा बचाओ आंदोलन' की नजर में जो वास्तविकता रही वह है 'विकास' की उनकी अवधारणा। आर्थिक विषमता और शोषण के खिलाफ मजदूरी के मुद्‌दे पर संगठन और संघर्ष खड़ा करते हुए नियोगी केवल चंद आर्थिक लाभ या शोषकों की बढ़ती सम्पत्ति में हिस्सा दिलाकर भी संतुष्ट क्यों नहीं हुए ? इसका कारण था मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन और उस जीवन के संदर्भ में शोषण या आर्थिक न्याय-अन्याय का उनका सोच । विषमता-अन्याय विरोधी संघर्ष का भी अंतिम लक्ष्य है — मनुष्य का सुख। इसे न भूलकर जो संघर्षशील कार्यकर्त्ता अपना आंदोलन खड़ा करेगा वह जीवन की विविध समस्याओं को और परस्पर-सम्बंधित पहलुओं को देखे बिना नहीं रह सकता। खुले दिलोदिमाग से इस वास्तविकता को जानने के बाद ही नियोगी का काम मजदूर संगठन की शराबबंदी, प्रौढ़ शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और क्षेत्रीय स्वशासन की विकेंद्रित निर्णय-प्रक्रिया की ओर बढ़ता गया। आम आदमी की बुनियादी जरूरतों का आधार, न्यूनतम वेतन और सही, न्यायपूर्ण व सुखमय

से जीते आदिवासी-किसान-मजदूरों को नकार कर उस सम्पदा का चंद बड़े उद्योगपतियों की पूँजी बन जाना, उजड़े-उजाड़े गये क्षेत्र के सत्ताविहीन समाज के आदिवासियों को लाभों में हिस्से की बात तो दूर, जीने के लिए जरूरी न्यूनतम क्षति-पूर्ति के भी लायक न मानना और उसी शोषणात्मक विकास-नीति के भुक्तभोगी होकर वहाँ क्षेत्र के बाहर से पहुँचे गरीब मजदूरों को भी उचित श्रम मूल्य से वंचित रखना आदि बातें सामने लाता है। इसी विश्लेषण के जरिये नियोगी बता रहे थे कि छत्तीसगढ़ के नदी-नालों का पानी, दो जून चावल-दाल देने वाली जमीन और सादगी के जीवन की अधिकांश जरूरतें पूरी करने वाले जंगल का विनाश कैसे हुआ। नियोगी लोगों को – क्षेत्र के मूल निवासियों और वहाँ की अर्थव्यवस्था से रोजी-रोटी के लिए जूझ रहे अन्य सभी श्रमिकों को – सोचने के लिए तैयार कर रहे थे। यह भी समझना जरूरी है कि एक ओर, भिलाई के औद्योगीकरण को लेकर विकास के जाने-माने प्रतीक पर ही प्रश्न-चिह्न लगाने तथा उससे जुड़े सिर्फ लाभ-हानि और पर्यावरण के ही नहीं, वरन् समता-समाजवाद व मानवीय अधिकारों के भी सवाल खड़े करने एवं दूसरी ओर, नर्मदा घाटी के बड़े बाँधों को लेकर सामाजिक-पर्यावरणीय प्रभाव के साथ-साथ जल-जंगल-जमीन के अधिकार व उसकी निरंतर न्यायपूर्ण उपयोगिता के औचित्य के मुद्दे पर संघर्ष करने के सोच और दिशा में परस्पर कितना तालमेल है।

'नर्मदा बचाओ आंदोलन' और छमुमो को एक सूत्र में बाँधने का कार्य नये मध्य प्रदेश शासन ने भी अपनी ओर से किया है – इन दोनों अहिंसक जन आंदोलनों को शासकीय दमन का लक्ष्य बनाकर। नर्मदा घाटी के बाहर देश-विदेश में सशक्त समर्थन खड़ा करने की रणनीति अपनाने के कारण शायद नर्मदा आंदोलन को छमुमो जितना अत्याचार नहीं भुगतना पड़ा। छमुमो की कई गुना अधिक ताकत भी शायद उस पर किये जा रहे दमन का कारण है।

लेकिन दुर्भाग्य से, इतनी जल्दी इस समदुःख और समविचार के आधार पर एकजुटता से लड़ने की बात तय होते-होते हम नियोगी को ही खो बैठे। उनकी विचारधारा और सफल कार्य को सँभालकर, साथ देकर आगे बढ़ाना ही अब हमारा कर्तव्य होना चाहिए ; यही उनके आंदोलन के प्रति हमारे सम्मान और सहयोग की अभिव्यक्ति होगी। इस प्रकार की बात से मन को समझाने-बुझाने के बावजूद यह सवाल उठे बिना नहीं रहता कि यदि हम देश भर के उनके सभी साथी छमुमो के प्रति शासन के रुख पर जरा पहले जाग जाते, उठ खड़े होते तो क्या हम उन्हें बचा नहीं सकते थे ? कमल और नियोगी गुजर गये। अब बचे हैं छमुमो और ऐसे कई जनांदोलन। क्या हम आज भी अपनी जिम्मेदारी और कर्तव्य को समझेंगे ?

(अगस्त 1992 ; मूल लेख का राकेश दीवान द्वारा भाषायी परिमार्जन ।)

यद्यपि आजाद भारत के इतिहास में आर्थिक संकट, औद्योगिक गतिरोध या विदेशी कर्ज कोई नयी बात नहीं है। पर वर्तमान आर्थिक संकट की व्यापकता पहले की तुलना में कहीं ज्यादा है। इसके अतिरिक्त यह संकट और शासक वर्ग की आर्थिक नीतियाँ ऐसे दौर में शक्ल ले रही हैं जब देश में वामपंथी, प्रगतिशील, समाजवादी ताकतों का क्षेत्र सिमट गया है ; दुनिया में कथित समाजवादी व्यवस्थाएँ टूट गयी हैं और उसकी प्रेरक विचारधारा और नीतियों का आंतरिक वैचारिक-सांगठनिक अंतर्द्वंद्व बढ़ता गया है।

आज के भारत के आर्थिक संकट और आर्थिक नीतियों की दो प्रमुख विशेषताएँ हैं : पहला, गहरा आर्थिक संकट और इसके समाधान के लिए विश्व बैंक, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विकसित पूँजीवादी देशों के निर्देश पर देश की अर्थव्यवस्था में बुनियादी बदलाव। दूसरा, शासक वर्ग का गहरा राजनैतिक और वैचारिक संकट जिसकी अभिव्यक्ति है कि देश में राजनैतिक स्तर पर अराजकता, आतंकवाद, भ्रष्टाचार की चरम स्थितियाँ हैं और विचार और नीति के स्तर पर अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों, विकसित पूँजीवादी देशों की सिफारिशों पर अमल से संकटमुक्त होने का दिवालिया सोच है।

नयी आर्थिक नीति में अंतर्निहित विभिन्न विरोधाभासों के कारण सामाजिक अशांति, अत्याचार और सरकारी हिंसा में वृद्धि अनिवार्य है। नियंत्रणमुक्त पूँजीवादी अर्थव्यवस्था से औद्योगिक उत्पादन और बाजार की क्षमता में वृद्धि हो सकती है, पर यह वृद्धि मजदूरों की विशाल संख्या के रोजगार, कामकाज और जीवन स्थितियों में गिरावट नहीं रोक सकती है। अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों के साये में देश की सिकुड़ती हुई विदेशी मुद्रा में थोड़ी वृद्धि हो सकती है, पर इन स्थितियों में वैचारिक और आर्थिक, दोनों प्रकार से ही राष्ट्रीय सम्प्रभुता और आर्थिक आत्मनिर्भरता का क्षरण होता है। साथ ही, देश के विभिन्न लोकतांत्रिक संगठनों — संसद, मंत्रालय, न्यायपालिका, लोकतांत्रिक अधिकार संगठन, ट्रेड यूनियन, आदि का कद छोटा किया जाता है।

नियोगी की हत्या की यही पृष्ठभूमि है। मजदूर नेता के वास्तविक हत्यारे कोई उद्योगपति या उनके भाड़े के पेशेवर अपराधी हो सकते हैं, या यह प्रशासन, पुलिस, ठेकेदारों की साजिश का परिणाम हो सकता है। पर मूलतः देश में नयी आर्थिक नीतियों के आक्रामक उभार और राज्य में मजदूर, किसान, नौजवान, अन्य सामाजिक समूहों के आंदोलनों के प्रति राज्य सरकार की बढ़ती हुई दमनकारी नीतियों का परिणाम है कि नियोगी जैसे मजदूर नेता की हत्या की साजिश का साहस किया जा सका। अन्यथा पिछले 15 सालों से इस क्षेत्र में नियोगी अपने पूरे जुझारूपन के साथ सक्रिय थे और विभिन्न राज्य सरकारों की छमुमो-विरोधी नीतियों के बावजूद शायद कभी मजदूर नेता की जान पर इस प्रकार खतरा नहीं आया था। इस घटना से यह खतरनाक वास्तविकता उभरती है कि हमारे आर्थिक और औद्योगिक विकास की नीतियाँ आज ऐसे मुकाम पर पहुँच गयी हैं कि उसे बुनियादी ट्रेड यूनियन राजनीति और उसके नेतृत्व का अस्तित्व तक अस्वीकार्य है।

(3)

नियोगी की हत्या से यह तथ्य सामने आ रहा है कि समाज की शक्तियों में, राजनीति और अर्थव्यवस्था में उभरी संकीर्ण, देशद्रोही और दमनकारी ताकतें मजबूत हुई हैं और उनका एक अखिल भारतीय स्वरूप विकसित हुआ है। इसलिए इससे कोई मुकाबला, कार्य

अंचल का औद्योगीकरण शुरू हुआ। सन् 1895 में राजनांदगाँव में कपड़ा मिल और सन् 1935 में रायगढ़ में जूट मिल स्थापित की गयी। कई राईस मिलें, दाल मिलें और तेल मिलें भी स्थापित हुई थीं। पर सन् 1960 में सार्वजनिक क्षेत्र में भिलाई स्टील प्लांट की स्थापना औद्योगिक दृष्टि से उल्लेखनीय है। स्टील प्लांट में 50,000 से ज्यादा मजदूर हैं, प्लांट की स्थायी आबादी के लिए भिलाई नगर बसाया गया है, स्थायी और कुशल मजदूरों में केरल, आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल आदि के प्रवासियों की बहुसंख्या है।

भिलाई स्टील प्लांट के आधार पर बड़े पैमाने पर पूरक उद्योगों का विकास हुआ है और अभी भिलाई औद्योगिक क्षेत्र में निजी स्वामित्व में चलने वाली कम-से-कम 120 छोटी-मंझोली औद्योगिक इकाइयाँ हैं। अनुमान है कि छत्तीसगढ़ अंचल में 60,000 छोटी, 50 मंझोली और 18 बड़ी औद्योगिक इकाइयाँ हैं। इस प्रकार एक प्रभावशाली औद्योगिक परिदृश्य है, पर इसमें नये तनावों के कई बिंदु हैं। पहला, भिलाई स्टील प्लांट और इससे उभरे हुए औद्योगिक विकास के कारण क्षेत्र की कामगार आबादी की संरचना बदल रही है। पिछले 30 -40 सालों में भिलाई नगर की जनसंख्या में तेज वृद्धि हुई है। प्रवासी मजदूर और छत्तीसगढ़ी मजदूर के बीच एक स्पष्ट विभाजन हुआ है। स्वाभाविक है कि यह विभाजन मजदूर आंदोलन-विरोधी रवैया अख्तियार करता है।

दूसरा, उद्योग, उत्पादन, पूँजी, रोजगार, बाजार, यानी अर्थव्यवस्था के विकास के सभी स्वीकृत चिह्न यहाँ हैं, पर साथ ही साथ आँखों में किरकिरी की तरह चुभनेवाला छत्तीसगढ़ का सामाजिक-सांस्कृतिक परिदृश्य है जो इतने सालों के औद्योगीकरण के बावजूद अर्थव्यवस्था के ही कथित मापदंडों पर, प्रति व्यक्ति आय, शिक्षा स्तर, ग्रामीण विद्युतीकरण, स्वास्थ्य सुविधा, आदि में राज्य में सबसे पिछड़ा है। ग्रामीण छत्तीसगढ़, विशेषकर बिलासपुर, अब भी रोजगार के अभाव में पलायन या प्रवास दर के मामले में देश का एक सबसे समस्याग्रस्त क्षेत्र है — ऐसा विकास क्षेत्र जो अपनी कथित विकास यात्रा में पिछड़ेपन और असमानता की विस्फोटक हदों तक पहुँच गया है।

तीसरा, औद्योगीकरण से सम्बद्ध विभिन्न सांस्थानिक स्वार्थों ने समझ-बूझकर मजदूरों के विभिन्न स्तर बनाये हैं। सार्वजनिक प्रतिष्ठान के मजदूर हैं जिन्हें सरकारी सेवा शर्तों और केंद्रीय मजदूर संगठनों की सुरक्षा हासिल है। निजी क्षेत्र के बड़े उद्योगों के स्थायी, नियमित मजदूर हैं जिन पर विभिन्न वेतन बोर्ड या मजदूरी अधिनियम लागू हैं। छत्तीसगढ़ी और परदेसिया मजदूर हैं। ठेका और दैनिक मजदूर हैं। वास्तव में पूरक उद्योगों का सारा ढाँचा ठेका और दैनिक मजदूरों पर टिका हुआ है। मजदूर वर्ग के इस विभाजन का ही परिणाम है कि ठेका मजदूर अपने भयंकर शोषण-दमन की दुनिया में अलग-थलग जीते रहे हैं।

प्राकृतिक संसाधनों के व्यापक दोहन, अंधाधुंध औद्योगीकरण और उपभोक्ता संस्कृति के स्वार्थ, पूँजीपति और मजदूर संगठन दोनों को अंधा कर रहे हैं। भिलाई में सिम्पलेक्स ग्रुप के उद्योगों के मालिक अरविन्द शाह दो टूक कहते हैं, "केवल 10 स्थायी मजदूर 'मेन्टेनेन्स' के हैं । बाकी 2,000 ठेका मजदूर हैं। यहाँ का काम घटते-बढ़ते आर्डरों पर निर्भर करता है। ठेका मजदूरों का स्थायित्व और उनके कामकाज की स्थितियों में बेहतरी सम्भव नहीं है क्योंकि यहाँ के उद्योगों को राज्य के अन्य छोटे, घरेलू उद्योगों और राज्य के बाहर के उद्योगों के साथ

नियोगी के ट्रेड यूनियन आंदोलन का समग्र मूल्यांकन एक जटिल, पर बेहद जरूरी जिम्मेदारी है। नियोगी के उभार और इसकी अखिल भारतीय गूंज के आधार पर यह कहा जा सकता है कि देश के मजदूर और सामाजिक आंदोलनों में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। देश का पारम्परिक ट्रेड यूनियन आंदोलन नीति के संकट से गुजर रहा है जो मजदूरों के जीने या काम करने की स्थितियाँ बेहतर बनाने, यहाँ तक कि संगठित क्षेत्र में इसकी गिरावट रोकने में भी असफल ही रहा है। ट्रेड यूनियनों में एक सांगठनिक संकट भी है जिससे उन्हें स्वायत्त, स्वतंत्र व्यक्तियों या समूहों को जोड़ने और अपना विस्तार करने में सफलता नहीं मिल रही है। ट्रेड यूनियनों में रणनीति का संकट है जो बढ़ते हुए श्रम विवादों के समाधान के लिए बेहद कानूनी, संसदीय, चुनावी ढाँचे पर लगभग पूरी तरह आश्रित है। आंदोलन के पुराने, औपचारिक बन गये तरीके मजदूर वर्ग को कारगर हस्तक्षेप और वर्गीय उभार के लिए तैयार नहीं कर पा रहे हैं। ट्रेड यूनियनों में समाज के अन्य शोषित वर्गों से जुड़ाव के प्रति एक बढ़ता हुआ अनिच्छा-भाव है। कई मामलों में ट्रेड यूनियनों का पारम्परिक नेतृत्व अब मजदूरों की नयी श्रेणी को स्वीकार्य नहीं है।

इस पृष्ठभूमि में संक्षेप में, नियोगी की ट्रेड यूनियन राजनीति पारम्परिक ट्रेड यूनियनों के संकट से दो-चार होने का एक लम्बा रास्ता है। दूसरा, यह ट्रेड यूनियन राजनीति में एक क्षेत्रीय, स्वायत्त वैचारिक और सांगठनिक अस्तित्व के उभार का सूचक है। तीसरा, यहाँ ट्रेड यूनियन आंदोलन में एक नये प्रकार के नेतृत्व का उभार और विस्तार देखा जा सकता है। चौथा, नियोगी के कार्यक्षेत्र में ट्रेड यूनियन संगठन की प्रकृति भी भिन्न है। पाँचवा, ट्रेड यूनियन आंदोलन अपने प्रभाव क्षेत्र के तहत या इसके विस्तार के लिए समाज के अन्य कामगार वर्गों के साथ एकजुटता का कार्यक्रम बनाने की कोशिश करता है। इसी के साथ-साथ ट्रेड यूनियन कार्यक्रमों का दायरा विस्तृत और लचीला है। छठा, सर्वाधिक महत्वपूर्ण है कि नियोगी का मजदूर आंदोलन अपनी टिकाऊ, मजबूत उपस्थिति और निरंतर हस्तक्षेप के बल पर बार-बार यह बताता है कि देश में मजदूर आंदोलन की एक नयी रणनीति की जरूरत है। ❑

(जुलाई 1992)

क्रांति के बाद का आभास कराता आंदोलन

बिनायक सेन

शंकर गुहा नियोगी की हत्या एक राजनैतिक कार्रवाई थी, जिसे शीर्षस्थ राजनेताओं-अफसरों-उद्योगपतियों के गठजोड़ ने योजनाबद्ध तरीके से अंजाम दिया था। इस मायने में यह राज्यतंत्र की हताशा का प्रमाण है जो छत्तीसगढ़ के मजदूरों की बढ़ती हुई चेतना

प्लांट और पुलिस दमन की निरंतर मौजूदगी ने यह सुनिश्चित कर दिया था कि राज्यतंत्र को न्यायोचित सिद्ध करने वाली विचारधारा में यह प्रयोग कभी भी समाहित नहीं हो पायेगा। यह काफी रोचक बात है कि राजनांदगाँव में पिछले सात सालों से मुक्ति मोर्चा की ट्रेड यूनियन मौजूद होने के बावजूद वहाँ ऐसे सामाजिक प्रयोग नहीं हो पाये हैं।[1] भिलाई का आंदोलन सिर्फ एक साल पुराना है, लेकिन मजदूर बस्तियों में जिस प्रकार का सांस्कृतिक उभार आया है वह अभूतपूर्व है।

हाल के वर्षों में नियोगी के काम और विचारों को अच्छी-खासी लोकप्रियता मिली है, हालाँकि खुद उन्हें अपनी मौत के बाद होने वाले स्तुतिगान पर उदासी-मिश्रित अचम्भा हुआ होता। लेकिन आज जब स्थापित क्रांतिकारी रणनीतियाँ सब तरफ धराशायी हो रही हैं, नियोगी का काम सम्भवतः आर्थिक व सांस्कृतिक रूप से उत्पीड़ित लोगों को अपने आक्रोश व हताशा पर काबू पाने और अपनी वास्तविक ताकत व सृजनात्मक क्षमता की अनुभूति की ओर बढ़ने का रास्ता दिखाता है। नियोगी के विचार में ऐसी अनुभूति राज्य की वैचारिक ताकत को छिन्न-भिन्न करने के लिए जरूरी है और यह 'राज्य' के ध्वस्त होने की अनिवार्य शर्त है।

अगर किसी सबूत की जरूरत रह गयी थी तो नियोगी की मौत इस बात का प्रमाण है कि हमारे दुश्मन भी उनके तौर-तरीकों की महत्ता को स्वीकारने लगे थे।

❑

(मूल अंग्रेजी से ध्रुव नारायण द्वारा अनूदित; मेडिको फ्रेन्ड सर्किल बुलेटिन, दिसम्बर 1991, से साभार।)

पीछे छूटते सवाल, उभरती नयी परिभाषाएँ

अनिल नौरिया

शंकर गुहा नियोगी और उनके नेतृत्व में चलने वाला छत्तीसगढ़ आंदोलन उनके लिए भी महत्वपूर्ण है जो उनसे परिचित नहीं थे और उस आंदोलन से प्रत्यक्षतः जुड़े हुए नहीं थे। नियोगी ने एक मायने में भारत में विकास के मौजूदा चरण के लिए प्रासंगिक इस सवाल को हल कर लिया था कि औद्योगिक मजदूरों या किसानों और खेतिहर मजदूरों के राजनैतिक संगठन कितने प्रभावकारी हो सकते हैं या वे ऐतिहासिक रूप से श्रेष्ठ हैं या नहीं। उनकी गतिविधियाँ ऐसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों के संगठनों पर आधारित थीं, जहाँ किसान, खेतिहर मजदूर और औद्योगिक मजदूर अपने-अपने

[1] दल्ली राजहरा और राजनांदगाँव मजदूर आंदोलनों के इस अंतर के कारणों को समझना विकल्प की राजनीति को आगे बढ़ाने के लिए एक बेहद जरूरी वैज्ञानिक काम होगा। — स.

मुद्दों को उठा सके। साफ शब्दों में इसका मतलब यह है कि अगर वे ऐसे मामलों में हस्तक्षेप करेंगे तो उनके सदस्य भाग जायेंगे।

छत्तीसगढ़ के आंदोलनों ने इस मायने में काफी महत्वपूर्ण उपलब्धि हासिल की है। उन्होंने दिखलाया है कि ट्रेड यूनियन आंदोलन जब समाज के संघर्षों व समस्याओं से अपने-आपको जोड़ लेता है, तो लोगों में भी उसके प्रति सहानुभूति पैदा होने लगती है। सहानुभूति तो परम्परागत ट्रेड यूनियन गतिविधियों के प्रति भी मौजूद होती है। **इसलिए ट्रेड यूनियन गतिविधियों और अन्य वृहत्तर सरोकारों में कोई अंतर्विरोध नहीं है।** दोनों एक दूसरे की मदद करते हैं।

छत्तीसगढ़ के आंदोलनों ने ‘आधा-अधूरा मजदूर वर्ग’ जैसी धारणाओं की प्रासंगिकता को संदेह के घेरे में खड़ा किया है, साथ ही खेतिहरों के सिलसिले में इन धारणाओं की सार्थकता को भी। पूरा का पूरा सवाल यूनियन व उसके सदस्यों को प्राप्त होने वाली दिशा पर निर्भर है। अगर इस दिशा-निर्देश के परिणामस्वरूप कुछ सदस्य यूनियन छोड़ भी देते हैं, तो भी इससे यूनियन की ताकत, उसके आंतरिक जुड़ाव और उसके मकसद को ही मजबूती मिलेगी। इसके अलावा ट्रेड यूनियनवाद की एक रचनात्मक और शैक्षिक भूमिका है। इस मामले में ट्रेड यूनियनें चुनावी अखाड़े से एक कदम दूर होने के कारण, यानी चुनावी राजनीति की निर्ममता और चुनावी तिकड़मों हेतु किसी भी हद तक जाने के बंधन से मुक्त होने की वजह से, राजनैतिक पार्टियों की बनिस्पत बेहतर स्थिति में हैं। अगर उन्हें कल्पनाशील मार्गदर्शन प्राप्त हो तो वे देश के राजनैतिक माहौल में जान डाल सकती हैं।

छत्तीसगढ़ आंदोलन, मौजूदा संवैधानिक-कानूनी-न्यायिक व्यवस्था के ऊपर एक जीवंत टिप्पणी भी है। क्या यह व्यवस्था महज अक्षम ही है या यह उत्पीड़न का औजार बनती जा रही है ? जिलाबदर जैसे पुराने व दकियानूस कानून का इस्तेमाल उस व्यक्ति को उन्हीं लोगों के बीच से निर्वासित करने के लिए किया गया, जिनकी आकांक्षाओं का वह प्रतिनिधित्व करता था। पहले भी उसके खिलाफ निवारक नजरबंदी कानूनों का इस्तेमाल किया गया था। जो भी लोगों को अपने संवैधानिक व अन्य अधिकारों की, मसलन न्यूनतम मजदूरी के अधिकार की, रक्षा के लिए संगठित करता है, वह व्यक्ति तथाकथित ‘गुंडा’ बन जाता है और उसके खिलाफ राज्य की पूरी दमनकारी शक्ति का इस्तेमाल किया जाता है। न्यायपालिका की उदासीनता को देखते हुए स्वाभाविकतः ऐसा लगता है कि उसे भी सर्वोच्च स्तरों तक विभिन्न तरीकों से भ्रष्ट बना दिया गया है। राज्य मशीनरी की विभिन्न निहित स्वार्थों के साथ साँठ-गाँठ, संवैधानिक व जनतांत्रिक अधिकारों के प्रति उसकी प्रतिबद्धता के बजाय कहीं ज्यादा मजबूत है।

छत्तीसगढ़ का अनुभव कोई अकेला अनुभव नहीं था। वास्तव में इसकी तुलना खुद देश की राजधानी में न्यायपालिका समेत पूरी राज्य मशीनरी की भूमिका से की जा सकती है। सन् 1984 में हुए सिख-विरोधी दंगों के मामले में दिल्ली हाई कोर्ट ने जो रवैया अपनाया वह संविधान के बाहर के उसके सरोकारों को उजागर करता है। सन् 1988 में डी. टी. सी. (दिल्ली परिवहन निगम) की हड़ताल के वक्त हाई कोर्ट ने खुद मजदूरों को काम पर आने से रोकने वाले आदेश दिये, जिसे बाद में डी. टी. सी. ने हजारों मजदूरों को नौकरी से निकाल बाहर करने में इस्तेमाल किया। अंततोगत्वा ऐसी कार्रवाइयाँ खुद इन संस्थाओं को और उनकी विश्वसनीयता

फ़ोटो : अमित प्रकाश (इलस्ट्रेटेड वीकली ऑफ़ इंडिया के सौजन्य से)

अंतिम साक्षात्कार देते हुए निर्मोगीजी दिल्ली में
(पृ. 338-346); सितम्बर 1991

इसके साथ राष्ट्रीयता मुक्ति आंदोलन में मजदूर वर्ग के नेतृत्व का सवाल भी जुड़ा हुआ था। यह सब नियोगी जानते थे।

अंतर्राष्ट्रीय मजदूर आंदोलन के नेतृत्व ने सन् 1850 में असंगठित मजदूरों में संघर्षशीलता की प्रवृत्ति इंग्लैंड में देखी। उसके बाद बहुत समय बीत गया। पूँजीवाद, इजारेदारी में पहुँच कर साम्राज्यवाद में रूपांतरित हो गया। पिछड़े देशों में विकृत व अपंग पूँजीवाद पैदा हुआ जो मजदूर चेतना के विकास में बाधक बना। फलस्वरूप मजदूरों में पूँजीवादी उपभोक्तावाद की जड़ें गहरी हुईं। विदेशों से आधुनिक तकनीक का आयात भी हमारे जैसे देशों में मजदूरों के एक बड़े हिस्से में अवसरवादी प्रवृत्ति पनपने का एक कारण है। परदेश के ज्यादातर मजदूर आज भी असंगठित क्षेत्र के हैं। इसीलिए नियोगी ने असंगठित खदान श्रमिकों को संगठित करने को प्राथमिकता दी। **लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि संगठित क्षेत्र में वर्ग संघर्ष रुका रहेगा, इसलिए उन्होंने संगठित क्षेत्र के मजदूरों से भी सम्पर्क बनाये रखा।**

नयी धारा के ट्रेड यूनियन आंदोलन के लिए संघर्ष

'भारत के ट्रेड यूनियन आंदोलन की समस्याएँ' नामक लेख (पृ. 194-208) में क्रांतिकारी ट्रेड यूनियनवाद के बारे में नियोगी के विचार स्पष्ट हुए हैं। नियोगी ने पहला नारा दिया, '**ट्रेड यूनियन मजदूरों की जिंदगी के सिर्फ आठ घंटों के लिए नहीं है, बल्कि वह पूरे चौबीस घंटों के लिए है।**' अर्थवाद को जड़ से उखाड़ने के लिए उन्होंने श्रम-विमुखता के खिलाफ और मजदूरों की सामाजिक जिम्मेदारी के पक्ष में मजदूरों को प्रेरित किया। उनके अनुसार सही ट्रेड यूनियनों को वर्गमुखी व समाजमुखी होना चाहिए। नियोगी ने मजदूरों को किसानों के बारे में सोचना सिखाया क्योंकि मजदूर अगर अपने मित्र किसानों को संगठित न करें, उन्हें नेतृत्व न दें तो वर्ग संघर्ष के प्रति मजदूर वर्ग की जिम्मेदारी पूरी नहीं होती है। उन्होंने मजदूरों में बार-बार इस धारणा का प्रसार किया कि **सामाजिक परिवर्तन के संघर्ष में मजदूर वर्ग को ही नेतृत्व देना होगा।**

सिंचाई, बाँध, जमीन और काम की माँग जैसे ठोस कार्यक्रम लेकर गाँवों में किसानों को संगठित करने के लिए मजदूर यूनियन सामने आयी। मजदूरों ने अपनी संगठन शक्ति के बल पर सरकार, ठेकेदार, नौकरशाहों और सामंतों के विरुद्ध किसानों को संगठित किया। सूखे के कारण किसान गाँव छोड़कर पलायन करते रहे हैं। इन्हीं किसानों के लिए सिंचाई के पानी तथा सरकारी सहायता के मुद्दे पर आंदोलन शुरू हुआ। ऐसे आंदोलनों में भारी तादाद में किसान शामिल हुए।

मजदूरों की आर्थिक तरक्की उनको समाज-विमुख व उपभोक्तावादी न बना सके, इसलिए नियोगी ने उन्हें उत्पादन कार्य व रचनात्मक कार्यों की ओर प्रेरित किया।

देशप्रेम और लोकतांत्रिक मूल्यों का विकास

नियोगी ने अनुभव किया कि अगर मजदूरों में समाजवाद का बीज बोना है तो सबसे पहले उनमें देशप्रेम और लोकतंत्र के वास्तविक मूल्यों की जमीन तैयार करनी पड़ेगी। वर्ग संघर्ष की खाद डालकर उस जमीन को उपजाऊ बनाना होगा। जमीन अगर सही ढंग से तैयार नहीं हुई या खाद के इस्तेमाल में कहीं कोई गड़बड़ी हुई तो समाजवाद के वैज्ञानिक चिंतन के बदले

विभाजन करके संघर्ष व निर्माण के कार्यों में तेजी लायी गयी। यही कारण है कि आज खुद मजदूर, संगठन के सभी कार्य करने में सक्षम हैं।

आजादी व जनवाद के संघर्ष के साथ छत्तीसगढ़ी राष्ट्रीयता का मुक्ति संघर्ष घनिष्ठ रूप से जुड़ा है। **राष्ट्रीयता की मुक्ति व स्वशासन के अधिकार के बिना जनवादी समाज का निर्माण सम्भव नहीं है।** इसलिए नियोगी ने जनवादी समाज बनाने के साथ-साथ राष्ट्रीयता की मुक्ति के सवाल को प्रस्तुत किया। इस राजनैतिक अवधारणा को मूर्त रूप देने के लिए सी. एम. एस. एस. के नेतृत्व में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चे का गठन हुआ।

विकल्प की जरूरत

नियोगी सिर्फ मौजूदा ढाँचे का विनाश करने में ही विश्वास नहीं करते थे बल्कि उनका मानना था कि दुनिया की समस्त सृष्टि, विकास व विनाश के मौलिक नियम द्वारा संचालित होती है। पुराने के विनाश के साथ-साथ नये का जन्म होना एक स्वाभाविक नियम है। जागरूक सामाजिक कार्यकर्त्ता अवश्य ही समाज परिवर्तन के इस नियम का अनुसरण करते हैं। **सिर्फ नकारात्मक आलोचना से काम नहीं चलेगा, सकारात्मक विकल्प प्रस्तुत करना होगा। जनता ही अपनी सृजन शक्ति से उस विकल्प को सामने लायेगी। आने वाले समाज में हम क्या चाहते हैं, उसकी तस्वीर हमें जगह-जगह बनानी होगी। सभी लोग नये जीवन मूल्यों से प्रेरित होकर नये समाज निर्माण के संघर्ष में दृढ़ता के साथ आगे बढ़ेंगे।** नियोगी के ' संघर्ष व निर्माण ' की राजनीति के ही सारे विषयों में जन विकल्प की धारणाएँ हैं। अपने जीवन काल में नियोगी ने औद्योगिक नीति, कृषि नीति आदि कई विषयों पर वैकल्पिक धारणाएँ बनायीं, जिनसे बहुत कुछ सीखा जा सका है। इस वैकल्पिक चिंतन को राष्ट्रीय स्तर पर ले जाने की कोशिश भी नियोगी ने की।

भाईचारे की भावना

नियोगी हर उस सकारात्मक आंदोलन को समर्थन देते थे, जो जायज माँगों को लेकर किया जा रहा हो। वे आंदोलनकारी शक्तियों के साथ सम्पर्क बनाये रखते थे। विभिन्न आंदोलनों के सकारात्मक पक्षों का भी छत्तीसगढ़ में प्रचार हुआ। इन कार्यों से उनकी भाईचारे की भावना प्रकट होती है और प्रकट होता है उनका अखिल भारतीय चिंतन। **उनकी धारणा थी कि इन सभी प्रयासों से जन आंदोलनों का एक अखिल भारतीय मंच बनेगा, बहुत से अनुभवों एवं प्रयोगों के सार-संकलन से समाज परिवर्तन का आंदोलन विकसित होगा।** यहाँ उल्लेखनीय है कि विभिन्न आंदोलनों के अनुभवों को वे ध्यान से सुनते थे। वे कोशिश करते थे कि हर आंदोलन के सकारात्मक पहलू को अपनाया जाये। इसी प्रक्रिया के माध्यम से उनके अखिल भारतीय सोच का विकास होता गया। मौजूदा जटिल परिस्थितियों में सारे भारत में संगठन और संघर्ष का विस्तार किस तरह किया जाये, इस विषय में वे हमेशा प्रयासरत रहे। वे हर आंदोलन को जनहित की तराजू से तोलते थे।

नियोगी के वैचारिक व राजनैतिक चिंतन की विशेषताएँ

नियोगी अपने सारे वैचारिक व राजनैतिक चिंतन को लिखकर न जा सके। उनके कुछ

3. उनके वैचारिक व राजनैतिक चिंतन की तीसरी खूबी यह थी कि वे हमेशा हर समस्या के समाधान के लिए विकल्प की खोज के पक्षधर थे। वैज्ञानिक दृष्टि से खोजे गये विकल्प और उससे जुड़े हुए चिंतन को वे सदा सहज रूप में आम लोगों तक पहुँचाने की कोशिश भी करते रहते थे।

4. उनकी चौथी खूबी तथ्यों से सत्य तक पहुँचने के लिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने की थी। हर प्रक्रिया का वे बारीकी से अवलोकन करते थे। किसी भी प्रक्रिया का उसके तमाम संदर्भों में गहराई से अध्ययन के बाद ही मूल सिद्धांतों तक पहुँचना और फिर उन्हीं के अनुरूप प्रयोग की रूपरेखा तय करना उनकी पद्धति थी। ऐसे प्रयोगों से प्राप्त परिणामों के सहारे मूल सिद्धांतों को और पुख्ता करना एवं उन्हें यथार्थ के निकट लाने की कोशिश करना उनकी वैज्ञानिकता का अंग था।

5. उनकी पाँचवी खूबी यह थी कि उन्होंने किसी भी चिंतन के लिए जनता पर सबसे ज्यादा भरोसा किया था। आम लोगों की व्यापक समस्याओं को बारीकी से जानने के बाद वे उन्हीं से बात करके समस्या को समझने का प्रयास करते थे। फिर अपनी समझ को सिद्धांत के रूप में लोगों तक ले जाते थे। अपने चिंतन के विकास के लिए वे लगातार यही प्रक्रिया अपनाते रहे।

6. एक मार्क्सवादी समाजविज्ञानी होने के नाते, वर्ग संघर्ष, हिंसा, हथियारबंद क्रांति, राज्य-सत्ता पर नियंत्रण, मजदूरों का राज आदि विषयों में उनकी भावनाएँ कंगला नहीं थीं। समाज परिवर्तन के लिए सक्रिय जन आंदोलन के विकास और शोषित जनता की स्थिति के आधार पर ही वे इन विषयों पर विचार करते थे। इन मामलों में उनका चिंतन अन्य विचारकों के चिंतन से सतही समानता के बावजूद मौलिक था। उनके चिंतन की ये विशेषताएँ छत्तीसगढ़ आंदोलन में स्पष्ट झलकती हैं। यहीं नियोगी एक स्वतंत्र धारा का प्रतीक बन गये हैं, यही उनकी सफलता है। मार्क्सवाद उनके लिए कोई रूढ़िवादी सिद्धांत नहीं था, बल्कि एक दृष्टिकोण था। किसी भी निर्णय तक पहुँचने की प्रक्रिया में वे मार्क्सवाद का उपयोग करते थे। वे सभी प्रश्नों का समाधान मार्क्सवादी दृष्टिकोण व पद्धति के जरिये खोजते थे। एक-पक्षीय, यंत्रवत चिंतन व भाववादी विचारों के वे सख्त खिलाफ थे।

आंदोलन के तौर-तरीके

नियोगी मानते थे कि एक देश या क्षेत्र के लोग आंदोलन के जिस रूप से परिचित हैं उसको एकदम से न हटाकर शुरूआत वहीं से करनी चाहिए। आंदोलन की सीमाएँ दूर करके नये तरह के आंदोलन चलाने का रास्ता ही सही रास्ता है। जन आंदोलन इसी तरीके से विकसित होता है। विकास की धारा में जब आंदोलन के पुराने स्वरूप को जनता अस्वीकार कर दे तब उसे बदल देना ही सही होता है।

हमारे देश में सविनय अवज्ञा, सत्याग्रह, हड़ताल व अनशन, जेल भरो आंदोलन, बहिष्कार, असहयोग आंदोलन, पद यात्रा आदि आंदोलनों के विभिन्न रूप बड़ी संख्या में जनता को प्रभावित कर पाये हैं। आंदोलन के इन रूपों से जनता परिचित है, जनता इनमें उत्साह से भाग लेती है। भारतीय परम्परा के आंदोलनों के इन रूपों का नियोगी ने भरपूर उपयोग किया।

नियोगी
यादों में
शहीद अमर है
वो ज़िन्दा हैं
जनता के बीच
जनता जनम देती है
शहीदों को
ओ हत्यारो।
तुम जान ले सकते हो
लेकिन
क्या तुम मार सकते हो
विचारों

मेरा बाच्चू , मेहनतकशों की आँखों का तारा

हेरम्ब कुमार गुहा नियोगी

मेरे पाँच बेटे व दो बेटियों में बाच्चू सबसे बड़ा था। उसके मामा अविभाजित बंगाल के बालूवाड़ी गाँव (जिला दिनाजपुर) में रहते थे। सन् 1942 में 18 सितम्बर (शुक्रवार) की आधी रात को वहीं के सदर अस्पताल में बाच्चू का जन्म हुआ।[1]

उन दिनों मैं आसाम के जमुनामुख (जिला नौगाँव) में रहता था, मेरा जन्म भी यहीं हुआ था। यहीं बसे हुए हमें बरसों बीत गये थे। वर्तमान बंगलादेश के मैमनसिंह जिले में हमारे पूर्वजों का मूल निवास है। मैं यहाँ ठेकेदारी का काम करता था। बाच्चू के जन्म के बाद उसे बर्नपुर (प. बंगाल) लाया गया। वहीं उसका अन्नप्राशन संस्कार हुआ। इसके बाद मैं उसे जमुनामुख ले आया और वहीं प्राथमिक शाला में उसकी पढ़ाई-लिखाई शुरू हुई। हम जहाँ रहते थे वहाँ से लगभग बीस मील की दूरी पर हाईस्कूल था। होस्टल में रखकर बच्चों को पढ़ाना मुझे पसंद नहीं था। इसलिए तय किया गया कि बाच्चू को आगे की पढ़ाई के लिए किसी निकट के रिश्तेदार के पास भेजा जाये।

उस समय उसके एक मामा सिंद्री (बिहार) में रहते थे। बाच्चू को उन्हीं के पास पढ़ने के लिए भेज दिया गया। किंतु उसी समय मामा का तबादला इस्पात नगरी बोकारो में हो गया, जहाँ बंगला माध्यम के स्कूल नहीं थे। इस स्थिति को देखते हुए मेरे बड़े भाई ने मुझसे कहा कि बाच्चू को मेरे पास भेज दो। वे साकतोरिया (जिला बर्दवान, प. बंगाल) में रहते थे। मैं बाच्चू को उनके पास छोड़ आया। इस तरह मैट्रिक की पढ़ाई बाच्चू ने वहीं से पूरी की। वहाँ पढ़ते हुए बाच्चू छुट्टियों में मेरे पास आसाम आया करता था। उस दौरान मैंने देखा कि उसमें प्रकृति के प्रति गहरा आकर्षण है, जंगल व झरनों से उसे बेहद प्यार है।

पहले ही बता चुका हूँ कि मैं एक ठेकेदार था अतः मेरी आर्थिक स्थिति जरा ठीक थी। लेकिन आसाम में हुए जातीय दंगों में मुझे अपना सब कुछ खोना पड़ा, सब जला दिया गया। सात-आठ लाख की सम्पत्ति नष्ट हो जाने से मैं भिखारी बन गया।

यहाँ यह बताना आवश्यक है कि मैं छात्र जीवन से ही कांग्रेस पार्टी के साथ जुड़ा हुआ हूँ। सुभाष चंद्र बोस मेरे जीवन के आदर्श थे, गांधीजी को हम लोग पसंद नहीं करते थे। कांग्रेस पार्टी को मैं कभी भी छोड़ नहीं पाया। आसाम में राज्यस्तरीय संगठनकर्ता के रूप में मैं जाना जाता था। जब जातीय दंगों में मेरा सब कुछ लुट चुका था, उस समय कांग्रेस के अध्यक्ष श्री संजीव रेड्डी अक्सर मेरे यहाँ आया करते थे। डॉ. बिधान चंद्र राय के साथ भी मेरा परिचय था। आसाम के तत्कालीन मंत्री व नेतागण मुझे जानते थे। इन सभी को मैंने अपनी आर्थिक स्थिति बतायी लेकिन कोई विशेष सुविधा न मिल सकी। थोड़े से रुपये मिले जिससे मैंने काम शुरू किया। सन् 1958 के बाद जलपाईगुड़ी में मैंने एक छोटा सा मकान बनवाया। वहीं मेरे

---

[1] श्री हेरम्ब कुमार गुहा नियोगी से हाल में प्राप्त एक पत्र के अनुसार 'बाच्चू' का जन्म बंगला सन् 1349 प्रथम अश्विन, यानी 18 सितम्बर 1942 को हुआ था। —स.

चारु मजुमदार के साथ भी बाच्चू का राजनैतिक सम्बंध बना था।

बाद में सुना कि नेताओं के साथ मतभेद होने पर बाच्चू को उन्होंने एम. एल. पार्टी से निकाल दिया है। इसी समय उसके जेल जाने की खबर मिली। नौकरी तो इसके पहले ही चली गयी थी।

बाच्चू जब दानीटोला में था (सन् 1970 के बाद) तब एक बार मेरे पास आया था। यहाँ आकर बकरी का धंधा करने के लिए उसने मुझसे दो हजार रुपये माँगे। उन दिनों मेरी आर्थिक स्थिति खराब चल रही थी। बड़ी बेटी की शादी के लिए किसी तरह से कुछ रुपयों का जुगाड़ किया था। वह पैसे देने के लिए मैं राजी नहीं हुआ क्योंकि परिवार में आमदनी का अन्य कोई जरिया न था। मेरे धंधे की सामान्य आय से ही परिवार चलता था। बाच्चू ने परिवार का कोई दायित्व लिया ही नहीं था। दूसरा बेटा भी नक्सलियों के साथ घर छोड़ कर मणिपुर चला गया था। ऐसी परिस्थिति में मैं रुपये कैसे देता ? लेकिन बाच्चू टस-से-मस नहीं हुआ। अपनी यह माँग पूरी करवाने के लिए उसने अचानक भूख हड़ताल शुरू कर दी। बेटे के सामने मुझे झुकना पड़ा और दो हजार रुपये देने को मजबूर हो गया। उसके इस आचरण से मैंने उस दिन एक प्रकार का आंतरिक सुख महसूस किया था।

इसके बाद जब बाच्चू का यश बहुत फैला और वह बहुत बड़ा नेता बन गया, तब उसका काम देखने के लिए मैं कई बार राजहरा गया हूँ। वहाँ जाकर जितनी भी बार उसे काम में जुटे हुए देखा उतनी ही बार मैं आश्चर्यचकित रह गया। एक अपरिचित राजनैतिक दुनिया के साथ मेरा परिचय हुआ, जहाँ नेतृत्व में गलत आचरण नहीं है। उन सबका आचरण, रहन-सहन, कपड़े-लत्ते बहुत साधारण हैं। हजारों मेहनतकश लोग मिलकर अपनी तकदीर बदलने के लिए निरंतर सक्रिय भागीदारी कर रहे हैं। उन लोगों के यूनियन आफिस, अस्पताल, गैरेज, स्कूल ये सब कुछ देखकर मैं मुग्ध हो गया। मैं बस देखता ही रह गया कि इन सबका नायक मेरा बाच्चू है, वह तो वहाँ के सभी मेहनतकशों की आँखों का तारा ' नियोगी भैया ' है।

यह सब कुछ देख-सुनकर मैं आश्वस्त हो गया कि मेरा बेटा तो इंसानों की भलाई के लिए ही जीवन व्यतीत कर रहा है। उस समय मैं अपने परिवार की गरीबी व दुःख-दर्द को भूल ही गया था। मुझे यह सोचकर गर्व महसूस हुआ कि मेरा बेटा वर्तमान अवसरवादी राजनीति के विपरीत एक स्वस्थ व जनवादी राजनीति का प्रतिनिधित्व कर रहा है। मैंने बाच्चू से कहा था कि उसकी स्वर्गीय माँ भी उसे आशीर्वाद दे रही होगी।

आज बहुत ही तकलीफ के साथ मैं देख रहा हूँ कि हमारे देश में जन-विरोधी पूँजीपति लोग संवैधानिक रक्षाकवच की आड़ में सुरक्षित रहते हैं, किंतु बाच्चू जैसे लोग जो कि मानव जाति के लिए कल्याणकारी काम करते हैं, उनकी रक्षा हमारा भारतीय संविधान नहीं कर पाता है। मेरा बेटा उसी व्यवस्था की वेदी पर बलि चढ़ गया जिसे वह बदलना चाहता था।

उसकी पत्नी व बच्चों की मुझे चिंता है। फिर भी पूरा विश्वास है कि बाच्चू जो चिराग जलाकर गया है, उसकी रोशनी में उसके सभी साथी आगे बढ़ेंगे एवं सबसे पहली पंक्ति में बाच्चू की पत्नी व बच्चे रहेंगे।

(मूल बंगला से अनूदित एवं उसका संक्षिप्त स्वरूप ; अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित 'संघर्ष ओ' निर्माण से साभार।)

छुट्टी के दिन पिताजी के कड़े अनुशासन के कारण हमारा खेलना बंद रहता था। इसलिए शाम तक उनका मन उदास हो जाता था। तब वे अपनी भावनाएँ अचानक कविता के रूप में हमारे सामने व्यक्त करते थे –

" सूरज हुआ अस्त,
मन हुआ बेचैन।
मिल जाए 'गर खेलने का मौका,
तो हो जाऊँ मैं मस्त। "

उनके साथ बिताये उन क्षणों की यादें मैं संजोये रखना चाहती हूँ।

❑

(मूल बंगला से अनूदित ; अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित ' संघर्ष औ' निर्माण ' से साभार।)

हमारे गुहा साब औरों से अलग थे

मोहन सिंह

मैं मुक्तिदूत विद्यापीठ संस्था (रायपुर) म ड्राइवर हूँ। सन् 1961 के लगभग नियोगीजी से मेरी पहली मुलाकात भिलाई में हुई थी। तब मेरी उम्र 19-20 वर्ष की रही होगी। मैं अपने कुछ दोस्तों के साथ काम की तलाश में विश्रामपुर (सिमगा, जिला रायपुर) से भिलाई पहुँचा था।

उस समय भिलाई में भिलाई स्टील प्लांट का निर्माण कार्य चल रहा था। वहीं पर काम मिलने की सम्भावना से हम आये थे, किंतु दुर्भाग्यवश हमें काम दिलवानेवाला ठेकेदार किसी दूसरी जगह चला गया। हम परेशान हो गये क्योंकि हमारे पास रुकने के लिए ठिकाना नहीं था, काम की जरूरत तो थी ही। हमारी इस परेशानी को भाँपकर वहाँ के मजदूरों ने हमें ' गुहा साब ' के पास जाने की सलाह दी। तब वे 'ओवरसियर' बनकर वहीं आये ही थे। इससे पहले, कभी कुर्ता-पाजामा तो कभी शर्ट-पैंट पहननेवाले गुहा साब हमारी हालत सुनकर चिंतित हो गये। उन्होंने हमारे रहने की व्यवस्था तुरंत कर दी और अगली सुबह से हमें काम भी मिल गया।

काम के सम्बंध में गुहा साब अक्सर कहा करते थे, " मालिक और मजदूर के बीच सिर्फ काम का रिश्ता होता है। मजदूर चाहे कितना भी काम करे, मालिक को हमेशा कम ही लगता है। मालिक हमेशा मजदूर पर और अधिक काम करने के लिए दबाव डालता है और धमकाता है।" लेकिन हमारे गुहा साब औरों से एकदम अलग थे। मई महीने की गर्मी में काम करते हुए जब मजदूर बहुत थक जाते थे तब वे उन्हें आराम करने की सलाह देते थे। जरूरत पड़ने पर वे मदद के लिए भी आगे आते थे। जैसे कभी मुरम भरने वाले मजदूर कम हो जाते

परिणाम-स्वरूप अधिकारी वर्ग ने उन्हें नौकरी से निकाल दिया। फिर भी हमने नये जोश के साथ काम शुरू किया। नियोगीजी किसी भी तरह से दूसरों पर निर्भर नहीं थे। वे खुद आगे बढ़कर काम करते थे।

उस समय हमने भिलाई में एक संगठन बनाया। उसकी लगातार मीटिंगों के बाद निर्णय लिया गया कि नियोगीजी को पूर्णकालिक कार्यकर्त्ता बनाकर गाँवों में भेजा जायेगा और हम भिलाई स्टील प्लांट का क्वार्टर छोड़कर मजदूर बस्ती में रहेंगे व वहीं से मजदूरों को संगठित करने का काम करेंगे। इस निर्णय के अनुसार नियोगीजी गाँवों की ओर चले गये और हम लोग मजदूर बस्ती में जा पहुँचे।

यह तय हुआ था कि नियोगीजी गाँवों में रेडीमेड कपड़े का धंधा करेंगे व साथ-साथ संगठन बनायेंगे। अतः मैं कलकत्ता से उनके लिए कपड़ा खरीद लाया जिसे लेकर उन्होंने गाँवों में जाना शुरू कर दिया। बीच-बीच में वे भिलाई आते थे जहाँ हम सब इकट्ठे होकर अपने-अपने अनुभव बाँटते थे। शुरू में गाँव में काम करते समय उन्हें अनेक परेशानियों का सामना करना पड़ा किंतु उन्होंने कभी भी हमें वह सब बताया नहीं। हम उन्हें जरूरत के मुताबिक पैसा दिया करते थे।

हम लोग भिलाई और उसके आस-पास के इलाके में बहुत से मुद्दों पर राजनैतिक प्रचार का काम करते थे। पैम्फलेट वितरण व पोस्टरिंग का काम नियमित रूप से होता था। मार्क्सवाद-लेनिनवाद की चर्चाएँ भी अक्सर होती थीं। एम. एल. पार्टी के लोग अलग से कुछ काम करते थे। सन् 1970 में पुलिस ने उनके करीबन 70-75 लोगों को गिरफ्तार कर लिया था।

हम लोगों ने उनकी गिरफ्तारी के विरोध में व्यापक प्रचार और आंदोलन किया। पुलिस प्रशासन समझ गया कि इसके पीछे नियोगी व उसके साथी भिलाई में काम कर रहे हैं। लेकिन जिस जनवादी प्रक्रिया के साथ हम काम कर रहे थे उसके कारण पुलिस हमारे खिलाफ कुछ नहीं कर पायी।

हमें पता नहीं था कि नियोगीजी ने गाँव में बहुत बड़ा किसान संगठन बना लिया है क्योंकि वे स्वयं ऐसी बातें कभी बताते नहीं थे। अपने बारे में बोलना उन्हें पसंद नहीं था। एक बार जब वे मुझे अपने गाँव की मीटिंग में ले गये थे तो वहाँ जाकर विशाल जनसमुदाय को देखकर मुझे यह बात पता चली। उनकी संगठनात्मक क्षमता को मैंने महसूस किया।

यहाँ यह बताना आवश्यक है कि हममें से जितने भी लोगों ने मजदूर बस्ती में रहकर काम करना शुरू किया था उनमें से मेरे अलावा कोई भी बस्ती के कठिन जीवन में ज्यादा देर नहीं रह पाया। कुछ छोड़कर चले गये, कुछ ने शादी करके घर-संसार बसा लिया व मध्यमवर्गीय जीवन व्यतीत करने लगे। अंत में सिर्फ मैं ही वहाँ टिका रहा।

नियोगीजी बहुत तेज दिमाग के व्यक्ति थे। जब उन्होंने देखा कि किसान आंदोलन मजबूती नहीं पकड़ पा रहा है तब उन्होंने तय किया कि किसान परिवार के लोग जहाँ काम करने जाते हैं, वहाँ संगठन का काम किया जाये। इसके लिए उन्होंने दानीटोला खदानों को चुना। तभी उन्होंने वहाँ मजदूरी का काम करके उन लोगों से सम्पर्क स्थापित किया और गाँव-गाँव में संगठन

के) गाँवों में जाने के सिद्धांत का मैं पूर्ण समर्थन करता था।

हकीकत यह है कि उसके बाद उनसे मेरा सम्पर्क टूट गया था। गाँव जाने से कुछ दिन पहले उन्होंने एक स्थानीय साप्ताहिक पत्रिका के प्रकाशन का प्रस्ताव रखा था। उस पत्रिका का नाम उन्होंने ' स्फुलिंग ' रखा व मैंने उसका समर्थन किया।

इस पत्रिका का सम्पादन करने व सम्पादकीय लिखने का काम मूलतः हम दोनों ही किया करते थे। इस पत्रिका का प्रकाशन हिन्दी में होता था। नियोगी ने महसूस किया कि वे अच्छी तरह से हिन्दी नहीं लिख पायेंगे, इसलिए मुझसे मदद के लिए अनुरोध किया। मैं खुशी-खुशी तैयार हो गया। जहाँ तक मुझे याद है यह पत्रिका लगभग सात माह तक नियमित रूप से निकलती रही।

उसी समय हम लोगों ने एक छोटी-सी पुस्तिका हिन्दी में प्रकाशित करने का निर्णय लिया जिसमें छत्तीसगढ़ की स्थितियों से सम्बंधित एक मूल्यांकन पेश किया गया था। पुस्तिका के लिए सारे तथ्य और विचार कामरेड नियोगी द्वारा इकट्ठे किये गये थे। अंत में यह पुस्तिका मेरे द्वारा ही लिखी गयी। स्थानीय प्रेस के मालिकों ने इसे छापने से इंकार कर दिया, इसलिए महाराष्ट्र के भंडारा शहर में इसे छपवाया गया। दुर्भाग्यवश यह सूचना पुलिस को मिल गयी और सरकार ने इस पुस्तक की सारी प्रतियाँ जब्त कर लीं। इस तरह हमारे एक प्रयास का अंत हुआ। यह घटना सन् 1968-69 की है।

निर्णयानुसार कामरेड नियोगी गाँव में काम करने चले गये। जब भी मुझसे उनकी मुलाकात होती थी तब वे आंदोलन के विषय में सलाह लिया करते थे। मैंने उन्हें आंदोलन के बारे में एक रास्ता बताया, " तुम छोटी-छोटी समस्याओं को लेकर आंदोलन शुरू करो। उसके बाद अपनी सारी शक्ति लेकर एक बड़े आंदोलन में कूद पड़ो। पहले दुश्मन की सबसे कमजोर जगह पर प्रहार करना, जहाँ वे अपनी ज्यादा शक्ति का इस्तेमाल नहीं कर पायेंगे। लेकिन हमारी शक्ति को हम जहाँ तक सम्भव होगा बढ़ा लेंगे। तुम्हें इसमें अवश्य ही सफलता मिलेगी। इस तरह से हर स्तर के लोग आंदोलन की धारा को सरल तरीके से समझ जायेंगे और विजय हासिल करके हर संघर्ष में भागीदारी करने के लिए खुद को तैयार कर सकेंगे। फिर वे अन्य लोगों को आंदोलन के मौलिक दर्शन के बारे में शिक्षित करने में मददगार होंगे। बाद में राजनैतिक चेतना बनाने के लिए यही एक शिक्षण प्रक्रिया बन जायेगी। " कुछ दिनों के बाद जब उनसे मुलाकात हुई तो उन्होंने बड़ी खुशी के साथ मेरे प्रस्ताव को अपना पूर्ण समर्थन दिया।

इस तरीके से काम करते-करते उन्होंने दानीटोला खदान में अपने पैर जमाये। उन्होंने मुझे एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी मीटिंग में आमन्त्रित किया। यह मीटिंग दानीटोला खदान में उनके घर पर हुई थी। किसी एम. एल. ग्रुप के साथ जुड़ें या नहीं, इस बात पर उन्होंने मुझसे सलाह माँगी। मैंने उनसे कहा कि इस विषय में कुछ समय बाद सारी स्थिति देखकर ही निर्णय लेना चाहिए। उस समय तक उन्होंने दानीटोला खदान के मजदूरों में मजबूत जनाधार बना लिया था। उन्हीं दिनों उन्होंने मेरे सामने बच्चों को मार्क्सवादी दृष्टिकोण पढ़ाने के लिए एक स्कूल खोलने का प्रस्ताव रखा। लेकिन मैं उनके इस प्रस्ताव को पूरा न कर सका।

राजहरा में काम करते समय यूनियन की मीटिंगों में आलोचना व सलाह के लिए वे अक्सर मुझे बुलाते थे। मैंने उन्हें सुझाव दिया था कि राजहरा व बाहर छत्तीसगढ़ के हर क्षेत्र

दूध वाली, अच्छी चाय बनाकर 5 पैसे में बेचना शुरू कर दिया। इस तरह उन्होंने मजदूरों को सिखा दिया कि 5 पैसे में अच्छी चाय मिल सकती है, लेकिन कैंटीनवाले ज्यादा मुनाफा कमाने के लिए अधिक दाम में घटिया चाय बेचते हैं। इसका विरोध होना चाहिए। कम कीमत में अच्छी चाय की माँग रखकर मजदूरों ने हड़ताल कर दी। उस समय नियोगीजी ने पहली बार खुले मंच से माइक पर भाषण भी दिया।

धीरे-धीरे दानीटोला खदान में उनका परिचय बढ़ने लगा। तभी पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। उनकी रिहाई के लिए ठेकेदार शंकरलाल काबरा एवं उनके दोस्तों ने काफी कोशिश की। पुलिस अधिकारी नियोगीजी पर संगठन छोड़ने के लिए काफी दबाव डालते रहे, पर नियोगीजी व्यवसाय करने का आश्वासन देकर जेल से छूट आये।

जेल से छूटने के बाद उन्होंने केरी-जुंगेरा गाँव में बकरी का धंधा शुरू किया व उसी के माध्यम से लोगों को संगठित करने का काम भी।

यहाँ वे शंकरलाल ठाकुर के नाम से जाने जाते थे। उनकी वेश-भूषा, रहन-सहन एकदम छत्तीसगढ़ियों जैसा था जिस कारण पुलिस को उन्हें पहचानने में परेशानी होती थी। सन् 1971 तक मैंने उन्हें जैसे देखा वैसा बता दिया। नियोगीजी शुरूआत में 'छत्तीसगढ़ किसान मजदूर संगठन' के नाम से काम करते थे।

❑

(मूल बंगला से अनूदित अंश; अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित 'संघर्ष औ' निर्माण' से साभार।)

गाँव-गाँव में पैदल घूमा करते थे

परसादी

मेरे गाँव का नाम लोहारटोला है। कुछ लोग इसे केरी-जुंगेरा भी कहते हैं। नियोगीजी जब बकरी का धंधा करते थे तब बीच-बीच में मेरे घर में रहते थे। मेरा भाई नरसु उनके साथ इस धंधे में शामिल था। फिलहाल वह शहीद अस्पताल में काम कर रहा है। नियोगीजी हमारे घर में बकरी रखते थे।

हम लोगों की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी। जो मिलता था वे भी वही खाते थे। जब उनके पास पैसे होते थे तो हमें दे दिया करते थे। अपनी तरफ से खुद कभी खाना नहीं माँगते थे।

एक घटना मुझे याद आ रही है। यहाँ भुखमरी फैली हुई थी। उसी समय केरी-जुंगेरा का बाँध बन रहा था। गाँव के गरीब लोग वहाँ मजदूरी कर रहे थे। दिनभर की मजदूरी ढाई

उन्होंने किराने की दुकान खोली

गिरवर

नियोगी भैया हमारे गाँव केरी-जुंगेरा में मेहता कुमार के साथ आये थे। वे हमारे घर में रहा करते थे। इससे पहले वे गंजी गाँव में रहते थे, वहाँ उन्होंने किराने की दुकान खोली थी। यहाँ आकर बकरी का धंधा शुरू किया। बकरी का धंधा करने वाले दूसरे लोग, गाँव के लोगों से कम कीमत पर बकरी खरीदा करते थे। नियोगीजी बकरी का वास्तविक दाम देते थे। मेरे बड़े भाई पदम को वे अपना बड़ा भाई मानते थे, भाभी (सरस्वतीबाई) को माँ समान समझते थे। मैं उनका दोस्त था।

शुरूआत में वे जब यहाँ आये थे तो संगठन व राजनीति की बात नहीं करते थे। पुलिस उनके पीछे लगी थी, इसलिए जंगल-जंगल घूमते रहते थे। हमारे घर के बच्चों से उन्होंने छत्तीसगढ़ी भाषा सीखी व उन्हें अंग्रेजी सिखायी।

केरी-जुंगेरा बाँध पर ठेकेदार लोगों को ढाई रुपये मजदूरी देता था। नियोगीजी ने कोशिश करके उसे पाँच रुपया करवाया। समय बीतता गया, लोग समझने लगे कि वे आम आदमियों जैसे नहीं हैं, वे औरों से हटकर हैं।

जब वे मेरे यहाँ रहते थे तभी पुलिस ने उन्हें घर पर गिरफ्तार कर लिया था। जेल से वे हमें चिट्ठी भेजते थे। जेल में ही उन्होंने चिकित्सा सम्बंधी बहुत सारी बातें सीखीं। बाद में वह सब मुझे भी सिखाया। उसी से प्रेरित होकर अब मैं गाँव-गाँव में थोड़ा बहुत चिकित्सा का काम करता हूँ। इससे मुझे आमदनी भी होती है। उनके पास हमेशा कुछ दवाइयाँ व इंजेक्शन आदि रहते थे।

नियोगीजी हम लोगों के साथ हर किस्म का काम किया करते थे। किसी भी काम के लिए वे ' ना ' नहीं कहते थे। खेती का काम, मछली पकड़ने का काम, जंगल से लकड़ी लाने का काम, चिड़िया मारने का काम, हर प्रकार का काम वे खुशी से करते थे। वे मेहनती थे। दो-तीन दिन तक बिना खाये, बिना सोये लगातार काम करने की क्षमता उनमें थी।

(मूल बंगला से अनूदित ; अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित 'संघर्ष औ' निर्माण ' से साभार।)

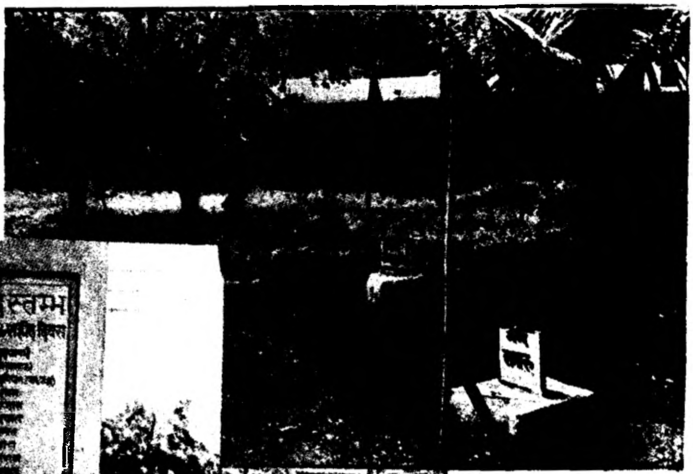

जून 1977 के
पुलिसलिया गोली-चालन
के 11 शहीदों की याद में
शहीद स्तंभ और
शहीद पार्क
(दल्ली राजहरा)

ऊपर : अंतिम संस्कार : (बायें से दायें) प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ के नेता नीलरतन घोषाल, शहीद अस्पताल के डा. शैवाल जाना, छमुमो अध्यक्ष जनकलाल ठाकुर, छमुमो उपाध्यक्ष गणेशराम साहू और उनके पीछे शहीद अस्पताल के डा. पुण्यब्रत गुण; **बीच में** : सी.एम.एस.एस. के महामंत्री छबिलाल साहू और शहीद नियोगी का बेटा जीत; **नीचे** : दल्ली राजहरा : यूनियन दफ्तर में वीर नारायण सिंह के दीवाल चित्र के सामने शहीद नियोगी का अस्थि-कलश और श्रद्धांजलि कविता (पृ. 472)

1 जुलाई 1992, भिलाई :
रेल पटरी पर हजारों
मजदूरों द्वारा सत्याग्रह
और उन पर गोली चालन
(16 शहीद) के पूर्व पुलिस द्वारा
पथराव एवं लाठीचार्ज
(पृ. 456-57)

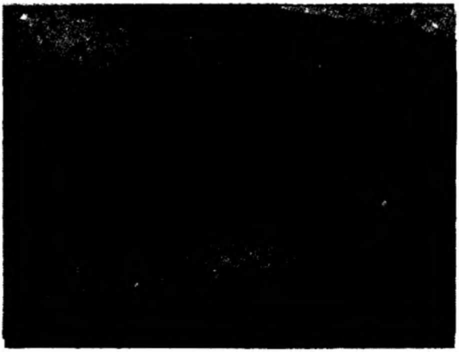

दल्ली राजहरा :
यूनियन दफ्तर
की दीवाल पर

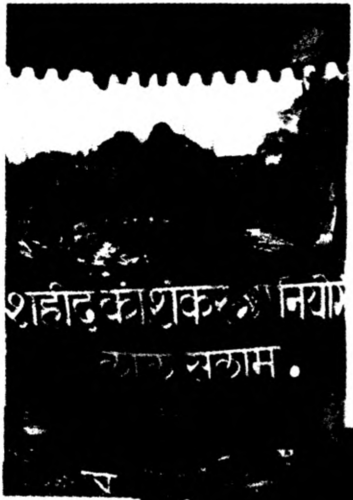
नियोगी
सलाम

शंकर

वे अपनों जैसे बन गये

दुखुराम

मेरे गाँव का नाम दहियान है। मैं दानीटोला खदान में काम करता था। नियोगीजी मेरी झोपड़ी में एक बार लगातार तीन महीने तक रहे, बाद में एक महीना रहे। नियोगी भैया ने दानीटोला खदान में हर प्रकार का काम किया, वहाँ से काम छोड़ने के बाद वे दहियान आये थे।

सन् 1973-74 की बात है। जिले में भयंकर अकाल पड़ा था। सरकार ने दहियान में बाँध का काम शुरू किया। लोगों की हालत बड़ी खराब थी, मक्का-बाजरा खाकर दिन गुजार रहे थे। बाँध का काम शुरू होने से लोगों के मन में थोड़ी आशा जागी, लेकिन वहाँ सरकार के काम में गाँव के लोगों को मजदूरी नहीं मिलती थी। तब सभी नियोगीजी को बुलाकर लाये। उनके नेतृत्व में चार महीने तक लगातार व्यापक आंदोलन चला। बैठकें, जुलूस, घेराव, व आम सभाएँ शुरू हुईं। पुलिस ने लाठीचार्ज किया। अंत में जीत हमारी हुई। मजदूरी बढ़ी, चार माह की पिछली बकाया मजदूरी भी मिली। आंदोलन के समय हम रात को बाँध पर पहरा दिया करते थे।

नियोगीजी मेरे घर में रहा करते थे और वहीं से आस-पास के गाँवों में जाते थे। पहनने के लिए उनके पास कपड़ा नहीं था। अतः कभी-कभी वे मेरा ही कपड़ा पहन लेते थे।

नियोगीजी जैसे इंसान की मिसाल मिलना मुश्किल है। यहाँ के लोगों ने उन्हें अपना लिया था। कई बार जब पुलिस पकड़ने आती तो गाँव वाले उन्हें छिपा लेते थे। हम छत्तीसगढ़ी, बहुत जल्दी लोगों का विश्वास करते हैं, उनका भी किया। घर में रहने दिया, एक ही थाली में खाना खाया, एक ही बिस्तर में सोये। वे अपनों जैसे बन गये थे।

❑

(मूल बंगला से अनूदित अंश ; अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित 'संघर्ष औ' निर्माण' से साभार।)

मैंने उन्हें टंगिया लेकर खदेड़ा था

सियाराम

मैं नियोगीजी का ससुर हूँ। मेरे घर में रहकर जब वे दानीटोला खदान में काम करते थे तब उन्हें 15 रुपये हफ्ते में मिलता था। पैसा देकर वे मेरे यहाँ खाना खाते थे। यहाँ रहते हुए वे

रुपये थी। उस पर भी ठेकेदार ने पिछले चार हफ्तों की मजदूरी का भुगतान नहीं किया था। नियोगीजी ने वहाँ के मजदूरों को संगठित करके ठेकेदार से पूरी मजदूरी वसूल करवायी।

हमारा यह क्षेत्र जंगलों से घिरा हुआ है। वन विभाग के अफसर लोग यहाँ की गरीब जनता पर तरह-तरह से अत्याचार करते थे। जलाऊ लकड़ी लाने पर वन अधिकारी लकड़ी छीन लेते थे। इस पर नियोगीजी ने वन विभाग के कानून की जानकारी लेकर गाँववालों के हित में प्रयास शुरू किया।

वे गाँव-गाँव पैदल घूमा करते थे। उस समय हम उनके इस तरह से घूमने का कारण समझ नहीं पाये थे। बाद में सब मालूम पड़ा। वे बहुत बड़े नेता बन गये, लेकिन हमें कभी भी भूले नहीं।

[यह कहते-कहते परसादी रो पड़े।]

❑

(मूल बंगला से अनूदित अंश; अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित 'संघर्ष औ' निर्माण' से साभार।)

मुझे माँ की तरह मानते थे

सरस्वतीबाई

वे अपनों जैसे थे, मुझे माँ की तरह मानते थे। अपनी हर बात मुझे बताते थे, घरेलू बातें, प्रारम्भिक जीवन की बातें, काम की बातें। कभी-कभी किसी चीज के लिए मुझसे हठ भी करते थे। उनकी पसंद की चीजों में चाय व सागभाजी थी। गिरवर को भाई जैसा मानते थे। गिरवर की लड़की कला से उन्होंने छत्तीसगढ़ी भाषा सीखी। उन्हें जंगल से प्यार था। वे दिनभर जंगल में घूमते रहते थे। जंगल के पेड़-पौधों को वे अच्छी तरह पहचानते थे। बकरी बेचने के बहाने से वे भिलाई जाते थे और वहाँ साथियों के साथ मीटिंग करके वापिस आ जाते थे। एक बार भिलाई के एक क्वार्टर में ऐसी ही मीटिंग चल रही थी कि अचानक पुलिस आ गयी। वे तुरंत दूसरी मंजिल से कूद पड़े और उनका पैर टूट गया।

बाद में वे बहुत बड़े आदमी बन गये और फिर भी हमें भूले नहीं। जब भी हमसे मिलते थे तो मेरे व मेरे पति के पैर छूकर आशीर्वाद माँगते थे। मैं उन्हें कैसे भुला पाऊँगी ?

[यह कहते हुए सरस्वतीबाई रो पड़ीं और अतीत में खो गयीं।]

❑

(मूल बंगला से अनूदित; अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित 'संघर्ष औ' निर्माण' से साभार।)

में आंदोलन का सफलतापूर्वक संचालन करने के लिए दूसरी पंक्ति के संगठनकर्त्ताओं को तैयार करने पर विशेष ध्यान देना होगा। मैंने उन्हें विभिन्न ट्रेड यूनियन केंद्रों के चारों और किसान आंदोलन तैयार करने की सलाह दी जिससे शोषणमुक्त छत्तीसगढ़ की नींव सशक्त हो सकती है।

उस समय आसाम में आंदोलन चल रहा था। वे इस आंदोलन को नजदीक से समझना चाहते थे। अतः तय हुआ कि वे आसाम जाकर प्रत्यक्ष रूप से वहाँ की स्थिति देखकर उसका विश्लेषण प्रस्तुत करेंगे। राष्ट्रीयता की समस्या की गुत्थी हमेशा उनके दिमाग में रही।

उनकी इच्छा थी कि मैं उनके साथ जुड़कर जुझारू कार्यकर्त्ताओं को मार्क्सवाद-लेनिनवाद के प्राथमिक सिद्धांतों से परिचित कराऊँ। मैंने उनके इस प्रस्ताव पर अपनी सहमति बतायी थी लेकिन उनके जीवनकाल में इसे व्यावहारिक रूप न दे सका।

(मूल बंगला से अनुवाद का संक्षिप्त स्वरूप; अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित 'संघर्ष औ' निर्माण' से साभार।)

पाँच पैसे में अच्छी चाय

मेहता कुमार कौशिक

सन् 1969 में मैं मोहला जूनियर हाईस्कूल का छात्र था। मेरा दोस्त के. एस. ठाकुर दुर्ग कालेज में पढ़ता था। उसी के माध्यम से नियोगीजी के साथ मेरी पहली मुलाकात हुई। उस समय भिलाई इस्पात कारखाने से नियोगीजी की छँटनी हो चुकी थी। पहली ही मुलाकात में मैं उनकी बातों व विचारों से प्रभावित हो गया था। उस समय मैं दुर्ग जिले के गंजी गाँव में रहता था। उन्होंने मुझे गंजी गाँव ले चलने के लिए कहा। इस तरह सबसे पहले मैं ही उन्हें छत्तीसगढ़ के गाँवों में लाया।

जब वे गंजी गाँव में आये, उस समय पुलिस उन्हें तलाश रही थी। करीबन दो साल तक नियोगीजी गाँव-गाँव घूमे-फिरे। पुलिस से बचने व अपने जीविकोपार्जन के लिए वे हाथ ठेला पर कपड़ा बेचते थे। शुरू-शुरू में वे हिन्दी या छत्तीसगढ़ी बिलकुल ही नहीं बोल पाते थे। अतः पुलिस से बचाने के लिए जब तक उन्होंने यह भाषा सीख नहीं ली तब तक हमने उन्हें बाहर जाने नहीं दिया। मेरी पत्नी श्यामा से वे छत्तीसगढ़ी सीखते थे।

एक घटना याद आ रही है। दानीटोला खदान की बी. एस. पी. (भिलाई स्टील प्लांट) कैंटीन में 15 पैसे में बगैर दूध की घटिया चाय मिलती थी। नियोगीजी ने अचानक एक दिन

बनाने की जिम्मेदारी अपने पर ली।

उसी समय नियोगीजी ने मुझसे दूसरे जिले में काम करने के लिए कहा, नौकरी छोड़े बगैर। कितनी दूर की सोचते थे वे! मैंने कई दिनों बाद महसूस किया कि वे मुझसे ऐसा आग्रह क्यों कर रहे थे क्योंकि नौकरी के कारण भिलाई में आज मेरा एक परिचित वर्ग है व यहाँ व्यक्तिगत प्रभाव को इस्तेमाल करने का अवसर मिला है।

ऐसी दृढ़ चेतना वाले व्यक्तित्व का मजदूर नेता मिलना मुश्किल होता है। जब-जब उनकी याद आती है तो आँखे भर आती हैं। हम नियोगीजी को आनेवाले संघर्ष में जिंदा रखेंगे। ☐

(मूल बंगला से अनूदित एवं उसका संक्षिप्त स्वरूप; अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित 'संघर्ष ओ' निर्माण' से साभार।)

राष्ट्रीयता की समस्या हमेशा उनके दिमाग में रही

बी. एस. यदु

सन् 1967 में कामरेड शंकर गुहा नियोगी के साथ मेरा परिचय हुआ। उन्हीं दिनों भिलाई विधान सभा के चुनाव हुए थे। इस चुनाव में मैं भी एक उम्मीदवार था। नियोगी से दो-तीन बार की मुलाकात के बाद हम लोगों ने एक सक्रिय मार्क्सवादी-लेनिनवादी समूह बना लिया। उनके साथ बात करते-करते मैंने महसुस किया कि मेरे लिए उनके मन में विशेष श्रद्धा है। संगठन के बारे में जो मेरा चिंतन था जिसे मैंने संगठन की बैठकों में व्यक्त किया था, वही चिंतन नियोगी को मेरे पास खींच लाया था। उनकी निष्ठा एवं राजनैतिक काम में आगे बढ़ने के उनके दृढ़ संकल्प ने मुझे बहुत आकर्षित किया था। उस समय पुलिस उन्हें खोज रही थी। पुलिस की नजर से बचने के लिए नयी-नयी जगहों पर आधी-आधी रात तक हमारी बातचीत होती थी।

उस समय विभिन्न कामों से वे अक्सर जगदलपुर जाते थे। एक दिन पुलिस ने उन्हें वहीं पकड़ लिया व कुछ दिनों बाद रिहा कर दिया। भिलाई के मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा के दूसरे लोगों के साथ उनका मतभेद हो गया था। अतः एक बैठक में उन लोगों ने उन्हें संगठन से निकालने का निर्णय लिया। मैंने व्यक्तिगत रूप से इस निर्णय का विरोध किया और कहा कि नियोगी हमारे एकमात्र पूर्णकालिक कार्यकर्त्ता हैं, दूसरे लोग बी. एस. पी. में काम करते हैं, इस कारण संगठन को बहुत कम समय दे पाते हैं। किंतु यही वे लोग थे जिन्होंने नियोगी को बाहर करने का निर्णय कर लिया था। इस निर्णय को सुनकर नियोगी निराश हो गये थे। मैंने उन्हें सांत्वना दी और कहा कि इस निर्णय का कोई खास महत्व नहीं है। उनके (नियोगी

थे तब वे स्वयं टोकरी में मुरम भरकर मजदूरों के सिर पर उठा कर रख देते थे। वे कभी भी बीमारी आदि की वजह से गैरहाजिर रहे मजदूर की मजदूरी नहीं काटते थे, बल्कि अन्य मजदूरों को प्यार से समझाकर उसका काम पूरा करवा देते थे।

इन्हीं तमाम बातों की वजह से आज 31 साल बाद भी गुहा साब के सहृदयतापूर्ण व्यवहार व अच्छे स्वभाव के जादू का असर मुझ पर बरकरार है।

❑

(अगस्त 1992 ; अमन कुमार नम्र द्वारा लिये गये साक्षात्कार पर आधारित।)

अपने बारे में कुछ कहना उन्हें पसंद नहीं था

नीलरतन घोषाल

मैं भिलाई स्टील प्लांट की ब्लास्ट फर्नेस में काम करता था। कामरेड नियोगी के साथ सन् 1965 के मध्य में मेरी पहली भेंट हुई। वे खुद मुझसे मिलने आये थे। तब से लेकर उनकी मृत्यु तक हम साथ-साथ रहे।

एक दूसरे से अच्छी तरह परिचित हो जाने के बाद हम भिलाई में संगठन बनाने के लिए सक्रिय हो गये। शुरुआत में हम नाइट ड्यूटी में काम करने के बाद घर-घर जाकर मजदूरों को संगठित करते थे। इसमें हमने काफी मेहनत की। नियोगीजी भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) के सक्रिय कार्यकर्ता थे। मैं किसी भी राजनैतिक दल के साथ जुड़ा हुआ नहीं था।

नक्सलबाड़ी की घटना से प्रभावित होकर नियोगीजी ने माकपा को छोड़ दिया। तभी से हम लोगों ने नये तरीके से काम करना शुरू किया। धीरे-धीरे राजनैतिक चेतना वाले कुछ मजदूरों को हमने संगठित किया। उसी समय एम. एल. पार्टी तैयार हुई। कुछ ही दिनों के अंदर नियोगीजी का पार्टी के नेतृत्व के साथ मतभेद हुआ व गैर-लोकतांत्रिक ढंग से उन्हें पार्टी से निकाल दिया गया। उनके खिलाफ शिकायत थी कि वे माकपा के साथ क्यों सम्पर्क बनाये हुए हैं व जेल से फलाँ-फलाँ आदमी को चिट्ठी क्यों लिखी, आदि।

पार्टी से निकाले जाने का उन्हें बहुत दुःख था, लेकिन फिर भी उन्होंने बहुत दृढ़ता से कहा कि वे अपने लक्ष्य से हटेंगे नहीं। हमने तय किया कि हम मार्क्सवादी-लेनिनवादी आधार पर नये ढंग से काम करेंगे।

उन्हीं के नेतृत्व में भिलाई इस्पात के कोक ओवन में एक बड़ा आंदोलन हुआ जिसके

बाच्चू दा, सदा हमारे मन में रहेंगे

चिन्मयी बसु

वर्तमान भारत के शोषितों की आँखों का तारा व मजदूर नेता शंकर गुहा नियोगी मेरा चचेरा भाई था – हमारा बाच्चू दा। मैं जब दूसरी कक्षा में पढ़ रही थी उस समय जलपाईगुड़ी वाले चाचा बाच्चू दा (बड़े भैया) को हमारे घर (दिशेरगढ़) छोड़ गये। उसी दिन से वे हमारे साथी बन गये। कक्षा छह से मैट्रिक तक का उनका छात्र जीवन हमारे घर पर बीता। खेलना, पढ़ना-लिखना, झगड़ना सब साथ-साथ हुआ। वे हँसमुख और मिलनसार थे। किशोरावस्था की साहित्य चर्चा, कविता, गीत, हर बात में वे हमारे प्रेरणा स्रोत रहे। बाच्चू दा हमारे दोनों बड़े भाइयों के भी अभिन्न साथी थे। बड़ों की आँख बचाकर ये तीनों दिनभर शरारतें व कूद-फाँद किया करते थे। झूठ-मूठ बहाना बनाने और रसोईघर के भंडार से नमकीन, मिठाई आदि चीजें चुराने में उन्हें हमारी जरूरत पड़ती थी। पिताजी बच्चों की पढ़ाई पर हमेशा कड़ी नजर रखते थे, इसलिए बाच्चू दा उनसे काफी डरते थे। पिताजी की अनुपस्थिति में वे पेड़ पर चढ़कर कविता सुनाया करते थे –

> " सोचता हूँ बैठे-बैठे पेड़ की डाल पर,
> ताऊजी जमकर मुक्का लगायेंगे कब आकर।"[1]

ये लड़कियों के समान इमली खाना बहुत पसंद करते थे। तेल-मसाला लगाकर इमली देने के लिए वे हमारी खूब मिन्नतें करते थे। मेरी दीदी को खुश करने के लिए वे कविता सुनाया करते थे –

> " दीदी ओ दीदी, क्यों बैठी मुँह फुलाकर,
> जल्दी से ला देना इमली, तेल-मसाला लगाकर।"

बाच्चू दा के मन में बड़ी-बड़ी आकाँक्षाएँ थीं। भविष्य का एक सुनहरा सपना वे देखा करते थे। दामोदर नदी के किनारे मंडल परिवार की बड़ी कोयला खदान थी। उसी के पास बहुत बड़ा टॉवरपोस्ट था। बाच्चू दा उस पर चढ़कर कविता सुनाया करते थे –

> ऊँचे टीले पर बैठकर,
> कवि बनने की इच्छा जागती, मन मुस्कराता।"

बचपन में हमारा सबसे खुशी का त्यौहार सरस्वती पूजन था। भैया लोग, माँ व दीदी की साड़ियों से मंडप सजाया करते थे। हम भाई-बहन पड़ोसियों के घर से फूल चुराकर मंडप सजाते थे। हर त्यौहार के अगुआ बाच्चू दा रहते थे। शरारती होने के साथ-साथ वे हाजिर-जवाब भी थे। पढ़ने-लिखने, खेलने आदि के बीच वे कविताएँ भी लिखते रहते थे।

---

1 मूल बंगला में कही गयीं कविताओं के अनुवाद। इस संस्मरण की शेष कविताएँ भी बंगला में कही गयी थीं।

एक भाई भी रहते थे। मैं आसाम में धंधा करता रहा और बाच्चू की माँ को बच्चों सहित जलपाईगुड़ी के इस नये मकान में भेज दिया, जहाँ आर्थिक तंगी में वे उनका पालन-पोषण करती रहीं।

बाच्चू ने उस समय मैट्रिक पास किया था, उसे भी मैं जलपाईगुड़ी ले आया और आनंदचंद्र कालेज में आई. एस. सी. (इंटरमीडिएट विज्ञान) में दाखिल करवा दिया। मैं आसाम में रहता था, इसलिए बच्चों का ध्यान नहीं रख पाता था। डेढ़ सौ रुपया महीना भेज देता था, उसी से पूरे परिवार का खर्च चलता था।

शुरूआत से ही बाच्चू का यहाँ की छात्र राजनीति से गहरा सम्बंध रहा है, यह बात मुझे बहुत बाद में पता चली। वह स्थानीय स्टूडेंट्स फेडरेशन का नेता था। दिनभर राजनैतिक गतिविधियों में व्यस्त रहता था। कविताएँ लिखता था, नाटक लिखता था, नाटकों में अभिनय भी करता था। पहले यह सब मुझे अच्छा नहीं लगता था क्योंकि देश की कांग्रेसी और वामपंथी राजनीति का जन-विरोधी चरित्र मुझे पसंद नहीं था। राजनैतिक नेताओं की गलत नीतियों, भाई-भतीजावाद व अवसरवादी चरित्र से मुझे घृणा थी। इसमें न तो आदर्शवाद है और न ही देशप्रेम। इसलिए सोचता रहा कि राजनीति के कुचक्र में फँसकर कहीं मेरा बेटा भी सुविधाभोगी न बन जाये। फिर भी मैंने कभी उसके काम में बाधा नहीं डाली। उसके अंदर मैंने समाज सेवा का एक आदर्श भाव देखा जो मुझे अच्छा लगता था।

बाच्चू कालेज जीवन से ही कांग्रेस-विरोधी रहा। वह कम्युनिस्टों के साथ जुड़ा हुआ था। कालेज के चुनाव में सक्रिय भूमिका निभाता था। मानिक सान्याल, जितेन चक्रवर्ती, गिरीन देब आदि-उसके मित्र थे।

इंटरमीडिएट विज्ञान (आई. एस. सी.) पास करने के बाद बाच्चू ने पालिटेक्निक में दाखिला लेने का प्रयास किया, उससे सम्बंधित सारी कागजी कार्यवाही पूरी कर ली गयी। तभी एक दिन उसने आकर बताया कि बोकारो वाले मामाजी का तबादला भिलाई हो गया है और वे वहाँ उसके लिए नौकरी का इंतजाम कर देंगे। अतः अब वह भिलाई जाना चाहता है। वह भिलाई चला गया। पर शुरू में नौकरी नहीं मिली। तब उसने वहाँ भिलाई ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट में ए. एम. आई. ई. कोर्स में दाखिला ले लिया व बी. एस. सी. का संक्षिप्त (कंडेंस्ड) कोर्स करना भी शुरू किया। इसके बाद वह भिलाई स्टील प्लांट में अप्रेंटिस बन गया। जहाँ तक मुझे याद आ रहा है कि सन् 1963 में (दो ही साल बाद) भिलाई कारखाने में उसकी स्थायी मजदूर के रूप में नियुक्ति हो गयी थी।

मुझे ज्यादा जानकारी नहीं थी कि बाच्चू भिलाई में भी राजनीति में सक्रिय भूमिका निभा रहा है और दिन-रात ट्रेड यूनियन के काम में व्यस्त रहता है। यह जानकारी मुझे बाद में अपने तीसरे नम्बर के बेटे अनूप से मिली। वह बाच्चू के पास जाकर कुछ महीने रहा था। उसकी इच्छा थी कि भैया कोई अच्छी-सी नौकरी दिला देंगे तो वह वहीं रह जायेगा। उसी के मुँह से सुना कि बाच्चू दिन-रात राजनैतिक गतिविधियों में व्यस्त रहता है। भाई के लिए नौकरी ढूँढने तक का समय उसके पास नहीं है। अतः अनूप निराश होकर वापिस लौट आया।

इसी समय नक्सलबाड़ी आंदोलन के कारण सारे पश्चिम बंगाल में उथल-पुथल मच गयी। मेरा दूसरा बेटा प्रणव भी नक्सली राजनीति से जुड़ गया। उसी के माध्यम से जानकारी मिली कि बाच्चू भी इसी राजनीति में सक्रिय हो चुका है। उन दिनों जलपाईगुड़ी के नक्सली लड़के उसके साथ भिलाई में सम्पर्क बनाने जाते थे। जलपाईगुड़ी इस आंदोलन का प्रमुख केंद्र था।

खंड सम्पादन — शशि मौर्य

इस खंड में हमें नियोगी के बहुआयामी व्यक्तित्व की झलक देखने को मिलती है। ये संस्मरण कुछ देर के लिए ही सही हमें नियोगी के संघर्षमय व सृजनशील जीवन के करीब ले जाते हैं और उनके जीवन के अनेक पहलुओं को उजागर करते हैं। सक्रिय राजनैतिक जीवन व्यतीत करनेवाला व्यक्ति अपने परिवार व साथियों के प्रति इतना संवेदनशील हो व सबके प्रति इतना सरोकार रखता हो, यह बहुत कम देखने को मिलता है। आँखों में नये भारत और नये छत्तीसगढ़ का सपना था तो मन में उसके लिए उतना ही दृढ़ निश्चय। हम देखते हैं कि किस तरह जलपाईगुड़ी के मध्यमवर्गीय परिवार का यह युवक काम की तलाश में भिलाई आता है और छत्तीसगढ़ अंचल को ही अपनी कर्मभूमि बनाकर वहीं बस जाता है। यहाँ हम कभी उनके विद्यार्थी जीवन को देखते हैं, तो कभी परिवार के सहज माहौल में दुर्गा पूजा की सजावट करते, कभी वे कविताएँ लिख रहे हैं तो कभी हाथ ठेले पर कपड़ा बेच रहे हैं, बकरी बेचने का धंधा कर रहे हैं। साथ-साथ बैठकें हो रही हैं, संगठन बन रहा है। कभी भाषण देते दिखाई देते हैं तो कभी जेल की कोठरी में, कभी पुलिस से बचने के लिए जंगलों में भाग रहे हैं तो कभी सीना तान कर पुलिस की बंदूक के सामने खड़े हैं, कभी अपने बच्चों के साथ हैं तो कभी महीनों उनसे मुलाकात ही नहीं है। एक ही व्यक्ति को इतने विभिन्न रूपों में देखकर और उनको भली-भाँति परखकर ही छत्तीसगढ़ के लोगों ने इन्हें ' बैगा ' की [illegible] होगी।

मात्र 49 वर्षों के जीवन में नियोगी के सम्पर्कों का दायरा इतना बड़ा और गहरा हो गया था कि इस खंड के लिए [illegible] पाना असम्भव-सा हो गया कि किसका संस्मरण रखें, किसका न रखें। हमारी कोशिश यही रही कि उनके इस बहुआयामी व्यक्तित्व के हर पहलू को छूनेवाला कम-से-कम एक संस्मरण अवश्य शामिल हो। इसके बावजूद हमें दुःख है कि नियोगी के कुछ करीब के सहयोगियों से [illegible] पाये। जब [illegible] समय आया तो भिलाई गोलीकांड हो गया और संगठन की [illegible] रातों-रात बदल [illegible] साथी भूमिगत हो गये जिसके कारण उनसे सम्पर्क नहीं हो पाया। [illegible] के वरिष्ठ नेता [illegible], युवा साथी शेख अंसार व अन्य कई [illegible] भिजवाये गये, पर हर बार [illegible] हैं। यदि इन सबके संस्मर[illegible] दिलचस्प एवं प्रभावकारी [illegible]

इस खंड के लिए मूल बंगला में ' अनुष्टुप ' द्वारा प्रकाशित ' संघर्ष औ' निर्माण ' से उद्धृत अधिकांश संस्मरणों का अनुवाद श्री भक्तिपद घोष, सुश्री उत्पला दास एवं सुश्री चित्तरूपा पालित के संयुक्त प्रयास से सम्भव हो पाया है। ❑

इसके साथ ही नियोगी ने आंदोलन के इन रूपों का उपयोग करते हुए हर आंदोलन में मजदूर वर्ग के नेतृत्व का सवाल, वर्ग संघर्ष का नजरिया एवं 'संघर्ष व निर्माण' की राजनीति को स्थापित किया। इस तरह नियोगी समय की जरूरत के मुताबिक जन आंदोलन में एक गुणात्मक परिवर्तन ला पाये।

जमीन पर खड़े रहकर जिसने छुआ आसमान

नियोगी किसी दक्षिणपंथी राजनैतिक दल में नहीं थे। संसदीय वामपंथियों ने भी कभी उन्हें अपना नहीं समझा। रूढ़िवादी कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों ने उन्हें आधा-सुधारक व आधा-क्रांतिकारी समझा। पूर्व मार्क्सवादी-लेनिनवादी बुद्धिजीवी, जो आज मार्क्सवाद के खिलाफ बहुत कुछ बोलते हैं, वे नियोगी को सिर्फ एक मानवतावादी के रूप में दिखाना चाहते हैं। **असल में सिर्फ बौद्धिक औजारों से जिसकी व्याख्या नहीं हो सकती, ऐसे विचारक व कर्मयोगी होने के नाते नियोगी ने सभी को उलझा दिया।**

इसलिए कुछ लोगों ने उन्हें छत्तीसगढ़ का गांधी कहा, कुछ ने सिर्फ गांधी नहीं, बल्कि एक क्रांतिकारी गांधी कहा, किसी ने उन्हें नक्सली व हठधर्मी कहा। कुछ लोगों के अनुसार नियोगी की धुंधली दृष्टि के कारण वे पूर्ण रूप से मार्क्सवादी नहीं बन पाये। ग्रामशीपंथियों [1] ने उन्हें अपना समझा। सुधारवादियों ने उन्हें समाज-सुधारक समझा।

असल में किसी परिचित मॉडल के तहत नियोगी को समझ पाना सम्भव नहीं है। फिर आज नियोगी को नकार पाना भी सम्भव नहीं है। इसीलिए सभी उन्हें अपने-अपने मॉडल में रखने की कोशिश कर रहे हैं।

आज सब तरफ व्याप्त चरम गतिहीनता के बीच नियोगी एक गतिशील पहाड़ थे, जिनके पैर जमीन पर थे और सिर आसमान छूना चाहता था। अंधकार को चीरते हुए नियोगी सूरज की ओर बढ़ रहे थे। इसलिए उनका मूल्यांकन आज इतना कठिन है।

दरअसल, उनको समझते थे छत्तीसगढ़ के लोग, लोहा खदान के महिला व पुरुष मजदूर, अन्य अंचलों के मजदूर, अनपढ़ दबे-कुचले आदिवासी-किसान। इन लोगों ने नियोगी को सिर्फ बुद्धि से नहीं, वरन् अपनी अंतरंग भावनाओं के आधार पर और संघर्ष की परिस्थितियों में परख कर ही समझा। इसीलिए नियोगी उनके 'भैया' थे, उनके 'बैगा' थे, उनके 'कामरेड' थे।

कोई कुछ भी कहे, जिसको लेकर इतनी चर्चाएँ, इतने वाद-विवाद हुए, उसने शुरू से आखिर तक खुद को एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी बताया। सिर्फ झंडे के लाल-हरे रंग से नहीं, सिर्फ अस्पताल व स्कूल से नहीं — उनको समझना होगा उनकी वैकल्पिक विचारधारा के बीच, उनके 'संघर्ष व निर्माण' के मॉडल में, जो मॉडल पहले के सभी मॉडलों से अलग है। जहाँ मार्क्सवाद, देशप्रेम, राष्ट्रीयतावाद व मानवतावाद के महान तत्वों को वर्ग संघर्ष के साथ जोड़कर वर्गरहित शोषणविहीन साम्यवादी समाज की ओर आगे बढ़ता है, जहाँ विचार इंसान को दमन व दासता से मुक्ति के लिए प्रेरित करता है। नियोगी ऐसे ही एक सच्चे मार्क्सवादी थे। छत्तीसगढ़ की जनता उन्हें संघर्ष के प्रतीक के रूप में हमेशा याद रखेगी। ❑

---

[1] प्रसिद्ध इतालवी दार्शनिक ग्रामशी के अनुयायी।

लेख हमें मिलते हैं, जो आंदोलन की विभिन्न पृष्ठभूमियों में अलग-अलग विषयों पर लिखे गये हैं। उनके मौलिक चिंतन का स्पर्श इन लेखों में है। लेकिन उनका बहुआयामी चिंतन उनके कामों में और छत्तीसगढ़ के पिछले कई सालों के लगातार संघर्षों में फैला हुआ है। विभिन्न जनसभाओं, सेमिनारों, बैठकों तथा सहकर्मियों और दोस्तों से बातचीत के दौरान उनके चिंतन की कई सूक्तियाँ हमें मिलती हैं। इसलिए नियोगी के चिंतन को समझने के लिए हमें इन सभी पर ध्यान देना होगा —

1. पहले ही यह कह देना ठीक होगा कि **उनमें जनवादी, देशप्रेमी, मानवतावादी एवं वैज्ञानिक समाजवादी विचार व राजनीति का एक अपूर्व समन्वय था।** विदेश के अंधानुकरण के बदले वे देशज चिंतन, परम्परा व परिवर्तन की धारा के साथ विदेशी ज्ञान के ऐसे तालमेल की बात सोचते थे जो स्वतंत्र रूप से अपने पैरों पर खड़े होकर किया गया हो। शोषणविहीन, वर्गरहित समाज के लक्ष्य में भारत तथा छत्तीसगढ़ की विशेष परिस्थितियों को देखते हुए कौन-सा रास्ता अपनाना चाहिए, उसी की खोज वे सारी जिंदगी करते रहे।

2. उनका मानना था कि हर काम एक विशेष प्रयोग है जिसके जरिये वे भारतीय समाज परिवर्तन की राह ढूँढ़ने की कोशिश करते रहे।

नियोगी कभी भी **अपने फैसले को अंतिम नहीं मानते थे।** वे रूढ़िवादी नहीं थे। उनके अनुसार वही चिंतन वैज्ञानिक है जो अब तक राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय, दोनों स्तरों पर विरासत में प्राप्त सकारात्मक शिक्षण और सिद्धांतों को समेटकर उन्हें समाज की आवश्यकतानुसार ढाल लेता है।

इसलिए एक ओर जहाँ उन्होंने प्राचीन जनजीवन के इतिहास व चिंतन से शिक्षा ली, वहीं दूसरी ओर औद्योगिक क्रांति से उपजे हेतुवाद या तर्कवाद, राष्ट्रीयतावाद, आजादी, जनवाद आदि भावनाओं की मर्मवस्तु को भी समझा है। **वैज्ञानिक समाजवादी धारा के मूल सूत्रों से लैस होकर उन्होंने समाजवाद के विकास की समस्याओं को समझने की कोशिश की।** उनके राजनैतिक विचारों का गठन देश के स्वतंत्रता संग्राम, राष्ट्रीयतावाद एवं समाजवादी आंदोलन के सकारात्मक तत्वों से हुआ।

नियोगी के विचारों पर एक ओर यूरोपीय विचारकों का असर था, तो दूसरी ओर भारतीय विचारकों का भी। वे एक द्वंद्वात्मक भौतिकवादी विचारक थे। नियोगी एक मार्क्सवादी थे, उन्होंने उस वैज्ञानिक पद्धति को अपनाया, जिसको कार्ल मार्क्स ने वैज्ञानिक आधार दिया था।

हमारे देश के परिप्रेक्ष्य में, प्राचीन भारत के दर्शन से शुरू करके बंगाल के नवजागरण के प्रवक्ता राममोहन राय, विद्यासागर, विवेकानन्द, रवीन्द्रनाथ ठाकुर एवं गरम दल व नरम दल के राष्ट्रीय नेताओं के विचारों में जो सकारात्मक पहलू थे, नियोगी उन्हें ग्रहण करने की कोशिश करते रहे। साथ-साथ उन्होंने भारत के समाजवादी आंदोलनों के सकारात्मक पहलुओं से लैस होने की कोशिश भी की। भगत सिंह से लेकर गांधी तक किसी को भी वे अछूत नहीं मानते थे। संथाल विद्रोह, सिपाही विद्रोह और शोलापुर, तेलंगाना, तेभागा, नक्सलबाड़ी आदि आंदोलनों से लेकर सन् 1942 के 'भारत छोड़ो आंदोलन' तक **सभी ऐतिहासिक आंदोलनों से वे कुछ-न-कुछ सीखने का प्रयास करते रहे।**

इस तरह परिवर्तनकारी विचारक व कर्मयोगी के रूप मे वे एक मिसाल थे। समाजविज्ञानी के ऐसे बहुत सारे गुण उनमें थे।

लोहा खदान की कड़ी जमीन पर अर्थवाद, सुधारवाद, अवसरवाद, समझौतावाद और संशोधनवाद की खरपतवार ही पैदा होगी।

मजदूर अगर अपने छोटे-छोटे स्वार्थों से ऊपर न उठें और आत्म-केंद्रीयता को लाँघ न सकें तो वे अपनी ऐतिहासिक जिम्मेदारी नहीं निभा सकेंगे। नियोगी ने देखा कि इस देश का श्रमिक आंदोलन मजदूरों को सिर्फ दो-चार पैसे दिलाकर उन्हें स्वार्थी व दास मनोवृत्ति का बना रहा है। नियोगी ने मजदूरों को बताया कि **देश को प्यार करने का एक बड़ा मतलब — देश के मेहनतकश लोगों को प्यार करना है, देश की प्रकृति, सभ्यता एवं महान परम्पराओं को प्यार करना है।** मजदूरों ने समझा कि तमाम जनता के लिए शिक्षा, अन्न, वस्त्र, आवास-स्थल, स्वास्थ्य व काम के अधिकार के द्वारा ही देश की तरक्की हो सकती है। इसी प्रकार मजदूरों में वैज्ञानिक समाजवाद की चेतना लाने के लिए नियोगी ने उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण, स्वावलंबन व सही अंतर्राष्ट्रीय बोध लाने पर जोर दिया। इस विषय में नियोगी द्वारा अंग्रेजी साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष के नायक शहीद वीर नारायण सिंह का इतिहास ढूँढ़ निकालना महत्वपूर्ण रहा। छत्तीसगढ़ के मेहनतकशों के लिए वीर नारायण सिंह संघर्ष का प्रतीक और पहचान बन गये।

राजनैतिक प्रचार

आर्थिक संघर्ष के साथ-साथ मजदूरों में राजनैतिक संघर्ष में हिस्सा लेने की रुचि पैदा करने के लिए नियोगी ने राजनैतिक प्रचार शुरू किया। उन्होंने समझाया कि सही आजादी पाने और सही जनवाद लाने के संघर्ष में मजदूर वर्ग को ही अगुवा बनना पड़ेगा। मजदूर इस सच्चाई को समझने लगे कि गोरे अंग्रेज तो भारत छोड़कर चले गये लेकिन उन्हीं की शासन-नीति को अपनाकर काले अंग्रेज देश का शासन चलाने लगे। मजदूरों ने जाना कि हमारे देश का शासक वर्ग मुट्ठी भर पूँजीपतियों, साम्राज्यवादियों व सामंतवादियों के स्वार्थ की रक्षा कर रहा है। चुनावी राजनीति में जनता को गुमराह कर जन-विरोधी शक्तियाँ सत्ता हथिया रही हैं। इससे देश के मजदूर, किसान और मेहनतकश बदतर जिंदगी जीने पर मजबूर हैं। इस व्यवस्था के विरोध में नया लोकतांत्रिक भारत बनाने के लिए मजदूर वर्ग को संघर्ष में शामिल होना पड़ेगा। नियोगी ने समाजवाद व मजदूर राज की अवधारणा को मजदूरों के सामने रखा। **मजदूर वर्ग की नेतृत्वकारी भूमिका, मजदूर-किसान मैत्री एवं क्रांतिकारी वर्गों के एक संयुक्त मोर्चे की अवधारणा का प्रचार करके उन्होंने वैज्ञानिक सिद्धांत पर आधारित एक सही मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी बनाने की अनिवार्यता की ओर मजदूरों का ध्यान आकर्षित किया।** देशज परम्परा व वैज्ञानिक धारणा के समन्वय से ही उन्होंने राजनैतिक अवधारणाओं को मजदूरों में प्रतिष्ठित किया।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा बना

बड़ी-बड़ी आर्थिक माँगें पूरी करवा कर मजदूरों ने अपने जीवन-स्तर को सुधारा। साथ-साथ वे ट्रेड यूनियन के दायरे से बाहर निकल कर सामाजिक कार्यों से भी जुड़े। वास्तव में ट्रेड यूनियन वर्गमुखी व समाजमुखी बन गया।

काम के विस्तार के साथ ट्रेड यूनियन में भी श्रम विभाजन की प्रक्रिया शुरू हुई। श्रम विभाजन के अंतर्गत सन् 1978 में यूनियन ने 17 विभाग बनाये (विभागों की सूची पृ. 377 पर)। मजदूरों में विशेष कार्य करने की कुशलता बनी। इस तरह सी. एम. एस. एस. में श्रम

जमीन पर खड़े रहकर जिसने छुआ आसमान

पूर्णेन्दु बसु

शंकर गुहा नियोगी आज एक बहुचर्चित नाम है। शहादत के बाद उन्हें जानने-समझने की जिज्ञासा देश भर में पैदा हुई है। आज जबकि देश की जनता सामाजिक तथा राजनैतिक दिशाहीनता से ग्रस्त है, वहीं पूरे छत्तीसगढ़ क्षेत्र में एक नये आंदोलन की मशाल जलाकर नियोगी नयी आशा के प्रतीक बनकर सामने आये। आज उनके काम व विचार का प्रभाव देश के कोने-कोने में फैल रहा है।

असंगठित खदान श्रमिकों में काम करने की जरूरत

खदान मजदूरों के बीच काम शुरू करने के पीछे नियोगी की कुछ खास धारणाएँ काम कर रही थीं। आम धारणा यह है कि आधुनिक भारी उद्योगों के मजदूर स्वभावतः जागरूकता में आगे होते हैं, इसलिए उनको संगठित करना सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है। लेकिन भिलाई स्टील प्लांट में सात साल तक एक कुशल मजदूर व ट्रेड यूनियन संगठक के रूप में काम करने के दौरान नियोगी ने पाया कि बड़े उद्योगों के कुशल मजदूरों में आम तौर पर अर्थवाद हावी हो चुका है। अर्थवादी आंदोलन से मजदूरों में अवसरवाद व संघर्ष-विमुखता पनप रही है। दूसरी ओर खदान के असंगठित, अकुशल ठेका मजदूरों की वस्तुस्थिति वर्ग संघर्ष के लिए अनुकूल है। नियोगी का यह सोच व उसके अनुसार किये गये काम काफी हद तक सही साबित हुए हैं। दल्ली राजहरा के पिछड़े हुए खदान मजदूर आज वर्ग संघर्ष की पहली कतार में खड़े हैं। भिलाई, टेडेसरा, उरला, कुम्हारी आदि जगहों के अस्थायी ठेका मजदूर भी आज संघर्ष के मैदान में उतर चुके हैं। इन मजदूरों के मुकाबले भिलाई इस्पात संयंत्र या दूसरे बड़े आधुनिक उद्योगों के कुशल मजदूर आज पूँजीवाद-विरोधी संघर्ष में पीछे हैं।

छत्तीसगढ़ का सबसे बड़ा उद्योग भिलाई स्टील प्लांट लौह अयस्क के लिए पूर्ण रूप से दल्ली की खदानों पर निर्भर है। सार्वजनिक क्षेत्र होते हुए भी यहाँ के श्रमिकों का शोषण जारी है। इसलिए यहाँ शोषण के विरुद्ध संघर्ष विकसित होने की सम्भावना ज्यादा है। खदान श्रमिकों का गाँव के साथ भी गहरा रिश्ता है। परिवार का एक भाई अगर खदान मजदूर है तो दूसरा किसान। दूसरी ओर भिलाई इस्पात कारखाने के ज्यादातर कुशल मजदूर दूसरे प्रांतों से आये हैं, जिनका छत्तीसगढ़ के साथ कोई गहरा रिश्ता नहीं है। इसकी तुलना में खदान के ज्यादातर मजदूर छत्तीसगढ़ी हैं। छत्तीसगढ़ के होने के नाते उनका यहाँ से गहरा आत्मिक सम्बंध है। इसलिए उनको संगठित करना ज्यादा आसान है। आदिवासियों में सामूहिक जीवन-मूल्य भी उन्नत है।

---

[1] छमुमो की लोक साहित्य परिषद् द्वारा प्रकाशित (सितम्बर 1992) इसी शीर्षक की पुस्तिका के कुछ अंश भाषायी परिमार्जन के साथ। मूल लेख के वे अंश यहाँ शामिल नहीं किये गये हैं जिनकी विषयवस्तु इस पुस्तक में अन्यत्र प्रस्तुत हो चुकी है।

को नुकसान पहुँचाती हैं। जैसा कि दूसरे विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद तथाकथित जापानी युद्ध अपराधियों के मुकदमे में अपना प्रख्यात असहमति वाला फैसला सुनाते हुए जस्टिस पॉल ने कहा था, " इतिहास के फैसले बदलते रहते हैं। "

शराब-विरोधी अभियान, स्कूलों और अस्पताल की स्थापना के जरिये छत्तीसगढ़ आंदोलन ने विकास की एक अधिक सार्थक प्रक्रिया के लिए संघर्ष को सृजनात्मक ढंग से आगे बढ़ाया। जैसे-जैसे वह विकसित होती गयी, वैसे-वैसे स्थापित स्वार्थों को खतरा महसूस होने लगा और मध्य प्रदेश तथा पूरे भारत की प्रमुख राजनैतिक पार्टियों के कुछ खास तेवर दिखने लगे। उनका घोषित राजनैतिक कार्यक्रम कुछ भी हो और जाहिर तौर पर इन पार्टियों के बीच कितनी भी चौड़ी वैचारिक खाई क्यों न मौजूद हो, परंतु छत्तीसगढ़ आंदोलन के प्रति राज्य या केंद्र में कभी-न-कभी शासन करने वाली हर पार्टी का रुख कमोबेश समान था।[1] इन्होंने आंदोलन-विरोधी तत्वों से हाथ मिला लिया था या इनमें ऐसे तत्वों ने घुसपैठ कर ली थी। नियोगी ने ऐसी अवधारणाओं, विचारों और जन-आकाँक्षाओं को अभिव्यक्ति दी जिनसे हर स्थापित पार्टी को खतरा महसूस होने लगा। राजनैतिक व्यवस्था में आयी गिरावट का शायद ही कहीं और इतने जीवंत ढंग से पर्दाफाश हुआ है, जितना कि छत्तीसगढ़ में।

नियोगी हमें अपने-आप से यह सवाल करने को मजबूर कर देते हैं कि सभी प्रमुख राजनैतिक पार्टियाँ जनतांत्रिक व्यवस्था को तोड़ने का औजार मात्र बनकर क्यों रह गयी हैं। इन पार्टियों ने प्रतिद्वंद्वी पार्टी से आगे बढ़ने की ललक में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से दंगों को भड़काया है, साम्प्रदायिक कत्लेआम आयोजित करवाये हैं, वैसे आंदोलनों का निर्माण किया है और उनकी वित्तीय मदद की है जो सामाजिक ढाँचे को तोड़ने पर आमादा है, और राजनैतिक हत्याएँ करवायी हैं या परोक्ष रूप से उनका अनुमोदन किया है। और कितने नियोगियों को मरना होगा ताकि इन राजनैतिक पार्टियों, उनके पदाधिकारियों, उनके कोषदाताओं, उनके सहायक संगठनों और निजी सेनाओं को कानून के कटघरे में खड़ा किया जा सके ?

बहरहाल, भारत के विकास का अगला रास्ता जो भी हो, एक बात तो तय है कि नियोगी और छत्तीसगढ़ आंदोलन द्वारा उठाये गये मुद्दे इस शताब्दी के बाकी हिस्से और अगली शताब्दी के संघर्षों को प्रभावित करते रहेंगे। यकीनन, जैसे-जैसे मार्क्स व गांधी की तस्वीरें हमसे ओझल होती जा रही हैं, समय बीतने के साथ-साथ इन तस्वीरों का स्वरूप बदल जायेगा और उन्हें फिर से गढ़ा जायेगा। नियोगी की छवि ऐसी तमाम तस्वीरों में ज्यादा प्रमुख है, जो आने वाली सदी में भारत के संघर्षों पर अपना साया डालती रहेंगी।

□

(मूल अंग्रेजी से ध्रुव नारायण द्वारा अनूदित ; 'इकनॉमिक एंड पोलिटिकल वीकली', बम्बई, 30 नवम्बर 1991, से साभार।)

---

[1] इस कथन के प्रमाणस्वरूप 'नियोगी की जेल-यात्रा' शीर्षक की तालिका (पृ. 40-41) और 'लाल-हरे झंडे की शहादत की कहानी' शीर्षक की प्रस्तुति (पृ. 465-472) में विभिन्न पार्टियों की सरकारों की भूमिका देखिये।

अवधारणात्मक रूपों में मौजूद थे।

लौह अयस्क की खदानों और अन्य खदानों में ज्यादातर आस-पास के जिलों के आदिवासी ही काम करते हैं। इन मजदूरों को संगठित करके नियोगी ने आर्थिक प्रक्रिया के केंद्र पर हमला किया था और वे उन धारणाओं को पीछे छोड़ गये जो प्रायः बहस का प्रमुख मुद्दा रही हैं। जिन संगठनों का निर्माण हुआ उनसे न तो आदिवासी अछूते रह सके और न ही भिलाई स्टील प्लांट, क्योंकि ये खदानें उसी की बंधक थीं। थोड़ा समय जरूर लगा, लेकिन नियोगी के संगठन जल्दी ही लोगों के जीवन को प्रभावित करने वाले अन्य क्षेत्रों में भी हस्तक्षेप करने लगे। उनके हस्तक्षेप का दायरा जंगल से लेकर शराब ठेकेदारों की गतिविधियों तक फैला हुआ था।

हाल के दिनों में आंदोलन भिलाई की उन विभिन्न निजी औद्योगिक इकाइयों में भी फैल गया, जो स्टील प्लांट के साये में विकसित हुई थीं और जो कानून के तमाम कल्याणकारी प्रावधानों का खुलेआम उल्लंघन करती थीं। **छत्तीसगढ़ का आंदोलन मजदूरों व किसानों को मात्र साथ-साथ कतारबद्ध करके नहीं, परंतु एक समन्वित इकाई में एकजुट करते हुए, विकास की एक समग्र समझ विकसित करने में भी सफल रहा।** ये आंदोलन कहीं अलग-थलग रह कर उन्नत चेतना को प्रतिबिम्बित नहीं कर रहे थे। इन्होंने लोगों के भीतर संचित ऊर्जा के गर्भ से जन्म लिया और स्वभावतः औद्योगिक मजदूरों व किसानों के संघर्षों को अपने दायरे में समेट लिया।

छत्तीसगढ़ में प्रारम्भिक बुनियादी सांगठनिक इकाई और केंद्र ट्रेड यूनियन था। उसने तेजी से फैलते हुए दूसरे आंदोलनों व ट्रेड यूनियनों को अपने भीतर समाहित कर लिया। **छत्तीसगढ़ आंदोलन ने भारत में ट्रेड यूनियन के परम्परागत साँचे को ही छिन्न-भिन्न कर दिया।** क्षीणकाय और अहम्-आधारित ट्रेड यूनियनों की प्रासंगिकता व कारगरता समाप्त हो चुकी है। उनकी सीमाएँ स्पष्ट हैं। **ऐसी ट्रेड यूनियनें जो अपने-आपको पूरे समाज की समस्याओं से काट लेती हैं, जल्दी ही समाज का समर्थन भी खो देती हैं।** मिसाल के तौर पर ट्रेड यूनियन आंदोलन का एक हिस्सा यह नहीं समझ सका कि क्यों अस्सी के दशक की शुरूआत में दिल्ली से 40 किलोमीटर से भी कम दूरी पर मोदीनगर की एक बड़ी बुनाई और कताई मिल के मजदूरों ने जब 100 दिनों तक हड़ताल की, तब संचार माध्यमों ने उसकी ओर न के बराबर ध्यान दिया और पूरे समाज में हमदर्दी की शायद ही कोई सुगबुगाहट सुनायी पड़ी। लेकिन जब मात्र सात साल बाद मोदीनगर के पास मेरठ (मलियाना) में मुसलमानों का राज्य-समर्थित कत्लेआम हुआ तो इन ट्रेड यूनियनों ने भी कोई कारगर हस्तक्षेप नहीं किया।[1] दरअसल, उसी दौरान जब एक प्रमुख राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन के एक वरिष्ठ पदाधिकारी से सम्पर्क किया गया तो उन्होंने कहा कि ट्रेड यूनियन कार्यकर्ता अगर ऐसे मुद्दे उठाने लगेंगे तो उन्हें ट्रेड यूनियन गतिविधियों को बंद कर देना पड़ेगा। यह वही ट्रेड यूनियन थी जो मोदीनगर की हड़ताल से सम्बंधित थी। वह इन दोनों 'चुप्पियों' के बीच के अंतर्सम्बंधों को नहीं देख सकी। एक अन्य राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन के एक वरिष्ठ नेता ने खुलेआम स्वीकार किया कि उनका संगठन असहाय है, क्योंकि भारत का मजदूर वर्ग अभी भी 'आधा-अधूरा मजदूर वर्ग' है, यानी अभी तक उसमें इतनी चेतना विकसित नहीं हुई कि ऐसे

---

[1] इसके विपरीत मेरठ से एक हजार कि. मी. से भी अधिक दूरी से छमुमो की ओर से नियोगी ने आकर मलियाना हत्याकांड के विरोध में मार्च 1989 में आयोजित दिल्ली-मेरठ पदयात्रा में भाग लिया।

व जुझारूपन से कारगर तरीके से निपटने की नीति तय कर पाने में असफलता से पनपी है। इसे उत्तर में मिर्जापुर से लेकर दक्षिण में चंद्रपुर, गढ़चिरोली, आदिलाबाद और कोरापुट तक की समस्त 'आदिवासी पट्टी' के तेजी से किये जाने वाले औद्योगीकरण की विशाल योजना के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए। नियोगी की मौत इस लड़ाई में शहादतों की लम्बी शृंखला में न तो पहली थी और न ही अंतिम होगी। बहरहाल, उनकी मौत के रूप में हमने काफी बड़ी कीमत चुकायी है।

इस मिथक को तोड़ना आवश्यक है कि नियोगी के पास किसी किस्म की दैवी शक्ति थी या वे सिद्धांतों व नियमों से परे थे और इस जटिल राजनैतिक संगठन को किसी तिलस्म के जोर से चला रहे थे। नियोगी ने काफी कुछ पढ़ा था और पते की बात यह है कि जो कुछ पढ़ा था उस पर गहराई से चिंतन-मनन किया था। उनकी राजनैतिक समझ असनातनी (तयशुदा धारणाओं से हटकर) हो सकती है, लेकिन वह कोई आसमान से नहीं टपकी थी। यह सच है कि एक राजनैतिक कार्यकर्त्ता के रूप में, जिसने इतने सारे सालों तक इतने व्यापक आंदोलन की अगुवाई की, उन्होंने उसकी तुलना में लिखा बहुत ही कम। इसकी वजह सिर्फ समय की कमी नहीं थी। **उनका प्रमुख सरोकार अधिकांशतया निरक्षर लोगों का राजनैतिक शिक्षण था। इसके साथ ही, उनका मत था कि राजनैतिक शिक्षण के माध्यम के रूप में 'सैद्धांतिक नुसखेबाजी' की बनिस्पत आंदोलन व संघर्ष के ठोस अनुभव ज्यादा कारगर होते हैं।** इसलिए जो लोग उनकी अंतर्दृष्टि का मूल्यांकन करना चाहते हैं, उन्हें उनके काम पर गौर करना चाहिए।

नियोगी का काम महत्वपूर्ण है, क्योंकि एक तरफ तो वह छत्तीसगढ़ के मजदूर वर्ग व खेतिहरों के सबसे उत्पीड़ित तबकों की समस्याओं के साथ सीधा और जीवंत रिश्ता बनाकर विकसित हुआ है, और **दूसरी तरफ नियोगी इस प्रक्रिया में उनके ठीक सामने (और उनके ही सीमित संसाधनों के बल पर) वैकल्पिक समाज का मॉडल प्रस्तुत करने में सफल हुए।** इस मॉडल का दायरा इस मायने में सार्वभौमिक था कि उसनें सामुदायिक जीवन के लगभग तमाम पहलुओं को अपने भीतर समेट लिया था। जिन सुधारों की ओर उन्होंने संगठन की ऊर्जा को केंद्रित किया — मसलन अस्पताल, तकनीकी संस्थान, शराबबंदी अभियान, सांस्कृतिक अभियान आदि — वे सब काल्पनिक नहीं थे। ये अपने-आप में अंतिम पड़ाव भी नहीं थे। न ही वे महज प्रचारात्मक कदम थे। बल्कि, समग्रता में, **इन्होंने शैक्षिक संस्थानों का काम करते हुए एक वैकल्पिक संस्कृति ('प्रति-संस्कृति') पेश की,** जिससे समाज के आर्थिक व राजनैतिक जीवन में मजदूर वर्ग की प्रत्यक्ष भागीदारी के जरिये मजदूरों को अपनी जिंदगी के ऊपर अपना नियंत्रण स्थापित करने के लिए प्रशिक्षित किया जा सके और इस प्रकार उनको क्रांति के बाद की परिस्थिति का आभास मिल सके।

तमाम महान कलाकारों की तरह नियोगी का सोच भी उपलब्ध सामग्री से सीमित हुआ था और मुक्त भी। दल्ली राजहरा ट्रेड यूनियन का निर्माण छत्तीसगढ़ी खदान मजदूरों ने इंटक और एटक की ट्रेड यूनियन नौकरशाही द्वारा किये जा रहे सांस्कृतिक उत्पीड़न के खिलाफ स्वतः स्फूर्त विद्रोह के जरिये किया था। ये लोग, जिनकी संख्या लगभग 10,000 थी, न सिर्फ साथ-साथ काम करते थे, बल्कि कच्चे घरों से बनी बस्तियों में साथ-साथ रहते भी थे। इस प्रकार बाद में किये गये सामाजिक प्रयोगों के लिए ये परिस्थितियाँ लगभग पूरी तरह परिपक्व थीं। भिलाई स्टील

प्रतिस्पर्धा करनी पड़ती है।" भिलाई के निजी कारखानों के मालिकों के संगठन — भिलाई इंडस्ट्रीज एसोसिएशन — के प्रवक्ता भी यह निःसंकोच कहते हैं, "मजदूरों में असंतोष है, तो इसके लिए कारखाना मालिक जिम्मेदार नहीं है। मजदूरों की गरीबी, गैर-बराबरी दूर करने की जिम्मेदारी कारखाना मालिकों की नहीं है।"

भिलाई स्टील प्लांट के मजदूरों और उनके संगठनों की प्रतिक्रियाएँ भी कोई भिन्न नहीं हैं। भिलाई स्टील प्लांट में सन् 1960 से मान्यता-प्राप्त ट्रेड यूनियन इंटक के महासचिव कहते हैं, "भिलाई में दो प्रकार के मजदूर हैं। सार्वजनिक क्षेत्र के मजदूरों में कोई अशांति, आंदोलन नहीं है। यहाँ नियोगी की मौत के बाद भी कोई हलचल नहीं हुई है। बी. एस. पी. मजदूरों को 2,000 रुपये से ज्यादा न्यूनतम मजदूरी और आवास, शिक्षा, चिकित्सा सुविधा, एल. टी. सी, स्कूटर भत्ता, आवास, ऋण आदि कई सुविधाएँ हासिल हैं।"

नियोगी खुद इस स्थिति की घुमन महसूस करते हैं और हत्या से पूर्व एक सार्वजनिक सभा में कहते हैं, "मेरे दो बेटे हैं। मेरा एक बेटा कारखाने में काम करने जाता है, तो वे उसके समस्त अधिकारों को छीनकर अमानवीय शोषण करते हैं। जब वह उस शोषण के खिलाफ सीना तानकर खड़ा होता है, यूनियन बनाकर इंकलाब का नारा लगाता है, अपने हक की माँग करता है, तब वे मेरे दूसरे बेरोजगार बेटे के हाथ में चाकू थमा देते हैं और कहते हैं, 'जा अपने भाई पर चाकू चलाकर आ जा'।" पर इन सालों में छत्तीसगढ़ के औद्योगीकरण और औद्योगिक मजदूर आंदोलन से मजदूरों की एक ऐसी श्रेणी तैयार हुई है जो औद्योगिक ढाँचे के तहत जीती और काम करती है, पर वह अपनी बेहतरी और विकास को नहीं, बल्कि उद्योगों के शोषणमूलक आक्रोश और संगठन-संघर्ष को बुनियादी मुद्दा मानती है। यह मजदूर वर्ग रोजगार चाहता है, पर रोजगार की स्थितियाँ बदलना भी चाहता है। मजदूरों की पहली पीढ़ी को जो स्थितियाँ स्वीकार्य थीं, वे अब इस दूसरी-तीसरी पीढ़ी को स्वीकार्य नहीं हैं।

(5)

नियोगी और छमुमो के नेतृत्व में, भिलाई के हजारों-हजार असंगठित ठेका मजदूरों के संगठन और संघर्ष की शुरूआत औद्योगीकरण और औद्योगिक मजदूर आंदोलन की इन विभिन्न जटिल क्रिया-प्रतिक्रिया की अभिव्यक्ति है। पर उल्लेखनीय यह है कि नियोगी इन सबके बीच मजदूरों के एक टिकाऊ और सामूहिक विकल्प का सपना देख रहे थे। उन्होंने रायपुर के 'नव भास्कर' में 22-23 जून 1989 को प्रकाशित अपने लेख में कहा था, "यह भौतिक विज्ञान का सिद्धांत है कि एक बड़ी ताकत लगाये बगैर एक स्थिति से दूसरी स्थिति में परिवर्तन नहीं हो सकता है। इस सिद्धांत के अनुसार हमें वर्तमान देशद्रोही आधुनिकीकरण को उखाड़ फेंकना है और इसकी जगह देशप्रेमी आधुनिकीकरण स्थापित करना है।" ट्रेड यूनियन ढाँचे में आधुनिकीकरण की वैकल्पिक परिकल्पना पर अमल और इस रास्ते छत्तीसगढ़ के सामाजिक-राजनैतिक पुनर्जागरण के एक नये दौर की शुरूआत के दीर्घकालीन उद्देश्यों के साथ नियोगी ने ठेका मजदूरों की बुनियादी माँगों की लड़ाई शुरू की थी। नियोगी की वर्तमान लड़ाई में यह संदेश भी निहित था कि मजदूर वर्ग द्वारा नयी आर्थिक नीतियों के सशक्त विरोध के लिए विशाल असंगठित मजदूर वर्ग के संगठन और संघर्ष को जिम्मेदारी स्वीकार करनी होगी।

नहीं पड़ता है कि केंद्र में कांग्रेस और राज्य में भारतीय जनता पार्टी का शासन है। कांग्रेस-शासित केंद्र की आर्थिक नीतियाँ, भाजपा-शासित राज्य सरकार की सहमति और भागीदारी से सुदूर छत्तीसगढ़ अंचल में परवान चढ़ती हैं। इसका उदाहरण है दुर्ग-भिलाई जिला उद्योग केंद्र से हासिल यह जानकारी कि सरकार की नयी आर्थिक नीतियों के अनुसार छत्तीसगढ़ अंचल में अब तीसरे चरण का विशाल औद्योगीकरण प्रस्तावित है। इसके पहले आजादी-पूर्व और आजादी-बाद के दौर में छत्तीसगढ़ का व्यापक औद्योगीकरण हुआ था। शासक वर्ग के अखिल भारतीय स्वरूप के विकास की ही अभिव्यक्ति है कि दिल्ली में देश के प्रधान मंत्री, वित्त मंत्री और श्रम मंत्री मजदूरों की कम उत्पादकता और मजदूर आंदोलन पर चिंता जाहिर करते हैं और दूसरी ओर सुदूर रायपुर में कमिश्नर भी यही दोहराते लगते हैं, " बहुत सारे उद्योगपति छत्तीसगढ़ आना चाहते हैं। लेकिन मजदूर आंदोलन रहेगा, तो वे कैसे आयेंगे ! छत्तीसगढ़ के विकास का सवाल है। "

यह उल्लेखनीय है कि समाज की विभिन्न संकीर्ण, जन-विरोधी प्रवृत्तियों की एकजुटता किसी राज्य या क्षेत्र-विशेष में छोटी-छोटी तानाशाहियों / जारशाहियों की शक्ल अख्तियार कर रही है। केंद्र से उभारी जा रही आर्थिक नीतियों की संकीर्णता राज्य-विशेष के समाज, राजनीति व अर्थव्यवस्था में निहित संकीर्णताओं को खास-खास खतरनाक आयाम दे रही है। यदि वामपंथी-शासित पश्चिम बंगाल में मजदूर आंदोलन में अवनति, कारखाना-बंदी, बेरोजगारी तेज हो रही है, तो भाजपा-शासित मध्य प्रदेश में सत्ता का साम्प्रदायिक चरित्र फासीवादी तत्त्व का रूप ले रहा है जिसमें ' हिन्दू ' पहचान की राजनीति के लिए भाषायी, जातीय, वर्गीय पहचान से जुड़े सभी संगठनों-संघर्षों, विशेषकर समाज के शोषित तबके के आंदोलनों का दमन हो रहा है। मजदूर आंदोलन के संदर्भ में छत्तीसगढ़ क्षेत्र में एक प्रकार की जोरशाही चल रही है। नियोगी की हत्या और पुलिस गोलीबारी तो चर्चित हो गये, पर इस दौर में मजदूर आंदोलन के क्रम में छत्तीसगढ़ अंचल में पुलिस विभाग के रिकार्ड के अनुसार 2,000 से ज्यादा गिरफ्तारियाँ हुई हैं, मजदूरों के प्रदर्शन-जुलूस और अन्य मजदूर नेताओं पर पुलिस और असामाजिक तत्वों के हिंसक हमले होते रहे हैं, 4,000 से ज्यादा मजदूर काम से निकाले गये हैं। कुछ समय पहले रायपुर जिले के ही अभनपुर में असंगठित क्षेत्र की कागज और विस्फोटक पदार्थ बनाने वाली तीन मिलों के मजदूरों के आंदोलन[1] पर पुलिस गोलीबारी में एक मजदूर-कार्यकर्त्ता मारा गया, कई घायल हुए, मजदूर नेता गिरफ्तार हुए और उन्हें भी जान से मारने, 'जिलाबदर' करने की धमकी मिली। ये तथ्य क्या बताते हैं ?

हमारी औद्योगीकरण और औद्योगिक विकास की नीतियों में ही मजदूरों पर निरंतर हिंसा और मजदूर आंदोलनों का दमन निहित है। इस शताब्दी की शुरूआत में ही छत्तीसगढ़

[1] ट्रेड यूनियन सेंटर ऑफ़ इंडिया (टी. यू. सी. आई.) के नेतृत्व में चल रहे मजदूर आंदोलन के सिलसिले में उनके नेता श्री एम. कोशी फिलिप 30 मई 1990 को गिरफ्तार किये गये और 31 मई 1990 को अभनपुर (जिला रायपुर) में उनकी रिहाई की माँग कर रहे शांतिपूर्ण प्रदर्शन पर हुई पुलिस गोलीबारी में एक मजदूर-कार्यकर्ता श्री रमेश मरकाम शहीद हुए।

नयी आर्थिक नीति से जूझता छत्तीसगढ़ आंदोलन

मुकुल

वास्तव में भिलाई का मजदूर आंदोलन, मजदूर नेता शंकर गुहा नियोगी की हत्या और भिलाई का पुलिस गोली कांड देश की औद्योगिक और आर्थिक नीतियों के एक नये दौर की अभिव्यक्ति है। भिलाई की घटनाएँ अलग-अलग संदर्भों में देश के अलग-अलग हिस्सों में दोहरायी जा रही हैं। यह आशंका भी है कि भविष्य में देश के कई हिस्से 'भिलाई' बनेंगे। इन स्थितियों में स्पष्ट है कि देश के लोकतांत्रिक आंदोलन का भविष्य इन आंदोलनों और घटनाओं के भविष्य के साथ कई प्रकार से जुड़ गया है।

नियोगी की हत्या और आंदोलनकारी मजदूरों पर पुलिस गोलीबारी उस दौर में हुई है जब विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के साथ में भारत सरकार की आर्थिक नीतियाँ आक्रामक, सबसे ज्यादा व्यापक और विशेषकर संगठित औद्योगिक मजदूर वर्ग और उनके संगठनों की विरोधी बन गयी हैं। औद्योगिक मजदूरों और मजदूर संगठनों ने अपनी लम्बी लड़ाइयों के बाद जो वैधानिक और संस्थानिक सुरक्षाएँ हासिल की हैं, उन पर गम्भीर हमला हो रहा है और असंगठित मजदूर अनियंत्रित व मुक्त किये जा रहे औद्योगिक बाजार में शोषण-दमन की ताकतों की मर्जी पर छोड़े जा रहे हैं। भिलाई में यद्यपि सतह पर तो ठेका मजदूरों की कुछ बुनियादी माँगों जैसे जीने लायक वेतन, स्थायी सेवा, ओवरटाइम, भविष्य निधि आदि के समर्थन में लड़ाई चल रही है, लेकिन यह सरकार की आर्थिक नीतियों, शासक वर्ग के सामाजिक-राजनैतिक संतुलन और भाजपा की राज्य सरकार के लिए एक अखरनेवाली चुनौती भी प्रस्तुत करता है। नियोगी, छमुमो और इससे सम्बंधित विभिन्न संगठनों के संदर्भ में यह खतरा और स्पष्ट है क्योंकि ये संगठन पिछले 15 सालों में मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ के विभिन्न हिस्सों में मजदूरों के सफल विकल्पों के प्रतीक बन गये हैं। ये विकल्प सांगठनिक, वैचारिक और राजनैतिक रूप से टिकाऊ, ऊर्जावान और वजनदार साबित हुए हैं। आज वह दौर है जब मजदूरों द्वारा विकल्प की राजनीति की गुंजाइश और उसके प्रति सहिष्णुता समाप्त हो रही है। और इस सबकी जगह बाजार, व्यावसायिकता, उपभोग और उदारतावाद का पूंजीवादी दर्शन और व्यवहार जोर-जबर्दस्ती के साथ लागू किया जा रहा है।

नियोगी की हत्या और पुलिस गोलीबारी तब हुई हैं जब कांग्रेस के नेतृत्व में केंद्र सरकार की आर्थिक नीतियों को भाजपा-शासित राज्य सरकारों का सक्रिय समर्थन मिल रहा है। केंद्र की आर्थिक नीतियों की उदारता और स्वेच्छाचारिता के परिणामस्वरूप मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ क्षेत्र में औद्योगीकरण का नया, विशाल चरण शुरू हुआ है। देश के कई बड़े औद्योगिक घराने मध्य प्रदेश के औद्योगिक घरानों या छत्तीसगढ़ के उद्योगपति-ठेकेदार-नौकरशाही गठबंधन के साथ मिल-जुलकर इस नये चरण का नेतृत्व कर रहे हैं। और यह पृष्ठभूमि भी भिलाई के मजदूर आंदोलन की चुनौती को बेहद व्यापक और बलिदान भरा बना रही है।

जीवन जीने के लिए नितांत आवश्यक लक्ष्य – ' उचित श्रम मूल्य ' – यही नजरिया आगे बढ़कर रोटी-कपड़ा-मकान-पानी के लिए जल-जंगल-जमीन की रक्षा और संवर्धन की ओर फैला ; इस प्रकार छमुमो के काम में पर्यावरणीय मुद्दे भी जुड़े। छमुमो ने उस क्षेत्र में कहीं विनाशकारी बाँध का विरोध किया, तो कहीं सरकारी प्रभाव से दूर लोगों में सादगी की जीवन प्रणाली को समृद्ध करने की बात की और कहीं छत्तीसगढ़ के जीवनाधारी जंगल व किसानों की जमीन को, उपभोग की वस्तु न मानकर, जीवनयापन के लिए अनिवार्य सहारा मानते हुए सँभालने व बचाने की बात की।

खनिज सम्पत्ति की लूटमार के रूप में फैलती खदानों और बढ़ते कारखानों के क्षेत्र में उन्हीं पर पलते मजदूरों के संगठन बनाने और चलाने वाले नेताओं से पर्यावरण संरक्षण की बात क्या परस्पर विरोधी नहीं होगी ? इस सवाल को समझने की जरूरत है। लगता है, नियोगी भी खुली चर्चा में इस सवाल के महत्व को नहीं नकारते। उपर्युक्त सामाजिक कारक परस्पर विरोधी रूप में उभरते हैं, हालाँकि वे वास्तव में आपस में गुथे हुए हैं। नियोगी की महारत रही है इन कारकों को एक दूसरे के साथ जोड़कर समग्र रूप में देखने की। मैं मानती हूँ कि छमुमो का लाल-हरा झंडा इस सम्बंध में उनके सोच का प्रतीक है। यह चिंतन उन्हें ' नर्मदा बचाओ आंदोलन ' के करीब लाता रहा और न केवल मजदूरी की , वरन् उनकी विकास की अवधारणा की भी नींव डालता रहा। मैं मानती हूँ कि आज के समाज में आर्थिक-सामाजिक प्रतिष्ठा, हक और समता के लिए लाभों का बँटवारा भी न्यायपूर्ण हो और उत्पादन तथा जीवन का पर्यावरणीय आधार निरंतर बना रहे। पर्यावरण के उपयोग के उद्देश्य और प्रक्रिया भी निरंतरता या टिकाऊपन (' सस्टेनेबिलिटी ') के आधार पर तय और नियोजित होना जरूरी है। यही पूरक विचार इन दोनों रंगों का मेल दिखाते हैं।

मेरा यह कदापि दावा नहीं है कि मैं नियोगी के व्यक्तित्व को या उनकी विचारधारा को पूर्णरूप से या नजदीकी से जानती हूँ। किन्तु ' नर्मदा बचाओ आंदोलन ' ने आंदोलन की व्यापक भूमिका के संदर्भ में इतने कम समय में संघर्षों की शुरूआत से ही उनका जो समर्थन पाया है वह कम महत्व की बात नहीं है। और भूलने की तो है ही नहीं। निमाड़ (म. प्र.) में हुई सरकारी दमन की कोई छोटी-सी घटना हो या दिसम्बर 1990 से जनवरी 1991 तक की लम्बी, सशक्त ' संघर्ष यात्रा ' हो, छमुमो के मजदूर कार्यकर्त्ता नियोगी का संदेश-समर्थन लेकर सदा पहुँचते रहे या जरूरत के अनुसार छमुमो द्वारा समर्थन में वक्तव्य से लेकर क्षेत्र में प्रतिरोध कार्यक्रम तक हर कदम उठाते रहे। समानधर्मी आंदोलन में सहजता से बनता गया एक सुंदर, पूरक, प्रभावी, गहरा और कई व्यापक सम्भावनाओं वाला रिश्ता। ' नर्मदा बचाओ आंदोलन ' के हम सभी साथियों ने छमुमो के साथ यह रिश्ता महसूस किया।

विशेषतः नियोगी के अंतिम दिनों में, भौगोलिक और वैचारिक दृष्टि से फैलता हुआ उनका संघर्ष और सोच न केवल छत्तीसगढ़ की मुक्ति की उनकी परिभाषा तक, बल्कि भिलाई औद्योगिक क्षेत्र के सम्बंध में ' सही विकास क्या है ? ', इस मुद्दे को लेकर उठाये गये सवालों तक पहुँचा था। उनका यह लिखित विश्लेषण [1], छत्तीसगढ़ क्षेत्र की प्राकृतिक सम्पदा पर पीढ़ियों

[1] देखिये ' हमारा पर्यावरण ' शीर्षक का नियोगी द्वारा लिखित अंतिम लेख (पृ. 223-236)।

दूसरों को खतरे में डालकर प्रयोग नहीं करते थे ; बल्कि हर तरह की अनिश्चितता का सामना करने की और जोखिम उठाने की जबर्दस्त हिम्मत उनमें थी। उनकी शहादत चरित्र की इस ताकत का सबसे ज्वलंत सबूत है।

छत्तीसगढ़ आंदोलन का प्रयोग पूरे देश के मेहनतकश आंदोलन के लिए और इस तरह वर्तमान में देश में चल रहे 'जन विज्ञान' आंदोलन के लिए बहुत बड़ी सीख देता है। हम मध्यमवर्गीय कार्यकर्ता व्यवहार से कटे हुए अपने किताबी ज्ञान को ज्ञान की पराकाष्ठा मानते हैं और ईमानदारी से यह सोचते हैं कि अगर जनता यह ज्ञान सीख ले तो सारी समस्याएँ हल हो जायेंगी। अपने इस किताबी ज्ञान के प्रचार के लिए भी अक्सर हम सरकारी पैसे के मोहताज रहते हैं। लेकिन ज्ञान का सबसे बड़ा स्रोत किताबें नहीं, जिंदगी होती है ; किताबी ज्ञान जिंदा ज्ञान की निर्जीव झलक मात्र होता है। तार्किकता का असली मतलब प्राधिकार (या सत्ता) से जवाब-तलब करने की क्षमता है ; खासकर ऐसा ताकतवर प्राधिकार जो हमारा आर्थिक जीवन नियंत्रित करता हो। छत्तीसगढ़ आंदोलन ने अनेक महत्वपूर्ण सामाजिक प्रयोग किये हैं और अपनी बहादुरी से यह सिद्ध कर दिया है कि प्राधिकार से जवाब-तलब करने का रास्ता खतरनाक और पेचीदा है। उत्पादन के तर्कसंगत संयोजन के आर्थिक आंदोलन से लेकर शराबबंदी और पर्यावरण के सामाजिक आंदोलन तक उन्होंने व्यवस्था की जन-विरोधी गैर-तार्किकता का विरोध किया और जनतांत्रिक कही जाने वाली इस व्यवस्था से टकराव और दमन का सामना उन्हें बराबर करना पड़ा। इसी क्रम में अर्द्ध-मशीनीकरण की लड़ाई के दौरान छमुमो ने यह सिद्धांत लागू कर दिखाया कि आजीविका सुरक्षित रखते हुए भी विकास किया जा सकता है। जन साधारण की खुशहाली पर आधारित विकास की अवधारणा जन विज्ञान आंदोलन का एक महत्वपूर्ण सवाल है।

छत्तीसगढ़ के इस लम्बे, पेचीदा और कुर्बानी भरे आंदोलन से हम जन विज्ञान कर्मियों को यह सीख लेनी चाहिए कि विविध प्रकार के आंदोलनों को जोड़कर ही कोई सामाजिक ताकत बनती है। नयी तार्किकता बनाने की सामाजिक प्रक्रिया से हम तभी जुड़ सकते हैं, जब हम औपचारिक ज्ञान के वैचारिक आंदोलन को सामाजिक आंदोलन के साथ जोड़ें। आमतौर से अलग-अलग जन विज्ञान संगठनों ने इन दो ध्रुवों में से एक ही पर जोर दिया है और इसलिए वे असफल रहे हैं। छत्तीसगढ़ आंदोलन ने भविष्य का सपना साकार करने के लिए जो कुर्बानियाँ दी हैं, वे इन अवधारणाओं को व्यवहार से जोड़ने की एक अनूठी मिसाल हैं।

❑

(जुलाई 1992 ; मूल लेख का संक्षिप्त स्वरूप।)

विश्वविद्यालयों में शायद सख्त कमी थी।

लेकिन स्वास्थ्य के मामले में सी. एम. एस. एस. को डाक्टरों का सहयोग मिला। यानी कि जानकार व वैज्ञानिक जनता की सेवा करने के लिए सामने आये। परंतु उस सेवा के दायरे में डाक्टरों के सोच और लोगों की सूझबूझ में थोड़ा फर्क था। डाक्टर चाहते थे कि ऐसा स्वास्थ्य कार्यक्रम लिया जाये जिसमें प्रशिक्षित स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता घर-घर जा सकें और बीमारी को जड़ से दूर करें। ऐसे कार्यक्रम में दवाइयों पर कम जोर होता और सफाई तथा टीकाकरण इत्यादि को ज्यादा अहमियत दी जाती। परंतु मजदूरों की इच्छा थी कि एक बढ़िया अस्पताल बने जिसमें केवल सी. एम. एस. एस. के मजदूर ही नहीं बल्कि दूर-दराज से उनके किसान भाई-बहन भी आ सकें। इस वैचारिक टक्कर में जीत मजदूरों की हुई। और आज शहीद अस्पताल के माध्यम से सफाई वगैरह की बात तो उठायी ही जा रही है, साथ में अस्पताल स्वयं आंदोलन का एक केंद्र भी बन गया है। शायद जन विज्ञान का यह एक और पहलू कहा जा सकता है।

'जन विज्ञान' में मेहनत करने वाले साथियों के सोचने का एक तरीका है। **यह तरीका दुनिया को छोटे-छोटे टुकड़ों में बाँट कर उनका अध्ययन नहीं करता है। जनता की सूझ-बूझ में हर वह चीज शामिल है जिसके बारे में वे जानते हैं।** इसलिए इस तरीके का आदर करते हुए नियोगीजी ने जानकारी बढ़ाने के उपाय ढूँढ़ने की कोशिश की। इसकी मिसाल अर्द्ध-मशीनीकरण के किस्से में तो है ही जहाँ 'मैन्युअल' और 'मशीनीकृत' खदानों के बीच के तरीके को ढूँढ़ कर लोगों के सामने रखा गया। आखिरकार छमुमो के हमदर्दों को ही नहीं, बल्कि इस्पात कारखाने के प्रबंधकों को भी उसे स्वीकारना पड़ा। परंतु इस किस्से में भी एक खामी रही। वह यह थी कि सी. एम. एस. एस. ने अपना सोच उन तथ्यों और आँकड़ों के आधार पर रखा, जो उन्हें प्रबंधकों से मिले। **क्या जन विज्ञान के दायरे में यह बात भी आती है कि जनता खुद अपने आँकड़े इकट्ठा करे ?**

इस बात की कोशिश छमुमो के दूसरे कामों में झलकती है। राजनांदगाँव में बी. एन. सी. मिल्स के आंदोलन के दौरान मजदूरों के हितैषियों ने एक कोशिश की थी कि मिल के अंदर की हालत को जाँचा जाये, ताकि तापमान, शोर, और दुर्घटनाओं का एक जायजा मिल सके। उसके बाद भी औद्योगिक सुरक्षा के मसले को लेकर यही कोशिश कई बार हुई है। हाल ही में सुरक्षा-सम्बंधी कार्यशाला का आयोजन रायपुर में मई 1992 में हुआ था जिसमें उरला, टेडेसरा, भिलाई, कुम्हारी इत्यादि कई जगहों से छमुमो के मजदूर साथी आये थे। कार्यशाला में यह तय हुआ था कि प्रदूषण और खतरों को नापने के लिए मोर्चे की तरफ से एक प्रयोगशाला खोली जायेगी, जिसके द्वारा मूल आँकड़े भी इकट्ठे किये जा सकेंगे।

नियोगीजी की हत्या के बाद भी उनकी मदद से बनायी हुई तस्वीर जिंदा है। आज भी छमुमो के विभिन्न साथी अपने आंदोलन के साथ-साथ ज्ञान और विज्ञान की बातें उठाये जा रहे हैं। नये समाज को बनाने का एक हिस्सा नये सोच को स्थापित करने के साथ नजदीकी से जुड़ा है। **यह नया सोच, यह जन विज्ञान, जन की सामूहिक सूझबूझ पर टिका है।** तस्वीर केवल नियोगीजी की नहीं थी, उसमें तमाम लोगों (बच्चों, महिलाओं, और पुरुषों) ने अपने-अपने रंग भरे हैं। इसलिए शायद तस्वीर हम सब की ही है।

❑

(अगस्त 1992)

व्यवहार की दिशा सिद्धांत की कसौटी पर सही साबित हो रही हो तो उस सफलता को सैद्धांतिक सफलता ही कहा जायेगा।

छत्तीसगढ़ में नियोगी के आंदोलन की शुरूआत के वक्त वहाँ तमाम स्थापित यूनियनें थीं। लेकिन नियोगी ने अपने आंदोलन में ऐसा क्या किया कि वहाँ की तमाम स्थापित और अखिल भारतीय यूनियनें ध्वस्त हो गयीं। यही नहीं, अपनी हताशा में वे नियोगी के साथ शत्रुता-मूलक व्यवहार भी करने लगीं।

नियोगी के आंदोलन का मूल्यांकन मार्क्सवादी, लेनिनवादी, माओवादी शब्दावली से भरे-पूरे लोग किस तरह से करते हैं, यह तो उनका काम है। लेकिन इस बात से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता कि उन्होंने लम्बे समय तक अपने आंदोलन को बिना किसी विपरीत समझौते के न केवल टिकाये रखा बल्कि उसका विस्तार भी किया।

नियोगी का मानना रहा है कि विभिन्न राष्ट्रीयताओं एवं विभिन्न तबकों वाले किसी देशव्यापी मोर्चे की सम्भावना फिलहाल नहीं है। वह नदियों का जाल बिछाने और गंगा के स्वाभाविक निर्माण में विश्वास करते थे। उनका मानना था कि विभिन्न इलाकों में द्वंद्वात्मक भौतिकवादी सिद्धांत पर आधारित संगठनों का फैलाव होना चाहिए। सर्वहारा क्रांति के लिए उनके पास एक लम्बी प्रक्रिया थी।

वह चाहते थे कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद और माओ के सिद्धांतों के मूल सूत्रों को अमल में लाया जाये। लेकिन उसे सोवियत संघ या चीन के संस्करण के रूप में नहीं। वह अपने छत्तीसगढ़ संस्करण पर जोर देते थे क्योंकि यहाँ के अनुकूल यही है। नदियों का जाल बिछाने के दूरगामी लक्ष्य का ही यह उदाहरण था कि उन्होंने झारखंड मुक्ति मोर्चा, उत्तराखंड संघर्ष वाहिनी आदि के साथ बराबर अपना सम्बंध बनाये रखा। इसीलिए उन्हें क्षेत्रीयतावादी कतई नहीं कहा जा सकता।

इसी प्रक्रिया के तहत उन्होंने विभिन्न संगठनों के मोर्चे 'इंडियन पीपुल्स फ्रंट' के सम्मेलन में भी भाग लिया लेकिन उन्हें तत्काल इस बात के संकेत मिलने लगे कि एक ढीले-ढाले मोर्चे के बजाय इसे पार्टी बनाने की दिशा में ले जाया जा रहा है। उनके अनुसार फिलहाल यह मुनासिब नहीं है।

नियोगी विभिन्न तबकों के व्यापक मोर्चे की धारणा खास राष्ट्रीयता वाले क्षेत्र में ही बनाने पर जोर देते रहे। इसी दिशा में उन्होंने प्रयास भी किया। विभिन्न तबकों के आंदोलन से भी अपने को जोड़ते रहे।

उनका यह भी मानना था कि मजदूरों के हित में बुर्जुआ वर्ग के अंतर्विरोधों और बुर्जुआ जनवादी ताकतों का भी इस्तेमाल करना चाहिए। उनके आंदोलन में यह सब भी देखने को मिला। उनकी रणनीति की इस समझ को लेकर विभिन्न मजदूर हितैषी संगठनों द्वारा हमले भी किये गये, लेकिन नियोगी अपनी गतिविधियों में सक्रिय रहे।

वर्तमान में मजदूरों के सबसे बड़े भाग असंगठित मजदूरों और संगठित क्षेत्रों के बीच सक्रिय ट्रेड यूनियनों का आकलन करते हुए नियोगी का आंदोलन और उनकी विशिष्ट कार्य शैली एक मुकम्मल अध्ययन की माँग करती है। लेकिन आंदोलन का मूल्यांकन एवं इसके सकारात्मक पहलू का अध्ययन बारीकी और पूर्वाग्रह से दूर होकर करना होगा। □

(मूल लेख से उद्धृत अंश ; 'अमर उजाला', अक्तूबर 1991, से साभार।)

की मनोगत शक्तियों की कमजोरियों का परिचायक नहीं है कि विगत डेढ़ दशक से भारतीय जन-राजनीति में अपनी अलग पहचान कायम करने वाली इस शख्सियत को वह अपने अंदर समाहित नहीं कर सकी। जाहिर है, आंदोलन के भीतर जो वैचारिक संकीर्णता की प्रवृत्तियाँ मौजूद हैं, क्रांतिकारी चिंतन को अपनी जमीन पर उतारने के रास्ते में जो कठमुल्लावादी रुझानें बाधा-स्वरूप खड़ी हैं, बदलते हालात में नयी-नयी परिघटनाओं को समझने में जो कमी दिखायी दे रही है, सांगठनिक तौर-तरीकों में जो संकीर्णतावाद दिखायी दे रहा है, इनसे मुक्त हुए बिना क्रांतिकारी आंदोलन उसकी धारा के बाहर खड़े हो रहे विभिन्न राज्य-विरोधी आंदोलनों को अपने आगोश में नहीं ले सकता।

शंकर गुहा नियोगी की आकस्मिक मौत ने एक तूफान के खामोश हो जाने की घोषणा भले की हो, मगर इससे तूफानों के खड़े होने की प्रक्रिया रुकने वाली नहीं है।

□

(मूल लेख से उद्धृत अंश ; 'लोकदस्ता', नवम्बर-दिसम्बर 1991, से साभार।)

छत्तीसगढ़ के धरातल पर मार्क्सवाद-लेनिनवाद

अनिल चमड़िया

मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ के प्रख्यात मजदूर नेता शंकर गुहा नियोगी के राजनैतिक प्रादुर्भाव के साथ ही दक्षिणपंथी उन्हें अपना शत्रु समझने लगे थे। मध्यमार्गी भी उन्हें अपना मित्र नहीं मानते थे। इनकी नजर में नियोगी गांधीवादी नहीं थे, सुधारवादी भी नहीं। नियोगी इनकी नजर में कभी परम्परागत वामपंथी हो जाते थे। कभी नक्सलवादी। लेकिन नक्सलवादी और परम्परागत वामपंथी भी नियोगी को अपनी कतार में शामिल नहीं मानते थे।

आंध्र प्रदेश के कुछेक हिस्सों में सिमटे एक नक्सलवादी संगठन के दिल्ली स्थित एक बुद्धिजीवी का कहना है कि नियोगी का चरित्र कम्युनिस्ट का नहीं था। इसके लिए उनके पास कई तर्क हैं। इनमें एक मजेदार तर्क है कि नियोगी प्रतिवर्ष मजदूरों के बीच दुर्गा पूजा का आयोजन किया करते थे और मजदूर यूनियन के एक अस्पताल का उद्घाटन उन्होंने हिन्दू धार्मिक कर्मकांडों से कराया था।

शंकर गुहा नियोगी की राजनैतिक यात्रा अविभाजित कम्युनिस्ट पार्टी से शुरू हुई। लेकिन बारी-बारी से नियोगी वामपंथ की तीनों कतारों से अलग होते चले गये और पाते रहे इनकी ओर से [illegible] विशेषण। इस तरह नियोगी वामपंथियों और इन कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों की नजर में [illegible]वादी, प्रति-क्रांतिकारी और अवसरवादी होते चले गये। किसी ने उन्हें

क्रांतिकारी पार्टी की जरूरत और नियोगी[1]

कुमार नितिन

नियोगी की हत्या पर घड़ियाली आँसू बहाने वाली कांग्रेस, भाजपा, जनता दल जैसी जनविरोधी पार्टियों के नेताओं के लिए भी छत्तीसगढ़ की सरज़मीन पर लड़ाकू जनसंघर्षों को खड़ा करके इन तमाम पार्टियों की दुकानदारी को बेपर्दा करने वाले छमुमो के बढ़ते प्रभाव का भय था।

शंकर गुहा नियोगी की आकस्मिक मौत हम सबके लिये एक सदमा है। एक ऐसे समय में जब विदेशी महाजनों के दबाव पर, नयी आर्थिक नीतियों के बहाने मेहनतकश और साधारण जनता पर हमले तीखे हो रहे हैं, तब उनकी गैरमौजूदगी का काफी शिद्दत से अहसास होगा।

अपने छोटे से मगर झंझावाती राजनैतिक जीवन में उन्होंने जो जुझारू जनसंघर्ष खड़े किये, लीक से हट कर आंदोलनों को विकसित करने की जो कोशिश की, संघर्षात्मक काम और रचनात्मक कामों का जो तालमेल कायम किया, कामगार आंदोलन को सामाजिक सरोकार से जोड़ने के लिए जो जद्दोजहद की, जो सृजनात्मक प्रयास किये उनका सही निचोड़ निकालना उन सबके लिए जरूरी है जो सामाजिक बदलाव की कोशिश में जुटे हैं। उनका कहना था कि व्यवस्था और राज्य की ताकतों के विरोध में उठ खड़े जनांदोलनों में जनता की, जनता द्वारा खड़ी की गयी वैकल्पिक, समानांतर संस्थाओं का निर्माण करने पर भी ध्यान देना होगा। ऐसी संस्थाएँ जनता की लड़ाई को न केवल आगे ले जाने में मददगार होंगी, बल्कि कठिन समय में सत्ताधारी ताकतों की धमक से इनको खत्म करने की कोशिशें जनता को नये-नये संघर्षों के लिए भी प्रेरित करेंगी, अपनी मेहनत से खड़ी की गयी इन संस्थाओं की हिफाजत के लिए जनता जी-जान से लड़ेगी। दल्ली राजहरा के इलाके में छमुमो की तरफ से खड़ा किया गया शहीद अस्पताल और चलाये जा रहे स्कूल या मजदूरों की सहकारी समितियाँ उनके इसी चिंतन का नतीजा हैं।

* * *

मगर जनता के प्रति बेहद लगन, सर्वहारा तथा अन्य मेहनतकशों का राज कायम करने की बेहद तड़प और इस महान उद्देश्य के लिए बड़ी-से-बड़ी जोखिम उठाने और कुर्बानी देने के लिए व्यापक कतारों का निर्माण करने के बावजूद शंकर गुहा नियोगी के चिंतन [illegible] [illegible] थी। छत्तीसगढ़ के पैमाने पर जुझारू संघर्ष खड़े करके और [illegible]

---

[1] इस सिलसिले में नियोगी के विचार जानने के लिए उनके 'अंतिम संदेश' शीर्षक के बयान के अंतिम [illegible] पैराग्राफ (पृ. 305) को देखना उपयोगी होगा। इसके अलावा उन्होंने कम्युनिस्ट आंदोलन एवं पार्टी-निर्माण की प्रक्रिया के विषय में अपने विचार पृ. 311-312, 317, 320-321, 323-324, 332 और 334-336 पर व्यक्त किये हैं। अखिल भारतीय स्तर पर क्रांतिकारी बदलाव लाने की दिशा में उनके विचारों और प्रयासों के लिए 'राष्ट्रीय प्रक्रिया की ओर कदम' और 'आजादी का असली मतलब क्या है?' शीर्षक की प्रस्तुतियाँ (पृ. 459-464) एवं सर्वश्री त्रिवेणी प्र. सिंह (पृ. 528-529), अनिल चमड़िया (पृ. 532-534), पूर्णेन्दु बसु (पृ. 556-557, 560) एवं अमित सेनगुप्ता (पृ. 651-652) के लेखों को देखिये।

आया, भेड़िया आया की तर्ज पर नक्सलवाद का भूत खड़ा किया जाता है। मुश्किल यह है कि दीवार पर अंकित लकीरों को पढ़ पाने की समझ स्थापित व्यवस्था में नहीं होती। इसलिए स्थापित व्यवस्था की गुलाम सरकारों को सिवाय दमन के और कुछ नहीं सूझता। इसलिए नियोगियों की हत्या की जाती है। लेकिन नियोगी व्यक्ति नहीं, ऐसी धारा है जिस धारा में हजारों युवक और युवतियाँ खुद-ब-खुद शरीक होते जा रहे हैं। क्या इस धारा की भी वे हत्या कर सकेंगे ? ❑

(मूल लेख से उद्धृत अंश; 'अमृत संदेश', रायपुर, 18 नवम्बर 1991, से साभार।)

शहादत से सिंचित दो पौधे, दो सबक

त्रिवेणी प्र. सिंह

शंकर की शहादत का भारतीय मजदूर आंदोलन में एक अलग अर्थ है। बलिदान के अर्थ में भारतीय मजदूरों द्वारा दी गयी न तो यह पहली बलि है, न आखिरी ही। यह सभी जानते हैं। लेकिन इस आदमी ने अपने खून से सींचकर जो दो पौधे उगाये हैं वे भारत की जमीन पर बिलकुल भिन्न किस्म के और नये हैं।

पहली बात तो यह है कि ट्रेड यूनियन आंदोलन आज जबकि आपादमस्तक अर्थवाद के अंतहीन दलदल में जा धँसा है, **नियोगी ने मजदूरों को अर्थवाद का अर्थ समझाने का काम किया।** उसने राजहरा में मजदूरों के अपने विद्यालय, अस्पताल, पुस्तकालय आदि की व्यवस्था की और उन्हें सतत संघर्षों में लगाये रखने का काम भी किया। सारे देश के खदान मजदूरों से दल्ली राजहरा के खदान मजदूर इस मायने में भिन्न हैं कि इन्होंने दुश्मनों के सबसे घातक हथियार शराब को पहचान लिया। इस तरह भ्रष्ट नेतृत्व के चक्कर में फँसे मजदूर वर्ग के बीच अर्थवाद से मुक्त आर्थिक लड़ाइयों को लड़ने वाले मजदूर वर्ग की यह एक छोटी-सी जमात मजदूर आंदोलन की एक नयी पौध है।

दूसरी बात जो मैं कहना चाहता हूँ, वह आज पुरानी पड़ गयी है, हालाँकि अप्रासंगिक नहीं है नौवें दशक में। आज से बीसेक वर्ष पूर्व मार्क्सवादी-लेनिनवादियों के लिए ट्रेड यूनियन आंदोलन अछूत कर्म था। भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) के नेता श्री चारु मजुमदार और उनकी मृत्यु के उपरांत की तत्कालीन पीढ़ी ट्रेड यूनियन आंदोलन को 'कालातीत' और उसके नेतृत्व को पूर्णतः गद्दार घोषित कर चुकी थी। **उस वक्त के विरले ही मार्क्सवादी-लेनिनवादी वे जो औद्योगिक मजदूरों को भ्रष्ट एवं गद्दार तथा ग्रामीण मजदूरों को 'भूमिहीन किसान' समझने का भ्रम न पालते रहे हों।** यह सैद्धांतिक विभ्रम श्री चारु मजुमदार को स्वयं

बेहयाई से वर्तमान औद्योगिक नीति करती है, उतनी कोई भी नहीं। **श्रमिक आंदोलनों के दमन की कीमत पर उत्पादन बढ़ाना वर्तमान औद्योगिक नीति की आत्मा है।**

उद्योगपतियों या वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारियों से निजी बातचीत में यह आसानी से अनुभव किया जा सकता है कि उनकी छातियाँ कितनी फूली हुई हैं। **दौलत कमा कर देना (घोषित तौर पर देश का विकास करना) आज की सबसे बड़ी राष्ट्रभक्ति है। यदि हजार नियोगियों को भी इस राष्ट्रभक्ति के लिए गोलियों से भूनना पड़े, तो संकोच की बात क्या!** और खास कर तब जब राष्ट्रभक्ति के ठेकेदार रामभक्तों की सरकार किसी प्रांत में हो।

दूसरा परिप्रेक्ष्य अंतर्राष्ट्रीय घटनाचक्र का है। सोवियत संघ और पूर्वी यूरोप में हुए साम्यवादी दलों के पराभव से पूँजीवादी जगत में एक गर्वोन्माद छाया हुआ है। इसका असर तीसरी दुनिया के कई देशों में देखने को मिल रहा है। मलेशिया में कपड़ा सिलाई उद्योग के श्रमिकों का दमन, बंगलादेश में जूट उद्योग के मजदूरों के आंदोलन पर बर्बर अत्याचार, हांगकांग के इलेक्ट्रॉनिक मजदूर नेताओं पर जुल्म और भारत में पिछले साल भर में हुए दर्जनों कांड इस बात के प्रमाण हैं कि पूँजीवादी ताकतें अपना नंगा नाच दिखाकर मेहनतकश जनता के दमन पर उतारू हैं।

भारत के श्रमिक वर्ग और मानवाधिकार के पक्षधरों के सामने ये जबर्दस्त चुनौतियाँ हैं। खुद भिलाई में ही मजदूर आंदोलन इतना बँटा हुआ है कि एटक की कुछ स्थानीय ट्रेड यूनियनें नियोगी की यूनियनों का विरोध करती रही हैं। यहाँ तक कि अब भी ये आपस में हिंसक संघर्ष कर रही हैं। यह स्थिति बहुत खतरनाक है। अब भी शोषित जनों के साथ (और खास कर उनकी स्थिति की गम्भीरता को देखते हुए) अगर न्यूनतम समान कार्यक्रम पर हम एकजुट नहीं हो पाये तो नियोगी की शहादत निरर्थक चली जायेगी।

❑

(मूल लेख से उद्धृत अंश ; 'प्रतिपक्ष', नवम्बर 1991, से साभार।)

नियोगी व्यक्ति नहीं, धारा है

ओमप्रकाश रावल

नियोगी एक व्यक्ति नहीं, धारा है — पोस्टरों और दीवारों पर लिखी हुई ये पंक्तियाँ और नारे जो मैंने दल्ली राजहरा और भिलाई में देखे और सुने, ताजा होकर मेरी स्मृति में बार-बार उभरते हैं। क्या सचमुच नियोगी एक धारा है और यदि है तो क्या सचमुच यह धारा जिंदा रहेगी ? नियोगी की धारा मुख्यधारा से विपरीत चलने वाली धारा थी, स्थापित मान्यताओं को बदलने वाली धारा थी। क्या यह धारा जिंदा रहेगी ? इस प्रश्न की गहराई में जाने के लिए यह स्पष्ट करना

पिछले तीन दशकों से निजी क्षेत्र के शक्तिशाली संगठन के द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र पर उसकी नौकरशाही, गैर-व्यावसायिकता और फिजूलखर्ची को लेकर निरंतर हमला होता रहा है। ट्रेड यूनियनों की ओर नजर दौड़ाने पर हमें इस पूरे सवाल के प्रति हैरतअंगेज उदासीनता दिखायी देती है। न तो सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों की यूनियनों ने उनमें व्याप्त फिजूलखर्ची और नौकरशाही तौर-तरीकों के खिलाफ कोई भी कदम उठाया और न ही विशालकाय निजी क्षेत्र की यूनियनों ने निजी क्षेत्र में जमकर चल रही फिजूलखर्ची और अनियमितताओं का कभी पर्दाफाश किया।

इन चंद उदाहरणों से यह एकदम साफ हो जाता है कि किस प्रकार **हमारी स्थापित ट्रेड यूनियनें कुल मिलाकर समाज के प्रति जिम्मेदारी के किसी भी अहसास के बगैर आगे बढ़ गयी हैं।** रोजमर्रा के कामों में बुरी तरह उलझे ट्रेड यूनियन आंदोलन के नेताओं ने कमोबेश पूरी तरह अपनी सामाजिक और राजनैतिक जिम्मेदारियों को ताक पर रख दिया है। साम्प्रदायिकता व जातिवाद जैसे राष्ट्रीय सरोकार के मुद्दों पर प्रभावकारी ढंग से हस्तक्षेप न कर पाने की असली वजह उनकी यही कमजोरी है। कुछ लोगों का एक प्रतिष्ठापूर्ण अपवाद के रूप में इस आरोप से बरी होना, आरोप को ही सही साबित करता है।

खेतिहर मोर्चे पर भी स्थिति कोई बेहतर नहीं, बल्कि बदतर ही है। किसान सभा के नेतृत्व ने, चाहे वह किसी भी दल से सम्बद्ध हो, जमींदारी उन्मूलन के प्रथम चक्र के बाद खेतिहर सम्बंधों के उभरते हुए स्वरूप का अध्ययन करने की कोशिश न के बराबर की है। यहाँ तक कि जब कांग्रेस ने एक नारे बतौर सहकारी खेती की बात चलायी थी, तब भी किसान सभाओं के भीतर कोई सुगबुगाहट नहीं दिखायी दी — न तो इसे लागू कराने के लिए और न ही इसका पर्दाफाश करने के लिए कोई अभियान चलाया गया। देहाती क्षेत्रों में हरित क्रांति के फैलाव के चलते खेतिहर सम्बंधों में आयी तब्दीलियों ने भी किसान आंदोलन को शायद ही प्रभावित किया हो। स्वभावतः, वह इस हद तक कमजोर होता गया कि अप्रासंगिक ही हो गया। जबकि सरकारी एजेंसियाँ सरकार को यह चेतावनी दे रही थीं कि 'हरित क्रांति लाल क्रांति में बदल जायेगी' — जैसा कि साठ के दशक के अंतिम वर्षों में जारी एक सरकारी दस्तावेज में कहा गया था — किसान सभा की गतिविधियों में तब भी कोई नया उभार नहीं दिखा।

स्थापित किसान आंदोलन के लगभग ध्वस्त हो जाने की इस पृष्ठभूमि में ही खेतिहर जुझारूपन के उस उभार को समझा जा सकता है, जिसे प्रतीकस्वरूप नक्सलवाद के नाम से जाना जाता है। विडम्बना यह है कि उसे न सिर्फ निहित स्वार्थों के जाने-पहचाने संगठनों के, बल्कि वामपंथी तंत्र के भी, हमलों को झेलना पड़ा। यह हमारे राष्ट्रीय जीवन पर संसदीय चुनावी राजनीति की राक्षसी पकड़ का एक और उदाहरण है।

* * *

इस घटनाक्रम का हमारे राजनैतिक और आर्थिक जीवन पर कुल मिला कर क्या प्रभाव पड़ा है? हमारी राजनैतिक व्यवस्था तेजी से कमजोर होती जा रही है। चुनावों में सब मर्यादाओं को लाँघने वाले खर्च के अलावा चुनावी प्रक्रिया के अपराधीकरण और उसके चलते धांधलियों व बूथ-कब्जे की हरकतों ने हमारे जनतंत्र का मखौल बना दिया है। इसके साथ ही, **स्थापित राजनैतिक दल इस भ्रष्ट व्यवस्था के बंधुआ बन चुके हैं।**

जर्जर राजनीति में नवजागरण का भगीरथ

निखिल चक्रवर्ती

आजादी के बाद के चार दशकों में हमारी राजनैतिक व्यवस्था रूढ़ हो गयी है। हमने न सिर्फ संसदीय चुनाव और मंत्रिमंडलीय कामकाज के ब्रिटिश मॉडल को बरकरार रखा है, बल्कि हमारे मान्यता-प्राप्त राजनैतिक दल कुल मिलाकर चुनावी गतिविधियों में ही उलझकर रह गये हैं।

दरअसल, स्वतंत्रता संग्राम के दौरान देश में राजनैतिक दलों की परम्परा कुछ और ही थी। उन दिनों राजनैतिक दलों के पास चुनावी गतिविधियों के लिए बहुत कम गुंजाइश थी। कुछ नगर निगमों व अन्य स्थानीय स्वशासी निकायों के साथ-साथ प्रांतीय विधायिकाओं और केंद्रीय असेम्बली का चुनाव सीमित मताधिकार के आधार पर होता था, जो धनाढ्य वर्गों के पक्ष में था। इसलिए राजनैतिक दलों का प्रमुख कार्यक्रम चुनावी काम नहीं, वरन् विभिन्न मुद्दों पर जन-अभियान चलाना था। राजनैतिक दल अपने-अपने ढंग से आजादी के लिए अनवरत अभियान चलाने में ही लगे रहते थे। इस दौरान सामाजिक कार्यों के कई स्वरूप सामने आये, मसलन ग्राम विकास कार्यक्रम, नारी स्वतंत्रता, छात्र-युवा आंदोलन, आदिवासी उत्थान, साक्षरता व रात्रि पाठशाला अभियान। जब कभी कोई कुदरती हादसा होता, तो राजनैतिक दलों के स्वयंसेवक आगे आकर राहत कार्य चलाते थे। इन सबमें ट्रेड यूनियन और किसान सभा के संगठन निर्णायक भूमिका अदा करते थे।

यकीनन, काम करने के दृष्टिकोण एवं तौर-तरीके नाना प्रकार के थे। गौर करने की मुख्य बात यह है कि **उन दिनों राजनैतिक दलों ने अपना कामकाज सिर्फ चुनावी गतिविधियों के संकीर्ण दायरे तक सीमित नहीं रखा था, जैसा कि आजादी के बाद के दशकों व वर्षों में लगभग पूरी तौर पर हो गया है।**

आजादी के बाद चुनावी काम को छोड़कर सार्वजनिक गतिविधि के कमोबेश तमाम क्षेत्रों को सरकार की प्रशासनिक मशीनरी के जिम्मे सौंप दिया गया, और राजनैतिक दलों ने अधिकतर मामलों में अपने आपको वक्तव्य जारी करने और सरकारी मशीनरी से कुछ माँगें पूरी करवाने तक सीमित कर लिया। यहाँ तक कि महिला अधिकारों पर अभियान चलाने या साम्प्रदायिक सौहार्द को बढ़ावा देने जैसे मुद्दों पर भी राजनैतिक दलों के पास आज कहने को केवल यह रह गया है कि ये काम भी सरकार ही उठाये जिसमें वे केवल एक समर्थक भूमिका ही निभायेंगे। साम्प्रदायिकता से जूझने के सवाल पर यह कहा जा सकता है कि हमारी संसदीय व्यवस्था के तहत चुनावों ने जातिगत और साम्प्रदायिक रूढ़ियों को तोड़ने के बजाय उन्हें मजबूत ही बनाया है। दरअसल, हमारे स्वतंत्र गणराज्य के भीतर चुनाव, जातिवाद और साम्प्रदायिकता का एक उद्गमस्थल बन गया है।

* * *

आजादी के बाद राजनैतिक दलों के कामकाज के तौर-तरीकों और सार्वजनिक

असहमति के उभरते सक्रिय मंचों पर हमले की वकालत की है। सबसे ज्यादा चिंताजनक बात है हाल के दिनों में उभरी प्रवृत्ति — नागरिक स्वतंत्रता व जनतांत्रिक अधिकार संगठनों के नेताओं व पदाधिकारियों, जुझारू ट्रेड यूनियन कार्यकर्त्ताओं और आदिवासियों व दलितों जैसे सामाजिक रूप से वंचित तबकों के पक्ष में और उनके संवैधानिक अधिकारों की रक्षा के लिए चल रहे प्रतिरोध आंदोलनों से जुड़े कार्यकर्त्ताओं को गिरफ्तार करने, आतंकित करने और मरवा तक देने की। सरकारी और पार्टी नेता, उद्योगपति और यहाँ तक कि जन संचार माध्यमों के प्रभारी जैसे मध्यमवर्गीय पेशेवर लोग यह झूठ फैला रहे हैं कि उपर्युक्त नेताओं और समाजकर्मियों के दिलों में नक्सलवादियों जैसे क्रांतिकारी समूहों व आतंकवादियों के प्रति न सिर्फ गहरी सहानुभूति है, और इस प्रकार वे उनके पक्षधर बन चुके हैं, बल्कि खुद उनमें और नक्सलवादियों व आतंकवादियों में फर्क करना मुश्किल है। इसलिए उनके साथ सख्ती व कठोरता से निपटना जरूरी है।

आज जबकि जनसमुदाय के अधिकारों व माँगों की रक्षा तथा जनतांत्रिक संघर्षों में जुटे हुए लोगों और व्यवस्था के बीच के सम्बंधों में ये सारे बदलाव आ रहे हैं, उसी समय असहमति के स्वरों व प्रतिपक्षी ताकतों को शासक गठबंधन द्वारा खालिस दमन और सहयोजन के सूक्ष्म व चतुराई भरे तौर-तरीकों के सहारे क्रमशः हाशिए पर धकेला जा रहा है। जिन व्यक्तियों व समूहों को जनतांत्रिक संघर्षों में भाग लेना चाहिए था, शासक अभिजात वर्ग ने उन्हें 'विकास' की महान चुनौती का सामना करने और व्यापक 'ढाँचागत सुधार' के लिए सरकारी व निजी क्षेत्र के साथ स्वंयसेवी संगठनों के सहयोग की जरूरत के नाम पर कपटपूर्ण ढंग से अपने पक्ष में कर लिया है। इनके साथ ही समाज में स्थान, पद और सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण बात — पैसों का प्रलोभन भी दिया जा रहा है। यह भी कहा जा रहा है कि देश गम्भीर संकट में से गुजर रहा है, इसलिए जरूरत इस बात की है कि सब गोलबंद हों। अगर निचले स्तर पर कुछ लोगों के खिलाफ अनाचार, अन्याय और यहाँ तक कि घोर दमन व आतंक भी होता दिखता है, तो उसे विकृति समझना चाहिए जो जल्द ही समाप्त हो जाने वाली है। **हाशिए पर धकेले जाने और सहयोजन के इस मिले-जुले आक्रमण का परिणाम है जन आंदोलनों में बिखराव का माहौल।**

एक तरफ तो यह सब काफी निराशाजनक लगता है और हम इन हमलावर ताकतों के समक्ष अपने को असहाय पाते हैं, किंतु दूसरी तरफ यह स्थिति व्यवस्था की शक्तियों के खिलाफ संघर्ष और प्रतिरोध की नयी रणनीति पर चिंतन-मनन की चुनौती भी पेश करती है, क्योंकि स्पष्ट है कि व्यवस्था से निपटने के परम्परागत उपाय अब कारगर नहीं रह गये हैं। सौभाग्य से, इस बात के काफी सबूत सामने हैं कि ऐसा पुनर्चिंतन शुरू हो गया है, **चेतना और नवाचार के नये स्रोत प्रस्फुटित हो रहे हैं और छोटे-छोटे संघर्षों को वृहत्तर परिप्रेक्ष्य व विचारधाराओं से जोड़ने के कुछ वास्तव में विलक्षण प्रयास आकार ग्रहण करने लगे हैं।** ऐसे प्रयासों की ओर मजदूर वर्ग, आदिवासी समुदायों और दलितों व महिलाओं जैसे अन्य वंचित समूह आकर्षित भी होने लगे हैं। निःसंदेह, उन पर प्रतिक्रियात्मक हमला होगा और वह भी शायद सबसे ज्यादा वीभत्स प्रकार का। पुलिस, दक्षिणपंथी राजनैतिक पार्टियों और धनाढ्य वर्गों की ओर से होने वाले इस मिले-जुले हमले का आंशिक कारण तो गरीब लोगों को संगठित होते हुए देखने भर से ही पनपा भय है और आंशिक रूप से मुनाफा व वोट और रुपये-पैसे हेतु सामान्य लालच जैसी संकीर्ण

शोषित होने की प्रवृत्ति के खिलाफ भी . . .

वागीश कुमार झा

आज नियोगी के नहीं रहने का सबसे बड़ा घाटा न सिर्फ मध्य प्रदेश के, बल्कि पूरे देश के जुझारू संगठनों को हुआ है। मध्य प्रदेश में भाजपा सरकार नक्सलवाद का हौवा खड़ा कर अपने सारे विरोधियों का सफाया करने का संकल्प ले चुकी है। नियोगी इसमें सबसे बड़ा रोड़ा थे — पूँजीपतियों और सरकार की मिलीभगत से हो रहे शोषण के रास्ते का। नियोगी की ताकत का सबसे बड़ा स्रोत था उनके साथी मजदूरों की अपनी ताकत। वह मजबूत जनाधार किसी उधार ली हुई विचारधारा पर नहीं टिका था, न ही सत्तालोलुप राजनैतिक पार्टियों के लुभावने और खोखले नारों के भुरभुरे ढेर पर खड़ा था यह आंदोलन। शायद यह सच्चे अर्थों में अपने संघर्षों और अपने अनुभवों से परिपक्व हुआ, हिन्दुस्तान का पहला जन आंदोलन था जिसने नारों और विचारधाराओं के जंगल चुनने की बजाय वास्तविकता के मरुस्थलों में अपने खून और पसीने से हरियाली उगाने का बीड़ा उठाया था। और आज छत्तीसगढ़ में नियोगी की कायरतापूर्ण हत्या के बाद भी उनका लाल-हरा झंडा शान से लहरा रहा है, देश के असंख्य ऐसे संगठनों को संघर्ष की प्रेरणा देता हुआ जो संघर्ष के घिसे-पिटे रास्तों के छलावे से वाकिफ तो हैं पर किसी मौलिक दिशा का अभाव महसूस करते रहे हैं।

नियोगी और उनके साथियों ने संघर्ष का जो रास्ता चुना है वह आदमी को सिर्फ एक भूख लगने वाले जीव की तरह नहीं देखता जिसका मजदूरी बढ़ाना प्रथम और अंतिम उद्देश्य हो। **उनकी लड़ाई सिर्फ पूंजीपतियों के शोषण के खिलाफ ही नहीं है बल्कि मजदूरों और किसानों की उस प्रवृत्ति के खिलाफ भी है, जो उन्हें शोषित होने देती है, जो उनसे लड़ने का माद्दा छीनती रहती है।** यही कारण था कि उन्होंने मजदूरी बढ़ाने के आंदोलन की तरह ही मजदूरों के बीच नशाखोरी के राक्षस को समूल नष्ट करने का आंदोलन भी उतनी ही ईमानदारी से उठाया। उन्होंने महसूस किया कि स्वास्थ्य-सम्बंधी जागरूकता भी लड़ाई का उतना ही महत्वपूर्ण हिस्सा है जितना शायद न्यूनतम मजदूरी। आज दल्ली राजहरा का शहीद अस्पताल मजदूरों के पैसे से बनी और चलायी जा रही एकमात्र ऐसी संस्था है। स्कूली शिक्षा हो या सांस्कृतिक चेतना या अपने स्थानीय इतिहास को जानने-समझने की संवेदना, यह उस सम्पूर्ण लड़ाई का एक मूलभूत हिस्सा है जो मनुष्य को उसके अस्तित्व के प्रति विश्वास और सम्मान का सच्चा अर्थ प्रदान करती है। जन आंदोलन का यही मौलिक आयाम सारे जुझारू संगठनों को दिया गया नियोगी का एक नायाब तोहफा है जिसे उन्होंने अपनी कुर्बानी देकर हासिल किया है। ❑

(मूल लेख से उद्धृत अंश ; 'प्रतिपक्ष', नवम्बर 1991, से साभार।)

घुप अंधकार में दीया

भारत डोगरा

जिन हत्यारों ने 28 सितम्बर 1991 को शंकर गुहा नियोगी पर छह गोलियाँ दागीं, उन्हें किसी एक व्यक्ति की हत्या के लिए नहीं भेजा गया था, वरन् उन्हें तो उत्तरोत्तर बढ़ती हुई निराशा व शायद कुंठा के इस माहौल में भी आशा के चंद बचे-खुचे प्रतीकों में से एक को नष्ट करने के लिए भेजा गया था। ऐसे वक्त जबकि मानवीय व शांतिपूर्ण रास्ते से सामाजिक-आर्थिक बदलाव की आशा क्षीण हो गयी है, नियोगी के पिछले 14 सालों के प्रयास घुप अंधकार में दीये के समान हैं। उस लौ ने विभिन्न प्रकार के शक्तिशाली निहित स्वार्थों के हर सम्भव प्रयासों के बावजूद बुझने से इंकार कर दिया। जब अन्य तमाम तरीके नाकाम हो गये, तब उन्होंने उनकी हत्या कर दी।

शोषण, विषमता, अन्याय और विकास की जन-विरोधी अवधारणाओं के विरुद्ध उभर रहे संघर्ष के लिए यह एक जबर्दस्त आघात है। यही बात दूसरे शब्दों में कहें तो, विकास को सही मायने में आम आदमी के दुःख-दर्द से जोड़ने के जो प्रयास देश व समाज में हो रहे हैं, उन्हें बहुत भारी क्षति पहुँची है।

छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ और छमुमो या जो भी अन्य संगठन इस जन आंदोलन के जरिये बने थे, वे सब निरंतर संकट, तनाव और संघर्ष की स्थिति में ही रहे। ऐसे महीने कम ही आये जब वे किसी खतरे की चिंता से मुक्त रह सके हों। इसके बावजूद रचनात्मक कार्य की दिशा में इन संगठनों ने अनेक शानदार उपलब्धियाँ हासिल कीं। मेरे मन में बार-बार यह सवाल आता रहा है कि यदि इन संगठनों के लिए निरंतर तनाव और संकट की स्थिति न बनायी जाती तो ये कितना कुछ हासिल कर सकते थे, समाज को कितना और योगदान इनका हो सकता था, विकास का नया रास्ता दिखाने में कितनी और महत्वपूर्ण भूमिका इनकी हो सकती थी।

दूसरा सवाल जो मेरे मन में उठता रहा है वह हमारी अपनी भूमिका के बारे में है — हमारी यानी पत्रकारों, लेखकों, समाजशास्त्रियों आदि की भूमिका के बारे में। इतनी तनावग्रस्त परिस्थितियों में सामाजिक-आर्थिक बदलाव के बुनियादी सवालों से निरंतर जूझने का जो अनुभव है, जो समझ इस बहुत जलने-तपने वाली प्रक्रिया से निकलती है, क्या हम उसे वास्तव में शब्दों में बाँध पाते हैं और अधिक लोगों तक पहुँचा पाते हैं ? सामाजिक बदलाव के बारे में जिनकी गहरी सोच से कितना कुछ ग्रहण किया जा सकता है, उनसे क्या हम केवल यह ही पूछते नहीं रह जाते हैं कि अमुक धारा के अंतर्गत आप पर जो मुकदमा दायर किया गया है वह सही है कि नहीं ? यह एक बहुत बड़ी त्रासदी है कि इतने वर्षों की तपस्या से हासिल समझ अचानक हमारे बीच से उठ जाती है, और हम उसे शब्दों में बाँध कर सुरक्षित रखने का समुचित प्रयास भी नहीं करते हैं। मजदूर-किसान वर्ग के कितने ही गहरी सोच-समझ के प्रतिनिधियों के साथ ऐसा होता है, यह सोच ही दहलाने वाली है। दूसरी ओर जो मोटे-मोटे ग्रंथों के रूप में सुशोभित

उत्पादन, अपने भविष्य के वे स्वयं विधाता बनें, यह चेतना छत्तीसगढ़ के मूलनिवासियों में अंकुरित होने लगी थी। दशकों से दया की साँस में लिपटी जिंदगी से निजात पाने की तड़प छत्तीसगढ़ के आदिवासियों, हरिजनों तथा अन्य दलित वर्गों में बलवती होने लगी थी। भोपाल-निजाम और छत्तीसगढ़ के विभिन्न क्षेत्रों पर काबिज उसके कारिंदे इस तड़प को कैसे सहन कर सकते थे? **इसलिए एक ही रास्ता शेष था, नियोगी और छत्तीसगढ़ की क्रांतिकारी अस्मिता की हत्या।**

पिछड़े समाज मूलतः भावना-प्रधान होते हैं। इन समाजों में आर्थिक अंतर्विरोध स्पष्ट नहीं होते हैं। ये धुँधले एवं सुप्तावस्था में होते हैं, जबकि सांस्कृतिक अंतर्विरोध अधिक उग्र होते हैं। नियोगी ने इसी को पहचाना। जहाँ उन्होंने आर्थिक शोषण के खिलाफ आवाज उठायी, वहीं सामाजिक-सांस्कृतिक बराबरी की बात की। उनकी सुप्त ऊर्जा को जगाया। यह तभी सम्भव हो सका जब **नियोगी छत्तीसगढ़ के असली 'ईथोस'[1] के साथ एकाकार हो गये।** क्योंकि, भावना- प्रधान समाज आपसे सबसे पहले भावनात्मक स्तर पर जुड़ाव की अपेक्षा रखता है। यदि भावना एवं संवेदना के धरातल पर आपके और समाज के बीच खाई है तब आप उसका सच्चा प्रतिनिधित्व नहीं कर सकते। क्योंकि, उसकी दृष्टि में आर्थिक अंतर्विरोध दूसरी प्राथमिकता के हैं। बिहार के गाँवों में जब दुसाध या मुसहर सवर्णों की बस्ती से नहीं गुजर सकता है, वह साफ-सुथरी कमीज नहीं पहन सकता, राजपूत, भूमिहार और ब्राह्मणों के सामने वह जूता नहीं पहन सकता या खटोला बिछाकर नहीं बैठ सकता, तब उसके लिए मजदूरी से ज्यादा सांस्कृतिक बराबरी का सवाल अहम हो जाता है। इसलिए वस्तुस्थिति और अंतर्विरोधों की सही पहचान पर आधारित रणनीति काफी प्रभावशाली एवं दूरगामी परिवर्तनकारी सिद्ध होती है। नियोगी ने सांस्कृतिक और आर्थिक अंतर्विरोधों के संश्लेषण पर आधारित श्रमिक संगठन की रणनीति बनायी।

नियोगी यह भी जानते थे कि उनका कर्मक्षेत्र एक ऐसी श्रमिक मानवता से आबाद है जो संगठित नहीं है, चारों तरफ बिखरी हुई है। असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों को संगठित करना कारखानों के श्रमिकों को संगठित करने से कहीं ज्यादा दुष्कर कार्य है। असंगठित श्रमिक भी कई तरह के होते हैं। महानगरों के असंगठित श्रमिकों को जितनी आसानी से संगठित किया जा सकता है, ग्रामीण एवं अर्द्ध-शहरी क्षेत्रों के असंगठित श्रमिकों को उतनी आसानी से नहीं किया जा सकता है। क्योंकि, चेतना और 'रेसपॉन्स'[2] के स्तर पर दोनों क्षेत्रों के श्रमिकों में अंतर होता है। **नियोगी ने चेतना और 'रेसपॉन्स' के विभिन्न धरातलों को सामने रखकर अपनी रणनीति निर्धारित की।**

उनकी रणनीति का दूसरा महत्वपूर्ण आयाम यह था कि उन्होंने सिर्फ संघर्ष या आंदोलन पर ही दबाव नहीं बनाये रखा। बल्कि, परिवेश की सामाजिक-आर्थिक-राजनैतिक संरचना को ध्यान में रख कर उन्होंने अपनी रणनीति में सुधारात्मक एवं रचनात्मक तत्वों को भी शामिल किया। क्योंकि, **निरंतर आंदोलनात्मक या संघर्षात्मक रणनीति धीरे-धीरे चुकने लगती है। अतः नयी ऊर्जा से लैस करने के लिए जरूरी है कि संघर्ष के साथ-साथ रचनात्मक कार्य भी किये जायें।** इसलिए नियोगी ने श्रमिकों के बीच सामाजिक सुधार के कार्यक्रम चलाये। शिक्षा आंदोलन चलाया। अस्पताल खोला। विभिन्न ढंग के काम-धंधे सिखाये। नशाबंदी के खिलाफ चलाया गया

[1] लोकाचार, स्वभाव।

[2] प्रतिक्रिया, अनुक्रिया, जवाबी क्रिया।

करते थे। **मजदूरों का संघर्ष एक दीर्घकालीन युद्ध जैसा है, जो कई लड़ाइयों, संधि-विरामों और समझौतों से होकर गुजरता है।** नियोगी इस संघर्ष के दौरान मजदूरों को लगातार संगठित व शिक्षित करते जाते थे। दूसरी तरफ वे संघर्ष की हर मंजिल पर मित्र-शक्तियों को संघर्ष के पक्ष में करते जाते थे। जहाँ कुछ मित्र-शक्तियाँ स्थायी रहती हैं, कई शक्तियाँ तात्कालिक रूप से विभिन्न अंतर्विरोधों के फलस्वरूप करीब आती हैं। शक्तियों के इन बदलते समीकरणों का नियोगी बारीकी से अध्ययन करते जाते थे और संघर्ष को केंद्र में रखकर तालमेल का रूप निर्धारित करते जाते थे। कभी अफसरशाही में से कुछ हमदर्द अफसर निकल आते। कभी राज्य सरकार के खिलाफ केंद्र सरकार का रुख कुछ सहायक हो उठता, तो कभी केंद्र के खिलाफ राज्य सरकार का। कभी कांग्रेसी नेता अपने चुनावी हितों में मजदूरों के पक्ष में कुछ बयान दे डालते तो कभी भाजपा की यूनियन अपनी स्थिति मजबूत करने के लिए नियोगी को तात्कालिक समर्थन देती। नहीं तो फिर नियोगी न्याय-व्यवस्था में उपलब्ध सम्भावनाओं को मजदूर संघर्ष के हित में लगाते। **दुश्मनों से घिरे मजदूरों के लिए मित्र खोज निकालने और घेरे से निकालकर संघर्ष को जारी रखते हुए बढ़ते जाने की नियोगी में अद्भुत प्रतिभा थी।**

लेकिन इस सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि नियोगी अपने को मजदूरों के इस दीर्घकालीन युद्ध के साथ अभिन्न भाव से जोड़े रहते थे। नियोगी का व्यक्तिगत जीवन, मजदूरों के साथ उनके सम्बंध और मजदूरों की उन पर आस्था का सबसे बड़ा और सबसे मजबूत आधार था।

नियोगी मजदूर को केवल खदान या कारखाने में काम करने वाले और मजदूरी व अन्य सुविधाओं के लिए लड़ने वाले एक व्यक्ति के रूप में कभी नहीं देखते थे। वे उनको उनकी समग्रता में देखते थे और एक इंसान की हैसियत से उनके जीवन के सारे पहलुओं के साथ संवेदनशीलता रखते थे। छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ की विभिन्न गतिविधियाँ इसी बात को प्रतिबिम्बित करती हैं। संघ मजदूरों की जिंदगी की हर दिक्कत में एक भरोसेमंद साथी की भूमिका निबाहता है। संघ द्वारा निर्मित अस्पताल, संघ का विशाल कार्यालय-अतिथि भवन, संघ के वाहन आदि सम्पत्ति का आर्थिक मूल्य आज करीब एक करोड़ रुपये का होगा। एक छोटे से दायरे में कार्यरत ठेका मजदूरों के हाथों में इतनी बड़ी सम्पत्ति भारत के लिए अकल्पनीय, अविस्मरणीय और अनुकरणीय बात है। इस सम्पत्ति को खड़ा करने की प्रक्रिया में मजदूरों ने कई बातें सीखीं। मजदूर आर्थिक रूप से अपने को इतना मजबूत कर सकते हैं कि अपने संघर्षों में लम्बे समय तक टिके रह सकें। मजदूरों ने संघर्ष के साथ रचना करना और उसे सँभालना सीखा। बड़ी-बड़ी राशियाँ एकत्रित करना और उनका व्यवस्थित रूप से उपयोग करना सीखा। इस दौरान भ्रष्टाचार की प्रवृत्तियाँ भी पनपीं और मजदूरों ने भ्रष्टाचार से लड़ना सीखा, भ्रष्टाचार पर नियंत्रण करने लायक सांगठनिक व्यवस्था करना सीखा।

नियोगी एक मार्क्सवादी थे और उनका लक्ष्य था मजदूरों का राज यानी समाजवाद। इसलिए वे लगातार मजदूरों एवं मजदूर संगठनों को अपनी इस विचारधारा से अनुप्राणित व अभिप्रेरित करते रहते थे। इसी का परिणाम है कि दल्ली राजहरा, भिलाई, राजनांदगाँव, दुर्ग, रायपुर और बिलासपुर तक के इलाके में विभिन्न कारखानों और खदानों के मजदूरों के संगठन एक जालतंत्र के रूप में काम करते हुए सभी एक-दूसरे के साथ एक सूत्र में बंधे हैं। उनको एक सूत्र में बाँधने का काम जहाँ एक तरफ मार्क्सवादी विचारधारा करती थी, वहीं दूसरी तरफ

के पन्नों से निकालकर जन-मानस के पटल पर अंकित करने का सबसे पहला सार्वजनिक प्रयास नियोगी ने ही किया। सन् 1979 को नारायण सिंह के बलिदान दिवस के अवसर पर रायपुर में पचास हजार लोगों की रैली निकाली। इस अवसर पर उन्होंने भाई परमानंद, शहीद भगत सिंह के भतीजे और काकोरी षड्यंत्र के क्रांतिकारी मन्मथनाथ गुप्त को आमंत्रित किया था। आज भी छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा हर साल नारायण सिंह का बलिदान दिवस मनाता है, शहीद मेला लगाता है जिसमें शहीदों की तस्वीरों की प्रदर्शनी लगायी जाती है। नयी पीढ़ी में, छत्तीसगढ़ के श्रमिकों व किसानों में नियोगी कैसे संस्कार डालना चाहते थे, यह शहीद मेले से स्पष्ट हो जाता है।

अपने छोटे से जीवनकाल में जितना उन्होंने काम किया उतना कोई शतायु होकर भी नहीं कर पाता। वे लगातार 18-20 घंटे काम करते थे — भूख-प्यास की परवाह किये बिना, जो मिला खा लिया, जो मिला पहन लिया, जहाँ जगह मिली सो गये। जीवन को कैसे जिया जाता है, यह उनसे बेहतर कोई नहीं जानता था।

❑

(मूल लेख से उद्धृत अंश ; 'नव भास्कर', रायपुर, 13 अक्तूबर 1991, से साभार।)

बिना हथियार के डरा दिया हथियारबंद व्यवस्था को [1]

मणिमाला

शंकर गुहा नियोगी ! जब वे जिंदा थे तब बहुत कम लोग उन्हें जानते थे। कम का इस्तेमाल एक खास अर्थ, पूरे देश के परिप्रेक्ष्य में है। वर्ना सच्चाई तो यह है कि इस दशक के नियोगी एक ऐसे जन नेता थे, जिन्हें लाखों लोग करीब से जानते थे। जो उन्हें जानता था, उन्हें अपना समझता था। उन्हें छत्तीसगढ़ के लोग जानते थे। पूरा देश नाम तो सुनता था, पर जानता नहीं था। लेकिन शहीद शंकर गुहा नियोगी को अब सारा देश जानने लगा है। वे एक पूरी जीवन शैली थे। छत्तीसगढ़ की जनता के लिए वे सहकर्मी भी थे और नेता भी। दूर-दराज के क्षेत्रों में गैर-बराबरी और अन्याय के खिलाफ लड़ रहे छोटे-बड़े समूहों के लिए नियोगी प्रेरणा के स्रोत रहे। तथाकथित ट्रेड यूनियनों के लिए वे सुधारवादी रहे। सरकार के लिए नक्सलवादी। 28 सितम्बर 1991 की सुबह उनको दिये गये ये सारे नाम बेमतलब हो गये। बस एक बात आखिरी साबित हुई : अन्याय पर टिकी हर व्यवस्था के लिए वे सबसे बड़े आतंक थे, आतंकवादी न होने के बावजूद।

---

[1] आंदोलन में हिंसा और अहिंसा के मुद्दे पर नियोगी के विचारों के लिए विभिन्न साक्षात्कारों में उनके द्वारा दिये गये उत्तरों को खंड सात में देखिये — पृ. 310-311 (दो प्रश्नोत्तर), पृ. 335 (दो प्रश्नोत्तर) एवं पृ. 340-343 (नौ प्रश्नोत्तर)। इसके अलावा पृ. 305 पर प्रस्तुत उनका बयान देखें (अंत से तीसरा पैराग्राफ)।

तलवार की धार पर चलने वाला नेता

हरि ठाकुर

बड़ी तपस्या के बाद छत्तीसगढ़ ने अद्भुत क्षमताओं से भरपूर संघर्षशील श्रमिक नेता के रूप में शंकर गुहा नियोगी को पाया था। छत्तीसगढ़ के लाखों शोषित, दलित और पीड़ित लोगों ने उनके संरक्षण में अपने को सुरक्षित और अभय अनुभव किया था। उस महान नेता को कायर, लोभी और सत्तामदांध हाथों ने मार डाला। उन्हें उन लोगों ने मार डाला जो जनवादी शक्तियों के शत्रु हैं, जो छत्तीसगढ़ के पिछड़ेपन का लाभ उठाकर अपने लिए ऐश्वर्य बटोरने में लगे हुए हैं।

नियोगी ने छत्तीसगढ़ में एक नयी श्रमिक संस्कृति को जन्म दिया। उनका श्रमिक आंदोलन श्रमिकों में आत्म-चेतना और स्वाभिमान जगाने का आंदोलन था। इसके पीछे उनका लम्बा दार्शनिक चिंतन था। वे श्रमिक शक्ति को रचनात्मक दिशा देकर सुंदर और स्वस्थ समाज की रचना में लगाना चाहते थे। वे उनके भीतर दबी-कुचली नैतिकता और मानवीयता को ऊपर उठाना चाहते थे। यह एक अत्यंत दुसाध्य कार्य था। लेकिन नियोगी को दुसाध्य कार्यों को हाथ में लेने में मजा आता था। नियोगी ने छत्तीसगढ़ के लोक जीवन को आत्मसात तो किया किंतु उसमें जो त्रुटियाँ थीं उन्हें दूर करने का निरंतर प्रयास भी किया। अशिक्षा, अंधविश्वास, शोषण, अन्याय और दमन के प्रति सहिष्णुता — ये ऐसी त्रुटियाँ थीं जिनके कारण छत्तीसगढ़ के लोगों की सही पहचान नहीं बन पा रही थी। नियोगी ने उन्हें उनकी पहचान दी। उन्होंने शिक्षा के प्रति उनकी उदासीनता को तोड़ा। शिक्षा के प्रति उनमें जागृति उत्पन्न की, शिक्षा के महत्व को समझाया। उन्होंने उन्हें मात्र उनके अधिकारों के प्रति ही सचेत नहीं किया वरन् कर्तव्यों के प्रति भी सावधान किया।

नियोगी ने ग्राम अरौद के पास नाले पर किसानों के सहयोग से एक स्टाप-डैम का निर्माण किया। अब किसान इससे कई एकड़ भूमि की सिंचाई करते हैं। यह काम बहुत छोटा था किंतु इससे किसानों का आत्मविश्वास जागा, वर्षा जल को रोक कर उससे समुचित लाभ उठाने की प्रवृत्ति जागी। नियोगी ने उन्हें समझाया कि वे अपने हितों और अधिकारों के लिए संगठित होकर प्रयास करें तो बड़े-से-बड़े काम कर सकते हैं। नियोगी के छोटे-छोटे रचनात्मक प्रयासों ने ही उन्हें किसानों और मजदूरों में शीघ्र ही लोकप्रिय बना दिया। छत्तीसगढ़ में आर्थिक संघर्ष को रचनात्मक और सामाजिक भूमिका प्रदान करने का क्रांतिकारी काम नियोगी ने ही किया। उनके सामाजिक चिंतन ने ही उनके व्यक्तित्व को महान और चुम्बकीय बनाया था।

कुसुमकसा ग्राम का तालाब गर्मियों में सूख जाता था। नियोगी ने अपने इंजीनियर मित्रों की सलाह ली और उस तालाब को पास के नाले के पानी से लबालब भर दिया। ग्रामीणों ने सरकार को बार-बार तालाब को लेकर आवेदन पत्र दिये थे किंतु ग्रामीणों की छोटी-मोटी मांगों पर सरकार के पास देने के लिए न तो समय होता है, न सरोकार और न ही धन। उनके पास

खंड परिचय

अभी बमुश्किल साल-डेढ़ साल ही तो बीता है जब नियोगी हमारे बीच से छीन लिये गये। लगभग तीस सालों के उनके सक्रिय व प्रखर संघर्षों से भरे हुए जीवन और ऐसे बहुआयामी, समाज के कई स्तरों से जुड़े हुए, नाना प्रकार के दलीय और निर्दलीय संगठनों से जूझते हुए, मात्र छत्तीसगढ़ में ही नहीं वरन् प्रदेश व देश के कई आंदोलनों से रिश्ता बनाये हुए, व्यक्ति का इतने कम समय बाद मूल्यांकन करने का भ्रम हम नहीं पाल रहे हैं। आज हमारी कोशिश इतनी भर है कि नियोगी और उनकी 'संघर्ष और निर्माण' की राजनीति के विभिन्न पहलुओं पर अलग-अलग दृष्टिकोणों से गम्भीर एवं सटीक टिप्पणियाँ संकलित करके पाठकों के सामने रख दें। इस खंड में शामिल बीस लेखों में से छह लेख विशेष रूप से इस पुस्तक के लिए लिखे गये हैं। शेष चौदह लेख पूर्व में अन्यत्र प्रकाशित सामग्री में से चुने गये हैं। पिछले साल-डेढ़ साल में इस विषय पर भारत की अनेक भाषाओं और अंग्रेजी में हजारों पन्नों की सामग्री छपी है। उसमें से केवल चौदह लेख — वे भी अक्सर केवल उनके अंशमात्र — यहाँ प्रस्तुत हैं। जाहिर है, इतनी काट-छाँट आसान न थी। निश्चित ही, इसमें हमसे कई भूलें हुई होंगी। इनमें से कोई भी प्रस्तुति अपने-आप में परिपूर्ण नहीं है, हालाँकि लेखकों ने अपने [illegible] लेखों में कहीं [illegible] समग्रता [illegible] है। सम्पादन के दौरान हमारा प्रयास रहा कि जो वि[illegible] एक बार आ [illegible] ये। आंदोलन और कार्यक्रमों का विवरण तो [illegible] ये चूँकि वह इस [illegible] पूर्वक अन्यत्र दिया गया है [illegible] को लागू करने में [illegible] अन्याय हुआ होगा। किंतु [illegible] है कि जिस [illegible] फ़ोकस हुए हैं उन्हें बगैर [illegible] सामने वाले पृष्ठ पर [illegible] चित्र)। यदि किसी बिंदु को [illegible] के लिए है। अपनी इस धृष्टता [illegible] माफी [illegible]।

इन [illegible] ट्रेड यूनियन कार्यकर्त्ता, छह [illegible] सेनानी, एक इंजीनियर, एक [illegible], एक [illegible] समाजकर्मी एवं दो मार्क्सवादी [illegible] हैं।

हम [illegible] के भावी दिशा पर पड़ने वाले प्रभावों [illegible] प्रस्तुति [illegible]। हमारी कोशिश तो सिर्फ इतनी ही है कि इस प्रस्तुति के माध्यम से पाठकों के सामने एक ऐसा आधार पेश कर सकें जिससे आने वाले वर्षों में इस विषय पर बहस को आगे बढ़ाने में मदद मिले। ❑

मजदूर, जेल और तितली

भारत डोगरा

वे कहते हैं कि इन खानों के मजदूर जाग गये हैं,
तो इन खानों को बंद कर दो।
पर यह जागृति तो यहाँ की मिट्टी में समा गयी है,
घुल गयी है यहाँ के पानी की धार में,
बस गयी है यहाँ के पेड़-पौधों में,
जिस पर बैठी चिड़िया तक चहचहाती है
एक नये जीवन का संदेश।

वे कहते हैं इन फैक्ट्रियों के मजदूर जाग गये हैं,
तो उन्हें फैक्ट्रियों से बाहर कर दो।
पर क्या उन यादों को भी निकाल पाओगे,
जो साझे-संघर्षों और शहादत से जुड़ी हुई हैं
और जिसने मजदूरों को बाँध दिया है एक धागे में,
जो अदृश्य है पर दृढ़ है,
क्योंकि वह पवित्र है।

वे कहते हैं इस जमीन में नयी दुनिया के बीज बोये गये हैं,
अतः इस जमीन को बंजर बना दो।
पर यहाँ से जो नदी बहती है
और शाम को जो हवा लाल-हरा झंडा लहराती है,
यूनियन के बगीचे के फूल पर
जो तितली मंडराती है,
ये सब तो इस बीज से नयी पौध उगाते हैं।

यहाँ लोगों ने नया इंसान बनने का सपना देखा
और तुम इस सपने की हत्या करना चाहते हो।
पर नियोगीजी के हत्यारो!
क्या तुम मिट्टी-पानी से यादें अलग कर सकते हो,
क्या तुम तितली को कैद कर सकते हो,
क्या तुम चिड़िया का गाना रोक सकते हो,
सच बताना, क्या तुम हवा का बहना रोक सकते हो।

शहीद दिवस,

3 जून 1993

की सूची के सामने सबसे अधिक प्राथमिकता के साथ क्या काम चल रहा है ? बच्चों की किताब-कापियों के ढेर बनाये जा रहे हैं और सूचियाँ बन रही हैं। शिक्षा के प्रति एक मजदूर आंदोलन में यह सरोकार बेमिसाल है।

*　　*　　*

14 अगस्त 1992 । भिलाई से मैं दिल्ली लौट आया हूँ। मोर्चे के अध्यक्ष जनकलाल ठाकुर और उपाध्यक्ष गणेशराम चौधरी यहीं हैं। मुलाकात होने पर वे बताते हैं कि उनका दिल्ली आने का उद्देश्य केंद्रीय इस्पात एवं श्रम मंत्रियों को मिलना था। वे दोनों से मिल चुके हैं और उनको एक-एक ज्ञापन सौंप चुके हैं। ज्ञापन में कहा है कि भिलाई के इंजीनियरिंग कारखानों के चार बड़े उद्योगपतियों द्वारा जो उत्पादन किया जाता है उसका 80% अंश का खरीदार भिलाई स्टील प्लांट है। अतः इन उद्योगपतियों द्वारा श्रम एवं औद्योगिक कानूनों का खुल्लम-खुल्ला किये जा रहे उल्लंघन की नैतिक जिम्मेदारी केंद्रीय सरकार की है। इसलिए श्रम सम्बंधी मामले राज्य सरकार के हाथ में होने के बावजूद केंद्रीय सरकार को इसमें हस्तक्षेप करने का नैतिक हक है। दोनों मंत्रीगण इस तर्क से प्रभावित हुए और दो साल के इस आंदोलन में पहली बार यह आश्वासन दिया गया कि श्रम मंत्रालय अपनी एक स्वतंत्र जाँच टीम भिलाई भेजेगा जिसकी रपट के आधार पर इस्पात मंत्रालय अपने अगले कदम सुनिश्चित करेगा। आश्वासन पूरा होगा या नहीं, यह एक अलग विषय है। परंतु यह मानना पड़ेगा कि छमुमो के इन दोनों नेताओं ने (जिनकी अपनी औपचारिक शिक्षा हाई स्कूल से अधिक नहीं है [1]) भिलाई आंदोलन में अपने इस तर्क से एक नया आयाम जोड़ दिया, संघर्ष का एक नया मुद्दा तय कर दिया। संविधान के दायरे के अंदर एक सृजनशील शैली से अपने लिए नयी-नयी राजनैतिक गुंजाइश बनाने की इस रणनीति को नियोगी और उनके साथियों ने वर्षों से गढ़ा है, विकसित किया है। नियोगी के बाद भी उनके साथी उसी स्पष्टता और दृढ़ संकल्प के साथ 'शहीद नियोगी के रास्ते पर अमल कर रहे हैं।'

□

(सितम्बर 1992)

नियोगी जो व्यक्ति थे, वे आज नहीं रहे। वर्ग संघर्ष में शहीद हुए। पर नियोगी जो एक संघर्ष का, जो एक विचार का नाम है , वह मरा नहीं है , वह आज भी जिंदा है और जिंदा रहेगा . . . .

---

[1] सन् 1977 में ये दोनों नेतागण खदान में मजदूरी कर रहे थे।

विरासत के मायने डायरी के पन्नों से

अनिल सद्गोपाल

22 नवम्बर 1991 । मैं खदानों के मशीनीकरण के मुद्दे का अध्ययन करने के लिए राजहरा गया हुआ था। मेरा दिन का काफी बड़ा हिस्सा राजहरा माईन्स आफिस में बीतता था। वहाँ के अफसरों व इंजीनियरों में मेरे प्रश्नों के जवाब देने या जानकारी प्रस्तुत करने में कोई विशेष रुचि न थी। जब भी मैंने उन्हें यूनियन का दृष्टिकोण बताने की कोशिश की तो उन्होंने या तो कोई जिज्ञासा ही नहीं दिखायी या फिर विनम्रता से टाल दिया। इसके विपरीत शाम को जब मैं यूनियन दफ्तर लौटता था तो वहाँ के सब लोग मुझे घेरकर घंटों पूछताछ करते थे, माईन्स आफिस का दृष्टिकोण जानने की कोशिश करते थे, हर नयी तकनीक के बारे में आँकड़े माँगते थे। जब मैं उनसे कोई जानकारी माँगता था तो झट से फाइलों और रपटों का अम्बार लगा देते थे, इशारा भर करते पर फोटोकापी करवाकर दे देते थे। उनके एक प्रमुख नेता ने मुझे समझाया कि निकट भविष्य में बी. एस. पी. दल्ली खदानों का पूर्ण मशीनीकरण जबर्दस्ती करने वाला है। इसका प्रतिरोध करने के लिए यूनियन के पास संगठित ताकत के अलावा सबसे बड़ा हथियार वैज्ञानिक जानकारी और आँकड़े हैं। यह शिक्षा उन्हें नियोगी के साथ काम करते हुए मिली जो मैनेजमेंट के साथ चर्चा करने के पहले सम्बंधित उत्पादन प्रक्रिया के बारे में सम्पूर्ण जानकारी से लैस होकर जाते थे।

* * *

25 दिसम्बर 1991 की शाम। अचानक यूनियन आफिस के सामने का खाली मैदान ट्रकों से भरने लगा। धड़ाधड़ एक के बाद एक लगभग 55 ट्रकें पूरा मैदान घेरकर यूँ खड़ी हो गयीं मानो किसी फौजी हमले की तैयारी में हों। कुछ ही देर बाद दफ्तर का हाल ढाई-तीन सौ मजदूर मुखियाओं से भर गया। मुद्दा अगली सबेरे भिलाई से निकलने वाली भाजपा अध्यक्ष डॉ. मुरली मनोहर जोशी की 'एकता यात्रा' का था। एक सप्ताह पूर्व ही छमुमो अध्यक्ष जनकलाल ठाकुर ने राज्य शासन को चुनौती दी थी कि यदि मजदूरों की माँगें नहीं मानी गयीं तो 'एकता यात्रा' हजारों मजदूरों की लाशों पर से गुजरेगी। जनकलालजी कई साथियों सहित रायपुर में वरिष्ठ शासकीय अधिकारियों के साथ चर्चा में व्यस्त थे। इधर मीटिंग हाल में मुखियाओं के बीच भिलाई आंदोलन के मुद्दों पर और 'एकता यात्रा' को रोकने के कार्यक्रम पर चर्चा चल रही थी। लगभग रात 12 बजे कुछ घटा, चंद मिनटों में ही ट्रकें जिस गति से आयी थीं उसी गति से मैदान खाली करके निकल गयीं। अगले दो मिनटों में ही यूनियन दफ्तर का हाल खाली हो गया। पूछताछ करने पर पता चला कि जनकलालजी का रायपुर से फोन आया था कि भोपाल से आश्वासन मिला है कि मजदूरों की माँगों को हल किया जायेगा। अतः 'एकता यात्रा' को

की घटनाओं का विवरण बताती रहीं, " पुलिस ने महिलाओं के हाथों से उनके बच्चों को छीन-छीनकर रेल की पटरियों पर फेंक दिया था। पुरुष पुलिस ने बेरहमी से महिलाओं को पीटा है। "

भगवन्तीन बाई ने हमसे शहीदों की सूची माँग ली ताकि उन पर वह गीत बना सके। अच्छे गीत गाने के कारण वह नियोगीजी की बहुत चहेती थी। उन्होंने हमें भी महँगाई की मार पर एक बढ़िया गाना सुनाया। हम फिर सौंकरा गाँव की ओर चल पड़े।

सौंकरा से हम खेतों की मेड़ों पर चलते हुए पास के पंचदेवरी गाँव की ओर बढ़े। रास्ते में कुछ महिलाएँ मिलीं जो धान की रोपणी कर रही थीं। उन्होंने हमें रोककर जामुल और दल्ली का हाल पूछा। इस क्षेत्र के मुख्य कार्यकर्त्ता बौंगड़ेजी के बारे में पूछताछ की। बौंगड़ेजी को घायल अवस्था में अस्पताल से ही गिरफ्तार कर लिया गया था और अब दुर्ग जेल में रखा गया है।

गाँव में पहुँचते ही गोलीकांड में शहीद प्रेम नारायण की स्मृति में बनाया हुआ ताजा शहीद स्तम्भ दिखा। फिर एक बार लोग इकट्ठे हो गये और जोश में बातें करने लगे। इस गाँव के लोग सतनामी समाज के हैं और इसलिए पहले से ही आपस में जुड़े हुए हैं। इस वजह से यहाँ के किसान भी छमुमो में शामिल हो गये हैं। गाँव में एक साधु भी है जो वर्ग संघर्ष और सर्वहारा क्रांति की बात पूरी आस्था के साथ करता है।

का. प्रेम नारायण को जाँघ में गोली लगी थी। रेल पटरी से उसे उठाकर जामुल कार्यालय में ले जाया गया था। वहाँ पुलिस ने छापा मारकर उसे गिरफ्तार किया था और फिर थाने में उसे बेरहमी से पीटा था। बाद में गम्भीर हालत में उसे अस्पताल पहुँचाया गया। पूरा एक दिन वह अस्पताल में दर्द से कराहता रहा परंतु फिर भी लगातार ' छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा जिंदाबाद ' के नारे लगाता रहा। आखिर उसने दम तोड़ दिया। बताया गया कि आमतौर पर चुपचाप रहने वाले प्रेम ने परीक्षा और संकट की घड़ी में गजब का साहस और जोश दिखाया था।

का. प्रेम नारायण के अलावा उसके दो भाई और दो बहनोई भी छत्तीसगढ़ डिस्टिलरीज़ में काम करते थे। 24 जनवरी के बाद से केवल एक ही भाई काम पर था जो आज भी है। प्रेम नारायण के पिताजी फिलहाल अपंग हैं, परंतु कारखाने की नींव इन्हीं के हाथों से डली है। इनके पास केवल डेढ़ एकड़ जमीन है इसलिए आर्थिक परेशानी बहुत है। प्रेम नारायण की माँ और एक भाभी भी आंदोलनकारियों के साथ उस दिन रेल पटरी पर थीं। हालाँकि वे पुत्र की मौत से शोकाकुल थीं, लेकिन उन्होंने लड़ाई जारी रखने के अपने संकल्प को बार-बार दोहराया।

शबाना बहन छत्तीसगढ़ डिस्टिलरीज़ के गेट पर 16 अप्रैल 1991 को हुए झगड़े के बाद पुलिस द्वारा लगाये गये प्रकरण के कारण पेशी में दुर्ग गयी हुई थीं। रेल पटरियों पर पुलिस ने उन्हें लाठियों और पत्थरों से पीटा। कुछ दिन तक वे घायल रहीं। जाँघों पर और घुटनों पर अभी भी निशान हैं। लाठी, गोली, न्यायालय की पेशी इन सब को तुच्छ मानती इस महिला ने सरकार और मालिकों के दमन के खिलाफ लड़ाई जारी रखने की बात की। फिर गाँव के करीब बीस लोग हमें खपरी तक छोड़ने गये। हम छमुमो का मुख्य गीत, ' छत्तीसगढ़ दाई के हावे रे गोहार . . . . ' को गाते हुए गाँव की सीमा तक पहुँचे और ' इंकलाब जिंदाबाद ' के नारे के साथ विदा हुए।

के घरों में फँस जाने के अलावा भिलाई के शारदापारा मोहल्ले में करीब 100 मजदूर औरतें तथा पुरुष फँस गये थे। इन्हें तीन दिन तक खिलाने-पिलाने तथा सुलाने के साथ-साथ उनके इलाज की व्यवस्था करने का जिम्मा बस्ती के निवासियों ने उठाया। इसी तरह मजदूरों का एक दल भिलाई की एक सिख बस्ती में भी फँसा था। कर्फ्यू में अपनी परवाह न करते हुए सिख साथियों ने इन आंदोलनकारी मजदूरों के भोजन व पानी की व्यवस्था के अलावा इनके परिवारों की खोज में भी मदद की।

सचमुच, छमुमो से प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से जुड़े ये आम लोग ही उस पीढ़ी के हैं जिसके कंधों पर छत्तीसगढ़ के जनांदोलन की विरासत सौंपने का सपना नियोगी ने देखा था।

* * *

आंदोलनों तथा सक्रिय कार्रवाइयों के दौरान उठाये गये कदम ही जनांदोलन की विरासत सँभालने वाली पीढ़ी के प्रशिक्षण का पहला पाठ होते हैं। भिलाई गोलीकांड के बाद कुम्हारी औद्योगिक क्षेत्र में हुई आम सभा में एक मजदूर साथी ने इस प्रक्रिया को ठीक संदर्भों में रखा था। उन्होंने कहा था, " सन् 1920 में हुए जलियाँवाला बाग गोलीकांड में लोगों को बेरहमी से मारते समय जनरल डायर एक बच्चे को भूल गया था। इस क्रूर कार्रवाई को देख रहा यह बच्चा बाद में शहीद ऊधम सिंह बना, जिसने जनरल डायर को उसके अपने देश इंग्लैंड में 20 साल बाद खत्म कर दिया। यदि भिलाई गोलीकांड के साक्षी बच्चे भविष्य की पीढ़ी के ऊधम सिंह बनकर तैयार हों तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं होगा। "

(अगस्त 1992)

विरासत का अर्थ समझाते मजदूर

" नियोगी ने अपनी यूनियन की शुरूआत लाल-हरे झंडे से की। इन संकेतों का क्या असर हुआ ? इसकी बानगी नियोगी की शवयात्रा के दौरान देखी जा सकती थी। ' राम नाम सत्य है ' की जगह ' नियोगी को लाल सलाम, लाल सलाम ' और ' का. नियोगी, जुग-जुग जियो, जुग-जुग जियो ' ने ले ली थी। नौजवानों द्वारा यह कहना कि ' मौत पर आँसू नहीं बहाओ ', क्या विकास के लक्षण नहीं है ? क्या इन आंदोलनों से मजदूरों ने यह राजनीतिक शिक्षा नहीं पायी कि कौन उनका वर्ग-शत्रु है ? किससे उनकी लड़ाई है ? "

— अनिल चमड़िया / अक्तूबर 1991

" मैं हाल ही में जब दल्ली राजहरा स्थित यूनियन के कार्यालय में पहुँचा तो नियोगी की तस्वीर के सामने एक मजदूर को एक के बाद एक दर्जन भर नारियल फोड़ते देखा। कारण पूछने पर मजदूरों ने बताया कि वह मजदूर नियोगी की अंत्येष्टि में शराब पी लेने के कारण नहीं गया था, जिसके पश्चाताप में वह नारियल फोड़ रहा है। "

— सुनीलम्

(' प्रतिपक्ष ', नवम्बर 1991, से उद्धृत)

25 मई 1992 को 'भिलाई महाबंद' कार्यक्रम के बदले एक आम सभा हुई। श्री कैलाश जोशी का वायदा मजदूरों के सामने रखा गया और उसके बाद पाँच हजार मजदूर भिलाई में धरना देकर तब तक के लिए बैठ गये जब तक कि समझौता वार्ताएँ सफल नहीं हो जातीं। अगले 36 दिनों की प्रक्रिया गौरतलब है चूँकि इन्दौर के श्रम आयुक्त की अध्यक्षता में बातचीत के कई दौर चले और हर दौर में छमुमो कई कदम आगे बढ़कर, समझौता करने के लिए धीरज और तर्कसंगत तौर-तरीकों के साथ प्रयत्नशील रहा। परंतु उद्योगपति हर बार कोई-न-कोई नया अड़ंगा लगाकर समझौता टलवाते रहे। कई अवसर तो ऐसे आये जब छमुमो के लोग तयशुदा बैठकों में दिनभर इंतजार करके लौट आये और उद्योगपति नदारद रहे। हालांकि छमुमो का अनुभवी नेतृत्व उद्योगपतियों के रवैये को समझ रहा था, किंतु उसने बातचीत के दरवाजे एक जुलाई तक खुले रखे। ये दरवाजे बंद करने की बर्बर कोशिश सरकार ने 1 जुलाई 1992 को रेल पटरी पर सत्याग्रह कर रहे पाँच हजार मजदूरों पर गोली चलाकर की। इस पूरे दौर में छमुमो ने जिस धैर्य और परिपक्वता का सबूत दिया वह नियोगी द्वारा 15 वर्षों से स्थापित परम्परा का परिणाम है।

नियोगी की दृष्टि में यूनियन के लिए मजदूर हित सर्वोपरि था। उन्होंने यूनियन को राजनैतिक रोटियाँ सेंकने का हथियार कभी नहीं बनने दिया। अतः अपनी जुझारू कार्यशैली के बावजूद मालिक या प्रबंधक वर्ग के साथ समझौता वार्ता सफल करने के लिए वे हर दरवाजे को खुला रखने में विश्वास रखते थे। भिलाई गोलीकांड के पूर्व के 36 दिनों में से हर दिन इस बिंदु पर स्वयं एक जीता-जागता दस्तावेज है जो सिद्ध करता है कि समझौता वार्ता के प्रति नियोगी द्वारा स्थापित परम्परा आज भी जिंदा है।

छमुमो के जनवादी तरीकों का एक महत्वपूर्ण नतीजा देशभर के जनांदोलनों, ट्रेड यूनियनों और मानवाधिकार संगठनों तथा राजनैतिक दलों के बीच उभर रही एकजुटता है। नियोगी की हत्या के तत्काल बाद 13 अक्तूबर 1991 को भिलाई में निकाली गयी करीब एक लाख लोगों की रैली, लगभग 230 उद्योगों के सामने दिया गया धरना और पूरे इलाके के करीब 4 हजार गाँवों में लगातार चले उपवास तथा सत्याग्रह कार्यक्रम, छत्तीसगढ़ के स्तर पर उभरी गैर-दलीय संगठनों की एकजुटता के सबूत हैं। 13 नवम्बर 1991 को मध्य प्रदेश भर के 50 संगठनों-जनांदोलनों के करीब 6-7 हजार लोगों की भोपाल में निकली रैली ने छत्तीसगढ़ आंदोलन के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर चलने के अलावा यह भी साफ कर दिया था कि परम्परागत राजनैतिक दलों की टक्कर में एक वैकल्पिक राजनैतिक ताकत प्रदेश में मजबूती से पैर जमा रही है। इसी तरह देशभर के कई संगठनों ने, जिनमें उपरोक्त गैर-दलीय संगठनों के अलावा विभिन्न प्रगतिशील विचारधाराओं से जुड़े सांस्कृतिक संगठन भी शामिल हैं, अपने-अपने इलाकों में कार्यक्रम करके इस वैकल्पिक उभार का परिचय दिया। नियोगी की हत्या के कुछ घंटों के अंदर ही 28 सितम्बर 1991 को दोपहर को दिल्ली में "छत्तीसगढ़ आंदोलन समर्थन मोर्चा" बनाया गया। इसमें दिल्ली का सूटक, सीटू, हिन्द मजदूर किसान पंचायत समेत लगभग 75 संगठन शामिल हुए थे। एकजुटता की यह प्रक्रिया भिलाई गोलीकांड के बाद और भी तेज हुई है। मुख्य धारा के वामपंथी दल जो अब तक छमुमो के तरीकों और उसकी राजनीति से परहेज रखते थे तथा अक्सर उसके खिलाफ ही बोलते थे, भिलाई गोलीकांड के बाद छमुमो के साथ मिलकर मजदूरों की माँगों को हल करवाने के लिए संघर्ष में कूदने तक की तैयारी दिखा रहे

विरासत का अर्थ समझाता जन आंदोलन

राकेश दीवान

पिछले साल 28 सितम्बर 1991 को शंकर गुहा नियोगी की हत्या के बाद एक सवाल अलग-अलग स्वार्थों और कुछ ईमानदार सरोकारों के साथ लगातार उछाला गया कि नियोगी की हत्या के बाद छमुमो और उससे जुड़े मजदूर संगठनों को नेतृत्व कौन देगा ? इन संगठनों की संगठनात्मक ताकत और देश भर के जनांदोलनों के बीच उनकी अहमियत को देखते हुए इस सवाल का उठना स्वाभाविक भी था। कई अखबारी रपटों और बयानों के जरिये राजनैतिक दलों के वरिष्ठ नेताओं से लेकर यूनियन के साथियों, सहयोगियों तक के नाम नेतृत्व के सम्बंध में उछाले जाते रहे। कुछ ने तो इकाई तर्ज पर नियोगी की पत्नी आशा गुहा नियोगी और उनकी बड़ी बेटी क्रांति तक का नाम आंदोलन के भावी नेता के रूप में पेश कर दिया था।

छमुमो के नेतृत्व की विरासत के सिलसिले में यदि खुद नियोगी से पूछा जाता तो उनकी राय क्या होती ? हत्या के कुछ दिन पहले दिल्ली में एक पत्रकार से बातचीत करते हुए उन्होंने कहा था, " वारिस तो सम्पत्ति वाले लोग खोजते हैं, लेकिन आंदोलन में वारिस पूरी पीढ़ी होती है। उसी पीढ़ी पर यह दायित्व जाता है कि वह आंदोलन की विरासत का विकास करे। (पृ. 337) " नियोगी की इस टिप्पणी का महत्व समझने के लिए छमुमो के नेतृत्व और समूचे संगठन द्वारा सिर्फ नियोगी हत्याकांड से लेकर भिलाई गोलीकांड के बीच की गयी कार्रवाइयों की पड़ताल ही पर्याप्त होगी।

किसी राजनैतिक दल या जनांदोलन को मात्र दो वर्षों में इतनी कठिन और विपरीत परिस्थितियाँ नहीं भोगनी पड़ी होंगी जितनी छमुमो को इतने कम समय में सिर्फ भिलाई में ही भुगतनी पड़ीं। उद्योगपतियों की निजी अवैध सेना व माफिया गुट, स्थानीय प्रशासन और पुलिस तथा असहमत राजनैतिक जमातों के लगातार सीधे हमलों-आरोपों के साथ-साथ छमुमो को सबसे बड़ा झटका शंकर गुहा नियोगी की हत्या से लगा। किसी भी मोहल्ला-स्तर के छुटभैये नेता की सिर्फ मामूली पिटाई का नतीजा आमतौर पर सरकारी या व्यक्तिगत सम्पत्ति के नुकसान और दंगे-फसाद के रूप में ही होता है। लेकिन व्यापक रूप से देखें तो कुछ [illegible] साथी की हत्या के बाद एक मामूली कंकड़ तक का न फेंका जाना नियोगी की विरासत को सँभालने वाली पीढ़ी की परिपक्वता, संयम और राजनैतिक समझदारी का सबूत है। नियोगी की हत्या के बाद छमुमो और उसके वर्तमान नेतृत्व ने जिस संयमित और शांतिपूर्ण ढंग से अपने आक्रोश और ताकत का इजहार किया, उसने एक तरफ तो सरकार, प्रशासन तथा उद्योगपतियों के चरित्र को देशभर के सामने परत-दर-परत उघाड़ दिया। दूसरी तरफ, मजदूर आंदोलन ने अपने संघर्ष के मुद्दों को लगातार केंद्र में बनाये रखकर आंदोलन व प्रतिरोध की एक पक्की और कारगर पद्धति देशभर के जनांदोलनों के सामने रखी।

आमतौर पर सरकारें जनांदोलनों के हिंसक हो जाने का ही इंतजार करती हैं। अक्सर पुलिस और प्रशासन, निहित स्वार्थों से मिलकर, नाजुक परिस्थितियों में जनांदोलनों को हिंसा

छमुमो अपने जन्म से ही तरह-तरह के आरोपो व सवालों का सामना करता रहा है। ऐसे अधिकांश आरोप शासक वर्ग और उसके विभिन्न प्रतिनिधियों द्वारा ही लगाये गये हैं। लेकिन इस बार नियोगी की हत्या के बाद उछाले गये आरोप उस राजनैतिक संस्कृति के प्रतीक की तरह उभरे हैं जो आजादी के बाद से हमारे देश में धीरे-धीरे पनपी और फली-फूली है। इनके अनुसार नियोगी तो एक महान नेता थे लेकिन उनके बाद का छमुमो का नेतृत्व अतिवादी, अधकचरे और अड़ियल लोगों के हाथ में है। जुलाई 1992 के भिलाई गोलीकांड को ऐसे ही नेतृत्व की अपरिपक्वता का नतीजा बताते हुए यह भी कहा जा रहा है कि यदि इस समय नियोगी जीवित होते तो यह दुर्घटना नहीं हो पाती। पते की बात यह है कि ये वही राजनीतिज्ञ, प्रशासनिक अधिकारी, उद्योगपति और अखबार वाले हैं जो नियोगी के जीते-जी उन्हें तरह-तरह की घटिया गालियाँ देते नहीं अघाते थे। नियोगी के जीवनकाल में भी छमुमो के आंदोलन पर दो बार दल्ली राजहरा में और एक बार राजनांदगाँव में पुलिस ने निहत्थे मजदूरों पर गोलियाँ चलायी थीं और कुल मिलाकर 16 मजदूरों को मौत के घाट उतार दिया था। तब भी यही लोग थे जिन्होंने गोली चालन का पूरा दायित्व नियोगी के माथे मढ़ दिया था और उन्हें जातिवादी, नक्सलपंथी, विघटनकारी आदि संज्ञाओं से 'सुशोभित' किया था।

नेतृत्व की चिंता करने वाला एक और तबका भी है जिसका छमुमो के भविष्य को लेकर ईमानदार सरोकार है। इन लोगों का कहना है कि सीधे-सादे स्थानीय मजदूरों के बीच से उभरा छमुमो का वर्तमान नेतृत्व कैसे इतने बड़े छत्तीसगढ़ में फैले हुए बहुआयामी संगठन को सँभाल पायेगा। इसके अलावा, आंदोलन के कुछ तथाकथित 'हितैषियों' का मानना है कि अंततः छमुमो को नियोगी के स्तर का कोई आदर्श नेतृत्व स्वीकारना पड़ेगा, अन्यथा नेतृत्व की लड़ाई में संगठन टूट जायेगा।

एक [illegible] सरोकारों और [illegible] तरफ [illegible] छमुमो के नेतृत्व पर उठाये गये [illegible] दो [illegible] मौजूद हैं। [illegible] लोग आसानी से उन हजारों [illegible], समझ [illegible] संघर्ष में टिके रहने [illegible] को खारिज कर देते हैं, जो [illegible] की ताकत [illegible] स्रोत रहे हैं। दूसरी, [illegible] भी बड़े नेता की मृत्यु के बाद विरासत का प्रश्न किसी-न-किसी व्यक्ति विशेष के ही संदर्भ में देखा जाता है, कभी दिवंगत नेता के किसी वंशज में या कभी उसकी सत्ता में किसी करीब के साझेदार या पिट्ठू में। विरासत कभी राजनैतिक [illegible], संघर्ष और परम्पराओं की भी हो सकती है, यह मूल्य वर्तमान व्यक्तिवादी राजनैतिक संस्कृति के चलते कहीं खो चुका है।

छमुमो आम मजदूरों की ताकत, विश्लेषण की क्षमता और राजनैतिक समझ को सँवारता और उसे आगे बढ़ाता रहा है। छमुमो की संगठन और संघर्ष की रणनीति का आधार ही यह मान्यता रही है कि मजदूर गरीब भले ही हो, लेकिन दयनीय या कमजोर कतई नहीं होता। ऐसे में छमुमो के वर्तमान नेतृत्व या उससे जुड़े हुए मजदूरों की क्षमताओं को कम करके आँकना बेमानी नहीं तो और क्या है ?

रास्ता दिखाती शहादत / अनिल सद्गोपाल

नियोगी की हत्या हुए लगभग तीन महीने बीत चुके थे। मैं दल्ली राजहरा में शहीद अस्पताल के सामने चाय के एक ढाबे में बैठा हुआ था। पास ही चार-पाँच खदान मजदूर चाय पी रहे थे और सामने खड़े, मटमैले-फटे कपड़े पहने हुए एक सिख ट्रक ड्राइवर से बात कर रहे थे। वह बड़े जोश-खरोश के साथ मजदूरों को कुछ समझाने की कोशिश कर रहा था। अचानक उस सरदार ने मेरा ध्यान खींचते हुए आग्रह किया, "देखिये ना साब, ये लोग मेरी बात पर भरोसा नहीं कर रहे। मैं इनको कहे जा रहा हूँ कि 'बैगा' कहीं नहीं गया है, वो यहीं पहाड़ों में घूम रहा है। उसकी नजर यहाँ की हर हरकत पर है। भिलाई में इतना बड़ा आंदोलन हो रहा है, हजारों मजदूर बेरोजगार कर दिये गये हैं। आप ही बताइये ना साब, क्या 'बैगा' इनको छोड़कर कहा जा सकता है?" मैं कुछ समझ नहीं पाया। यूनियन आफिस लौटकर मैंने पूछताछ की कि इस बात का मतलब क्या है। मुझे समझाया गया कि पूरे इलाके में नियोगी को लोग 'बैगा' कहने लगे थे जिसका छत्तीसगढ़ी में अर्थ होता है 'सयाना' या 'जानकार' या 'ज्ञानी'। यूनियन के लोग बता रहे थे कि चूंकि हम सब शहीद नियोगी के रास्ते पर अमल करने की कोशिश कर रहे हैं, अतः उस सरदार-ड्राइवर को लग रहा होगा कि 'बैगा' की आत्मा अभी भी हम सबको रास्ता दिखा रही है। ◻

दस्तावेज

शहादत की कसम

"अमर शहीद शंकर गुहा नियोगी! हम तुम्हारी शहादत की कसम खाते हैं कि अपनी कुर्बानी से जो रास्ता तुमने बनाया है, उस पर हम सब मेहनतकश जिंदगी की आखिरी साँस तक चलेंगे। अपनी शहादत से, अपने खून से, जो पवित्र ज्योति तुमने जलायी है उसे हम बुझने नहीं देंगे। जब भी, जहाँ भी जरूरत पड़ेगी, हम उस ज्योति को जलाये रखने के लिए अपने भी खून की आहुति देंगे, ताकि छत्तीसगढ़ और हिन्दुस्तान और समस्त दुनिया के मेहनतकश किसान-मजदूर जब-जब आगे बढ़ेंगे तो उन्हें तुम्हारी शहादत की रोशनी से रास्ता दिखता रहे।"

— छत्तीसगढ़ के मजदूर-किसान

भिलाई,
संघर्ष यात्रा की रैली,
13 अक्तूबर 1991

नवम्बर 1991 के पहले सप्ताह में जब नियोगी हत्याकांड की जाँच का काम केंद्रीय जाँच ब्यूरो ने उठा लिया, तब छत्तीसगढ़ के मजदूरों और किसानों ने क्रमिक अनशन समाप्त किया। उस दौरान नियोगी के प्रति छत्तीसगढ़ के लोगों का लगाव देखते ही बनता था। छमुमो द्वारा प्रसारित नियोगी का पोस्टर लेकर गाँव-गाँव में लोग चौगानों पर धरना देकर बैठते थे। दिन भर नियोगी और मजदूरों के संघर्ष पर कविताएँ, गीत बनाकर गाये जाते थे, छोटी-छोटी नुक्कड़ गोष्ठियाँ होती थीं और स्वतःस्फूर्त जुलूस निकलते थे।

अक्तूबर-नवम्बर के महीनों में नियोगी को श्रद्धांजलि देने के लिहाज से भिलाई और दल्ली राजहरा में देश भर के वरिष्ठ राजनीतिज्ञों के आने का ताँता लगा रहा। इनमें जनता दल के वी. पी. सिंह, रामविलास पासवान, रघु ठाकुर, जॉर्ज फर्नाण्डिस, स्वामी अग्निवेश, आई. पी. एफ. के डॉ. बी. एस. यदु, शम्भुनाथ सिंह तथा चित्तरंजन सिंह, इफ्टू के का. पी. के. मूर्ति, कांग्रेस के विद्याचरण शुक्ल, अरविंद नेताम, झुमुकलाल भेंड़िया, चन्दूलाल चंद्राकर तथा अजित जोगी, भाजपा के दिलीप सिंह जूदेव, चंद्रशेखर साहू, मार्क्सिस्ट को-ऑर्डिनेशन कमेटी के श्री आनंद महतो आदि शामिल हैं। इन वरिष्ठ राजनीतिज्ञों ने भिलाई तथा दल्ली में आम सभाएँ सम्बोधित कीं तथा मजदूरों से उनके संघर्ष में सहयोग करने का वायदा किया।

नियोगी को श्रद्धांजलि देने और मजदूर आंदोलन के प्रति अपनी एकजुटता दर्शाने के लिहाज से जनांदोलनों और स्वयंसेवी संगठनों के वरिष्ठ प्रतिनिधि भी दल्ली राजहरा और भिलाई आये थे। इनमें भोपाल गैस पीड़ित महिला उद्योग संगठन, नेशनल फ़िशरमेन्स फोरम (केरल), छत्तीसगढ़ महिला जागृति संगठन (रायपुर), ऑल झारखंड स्टूडेन्ट्स यूनियन तथा झारखंड मुक्ति मोर्चा, जन विकास आंदोलन, फ़ेडरेशन ऑफ़ वालंटरी एजेंसीज़ (कर्नाटक), म. प्र. स्वयंसेवी संस्था संघ, प्रिया (दिल्ली), समता संगठन (उड़ीसा), किसान आदिवासी संगठन (होशंगाबाद), म. प्र. विद्युत कर्मचारी जनता यूनियन, पी. यू. सी. एल., जशपुर समाज सेवा समिति (रायगढ़, म. प्र.), बंधुआ मुक्ति मोर्चा (दिल्ली), खेदुत मजदूर चेतना संगठ (झाबुआ), प. बंगाल सांस्कृतिक समन्वय समिति, मांझी जन आंदोलन, पी. यू. डी. आर. (दिल्ली), निशांत नाट्य मंच (दिल्ली) आदि शामिल हैं।

नियोगी की हत्या से समूचे देश में खलबली मची थी। हत्या के विरोध में और गहरे सरोकार से जगह-जगह आंदोलन, विरोध प्रदर्शन किये गये थे। म. प्र. के सुदूर झाबुआ जिले में आदिवासियों के साथ काम कर रहे जन संगठन 'खेदुत मजदूर चेतना संगठ' ने अलीराजपुर में प्रभावशाली रैली निकाली। नियोगी का कोई चित्र उपलब्ध न होने के कारण मजदूरों के हथियार यानी गैंती व फावड़े को मंच पर रखकर आदिवासी किसानों ने अपने साथी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की। 'नर्मदा बचाओ आंदोलन' ने बड़वानी (म. प्र.) में मूक जुलूस निकाला तथा आम सभा का आयोजन किया। म. प्र. के स्वयंसेवी संगठनों तथा जनांदोलनों के संयोजन में 14 अक्तूबर 1991 को प्रदेश भर के 6-7 हजार लोगों ने भोपाल में मूक रैली निकाली तथा राज भवन के सामने दिनभर के धरने का आयोजन किया गया। इस धरने के बाद राज्यपाल को ज्ञापन देकर नियोगी हत्याकांड की सी. बी. आई. से जाँच करवाकर अपराधियों को गिरफ्तार करने तथा भिलाई के मजदूरों की माँगों को मंजूर करने का आग्रह किया गया। ग्वालियर में सीटू और नगरपालिका कर्मचारियों की यूनियन ने शहर में रैली तथा शोकसभा आयोजित की तथा भिलाई तक की एक साइकिल यात्रा निकाली।

गठबंधन को तोड़ने का प्रयास किया और इसीलिए उन्हें उद्योगपतियों और उनके माफिया गिरोहों के कोप का शिकार होना पड़ा। लेकिन शोषित और निरीह मजदूरों ने उनमें आशा की किरण देखी और हजारों की तादाद में उनके साथ हो लिये। अन्य ट्रेड यूनियनों का जनाधार डगमगाने लगा और इससे उद्योगपति घबराये और विचलित हुए। मजदूरों में आस्था बनने लगी कि नियोगी और उनका छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा उनको सफलता की ओर ले जायेगा। दूसरी ओर नियोगी जितना अधिक सक्रिय हुए, उद्योगपति भी उसी अनुपात में अड़ियल बने। यह स्पष्टतः टकराव की स्थिति थी। इसके बावजूद बिना विचलित हुए नियोगी ने मजदूरों के हकों के लिए संघर्ष जारी रखा और अंततः इसी सिलसिले में अपने जीवन की कुर्बानी दे दी।

यह समिति इस बात से चकित है कि उद्योगपतियों ने किस प्रकार अपने उच्च स्तरीय सम्पर्कों के सहारे अपने पर तनिक भी आँच नहीं आने दी है। प्रशासन ने ठीक समय पर उचित कार्रवाई न करके और कानून के अनुसार आवश्यक कदम न उठाकर उद्योगपतियों के दमनात्मक व मनमानीपूर्ण हथकंडों का ऐसा माहौल बनने दिया है जिसमें उन्हें बिना किसी डर के अपनाया जा सके। भिलाई क्षेत्र में सही और गलत का भाव ही नहीं बचा है और हमें ऐसा लगता है कि उद्योगपतियों और सत्ताधारियों को अपनी गलती का रत्ती भी अहसास नहीं है।

हमारा यह भी मानना है कि औद्योगिक दायरे में बहुत सी विकृतियों को पनपने दिया गया है। यदि मजदूरों के हकों की रक्षा की जानी है तो इस हेतु बनाये गये संस्थानों को स्वतंत्र रूप से बिना किसी हस्तक्षेप के काम करने दिया जाना चाहिए। परंतु जब भी सरकार के सामने कानून का उल्लंघन होने के मामले आते हैं तो मुसीबत से बचने के लिए निगरानी एवं नियंत्रण रखने वाले संस्थानों पर दबाव डालकर उनको निष्क्रिय बना दिया जाता रहा है। जब भी ऐसा हुआ उस समय सत्ता के शिखर पर पदस्थ लोग भी प्रमादक व उदासीन मुद्रा अपनाकर तमाशा देखते रहे हैं।

यह सब तो उस समय घट रहा है जब हमारे अपने देशवासी और उनके द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि सत्ता की बागडोर सँभाले हुए दिखते हैं। हम यह सोचकर सिहर उठते हैं कि उस समय क्या होगा जब नयी औद्योगिक नीति और 'उदारवादी' कदमों के फलस्वरूप विदेशों से पूँजी लोग इस क्षेत्र में आ जायेंगे जिन्हें अपने पूँजी निवेश के आधार पर हम पर [illegible] का अधिकार मिल जायेगा। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक के पास औद्योगिक देशों और तीसरी दुनिया के लिए [illegible] नियम हैं। अनेक लातीनी अमरीकी और अफ्रीकी देशों में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों [illegible] के किस्से सर्वविदित हैं, इन्हें भुलाकर [illegible] जा सकता। भोपाल में [illegible] के तांडव नृत्य से जो [illegible] भी हमारे [illegible] है कि भविष्य में मजदूरों [illegible] [illegible] [illegible] यह सब [illegible] और बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ यहाँ टिकी रहें एवं फलें-फूलें। उस समय भारतीय [illegible] [illegible] जैसे [illegible] दरकार होगी।

([illegible] ; [illegible] से अनूदित)

दहियान बाँध का आंदोलन चला रहे थे। बीच-बीच में पुलिस उनकी तलाश करती रहती थी लेकिन वे पकड़ में नहीं आते थे। भागकर जंगल में छिप जाते थे। कभी-कभी गुस्से में आकर पुलिस उनकी जगह मुझे पकड़कर बालोद थाना ले जाती थी और उनके बारे में पूछताछ करती थी। मैं झूठे बयान देकर उन्हें परेशान करता था।

भिलाई से कामरेड लोग यहाँ आकर, छिपकर मीटिंग करते थे। पुलिस ने दानीटोला खदान में नियोगी के नाम का नोटिस लगा दिया था। उसमें नियोगी को पकड़वाने वाले को इनाम का लालच भी दिया गया था।

मैं उन्हें सायकिल पर बैठाकर भिलाई ले जाता था। वहाँ वे नाटक खेलते थे। एक बार नाटक खेलने पर उन्हें दस रुपया इनाम में मिला था। हाफपैंट पहनकर वे खदान में काम करने जाते थे व मन लगाकर काम करते थे। सन् 1974 में एक दिन नियोगीजी ने मेरे सामने मेरी बेटी आशा के साथ अपनी शादी का प्रस्ताव रखा। सुनते ही मैंने गुस्से में टंगिया लेकर उन्हें खदेड़ दिया। मेरा गुस्सा देखकर उस समय वे वहाँ से चले गये लेकिन कुछ दिनों बाद फिर वापस आये। मैंने देखा कि वे चुपचाप घर के बाहर खड़े पानी में भीग रहे थे। मुझे उन पर दया आ गयी और मैंने उन्हें घर में बुला लिया। बाद में मैंने अपनी बेटी आशा के साथ उनकी शादी कर दी।

❑

(मूल बंगला से अनूदित अंश ; अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित 'संघर्ष औ' निर्माण ' से साभार।)

मैंने उन्हें नौकरी दी

शंकरलाल काबरा

सन् 1971 के मई-अप्रैल महीने में मुझे दानीटोला खदान में ठेके का काम मिला। मेरे मुंशी दशरूराम एक दिन नियोगीजी को मेरे पास लेकर आये। उस समय मैं उन्हें शंकर के नाम से जानता था। उनसे बात करके मुझे बहुत अच्छा लगा था। मैंने उन्हें नौकरी दे दी। वे मेरे यहाँ मैनेजर का काम करते थे।

मेरा ठेका तीन महीने चला। नियोगीजी का व्यवहार बहुत अच्छा था। वे ईमानदार इंसान थे। सही हिसाब-किताब रखते थे। अंग्रेजी में मस्टर रोल एवं अकाउंट बनाते थे।

मेरा ठेका खत्म होने के बाद मेरे मुंशी दशरूराम को ठेका मिला। बाद में मुझे ज्ञान हुआ कि इसमें नियोगीजी का काफी सहयोग रहा। वे दशरूराम के पास जाकर काम करने लगे। वे राजनीति से जुड़े हुए हैं, यह मैं उस समय नहीं जानता था। बाद में पता चला कि वे बहुत बड़े नेता बन गये हैं। परंतु जब भी वे बालोद की ओर आते थे तो मुझसे स्नेहपूर्वक मिलकर जाते थे।

❑

(मूल बंगला से अनूदित अंश ; अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित 'संघर्ष औ' निर्माण ' से साभार।)

पेट्रोल पम्प के पास गिरफ्तार कर उन्हें दुर्ग जेल भेज दिया गया। अगले दिन जब हमें इसकी खबर मिली तो हम सब बहुत दुःखी हुए। उस समय वे दशरू ठेकेदार के पास काम करते थे, इसलिए उन्हें 2-3 माह बाद ही रिहा कर दिया गया। इस बीच पुलिस ने उन्हें बहुत प्रलोभन दिये। उनसे कहा कि यदि तुम संगठन बनाने का काम छोड़ दोगे तो तुम्हें नौकरी दिलवा देंगे और तुम्हारी शादी करवा देंगे। पर वे नहीं माने। अंत में उन्होंने पुलिस को आश्वासन दिया कि जेल से छूटने पर वे कुछ काम-धंधा करेंगे।

जेल से छूटकर तो वे खुलकर घूमने लगे। हमारे घर से वे डोंडी लोहारा क्षेत्र के केरी-जुंगेरा गाँव जा पहुँचे। वहाँ अपने दोस्तों से पैसा लेकर बकरी का धंधा शुरू किया। दरअसल वे इस बहाने गाँव-गाँव घूमकर संगठन बनाने की कोशिश करते थे। बकरी लेकर वे भिलाई जाते थे और साथियों के साथ मीटिंग करते थे। पुलिस सोचती थी कि वे बकरी का धंधा कर रहे हैं। भिलाई से उनके साथी छिप-छिपकर जंगल के रास्ते दानीटोला आते थे।

धीरे-धीरे दानीटोला में आंदोलन शुरू होने की स्थिति में आ गया। वे लाल झंडा यूनियन (एटक) के साथ जुड़ गये। जुलूस और आम सभाएँ शुरू हो गयीं। छोटे-बड़े, एक-दो आंदोलन भी हो गये। वे दानीटोला से मजदूरों के साथ अक्सर दल्ली राजहरा में एटक के दफ्तर जाते थे।

उस समय हमारे घर के लोग मेरी शादी के लिए कोशिश कर रहे थे। उन्होंने (शंकर ने) मुझसे कहा कि इतनी कम उम्र में शादी करना ठीक नहीं है। लेकिन मेरे माँ-बाप से यह सब कौन कहेगा, यह सोचकर मैंने कहा कि वे लोग जो तय करेंगे वही होगा। इस पर उन्होंने मुझसे पूछा, " क्या मुझसे शादी करोगी ? " मैं बोली, " तुम परदेसी हो, परदेसी लोग यहाँ से शादी करके भाग जाते हैं। ऐसा मेरे साथ भी हुआ तो मैं क्या करूँगी ? " वे बोले, " मैं सब कुछ छोड़कर तुम लोगों के भरोसे यहाँ आया हूँ। अब तुम लोगों को छोड़कर मैं कहीं नहीं जाऊँगा। " तभी से वे मुझे अच्छे लगने लगे थे। मैंने पैसे वगैरह की बात नहीं सोची और उन्हें मेरे माँ-बाप से बात करने के लिए कहा। माँ तो राजी हो गयीं, लेकिन पिताजी ने झगड़ा करके उन्हें भगा दिया। फिर वे कहीं चले गये। कुछ समय बाद वे वापिस लौट आये और पिताजी को फिर से समझाने की कोशिश की। उस समय मेरी मंझली बहन उन्हें चिढ़ाकर पूछती थी कि कैसे लौट आये। वे झेंपकर कहते थे, " और मैं कहा जाऊँ ? " अंत में पिताजी ने शादी के लिए मंजूरी दे दी।

हमारी शादी सन् 1974 में दानीटोला में हुई, पर वहाँ के रीति-रिवाज से नहीं। कोई पूजा-पाठ नहीं हुआ, केवल कुछ दोस्त लोग आये, भोजन किया, खुशियाँ मनायीं और हमारी शादी हो गयी।

शादी के बाद भी वे हमारे घर में ही रहते थे। कुछ माह बाद स्व. इंदिरा गांधी ने आपातकाल घोषित कर दिया। पुलिस उन्हें फिर ढूँढ़ने लगी। वे अंडरग्राउंड हो गये और जंगल में रहने लगे। उनके साथी लोग हमारे घर से खाना लेकर उन्हें पहुँचाते थे। मुझे मालूम नहीं रहता था कि वे कहाँ रह रहे हैं, पर अचानक बीच-बीच में घर आ जाते थे। अपने आने-जाने का किसी से भी जिक्र करने के लिए मना करते थे।

एक बार रात को पुलिस ने हमारे घर को घेर लिया। खबर मिलते ही वे फुर्ती से घर

अतः हमारे लिए मकान भी वही बना देंगे। हुआ भी ऐसा ही। मजदूरों के पैसों से हमारी झोपड़ी बनी और हम राजहरा चले आये।

रहने की व्यवस्था तो हो गयी लेकिन खाने की व्यवस्था का क्या होगा ? मजदूर साथियों ने खाने का इंतजाम भी किया। चावल-दाल यूनियन आफिस से आने लगा। हफ्ते भर या 15-15 दिन का चावल इकट्ठे आ जाता था। जैसे-तैसे करके खाने एवं रहने का इंतजाम हो गया, कपड़ों की परेशानी फिर भी थी। यूनियन से साल-दो साल में एक बार कपड़ा मिलता था। मेरे पास तन ढँकने के लिए एक ही साड़ी होती थी, कभी-कभी लुंगी पहनकर भी दिन बिताये हैं। बच्चों के लिए चड्डी तक नहीं मिल पाती थी। बच्चे जब कुछ खाना माँगते थे तो मैं उदास होकर उनसे कहती थी कि ऐसा कब तक चलेगा। वे हँसते थे, कभी-कभी परेशान भी हो जाते थे।

इसके बाद यूनियन में पूर्णकालिक लोगों को पैसा देना शुरू हो गया, जो कि जरूरत के मुताबिक बहुत ही कम था। ज्यादातर वे आधी रात को घर वापिस आते थे, फिर सुबह निकल जाते थे। किसी दिन यदि थोड़ी देर रुक जाते थे तो बहुत से लोग घर मिलने आ जाते थे। वे हम लोगों को समय नहीं दे पाते थे। जब रात को वे घर आते थे तो बच्चे सो चुके होते थे। इसलिए बच्चों से उनकी मुलाकात कम ही हो पाती थी। बीच-बीच में मेरे मन में बहुत सी बातें जमा होती रहती थीं। सोचती थी कि जब वे घर आयेंगे तो बहुत कुछ कहूँगी। लेकिन जब वे दिन भर मेहनत करके, बहुत सी चिंताएँ लेकर घर आते थे तब उनका मुँह देखकर मैं कुछ भी नहीं कह पाती थी। कभी-कभी हमारे बीच झड़प हो जाती थी – जैसे, जब बहुत से लोगों के अचानक घर आने पर उनके लिए चाय बनाने को कहते थे लेकिन उस वक्त घर पर चायपत्ती या दूध नहीं होता था। मेरे कुछ कह देने पर उन्हें बहुत गुस्सा आता था, किंतु शांत होने में भी समय नहीं लगता था।

पारिवारिक जरूरतों की खबर वे नहीं रख पाते थे। एक बार की घटना याद आती है जब हमारा लड़का जीत 4 महीने का था। टट्टी-उल्टी की बीमारी (आंत्रशोथ) होने से उसकी हालत खराब होने लगी, मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करूँ ? पास में एक भी पैसा नहीं था। मैंने एक मजदूर साथी को उनके पास भेजा। उस समय मीटिंग चल रही थी। मजदूर साथी से बच्चे की खबर सुनकर बोले, " मैं क्या करूँ, मैं डाक्टर तो नहीं हूँ। मुझे मेरा काम करने दो। " मजदूर साथी लौट आया, लेकिन मुझसे कुछ कह नहीं पाया। बच्चे की तबियत बिगड़ती गयी। रात 11 बजे जब वे घर लौटे तो मैं दुःख से रो पड़ी। फिर वे एक मजदूर साथी को लेकर तुरंत अस्पताल गये। बच्चा बच गया।

दूसरों की तकलीफ दूर करते-करते उनके दिन गुजर जाते थे, पर अपनी तकलीफ वे किसी को भी नहीं कह पाते थे। जितनी देर घर में रहते थे, उस दौरान ज्यादातर वे कुछ-न-कुछ सोचते रहते थे, किसी से कुछ कहते नहीं थे। सोचते-सोचते जब किसी समस्या के समाधान का सूत्र उन्हें मिल जाता था तो वे खूब खुश हो जाते थे, उनकी आँखों में खुशी की चमक दिखने लगती थी।

बच्चों से वे बेहद प्यार करते थे। उनकी पढ़ाई एवं चरित्र निर्माण के बारे में बहुत सोचते थे। वे बड़े होकर यूनियन का काम करें, ऐसी बातें उनसे करते थे।

खाली डिबिया जरूर लेकर आते थे।

मेरे मन में टेरेलीन / टेरीकाट के कपड़े पहनने की बहुत इच्छा होती थी। हमारे पास वैसे भी कपड़े कम हैं और वह भी सूती हैं जो देखने में अच्छे नहीं लगते। मैंने बाबू से कहा कि मुझे टेरेलीन का कपड़ा दिला दो। बाबू बोले, " बेटी, सूती कपड़ा अच्छा है। खादी उससे भी अच्छा है क्योंकि हमारे देश के गरीब लोग इसे बनाते हैं। सिंथेटिक कपड़ा शरीर के लिए हानिकारक भी है। इसके अलावा विदेशी लोग इससे मुनाफा कमाकर अपने देश ले जाते हैं। इसीलिए मैं खादी पहनता हूँ, इससे शरीर को आराम भी मिलता है।" दाई (माँ) भी जब टेरेलीन की साड़ी पहनती थीं तो बाबू को अच्छा नहीं लगता था।

बाबू को चाय बहुत पसंद थी। एक दिन उन्होंने मुझे चाय बनाने के लिए कहा। उस समय मैं बहुत छोटी थी। मैं चाय बनाकर तो ले आयी पर वह ठीक नहीं बन पायी थी, किंतु बाबू ने मुझे उत्साह देने के लिए कहा, " बहुत अच्छी चाय बनी है।"

बाबू अपना काम खुद किया करते थे। एक बार बाबू का पैर टूट गया था जिसके कारण कुएँ से पानी निकालने में उन्हें तकलीफ होती थी। हम लोग उन्हें पानी निकालकर देना चाहते थे तो वे यह कहकर मना कर देते थे कि, " नहाना मुझे है, इसलिए पानी भी मुझे निकालने दो।"

बाबू मिलाई गये तो कुछ दिनों के लिए मैं भी उनके साथ वहाँ गयी। यूनियन के दफ्तर में सुधाजी काम करती थीं। पढ़ाई में मदद के लिए मैं बीच-बीच में उनके पास जाती रहती थी। एक दिन सुधाजी टाइप कर रही थीं। मैंने उनसे गणित समझाने के लिए कहा। बाबू यह देख रहे थे। उन्होंने मुझे बुलाकर कहा, " देखो तुम अपने फायदे के लिए यूनियन के काम में रुकावट डाल रही हो। यह ठीक नहीं है। जब सुधाजी खाली होंगी तब उनसे गणित समझना।"

एक बार बाबू हवाई जहाज से कहीं बाहर गये थे। वापिस आकर उन्होंने हवाई यात्रा का अनुभव बताया। सुनकर मैंने कहा, " बाबू, हमें क्यों नहीं ले गये ? हमें भी हवाई जहाज में चढ़ने का मौका मिलता तो कितना मजा आता।" बाबू बोले, " मैं यूनियन के काम से गया था। इसलिए यूनियन ने मुझे पैसा दिया। यूनियन के पैसे से परिवार लेकर घूमना उचित नहीं है। तुम बड़ी हो जाओ, लोगों के लिए काम करो, तुम्हें भी हवाई जहाज में उड़ान भरने को मिलेगा। यह नहीं कर सकती तो खुद कमाकर हवाई जहाज में उड़ना।"

एक बार मेरे पैर की हड्डी में कुछ खराबी आ गयी जिसके कारण मिलाई अस्पताल में आपरेशन करवाना पड़ा -- बाबू इस दौरान पूरे समय आपरेशन थियेटर के बाहर खड़े रहे।

बाबू से मुलाकात बहुत कम हो पाती थी। जब रात को बाबू घर आते थे तो हम सोये रहते थे, सुबह जब हम स्कूल जाते थे तो बाबू सोये रहते थे। एक बार कई दिनों तक मुझसे उनकी बात नहीं हो पायी तो बोले, " बहुत दिन हो गये क्रांति से बात नहीं हो पायी है। आज उससे मुलाकात करनी है।" स्कूल से वापिस आने पर मैंने देखा कि बाबू मेरे इंतजार में ऐसे बैठे हैं जैसे कोई महत्वपूर्ण व्यक्ति आने वाला हो।

हम बच्चे सागभाजी खाना पसंद नहीं करते थे। बाबू हमें उसके गुणों के बारे में समझाते थे। कभी-कभी खुद अपने हाथ से बनाकर हमें खिलाते भी थे। उन्होंने माँ को कुछ बंगाली और दक्षिण भारत का खाना बनाना भी सिखाया।

मैं जब आठवीं में पढ़ती थी तब एक बार बाबू बोले, " अब से तुमको ज्यादा पढ़ना है।

उन्होंने नियोगीजी को अपने कार्यालय में बुलाया। श्री तिवारी की भाषा अबे-तबे वाली, डपट और उपहास के स्वर वाली थी। नियोगीजी ने विनम्रता के साथ अपनी बात कही। तब तक वे अच्छी तरह से छत्तीसगढ़ी बोलना नहीं सीख पाये थे। लगा कि वे कुछ और भी कहना चाहते थे, पर जेल अधीक्षक की उपस्थिति के कारण नहीं कह पाये। मेरी भी कमजोरी थी कि मैं उन्हें ज्यादा कुरेद नहीं पाया। सच तो यह है कि मैं एक तरफ उस सरकारी अफसर का लिहाज करता रहा और दूसरी तरफ मजदूर नेता से हमदर्दी का इजहार भी। बाद में अपने इस दोगलेपन पर बड़ी ग्लानि हुई।

जून 1977 के गोलीकांड ने नियोगीजी को राष्ट्रीय स्तर पर चर्चित कर दिया था। दिल्ली से प्रकाशित हो रहे हिन्दी साप्ताहिक 'दिनमान' के सम्पादक श्री रघुवीर सहाय के निर्देश पर मैंने नियोगीजी के शराब विरोधी अभियान और स्थानीय प्रशासन की शराब ठेकेदारों से मिलीभगत को रेखांकित करने वाली एक विस्तृत रिपोर्ट लिखी थी। उस समय वे जेल में थे। कुछ दिनों के बाद नियोगीजी रायपुर के पुराने कस्बे गुढ़ियारी में मेरा मकान तलाशते हुए पहुँचे। कृतज्ञता का भाव उनके चेहरे पर था। कंधे पर लटके हुए थैले से 'दिनमान' की प्रति निकालते हुए उन्होंने कहा, "मैंने जेल में जब 'दिनमान' की यह रिपोर्ट पढ़ी तो मुझे लग गया कि अब मैं छूट जाऊँगा।"

एक सस्ते और सख्त तम्बाकू वाले सिगरेट का पैकेट निकालकर उन्होंने एक औपचारिक इजाजत लेकर सिगरेट सुलगायी। कोई डेढ़-दो घंटे तक चर्चा चलती रही। दल्ली राजहरा में अपने मजदूर साथियों के मारे जाने पर वे बहुत दुःखी थे। बार-बार इसी बात पर जोर दे रहे थे कि मजदूर का खून नहीं बहना चाहिए। मजदूर को उसके पसीने का हक दिलाने के लिए आंदोलन होना चाहिएं, पर आंदोलन को व्यवस्था के साथ सीधे हिंसक टकराव के बिंदु तक नहीं पहुँचने देना चाहिए। मजदूरों का खून बहाकर यदि कुछ माँगें पूरी होती भी हैं तो वे कोई मायने नहीं रखतीं।

मजदूर संगठनों में स्पर्धा के बावजूद नियोगीजी की कोशिश यही रहती थी कि किसी प्रतिद्वंद्वी यूनियन के आंदोलन को कमजोर करने वाला कोई काम न किया जाये। इसका एक प्रमाण अप्रैल 1978 में बस्तर के बैलाडीला में हुए गोलीकांड के दौरान मिला। वहाँ मजदूर आंदोलन भारत की कम्युनिस्ट पार्टी से सम्बद्ध 'संयुक्त खदान मजदूर संघ' ने किया था। जब मजदूरों पर पुलिस का कहर टूटा और अनेक मजदूर परिवार जान बचाने के लिए आस-पास के जंगलों में छिप गये तो नियोगीजी की यूनियन के लोग उनकी मदद के लिए पहुँचे। चोरी-छिपे उन मजदूर परिवारों के लिए ट्रकों में भरकर अनाज भिजवाया गया। नियोगीजी स्वयं बैलाडीला के आस-पास के इलाकों में पहुँचे। वाहनों में दाल-चावल रखकर उसे वनोपज से ढँक दिया जाता था, ताकि पुलिस को कोई शक न हो। गोलीबारी से प्रभावित कुछ लोगों को बरास्ता राजनांदगाँव, दल्ली राजहरा भी लाया गया था।

मुझे याद है बैलाडीला की पुलिस फायरिंग के कुछ हफ्तों बाद उनसे हुई एक मुलाकात में उन्होंने कहा था कि अगर लोगों की हर माँग का जवाब सरकार द्वारा गोली से दिया जायेगा तो आगे चल कर हालात बिगड़ेंगे ही। ताकत के आगे आदिवासी दब जायेगा। मजदूर भी दब जायेगा। पर भीतर-भीतर एक आग सुलग उठेगी, जो सुलगती रहेगी और विकास के मौके

की रील ले ली और कहा लौटते समय छठवें मील पर चाय की दुकान के सामने आप ठहरियेगा। हम लोग कुछ कहते, पूछते, इससे पहले ही वह युवक वहाँ से खिसक गया। दो घंटे बाद छठवें मील पर वह युवक चाय की प्यालियों और रील की कुछ डेवलप्ड कापियों के साथ उपस्थित था। ऐसा जन समर्थन आंदोलन को प्राप्त था।

नियोगीजी के आंदोलन उग्र तथा जबर्दस्त तो होते थे, किंतु हिंसक नहीं रहते थे। आंदोलन में बहिष्कार, घरना, हड़ताल, गिरफ्तारी आदि तो मजबूती से रहते थे, किंतु वे आक्रामक नहीं होते थे। आंदोलनकारियों की अधिकतम हिंसा यही रहती थी कि वे पुलिस अथवा मालिकों द्वारा किये जा रहे आक्रमण से बचने के लिए भागते हुए पथराव करते थे। उनके आंदोलनकारियों ने स्वयं कभी पथराव की पहल नहीं की।

❑

(अगस्त 1992 ; मूल लेख के कुछ अंश।)

कमांड चाहते हो, तो कमांड दो

गाज़ी एम. अंसार

सन् 1977 में नियोगीजी मीसा से छूटकर दानीटोला आये। लोक सभा चुनाव के कुछ पहले से ही बोनस के मामले पर राजहरा के एटक-इंटक मजदूरों में असंतोष चल रहा था। ठेका एवं विभागीय मजदूरों के लिए समान बोनस की माँग को लेकर बंशीलाल साहू के नेतृत्व में मजदूरों ने इक्कीस दिन तक हड़ताल चलायी। एटक-इंटक यूनियनों के नेता बागी मजदूरों को अपने कब्जे में लाने में असफल हुए। नियोगीजी खुद एटक में थे। एटक के यूनियन आफिस में एक मलयाली युवक राजन भी काम करता था। राजन, शंकर नंदी व शंकर गुहा नियोगी तीनों सहयोगी थे व एटक में रहने के कारण मजदूरों में परिचित थे। मैं भी सन् 1976 से राजहरा की मजदूर बस्ती छोड़कर शंकर नंदी के घर रहने लगा था। नियोगीजी कभी-कभी नंदी भैया के क्वार्टर में आते थे। राजन, बंशी व बागी मजदूरों के मुखिया लोगों ने नियोगीजी को राजहरा लाने की पेशकश की। बंशीलाल साहू की नेतृत्व क्षमता के बारे में सबको कुछ संदेह था। अतः नियोगीजी ने दल्ली राजहरा में अपना आना-जाना और मजदूरों के साथ बैठकें तेज कर दीं।

जब नियोगीजी सी. एम. एस. एस. का रजिस्ट्रेशन [1] करवाकर इन्दौर से राजहरा लौटे उस समय यूनियन का आफिस एक झोपड़ी में था। उस दिन बंशीलाल साहू एक पत्थर के ऊपर बैठे थे व नियोगीजी कुछ दूरी पर वहीं जमीन पर बैठे हुए सर्टिफिकेट घुमा-घुमाकर सब लोगों को बता रहे थे। नियोगीजी को राजन और बंशीलाल जैसे लोग किराए के टट्टू की तरह रखना

---

[1] रजिस्ट्रेशन की तारीख – 29 अप्रैल 1977

वे कभी भी अकेले फैसला नहीं करते थे

जनकलाल ठाकुर

मैंने नियोगीजी के बारे में सबसे पहले तब सुना था जब मार्च 1977 में बोनस को लेकर हमारी इक्कीस दिन लम्बी हड़ताल चल रही थी। तब एटक-इंटक के खिलाफ विद्रोह करके करीब दस हजार मजदूर दल्ली राजहरा के लाल मैदान में बैठे हुए थे। अभी सी. एम. एस. एस. का गठन नहीं हुआ था। उस समय मैं मयूरपानी खदान में ट्रांसपोर्ट मजदूर था। मैं तब तक किसी भी प्रकार से आगे नहीं आया था – केवल हड़ताल के दौरान मजदूरों से नारे लगवाने या उनको मीटिंग में बुलाने इत्यादि का काम मुझे दिया जाता था।

इंटक, एटक व बी. एस. पी. की साँठ-गाँठ हमारे सामने आ चुकी थी। मजदूरों व मुखिया लोगों ने आपस में चर्चा करके अलग से एक नयी ट्रेड यूनियन बनाने की बात तय कर ली थी। इस प्रयास में बंशीलाल साहू (रेजिंग मजदूर, डी. के. एम. एस. एस., कोन्डेकसा 'बी' माईन्स), कुसुमबाई (के. के. एम. सी., दल्ली माईन्स) व दुर्गाबाई (एस. एस., मयूरपानी) आदि मुख्य थे। अभी हमारा अपना नेतृत्व पूरी तरह से उभरा नहीं था। हड़ताली मजदूर उचित नेतृत्व की तलाश में थे। विभिन्न केंद्रीय ट्रेड यूनियनों के कई नेताओं ने हमको अपने बैनर के तहत लेने की कोशिश की। हमने भी उनको यह कहकर मौका दिया कि जो भी नेता हमारी बोनस की व अन्य माँगों को हल करवा देगा हम उसे स्वीकार लेंगे। इन सबने अपनी-अपनी कोशिशें भी कीं पर कोई भी सफल नहीं हुआ। इक्कीस दिन की हड़ताल सफलतापूर्वक खत्म हो गयी। मैनेजमेंट ने मजदूरों के प्रतिनिधियों के साथ एक समझौता भी कर लिया। तभी हमारे कुछ साथियों ने बताया कि दानीटोला में एक आदमी है जो मजदूरों में संगठन का काम करता है व उनके हकों के लिए ईमानदारी से लड़ता है। कोकान माईन्स का मजदूर अजीत यादव दानीटोला में रहता था, उसने और के. के. एम. सी. के समुन्दी ने भी हमें ऐसी ही जानकारी दी कि वह व्यक्ति अभी-अभी जेल से छूटकर आया है।

यह खबर मिलने पर उसी दिन शाम को डी. के. एम. एस. एस. कार्यालय में (जहाँ बंशीलाल साहू काम करते थे) एक मीटिंग हुई जिसमें नियोगीजी के बारे में चर्चा की गयी। इसके बाद अगली सुबह हम करीब 30-40 लोग बस में बैठकर नियोगीजी के घर दानीटोला गये। मैं भी उस दल में शामिल था। नियोगीजी की (यानी उनके ससुर सियारामजी की) झोपड़ी के बाहर बैठकर हम सबकी बातचीत हुई। उन्हें मजदूरों की समस्या एवं इंटक-एटक-बी.एस.पी. की साँठ-गाँठ के बारे में बताया। नियोगीजी ने कहा, "यह सब आज की नहीं बल्कि पुरानी साँठ-गाँठ है, यह सब लोग हमेशा से ऐसा ही करते आये हैं। यूनियन के मजदूरों को एक दूसरे से लड़ाया जाता है।" जब हमने उनसे हमारे साथ चलने को कहा तो वे बोले, "हम वहाँ जाकर क्या करेंगे ? हमारे जाने से क्या होगा ? यह सब तो आप लोग ही कर सकते हैं। यदि आप लोग संगठित होंगे, मिलकर सोचेंगे-समझेंगे तो यह काम आपसे न हो, ऐसी कोई बात नहीं है।" तब

यूनियन ने उन्हें मजदूरों से चर्चा के लिए बुलाया, तो उन्होंने इंकार कर दिया था। हमारा मानना था कि वे मजदूरों को हेय दृष्टि से देखते थे। नियोगीजी ने उन्हें बस्ती में देखकर सबसे बात करने के लिए बाध्य करने की रणनीति आनन-फानन बनायी। हमने उन्हें सारे इलाके में घुमाया व मजदूरों को हुए नुकसान की जानकारी दी। फिर भी जब उन्होंने मदद करने का कोई भी ठोस आश्वासन नहीं दिया तो मजदूर बस्ती में उनका घेराव किया गया। उस समय वहाँ सी. आई. एस. एफ. के एस. पी. श्री चौबे (सी. आई. एस. एफ. के वर्तमान चीफ), दुर्ग के कलेक्टर श्री स्वरूपसिंह पोर्ते आदि वरिष्ठ अफसर भी मौजूद थे। हजारों मजदूरों ने श्री संगमेश्वरन का घेराव किया था। इसी समय नियोगीजी ने माइक पर कहा, " बी. एस. पी. के असली उत्पादक हम हैं, हम कच्चा माल निकालते हैं, स्टील बनाते हैं और आप हमसे घृणा करते हैं। आपको मीटिंग में बोलना पड़ेगा कि आप मजदूरों से घृणा नहीं करते और उनकी बात सुनेंगे।" इस पर एस. पी. श्री चौबे ने नियोगीजी पर रिवाल्वर तान दिया। तब नियोगीजी ने आगे बढ़ कर उनको गोली चलाने की चुनौती दी। एस. पी. पीछे हट गये व माफी माँगी। इसके बाद मजबूर होकर श्री संगमेश्वरन माइक पर आये और बोले, " मैं मजदूरों से घृणा नहीं करता हूँ, मैं आपकी बातें सुनूँगा और मानूँगा भी।" तब जाकर उनका घेराव खत्म किया गया। वह दिन मजदूरों की विजय का दिन था।

नियोगीजी हमेशा अपने साथियों के बारे में चिंता करते थे। उन्हें आगे बढ़ाने का निरंतर प्रयास करते थे। वे सभी को सोचने-समझने का मौका देते थे। मजदूरों से अलग-अलग बातचीत करके वे उनके विचार जाना करते थे। फिर उसी के आधार पर यूनियन पदाधिकारियों की बैठक में बातचीत करके विभिन्न मसलों पर फैसले लिये जाते थे। **नियोगीजी कभी भी अकेले फैसला नहीं करते थे। उनकी लोकतांत्रिक प्रक्रिया आम ढर्रे से अलग, परंतु आम मजदूरों की इच्छा को क्रियान्वित करने की प्रक्रिया थी।**

❑

(अगस्त 1992 ; साक्षात्कार पर आधारित।)

उत्पादन-लक्ष्यों से मैन्युअल खदानें प्रतिष्ठित हुईं

गणेशराम चौधरी

दल्ली राजहरा में 25 मार्च 1977 का दिन। एक पतला-दुबला युवक डी. के. एम. एस. एस. (दल्ली खदान मजदूर सहकारी समिति) के दफ्तर में तीन सप्ताह पूर्व खदान मजदूरों के स्वतःस्फूर्त आंदोलन से उभरे नवनियुक्त मुखियाओं के बीच बैठे हुए छत्तीसगढ़ी में चर्चा कर रहा था। खदान का एक मुखिया साथी बुद्धू नेताम सब के सामने उस युवक को समझा

सूचित किये, तीन मिनट के अंदर वहाँ पहुँच गये और सुरक्षा बल के सहायक कमांडेंट को चुनौती देकर हम लोगों का हौसला बुलंद किया।

कभी-कभी नियोगीजी अपने घर में स्वयं खाना बनाकर हमें भोजन पर आमंत्रित करते थे। लेकिन वह भोजन सिर्फ भोजन नहीं होता था, वे उस अवसर पर घंटों तक हमारे कामों की समीक्षा करते थे और साथ-साथ हमारी गलतियों को सुधारने के तौर-तरीकों पर लम्बी बातचीत चलाया करते थे।

सन् 1989 की दीपावली की घटना नहीं भूलती। यूनियन दफ्तर में नियोगीजी, अनूपसिंह, छबिलाल, हीरामण, डॉ. गुण और मैं बैठे कुछ चर्चा कर रहे थे। अचानक हमने देखा कि राजहरा बाजार की ओर से आग की लपटें उठ रही थीं और आसमान धुएँ से भरा हुआ था। पटाखे की दुकानों में आग लग चुकी थी। अनूपसिंह एवं डॉ. गुण ने फट से जीप ड्राइवर को बुलाकर वहाँ जाने की उत्सुकता दिखायी। नियोगीजी ने उन्हें तत्काल रोकते हुए कहा, " क्या छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के कार्यकर्ता और शहीद अस्पताल के डाक्टर वहाँ जाकर आम लोगों की तरह तमाशा देखेंगे ? " उन्होंने कहा कि आप लोग अस्पताल की एम्बुलेंस लेकर जाइये और वहाँ तत्काल प्राथमिक उपचार एवं अन्य मदद यथासम्भव पहुँचाइये। कहने का तात्पर्य यह है कि नियोगीजी हर निर्णय बहुत धीरज व सूझ-बूझ के साथ लिया करते थे।

सन् 1986 के आंदोलन से ही मैं नियोगीजी के साथ प्रत्येक समझौता वार्ता या चर्चा में गया — चाहे वह मैनेजमेंट के साथ हो या प्रशासन के साथ। इन वार्ताओं में मैंने देखा कि वे मैनेजमेंट पर उनकी गलत नीतियों को लेकर हमेशा हावी रहते थे। मैनेजमेंट को उनकी उत्पादन-विरोधी एवं मजदूर-विरोधी नीतियों के कारण अपने तर्कों के सहारे दुविधा में डाल देने की नियोगीजी में विशेष क्षमता थी।

वे उत्पादन को मजदूरों के हित में आवश्यक मानते थे और सामाजिक विकास की सीढ़ी के रूप में देखते थे। उन्होंने मैनेजमेंट से वार्ताओं के दौरान उत्पादन की कई चुनौतियाँ स्वीकार कीं और उन्हें पूरा करके मजदूरों की प्रतिष्ठा को स्थापित किया। मैनेजमेंट द्वारा सन् 1987, 1988 और फिर 1989 में दिये गये उत्पादन-लक्ष्यों को हासिल करके नियोगीजी मैन्युअल खदानों के मजदूरों को प्रोत्साहन बोनस दिलवाने में सफल हुए और इस प्रकार श्रम शक्ति की प्रतिष्ठा को शीर्ष शिखर पर पहुँचा दिया। इसके बाद तो मैनेजमेंट ने उत्पादन की चुनौतियाँ देना ही बंद कर दिया।

अंत में मैं यह कहना चाहूँगा कि नियोगीजी ने जहाँ भी आंदोलन किये वहाँ अपने विचारों की बुनियाद छोड़ी और नेतृत्व पैदा किया। उन्होंने नेतृत्व को इतना पक्का बना दिया कि आज वह आंदोलन की भावी रूपरेखा सरलता से तय कर सकता है। ❑

(नवम्बर 1992)

वे हमेशा महिलाओं को आगे लाने की बात करते थे

लीलाबाई

सन् 1970 से मैं कोकान खदान में लोहा पत्थर की खुदाई (रेजिंग) का काम कर रही हूँ। नियोगीजी के बारे में सबसे पहले मैंने तब सुना था जब मैं सन् 1977 में अन्य हजारों मजदूरों के साथ दल्ली राजहरा के लाल मैदान में हड़ताल पर बैठी थी। उस समय मैं चुपचाप पीछे बैठी रहती थी, यूनियन आफिस के लोगों से भी बात नहीं होती थी, सिर्फ दूसरों की बातें सुना करती थी। सन् 1979 में मैं कोकान खदान की एक रेजिंग टीम की मुखिया चुनी गयी।

सन् 1981 में हमारी सोसायटी के सांगठनिक चुनाव हुए। उस समय नियोगीजी वहाँ नहीं थे। थोड़ी देर बाद जब अध्यक्ष, मंत्री व अन्य पदाधिकारियों के नाम एक सूची में लिखे जा चुके थे, तब नियोगीजी वहाँ पहुँचे। सूची देखते ही वे फौरन माइक के पास गये और कहने लगे, "कौन बना दिया जी, ये सूची ? संगठन के काम में ऐसी गलती करोगे तो कैसे काम चलेगा ? एक बार महिलाओं की समिति बननी चाहिए।" उनके इस तरह बोलने से मैंने यही समझा कि यूनियन में महिलाओं की जरूरत है। मजदूरों ने उनसे पूछा कि किस-किसका नाम दें तब उन्होंने मेरा व दो-तीन अन्य महिलाओं का नाम लिया। चुनाव हुआ, नयी सूची में मेरा नाम आ गया। मैं कोकान खदान में कार्यरत सहकारी समिति की अध्यक्षा चुनी गयी थी। नियोगीजी ने मुझे भाषण देने को कहा तथा संगठन व संघर्ष में महिलाओं की भागीदारी का महत्व मुझे समझाया। इसी कार्यक्रम में उन्होंने मुझे कुर्सी पर बैठाया। मैंने कहा, " मैं तो अनपढ़ हूँ, ये सब जिम्मेदारियों वाला काम नहीं कर पाऊँगी। मैं यूनियन में किसी पद पर नहीं रहूँगी।" लेकिन नियोगीजी ने उस मौके पर मुझे काफी समझाया और कहा, " लीलाबाई तुम काम करो, चिंता मत करो, धीरे-धीरे सब सीख जाओगी। जब तुम खदान में काम करने गयी थी तब वहाँ का काम भी तुमने धीरे-धीरे सीखा होगा।" इसके बाद भी मैं लगभग 15 दिनों तक रोज उनके घर जाकर मुझको पदमुक्त करने के लिए कहती रही, पर वे राजी नहीं हुए। बराबर काम करते रहने व सीखने पर जोर देते रहे। अंत में वे बोले, "चाहे 15 दिन ही सही, मेरा मान रखने के लिए काम करो।" इसके बाद मैं काम सीखने लगी। जब भी कहीं कोई परेशानी होती थी, नियोगीजी मदद करने को हमेशा तैयार रहते थे। इसके बाद धीरे-धीरे मैंने आफिस व बाहर के भी काफी सारे काम सीख लिये, जिनका श्रेय मैं नियोगीजी को देती हूँ।

इसके अलावा मुझे नियोगीजी की याद इसलिए भी आती है, क्योंकि वे हमेशा महिलाओं को आगे करने की बात करते थे, चाहे मीटिंग में जाना हो, अफसरों से बातचीत करना हो, संगठन की बात हो या फिर लड़ाई लड़ने का मुद्दा हो, हमेशा हमें साथ में चलने के लिए कहते थे।

वे हमेशा कहते थे, " बोलना सीखो। अगर आज अच्छी तरह नहीं बोल पाते हो तो कोई बात नहीं, कल सबको बोलना आ जायेगा।" मीटिंग आदि में न बोलने पर वे महिलाओं को डाँटते भी थे, समझाते भी थे। वे सभी को जागरूक रहने को कहते थे, किसी एक को नेता

वे बोले, " मैं रायपुर से खाना खाकर आया हूँ, तू जाकर सो जा।"

उसके बाद जब देर रात को उनकी चीख से मेरी नींद खुली तो सब कुछ खत्म हो चुका था। कभी-कभी सोचता हूँ कि यदि उस रात मैं नहीं सोता तो शायद वे लोग नियोगीजी को न मार पाते।

❑

(अगस्त 1992 ; अमन कुमार नम्र द्वारा लिये गये साक्षात्कार पर आधारित।)

फिर भी शंकर की जिंदगी में कुछ नहीं बदला

जॉर्ज फर्नाण्डिस

मजदूर आंदोलन में अपने 43 वर्षों के जीवन में मैं जिन ट्रेड यूनियन नेताओं से मिला हूँ, उनमें शंकर गुहा नियोगी सबसे असाधारण नेता थे। मेरी उनसे पहली मुलाकात तब हुई जब मैं सन् 1978 में जनता पार्टी की संघीय सरकार में मंत्री था। तब शंकर दल्ली राजहरा की लौह अयस्क की खदानों में मशीनीकरण के खिलाफ आंदोलन चला रहे थे। मुझे शंकर की ओर से फौरी संदेश मिला। जब मैंने प्रधान मंत्री से कहा कि मैं दल्ली राजहरा जाना चाहता हूँ तो उन्होंने अपनी शंकाएँ व्यक्त कीं। तब बीजू पटनायक इस्पात मंत्री थे। न केवल ये खदानें उन्हीं के अंतर्गत आती थीं, बल्कि उनका मंत्रालय ही मशीनीकरण लागू करना चाहता था जिसकी योजना श्रीमती गांधी की सरकार ने इमरजेंसी के समय में बनायी थी। मैंने बीजू से बात की। लेकिन उनके अधिकारी नाखुश थे चूँकि मैं उनके मंत्रालय के मामलों में दखल दे रहा था। फिर भी मैं बीजू को यह समझाने में कामयाब रहा कि मेरे दल्ली राजहरा जाने से उनके लिए कोई परेशानी खड़ी नहीं होगी। उल्टे हो सकता है कि इसके कारण वे समस्या के सभी पक्षों को ठीक से समझ सकें और उनका हल निकाल सकें।

मशीनीकरण के मामले का हमने जो हल निकाला उससे यूनियन संतुष्ट थी। बीजू ने पिछले आदेश वापस ले लिये। दूसरे मामले भी थे, खासकर वे जिनका सम्बंध मजदूरों की मजदूरी और काम की दशाओं से था। लेकिन जब इन पर विचार चल रहा था, तभी जनता पार्टी की सरकार ने खुद को तबाह कर लिया और सत्ता में श्रीमती गांधी की वापसी का रास्ता प्रशस्त कर दिया।

श्रीमती गांधी की सरकार ने सबसे पहले जो काम किये उनमें निवारक नजरबंदी का एक नया कानून बनाना भी शामिल था। इस बार उसका नाम राष्ट्रीय सुरक्षा कानून था। ज्ञानी जैलसिंह गृहमंत्री थे। लोक सभा में उन्होंने बिल पेश किया था। विपक्ष का कहना था कि यह

में अभी हाल ही में एक ट्रेड यूनियन बनी थी। आमसभा के लिए हम लोग कोई 2 घंटा लेट शाम 6 बजे तक पहुँचे। इतनी देर होने के बाद भी सैकड़ों मजदूर और किसान नियोगीजी का इंतजार कर रहे थे। इन लोगों ने उनके जीवन और काम के बारे में बहुत कुछ सुना तो था, पर उन्हें कभी देखा न था। जैसे ही हम वहाँ पहुँचे और नियोगीजी जीप से उतरे ही थे कि आकाश 'नियोगी जिंदाबाद' के नारों से गूँजने लगा। इतने में नियोगीजी तैश में आकर उन लोगों की तरफ तेजी से चलते हुए गये और कहने लगे, "अरे, ये क्या कर रहे हैं आप लोग, बंद कीजिये यह नारा।" मैंने उन्हें कभी इतना विचलित और गुस्से में शायद ही कभी देखा हो। अपने आपको और माइक को सँभालते हुए नियोगीजी ने यह समझाने का प्रयास किया कि उनके लाल-हरे झंडे के संगठन, छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा में व्यक्तिवादी नारों के लिए कोई स्थान न था और जन संगठनों में व्यक्ति विशेष और व्यक्ति पूजा की कोई आवश्यकता नहीं है।

लेकिन आज नियोगीजी इन नारों को नहीं रोक सकते। लाखों लोगों ने इस नारे को लगाते हुए और उनके बताये हुए मार्ग पर चलने का संकल्प लेते हुए यह सिद्ध कर दिया कि नियोगी मरा नहीं।

चर्चा के दौरान नियोगीजी अक्सर वर्तमान राजनैतिक दिवालियेपन के प्रतीक उन चार नारों का जिक्र किया करते थे जो आज राजनैतिक संस्कृति पर हावी हैं – 'देश का नेता कैसा हो, फलाने जैसा हो', 'फलाने तुम आगे बढ़ो, हम तुम्हारे साथ हैं', 'जब तक सूरज-चाँद रहेगा, फलाने तुम्हारा नाम रहेगा', 'फलाने जिंदाबाद और फलाने मुर्दाबाद'। नियोगीजी के अनुसार ये नारे राजनैतिक जीवन में बढ़ते हुए खोखलेपन के प्रतीक हैं।

* * *

सन् 1985 में यूनियन के तत्कालीन अध्यक्ष सहदेव साहू के मजदूर-विरोधी कारनामों को लेकर यूनियन दफ्तर में एक बैठक में सदस्यों द्वारा काफी उठा-पटक हुई। कई सबूतों के साथ सदस्यों ने उसके झूठ और फरेब का पर्दाफाश कर दिया। एक समय ऐसा आया कि धक्का-मुक्की शुरू हो गयी। इन सज्जन को राजनांदगाँव से दल्ली राजहरा ले जाया गया। वहाँ मजदूरों के सामने इनके बारे में फैसला करना था। सफाई में ये कुछ भी सही न बता सके। कुछ मजदूरों ने तैश में आकर इनको सबक सिखाना चाहा। लेकिन नियोगीजी बचाव करते हुए इन्हें वहाँ से निकाल ले गये और सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दिया। लेकिन बाद में इस इंसान ने पुलिस थाने में रपट लिखा दी, जिसके आधार पर नियोगीजी के खिलाफ धारा 307 (हत्या का प्रयास) के तहत जुर्म दर्ज हो गया। सन् 1991 में पटवा प्रशासन ने नियोगीजी के विरुद्ध जिलाबदर कार्यवाही के दौरान इस प्रकरण को भी एक मुद्दा बनाया।

इन सज्जन की प्राथमिक सदस्यता रद्द किये जाने के बहुत पहले का एक वाकया है कि इनके कुछ कारनामों के कारण इन्हें यूनियन की तरफ से दंड दिया गया था। जून 1977 में मजदूरों पर हुए गोलीकांड के 11 शहीदों की याद में बनाये गये बगीचे में इन सज्जन को झाड़ू लगाकर साफ-सुथरा रखना था। जिस दिन से यह सजा लागू की गयी थी, उस दिन सुबह से नियोगीजी हाथ में एक झाड़ू लेकर चुपचाप दफ्तर के एक कोने में बैठ गये, और जैसे ही उन्होंने अपने इस कामरेड को शहीद बाग की ओर जाते देखा, तो वे झाड़ू उठाकर उसके साथ हो लिये। हालाँकि नियोगीजी को यह सजा नहीं सुनायी गयी थी, फिर भी उन्होंने इसमें भाग

मजदूर राजनीति की शायद एक सीमा है

रामबिलास

सन् 1977 में सर्दी के दिन थे। राजहरा गोलीकांड की याद ताजा थी। हम कुछ युवा मित्र जो नियोगी के विषय में सुनते-पढ़ते रहे थे, एक दिन उनसे मुलाकात की इच्छा लिये जा पहुँचे दल्ली राजहरा। वहाँ 'फाल बैक वेजेस' का आंदोलन चल रहा था। मजदूर पुरुष व महिलाओं के चेहरे उदास थे। नियोगी तपाक से मिले और इस पहली मुलाकात में जब घंटे भर बाद हम उठे, तब हम पर नियोगी का जादू चल चुका था। वे अपने आंदोलन से लेकर अंतर्राष्ट्रीय स्थितियों पर अपना स्पष्ट नजरिया पेश कर चुके थे।

'फाल बैक वेजेस' की माँग के आंदोलन का वह 55वाँ या 56वाँ दिन था। हम उनसे विदा ले ही रहे थे कि एक अधेड़ उम्र की औरत नियोगी के करीब आयी और उसने छत्तीसगढ़ी में कहा, "शंकर, मीला गाँव जाना हे। दू दिन छुट्टी दे देतेस। आ जाहूँ परन दिन। ते बोलब तो नी जाँव, फेर गाँव में टुरी ह बीमार हे . . .।" आंदोलन के मध्य छुट्टी माँगने की यह घटना 13 वर्ष बाद भी मेरे जेहन में ताजी है, मेरे साथ गये मित्र रंजीत भट्टाचार्य, रंजीत छाबड़ा, रवि खरे, पवन गिरी की यादों में भी।

*   *   *

सन् 1979 की एक शाम। नियोगी जीप में धमतरी (जिला रायपुर) के हमारे कार्यालय में आ पहुँचे। उनके साथ उनकी बहन और बहनोई थे। वे प. बंगाल से आये थे नियोगी के यहाँ। नियोगी उन्हें गंगरेल बाँध घुमाने के लिहाज से ले आये थे। उन्होंने मुझे साथ ले लिया और हम पहुँचे गंगरेल। थोड़ी देर तक वे सामान्य बातचीत करते रहे, फिर बाँध के पास एक पत्थर पर जा बैठे। मुझे भी बैठने को कहा, उनके माथे पर बल पड़ गये। एक लम्बी खामोशी के बाद उन्होंने कहा, "मजदूर राजनीति की शायद एक सीमा है।"

मैं समझ नहीं पाया, सो बोला, "आप कहना क्या चाहते हैं ?"

नियोगी ने छोटा सा कंकड़ उठाया और बाँध के पानी में फेंक दिया, "बात यह है कि वेतन-भत्ता तो हम बढ़वा लेते हैं पर इससे मजदूरों में चेतना नहीं आती। हम अपनी पीठ जरूर ठोंक लेते हैं। उधर वे ज्यादा शराब पी जाते हैं। असल में सांस्कृतिक और सामाजिक परिवर्तन चाहिए। वेतन-भत्ते की एक लिमिट है – उसके बाद ?"

कुछ देर की बातचीत के बाद नियोगी ने कहा, "मजदूरों और किसानों को जोड़ना होगा। पर मुश्किल यह है, क्षेत्रीय किसानों में निम्न पूँजीवादी विचार मौजूद हैं। वे मजदूरों को अपने विरोधी की हैसियत से देखते हैं। गाँव में मजदूरी का रेट बढ़े तो उन्हें ज्यादा मजदूरी जो देनी पड़ती है . . . नहीं, कुछ तो करना होगा . . .।" नियोगी की नजर दूर आकाश में उड़ती हुई चील का पीछा करने लगी थी।

*   *   *

सन् 1982-83 की बात होगी। उन दिनों मैं 'अपना मोर्चा' साप्ताहिक निकालता था। साधन अत्यन्त सीमित थे और व्यवस्था की जिम्मेदारी मुझ पर थी। नियोगी आये, मैं अकेला

वे मेरे बिना आफिस का कोई काम नहीं करते थे

कुमारसिंह साहू

सन् 1979 में मैं अपने एक साथी के घर दल्ली राजहरा आया था। वे छत्तीसगढ़ माईन्स श्रमिक संघ के सदस्य थे। मेरे साथी ने मुझे अपनी यूनियन में काम करने योग्य समझकर नियोगीजी से इस बारे में बात की। उन्होंने मुझे रखने के लिए अपनी स्वीकृति दे दी। मैंने भी यूनियन के सिद्धांत को स्वीकार कर काम करना मंजूर कर लिया।

नियोगीजी ने मुझे अपने पास बैठाकर समझाया कि हमारी यूनियन में नौकरी करने की भावना से कभी काम मत करना। नौकरी जैसा वेतन नहीं मिल पायेगा। यहाँ सेवाभाव से ही काम करना है क्योंकि यह मजदूरों की संस्था है। पेटभर खाना ही मिल सकेगा। हम सब एक समान हैं और एक समान खाना तुम्हें भी मिलेगा।

यूनियन का यह सिद्धांत मुझे बहुत अच्छा लगा।

नियोगीजी ने मुझे क्लर्क के रूप में यूनियन आफिस का काम सौंप दिया। एक साल बीत गया। उन्होंने मेरा काम देखा और बोले, "आपके पास ईमानदारी तो है, इसके साथ जिम्मेदारी भी लेना होगा।" मैंने स्वीकार लिया। वे मुझे जिम्मेदारी सौंपते गये, जैसे बाहर से या किसानों के बीच से आने-जाने वालों की देखरेख करना आदि। इस प्रकार और भी जिम्मेदारियाँ सौंपीं।

एक महत्वपूर्ण बात यह है कि वे मेरे लिए हमेशा आदरसूचक शब्द 'आप' का प्रयोग करते थे। मैंने इसे ही उनकी महानता का प्रतीक समझा।

नियोगीजी मजदूरों के सामने मेरे काम की प्रशंसा करते थे जिससे मजदूरों के बीच मेरी इज्जत बनती गयी। उन्होंने यहाँ तक कह दिया, "साहू बाबू हमारी यूनियन की 'जान' हैं।" दिल्ली, कलकत्ता एवं अन्य जगहों से आने वाले साथियों के सामने भी वे मेरी प्रशंसा करते थे, जिससे वे लोग भी मुझे चाहने लगे।

नियोगीजी कभी-कभी काम के बारे में मुझे डाँटते भी थे। लेकिन मैंने हमेशा उनकी डाँट को उनका आशीर्वाद समझा। इससे मुझे फ़ायदा भी हुआ, जैसे वे मुझे टाइपिंग सीखने के लिए अक्सर कहते रहते थे। एक दिन वे मुझ पर बहुत नाराज हुए और बोले कि एक साल के अंदर हिन्दी व अंग्रेज़ी दोनों टाइपिंग सीखकर बताओ। मैंने आफिस के काम के साथ-साथ टाइपिंग सीखना भी शुरू किया व सीखकर उन्हें बताया। वे बहुत खुश हुए।

नियोगीजी मेरे बिना आफिस का कोई काम नहीं करते थे। वे बोलते जाते थे, मैं लिखता जाता था। इस तरह वे मेरे लिखने की गति बढ़ाते गये। वे मेरे अलावा किसी दूसरे का लिखा पसंद नहीं करते थे।

नियोगीजी जब कभी आस-पास कहीं जाते थे तो उनके आये बिना मैं घर नहीं जाता था, चाहे कितनी ही रात क्यों न हो जाये। यदि कभी चला भी जाता था तो वे तुरंत मुझे बुलवा लेते थे। कभी-कभी मेरे मुँह के पास आकर बात करते थे व पता लगाते थे कि मैं शराब पीने

मेरे इलाज के लिए जमा करते थे, उसी से खर्च किया। दूसरों की तकलीफ में मदद करने की इस प्रवृत्ति की शिक्षा इन साथियों को कामरेड नियोगी से मिली थी। कामरेड नियोगी उस समय न होते तो शायद मैं बचता ही नहीं।

जब भी वे किसी को व्यक्तिगत या सामूहिक समस्या के बारे में चिंतित होते देखते तो कहा करते थे, " क्या सोच रहे हो ? मैं क्या मर गया हूँ ? " नहीं, कामरेड नियोगी मरे नहीं हैं, वे मर नहीं सकते। वे कामरेड थे, कामरेड हैं, और कामरेड रहेंगे।

❑

(अगस्त 1992 ; मूल लेख का संक्षिप्त स्वरूप।)

खाना पकाने में भी द्वंद्वात्मक भौतिकवाद

अमित सेनगुप्ता

नियोगी को अपने परिवार के साथ रहने का अधिक मौका नहीं मिलता था। उन्हें अक्सर काम के कारण अपने बच्चों से दूर रहना पड़ता था। जब वे दिल्ली आते थे तो कभी-कभी मुझे रात को तीन बजे जगाकर कहते थे, " थोड़ा चाय का पानी चढ़ा दो, नींद नहीं आ रही है। " फिर चाय पीते-पीते कहते थे, " अच्छा बोलो, क्या मैं बहुत ज्यादा गैर-जिम्मेदार बाप या गैर-जिम्मेदार पति हूँ ? " सच, वे बच्चों को बहुत याद किया करते थे।

जब मैं दल्ली राजहरा जाता तो देखता था कि नियोगी रात को लगभग दो-ढाई बजे सोने के लिए घर लौटते थे। घर पहुँचते ही सोये हुए तीनों बच्चों को वे जगाकर उनके साथ खेलने लगते थे। बच्चे खूब रोते थे पर उनका मन नहीं मानता था। एक बार मेरे द्वारा पूछने पर उन्होंने मुझे समझाया, " आखिर, मैं इनका बाप हूँ। हम लोगों को इकट्ठे थोड़ा-सा तो टाईम लगाने की जरूरत है। लेकिन दिन में टाईम मिलता नहीं, तो क्या करें ? " मैंने उनसे कहा, " आप हर चीज का विकल्प ढूँढने में माहिर हो। क्या आप इस समस्या का और कोई विकल्प नहीं ढूँढ सकते ? आप के पास चाहे कितना ही काम क्यों न हो, महीने में कम-से-कम एक दिन तो इनके साथ सारा समय बिताइये। " मेरे इस सुझाव पर वे नियमित रूप से तो अमल नहीं कर पाये, परंतु दो-चार बार ऐसा जरूर किया।

* * *

नियोगी की बड़ी बेटी क्रांति बचपन में तिलचट्टे (कॉकरोच) से डरती थी। इसलिए नियोगी ने बचपन से ही अपने बेटे जीत (उसे प्यार से गुंडा कहते थे) के साथ अलग ढंग का व्यवहार किया। एक बार उनके घर के पास एक पागल बैल आ गया जिसे देखकर तीन साल का गुंडा डर गया। नियोगी ने उसके हाथ में एक डंडा पकड़ाकर बैल को भगाने को कहा। गुंडा डंडा लेकर

कोई व्यक्ति यहाँ टिक पाता है तो अच्छी बात है, अगर किसी की समझ हमसे फर्क है तो भी मैं उसे रोकना नहीं चाहता। यदि जनता चाहेगी तो उसे रोकेगी। मेरा अनुभव भी सीमित है। मेरी समझ सही है या गलत, यह तो नतीजा ही बतायेगा।" आखिरी दिन तक उनका यही विचार रहा।

*   *   *

जब नियोगी कविता या गाना लिख रहे या सुन रहे होते थे, तब लगता था कि शायद यही करना उनको सबसे अधिक पसंद है। कभी-कभी लगता था कि पेड़-पौधे और जंगल को वे सबसे अधिक प्यार करते हैं। जब एक बार उनकी गाय की टाँग टूट गयी थी, तब वे रोज अपने हाथों से उसकी मरहम-पट्टी किया करते थे। उस समय उनको देखकर लगता था कि जानवर ही शायद उनको सबसे अधिक प्यारे हैं। जब अस्पताल की बिल्डिंग बन रही थी तब लगता था कि सिविल इंजीनियरिंग और वास्तुशिल्प (आर्किटेक्चर) में वे विशेषज्ञ हैं। परचे व निबंध लिखना, चर्चा करना और किताब पढ़ना या अगले कार्यक्रम के बारे में सोचना आदि जो भी काम वे करते थे, उस समय लगता था कि उसी काम में उनकी सबसे अधिक दिलचस्पी है।

*   *   *

उनको महान लोगों की जीवनियाँ पढ़ना बेहद पसंद था और उनसे वे सीखते भी बहुत थे। नियोगी बहुत ज्यादा पढ़ते थे, ऐसी बात नहीं थी। लेकिन वे जो कुछ भी पढ़ते थे उसे वे इतना गुनते थे कि उन बातों को वे पूरी तरह आत्मसात कर लेते थे। उनके दिमाग में चौबीस घंटे मार्क्सवाद का दार्शनिक आधार – द्वंद्वात्मक भौतिकवाद का सिद्धांत – घूमता रहता था। इस सिद्धांत को बगैर लागू किये वे कुछ भी नहीं करते थे। किसी भी परिस्थिति या प्रक्रिया को समझने या बदलने के लिए वे इस सिद्धांत को एकमात्र औजार मानते थे। मैंने अपनी जिंदगी में उनसे बेहतर द्वंद्वात्मक भौतिकवाद समझने वाला कोई इंसान नहीं देखा है। एक बार नियोगी ने मजाक में कहा था, "जानते हो, मैं खाना पकाते समय भी द्वंद्वात्मक भौतिकवाद को अपनाता हूँ। कौन सा मसाला कब डालने से खाने का स्वाद कैसा होगा, यह समझने के लिए यह सिद्धांत सबसे अच्छा औजार है।"

*   *   *

नियोगी खूब चर्चा करते थे, यह तो सब जानते ही हैं। लेकिन वे जितना ज्यादा बोलते थे, उतना ही या कभी उससे भी ज्यादा सुनते थे। दूसरे शब्दों में वे जितने अच्छे वक्ता थे, उतने ही अच्छे श्रोता भी थे। वे बिना चर्चा करते हुए बहुत कम पाये जाते थे। लेकिन कभी-कभी वे आस-पास की सब चीजों को भूलकर कहीं खो भी जाते थे और एकदम चुपचाप बैठे हुए देखे जा सकते थे। मैंने उनको कई बार जब ऐसे अकेले में बैठे हुए देखा, तो काम रहते हुए भी, उनको छेड़ा नहीं। उस समय मुझे ऐसा अहसास होता था कि आज का विश्वकर्मा एक नया शोषण-विहीन विश्व बनाने का सपना देख रहा है और इसके लिए सुदूर भविष्य में क्या तौर-तरीका अपनाना होगा उसकी कल्पना करने में मशगूल है। मैंने उनसे पहली मुलाकात के समय और उसके बाद बहुत बार उनकी आँखों में इस भाव का प्रतिबिम्ब देखा है। ❑

(नवम्बर 1992)

नियोगी के रूप में भगत सिंह फिर पैदा हो चुका है

स्वामी अग्निवेश

सन् 1978-79 में इटावा (उ. प्र.) में स्मृति दुबे और साथियों ने शहीद भगत सिंह दिवस का आयोजन किया था। मैंने उसमें बोलते हुए कहा था कि नियोगी के रूप में भगत सिंह फिर पैदा हो चुका है। आज के युवाओं को नियोगीजी से क्रांतिकारी प्रेरणा लेकर उन्हीं की तरह जुट जाना चाहिए।

सन् 1981 में मेरी उनसे पहली मुलाकात हुई – दिल्ली में, विट्ठलभाई पटेल भवन के एक लोक सभा सदस्य के कमरे में। यह लोक सभा सदस्य और कौन हो सकता था सिवाय कामरेड ए. के. राय के! नियोगीजी एक चटाई पर बैठे कुछ पढ़ रहे थे। मैंने कमरे में प्रवेश किया तो मन में कल्पना थी एक चमत्कारी व्यक्तित्व की, एक महान क्रांतिकारी की। पर जब सामने देखा तो हठात् विश्वास नहीं आया कि क्या कोई चर्चित जन नेता आज के जमाने में इतना सरल हो सकता है!

नियोगीजी तब जबलपुर जेल की कहानी सुनाने लगे। उन्होंने जेल में मेरा एक लेख पढ़ा था जो 'धर्मयुग' में छपा था – 'धर्म का दीया और क्रांति की बाती'। उसमें मैंने दकियानूसी मार्क्सवादियों की आलोचना की थी। नियोगीजी को वह विश्लेषण अच्छा लगा था। अपनी मिट्टी से जुड़कर, अपने जन संस्कृति के प्रतीकों को उभार कर क्रांति की एक नितांत स्वदेशी धारा से वे ओतप्रोत थे। मेरे लिए यह सुखद आश्चर्य था। साथ बैठकर हम दोनों ने समाज के भविष्य का एक साझा सपना संजोया था।

उस छोटी सी मुलाकात के बाद मेरा उनसे परिचय आत्मीयता में बदलता चला गया। पहली बार जब मैं बालोद में आयोजित वीर नारायण सिंह दिवस में भाग लेने गया तो उनकी प्रचंड संगठन शक्ति, संघर्ष और रचना के बुनियादी स्वरूप और उनके व्यक्तिगत जीवन में त्याग और साधना के उत्कृष्ट रूप को देखकर नतमस्तक हो गया।

सी. एम. एस. एस. के तमाम क्रांतिकारी साथियों से, राजनांदगाँव कपड़ा मिल मजदूर संघ के भाई-बहनों से और भिलाई से बिलासपुर और बस्तर तक के कार्यक्षेत्र में हजारों-हजार जुझारू साथियों से नियोगीजी ने मेरा परिचय कराया। जुझारूपन में मैं उनका कभी मुकाबला नहीं कर सकता था – यह जानकर भी वे मुझे संघर्ष के हर मोड़ पर, छोटी-बड़ी सफलता के हर पड़ाव पर अधिकारपूर्वक बुला लिया करते थे। उनकी प्रेरणा से राष्ट्रीय स्तर पर जनांदोलनों को संगठित करने का भी कई बार प्रयास हुआ। राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा बनाने का उनका सपना था।

वे 11 सितम्बर 1991 को सैकड़ों साथियों सहित दिल्ली आये। राष्ट्रपति, प्रधान मंत्री, वी. पी. सिंह जी आदि से मिलने के बाद के बाकी समय में हम लोगों ने राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा के गठन पर गहरी चर्चाएँ कीं। 11 से 16 सितम्बर तक पूरी तरह साथ रहे और फिर 19 सितम्बर

वे बातचीत करते-करते बिता देते थे। उनकी इस बातचीत की महफिल में ज्यादातर मजदूर रहते थे, बीच-बीच में चाय, बीड़ी, चारमीनार सिगरेट व कभी-कभी चना-मुरमुरा चलता था। उस महफिल में वे सामूहिक समस्याओं पर चर्चा करते थे। उन पर सबकी राय पूछते थे।

सन् 1982 की घटना है। उस समय मैं दल्ली राजहरा के पुष्पा अस्पताल (कैथलिक चर्च द्वारा संचालित अस्पताल) में डाक्टर था। एक महिला को प्रसव के समय बेहोशी की हालत में अस्पताल लाया गया था। उस समय मुझे और मेरे दोस्त डॉ. आशीष कुंडू को वह केस दिया गया था। मरीज के पिता के अनुरोध पर हम लोग उसका आपरेशन करने के लिए तैयार हो गये, लेकिन मरीज को खून की जरूरत थी। आशीष व मरीज के पिता ने एक-एक शीशी खून उसे दिया। इसके बाद और भी खून की जरूरत थी। नियोगीजी को जब यह पता चला तो वे भागकर अस्पताल आ पहुँचे। उनके खून का ग्रुप 'बी' था और मरीज को 'ए' ग्रुप चाहिए था। वे तुरंत वापिस गये और अपने एक मजदूर साथी को लेकर आये। उसके खून का परीक्षण करवाया। उस रात अस्पताल के सभी लोग आश्चर्य में पड़ गये कि एक अपरिचित रोगी के लिए नियोगीजी किस तरह से भागदौड़ कर रहे हैं।

नियोगीजी जहाँ भी जाते थे, मजदूरों की भीड़ हमेशा उनके साथ रहती थी। अनेक बार ऐसा होता था कि उन्हें सोचने का भी मौका नहीं मिलता था। इस कारण कभी-कभी वे बहुत खीज जाते थे। इसलिए यूनियन आफिस की ओर से उनके घर पर लोहे का एक दरवाजा लगाया गया था। फिर भी लोगों का आना-जाना कम नहीं हुआ क्योंकि मजदूर लोग उन्हें 'बैगा' या भैया समझते थे। छत्तीसगढ़ी भाषा में बैगा का अर्थ सयाना या चिकित्सक है। इसलिए लोहे के दरवाजे से लोगों को रोका नहीं जा सका। मजदूरों के प्रति उनके मन में असीम प्यार था। एक बार वीर नारायण सिंह दिवस पर दल्ली राजहरा से 200 कि. मी. दूर हिर्री माईन्स से कुछ पुरुष व महिला साथी दल्ली राजहरा आये। रात को उनके रुकने का इंतजाम नहीं था। दिसम्बर का महीना था, ठंड कड़ाके की पड़ रही थी। अस्पताल के कर्मचारी उन्हें अस्पताल में ठहराना नहीं चाहते थे। हम लोगों ने नियोगीजी को यह समस्या बतायी। हम लोगों पर वे बहुत नाराज हुए और बोले, "इनके रहने का बंदोबस्त नहीं होता है तो ये लोग मेरे घर में रहेंगे। इस ठंड में इन लोगों के आराम से रहने का बंदोबस्त करना बहुत जरूरी है।" अंत में हमारे मजदूर साथियों की मदद से उनके रहने का बंदोबस्त हो गया। नियोगीजी ने कहा, "हम मजदूरों की राजनीति करते हैं मगर मजदूरों से प्यार नहीं करते।" मजदूरों के प्रति उनके सच्चे प्यार के ऐसे कई उदाहरण हैं।

उनमें काम करने की बहुत क्षमता थी। फालतू बैठना उन्हें पसंद नहीं था। वे बहुत तेजी से चलते थे, उनके साथ पैदल चलने के लिए हमें दौड़ लगानी पड़ती थी।

अस्पताल की हर खिड़की, हर कमरा, हर सीढ़ी, यहाँ तक कि आपरेशन थियेटर कैसा बनेगा, इसकी चिंता उन्हें रहती थी। वे संगठन के हर काम को महत्व देते थे।

एक बार डॉ. बिनायक सेन के क्वार्टर का बिजली, पानी बी. एस. पी. ने बंद कर दिया, क्योंकि डॉ. सेन ने राजनांदगाँव के कपड़ा मिल मजदूरों की आंदोलन के समय मदद की थी। उस समय नियोगीजी का पैर टूटा था और वे बिस्तर पर थे। इस घटना को सुनकर उन्हें जो तकलीफ हुई उसे लिखकर, बोलकर या समझाकर नहीं बताया जा सकता। उन्होंने खदान

का त्यौहार आज ही हो। नियोगीजी जब आनेवाले दिनों के बारे में बोलने के लिए मंच पर चढ़े तब सब शांत होकर बैठ गये। बड़े दुःख की बात थी कि भिलाई स्टील प्लांट की बिजली चारों ओर थी पर जिस जगह मीटिंग चल रही थी वहाँ गुल कर दी गयी थी।

मृत्यु से 3-4 माह पूर्व भिलाई का पुराना आफिस छोड़कर उन्होंने नये घर में रहना शुरू किया था। अचानक एक दिन बोले, " डाक्टर साब, खिड़की में ग्रिल लगाने से अच्छा रहता, इसे इतना खुला रखना ठीक नहीं है।" फिर बाद में कहा, " रहने दीजिये।" हम लोग उस दिन यह बात नहीं समझ पाये और दूसरी चर्चा में लग गये। हम लोग उन्हें बचा नहीं सके। 27 सितम्बर 1991 की रात को पूँजीपतियों के लोगों ने सोते समय उसी खिड़की से उनके सीने पर गोली दाग दी। एक असाधारण व्यक्तित्व, राजनैतिक कर्मी, दूरदृष्टि रखनेवाला, निःस्वार्थी समाज का सपना देखने वाला व स्नेह-प्यार से सराबोर एक जीवन का अंत हो गया। हमारी कोशिश है कि उनके सपनों को साकार कर सकें।

❑

(मूल बंगला के अनुवाद का संक्षिप्त स्वरूप; अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित ' संघर्ष ओ' निर्माण ' से साभार।)

जनता से जुड़ते ही बंदूक दिख जाता है

अनिल सद्गोपाल

अप्रैल 1982, स्थल -- किशोर भारती संस्था का परिसर, बनखेड़ी, जिला होशंगाबाद। किशोर भारती और विदूषक कारखाना (जिला शहडोल) के संयुक्त तत्वावधान में मध्य प्रदेश की स्वयंसेवी संस्थाओं एवं अन्य गैर-दलीय जन संगठनों की बैठक। नियोगी पूरी बैठक का केंद्र बिंदु बने हुए थे, हालाँकि पूरा दिन एक भी शब्द नहीं बोले। गरमागरम राजनैतिक बहस के दौरान शांत मुद्रा में ध्यान से सुनते रहते थे, बीच-बीच में मुस्करा भर देते थे। फिर अचानक ही उठकर चल दिये। खोजने पर पता चला कि किशोर भारती का लगाया हुआ जंगल देखने निकल गये हैं। हर पेड़, हर जड़ी-बूटी का नाम व गुण पूछ रहे हैं।

दूसरे दिन प्रातः बैठक शुरू हो चुकी है, पर नियोगी बीज-रहित नींबू के बगीचे में टहल रहे हैं, दल्ली राजहरा के लिए इस दुर्लभ किस्म की पौद तैयार करवा रहे हैं। फिर उन्हें खींच-खाँच कर बैठक में बुलवाया गया। " शासक वर्ग की बर्बर हिंसा का सामना कैसे करें ? ", सब पूछ रहे थे। " बताइये हमें क्या तैयारी करनी होगी ? ", नियोगी मुस्करा रहे हैं। फिर जब दबाव पड़ा तो कुर्ते की जेब से माचिस निकाली, किसी से बीड़ी माँग कर सुलगायी। लम्बा कश लिया। फिर बोल ही पड़े अपनी मशहूर बंगाली लहजे की हिन्दी में, "देखो, ये जो मध्यमवर्गीय युवा

नियोगी के विशेष आग्रह पर हजारों मजदूर साथियों के बीच मैंने भोपाल गैस कांड की गाथा सुनायी और उस के वैज्ञानिक पक्ष की विस्तृत जानकारी दी। उन्हें लगातार चिंता रहती थी कि मजदूरों का राजनैतिक शिक्षण चलता रहे। फिर उन्होंने स्वयं खड़े होकर आह्वान दिया कि हम सब अगले एक वर्ष तक यूनियन कार्बाइड की एवरेडी बैटरी का बहिष्कार करेंगे। मजदूरों ने पुरजोर नारा लगाकर उनके आह्वान का समर्थन किया और भोपाल आंदोलन के समर्थन में लगभग चार हजार रुपया इकट्ठा किया। उस दिन सोनाखान की धरती से उठी वीर नारायण सिंह की साम्राज्यवाद-विरोधी ललकार भोपाल की गलियों में गूँजने लगी थी।

* * *

उनकी हत्या के मात्र 10 दिन पूर्व मैंने उनके साथ दिल्ली से भोपाल तक की रेल यात्रा की। वे अचानक कहने लगे, "मैं सोच रहा था कि होशंगाबाद में विज्ञान को प्रयोगों से पढ़ाने का जो काम आपने किया है उसकी कुछ छोटी-सी शुरूआत हम राजहरा के अपने स्कूलों में भी करें।" मैंने कहा कि मैं उधर आने की सोच ही रहा हूँ चूँकि मैं दुर्ग जिले में चल रहे पूर्ण साक्षरता मिशन का अध्ययन करना चाहता हूँ। फिर होशंगाबाद विज्ञान के बारे में मैं उधर के शिक्षकों से भी बात करूँगा। वे खुश हो गये। बोले कि साक्षरता कार्यक्रम का अध्ययन करने में वे मेरी पूरी मदद करेंगे चूँकि जिन गाँवों को पूर्ण साक्षर घोषित किया गया है वहाँ क्लासें भी ठीक से नहीं लगी हैं। वे उन सब गाँवों में जाते रहते हैं। फिर वे बोले, "**साक्षरता वालों ने सड़क के किनारे खड़े हर पेड़ को साक्षर बना दिया है।** आप इसका अध्ययन करने जरूर आना।" मैं उनके आमंत्रण पर यह अध्ययन करने जरूर गया, पर तब वे मेरी मदद करने के लिए इस दुनिया में मौजूद नहीं थे।

* * *

नियोगी के साथ दिल्ली से भोपाल तक की उसी यात्रा में मैंने उनसे पूछा था कि इतने कम पैसों में उनके परिवार का काम कैसे चलता है, तो आदतन अपना सिर झुकाकर वे बोले कि पिछली मीटिंग में साथी लोग कह रहे थे कि मेरे भत्ते में वे कुछ वृद्धि कर देंगे। मुझे विश्वास है कि उन्हें मेरी चिंता है।

फिर उस रेल यात्रा में व्यक्तिगत जिंदगी का जिक्र करते हुए नियोगी भावुक हो गये और बोले, "एक साल पहले मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा था कि अब राजहरा में आंदोलन को कैसे आगे बढ़ाया जाये। सब रास्ते बंद दिख रहे थे। मुझे डिप्रेशन सा हो गया था। तो मैं अपने परिवार को साथ लेकर अपने घर जलपाईगुड़ी चला गया। सोचा कुछ आराम करूँगा। पर कुछ दिन बाद ही पता नहीं क्या हुआ कि वापस छत्तीसगढ़ लौट आया और सीधे दल्ली राजहरा के बजाय भिलाई पहुँच गया। वहाँ पर ए. सी. सी. और सिम्पलेक्स इंजीनियरिंग कम्पनी में बरसों से ठेके पर काम कर रहे मजदूरों की समस्या चल रही थी। मैंने अपने को उससे जोड़ लिया और वहाँ से एक जोरदार आंदोलन उठ गया।" मैंने बरबस पूछ ही लिया, "आपके डिप्रेशन का क्या हुआ ?" नियोगी ने अपनी सरल मुद्रा में मुस्कराकर कहा, "वह तो आंदोलन में खत्म हो गया।" सच, नियोगी का जीवन ही आंदोलन था और आंदोलन ही उनकी निर्मम हत्या का कारण बना।

□

(अगस्त 1992)

मैं स्वयं को पारदर्शी रखना चाहता हूँ

राजेन्द्र हरदेनिया

पूर्व प्रधान मंत्री श्री वी. पी. सिंह जिस समय प्रख्यात श्रमिक नेता शंकर गुहा नियोगी की क्रूर हत्या के बाद उनके परिवार के सदस्यों से शोक व्यक्त करने भिलाई गये, उस समय उनके मन में यह क्षोभ अवश्य होगा कि 12 सितम्बर 1991 को समय देने के बावजूद वे नियोगी से भेंट नहीं कर पाये थे। उस दिन सुबह वी. पी. के निजी सचिव ने नियोगी को भेंट करने हेतु संसद भवन स्थित जनता दल कार्यालय में शाम चार बजे बुलाया था। नियोगी अपने सहयोगी श्री जनकलाल ठाकुर के साथ ठीक समय पर कार्यालय में पहुँच गये। उस समय वी. पी. एक कमरे में पत्रकारों से बात कर रहे थे। नियोगी ने करीब डेढ़ घंटे तक प्रतीक्षा की कि अब भेंट हो सकेगी, लेकिन प्रतीक्षा निरर्थक रही (हालाँकि दूसरे दिन उनकी मुलाकात हो गयी थी)। संयोग से मेरी भेंट नियोगी से वहीं हुयी। इस निरर्थक प्रतीक्षा के बावजूद नियोगी के शांत चेहरे पर रंचमात्र भी खीझ या गुस्से का भाव नहीं था। उनके कद का कोई और नेता होता तो इसी को अहम् का मुद्दा बना लेता।

* * *

नियोगी से मेरी पहली भेंट मई 1982 में हुई थी। लोक स्वतंत्रता संगठन (पी. यू. सी. एल.) के एक जाँच दल के सदस्य के रूप में मैं दल्ली राजहरा गया था। जाँच के उन तीन दिनों में नियोगी को निकट से समझने का मौका मिला। दल्ली राजहरा स्थित उनके निवास पर भी हम लोग गये। उनका निवास राजहरा में एक कच्ची झोपड़ीनुमा मकान था। दो कमरे और एक आँगन वाली खपरैल थी। अंदर एक ढिबरी जल रही थी। सामान नाममात्र को था। घर में उनकी पत्नी सुश्री आशा नियोगी तथा तीन बच्चे थे। उन्होंने हमें चाय पिलायी। दो कप जिनके कुंदे टूटे हुए थे, तीन गिलास तथा कटोरियों में चाय दी गयी। स्वयं के लिए उन्होंने जीने का यही मार्ग चुन लिया था। मैंने वहीं उनसे उनकी जीविका निर्वाह के बारे में जानना चाहा, तो उन्होंने कहा कि अपने मजदूर साथियों के बीच **मैं स्वयं को पारदर्शी रखना चाहता हूँ**। उनका यह वाक्य मुझे अभी तक याद है कि नेता का जीवन पारदर्शी होना चाहिए। मेरे संगठन के हर सदस्य को यह पता होना चाहिए कि मेरे घर पर क्या है, क्या नहीं ? मैं संगठन से वेतन नहीं लेता। संगठन के पदाधिकारी मेरे घर पर आकर देख जाते हैं कि घर में आटा, दाल, चावल किस चीज की आवश्यकता है, उसकी वे पूर्ति करते हैं। यदि मैं अपने लिए कोई चीज ले आऊँ तो मेरे घर में वह चीज मेरे साथियों को दिखेगी और वे मुझसे उसके बारे में पूछ सकते हैं। साथियों को यह संदेह नहीं होना चाहिए कि उनका नेता उनके विश्वास को कहीं तोड़ रहा है। इस तरह अपनी कथनी और करनी दोनों में मजदूर साथियों के विश्वास की कसौटी पर उन्होंने स्वयं को कसा था। □

('जनवादी आंदोलन का कर्मयोगी नियोगी : कुछ यादें ' शीर्षक के लेख के कुछ अंश ; 'दैनिक नई दुनिया ', भोपाल, 15 अक्तूबर 1991, से साभार।)

घोड़ा-गाड़ी, सुज़ूकी-मारुती व बंगले की ओर खिंचाव से सभी परिचित हैं। उस समय अपने जीवन के परिप्रेक्ष्य में नियोगीजी की कही एक बात मेरे अंतर्मन को छू गयी थी और आज भी बार-बार याद आती है। उनकी काव्यात्मक शैली में तो मैं उसे नहीं दोहरा सकता, लेकिन स्मृति के आधार पर उनके विचार, उन्हीं के शब्दों में लिखने की कोशिश कर रहा हूँ –

> **"क्रांतिकारी परिवर्तन चाहने वाला मध्यमवर्गीय युवा उस नदी की तरह होता है जो शुरू में बहुत आवेग से चलती है, रास्ते के पत्थरों को पार करती है, धीरे-धीरे आवेग कम होता जाता है। गति धीमी होती जाती है, मैदान तक पहुँचते-पहुँचते गति अत्यंत धीमी पड़ चुकी होती है और समुद्र के निकट पहुँचकर शिथिल पड़ जाती है। अरे! अथक सागर की तरह बनो, कामरेड, जिसमें अत्यंत तेज आवेग से लहर-पर-लहर उठती जाती हैं।"**

❑

(सितम्बर 1992 ; मूल लेख के कुछ अंश।)

बड़े-बड़े सपने हम सबने मिल-जुलकर देखे

पी. व्ही. राजगोपाल

सन् 1982 में मैं जब दिल्ली में कुछ मित्रों के साथ चर्चा कर रहा था तो अनायास प्रसिद्ध समाजवादी नेता श्री सुरेन्द्र मोहन ने मुझसे प्रश्न किया कि आप और नियोगीजी मिल-जुलकर काम क्यों नहीं करते ? मेरे पास अचानक पूछे गये इस प्रश्न का कोई जवाब नहीं था। लेकिन मैं अपने मन में इस बात को समझ रहा था कि इस दिशा में प्रयास होना चाहिए। लेकिन मैं यह भी जान रहा था कि यह प्रयास तभी सम्भव है जब मैं ग्रामीण क्षेत्र में जागरण और संगठन के काम को व्यापक रूप से फैलाऊँ।

कुछ वर्षों बाद मध्य प्रदेश की स्वयंसेवी संस्थाओं का एक सम्मेलन भोपाल में आयोजित करने की बात हुई तो यह चर्चा भी निकल पड़ी कि मुख्य अतिथि के रूप में किसको बुलाया जाये। तभी मुझे लगा कि यह सबसे उत्तम अवसर है कि जब नियोगीजी को मध्य प्रदेश के अन्य छोटे-छोटे जन संगठनों से भी परिचित कराया जाये और नियोगीजी के विचारों से हम सभी जन संगठनों को। इस सभा में नियोगीजी की उपस्थिति और आपसी संवाद से व्यक्तिगत रूप से मैं अत्यधिक प्रभावित हुआ और मन ही मन उन सम्भावनाओं पर विचार करता रहा कि ग्रामीण संगठनों और छमुमो के मिले-जुले प्रयास क्या-क्या हो सकते हैं।

एक दिन रायपुर के एक पत्रकार श्री प्रफुल्ल झा से बातचीत कर रहा था। तभी हमने सोचा कि भीड़-भाड़ से दूर कहीं बैठकर कुछ मित्रों के साथ भावी राजनीति के बारे में चर्चा होनी

नियोगी काकू

रफ़ी सेनगुप्ता

रफी, उम्र नौ वर्ष, दिल्ली में रहने वाला कक्षा चार का विद्यार्थी है। नियोगी जब कभी अपने काम से दिल्ली जाते थे तो अक्सर इस बच्चे के घर रुकते थे। जब रफी को पता चला कि उसके 'नियोगी काकू' पर एक पुस्तक तैयार हो रही है तो उसने स्वयं अपने मन की बात लिखकर दे दी। — स.

मैं जब से जन्मा हूँ तब से नियोगी काकू को देखता आया हूँ। नियोगी काकू मुझे शायद मेरे माता-पिता के समान प्यार करते थे। जब भी वह मेरे घर आते थे, तब तरबूज, आम, केला, अंगूर, आदि ले आते थे। वह अपने बच्चों के बराबर मुझे चीजें देते थे। जब मैंने उनकी हत्या के बारे में सुना तो मुझे बहुत दुःख हुआ क्योंकि मैं उनसे अच्छा आदमी नहीं जानता हूँ। मैं अक्सर नियोगी काकू को ख्वाब में देखता हूँ। मुझे दुःख इस बात का है कि नियोगी काकू मुझे अब कभी नहीं मिलेंगे। नियोगी काकू हर इंसान को बेहद प्यार करते थे। फिर भी उन्हें क्यों मारा, मुझे समझ नहीं आता।

❑

(नवम्बर 1992)

महिलाओं की लड़ाई में पुरुषों की भागीदारी क्यों नहीं?

सरिता शर्मा

नियोगीजी महिलाओं का बड़ा आदर करते थे, विशेषकर छत्तीसगढ़ की महिलाओं का। वे छत्तीसगढ़ की महिलाओं को 'पुरुष से भी ज्यादा ताकतवर व जुझारू' मानते थे। इसलिए उनका कोई भी जुलूस, सभा, धरना आदि कहीं भी देखेंगे तो महिलाएँ ही अग्रणी रहती थीं, और आज भी हैं।

मुझे आज भी याद है, जब सन् 1987 में उनके संगठन का दसवाँ स्थापना समारोह [illegible] में मनाया जा रहा था। मैं 'छत्तीसगढ़ महिला जागृति संगठन' का प्रस्ताव लेकर पहुँची थी कि 8 मार्च के कार्यक्रम में मुक्ति मोर्चा की महिलाएँ शामिल हों। इस सम्बंध में नियोगीजी ने बताया

हजारों व्यक्तियों की परिस्थितियों, आवश्यकताओं के प्रति नियोगीजी अत्यंत संवेदनशील थे। किसी के दुःख व तकलीफ को बहुत जल्दी ताड़ लेते थे और जानने के बाद एकदम तड़प उठते थे और उसे दूर करने के लिए जुट जाते थे।

हमारे संगठन के हरेक केंद्र में कार्यकर्ताओं के खाने के लिए 'मेस' की व्यवस्था बनी हुई है — दल्ली राजहरा, राजनांदगाँव, भिलाई, कुम्हारी, टेडेसरा, उरला आदि सब जगह। इस व्यवस्था पर जब किसी आगंतुक ने नियोगीजी से प्रश्न किया तो उन्होंने बताया था, "दिन-रात संगठन के कार्य में भाग-दौड़ करने के बाद पेटभर दाल-भात की अनिश्चितता तो नहीं होनी चाहिए।" बेशक, नियोगीजी को बरसों तक भूखे-प्यासे रहकर काम करने का गहरा अनुभव था, किंतु वे चाहते थे कि यथासम्भव आज के साथी उस दौर में से न गुजरें।

दूसरी ओर वे खुद बहुत मेहनत करते थे और हम लोगों से भी उसी तरह दिन-रात काम करवाते थे। लगातार कई-कई रात भर जाग कर काम करना, सर्दी-बरसात में दौड़-धूप आम बात थी। इसमें कोई मुरव्वत नहीं थी। हम लोगों को वे डाँटते भी बहुत थे — विशेष रूप से मुझे तो बहुत डाँट पड़ती थी। मगर उनका स्नेह भी कभी छुपा नहीं था। उनके खुश होने या नाराज होने का मुझ पर बहुत असर पड़ता था। यदि उन्होंने कह दिया कि 'यह काम तुमने ठीक नहीं किया', तो मैं बहुत दुःखी हो जाता था और यदि वे कभी कह देते या आभास देते कि मेरे काम से वे खुश हैं तो इतनी खुशी होती थी कि पैर जमीन पर नहीं पड़ते थे।

जीप में जाते समय अक्सर वे आगे बाहर की ओर बैठते थे। जब वे नींद के झोंके लेने लगते तो मैं अंदर से अपने बायें हाथ से उन्हें पकड़ लेता, बड़ी सावधानी से कि उनकी नींद न टूटे और वे नींद में बाहर न झूलें। उनसे नजदीकी एवं स्पर्श से ही बहुत अच्छा लगता था। कहना न होगा, हम सब उनसे बेहद प्रेम करते थे।

गाँव पथराटोला के एक बुजुर्ग बढ़ई हैं — बिसनाथ। करीब 70 बरस के होंगे। पहले वे खदान में काम करते थे। वे हर रोज नियोगीजी के घर आकर पता लगाते, "बाबू आइस का?" "नहीं आये हे", सुनकर लौट जाते। जब कोई दस चक्कर लगाने के बाद नियोगीजी से मुलाकात हुई तो वे उनके कान के पास मुँह लाकर धीमे से 'बहुत आपसी बात है' कहकर बोले, "बाबू, मोर सी. पी. एफ. के पइसा ला कौन से बैंक मा जमा कराना चाहिए?" अपने छोटे से निर्णय में भी वे नियोगीजी को राजदार बनाना चाहते थे और केवल वही नहीं — हजारों अन्य मजदूर साथी भी। उनका नियोगीजी से 'विशेष' रिश्ता था और वही नहीं, जो भी व्यक्ति उनसे मिला है, उसे लगा है कि उसका नियोगीजी से विशेष रिश्ता है।

नियोगीजी बहुत बहादुर थे। अगस्त 1991 में भिलाई के एक साथी पर उद्योगपतियों के गुंडों द्वारा पुलिस इंस्पेक्टर की मौजूदगी में चाकुओं से खूँखार हमले के बाद पर्चा बनाते समय नियोगीजी ने अंतिम पैरा में लिखवाया (वे मुझे डिक्टेट कर रहे थे) — "दोस्तो! हमारे ऊपर अनेकों हमले हुए हैं। कल और ...... हमारी कुर्बानी को याद कर, दो बूँद आँसू टपका देना। लाल जोहार!!"[1] इन शब्दों के अर्थ को समझ कर जब मैंने अपनी आशंकित नजरें उठायीं तो नियोगीजी ने तनिक मेरी तरफ देखा और फिर ठहाका लगा कर हँस दिये, अपनी हँसी से मेरे डर को उड़ाते हुए।

---

[1] पूरा बयान पृ. 306 पर।

कहीं से यूनियन के आफिस लौट रहा था कि रास्ते में मुझे नियोगीजी की बड़ी लड़की क्रांति स्कूल से बस्ता टाँगे घर लौटते दिखी। मैंने सोचा यह स्कूल से थकी-मांदी घर लौट रही है, चलो इसे जीप में बैठाकर घर पहुँचा देते हैं। नियोगीजी का घर यूनियन के दफ्तर से थोड़ा-सा ही आगे पड़ता है। तो जीप लेकर मैं पहले नियोगीजी के घर गया, वहाँ क्रांति को छोड़कर फिर दफ्तर पहुँचा। नियोगीजी को जब यह बात पता चली तो उन्होंने यूनियन की मीटिंग में इस पर मुझसे जवाब-तलब किया और फिर दंड के बतौर दो दिन तक मुझे निलम्बित रखा गया। बाद में नियोगीजी ने मुझसे कहा कि जीप यूनियन के काम के लिए है, उनके परिवार के लिए नहीं।"

* * *

नियोगीजी की हत्या के दो दिन बाद स्वामी अग्निवेश दल्ली राजहरा पहुँचे और वहाँ आयोजित एक सार्वजनिक शोकसभा में उन्होंने घोषणा की कि अब यह आंदोलन क्रांति गुहा नियोगी (नियोगीजी की बड़ी लड़की) चलायेगी । उनकी इस घोषणा से सभी लोग अचम्भित रह गये।

लेकिन तभी मंच पर छमुमो के उपाध्यक्ष श्री गणेशराम चौधरी आये और उन्होंने स्वामी अग्निवेश की भावनाओं के प्रति सम्मान प्रकट करते हुए कहा कि नियोगीजी ने हम लोगों को वंशवाद चलाने की प्रक्रिया नहीं सिखायी है। छमुमो हमेशा सामूहिक निर्णय से काम करता आ है और यह आंदोलन कैसे चलेगा, यह निर्णय भी संगठन ही करेगा।

(जुलाई 1992)

खुद मौत भी उनके होठों की मुस्कान मिटा न सकी

मदन दत्त

मूल बंगला में लिखे गये इस संस्मरण को अंग्रेजी में विख्यात लेखिका सुश्री महाश्वेता देवी ने अनूदित किया था। बाद में यह अंग्रेजी अनुवाद लेखिका की परिचयात्मक टीप के साथ 'फ्रंटियर' पत्रिका में प्रकाशित हुआ। संस्मरण और परिचयात्मक टीप के हिन्दी अनुवाद का संक्षिप्त स्वरूप यहाँ प्रस्तुत है। — सं.

मैं उसे मदन दत्त के नाम से जानती थी। सन् 1979-80 में वह रिक्शा चलाता था। मैं अपनी पत्रिका 'बर्तिका' के लिए रिक्शा चालकों के बीच लिख सकने वालों की तलाश कर रही थी कि मदन ने अपनी सीट के नीचे

एक महान डाक्टर हैं और दल्ली में एक बड़ा अस्पताल चलाते हैं। वहाँ इलाज होने से मरते हुए आदमी को भी नया जीवन मिल जाता है। अतः वह बूढ़ा नियोगीजी के पास इस आशा के साथ आया था कि वे उसका इलाज करेंगे। वह बूढ़ा बुढ़ापे की बीमारियों से त्रस्त था। नियोगीजी ने उसकी बातें खूब सहानुभूति और धैर्य के साथ सुनीं और उससे कहा, " आप एकदम ठीक हो जायेंगे। रात में आराम करिये, सुबह हम लोग अस्पताल चलेंगे।" उस बूढ़े के पास न तो खाने के लिए पैसा था, न ही सोने के लिए कोई बिछावन। नियोगीजी ने एक लड़के को बुलाकर उस बूढ़े को यूनियन के मेस में ले जाकर खाना खिलाने और अस्पताल से दो कम्बल लाकर यूनियन आफिस में उसके सोने का इंतजाम करने को कहा। फिर वे अलग-अलग जगहों से आये छमुमो के कार्यकर्त्ताओं से मिले और रात दो बजे तक उनसे चुनाव के बारे में विचार-विमर्श करते रहे। घर जाने से पहले वे उस बूढ़े के बारे में पूछताछ करने गये। वह बिना कम्बल के एक मोटी सूती चादर ओढ़े हुए पड़ा था।

नियोगीजी आमतौर पर बहुत संयत और शांत रहते थे, लेकिन उस दिन मैंने उन्हें गुस्से से आगबबूला होते हुए देखा। उन्होंने तमतमाते हुए पूछा, " वह लड़का कहाँ गया ? "

लड़का मुँह लटकाये उनके सामने आ खड़ा हुआ।

" मैंने तुम्हें क्या कहा था ? तुम इतना छोटा-सा काम भी न कर सके और लोगों की सेवा करने चले हो ? "

" जी, अस्पताल में कोई फालतू कम्बल नहीं था। मरीज बहुत ज्यादा थे। "

" तुमने मुझे क्यों नहीं बताया ? जाओ. जाकर जनक के या मेरे घर से अभी कम्बल लेकर आओ। "

इसके बाद नियोगीजी तभी सोने गये जब छमुमो के अध्यक्ष जनकलालजी के घर से कम्बल लाकर उस बूढ़े को ओढ़ाया गया। जरूरतमंद और पीड़ित लोगों के प्रति इस मानवीय व्यवहार के जरिये ही नियोगीजी ने अनेक दिलों का प्यार जीत लिया था।

एक दिन डॉ. शैबाल जाना एक मरीज को देखने जाते समय मुझे भी साथ ले गये। हम दो मील पैदल चलकर मजदूरों की बस्ती में पहुँचे। वहाँ खाट पर एक बूढ़ा लेटा हुआ था। डॉ. जाना ने कहा , " डोकरा ! मेरा यह दोस्त कपसी से आया है। मैंने इसे बता दिया है कि आप एक बहुत अच्छे कथावाचक हैं। इसे भी एक कहानी सुनाइये, न। "

बूढ़ा आदमी काफी खुश हुआ। बिना दूध की चाय पेश की गयी और वह रामायण की कहानी नये सिरे से सुनाने लगा। दल्ली के इस गरीब बाशिंदे ने सन् 1977 की मजदूर हड़ताल देखी थी। वह अनुभव इतना प्रभावशाली था कि रामायण की कहानी, खासकर रावण के पुत्र अहिरावण द्वारा राम-लक्ष्मण को बंदी बनाये जाने के प्रसंग के दौरान, बार-बार मजदूरों व नियोगीजी के संस्मरणों की ओर मुड़ जाती थी।

" राम और रावण की लड़ाई ठीक वैसी ही थी जैसी कि मजदूरों और खदान मालिकों की लड़ाई। फिर रावण ने अपने पुत्र और पाताल के राजा अहिरावण को बुलाया और कहा, 'जाओ राम का मुकाबला करो। उसे मार कर लंका की रक्षा करो।' उसी तरह खदान मालिक भी पुलिस के पास दौड़े गये और कहा, ' नियोगी से हमारी रक्षा करो।' पुलिस ने यही किया और गोलियाँ चलायीं। अहिरावण बड़ा मायावी था और उसने अपनी धूर्तता से राम को बंदी

मानो वे किसी सपने में खोये हों। भाड़े के हत्यारों की गोलियाँ भी उनके होठों की मुस्कान न मिटा सकीं। खुद मौत भी उनके सपने को खत्म न कर सकी।

□

(मूल अंग्रेजी से ध्रुव नारायण द्वारा अनूदित; 'फ्रंटियर', कलकत्ता, 1 फरवरी 1992, से साभार।)

जिंदा रहना है तो करना है, नहीं तो मरना है

निरंजन लाल यादव

मैं मोदी सीमेंट फैक्ट्री (बालोदा बाजार, जिला रायपुर) में इलेक्ट्रीशियन हूँ। सन् 1989 में नियोगीजी के बारे में किरंदुल (बैलाडीला, जिला बस्तर, की लौह अयस्क खदानों का मुख्यालय) में वहाँ के यूनियन वालों से जानकारी प्राप्त हुई। इसके कुछ ही दिनों बाद दूरदर्शन पर 'फेस इन द क्राउड' कार्यक्रम में नियोगीजी के काम को देखा, जिससे यह अहसास हुआ कि ग्रामीण स्तर पर काम करके राष्ट्रीय छवि प्राप्त करने वाले व्यक्ति में निश्चित ही कुछ विशिष्ट गुण होंगे।

इससे पूर्व एक औद्योगिक मजदूर के रूप में मुझे इंटक, एटक व अन्य कई ट्रेड यूनियनों के साथ काम करने का मौका मिला था। इससे मुझे यह अहसास हो गया था कि इन यूनियनों के कार्यकलाप मजदूरों के लिए हितकारी नहीं हैं।

इस कारण मैं किसी भी यूनियन से जुड़ने में घबरा रहा था। नवम्बर 1990 में नियोगीजी से भिलाई स्थित छमुमो के कार्यालय में भेंट हुई, जिसमें शहीद अस्पताल व अन्य कई कामों की जानकारी मिली। इसके बाद मेरी उनसे यूनियन बनाने सम्बंधी बातचीत हुई। शुरू में तो उन्होंने हमें बिना पर्ची काटे संगठन बनाने की बात कही जो हमें बड़ी अटपटी सी लगी। उनका कहना था, "पर्ची काटने से क्या होगा? पहले आप मजदूरों को संगठित तो कीजिये।" परंतु इसके बाद 2-3 बार मिलने पर वे छमुमो की पर्ची काटने के लिए राजी हो गये। इसी दौरान एक दिन हमने लगभग 17-18 साथियों के साथ छमुमो के कार्यालय में नियोगीजी, बाबा गुप्ता आदि के साथ भोजन किया। अत्यंत साधारण भोजन — महज भात, थोड़ी सी दाल व सब्जी — देखकर मुझे आश्चर्य हुआ कि यूनियन के पास मकान, गाड़ियाँ आदि सुविधाएँ होते हुए भी, भोजन पर मात्र इतना ही खर्च करते हैं, जिससे कम में गुजारा हो ही नहीं सकता।

12 दिसम्बर 1990 को बालोदा बाजार में यूनियन कार्यालय का उद्घाटन हुआ जिसमें नियोगीजी के पहुँचते ही 'नियोगी जिंदाबाद' के नारे लगने शुरू हो गये। तुरंत नियोगीजी ने मंच पर जाकर नारे लगाने का विरोध करते हुए व्यक्ति के स्थान पर संगठन के महत्व की बात

शवयात्रा नहीं, विजय यात्रा

श्याम बहादुर 'नम्र'

29 सितम्बर 1991 की दोपहर को सर चटकाने वाली चिलचिलाती धूप में 'शहीद नियोगी के रास्ते पर अमल करो' के नारों की गगन-भेदी गूँज से ओत-प्रोत, शोकाकुल फिर भी कुछ कर गुजरने की आकाँक्षाएँ समेटे, लाखों मेहनतकश लोगों के समागम से दल्ली राजहरा की सड़कों पर बने जन-महासागर के बीच, लाल-हरा झंडा ओढ़े, होठों पर मंद मुस्कान लिये चिरशांति में डूबे स्वप्नद्रष्टा नियोगी का दर्शन मेरे जीवन की एक महत्वपूर्ण घटना है। मेरे दोनों हाथ अचानक उठे, जुड़े और प्रणाम की मुद्रा में माथे से लग गये।

"इतनी जल्दी सो गये ? अभी तो बहुत कुछ करना था। तुम तो सुंदर दुनिया का सपना देखते थे। भारत की मुक्ति की बात करते थे, छत्तीसगढ़ की मुक्ति की बात करते थे। अभी तो दल्ली राजहरा भी मुक्त नहीं हुआ है। आज चुप क्यों हो ? पहले तो जब भी मिलते थे, बाहें फैलाकर मिलते थे। कस लिया करते थे मुझे अपने बाजुओं में। मुझसे नाराज हो ? जेल में तुमसे मिलने नहीं आया था इसीलिए ? लेकिन तुम्हारे जेल जाने पर कविता तो लिख दी थी। आज भी तुम्हारी शहादत पर तुम्हें सम्बोधित कर एक कविता लिखी है। नहीं सुनोगे ?"

"मुझे मालूम था आप मुझसे मिलने जरूर आओगे। कोई नया कविता भी लाओगे। आज आपका कविता मैं जरूर सुनूँगा। लेकिन आज अनुसूइया बाई, सुदामा, जगदीश भाई बहुत से शहीदों के साथ बैठकर सुनूँगा। शाम को विशाल संघर्ष सभा होगा, उसमें आप सुनाना कविता।"

मैं नियोगी के बाजुओं का कसाव महसूस करता हूँ।

'शहीद शंकर गुहा नियोगी अमर रहें।' महिला मजदूरों का एक जत्था नारे लगाता हुआ आता है और नियोगी के पार्थिव शरीर पर फूल बिखेर देता है। पल भर के लिए मेरी नींद उचट जाती है।

अजीब हाल है। मैं चलते-चलते सो रहा हूँ और नियोगी सोते-सोते जाग रहे हैं।

"अचरज में पड़ गये ? मेरी शवयात्रा में श्रद्धांजलि देने आये थे न ? लेकिन मुझे विश्वास है कि तुम मुझे मृत नहीं समझ रहे हो। यह मेरा शवयात्रा नहीं है, यह तो हमारा विजय यात्रा है। मृत्यु पर जीवन का विजय। अखबार वाला इसे शवयात्रा छापेगा। शाम की संघर्ष सभा को श्रद्धांजलि सभा छापेगा। आप अपनी कविता में इसे शवयात्रा कभी न लिखना।"

"देखो, लाखों की संख्या में जनता लोग हमारा विजय जुलूस में शामिल है। आज तो बूढ़ा लोग भी आया है, बच्चा लोग भी आया है, माताओं-बहनों का तो काफिला ही काफिला दिखायी पड़ता है। ये जनता छत्तीसगढ़ के कोना-कोना से आया है, सब लाल-हरा झंडा बुलंद कर रहा है, ये छत्तीसगढ़ की मुक्ति का संघर्ष छेड़ने आया है, ये अपनी मातृभूमि को दलालों से मुक्त करने का संकल्प लेने आया है। देखो चारों ओर जनता ही जनता। अखबार वाला इसे 'हजारों की भीड़' लिख कर छाप देगा। आप अपनी कविता में जनता को भीड़ मत लिखना।

13.

शहादत से अंकुरित कविताएँ

सच्चा योगी

हरि ठाकुर

युगों-युगों के बाद नियोगी जन्म लिया करता है।
सबको अमृत बाँट और खुद जहर पिया करता है।।

वह मशाल बन, अंधकार से युद्ध किया करता है।
मौत मरा करता शहीद की, क्रांति जिया करता है।।

जो अपने लहू से लिखता है बलिदान कथाएँ।
उसका ही इतिहास लिखा करती हैं सब भाषाएँ।।

उसका ही साहित्य बढ़ाता है समाज को आगे।
ऐसे क्रांति-पुरुष के पीछे यश छाया बन भागे।।

उसकी आँखों में सपनों की पौध पला करती है।
उसकी साँसों में ज्वाला की ज्योति जला करती है।।

उसकी मुट्ठी में आँधी की शक्ति हुआ करती है।
उसके मन में लोकशक्ति की भक्ति हुआ करती है।।

जब चलता वह, साथ-साथ तूफान चला करता है।
उसके सपनों के साँचे में देश ढला करता है।।

लोक साधना में जीता जो वह है सच्चा योगी।
ऐसे लोगों को हम कहते शंकर गुहा नियोगी।।

□

उसकी आवाज बाकी है

इश्तियाक़

फिर एक बार
मेहनत और
मेहनतकशों को नकारा गया।

जो बन गया था
बेबसों की आवाज,
उसे सरेआम मारा गया।

विचार नहीं मरता

श्याम बहादुर ' नम्र '

यह कविता कवि द्वारा 29 सितम्बर 1991 को दल्ली राजहरा में नियोगी की शवयात्रा के बाद हुई विशाल शोकसभा में पढ़ी गयी थी। — स.

व्यक्ति भले मर जाये,
विचार नहीं मरता।
इसलिए
विचारवान व्यक्ति मरने से नहीं डरता।
कर्महीन कोरा विचार शायद मर सकता है।
लेकिन,
यदि वह कर्म की कोख से जन्मा हो,
तो उसका कोई कुछ भी नहीं कर सकता है।

इसलिए जिसने कर्म किया,
कर्म की कोख से निकले विचार को जिया,
हत्या से वह अमर हो जाता है।
अपने से निकल लाखों में समाता है।

व्यक्ति-हत्या के बाद,
विचार बीज की तरह बिखरता है।
चारों ओर अंकुरित हो, और निखरता है।
इसलिए,
हे शंकर गुहा नियोगी !
तुम मरे नहीं हो, कई गुना बढ़ गये हो,
सत्ता-पूँजी के जघन्य अपराध को रौंदकर
ऊपर चढ़ गये हो।

❑

अनूपपुर से दल्ली राजहरा की रेल यात्रा में,
29 सितम्बर 1991

तुम्हें याद करेगा

कल्पना घोष

आज के बाद
छत्तीसगढ़ में जो भी जन्म लेगा,
रोने के बदले हाथ उठाकर इंकलाब कहेगा।
जब भी कोई नन्हा क्रांतिकारी
क्रांति का इतिहास पढ़ेगा,
किताबों में लिखा रहे या न रहे,
तुम्हें याद करेगा।
जब-जब किसान एक बूँद पानी के लिए तरसेगा,
उद्योगों के लिए संचित जल भंडार देखकर
तुम्हें याद करेगा।

कल रात जब मैं सो रहा था . . . .

अमित सेनगुप्ता

यह कविता अर्ल रॉबिन्सन [1] द्वारा सन् 1925 में जो हिल [2] की याद में लिखे और पॉल रॉब्सन [3] द्वारा अक्सर गाये गये गीत पर आधारित है। — स.

कल रात जब मैं सो रहा था,
तब काँप उठी चारपाई।
बिस्तर पर बैठा हुआ था,
हमारा नियोगी भाई।

मैंने उसको देखकर पूछा,
कैसे तुम जिंदा हो ?
परसों रात कसाइयों के हाथ,
तुम तो मारे गये हो,
फिर कैसे जिंदा हो ?

उसने कहा, " वर्ग संघर्ष में,
जो लोग शहीद होते हैं, वो मरते नहीं,
हमेशा-हमेशा जिंदा रहते हैं,
वो मरते नहीं हैं। "

मैंने देखा, वह अकेला नहीं था,
साथ में था जुलूस विशाल।
सभी ने हाथों में उठा रखा था,
झंडा हरा-लाल, झंडा हरा-लाल।

पैरी कम्यून [4] से नियोगी तक
जो भी लोग शहीद हुए हैं,
उन सभी को देखा
नियोगी के साथ शामिल हुए हैं।

जुलूस जब आगे बढ़ने लगा,
मैंने बोला, " नियोगी, राम-राम। "
नियोगी ने मुझसे हँसकर कहा,
" कामरेड लाल सलाम, सलाम, लाल सलाम। "
❑

दल्ली राजहरा,
30 सितम्बर 1991

---

[1] अमरीका के विख्यात क्रांतिकारी गीतकार।

[2] अमरीका के कोयला खदान मजदूरों के संगठक जिन्हें यूटहा प्रदेश की पुलिस ने किसी हत्याकांड में फँसाकर सन् 1915 में ' फायरिंग स्क्वायड ' से मरवा दिया।

[3] अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जनप्रिय अमरीकी गायक (1898-1976) ।

[4] सन् 1871 में पेरिस में मजदूरों द्वारा सशस्त्र संघर्ष के जरिये स्थापित राज्य जो अल्पकाल में ही पूँजीपति ताकतों द्वारा कुचल दिया गया। मजदूरों और मेहनतकश जनता द्वारा अपना शासन कायम करने की दुनिया के इतिहास में यह पहली मिसाल थी।

मजदूरों की ताकत को खत्म करने के लिए
वे विदेशों से भारी-भरकम मशीनें लाते हैं।
मेहनतकश की कमाई को लूटकर
काले धन का पहाड़ बनाते हैं।
दुनिया सुंदर न रहे,
इसके लिए मेरे एक बेटे को
कारखाने के अंदर गुलाम बनाते हैं।
पर जब वह सीना तानकर
शोषण के खिलाफ इंकलाब का नारा लगाता है,
तो वे मेरे दूसरे बेरोजगार बेटे को
बाहर गेट पर चाकू-बंदूक थमाकर
अपने भाई को मारने का सबक सिखाते हैं।
यह उनका प्रोग्राम है
दुनिया की सुंदरता छीन लेने का।

(3)

यह उनका भ्रम है कि
सुंदर दुनिया को कंटीले तारों से
घेरा जा सकेगा
और मजदूरों को उसमें घुसने से
रोका जा सकेगा।
इसलिए हमें अपनी साँसों की गर्मी से
इंसान के अंदर छिपे
पिशाच को झुलसाना होगा।
लगातार संघर्ष करके
हर आँसू को अंगारे में
और हर मौत को शहादत में बदलना होगा।
तभी तो तुमने
जिंदगी को सच्चा प्यार किया है,
इसका सबूत मिल सकेगा।
तभी हर इंसान
उनके कंटीले तारों को उखाड़कर
सुंदर दुनिया को
जी भर कर प्यार कर सकेगा। ❑

रायपुर,
19 नवम्बर 1991

तुम्हें क्रांतिकारी सलाम

अमित भटनागर

शंकर गुहा नियोगी,
तुम्हें क्रांतिकारी सलाम।
सुबह की प्रणय बेला में
तुम्हारे शरीर में
छह गोलियाँ डाल दी गयीं।

तुम्हारे खून के छींटे
बहुत दूर-दूर उछले हैं —
पहाड़ों में, खदानों, जंगलों, झाड़ों में,
गली-कूचों में, झोपड़पट्टियों में,
मजदूरों में, किसानों में,
भूखों में, नंगों में,
लड़ने वालों में, जुल्म सहने वालों में।

उसने दिखाया था
कि दल्ली राजहरा की
लाल-लाल मिट्टी में
रचे-बसे लोगों का खून कितना लाल है,
कि केवल बुद्धिजीवी, व्यापारी,
या बड़े-बड़े लोग नहीं,
वहाँ की स्त्रियाँ, वहाँ के बच्चे,
वहाँ के मजदूर भी,
और सबकी तरह आदमी होते हैं,
जानवर नहीं हैं।

इस मजदूर के छोटे-छोटे सपनों से,
उसके परिश्रम से, उसकी लगन से,
उसकी तपस्या से
डरने लगे थे कुछ बड़े-बड़े लोग
और उन्हें लगा
कि हिलने लगा है शायद
उनका सिंहासन।

उसके सपनों से इतने डर गये वे
कि छद्म से सोते-सोते
करवा दी उसकी हत्या चुपचाप
आधी रात को,
शायद इसलिए
कि देख न ले कहीं वो
एक और नया सपना
और सुबह उठकर उसे
न कर ले पूरा।

वे डरे हुए लोग यह भी नहीं जानते
कि प्राण लेकर किसी के मरते नहीं सपने।
सपने तो हमेशा अमर होते हैं
और अमर होता है उस जैसा स्वप्नद्रष्टा।

नर्मदा के तट से

बाबा आमटे

वह
एक सुनियोजित हत्या थी,
सरेआम हक्काबक्का देने वाली हत्या।

हत्या,
जो हमारी सभ्यता का मजाक उड़ाती है।
सभ्यता,
जो शताब्दियों में विकसित होती है,
किंतु
क्षणों में ही बदल जाती है
पाशविकता में।

वह,
उन लोगों के षड्यंत्र का शिकार हो गया,
जो एक प्रबुद्ध, समतामूलक,
प्रगतिशील समाज में
विश्वास नहीं करते।

14.

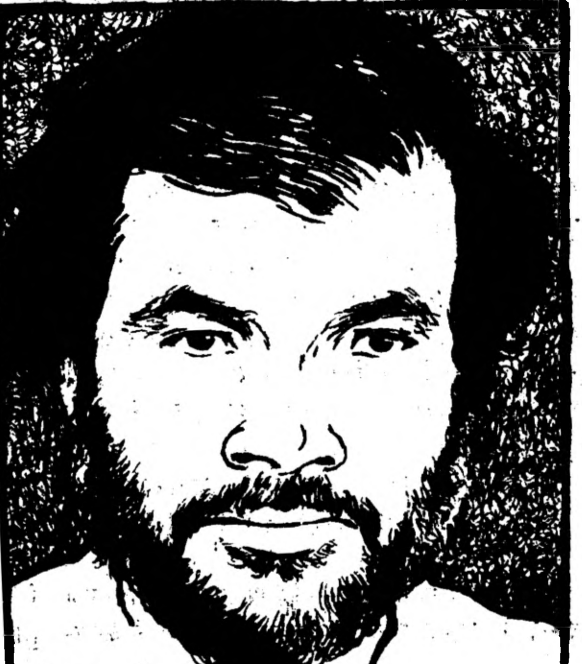

नियोगी - एक नयी राजनैतिक धारा

वामपंथ की तीनों धाराओं से अलग, एक चौथी धारा

ए. के. राय

शंकर गुहा नियोगी जब जीवित थे तब वे नेता रहे, लेकिन मृत्यु के बाद एक धारा बन गये। उस धारा का नाम है ' संघर्ष से निर्माण '। यह एक अनोखा संगम, जो एक निर्बल समाज का सम्बल। दिल्ली भारत की राजधानी, लेकिन दल्ली राजहरा आज राजनीति का नया तीर्थ। मध्य प्रदेश के बीच लोहा खदानों से लाल एक इलाका, भारत के भूगोल ने जिसका कभी ख्याल नहीं किया। आज कितने लोग वहाँ पहुँच रहे हैं। इसके लिए काफी कीमत देनी पड़ी है। पंद्रह साल पहले ग्यारह श्रमिकों के बलिदान से जिस यात्रा की शुरूआत हुई, वह आज राजनांदगाँव होते हुए पंद्रह श्रमिकों की शहादत के साथ भिलाई पहुँची है। लेकिन दिल्ली अभी दूर है। दल्ली से दिल्ली, इस धारा के प्रवाह में 27 सितम्बर 1991 की रात में शंकर गुहा नियोगी भी मिला दिये गये। इसलिए इस धारा का संदेश आज सभी को आकर्षित कर रहा है। यह कोई बीते हुए जीवन का व्याख्यान नहीं, एक आने वाले जमाने का जयगान है। नींद तोड़ने का आह्वान, जो सोये हुए जमात को जगाता है, और उन तमाम लोगों की नींद छीन लेता है, जिन्होंने सोये हुए एक जीवन को हमेशा के लिए नींद में ढकेल दिया था। मृत शंकर गुहा नियोगी, जीवित शंकर गुहा नियोगी से ज्यादा बलवान है। आज दल्ली इसलिए आने वाले जमाने का दिल्ली है।

सन् 1971 से सन् 1991 — बीस साल की दुरूह यात्रा। इस बीच कितनी घटनाएँ। कितनी उथलपुथल दुनिया में। भारत में भी। इतिहास के उलटे रथ ने कितने स्वप्नों को तोड़ डाला। कितनी आशाओं का अंत किया। समाजवादी विश्व तथा सोवियत संघ के विघटन के बाद जैसे तमाम मूल्य ही उचट गये। उपयोगितावाद (प्रैगमैटिज्म) के युग में आदर्शहीन विश्व ही आदर्श विश्व। आज स्वतंत्रता एक बोझ। निर्भरता अच्छी। आसान रास्ता ही सही रास्ता। सिर्फ रूस में ही येल्तसिन ने लेनिन को हटाकर नहीं रखा है, भारत में भी भिंडरावाला भगत सिंह को भगा रहा है, गोडसे गांधी को और अब राव नेहरू को। चारों ओर मनमोहन सिंह और डंकल साहब के डंके की आवाज। हर्षद मेहता, कृष्णमूर्ति की खबर। इस माहौल में शंकर गुहा नियोगी की जगह कहाँ ? उनके कामों का भी क्या महत्व ? लेकिन दिल्ली में ' राज ' करने वालों की राजनीति के विरुद्ध दल्ली में जो लोग काम करते हैं, उनकी राजनीति आज जोर बाँध रही है। जीवित शंकर गुहा नियोगी ने जिसे ललकारा था, क्या मृत नियोगी उसे नेतृत्व दे सकेंगे ?

शंकर ने अपने एक प्रकाशित हुए लेख में लिखा है — मनुष्य की तरह समाज भी समय के साथ जवान होता है , उसमें भी बुढ़ापा आता है ; एक समाज की मृत्यु के बाद नये समाज

बहुर्मुखी गतिविधियों के बीच में भी जिस मूल दिशा से शंकर गुहा नियोगी **कभी भटके** नहीं, वह है **मजदूर वर्ग का नेतृत्व और भारतीय समाज में मार्क्सवाद की स्थापना**। आज प्रतिष्ठित ट्रेड यूनियनों में भी मजदूर वर्ग का नेतृत्व नहीं है, न नेतृत्व की ही पकड़ है मजदूर वर्ग पर। मार्क्सवादी दर्शन भी अभी तक बाबू संस्कृति का बेड़ा पार कर, सही जमीन में जड़ें घुसा नहीं पाया। संक्षेप में शंकर का लक्ष्य था **मार्क्सवाद का भारतीयकरण** जिसकी जरूरत इतने दिनों के बाद सी. पी. आई. ने अपनी दलील में स्वीकार की है। इस संदर्भ में वर्ग संघर्ष और सांस्कृतिक क्रांति का एक रूप ' संघर्ष और निर्माण ' का कार्यक्रम है। **चीन में जो चीज माओ ने क्रांति के बाद की थी – जात-पात व धर्म में विभाजित भारत में उसकी क्रांति लाने के लिए ही जरूरत है**। सामाजिक सुधार एक सांस्कृतिक क्रांति है, यदि वह समाजवादी विचारों के साथ मजदूर वर्ग के नेतृत्व को प्रभावित करती रहे। इसलिए यूनियन शंकर गुहा नियोगी के लिए **राहत तथा सुविधा देने की दुकान नहीं, ज्ञान तथा चेतना देने का स्कूल था**। मजदूर वर्ग समाज को बदल डालने की शक्ति है और यूनियन का काम है उसे उस रूप में तैयार करना। एक रचना में नियोगी ने लिखा था, " अर्थवाद का अंधकार नहीं, आर्थिक लड़ाई के साथ सामाजिक मुक्ति की रोशनी चाहिए। चाहिए स्वाभिमानी मजदूर वर्ग की प्रतिष्ठा जो वोट के लिए तिरंगा और पेट के लिए लाल झंडा की अवसरवादिता से मुक्त होंगे। " इसी के अंदर से पनपेगा क्रांतिकारी ट्रेड यूनियन जिसकी एक छवि सी. एम. एस. एस. के रूप में दल्ली राजहरा में हमें मिलती है। यहाँ पर भी शंकर हम सबके लिए एक मॉडल छोड़कर गये हैं जो भारत के किसी भी यूनियन से अलग, लेकिन सभी यूनियनों के लिए शिक्षाप्रद है।

नियोगी के अनुसार क्रांतिकारी ट्रेड यूनियन के लिए पहली जरूरत नेतृत्व की एक समग्र दृष्टि है। यदि समाज में बदलाव लाना ही ट्रेड यूनियन आंदोलन का लक्ष्य है, तो समाज के तमाम अंतर्द्वंद्वों के बारे में ठोस जानकारी तथा हर स्तर पर उसकी एक भूमिका होनी चाहिए। किसी भी समस्या का छोटा पहलू भी कभी बड़ा बन कर खड़ा हो जाता है। भारत में क्रांति का सवाल कोई एकांकी नाटक नहीं, इसलिए एकांगी दृष्टिकोण लेकर इस विशाल समाज की जटिल प्रक्रियाओं को समझना सम्भव नहीं है। भारत की ही तरह **उपनिवेशोत्तर देशों**[1] **में जहाँ भ्रष्टाचार का बोलबाला है वहाँ नैतिक क्रांति भी एक विशेष महत्व रखती है** तथा सामाजिक सुधार का केंद्र बिंदु है। इसलिए आर्थिक लड़ाई के साथ-साथ शंकर ने शराबबंदी की लड़ाई शुरू की थी जिसने अंत में उस इलाके के दारू के तमाम ठेकेदारों को उनका दुश्मन बना दिया। इसी रूप में सूदखोरी तथा महाजनों के विरुद्ध जेहाद छेड़ा गया। इतना ही नहीं, जहाँ सामाजिक तथा क्षेत्रीय विकास की विषमता ही आर्थिक तथा राजनैतिक शोषण की जड़ है, वहाँ उसके विरोध की लड़ाई में मजदूर वर्ग को अगुवाई करना है। इसीलिए लोहा खदानों के मजदूरों के नेतृत्व में छत्तीसगढ़ के पिछड़े समाज के आत्मसम्मान तथा स्वायत्तता के सवाल पर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा बना। **इस रूप में वर्ग संघर्ष के साथ सामाजिक उत्थान के संघर्ष ने मिलकर ' भूपाल में भूचाल ' पैदा किया**। दल्ली राजहरा में ट्रेड यूनियन के जिस मॉडल का शंकर गुहा नियोगी ने सृजन किया उसने मजदूरों को सिर्फ माँग करना ही नहीं सिखाया, कुछ करने के लिए भी प्रेरित किया। और यूनियन ने स्कूल, अस्पताल, सहकारी समिति आदि बनाकर और पर्यावरण संरक्षण करके दिखाया

[1] वे देश जो पहले कभी किसी अन्य देश के उपनिवेश थे, यानी ' पोस्ट-कॉलोनियल ' देश।

कर दिया कि यह सम्भव है। यह महान समन्वय भारत की राजनीति में शंकर की अनोखी देन है। दक्षिण और वाम के विभाजन के पहले अच्छाई और बुराई का विभाजन चाहिए जिसने भारत की राजनीति में मिलावट की एक नयी समस्या पैदा की है। जनमुखी, श्रममुखी, सहयोगमुखी दिशा एक ओर, सत्तामुखी, धनमुखी, स्वार्थमुखी दिशा दूसरी ओर। इन दोनों के बीच हमें चुनना है और इसमें ही शंकर ने सभी को दुश्मन बना लिया। कितनी पार्टियों ने भोपाल से राज किया। कांग्रेस, जनता, भाजपा। सभी से लड़ना पड़ा। कितनी यूनियनें भिलाई में रहीं। सभी ने विरोध किया। जीवन भर शंकर को लड़ना पड़ा — सभी सरकारों से; सभी पार्टियों से। लेकिन कोई उनको पराजित नहीं कर पाया। मृत्यु के बाद भी शंकर गुहा नियोगी अपराजित है, जिसने दल्ली राजहरा की छोटी-सी प्रयोगशाला को बदलाव की सही राजनीति की नयी दिल्ली में बदल दिया।

❑

(सितम्बर 1992; मूल हिन्दी लेख भाषाई परिमार्जन के साथ।)

जिसने जनता के पैरों के लिए जूते बनाना सीखा

अमित सेनगुप्ता

नियोगी से जब मेरी पहली मुलाकात हुई तब हमारी न तो छत्तीसगढ़ के संगठन के बारे में बात हुई, न ही दिल्ली के मेरे मजदूर संगठन के बारे में। हम दोनों की बात हुई देश की तत्कालीन परिस्थिति के बारे में, देश के विभिन्न अंचलों के असमान विकास के बारे में और इन मुद्दों के परिप्रेक्ष्य में एक देशव्यापी संगठन बनाने के तरीके के बारे में। नियोगी की प्रमुख चिंता थी कि ऐसा संगठन कैसे बनाया जाये जो समाज को बदल सके। शुरू से ही उनकी जनता में असर रखने वाले देश के विभिन्न प्रगतिशील संघर्षों व संगठनों को इकट्ठा करके एक देशव्यापी संगठन बनाने की इच्छा थी। यह इच्छा उनकी जितनी ज्यादा थी, उतना ही कम समय उनके पास था। इसका कारण था कि छत्तीसगढ़ आंदोलन में उनकी गहराई से भागीदारी थी, न केवल संगठन के काम में बल्कि आम लोगों की व्यक्तिगत समस्याओं में भी। मैंने ऐसा कई बार देखा कि दो भाई या पड़ोसी जमीन या अन्य किसी मामले को लेकर नियोगी के पास चले आते थे, चूंकि इन लोगों का अदालत पर भरोसा नहीं था। वे सोचते थे कि अदालत में पैसा भी खर्च होगा और न्याय की भी कोई गारंटी नहीं होगी। इसके विपरीत नियोगी के पास जाने से खर्च भी नहीं होगा और न्याय की भी गारंटी होगी।

सिद्धांतों से अनुभव-जनित व्याख्या तक

सन् 1980 के शुरू में एक बार कुछ लोग नियोगी, राय दा (कामरेड ए. के. राय)

कहना था, " हम सत्ता में नहीं हैं, इसका मतलब यह नहीं है कि हम विरोधी या विपक्ष के हैं। विपक्ष वाला सुनकर लगता है कि हमारा कार्यक्रम ही विरोध करना है। **जिसका कार्यक्रम मात्र विरोध करना ही है, वह देश और समाज के लिए क्या कर सकता है ?** हमें विपक्ष वाला या विरोधी करार देकर शासक वर्ग जानबूझकर हमें गलतफहमी में रखना चाहता है। **हम अपने-आपको विपक्ष (' ओपोजिशन ') नहीं, वरन् विकल्प (' प्रोपोजिशन ') वाला समझते हैं।** इसलिए हम हर समस्या का हल विकल्प के माध्यम से देने की कोशिश करते हैं। " इसी बात को आगे बढ़ाते हुए वे कहते थे, " हम जानते हैं कि जो मेहनतकश जनता दुनिया की हर चीज का उत्पादन करती है, उसके लिये अस्पताल, स्कूल, गैरेज व ट्रेनिंग सेंटर आदि तथा नये समाज को बनाना या चलाना कोई मुश्किल काम नहीं है। इसीलिये हम रचनात्मक यानी निर्माण के काम करना चाहते हैं। "

संघर्ष-निर्माण

इसी सिलसिले में संघर्ष-निर्माण की अवधारणा को समझाते हुए वे कहा करते थे, " संघर्ष के साथ-साथ निर्माण के काम को हम उस दर्जे तक ले आना चाहते हैं जहाँ शासक वर्ग के द्वारा किया गया या करवाया गया हर निर्माण जनता के लिए निरर्थक और गैर-जरूरी हो जायेगा। **अतः हमारे निर्माण के सामने शासक वर्ग द्वारा किया गया निर्माण टिक नहीं पायेगा और ध्वस्त हो जायेगा। समाज को बदलने के लिए आज की परिस्थिति में संघर्ष का एक मुख्य हथियार है – निर्माण। संघर्ष व निर्माण एक ही चीज हैं। जैसे इंसान को चलने के लिए दो पैरों की जरूरत है, ऐसे ही हमारे संगठन के दो पैरों में से एक है संघर्ष और दूसरा है निर्माण।** जिस प्रकार इंसान एक पैर से ठीक से नहीं चल सकता, ऐसे ही एक ही पैर से, यानी केवल संघर्ष या केवल निर्माण से, कोई भी संगठन ठीक से नहीं चल सकता। जैसे एक पैर से दो कदम आगे नहीं जाया जा सकता और एक के बाद दूसरे पैर का तालमेल रखकर चलना पड़ता है, ठीक उसी प्रकार संघर्ष व निर्माण के बीच बराबर तालमेल रखते हुए, **एक कदम संघर्ष की, एक कदम निर्माण करते-करते आगे बढ़ना होगा।** "

इसी समझ के आधार पर ही शायद नियोगी ने यूनियन के 17 विभाग बनाये जिनके माध्यम से काम व जिम्मेदारियाँ बाँटकर मजदूरों को अपनी वैकल्पिक व्यवस्था खड़ी करने व चलाने का अनुभव मिल सके (विभागों की सूची के लिए देखिये पृ. 377)।

ऐतिहासिक जरूरत

यह कहना शायद अतिशयोक्ति नहीं होगी कि नियोगी केवल छत्तीसगढ़ के विकास के लिए ही नहीं, वरन् पूरे देश के विकास की जरूरत बनते जा रहे थे। उनके चिंतन व काम से गांधीवादियों से लेकर मार्क्सवादी विचारकों तक के लोग राजनैतिक सीख लेने लगे थे। मुझे स्वयं उनकी संघर्ष-निर्माण की अवधारणा के जरिये लेनिन की ' राज्य व क्रांति ' पुस्तक को समझने में मदद मिली है। समाज की भावी दिशा तय करने और इतिहास को बदलने में कभी-कभी कोई खास नेता नितांत जरूरी दिखने लगता है। मैं इसी संदर्भ में इस सदी के मोड़ पर नियोगी की एक विशिष्ट ऐतिहासिक जरूरत मानता हूँ। यही कारण है कि मुझे आज उनका न रहना बहुत खलता है।

शरीर चिता की ओर ले जाते समय जब मैंने वहाँ अपना हाथ रखा तो मुझे वह जगह थोड़ी उठी हुई लग रही थी। ऐसा लगा कि अभी भी शायद एक या दो गोलियाँ वहाँ धँसी हुई हैं। मुझे विश्वास नहीं हो रहा था कि एक साधारण बंदूक की गोली तुम्हें मार सकती है। लेकिन जब आज मैं छत्तीसगढ़ में तुम्हारे ही हाथों से लगाये हुए पेड़ों को देखता हूँ तो मुझे पता चल जाता है कि, नहीं, तुम मरे नहीं हो, मृत्यु तुम्हें छू नहीं सकती। तुम अमर हो, अमर रहोगे। तुम्हें मेरा कोटि-कोटि लाल सलाम।"

❑

(नवम्बर 1992)

संघर्ष-निर्माण इंसान के दो पैरों की तरह

गणेशराम चौधरी

नियोगीजी ने मजदूरों की बढ़ती हुई राजनैतिक चेतना के आधार पर विकल्पों के निर्माण के कार्यक्रम विशेष रूप से उठाये। 'संघर्ष और निर्माण' की राजनीति एक इंसान के दो पैरों पर चलने की स्वाभाविक प्रकृति के समान है। जैसे इंसान सिर्फ एक पैर से नहीं चल सकता, ठीक उसी तरह सिर्फ संघर्ष से ही मजदूर वर्ग सार्थक राजनीति नहीं कर सकता। दोनों पैरों से चलने का मतलब है कि हम एक सही दिशा में, सही ढंग से आगे बढ़ रहे हैं।

'संघर्ष और निर्माण' की राजनीति के तहत हम जिस प्रक्रिया या ढाँचे का विरोध करते हैं, उसकी जगह हमारी धारणाओं के आधार पर वैकल्पिक प्रक्रिया या ढाँचे का भावी स्वरूप क्या होगा, यह हमें पहले से मालूम रहता है। इस विकल्प को खड़ा करने के पूर्व उसका वैज्ञानिक पद्धति से मंथन किया जाता है, फिर उसे ठोस रूप दिया जाता है एवं उसके संचालन, उसका उपयोग का अनुभव भी प्राप्त किया जाता है। इससे हमें तत्कालीन व्यवस्थागत प्रक्रियाओं या ढाँचों का तर्कसंगत विरोध करने में काफी मदद मिलती है। इस तरह [illegible] के आधार पर कुछ नया खड़ा करते हैं, तब पुराना ढाँचा [illegible] हो जाता है। यह एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है और हमारे काम का सिद्धांत है।

नियोगीजी की विकल्प की राजनीति को समझने के लिए निम्नलिखित उदाहरणों की चर्चा करना उपयोगी होगा —

पहले हम अस्पताल का सवाल लें। आम तौर पर अस्पताल सिर्फ बीमारी का इलाज

में किस प्रकार नयी सामाजिक व्यवस्था का भ्रूण अंकुरित होता है। शोषण-आधारित वर्तमान समाज की भ्रष्ट व सड़ी-गली व्यवस्थाओं व संस्थानों के खिलाफ संघर्ष करते हुए मेहनतकश जनता एक वैकल्पिक समाज का सपना देखने लगती है। आमतौर पर आंदोलनों में इस सपने को विचारों के अमूर्त स्तर पर ही छोड़ दिया जाता है ; इसी वजह से समय के साथ यह सपना धूमिल होने लगता है और देर तक संघर्ष का प्रेरणास्रोत नहीं बन पाता। इसके विपरीत छत्तीसगढ़ आंदोलन में जब संघर्ष में जुटे हुए मजदूर अपने सपनों को मूर्त रूप देते हैं — चाहे वह कितना ही सूक्ष्म क्यों न हो — तो यह निर्माण उनके आत्मविश्वास को कई गुना आगे बढ़ा देता है। उनका सपना भी आसमान छूने लगता है। तब उनके संघर्ष को नयी प्रेरणा मिलती है और साथ-साथ संघर्ष के नये दायरे बनने लगते हैं। शोषण पर टिके समाज में जो ' निर्माण ' शासक वर्ग द्वारा करवाया जाता है, उसकी तुलना में मजदूरों द्वारा किये गये निर्माण का चरित्र कई मायनों में भिन्न होता है। जरा देखें तो कैसे —

1. इसकी उत्पत्ति शासक वर्ग द्वारा गरीब जनता के प्रति दिखायी जाने वाली दया से नहीं, वरन् संघर्ष से उपजी जुझारू ताकत से होती है।
2. इसके पीछे वर्तमान समाज की व्यवस्थाओं व संस्थानों के खिलाफ जनाक्रोश और उनको ध्वस्त करने की जोरदार चाह छिपी होती है।
3. इसका लक्ष्य होता है एक वैकल्पिक समाज का भ्रूण-रूपी प्रेरणादायक मॉडल खड़ा करना, न कि शोषणकारी तंत्र को बेबसी से ढोते रहना।
4. इसकी सृष्टि मजदूर वर्ग अपने सपनों की पूर्ति के लिए , अपने नियंत्रण में और अपने स्रोतों से करता है। दूसरे शब्दों में, **स्रष्टा खुद ही इस सृष्टि का मालिक होता है।**

निर्माण के इस अनूठे चरित्र के अलावा हमें संघर्ष के साथ इसके द्वंद्वात्मक रिश्ते को भी समझना होगा। **जब संघर्ष के दौरान उपजे सपनों को साकार रूप देने के लिए मजदूर निर्माण करता है तो इससे बने ठोस मॉडल के सहारे वैकल्पिक समाज के अगले सोपान को भी देखना सम्भव हो जाता है।** यानी, मजदूर के मन में नये सपने जागने लगते हैं। यही अर्थ है संघर्ष के नये दायरे बनने का। और फिर **इन नये सपनों की पूर्ति के लिए नये संघर्ष की प्रेरणा मिलती है।** इस प्रकार जहाँ एक तरफ संघर्ष की ताकत से निर्माण सम्भव होता है, वहीं दूसरी तरफ निर्माण से संघर्ष को नयी ताकत मिलती है, नये मायने मिलते हैं। इसी अनुभव-जनित समझ के आधार पर छमुमो ने यह नारा गढ़ा है —

" संघर्ष के लिए निर्माण,
निर्माण के लिए संघर्ष। "

यही नारा आज छत्तीसगढ़ के हर संघर्षशील इंसान के दिल की आवाज बनते जा रहा है।

दरअसल, **जहाँ सच्चा संघर्ष होगा, वहाँ निर्माण होना भी अवश्यंभावी है।** इसी तरह जहाँ मजदूर वर्ग **अपने सपनों की पूर्ति के लिए निर्माण करेगा, वहाँ संघर्ष होना और संघर्ष का आगे बढ़ना भी लाज़मी है।** नियोगी के अनुसार संघर्ष और निर्माण हमारे दो पैरों की तरह हैं — इनमें से केवल एक के सहारे जो चलने की कोशिश करेगा, वह लड़खड़ा कर गिर पड़ेगा, दोनों के बीच तालमेल रखकर ही आगे बढ़ा जा सकता है।

सूत्रबद्ध करें –

- जन संगठन का नेतृत्व मजदूर वर्ग के हाथों में होना।
- जन संघर्ष के बीच ही विकल्प की धारणा को मूर्त रूप देना।
- संघर्षशील जनता की सामूहिक व जुझारू शक्ति के आधार पर विकल्प की सृष्टि करना।
- विकल्प के संचालन की लगाम प्रत्यक्ष तौर पर मेहनतकश जनता के हाथ में होना।
- इन विकल्पों का आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी होना। इनका मजदूरों के अपने स्रोतों पर आधारित होना, न कि बाहरी मदद या अनुदान पर।
- इन विकल्पों के माध्यम से मजदूर वर्ग द्वारा अन्य शोषित तबकों की सेवा करना।
- उस क्षेत्र में होने वाले अन्य जन संघर्षों में इन विकल्पों द्वारा आर्थिक, तकनीकी एवं अन्य समर्थन दिया जाना।
- इस निर्माण-कर्म से उभरने वाली नयी-नयी कल्पनाओं का नये-नये संघर्षों के लिए प्रेरणास्रोत बनना। और इस प्रकार आगे बढ़े संघर्षों से एक बार फिर विकल्प के नये-नये सपनों का गढ़ा जाना। **संघर्ष-निर्माण का यही जीवंत, द्वंद्वात्मक रिश्ता आंदोलन को गतिशील बनाता है।**
- संघर्ष-निर्माण का यह रचनात्मक माहौल **नये इंसान गढ़ने की पाठशाला** बन जाता है।

नियोगी ने अपने एक लेख में लिखा है, ' हमें अर्थवाद का अंधकार नहीं, आर्थिक संघर्ष के साथ-साथ मुक्ति का आलोक भी चाहिए , एक इज्जतदार मजदूर वर्ग की प्रतिष्ठा चाहिए , नयी संस्कृति की शुद्ध हवा चाहिए . . . . . ' (देखिये पृ. 202)। यह संघर्ष-निर्माण का ही रास्ता रहा है जिस पर चलकर ये आंदोलन ' अर्थवाद के अंधकार ' में बगैर दिशा खोये ' नयी संस्कृति की शुद्ध हवा ' बहा पाये हैं। और इसी रास्ते पर चलते हुए छत्तीसगढ़ के मजदूर-किसान मिलकर ' नये भारत के लिए नया छत्तीसगढ़ ' की कल्पना को साकार कर रहे हैं। यह रास्ता ' शहीदों के खून से सींचा ' हुआ है। यह छत्तीसगढ़ के ' श्रमपुत्रों और भूमिपुत्रों ' का सामूहिक रास्ता है।

' संघर्ष और निर्माण ' के दर्शन को छत्तीसगढ़ की माटी में साकार रूप देकर ही नियोगी ने भारत के क्रांतिकारी नवनिर्माण का सपना देखा था। उनकी दृष्टि में **संघर्ष-निर्माण की राजनीति ही वह राजनीति होगी जिसके जरिये मेहनतकश जनता भारत का नवनिर्माण करेगी।** या यूँ कहें कि संघर्ष-निर्माण का रिश्ता सामाजिक विकास की धुरी बन जायेगा। इसीलिए जब नियोगी ने ' नये भारत का सपना ' देखा तो साथ में ' संघर्ष और निर्माण ' की राजनीति का भी सपना देखा। इन दोनों सपनों के अंतर्सम्बंध को देख पाने में नियोगी ने अपनी विलक्षण राजनैतिक समझ का परिचय दिया। इन दोनों को छत्तीसगढ़ आंदोलन में जोड़कर नियोगी ने सामाजिक परिवर्तन का जो प्रेरणादायक और व्यावहारिक मॉडल पेश किया है , वह भारत की राजनीति में उनके ऐतिहासिक योगदान के रूप में याद किया जायेगा।

❑

(नवम्बर 1992)

राजीव गांधी की हत्या क्यूँ ?

शंकर गुहा नियोगी

'सिलसिलेवार हुई राजनेताओं की हत्याओं और तत्जनित राजनैतिक समस्याओं की गुत्थी ' के भ्रमजाल से उबरने की गम्भीर आवश्यकता को समझते हुए नियोगी ने यह लेख पूर्व प्रधान मंत्री राजीव गांधी की हत्या के अगले दिन, 22 मई 1991, को ही लिख डाला था जिसे बाद में रायपुर के एक हिन्दी दैनिक ने दो किश्तों में प्रकाशित किया। भारतीय उपमहाद्वीप में राजीव गांधी, पाकिस्तान के जिया-उल-हक, श्रीलंका के ललित अथमुदलई व प्रेमदासा, नेपाल के कम्युनिस्ट नेता मदन भंडारी तथा अंततः नियोगी की स्वयं की हत्या — यह सब वही सिलसिला है जिसका पूर्वाभास इस लेख में है। इस सिलसिले के पीछे ' बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का निर्लज्ज स्वरूप ' और ' डालर का मार्ग तेजी से प्रशस्त करने के लिए व्याकुल ' नवधनाढ्य वर्ग के गठबंधन की ओर नियोगी का संकेत आज एक भयावह सत्य के रूप में सामने आ चुका है। विगत दो वर्षों में विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के दबाव के सामने भारत सरकार द्वारा घुटने टेकते हुए ' देश को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का चारागाह ' बनने देने की दिशा में तेजी से एक-के-बाद-एक कदम उठाना एवं जुलाई 1992 में छत्तीसगढ़ की शांतिप्रिय जनता का नरसंहार उसी भयावह सत्य का हिस्सा हैं। शक्तिशाली बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के खिलाफ आज जीवन-मरण संघर्ष में लगी हुई तीसरी दुनिया की देशप्रेमी व जनवादी जनता के लिए इस लेख की उपयोगिता को समझते हुए इसे विशेष रूप से यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

— स.

आजादी के बाद से ही नेहरू जी ने अपनी सोवियत-परस्त नीतियों के तहत सोवियत सहयोग से भारत की आर्थिक एवं औद्योगिक बुनियाद को मजबूत करने का प्रयास शुरू किया। वायस ऑफ अमेरिका की तीखी आवाज को नजरअंदाज करते हुए धीरे-धीरे भारत के नौकरशाहों के बीच भी एक सोवियत-परस्त समूह लगातार मजबूत होता गया। अपनी अलग-अलग सूझबूझ के बावजूद लाल बहादुर शास्त्री, इंदिरा गांधी, भाजपाई विदेश मंत्री अटल बिहारी वाजपेयी, राजीव गांधी व वी. पी. सिंह तक इस सोवियत-परस्त नीति से ही संचालित होते रहे।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर समाजवादी खेमे के देशों में परिवर्तन की लहर चली जिसे कैथोलिक

नशीली दवा खाकर भी अमरीकी धावक बेन जॉनसन प्रचार मंच पर हीरो बना रहता है, उसको रोकना मुश्किल काम हो जाता है। भोपाल में गैस-पीड़ित दो लाख जनता की अपाहिज कौम अपनी बात चीख-चीख कर रखने की लाख कोशिशों के बावजूद यूनियन कार्बाइड के निर्णय को डिगा न सकी। और अब राजीव गांधी की हत्या कर दी गयी। बहुराष्ट्रीय पूँजी के असर का इससे अधिक बेशर्मी-भरा स्वरूप और क्या हो सकता है ?

औपनिवेशिक शक्तियों ने भाजपा को गोद लिया

बहुराष्ट्रीय पूँजी को भारत में एक विश्वासपात्र नुमाइंदा चाहिए और उसका गुण यह होना चाहिए कि वह देश में नव-उपनिवेशवादियों का ही समर्थक बना रहे। भाजपा की आर्थिक नीति के तीन मुख्य प्रवक्ता हैं – लालकृष्ण आडवाणी, ऐसोचेम (ऐसोसिएटड चेम्बर्स ऑफ़ कॉमर्स एंड इंडस्ट्री) के अध्यक्ष भाजपाई पूँजीपति वीरेन शाह व न्यूयार्क से लौटे अर्थशास्त्री डॉ. जय दुबाशी। वीरेन शाह ने देश की अर्थव्यवस्था में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को खुली छूट देने की माँग कर, आडवाणी ने सार्वजनिक क्षेत्रों के निजीकरण की बात कर एवं दुबाशी ने सार्वजनिक इस्पात उद्योग में सम्पूर्ण विदेशी मशीनीकरण द्वारा उसमें कार्यरत कई लाख श्रमिकों की संख्या घटाकर 17 हजार करने की निर्लज्जतापूर्वक वकालत कर, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से ' विश्वसनीय दलाल ' होने का सर्टिफिकेट प्राप्त कर लिया है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ भी इन्हें सहयोगी बनाकर भारतीय बाजार को पूरी तरह से अपने प्रभुत्व में लाने का मंसूबा बना चुकी हैं।

जिस देश में 10 करोड़ लोग बेरोजगार हों, महँगाई अपने विकराल रूप में खड़ी हो, गरीबी रेखा के नीचे 30 करोड़ जनता हो, अगर उस देश में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का शिकंजा और कसता गया तो वहाँ की जनता को कीड़े-मकोड़ों की जिंदगी ही जीनी होगी। उसे ऐसी स्थिति में रख पाना सम्भव कैसे होगा ?

आडवाणी के नेतृत्व में भाजपा इसे सम्भव बनाने के लिए स्वयं राम का अवतार बनकर रामराज्य लाने की घोषणा करती है – ऐसा रामराज्य जहाँ तर्कहीन भावनाओं को उभारकर लोगों को एक दूसरे के खिलाफ जुझाया जा सके; और जहाँ लोग जीने के लिए तर्कसंगत रास्ते न खोजकर ' राम भरोसे ' जीते रहें, तर्कहीन भावना में डूबकर लोग राम का नाम जपते रहें, अनुशासन के नाम पर शोषण व अत्याचार के खिलाफ खुलने वाले मुँह सिलते रहें, जैसा हिटलर ने 50 वर्ष पूर्व जर्मनी में किया था, वैसे फासीवादी राज में ही बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अपने लूट के कारोबार के भविष्य को सुनिश्चित पाती हैं।

भाजपा को अपनी राजनीति के लिए काले धन का एक जखीरा मिला है। इन्कम टैक्स चोर, मुनाफाखोर, मिलावटखोर व्यापारी, घूसखोरी से अनाप-शनाप पैसे कमाने वाले अवकाशप्राप्त नौकरशाह व सेना के उच्च अधिकारी, सिने कलाकार, शराब बनाने वाली डिस्टिलरी के मालिक, शराब ठेकेदार यानी विभिन्न तरीकों से अचानक कमाई करने वाले आज के समय के जमींदार वर्ग – नवधनाढ्य वर्ग ने बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के इशारे पर भाजपा की फ़ासीवादी राजनीति को बढ़ाने के लिए अपने धन के जरिये उनके प्रचार-प्रसार का इंतजाम किया। दसवीं लोक सभा हेतु चुनाव में देश के नागरिकों ने पहली बार भाजपा को इतनी चमक-दमक के साथ चुनावी समर में उतरते देखा। ' इंडिया टूडे ' जैसी प्रतिष्ठित पत्रिका से लेकर समस्त राष्ट्रीय

में सहानुभूति लहर बनायी गयी थी। इस बार 'वे' नहीं चाहते थे कि कांग्रेस के पक्ष में बहुत सहानुभूति उठे ..... और राजीव का चेहरा उड़ा दिया गया, शिनाख्त उनके जूतों से हुई।

और यह भी पहली बार हुआ

स्वतंत्र भारत के इतिहास में इससे पूर्व 9 चुनाव हो चुके हैं पर कभी भी चुनाव के पहले दौर व अंतिम दौर के दरम्यान 7 दिनों का अंतराल नहीं हुआ था। क्या तीन अलग-अलग तिथियों पर हफ्ते-भर में होने वाले चुनाव की घोषणा महज एक संयोग है अथवा यह भी इसी राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय साजिश का अंग है ?

श्रीमती सोनिया गांधी को कांग्रेस (इ) का अध्यक्ष चुनकर भी लगता है कि भाजपा को कांग्रेस के विरुद्ध प्रचार हेतु एक नया अस्त्र देने का प्रयास किया गया।

श्रीलंका में अस्सी के दशक के मध्य से पृथक तमिल राष्ट्र की माँग को लेकर बहुत सी संस्थाओं की राजनैतिक गतिविधियाँ शुरू हुईं जिसमें लिबरेशन टाइगर्स ऑफ तमिल ईलम (एल. टी. टी. ई.) मुख्य धारा के रूप में उभरी। इसी एल. टी. टी. ई. पर भारत के प्रसिद्ध अमरीकी दलाल सुब्रह्मण्यम स्वामी एवं अमरीकी सैक्रोमेन्टो नगर (कैलिफोर्निया राज्य की राजधानी) के छोटे अखबार राजीव की हत्या के आरोप लगातार लगा रहे हैं।

आतंकवाद वह है जो कि आतंक के सहारे एक दबाव पैदा करके नीति या पद्धतियों में परिवर्तन की माँग करता है। उनके पास व्यवस्था में गुणात्मक परिवर्तन का कोई कार्यक्रम नहीं रहता। जैसा कि उग्रवादी संस्थाओं का आम व्यवहार है, वे किसी भी आतंकवादी कार्यवाही की जिम्मेदारी लेने में नहीं हिचकिचाते।

एल. टी. टी. ई. के प्रवक्ता किट्टु 25 मई को लंदन से अपने वक्तव्य में यह कहते हैं, "राजीव गांधी की हत्या से एल. टी. टी. ई. का किसी भी प्रकार का सम्बंध नहीं है।" उन्होंने यह भी कहा कि एल. टी. टी. ई. के ऊपर यह आरोप लगाकर अंतर्राष्ट्रीय षड्यंत्रकारी, तमिल जनता एवं विशेष रूप से एल. टी. टी. ई. के खिलाफ एक नयी साजिश में जुटे हुए हैं।

एल. टी. टी. ई. का राजीव हत्याकांड से सम्बंध है या नहीं, यह तो निकट भविष्य में स्पष्ट हो ही जायेगा। फिर भी हम यह चाहेंगे कि राजीव गांधी का एल. टी. टी. ई. संगठन से किस प्रकार का उतार-चढ़ावपूर्ण सम्बंध रहा, इसकी संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करें।

सत्तर के दशक में जब श्रीलंका की मेहनतकश जनता, जिसमें सिंहली और तमिल दोनों शामिल थे, वहाँ के साम्राज्यवादियों की पिट्ठू सरकार के खिलाफ लाल झंडा लेकर क्रांतिकारी संघर्ष में कूद पड़ी, उस समय इंदिरा गांधी के नेतृत्व में भारत सरकार ने अपनी वायु सेना तक को भेजकर उस आंदोलन को कुचलने में सहायता दी। फिर एक निराशा के दौर से गुजरने के बाद साम्राज्यवादियों के सारे प्रयासों को नाकामयाब करते हुए 'जनता विमुक्ति पैरामुना' और एल. टी. टी. ई. ने वर्ग एवं राष्ट्रीयता के आधार पर सिंहली और तमिल आशाओं के अलग-अलग जन संगठन बनाये। प्रतिक्रियावादी श्रीलंका सरकार ने तमिल एवं सिंहली राष्ट्रीयताओं के बीच संघर्ष को आधार बनाकर तमिल जनता के खिलाफ साम्प्रदायिक दंगे करवाकर, उनके जन संघर्षों को दबाने का प्रयास किया।

जिस समय तमिल राष्ट्रीयता के लोगों पर हमले-पर-हमले हो रहे थे उस समय राजीव

नियोगी की रचनाओं से चंद उद्धरण

प्रस्तुति : अमित सेनगुप्ता ● अनिल सद्गोपाल

खंड तीन (निबंध), खंड छह (भाषण एवं बयान) और खंड सात (साक्षात्कार एवं चर्चा) में नियोगी ने विभिन्न विषयों पर अपने विचार व्यक्त किये हैं। खंड आठ में भी नियोगी के कुछ पत्र शामिल हैं। इन रचनाओं से चंद उद्धरण यहाँ दिये जा रहे हैं जो विभिन्न विषयों पर नियोगी के सोच की दिशा का संकेत देते हैं। इनकी विस्तार से व्याख्या मूल रचनाओं में की गयी है। — स.

" मार्क्सवाद एक सृजनात्मक विज्ञान है। मार्क्सवाद ही श्रमिक वर्ग एवं अन्य सभी मेहनतकश लोगों की मुक्ति का रास्ता है।" (पृ. 321)

" सही और गलत, सच और झूठ में फर्क करने का भी एक तराजू, यानी वैज्ञानिक तरीका होता है। यह तराजू मार्क्सवाद-लेनिनवाद का तराजू है।" (पृ. 83)

" मैं केवल द्वंद्वात्मक भौतिकवाद में विश्वास रखता हूँ। यह एक विज्ञान है। लेकिन विभिन्न देशों में इस विज्ञान का इस्तेमाल या इसका विश्लेषण कैसे होगा, यह वहाँ की तमाम सामाजिक-राजनैतिक परिस्थितियों पर निर्भर करेगा।" (पृ. 336)

" जब तक साधारण के साथ में विशेष को हम जोड़ नहीं पायेंगे, विशेष को जब तक साधारण के साथ में जोड़ नहीं पायेंगे . . . . . तब तक हमारा विशेष मुद्दा तय नहीं हो सकता।" (पृ. 285)

" मनुष्यों में और सभी जीवों में दो तत्व होते हैं। एक मरणशील तत्व और दूसरा जीवनशील तत्व . . . . . जीवनशील तत्व और मरणशील तत्वों के बीच यह संघर्ष जारी है।" (पृ. 284)

" किसी भी राजसत्ता को समाप्त करने के लिए पहले उसे विचारधारात्मक रूप से समाप्त करना चाहिए, तत्पश्चात् राजनैतिक रूप से समाप्त किया जा सकता है।" (पृ. 94)

" परिवर्तन की यह क्रमगत प्रक्रिया विश्वव्यापी है। परंतु यदि आप इस बात पर अड़े हुए हैं कि इस क्रमगत प्रक्रिया से सुधार एवं परिवर्तन नहीं आने देंगे तो परिवर्तन क्रांति से आयेगा।" (पृ. 341)

" किसान, मजदूर, बुद्धिजीवी एवं अन्य शोषित वर्गों के लोग एक गुणात्मक परिवर्तन की प्रसव वेदना एवं आवश्यकता अनुभव कर रहे हैं।" (पृ. 119)

" शांति उपाय है, क्रांति दृष्टिकोण है और विकास उद्देश्य है।" (पृ. 323)

" मैं समझता हूँ कि एक दिन ऐसे भी आयेगा कि भारत में एक सही ढंग का एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी बनेगी . . . . . उस दिन छत्तीसगढ़ के हमारे क्रांतिकारी साथियों को मैं निवेदन करूँगा . . . . . (उस) पार्टी के साथ में मिलके (वे) भी नया दुनिया या नया समाज रचना में सबको सहयोग देते हुए आगे बढ़ें।" (पृ. 305)

" शहीद हुए मजदूरों की छाती से रिसता हुआ लाल रक्त झंडे के ऊपरी भाग की शोभा बढ़ाता है . . . . . झंडे का दूसरा हिस्सा (हरा) . . . . . किसान आंदोलन पर आधारित है।" (पृ. 94)

" हम उस भाषा में बोलेंगे, जो भाषा इस देश की सरकार समझती है।" (पृ. 342)

" आज जो ' महिलाओं का सवाल ' सामने आया है . . . . . समाजवादी आंदोलन के आगे बढ़ने के लिए इसका हल जरूरी है।" (पृ. 205)

" पुरुषप्रधान सत्ता से मुक्ति के लिए जरूरी है कि महिलाएँ उत्पादन की प्रक्रिया में बराबर की हकदार बनें और वह भी बराबरी के वेतन पर।" (पृ. 333)

" चंद क्षेत्रों को छोड़कर, मजदूरों में एवं ट्रेड यूनियन सदस्यता व ट्रेड यूनियन नेतृत्व में महिलाओं का अनुपात अत्यंत ही कम है . . . . . (इसमें सुधार) तभी किया जा सकता है, जब एक तरफ महिलाओं को अधिकाधिक संख्या में ट्रेड यूनियन के आम संघर्षों में शामिल किया जाये और दूसरी तरफ औद्योगिक महिला मजदूरों की खास महिला-सम्बंधी समस्याओं को उठाया जाये।" (पृ. 206)

" सही विचार तीन प्रकार के सामाजिक काम से आते हैं — 1. उत्पादन के लिए संघर्ष, 2. वर्ग संघर्ष एवं 3. वैज्ञानिक प्रयोग।" (पृ. 165)

" मनुष्य की समझ वस्तुस्थिति में परिवर्तन लाने की प्रक्रिया से बनती है। ' उत्पादन के लिए संघर्ष ' हमें वस्तुस्थिति के करीब ले जाता है। ' वैज्ञानिक प्रयोग ' हमें वस्तुस्थिति बदलना सिखाता है।" (पृ.166)

" शारीरिक श्रम एवं उपयोगिता की ओर से विमुख इस शिक्षा पद्धति के द्वारा निर्मित शिक्षित बेकार (सुखियार) होकर एक सामाजिक बोझ बन जाते हैं।" (पृ. 192)

" सच और झूठ, आवश्यक और अनावश्यक, न्याय और अन्याय में फर्क कर सकने की क्षमता को ही इस शिक्षा व्यवस्था ने कुंठित कर दिया है।" (पृ. 192)

" हमारी (मजदूर वर्ग की) संस्कृति निराशा की बात नहीं बोलती, हताशा नहीं फैलाती। आशा का, उम्मीद का संचार करना हमारी संस्कृति का काम है।" (पृ. 328)

" हमारी (मजदूर वर्ग की) कला, हमारी संस्कृति, दुनिया के इतिहास की शिक्षा को जनता तक पहुँचायेगी . . . . ." (पृ. 328)

" मद्यनिषेध हमारे लिए मूल आंदोलन नहीं है। यह एक सहायक आंदोलन है — मूल आंदोलन को मदद पहुँचाने के लिए . . . . ." (पृ. 332)

" मद्यनिषेध आंदोलन अपने-आप महिलाओं और बच्चों के व्यापक संगठन में बदल जाता है और बाद में इस संगठन में सामाजिक और आर्थिक जागरूकता के विचार-तत्वों को लाने की प्रक्रिया सहज और स्वाभाविक हो जाती है।" (पृ. 332)

" सबसे खतरनाक होता है हमारे सपनों का मर जाना।" (पृ. 193)

" छात्र राजनीति की बागडोर किसी भी हालत में नवधनाढ्य वर्ग के हाथ में नहीं जानी चाहिए।" (पृ.190)

" . . . . . पर्यावरण की सुरक्षा की आड़ में मजदूर-विरोधी नीतियों को चलाने पर रोक लगाना और पर्यावरण को केवल अमूर्त रूप से देखते हुए उद्योग-विरोधी वातावरण तैयार करने के खिलाफ कठोर प्रतिरोध पैदा करना जरूरी है।" (पृ. 225)

" इराक में युद्ध के कारण पर्यावरण पर असर पड़ा है . . . . . कई ज्वालामुखी फूट रहे हैं जिससे पर्यावरण असुरक्षित है। अंटार्कटिका में प्रयोग जारी है, मिसाइलें महाकाश में छोड़ी जा रही हैं, पर्यावरण घायल हो रहा है। इस समय मेरे घर के पाँच पेड़ और मेरी बस्ती के कुछ दर्जन झाड़ क्या हमारे पर्यावरण को सुरक्षित रख सकेंगे ?" (पृ. 227)

" विज्ञान, प्रकृति की हत्या नहीं करेगा। यही विज्ञान हमारा विज्ञान कहलायेगा।" (पृ. 228)

" राष्ट्रीय एकता का आधार है जनता। इस व्यवस्था में, बहुसंख्यक शोषित-पीड़ित जनता और हमारे लिए राष्ट्रीय एकता वह है जो जनता के हित में काम करे।" (पृ. 327)

" हम उस धर्मनिरपेक्षता के पक्ष में हैं जो मजदूरों और गरीबों के आपस में लड़ने के खिलाफ है . . . . ." (पृ. 327)

" साठ करोड़ नंगे-भूखे लोग, जिनकी क्रय-शक्ति शून्य है, हमारे देश की कठोर वास्तविकता हैं। यदि वे पिछड़े रह जायेंगे तो देश पिछड़ेगा, और यदि वे आगे बढ़ेंगे तो देश आगे बढ़ेगा।" (पृ. 184)

" सिर्फ एक औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था में ही कच्चे माल को मुख्य रूप से निर्यात के लिए पैदा करने की नीति अपनायी जा सकती है।" (पृ. 151)

" यह एक गुलाम व्यवस्था है। गुलाम व्यवस्था में देश की आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक बागडोर मुट्ठी भर देशी-विदेशी पूँजीपतियों के हाथ में रहती है।" (पृ. 163)

" हमारी (औद्योगिक) नीति ' उत्पादनोन्मुखी ' न होकर ' हाथ फैलाओन्मुखी ' रही है। लेकिन भिखारी बनकर किसी ने कभी विकास नहीं किया।" (पृ. 179)

" सरकार ने जब से ' आधुनिकीकरण ' का नारा दिया है, तब से उत्पादन में 25 से 50 प्रतिशत तक की गिरावट आयी है . . . . . " (पृ. 393)

" देशद्रोही आधुनिकीकरण के खिलाफ देशप्रेमी आधुनिकीकरण की नीति को स्थापित करना होगा।" (पृ. 220)

" जहाँ मशीन कौशल का प्रतीक हो और श्रम कौशल की कमी का प्रतीक हो, वहाँ अर्थनीति की नींव इस प्रकार के शोषण पर ही टिकी होगी।" (पृ. 153)

" जहाँ श्रमशक्ति प्रचुर है, वहाँ मशीनीकरण एक पाप है।" (पृ. 397)

" क्या यह आंतरिक उपनिवेशवाद का प्रतीक नहीं है, जिसमें किसी इलाके के लोगों की दुर्दशा पर ध्यान दिये बगैर वहाँ के प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया जाता है ?" (पृ. 212)

" आम भारतीय की क्रय-शक्ति को बढ़ाना कृषि और सम्बंधित नीतियों के निरूपण का केंद्र बिंदु बन जाना चाहिए।" (पृ. 185)

" हमारे आंदोलन में रचना और संघर्ष यह दो मुख्य बातें हैं। याने रचनात्मक कार्य करना होगा और शोषण — हर शोषण और अत्याचार के खिलाफ संघर्ष भी जारी रखना होगा . . . . ." (पृ. 305)

" यह भी जरूरी है कि मजदूर वर्ग उसके पास आज उपलब्ध संसाधनों और शक्ति पर आधारित वैकल्पिक मॉडलों को खड़ा करने की कोशिश करे।" (पृ. 205)

" समाज व्यवस्था में परिवर्तन लाने के लिए और अधिकार प्राप्त करने के लिए संघर्ष तथा छोटे-छोटे निर्माण, जो कि नये समाज के गठन के लिए एक नयी चेतना पैदा कर सकें, इसको लेकर हम प्रयोग कर रहे हैं। लेकिन यह याद रखना होगा कि शोषण पर आधारित जन-विरोधी व्यवस्था को बदलने के लक्ष्य को लेकर ही हम ' संघर्ष व निर्माण ' की राजनीति की बात करते हैं।" (पृ. 321-322)

" जैसे इंसान को चलने के लिए दो पैरों की जरूरत है, ऐसे ही हमारे संगठन के दो पैरों में से एक है संघर्ष और दूसरा है निर्माण।" (पृ. 653)

" जिस काम को हजारों सालों में भी पूरा नहीं किया जा सकता, उसमें एक भी पल गँवाने से क्या फायदा है ? इसलिए काम के जरिये, काम से समय को पकड़ के रखो, बाँध के रखो। समय को चूकने मत दो।" (पृ. 283)

❑

डंकल प्रस्ताव का यह विरोध केवल बात के स्तर पर नहीं हो रहा है।

मजदूर वर्ग की अगुवाई में मजदूर-किसान मिलकर **देशप्रेमी और जनवादी विकल्प का निर्माण भी** कर रहे हैं।

जून 1993 में दल्ली राजहरा में एक कृषि अनुसंधान केंद्र स्थापित किया जा चुका है। यहाँ छत्तीसगढ़ भर से बटोरी गयी धान की लगभग 150 स्थानीय किस्मों के परीक्षण, चयन एवं सुधार का वैज्ञानिक काम और साथ में 'प्राकृतिक खेती' के प्रयोग शुरू हो चुके हैं।

इस **जन विज्ञानी** प्रयास के जरिये छमुमो, विकास का समतामूलक और पर्यावरणीय दृष्टि से टिकाऊ व संतुलित मॉडल खड़ा करने में अपना ठोस योगदान दे रहा है।

आज भारत और तीसरी दुनिया के कई देश गहरे आर्थिक-सामाजिक और राजनैतिक संकट में से गुजर रहे हैं। इस संकट में से निकलने के लिए छत्तीसगढ़ की मेहनतकश जनता 'संघर्ष और निर्माण' की राजनीति से विकास की वैकल्पिक दिशा गढ़ने और देशप्रेमी, जनवादी नवनिर्माण करने का रास्ता दिखा रही है !

❑

छत्तीसगढ़ में तहसीलों की जिलेवार सूची

(संदर्भ : पृ. 48 पर प्रस्तुत नक्शा)

जिला दुर्ग

1. नवागढ़
2. बेमेतरा
3. साजा
4. बेरला
5. धमधा
6. दुर्ग
7. पाटन
8. गुंडरदेही
9. डौंडी-लोहारा
10. संजरी-बालोद
11. गुरुर

जिला बस्तर

1. बारामा
2. काँकेर
3. भानुप्रतापपुर
4. पखांजोर
5. अंतागढ़
6. केशकाल
7. कोंडागाँव
8. नारायणपुर
9. भोपालपटनम
10. बीजापुर
11. दंतेवाड़ा
12. जगदलपुर
13. कोन्टा

जिला बिलासपुर

1. पेन्ड्रा रोड
2. पंडरिया
3. लोरमी
4. कोटा
5. कटघोरा
6. कोरबा
7. मुंगेली
8. तखतपुर
9. बिलासपुर
10. जांजगीर
11. चाम्पा
12. सक्ती
13. बिल्हा
14. पामगढ़
15. डभरा

जिला राजनांदगाँव

1. कवर्धा
2. छुईखदान
3. खैरागढ़
4. डोंगरगढ़
5. राजनांदगाँव
6. डोंगरगाँव
7. अम्बागढ़ (चौकी)
8. मोहला

जिला रायगढ़

1. बगीचा
2. जशपुर
3. कुनकुरी
4. पत्थलगाँव
5. उदयपुर (धरमजयगढ़)
6. घरघोड़ा
7. खरसिया
8. रायगढ़
9. सारंगढ़

जिला रायपुर

1. सिमगा
2. भाटापारा
3. बालोदा बाजार
4. कसडोल
5. बिलाईगढ़
6. तिल्दा
7. रायपुर
8. महासमुंद
9. सरायपाली
10. राजिम
11. कुरुद
12. धमतरी
13. बिन्द्रानवागढ़ (गरियाबंद)
14. नगरी
15. देवभोग

जिला सरगुजा

1. भरतपुर (जनकपुर)
2. वाड्रफनगर
3. पाल
4. मनेन्द्रगढ़
5. बैकुण्ठपुर
6. प्रतापपुर
7. सूरजपुर
8. सामरी (कुसमी)
9. अम्बिकापुर
10. लुण्ड्रा
11. सीतापुर

❑

में राजनांदगाँव की ' बंगाल-नागपुर कॉटन मिल्स ' में भारत सरकार द्वारा नियुक्त मैनेजिंग एजेंट।

17. घोष, कल्पना – भिलाई के पास नन्दिनी (जहाँ बी. एस. पी. की चूना खदान है) के नगर निगम की कर्मचारी।

18. घोष, भक्तिपद – दल्ली राजहरा में खदान मजदूरों की एक सहकारी समिति के दफ्तर में क्लर्क।

19. घोषाल, नीलरतन – भिलाई इस्पात संयंत्र के तकनीकी कर्मचारी जिनके साथ नियोगी ने सन् 1965 से ट्रेड यूनियन बनाने का काम शुरू किया था और जो अंत तक उनके सहकर्मी बने रहे ; सम्प्रति : छमुमो के प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ के वरिष्ठ नेता।

20. चक्रवर्ती, निखिल – नयी दिल्ली से प्रकाशित अंग्रेजी पत्रिका ' मेनस्ट्रीम ' के सम्पादक एवं प्रख्यात पत्रकार।

21. चट्टोपाध्याय, हरेन्द्र नाथ (स्वर्गीय) – हैदराबाद निवासी, प्रख्यात अंग्रेजी कवि, नाट्यकार, कथाकार एवं फिल्म अभिनेता जिनका काफी वृद्ध अवस्था में कुछ वर्ष पूर्व देहांत हुआ ; इप्टा एवं अविभाजित भाकपा से सम्बद्ध।

22. चमड़िया, अनिल – ' दिल्ली यूनियन ऑफ वर्किंग जर्नलिस्ट्स ' के सक्रिय सदस्य एवं स्वतंत्र पत्रकार।

23. चिंचालकर, दिलीप – ' नई दुनिया ', इन्दौर, में कार्यरत युवा चित्रकार ; सामाजिक मुद्दों से सम्बंधित पुस्तकों के कलात्मक डिज़ाइन के लिए विशेष योगदान।

24. चिंचालकर, विष्णु – ' गुरुजी ' के नाम से प्रख्यात म. प्र. के वयोवृद्ध सृजनात्मक चित्रकार ; बाल चित्रकारिता को प्रोत्साहन देने में विशेष योगदान ; मानवाधिकारों की रक्षा के लिए पी. यू. सी. एल. (म. प्र.) से सम्बद्ध।

25. चौधरी, गणेशराम – छमुमो एवं सी. एम. एस. एस. के उपाध्यक्ष ; सन् 1984 तक दल्ली की खदानों में रेजिंग मजदूर।

26. जाना, डॉ. शैबाल – छमुमो के शहीद अस्पताल (दल्ली राजहरा) में सन् 1982 से कार्यरत डाक्टर।

27. जोशी, रामशरण – ' नई दुनिया ', इन्दौर, के दिल्ली में स्थित मुख्य प्रतिनिधि एवं जाने-माने लेखक व सामाजिक शोधकर्ता।

28. जोशी, हरि – जिला होशंगाबाद (म. प्र.) के युवा समाजकर्मी एवं पूर्व में ' किशोर भारती ' संस्था (जिला होशंगाबाद, म. प्र.) के कार्यकर्ता ; सम्प्रति : जिला बैतूल (म. प्र.) के घोड़ाडोंगरी आदिवासी विकासखंड में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के तहत चल रहे कार्यक्रम के प्रभारी।

29. झा, वागीश कुमार – जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली, में समाज विज्ञान के क्षेत्र में युवा शोधकर्ता।

30. ठाकुर, जनकलाल – छमुमो के अध्यक्ष ; सन् 1985-90 की अवधि में डौंडी लोहारा क्षेत्र से निर्दलीय विधायक ; पूर्व में दल्ली की खदानों में ट्रांसपोर्ट मजदूर।

31. ठाकुर, हरि – छत्तीसगढ़ के सुप्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी एवं जाने-पहचाने कवि-लेखक।

32. डोगरा, भारत – वैकल्पिक विकास की अवधारणा एवं सामाजिक मुद्दों पर अपने लेखन के लिए विख्यात पुरस्कृत पत्रकार ; लम्बे अरसे से छमुमो आंदोलन के अध्ययनकर्ता।

33. (क) तांडी, राजिम – ' छत्तीसगढ़ महिला जागृति संगठन ' (रायपुर) की कार्यकर्ता ; वर्तमान में भिलाई मजदूर आंदोलन में सक्रिय।

(ख) त्यागी, प्रेमनाथ – राष्ट्रीय शैक्षिक योजना और प्रशासन संस्थान, नयी दिल्ली, में कार्यरत मानचित्रकार।

34. थॉमस, निक्की – नयी दिल्ली में सामाजिक मुद्दों से सम्बंधित कलात्मक एवं साहित्यिक सामग्री के विक्रेता ; दुकान – पीपल ट्री ; उभरते हुए युवा कलाकार।

60. बसु, पूर्णेन्दु — मार्क्सवादी-लेनिनवादी आंदोलन से सम्बद्ध कलकत्ता के एक राजनैतिक कर्मी व लेखक।

61. बागची, दिलीप — पश्चिम बंगाल के कर्मचारी आंदोलन के सक्रिय कार्यकर्ता।

62. बुद्धिराम — चित्रांकन ग्राफिक्स, नई दिल्ली, में कार्यरत कम्प्यूटर आपरेटर जिन्होंने इस पुस्तक की लेज़र टाइपसेटिंग की।

63. बोहरे, श्याम — प्रशासन अकादमी, भोपाल, के व्याख्याता व प्रशिक्षक ; पूर्व में नेहरू युवक केंद्र (होशंगाबाद, म. प्र.) के समन्वयक एवं 'किशोर भारती' संस्था (जिला होशंगाबाद) के कार्यकर्ता।

64. ब्रजमोहन — दिल्ली के क्रांतिकारी कवि।

65. भटनागर, अमित — जिला झाबुआ (म. प्र.) में आदिवासियों के बीच कार्यरत संगठन 'खेडुत मजदूर चेतना संगठ' के कार्यकर्ता।

66. भारद्वाज, सुधा — छमुमो की सचिव ; पूर्व में 'किशोर भारती' संस्था (जिला होशंगाबाद, म. प्र.) की कार्यकर्ता एवं दिल्ली की 'सांचा' पत्रिका के सम्पादन से सम्बद्ध।

67. भालेराव, जयश्री — जिला झाबुआ (म. प्र.) में आदिवासियों के बीच कार्यरत संगठन 'खेडुत मजदूर चेतना संगठ' की कार्यकर्ता।

68. मजुमदार, बिमलेन्दु — 'जलपाईगुड़ी साईंस एंड नेचर क्लब' के सक्रिय कार्यकर्ता।

69. मणिमाला — नवभारत टाइम्स, बम्बई, की एक प्रसिद्ध पत्रकार ; पूर्व में छात्र युवा संघर्ष वाहिनी द्वारा बिहार में चलाये गये आंदोलन में सक्रिय।

70. मिश्र, देवतादीन — स्वतंत्रता संग्राम सेनानी एवं सर्वोदय आंदोलन से सम्बद्ध ; पूर्व में 'किशोर भारती' संस्था (जिला होशंगाबाद, म. प्र.) के कार्यकर्ता ; सम्प्रति : पिपरिया (जिला होशंगाबाद) में कृषि व्यवसाय एवं एक पुस्तकालय का संचालन।

71. मिश्रा, सलिल — इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली, में इतिहास के व्याख्याता।

72. मुकुल — नवभारत टाइम्स, नयी दिल्ली, के विशेष संवाददाता ; मजदूर वर्ग की समस्याओं व संघर्षों एवं विकास के मुद्दों पर अपने लेखन के लिए विख्यात।

73. मुखर्जी, डॉ. अमिताभ — व्याख्याता, भौतिकी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय ; होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम में सक्रिय।

74. मौर्य, शशि — भारत सरकार द्वारा समर्थित 'महिला समाख्या' कार्यक्रम में जिला सहारनपुर (उ. प्र.) इकाई की प्रभारी ; पूर्व में 'किशोर भारती' संस्था (जिला होशंगाबाद, म. प्र.) की कार्यकर्ता।

75. यदु, डॉ. बी. एस. — रायपुर (म. प्र.) के डाक्टर एवं इंडियन पीपुल्स फ्रंट की स्थानीय इकाई के वरिष्ठ कार्यकर्ता जिनके साथ नियोगी ने सन् 1967-71 की अवधि में राजनैतिक काम किया था।

76. यादव, निरंजनलाल — छमुमो के प्रगतिशील सीमेंट श्रमिक संघ के पदाधिकारी एवं बालोदा बाजार (जिला रायपुर, म. प्र.) के मोदी सीमेंट कारखाने में नियमित इलेक्ट्रीशियन।

77. यादव, फागूराम — छमुमो के लोकप्रिय जनकवि एवं संस्कृतिकर्मी ; वर्तमान में दल्ली की खदानों में ट्रांसपोर्ट मजदूर।

78. रुकात, सीताराम — जिला अहमदनगर (महाराष्ट्र) में 'राष्ट्र सेवा दल' के कार्यकर्ता।

79. राजगोपाल, पी. व्ही. — जिला रायपुर (म. प्र.) में कार्यरत संस्था 'प्रयोग' एवं प्रदेश स्तर पर स्वैच्छिक संगठनों के एक मंच ('एकता परिषद्') के संचालक।

80. रामविलास — धमतरी (जिला रायपुर) के युवा पत्रकार।

81. रामलखन — सिम्पलेक्स उद्योग समूह, टेडेसरा (जिला राजनांदगांव), में कार्यरत ठेका मजदूर।

82. राय, ए. के. — मार्क्सिस्ट को-आर्डिनेशन कमेटी (धनबाद) के नेता एवं कोयला मजदूरों के जुझारू संगठक ; प्रखर राजनैतिक विचारक व लेखक ; पूर्व में धनबाद से निर्वाचित निर्दलीय सांसद।

83. राय, कनक – राष्ट्रीय कपड़ा निगम द्वारा संचालित नेशनल टेक्सटाइल कार्पोरेशन (डब्ल्यू. बी. ए. बी. ओ.) लि., कलकत्ता, के निदेशक (तकनीकी) एवं पूर्व में राजनांदगाँव की ' बंगाल-नागपुर कॉटन मिल्स ' के जनरल मैनेजर।

84. राय, दुनू – जाने-पहचाने जन विज्ञानी एवं पर्यावरणविद् ; पूर्व में जिला शहडोल (म. प्र.) के ' विदूषक कारखाना ' नामक जन विज्ञानी समूह के संस्थापक-सदस्य ; सम्प्रति : वर्ल्ड वाइल्ड लाइफ फंड (दिल्ली) के पर्यावरण प्रकोष्ठ के संयोजक।

85. रावल, ओमप्रकाश – समाजवादी आंदोलन से सम्बद्ध वरिष्ठ समाजकर्मी एवं वर्तमान में ' भारत जन विकास आंदोलन ' में सक्रिय ; पूर्व में इन्दौर से निर्वाचित जनता पार्टी विधायक एवं प्रदेश सरकार में राज्य शिक्षा मंत्री (1977-78) ।

86. लीलाबाई – छमुमो के ' महिला मुक्ति मोर्चा ' की उपाध्यक्षा एवं लोहा खदानों में रेजिंग मजदूर।

87. लोचन, डॉ. राजीव – छमुमो के शहीद अस्पताल (दल्ली राजहरा) में सन् 1992 से डाक्टर ; पूर्व में भोपाल गैस पीड़ितों के बीच मेडिकल एवं सामाजिक कार्य।

88. वर्मा, जामबाई – स्लैग डम्प, पुरैना, भिलाई इस्पात संयंत्र, में कार्यरत ठेका मजदूर।

89. वर्मा, रामस्वरूप – ए. सी. सी., जामुल (भिलाई) में कार्यरत ठेका मजदूर।

90. विजयश्री – इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली, में भौतिकी की व्याख्याता।

91. विश्वकर्मा, मधुसूदन – सिम्पलेक्स उद्योग समूह, टेडेसरा (जिला राजनांदगाँव), में कार्यरत ठेका मजदूर।

92. विश्वकर्मा, रामलाल – छमुमो के संस्कृतिकर्मी एवं दल्ली की खदानों में मजदूर।

93. विश्वास, टुलटुल – ' एकलव्य ' संस्था (भोपाल) की कार्यकर्ता।

94. शर्मा, नीलिमा – दिल्ली के सांस्कृतिक मंच ' निशांत नाट्य मंच ' की सक्रिय सदस्या।

95. शर्मा, पंकज – दिल्ली-स्थित प्रसिद्ध हिन्दी पत्रकार।

96. शर्मा, सरिता – ' छत्तीसगढ़ महिला जागृति संगठन ' (रायपुर) की कार्यकर्ता।

97. शास्त्री, सीताराम – जमशेदपुर से झारखंड आंदोलन एवं अन्य जन संघर्षों पर लेखन कार्य ; पूर्व में छमुमो के मुखपत्र ' साप्ताहिक मितान ' का दल्ली राजहरा से सम्पादन।

98. शुक्ल, प्रो. अ. प्र. – इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी, कानपुर, में भौतिकी के सहायक प्रोफेसर एवं मार्क्सवादी विचारक ; कानुपर की ' जन विज्ञान समिति ' के संस्थापक-सदस्य।

99. शुक्ल, अनिल – संडे मेल, नयी दिल्ली, के संवाददाता एवं दिल्ली यूनियन ऑफ वर्किंग जर्नलिस्ट्स के पदाधिकारी।

100. शुक्ला, रक्षा – दिल्ली की एक कवियित्री जिनका बेटा राकेश, नियोगी का सहकर्मी रह चुका है।

101. शुक्ला, राकेश – सुप्रीम कोर्ट, नयी दिल्ली, में युवा अधिवक्ता ; अस्सी के दशक के शुरू में जिला बस्तर (म. प्र.) में कार्यरत संस्था ' परिवर्तन ' में सक्रिय एवं बाद मे दानीटोला में रहते हुए एस. एस. की ओर से कानूनी सहायता देने का काम।

102. शुक्ल, प्रो. हीरालाल – भोपाल विश्वविद्यालय में ' भाषा एवं धर्म के तुलनात्मक अध्ययन विभाग ' में प्रोफेसर एवं छत्तीसगढ़ के इतिहास व संस्कृति के विषय पर अनेक ग्रंथों के लेखक।

103. सत्यार्थी, कैलाश – बंधुआ मुक्ति मोर्चा, नयी दिल्ली, के सक्रिय कार्यकर्ता।

104. सरस्वतीबाई – जिला दुर्ग (म. प्र.) के ग्राम केरी-जुंगेरा की एक वृद्ध महिला जिन्हें नियोगी सत्तर के दशक के पूर्वार्द्ध से माँ की तरह मानते रहे।

105. सरावणम, पी. – राष्ट्रीय कपड़ा निगम द्वारा संचालित नेशनल टेक्सटाइल कार्पोरेशन (म. प्र.) लि. इन्दौर, के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक।

106. सलिल, सुरेश – दिल्ली के एक कवि।

35. दत्त, मदन – जिला बस्तर (म. प्र.) के पखांजोर क्षेत्र में सक्रिय लेखक ; सन् 1979-80 में कलकत्ता में रिक्शा चालक एवं साथ-साथ लघु पत्रिकाओं में लेखन।

36. दास, उत्पला – जिला सरगुजा (म. प्र.) के एक किसान-मजदूर संगठन की कार्यकर्ता।

37. दीवान, राकेश – जिला होशंगाबाद (म. प्र.) के स्वैच्छिक कार्यकर्ता जो विभिन्न जन आंदोलनों के समर्थन में अपने लेखन कार्य के लिए जाने जाते हैं।

38. दीवान, डॉ. हृदयकांत – ' एकलव्य ' संस्था, होशंगाबाद (म. प्र.) के कार्यकर्ता; संस्था के प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम एवं होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम में विशेष योगदान।

39. दुखुराम — जिला दुर्ग (म. प्र.) के ग्राम दहियान के निवासी एवं दानीटोला खदान के मजदूर जिनके घर में सत्तर के दशक के पूर्वार्द्ध में नियोगी अक्सर रहा करते थे।

40. देवी, महाश्वेता — प्रख्यात बंगला लेखिका।

41. नम्र, अमन कुमार – जिला शहडोल (म. प्र.) के युवा समाजकर्मी।

42. नाथ, कुशलदेब – कलकत्ता के एक पत्रकार एवं संस्कृतिकर्मी।

43. नारायण, ध्रुव — मार्क्सवादी-लेनिनवादी आंदोलन से सम्बद्ध दिल्ली के कार्यकर्ता ; इस पुस्तक के लिए अंग्रेजी सामग्री का अनुवाद।

44. नितिन, कुमार -- मार्क्सवादी-लेनिनवादी आंदोलन से सम्बद्ध दिल्ली के कार्यकर्ता।

45. नियोगी, आशा गुहा – शहीद नियोगी की पत्नी ; पूर्व में दानीटोला खदान में ठेका मजदूर।

46. नियोगी, क्रांति गुहा – शहीद नियोगी की बड़ी बेटी ; हाईस्कूल की छात्रा।

47. नियोगी, हेरम्ब कुमार गुहा – शहीद नियोगी के पिता; वर्तमान निवास जलपाईगुड़ी (प. बंगाल) में; पूर्व में जिला नौगाँव (आसाम) में ठेकेदारी एवं कांग्रेस पार्टी के प्रदेश-स्तरीय संगठक।

48. नैय्यर, रमेश – नयी दिल्ली से प्रकाशित हिन्दी ' संडे ऑब्जर्वर ' के सम्पादक ; पूर्व में रायपुर के वरिष्ठ पत्रकार।

49. नौरिया, अनिल – सुप्रीम कोर्ट में मानवाधिकार मुद्दों पर सक्रिय युवा अधिवक्ता व लेखक।

50. पटनायक, नागभूषण – देश के वरिष्ठ क्रांतिकारी नेता एवं वर्तमान में इंडियन पीपुल्स फ्रंट के अध्यक्ष।

51. परसादी – जिला दुर्ग (म. प्र.) के ग्राम लोहार टोला के निवासी जिनके घर में नियोगी सत्तर के दशक के पूर्वार्द्ध में बीच-बीच में रहा करते थे।

52. पाटकर, मेधा – ' नर्मदा बचाओ आंदोलन ' की नेत्री एवं वैकल्पिक विकास की अवधारणा की प्रवर्तक ; अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पुरस्कृत।

53. पालित, चित्तरूपा – जिला झाबुआ (म. प्र.) में आदिवासियों के बीच कार्यरत संगठन ' खेदुत मजदूर चेतना संगठ ' की कार्यकर्ता।

54. प्रकाश, अमित – दिल्ली-स्थित एक अंग्रेजी पत्रकार।

55. फर्नाण्डिस, जार्ज – जनता दल सांसद ; भूतपूर्व केंद्रीय रेल एवं केंद्रीय उद्योग मंत्री ; समाजवादी आंदोलन के वरिष्ठ नेता।

56. फर्नाण्डिस, वॉल्टर – निदेशक, इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट, नयी दिल्ली।

57. बनर्जी, राहुल – जिला झाबुआ (म. प्र.) में आदिवासियों के बीच कार्यरत संगठन ' खेदुत मजदूर चेतना संगठ ' के कार्यकर्ता।

58. बसंत, प्रभात कुमार – जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली, में इतिहास के व्याख्याता।

59. बसु, चिन्मयी – शहीद नियोगी की चचेरी बहन।

लेखकों एवं अन्य सहयोगियों का परिचय

(सम्पादकीय सहयोगियों, चित्रकारों, अनुवादकों आदि समेत)

1. अंसार, गाज़ी एम. – सन् 1977 से 1983 तक सी. एम. एस. एस. के कार्यकर्ता एवं संगठन के मुखपत्र ' साप्ताहिक मितान ' के कुछ समय के लिए सम्पादक ; नियोगी की कविताओं के बंगला अनुवाद व संकलन का प्रकाशन ; सम्प्रति : पश्चिम बंगाल के चौबीस परगना (उत्तर) जिले के एक ग्रामीण स्कूल में शिक्षक ।
2. अग्निवेश, स्वामी – ' बंधुआ मुक्ति मोर्चा ' नयी दिल्ली, के अध्यक्ष एवं विख्यात समाजकर्मी।
3. आमटे, बाबा – अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित, मेगसासे पुरस्कार-प्राप्त समाजकर्मी एवं ' नर्मदा बचाओ आंदोलन ' से सम्बद्ध।
4. इश्तियाक, डॉ. – एक संस्कृतिकर्मी एवं कवि।
5. काबरा, शंकरलाल – सत्तर के दशक के पूर्वार्द्ध में भिलाई इस्पात संयंत्र की दानीटोला खदान के एक छोटे ठेकेदार जिन्होंने नियोगी को उस समय अपने यहाँ नौकरी पर रखा था।
6. कुमार, नरेन्द्र – ' किशोर भारती ' संस्था (जिला होशंगाबाद, म. प्र.) के पूर्व कार्यकर्ता ; सम्प्रति : ' राष्ट्रीय सहारा ', नयी दिल्ली, में कार्यरत।
7. कुमार, सुरेश – वर्तमान में दल्ली राजहरा के एक युवा कार्यकर्ता जिन्होंने अपने बचपन से नियोगी के काम को विकसित होते हुए देखा।
8. कृपलानी, आचार्य जे. बी. (स्वर्गीय) – प्रतिष्ठित गांधीवादी विचारक एवं स्वतंत्रता सेनानी।
9. कोठारी, प्रो. रजनी – सुप्रसिद्ध राजनीति विज्ञानी एवं लेखक ; सन् 1989-90 में योजना आयोग के सदस्य ; अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ' राइट लाइवलीहुड पुरस्कार ' से सम्मानित।
10. कौशल्याबाई – ए. सी. सी. सीमेंट फैक्ट्री जामुल (भिलाई) में कार्यरत ठेका मजदूर।
11. कौशिक, मेहता कुमार – जिला दुर्ग (म. प्र.) के ग्रामवासी जिन्होंने सन् 1969-70 में नियोगी का छत्तीसगढ़ के गाँवों से परिचय करवाया।
12. खेतान, नीलिमा – ' सेवा मंदिर ', उदयपुर, की वरिष्ठ कार्यकर्ता।
13. खेर, मधुकर – रायपुर (म. प्र.) के वरिष्ठ पत्रकार एवं वहाँ यू. एन. आई. के प्रतिनिधि।
14. गिरवर – जिला दुर्ग (म. प्र.) के ग्राम केरी-जुंगेरा के निवासी जिनके घर में नियोगी सत्तर के दशक के पूर्वार्द्ध में अक्सर रहा करते थे।
15. गुण, डॉ. पुण्यब्रत – छमुमो के शहीद अस्पताल (दल्ली राजहरा) में सन् 1986 से कार्यरत डाक्टर ; संगठन की लोक साहित्य परिषद् में सक्रिय।
16. गुप्ता, राजाराम – राजनांदगाँव के निजी उद्योग ' राजाराम मेज़ प्रॉडक्ट्स ' के मालिक एवं पूर्व

शहीद शंकर गुहा नियोगी द्वारा लिखे गये लेखों की सूची

1. मार्क्सवाद के मूल सूत्र (1971) एवं भूमिका (1991)
2. सर्वहारा वर्ग के आंदोलन पर (1977)
3. मृत्यु-समुंदर के किनारे तुम लोग अमर रहोगे (1977)
4. लोकतांत्रिक आंदोलन बनाम जनवादी लोकतांत्रिक आंदोलन (1977)
5. नेतृत्व के सवाल पर (1977)
6. कामरेड कुसुमबाई अब नहीं रहीं (1977)
7. किरंदुल के अग्निगर्भ से (1978)
8. 2-3 जून शहीद दिवस – शपथ दिवस (1978)
9. विभागीयकरण खदान मजदूरों के बच्चों को बोझ की जगह राष्ट्र की सम्पदा बना देता है (1978)
10. आज की पीढ़ी और वीर नारायण सिंह की वसीयत (1979)
11. लुटेरा राज्य खत्म करना है (1980-81)
12. छत्तीसगढ़ और राष्ट्रीयता का प्रश्न (1981)
13. मुक्ति-कामियों के प्रेरणास्रोत – वीर नारायण सिंह (1981)
14. खदानें, मशीनीकरण एवं लोग (1983)
15. मजदूरी, काम एवं रहन-सहन की परिस्थितियाँ (1983)
16. आज बी. एन. सी. एवं ग्लूकोज़ का मजदूर आंदोलन आजादी के संघर्ष के समतुल्य है (1985)
17. शिक्षा कैसी हो ? (1985)
18. आखिर दल्ली राजहरा की लोहा खदानों की समस्या क्या है ? (1985-86)
19. वैकल्पिक औद्योगिक नीति – चर्चा के लिए ड्राफ्ट (1988)
20. मशीनीकरण की वेदी पर जनता की कुर्बानी हमें मंजूर नहीं (1989)
21. राष्ट्रीय कृषि नीति के दिशाबोध पर्चे पर प्रतिक्रिया (1990)
22. छात्र राजनीति में एक नयी रोशनी चाहिए (1990)
23. शिक्षा नीति एवं छात्र वर्ग की भूमिका (1990)
24. भारत के ट्रेड यूनियन आंदोलन की समस्याएँ (मूल लेख 1982 में, 1984 में संशोधित) ; साथ में मूल लेख से इस्पात, स्वास्थ्य, महिलाओं और कार्यशैली से सम्बन्धित अंश।
25. भिलाई : चंद तथ्य (1990)
26. जरूरत है संसदीय प्रणाली में जन आकांक्षाओं के अमृत से सींचकर सच्चा जनवाद लाने की (1991)
27. राजीव गांधी की हत्या क्यूँ ? (1991)
28. चौराहे पर खड़े देश को कौन दिशा देगा ? (1991)
29. हमारा पर्यावरण (1991)

❑

उपसंहार

. या हम उठ खड़े होंगे अंतिम क्षणों में ?
अंत नहीं होगा जहाँ अंत होना था,
वहीं शुरूआत की सुबह खिल उठेगी।

— शंकर गुहा नियोगी
जुलाई 1991 (पृ. 264)

नयी चुनौतियों की ओर . . .

अक्ती तिहार बर

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा [illegible] ले संदेश

किसान मन के [illegible] [illegible] के दोना ला [illegible] समझ, घर-घर ले किसान धान अउ सबो कोई फसल के बीजा ला [illegible] देहीं [illegible] धरती [illegible] किसान के धान ला [illegible] मा करके हर एक किसान ला दोना मा धान धरा दिये जाही। [illegible] किसान मन [illegible] [illegible] ले किसानी बूता [illegible] हो ही।

[illegible] हजार [illegible] किसानी बूता करत आवथे। गुरमटिया, अजान, नागपुरी, लुचई अउ सफरी आदि [illegible] किसान के बीज के विकास [illegible] है। [illegible] छत्तीसगढ़ धान के कटोर कहात रिहिस।

डंकल प्रस्ताव : हमर किसानी ऊपर एकाधिकार के कोशिश

[illegible] कोई जनता के अधिकार जंगल ऊपर रहिस। अंग्रेजी शासन [illegible] 'फारेस्ट-एक्ट' लागू [illegible] सबो जंगल झाड़ झडूखा ऊपर सरकार के एकाधिकार [illegible]। आज अपन हाथ मा जगाए [illegible] मा अपन खेत ले नई काट सकत हन। ऐसने [illegible] हमर बीज [illegible] जी माय-गरु ऊपर बहुराष्ट्रीय कम्पनी के एकाधिकार हो जाही। हमर [illegible] मा पैदा करे धान [illegible] हमर अधिकार नई रहे, हमर खेत मे [illegible] एकर [illegible] भी हमर नई [illegible] वाले मन [illegible] होय के बार मा गाय के [illegible] आज जो हर सब [illegible] थरथे। नवा पेटेंट कानून के [illegible] ले हमर अधिकार नई रहे। बहुराष्ट्रीय कम्पनी के [illegible]

[illegible]

हम सब तो यहां है साहब, ये रहे खाद-सप्लायर, कीट-नियन्त्रक, बीज सलाहकार और भूमि निरीक्षक - मगर इधर लगोटी पहने हुए यह आदमी कौन है, पता नहीं ?

हमर राजनेता मन - आडवानी औ नरसिम्हाराव, विदेश मा जा जा के कंपनी मन ला बुलावत हे। हस्ताक्षर करे के [illegible] ले डंकल प्रस्ताव के आधा बात ला ये मन मान चुके हे। बिजली, पानी, औ खातू महंगा होगे हे, - [illegible] खेत में कुआ खोदे बर अब लाइसेंस लगही। हमर [illegible] के विज्ञान-अनुसन्धान [illegible] करे बर जाबो ए मन।

देश प्रेमी विकास के [illegible]

छत्तीसगढ़ के [illegible] लाख किसान औ मजदूर के [illegible] औ [illegible] के गांव बढही बाजार अउ उद्योग के मंदी दूर होही, विकास के नया रस्ता खुलही।

हमला हमर देश के बाजार [illegible] करईया बहुराष्ट्रीय कंपनी नई चाही अधाधुन्ध मशीनीकरण कर अपन घटिया मशीनरी थोपने वाला अउ लाखों मजदूर [illegible] ले काम [illegible] बहुराष्ट्रीय कंपनी नई चाही हमला ओकर सबाई [illegible], नई चाही।

हमला चाही हर खेत बर पानी [illegible] हर नौजवान ला उत्पादक [illegible] हमर [illegible] के [illegible] संजो के हम [illegible] छत्तीसगढ़ के तरक्की कर सकथोन।

बहुराष्ट्रीय कंपनी के एकाधिकार ला तोड़ के हमर देश के वैज्ञानिक, [illegible], अउ तमाम जनता के बुद्धि के ऊपर भरोसा करके [illegible] देश प्रेमी आधुनिकीकरण करबोन। औ ये काम दिल्ली भोपाल मा बैठय्या [illegible] के मुखा-मेडिया नई कर सके, [illegible] हम [illegible] मा मजदूर-किसान-नौजवान संसद बनाबो औ चर्चा करबोन।

छत्तीसगढ़ में नये किसानी वर्ष से जुड़े 'अक्ती' त्यौहार के अवसर पर
डंकल प्रस्ताव के विरोध में छमुमो द्वारा आह्वान एवं जन शिक्षण
(भिलाई की मजदूर-किसान परिचर्चा में वितरित हैंडबिल, अप्रैल 1993)

" भावनाओं को जब तक तार्किक व गणितीय रूप नहीं दिया जायेगा, तब तक कर्म-रूपी सृष्टि सम्भव नहीं है। इसीलिए भावना और तर्क के मिश्रण से ही बनेगी, पर्यावरण पर राष्ट्रीय चेतना।" (पृ. 227)

" सामूहिक हित और देशहित में निकट सम्बंध होता है। देश में जन शब्द निहित है। जनहित या सामूहिक हित और देशहित एक दूसरे के परिपूरक हैं।" (पृ. 228)

" भारत में राष्ट्रीयता के प्रश्न को हमेशा ही अंग्रेज साम्राज्यवादियों के दृष्टिकोण से देखा जाता रहा है।" (पृ. 138)

" मजदूर वर्ग का यह कर्त्तव्य है कि वह इस विषय (राष्ट्रीयता अभियान) में सक्रिय भाग ले। अगर एक स्पष्ट दिशा में इस अभियान को नहीं चलाया जाता ..... तो यह गलत दिशाओं में भटक सकता है। उग्र अंधराष्ट्रवाद पूरे अभियान को नुकसान पहुँचा सकता है।" (पृ. 138)

" (राष्ट्रीयता के) अभियान में एक राष्ट्रीय समूह दूसरे राष्ट्रीय समूह के खिलाफ नहीं लड़ेगा।" (पृ. 141)

" एक नये भारत के गठन के लिए एक नये छत्तीसगढ़ का निर्माण हो।" (पृ. 320)

" हम एक नये छत्तीसगढ़ के निर्माण की बात करते हैं। यहाँ समस्या अलग राज्य की न होकर, शोषण की है।" (पृ. 320)

" अलग राज्यों से हमारा आशय देश की मुख्यधारा से अलग-थलग हो जाना नहीं है, बल्कि छोटे राज्यों के निर्माण और उनके विकास व सम्पन्नता से राष्ट्रीय स्तर पर भाईचारे की भावना का और अधिक विकसित होना है।" (पृ. 334)

" बुद्धिजीवियों से हमारी समझ बढ़ती है ..... (लेकिन) उन्हें हमेशा संगठन के नेतृत्व के पीछे ही रखना होगा। नेतृत्व हमेशा मजदूर वर्ग के हाथों में ही होना चाहिए।" (पृ. 346)

" देश के इस संकट काल में देशप्रेमी बुद्धिजीवियों का यह कर्त्तव्य है कि वे संकट को और भी घनीभूत करने के लिए जिम्मेदार लालची, नवधनाढ्य वर्ग के ऊपर अंकुश लगाने के लिए जन भावना को उद्दीप्त करें ....." (पृ. 222)

" कई ऐसे मुद्दे जिसे जन सामान्य आसानी से समझते हैं, अक्सर हमारे बुद्धिमान अधिकारियों की समझ के परे हो जाते हैं।" (पृ. 231)

" आजादी लहर गयी तो नेहरू लहर आयी, गरीबी हटाओ लहर के बाद जनता लहर, इंदिरा लहर, राजीव लहर ..... वी. पी. लहर ..... अब समय आ गया है ..... ताकि हम सब एक होकर, इस लहर की राजनीति की जगह एक सही विकल्प जनता के सामने ला सकें।" (पृ. 464)

" जिस राम मंदिर के शिला पूजन से भाजपा का उत्थान या विजय अभियान प्रारम्भ हुआ, उसी रामशिला के नीचे भाजपा के दमित होने का खतरा भी मौजूद है।" (पृ. 221-222)

" मजदूर वर्ग का यहाँ कोई प्रतिनिधित्व ही नहीं करता तो वामपंथी का मतलब ही क्या ? ..... देश में जितने भी राजनैतिक दल हैं, उनमें से कोई भी उत्पादक ताकतों का प्रतिनिधित्व नहीं करता।" (पृ. 311)

" दिशाहीनता भ्रष्टाचार की जननी है। इसी कारण समूची व्यवस्था में भ्रष्टाचार हावी हो गया।" (पृ. 215)

" उपभोक्तावाद के हावी रहने तक स्थायित्व की बात करना वास्तविकता से भागने के अलावा कुछ भी नहीं है।" (पृ. 222)

" मैंने राष्ट्रपति से पूछा कि लोगों की समस्याओं को क्या तब तक स्वीकारा नहीं जायेगा जब तक कि वे हिंसा न करने लगें ?" (पृ. 341)

" छत्तीसगढ़ की जमीन में शहीदों के खून से क्रांति का बीज बोया गया है।" (पृ. 117)

" विश्वास नहीं होता कि कामरेड कुसुमबाई हमारे बीच नहीं है, लगता है कि कुसुमबाई मेरे पास ही खड़ी होकर पूछ रही है, ' शंकर भैया, देश में मजदूर मन के राज कब तक बन जाही ? ' " (पृ. 100)

" देशभर में (जनवादी क्रांति के लिए) व्यापक और परिपक्व जनवादी आंदोलन चलाने होंगे। जब यह आंदोलन अपने चरम बिंदु पर होंगे, तो उस समय की परिस्थितियों से यह तय हो जायेगा कि क्रांति करने के लिए हिंसा की जरूरत है या नहीं, है तो कितनी और कैसे ? " (पृ. 335)

" यदि हमारे ऊपर हमला हुआ तो हम स्वयं की, अपने आत्मसम्मान की और अपने अधिकारों की रक्षा में अपने पूरे संसाधन झोंक देंगे। जुझारू आंदोलन का यही मतलब है।" (पृ. 343)

" आज देश के लिए सही नेतृत्व की जरूरत है जो भूख, भ्रष्टाचार, शोषण, गरीबी एवं तानाशाही के खिलाफ संघर्ष में सही नेतृत्व दे सके एवं एक सुंदर शोषणविहीन भारत के निर्माण के लिए रचनात्मक कार्यक्रम अपनाये।" (पृ. 98)

" नेतृत्व को अपने वर्ग का सबसे अधिक वर्ग-चेतना से भरपूर अंश होना चाहिए। यह बात पूँजीपति वर्ग पर भी उतनी ही लागू होती है जितनी मजदूर वर्ग पर।" (पृ. 199)

" जनता को चाहिए कि वह लुटेरे वर्ग के नेतृत्व से घृणा करे और मजदूर वर्ग के नेतृत्व में भरोसा करे। मजदूर वर्ग को भी चाहिए कि वह व्यापक जनता का भरोसा-पात्र बनने के लिए निरंतर कोशिश जारी रखे . . . . ." (पृ. 96)

" वारिस तो सम्पत्ति वाले लोग खोजते हैं, लेकिन आंदोलन में वारिस पूरी पीढ़ी होती है।" (पृ. 337)

" जहाँ अन्याय या अत्याचार हो वहाँ प्रतिरोध अवश्य होगा।" (पृ. 223)

" जनता ही शक्ति का उद्गम है एवं जनता में है असीम संगठन शक्ति।" (पृ. 93)

" लड़ने से ताकत कभी कम नहीं होती है, बल्कि ताकत बढ़ती है।" (पृ. 134)

" आर्थिक माँग के लिए संघर्ष करना अर्थवाद नहीं है। परंतु जब संघर्ष केवल आर्थिक माँग के लिए होता है और आर्थिक माँग के अलावा बाकी तमाम राजनैतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक सवालों को ताक पर रख दिया जाता है, तब इस प्रकार की नीति को अर्थवाद कहा जाता है।" (पृ. 200)

" ट्रेड यूनियन को मजदूरों की बस्तियों तक आना पड़ेगा . . . . . उसे मजदूरों की पूरी सामाजिक और सांस्कृतिक जिंदगी को प्रभावित करना होगा।" (पृ. 317)

" ट्रेड यूनियन मजदूरों की जिंदगी के सिर्फ आठ घंटे के लिए नहीं है, बल्कि वह पूरे चौबीस घंटों के लिए है।" (पृ. 555)

" (पूँजीपति वर्ग तथा सामंतवादी तत्व) की बुद्धि का मुकाबला करने के लिए हमें अपनी बुद्धि का विकास करना होगा।" (पृ. 195)

" देश हमारा है और उसके उत्पादन में हमारा श्रम लगा है। इसमें हमारा हिस्सा भी है। इसलिए उत्पादन-वृद्धि के मामले में हमारी विचार-बुद्धि भी काम आनी चाहिए।" (पृ. 309)

" मजदूर वर्ग ' मजदूरी ' की ऐसी कोई स्थिर परिभाषा नहीं दे सकता, जो संघर्षों की प्रक्रिया से विमुख हो।" (पृ. 158)

" हमें अर्थवाद का अंधकार नहीं, आर्थिक संघर्ष के साथ-साथ मुक्ति का आलोक भी चाहिए , एक इज्जतदार मजदूर वर्ग की प्रतिष्ठा चाहिए , नयी संस्कृति की शुद्ध हवा चाहिए , एक क्रांतिकारी ट्रेड यूनियन चाहिए।" (पृ. 202)

" शायद ही कभी भारत में ट्रेड यूनियनों ने मजदूरों के स्वास्थ्य के सवाल को अपने समग्र कार्यक्रम के अंतर्गत एक स्वतंत्र मुद्दे के रूप में शामिल किया है।" (पृ. 204)

गांधी के नेतृत्व में भारत सरकार ने एल. टी. टी. ई. के स्वयंसेवकों को तमिलनाडु के इलाकों में सैनिक प्रशिक्षण देने का एक कार्यक्रम शुरू किया था। भारत सरकार का उद्देश्य था कि इस तमिल गुट के सहारे वे श्रीलंका की सरकार के ऊपर अपना वर्चस्व बना सकेंगे। परंतु ऐसा नहीं हुआ। प्रभाकरण के नेतृत्व में एल. टी. टी. ई. ने भारत सरकार के तमाम प्रलोभन व दबाव के प्रयासों के बावजूद भारत सरकार का पिट्ठू बनने से इंकार कर दिया और तमिल राष्ट्रीयता के हित को सर्वोपरि बनाकर रखा।

भारतीय सेना के आक्रमण को नाकामयाब करने वाली एल. टी. टी. ई. आज भी श्रीलंका सरकार के दमन के खिलाफ प्रतिरोध संघर्ष जारी रखे हुए है।

अंतर्राष्ट्रीय षड्यंत्रकारी राजीव हत्या की जिम्मेदारी एल. टी. टी. ई. के मत्थे पर मढ़कर एक तीर से दो शिकार करना चाहते हैं – एक तो अपने काले कारनामों पर पर्दा डाल सकें और दूसरी ओर भारतीय अंधराष्ट्रवाद को जगाकर मुक्ति चाहने वाली तमिल जनता पर खूँखार भेड़ियों की तरह छोड़ सकें।

भारत की जनता सिलसिलेवार हुई राजनेताओं की हत्याओं और तत्जनित राजनैतिक समस्याओं की गुत्थी सुलझाने के चक्कर में स्वयं भ्रमजाल में उलझ गयी है और तीसरी दुनिया के भारत की 86 करोड़ जनता यदि इस भ्रांति से उबरकर मायावी भ्रमजाल से मुक्त होकर, राष्ट्रवादी चेतना से ओतप्रोत होकर, नवधनाढ्य वर्ग के खिलाफ तीव्र संघर्ष शुरू नहीं करेगी तो देश पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का शिकंजा कसता जायेगा। महँगाई, गरीबी, बेरोजगारी बढ़ती जायेगी, जनता कीड़े-मकोड़ों का जीवन जीने पर मजबूर होगी। पानी पीते उम्र गुजर जायेगी पर हम एक लकीर भी उभार न सकेंगे अपनी जमीन पर।

राजीव गांधी की दर्दनाक मृत्यु के बाद यह समय की पुकार है कि भारत में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के एजेंटों यानी काले धन का जखीरा रखे नवधनाढ्यों के खिलाफ देशप्रेमी जनवादी मोर्चा बने ताकि जनवादी आंदोलनों को कुचलने का सिलसिला रुके, रोज-ब-रोज हो रही हत्याएँ बंद हों और गरीब जनता संगठित होकर आंदोलन के जरिये रोजगार तथा सुख व इज्जत की जिंदगी की अपनी माँग हासिल कर सके और सर्वोपरि, देश को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का चारागाह बनने से रोका जा सके।

('नव भास्कर', रायपुर, 30 मई व 1 जून 1991, से साभार।)

चर्चों ने घंटे बजाकर त्वरित गति दी। रूस में कथित समाजवादी व्यवस्था के नाम पर राजकीय पूँजी फल-फूलकर विशालकाय हुई। बढ़ती हुई राजकीय पूँजी के साथ समाजवादी देश एक जटिल आर्थिक एवं राजनैतिक संकट के दलदल में फँस गये। चूँकि राजकीय पूँजी भी पूँजी है और पूँजी के विकास की धारा पूँजीवादी पद्धति से ही निर्धारित होती है, नतीजा हमारे सामने है। समाजवादी पूर्वी जर्मनी ने अपनी अर्थनीति को निःशर्त पूँजीवादी पश्चिम जर्मनी की झोली में डाल दिया, रोमानिया से लिथुआनिया तक तमाम देश सोवियत-केंद्रित सत्ता के विरुद्ध संघर्ष का शंखनाद कर अनिश्चितता के चौराहे पर खड़े हो गये। इन परिस्थितियों में भारत की सोवियत-परस्त अर्थनीति में भी एकाएक आमूलचूल परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की जाती है। यूँ तो स्वचालित मशीनीकरण से उत्पादन वृद्धि के नाम पर पारम्परिक उद्योगों के स्वाभाविक विकास में बाधा डालने का सिलसिला इंदिरा जी के प्रधानमंत्रित्व काल में ही शुरू हो चुका था। बहुराष्ट्रीय पूँजी को प्रश्रय भी तभी से मिलने लगा था। नयी तकनालाजी आयात करने के नाम पर संजय गांधी के मारुति उद्योग से भारतीय अर्थतंत्र में जापानी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का सफर शुरू हुआ था। मगर राजीव गांधी व वी.पी.सिंह, मित्सुबिशी, सुज़ूकी व टोयोटा गाड़ियों को चलाकर बहुराष्ट्रीय पूँजीपतियों का तुष्टिकरण नहीं कर पाये हैं। यूनियन कार्बाइड, बोफोर्स, एच. डी. डब्ल्यू., निप्पन स्टील, मेनेसमेन-डिएग आदि कम्पनियाँ भारतीय बाजार को पूरी तरह ग्रसने पर तुली हुई हैं। इसके लिए दूसरा उपाय भी क्या है ? सद्दाम के इराक को रौंदकर भी डालर साम्राज्य दिन-ब-दिन रक्ताल्पता की बीमारी से ग्रस्त है। ब्रिटिश जनता पर टैक्स थोपने के बावजूद पाउंड का साम्राज्य बरकरार न रखा जा सका। 'सोनी' की सुरीली आवाज अमरीकी ड्राइंग रूम में स्थापित हो चुकी है। जर्मन एकता का जाज़ संगीत विश्व रंगमंच पर प्रतिष्ठित हो चुका है तथा सोवियत रूस और समाजवादी खेमे के अन्य देश वोदका के ओवर्डोज़ से जनित अल्कोहलिकता के असर से कोमा की स्थिति में पहुँच गये हैं। इस परिदृश्य में तृतीय विश्व का सबसे बड़ा देश भारत प्रथम विश्व से अछूता कैसे बचा रह सकता है ?

कांग्रेस (इ) का आज भी भारत की राजनीति में वर्चस्व है। अब सवाल यह है कि क्या सोवियत खेमे को छोड़कर राजीव के नेतृत्व में भारत को अमरीकी दरबार में घुटना टिकाया जा सकता था ? क्योंकि जिन्होंने राजीव गांधी के राजनैतिक आधार की संरचना की वे सभी रूसी खेमे के समर्थक रहे हैं। बहुराष्ट्रीय पूँजीवाद की नजरों में राजीव गांधी की उपयोगिता समाप्त हो चुकी थी। ज्योति बसु का यह वक्तव्य कि 'आवश्यकता पड़ने पर वाम गठबंधन राजीव गांधी का समर्थन कर सकता है' और वाटिकन चर्च के गुम्बद से जारी किया गया पोप का यह फतवा कि 'कम्युनिस्टों के खिलाफ आखिरी युद्ध के लिए तैयार हो जाओ', क्या वर्तमान परिस्थिति में राजीव की हत्या का कारण नहीं हो सकता ?

बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का निर्लज्ज स्वरूप

उपनिवेशवाद दिन-ब-दिन बदचलन होता जा रहा है। स्वीडिश प्रधान मंत्री औलोफ पाल्मे मारे जाते हैं, एक्विनो जी अचानक सत्तारूढ़ हो जाती हैं, चुनाव में प्रचंड बहुमत पाकर भी बर्मा की समाजवादी डेमोक्रेटिक पार्टी को सत्ता में आने से रोक दिया जाता है। इराक की सीमा के भीतर कुर्द शिविर स्थापित किये जाने पर भी संयुक्त राष्ट्र संघ को कोई तकलीफ नहीं होती।

स्तर के समाचार पत्रों तथा विभिन्न क्षेत्रीय समाचार पत्रों तक सभी संचार माध्यमों का जिस तादाद में भाजपा ने उपयोग किया, उसका मुकाबला भारत पर चालीस साल तक शासन करने वाली सरकार भी न कर पायी। यह क्या अचानक हुई घटना है ? पोस्टरों, बैनरों तथा वाहनों के काफिले और वाहनों पर चल रहे इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के भरपूर उपयोग ने इस चुनाव को सर्वाधिक खर्चीला साबित कर दिया। प्रचार-प्रसार की इस वैभवशाली पद्धति से टक्कर लेने में दूसरे तो क्या कांग्रेस तक उनकी उन्नीस भी नहीं रही।

बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का दाँव विफल करना होगा

मतदान के पहले दौर से यह स्पष्ट हो चुका था कि तमाम साधनों को झोंकने के बाद और जनमानस की आस्थाओं, आकाँक्षाओं का दोहन करने के बावजूद भाजपा के लिए दिल्ली अभी बहुत दूर है। यह भी पुनः जाहिर था कि राजीव गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस की जड़ें ग्रामीण भारत में अभी भी गहरी हैं।

इस परिस्थिति में रूबल को रास्ते से हटाकर डालर का मार्ग तेजी से प्रशस्त करने के लिए व्याकुल मुनाफाखोर देशी-विदेशी धनाढ्यों के सामने राजीव के नेतृत्व वाली कांग्रेस के नेता राजीव की हत्या के अलावा रूबल का प्रभाव हटाने का कोई दूसरा उपाय नहीं था। राजीव की मृत्यु के बाद सोवियत शासनाध्यक्ष का कोई महत्वपूर्ण वक्तव्य न आना या फ्रांसीसी प्रधान मंत्री का इस घटना पर प्रतिक्रिया जाहिर करते समय हँसमुख बने रहना (जिसमें ' एक काम तो पूरा हुआ ' के भाव झलकते थे), क्या साधारण संयोग है ?

अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य में एक-के-बाद-एक साम्यवादी किलों का ढहते जाना और तृतीय विश्व के जन आंदोलनों में मार्क्सवादी सिद्धांतों से सुसज्जित क्रांतिकारी शक्तियों के संघर्षों का बढ़ते जाना, साथ-साथ हो रही घटनाएँ हैं। बर्मा में व्यापक एवं प्रबल जन समर्थन के साथ आये राजनैतिक उभार के बावजूद आँग सान सूची सत्ता से महफूज़ रह जाती हैं, इसके पीछे भी सोवियत राजनीति की असरहीनता साफ झलकती है।

निकारागुआ की सरकार ढह गयी। सद्दाम को कुवैती चक्रव्यूह में अभिमन्यु की तरह फंसाकर कौरवी ठहाके लगाये गये। प्रभाकरण के नेतृत्व वाली लिट्टे आज भी स्वायत्तता के वैधानिक हक से वंचित है। नेपाल की राजनीति में लाल सितारा अपनी जगह बना लेने के बावजूद सत्ता की दौड़ में पिछड़ गया। अफ्रीकी अश्वेत नेता नेल्सन मंडेला तीन दशक की लड़ाई के बावजूद सत्ता पर बैठे नस्लवादियों के खिलाफ कुछ भी न कर पाये। स्पष्टतः सोवियत खेमे के वर्चस्व का अंत व उसका तीसरी दुनिया के जनवादी संघर्षों से बिल्कुल अलग-थलग हो जाने के कारण ही यह सम्भव हुआ है। आज पूरी दुनिया में सत्ता पर वही बैठता है जिसे बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ चाहती हैं। फिर भी तीसरी दुनिया की संघर्षशील जनता अपने मोर्चे पर डटी हुई है।

राजीव के चेहरे को उड़ाया गया

पाक में जिया-उल-हक की हत्या में उनका पूरा शरीर चिथड़े-चिथड़े कर दिया गया था। शव की शिनाख्त जबड़े से की गयी थी। उसके बाद चुनाव परिणामों ने स्पष्ट किया कि चेहरा खत्म करने से सहानुभूति लहर नहीं बनी और जिया की हत्या के तुरंत बाद बेनज़ीर चुनाव में विजयी हुईं। जबकि सन् 1984 में श्रीमती गांधी के अक्षत चेहरे को दिखाकर कांग्रेस के पक्ष

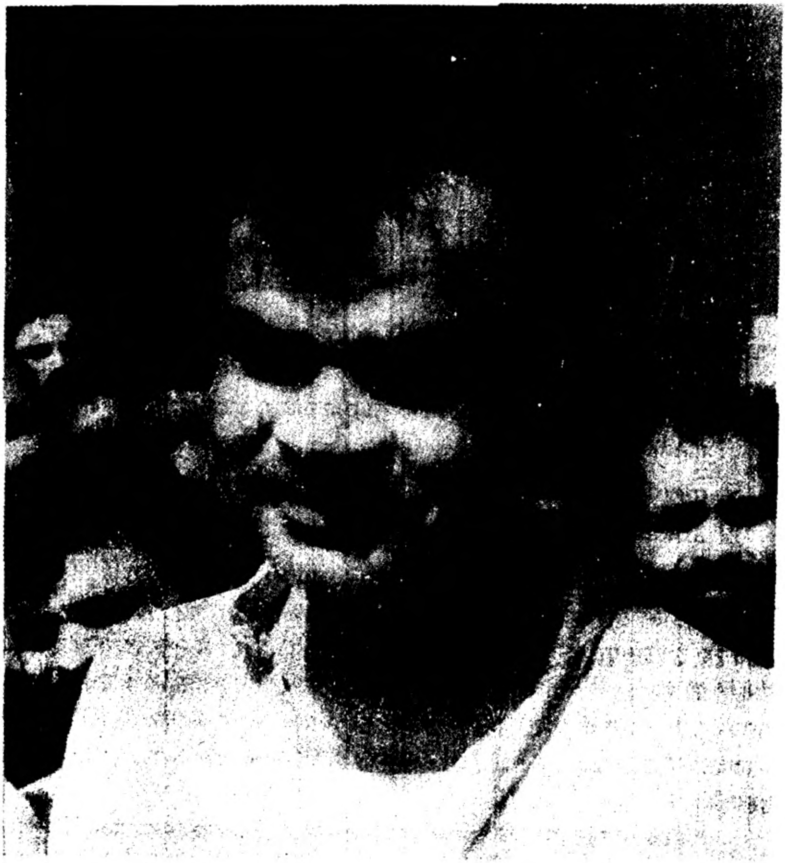

यूनियन दफ्तर के सामने
मजदूर साथियों के साथ नियोगी जी (1989)

फ़ोटो : भारत डोगरा (दिल्ली)

छमुमो के लिए निर्माण का दायरा व्यापक है — इसमें समाज के विकास और पुनर्गठन का हर पहलू आता है। इसमें शामिल है इतिहास के अंधकार से क्रांतिकारी शहीदों और उनके नेतृत्व में चले जन संघर्षों की कहानियों को बाहर निकाल कर जनता के सामने लाना। इस इतिहास से आज की पीढ़ी के नौजवान प्रेरणा लेते हैं। निर्माण का मतलब नयी जन संस्कृति का सृजन करना भी है और इसके बल पर पूँजीवादी अपसंस्कृति को ध्वस्त करना भी। इसी उद्देश्य से छमुमो ने ' नवाँ अंजोर ' लोक सांस्कृतिक मंच का गठन किया। छमुमो के शराबबंदी अभियान में भी वर्ग संघर्ष के जरिये वैकल्पिक सामाजिक व सांस्कृतिक रिश्तों का निर्माण करने का भ्रूण देखा जा सकता है। इसी निर्माण को करते हुए छमुमो ने **देशद्रोही उद्योग व कृषि नीतियों की जगह देशप्रेमी जनवादी विकास नीति की खोज शुरू की है।** इसी से प्रेरणा मिली है मजदूर-विरोधी पूर्ण मशीनीकरण के खिलाफ श्रम-आधारित अर्द्ध-मशीनीकरण को दल्ली की खदानों में स्थापित करने की। बात चाहे शहीद अस्पताल की हो, शहीद गैरेज एवं ट्रेनिंग वर्कशाप की हो या शहीद स्कूल की, इन सब में भावी समाज का भ्रूण पलता है। जनवादी साहित्य के प्रकाशन के लिए लोक साहित्य परिषद् का गठन, ' मितान ' साप्ताहिक का प्रकाशन या नियोगी के अंतिम वर्षों में मजदूर संगठनों द्वारा मिलकर अपना अखबार निकालने की कोशिश में भी भावी समाज का भ्रूण देखा जा सकता है। ये सब प्रयास वर्तमान पीढ़ी को समाज के नवनिर्माण के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा देते हैं। यह कोई छोटी बात नहीं है कि दल्ली राजहरा की पंडरदल्ली मजदूर बस्ती की मजदूर महिलाएँ मिलकर दावा करती हैं, " जो शहीद अनुसूइया स्कूल हम लोगों ने अपने पसीने की कमाई और खुद की प्रेरणा व मेहनत से खड़ा किया है, वहाँ सरकारी वेतन पर काम करने वाला मास्टर भी आलस नहीं कर सकता, उसे मेहनत से पढ़ाना पड़ता है। पूरी बस्ती उस पर नजर रखे हुए है। " इस आत्मविश्वास का महत्व तभी समझा जा सकता है जब इस शहीद स्कूल को आप तेजी से छिन्न-भिन्न हो रही देश की स्कूली व्यवस्था के संदर्भ में रखकर देखें। यही फर्क है शासक वर्ग की दया (या उदारता) से किये गये निर्माण और जन संघर्ष से हुए नवनिर्माण में। अंततः मजदूरों द्वारा निर्मित शहीद स्कूलों से उपजे रचनात्मक माहौल के कारण भिलाई स्टील प्लांट के प्रबंधन व राज्य शासन को भी मजदूर बस्तियों में स्कूल बनवाने के लिए विवश होना पड़ा।

विकल्प के निर्माण की चाह छमुमो के उन प्रयासों में भी देखी जा सकती है जो छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश या देश के स्तर पर जनता के बीच सक्रिय संगठनों को एक मंच पर लाने के लिए किये गये, खासकर अस्सी के दशक के उत्तरार्ध में। ये आज की दिशाहीन भ्रष्ट राजनीति का विकल्प खड़ा करने के प्रयास थे। इनकी चाह भी विभिन्न क्षेत्रों में मेहनतकश जनता द्वारा किये जा रहे संघर्षों से अंकुरित हुई थी। इसीलिए शुरू से ही इन कोशिशों में एक वैकल्पिक विकास नीति बनाने पर जोर दिया गया ताकि **देश की सम्पदा का दोहन पर्यावरण के साथ संतुलन रखते हुए इस प्रकार हो कि शोषित जनता को न्याय मिल सके** (देखिये पृ. 463-464)। यही नहीं, विभिन्न संगठनों को एक साथ लाने की प्रक्रिया में भी, वर्तमान राजनैतिक दलों से हटकर, आपसी लोकतांत्रिक रिश्तों को एक वैकल्पिक आधार पर खड़ा करने की दृष्टि थी।

आइये, छत्तीसगढ़ आंदोलन द्वारा विकसित ' संघर्ष और निर्माण ' की राजनीति को हम

करने के लिए बनाये जाते है। बीमारी पैदा ही न हो, इस सोच को अस्पतालों के लिए अपनाना और उस पर काम करना सम्भव नहीं हुआ है। परंतु हमारे शहीद अस्पताल में सिर्फ इलाज ही नहीं, वरन् बीमारी न होने का माहौल कैसे बने, कुपोषण का खतरा कैसे खत्म हो एवं स्वास्थ्य की जानकारी आम जनता तक कैसे पहुँचे, ऐसे सब प्रश्नों पर छमुमो व शहीद अस्पताल साथ-साथ काम करते हैं, उन पर आंदोलन चलाते हैं। इसके अलावा राज्य प्रशासन एवं भिलाई स्टील प्लांट का प्रबंधन अपनी व्यवस्था में सुधार व विस्तार करने के लिए मजबूर हो जाता है। दल्ली राजहरा में यही हुआ। शहीद अस्पताल को देखकर बी. एस. पी. प्रबंधन ने अपने राजहरा अस्पताल का विस्तार किया और राज्य शासन ने यहीं एक नया अस्पताल बनाया। शहर के एक व्यवसायी ने भी एक अस्पताल खड़ा किया। इससे आम जनता को काफी राहत मिली और संगठन को नये संघर्षों के लिए प्रेरणा मिली।

स्कूल बनाने के संदर्भ में भी जब मजदूरों ने अपने शहीद स्कूल बनाये, तो राज्य शासन एवं प्रबंधन भी इस होड़ में शामिल हो गये। कई नये स्कूल बने। इस प्रकार निर्माण से हमारे आंदोलन को बल मिला और प्रशासनिक अधिकारियों को काम करने के लिए मजबूर होना पड़ा। **मजदूरों को भी अपनी व्यवस्था को चलाने और उसमें आने वाली समस्याओं का निराकरण करने का लगातार नया अनुभव प्राप्त हुआ।**

इसी प्रकार रोजगार, पर्यावरण, तकनालाजी और संस्कृति के मुद्दों पर भी विकल्पों की खोज शुरू हुई। इससे मजदूरों के इरादे पक्के हुए और संघर्ष को नये-नये आयाम मिले। ❑

(नवम्बर 1992)

संघर्ष और निर्माण

अनिल सद्गोपाल

आज नियोगी जिस नयी राजनैतिक धारा का स्रोत माने जाते हैं उसका सारतत्व है ' संघर्ष और निर्माण '। सामाजिक विकास के विचारक्रम में ' संघर्ष और निर्माण ' का दर्शन ताजी हवा का झोंका बनकर आया है।

सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था में गुणात्मक परिवर्तन हेतु जन आंदोलन की निर्णायक भूमिका तो क्रांतिकारी बदलाव की राजनीति में एक लम्बे अर्से से स्वीकारी जा चुकी है। परंतु छत्तीसगढ़ आंदोलन ने इसमें जो नया आयाम जोड़ा है, वह है आंदोलन में ' संघर्ष और निर्माण ' के अभिन्न रिश्ते का सिद्धांत। इस आंदोलन ने दिखाया है कि मजदूर वर्ग किस प्रकार जन संघर्ष की लहरों की ताल के साथ ताल मिलाकर निर्माण करता है और ऐसा करने पर मजदूरों के मन

घनिष्ठ रिश्तेदार की मृत्यु

नियोगी की मृत्यु के बाद जब मैं 29 सितम्बर 1991 को दल्ली राजहरा पहुँचा तो मैंने उनकी शवयात्रा में या अपने मकानों के छज्जों से शवयात्रा को देखते हुए, कम-से-कम दो लाख लोगों को रोते हुए पाया। इंदिरा गांधी या राजीव गांधी की मृत्यु के बाद भी बहुत लोग रोये होंगे, लेकिन इनमें से कितने लोग उन्हें व्यक्तिगत रूप से जानते होंगे, यह मुझे पता नहीं। पर मुझे यह पता है कि उस दिन नियोगी की मृत्यु पर जितने लोग रोये, वे सब उन्हें व्यक्तिगत रूप से अच्छी तरह जानते थे। जिस प्रकार लोग अपने माँ-बाप, भाई-बहन जैसे सगों की मृत्यु पर फूट-फूटकर रोते हैं, उसी तरह उस दिन छत्तीसगढ़ के लोग बिलख रहे थे। छत्तीसगढ़ी रिवाज के अनुसार किसी नजदीकी रिश्तेदार की मृत्यु पर लोग सिर मुंडाते हैं। मैंने 30 सितम्बर को सबेरे अकेले दल्ली राजहरा में ही कम-से-कम तीन हजार लोगों को सिर मुंडाये हुए पाया। आस-पास के गाँवों में भी बहुत-से लोगों ने यही किया था।

दुनिया में बहुत सारे महान व्यक्ति हुए हैं जो या तो नेता थे, या शिक्षक या कुछ और थे। लेकिन नियोगी कई लोगों के नेता भी थे, और साथ-साथ उन्हीं के शिक्षक, दोस्त और छात्र भी। हरेक से सीखना और हरेक को सिखाना, उनके चरित्र का एक बुनियादी गुण था।

छत्तीसगढ़ का बगीचा

यूनियन दफ्तर के पीछे नियोगी ने जो बगीचा लगाया था, उसमें ऐसे भी बहुत-से पेड़-पौधे लगे हैं, जो पहले कभी छत्तीसगढ़ में पैदा नहीं हुए। नियोगी ने देश के विभिन्न अंचलों से लाकर यहाँ अपने हाथों से नाना-प्रकार के बीज बोये। इन पौधों ने अब इस जमीन में अपनी जड़ें जमा लीं हैं और यहाँ के स्थानीय पौधों के साथ मिलकर एक सुंदर बगीचा बन गया है। ठीक इसी तरह सारी दुनिया और अपने तजुर्बे से सीखते हुए **नियोगी ने संघर्ष-निर्माण के जरिये जो बीज पूरे छत्तीसगढ़ के बगीचे में बोये, उनकी भी जड़ें छत्तीसगढ़ की धरती को मजबूती से पकड़ चुकी हैं।** इन जड़ों को दुनिया की कोई भी ताकत उखाड़ नहीं सकती। कभी-कभी लगता है कि यूनियन दफ्तर के पीछे का वह सुंदर बगीचा पूरे छत्तीसगढ़ में संघर्ष-निर्माण के जरिये राजनैतिक बीज बोने का एक जबर्दस्त प्रयोग था। छत्तीसगढ़ के कई स्थानों में ये राजनैतिक बीज अंकुर बन कर दिखने लगे हैं, कहीं-कहीं बड़े होकर पौधे बन चुके हैं और कहीं-कहीं काफी बड़े होकर पेड़ बन चुके हैं जो अपनी छत्रछाया से छत्तीसगढ़ को शोषणरूपी गर्मी से बचाते हुए आगे ले जायेंगे और शोषणविहीन बनायेंगे।

मृत्यु तुम्हें छू नहीं सकती

अंत में मैं यह कहना चाहता हूँ कि —

"नियोगी, जब मैंने तुम्हारी हत्या की खबर सुनी तो विश्वास ही नहीं हुआ कि दुनिया में ऐसी गोली भी बन सकती है जो तुम जैसे शक्तिशाली व्यक्ति को मार सके। तुम्हारे कंधे पर, जिस पर तुम जिम्मेदारी का बोझा उठाकर चल रहे थे, जहाँ सोते समय कातिलों ने तुम्हें गोली मारी, तुम्हारा पार्थिव

और मुझसे देशव्यापी संगठन बनाने के बारे में बात करने दिल्ली आये। बातचीत का विषय था कि जिन लोगों का जनता के बीच काम और असर है उनको लेकर राष्ट्रीय स्तर पर संगठन कैसे बनाया जाये। इन लोगों के चले जाने के बाद राय दा ने हम दोनों को समझाया कि ये लोग जो देश भर में घूम-घूमकर क्रांतिकारी संगठन बनाने चले हैं, उनके पास समय का अभाव नहीं है, चूँकि उनका अपना कोई जनाधार , जनता के बीच काम या जनता में असर नहीं है। इसलिए ये अगर अपने क्षेत्र में न भी रहें तो इनके काम का कोई नुकसान नहीं होगा। राय दा का कहना था कि इन लोगों के द्वारा प्रस्तुत आज की परिस्थिति की व्याख्या जनता को समझ में नहीं आयेगी, क्योंकि ये केवल बने-बनाये किताबी सिद्धांत ही पेश कर रहे हैं, व्याख्या नहीं कर पा रहे हैं। बेहतर होगा कि हम अपने काम के साथ-साथ सिद्धांतों का अध्ययन करते जायें और अपने दर्शन के आधार पर आज की परिस्थिति की सैद्धांतिक स्तर पर व्याख्या पेश करें। तब कहीं जाकर हमारी बात लोगों को समझ में आयेगी और काम भी आगे बढ़ेगा।

मैंने कभी नियोगी को अड़ियल बनते नहीं देखा। वे प्रत्येक की बात व अनुभव सुनने-समझने की कोशिश करते थे, यानी उनमें अपना अनुभव दूसरों पर थोपने की प्रवृत्ति बिल्कुल नहीं थी। **वे यह जानते थे कि अलग-अलग जगहों पर चल रहे संघर्षों का अनुभव अलग-अलग होना स्वाभाविक है।** वे मार्क्सवाद के आधार पर इनका विश्लेषण करके हर अनुभव से सीखते थे।

वे अपने अनुभवों की सैद्धांतिक स्तर पर व्याख्या करने की कोशिश करते थे, यानी मार्क्सवाद के सिद्धांतों को अपने अनुभवों पर लागू करके उन्हें समझने-समझाने की कोशिश होती थी। वे इस प्रवृत्ति के खिलाफ थे कि पहले घर में बैठकर जूता बनाया जाये और फिर जाकर जनता के पैर में उस जूते को फिट करने की कोशिश की जाये। और अगर फिर भी फिट न हो तो पैर काटकर भी किया जाये। **इस प्रवृत्ति से एकदम हटकर उन्होंने पहले से प्राप्त सिद्धांतों के आधार पर जूते बनाने का तौर-तरीका सीखा, फिर वे जनता के बीच में गये, जनता के पैर का नाप लिया और तब जाकर जूता बनाया। यह जूता जनता के पैर में फिट हो गया और जनता ने इसे अपना भी लिया।** नियोगी ने इसी तरीके से छत्तीसगढ़ की हर समस्या का हल खोजने की कोशिश की। उन्होंने अपने काम में जो भी सफलता हासिल की उसकी कुंजी यही तरीका था।

देशव्यापी संगठन के लिये एक पहल

नियोगी की ही पहल पर दिसम्बर 1980 में पटना में राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा का गठन हुआ। इसमें जिन संगठनों ने हिस्सेदारी की वे थे – छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा, झारखंड मुक्ति मोर्चा, दिल्ली मुक्ति मोर्चा, मार्क्सिस्ट को-ऑर्डिनेशन (धनबाद) और कलकत्ता का एक संगठन (नाम याद नहीं)। ये संगठन अपने क्षेत्र में इतने व्यस्त रहते थे कि बाद में कभी राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा की औपचारिक बैठक नहीं हो पायी। लेकिन अलग-अलग जगहों में अन्य संगठनों के साथ अनौपचारिक बैठकों का सिलसिला चलता रहा।

विकल्प की राजनीति

नियोगी अपने-आप को कभी भी विरोध करने वाला या विपक्ष का नहीं मानते थे। उनका

कि निजी क्षेत्र तथा सरकारी क्षेत्र, दोनों से ही मजदूर क्षेत्र बेहतर है। सिर्फ इतना ही नहीं – दल्ली राजहरा की यूनियन ने इतिहास की भी खोज शुरू की और प्रकाश में आयी अंग्रेजों के विरुद्ध छत्तीसगढ़ के वीर नारायण सिंह की लड़ाई और शहादत। आज वीर नारायण सिंह एक महान शहीद के रूप में सरकार द्वारा भी माने गये हैं, जिनकी मूर्ति भी स्थापित हुई, जिनके शहादत दिवस में माला चढ़ाने के लिए भोपाल से मुख्य मंत्री रायपुर आ जाते हैं। लेकिन **इस महान इतिहास की खोज विश्वविद्यालय के विद्वानों ने नहीं की, खदान मजदूरों की एक यूनियन ने की।** भारत में इस प्रकार की कोई और मिसाल है क्या ?

नियोगी के विचार में दारू व्यापार, मशीनीकरण, और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की घुसपैठ के अंदर एक सम्बंध है और इसके साथ यदि पाँच सितारा होटल का उपभोक्तावाद जुड़ जाये तो भारत आजादी खो बैठेगा। आज जिस स्थिति में हम पहुँच रहे हैं, वहाँ खुल्लमखुल्ला बोला जा रहा है कि गुलामी द्वारा गरीबी दूर हो सकती है। **विदेशी पूँजी आज विदेशोन्मुखी (विदेश की ओर झुकी हुई) मानसिकता की जड़ है जो सिर्फ भ्रष्टाचार को ही फैलाकर समाज को प्रदूषित नहीं कर रही है, बल्कि देशभक्ति को भी नष्ट कर राष्ट्र को ही खतरे में डाल रही है।** इस दिशा की ही देन है साम्प्रदायिकता, अलगाववाद व उग्रवाद। यह कोई आकस्मिक संयोग नहीं है कि अमृतसर के स्वर्णमंदिर में अमरीकी राजदूत को आमन्त्रित करने के वक्त कहा गया था कि अमरीका को खालिस्तान का समर्थन करना चाहिए , क्योंकि खालिस्तान में विदेशी पूँजी निर्बाध खेल पायेगी, चूँकि वे मुक्त व्यापार की नीति में विश्वास रखते हैं। शंकर गुहा नियोगी ने लोकसंस्कृति को पूर्णतः जीवित कर विदेशी अपसंस्कृति को रोकने के लिए मजदूर वर्ग को संगठित किया था। अंग्रेजी स्कूल, टाई और मिनीस्कर्ट की 'मम्मी, डैडी, आंटी' वाली अपसंस्कृति, डिसुम-डिसुम नाच के अंदर से जो बौद्धिक अफीम इस देश में आयात हो रही है, वह परिवर्तन की राजनीति की सबसे बड़ी दुश्मन है जो आज मजदूर वर्ग के भी अंदर घुस रही है। इस नैतिक प्रदूषण को शंकर ने कभी क्षमा नहीं किया। शंकर गुहा नियोगी के अंदर इसलिए हम गोर्की के पावेल व्लासव[1] को पाते हैं जो कारखाने में कठोर श्रम करने के बाद भी देर रात तक पढ़ते थे और साथियों द्वारा वोदका (रूसी शराब) चाहने पर, सिर्फ चाय का इंतजाम करने को कहकर अपनी माँ को भी चिंतित कर देते थे, क्योंकि इस स्तर के संयम से माँ परिचित नहीं थी। सोवियत संघ के विघटन के पहले वोदका का आधिक्य इसके टूटने का लक्षण था, जो शंकर द्वारा वर्ग संघर्ष के साथ नैतिक सुधार आंदोलन को जोड़ने के ऐतिहासिक औचित्य को उजागर करता है। चरित्रहीन समाज समाजवाद की रक्षा नहीं कर सकता और आजादी को भी बचा नहीं सकता। इसलिए विदेशी पूँजी, पाँच सितारा होटल, बार आदि समाज को चरित्रहीन बनाने में लगे हुए हैं। चाहे यह रूस में हो चाहे भारत में।

नियोगी एक गांधीवादी थे, या नक्सलवादी या दत्ता सामंत की तरह सिर्फ एक व्यक्तिवादी श्रमिक नेता ? परम्परागत कसौटी से इसका जवाब आसान नहीं है। यहाँ पर भी शंकर भारत की राजनीति में एक चुनौती बनकर रहा। लेकिन सबसे बड़ा सवाल जो वह छोड़कर गया वह है – **क्या गांधीवादी आचार के साथ मार्क्सवादी विचार का समन्वय** सम्भव है ? शंकर ने एक ही मंच पर गांधीवादी, नक्सलवादी, समाजवादी, पर्यावरणवादी आदि सभी को बैठाकर साबित

---

[1] रूसी उपन्यासकार मैक्सिम गोर्की के प्रसिद्ध उपन्यास 'माँ' का नायक।

का जन्म होता है; भारतीय समाज आज प्रौढ़त्व के अंदर से गुजर रहा है।[1] यह कितना सही है, उसकी बहस आज नहीं। लेकिन यह सही है कि विकास काल के हिमयुग की तरह इतिहास में आदर्श का हिमयुग आता है। जब संसार बेसब्री से उष्णता की इंतजार करता है – कब बर्फ पिघलेगी और कब भगीरथ जटामुक्त गंगा को मैदान में ले आयेगा। क्या शंकर वह भगीरथ था जिसका शुरू में ही अंत कर दिया गया? इसका जवाब भी आज नहीं। उस दिन की बात याद आती है। शंकरहीन दल्ली राजहरा की पहली सभा। खून और आँसू का संगम। **भाषाहीन हजारों लोग उस दिन भी आशाहीन नहीं थे**। पूर्व प्रधान मंत्री वी. पी. सिंह ने जब पूछा कि मदद में वे क्या कर सकते हैं, तब एक ही जवाब आया, "लड़ाई में साथ दीजिये। शंकर गुहा नियोगी मर गये, लेकिन लड़ाई नहीं मरनी चाहिए।" और हाल में भिलाई में पंद्रह श्रमिकों के बलिदान ने साबित कर दिया कि लड़ाई मरी नहीं। दमन लोगों को दबा नहीं सका। यह कौन-सा मंत्र है जो कठिन संकट में भी संयम खोने नहीं देता, दुःख में भी आशा और आत्मविश्वास को बरकरार रखता है? उससे भी बड़ी बात – **वह यदि दल्ली में काम कर सकता था तो भिलाई में क्यों नहीं**, जहाँ चारों ओर आज संकट के बादल हैं?

जिस संक्रमण के रास्ते में बंगाल के दिनाजपुर जिले के धीरेश मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ इलाके में नियोगी बने, उसके हर कदम की अलग पहचान शायद आज सम्भव नहीं। लेकिन यह कुछ असम्बद्ध घटनाओं की गाथा नहीं थी। इसमें भी एक योग सूत्र रहा, दिशा रही, और एक परिणति भी। **देश के कम्युनिस्ट आंदोलन की तीनों धाराओं में से गुजर कर नियोगी एक चौथी धारा बने**। और यह धारा थी समन्वय की। **हर प्रयोग के सकारात्मक पहलुओं को चुनकर एक नये मॉडल की रचना करना चाहा था शंकर ने**। और वह भी लोहा खदानों की लाल मिट्टी पर और भारत के सबसे कमजोर और विकास से दूर समाज को लेकर। यह मॉडल दो पैर पर खड़ा था – एक संघर्ष, दूसरा निर्माण। श्रमिकों की मजदूरी की लड़ाई, बेरोजगारों की रोजी की लड़ाई, पूँजीपतियों के शोषण के विरुद्ध लड़ाई, सरकार तथा शोषक वर्ग के दमन के विरुद्ध लड़ाई आदि के साथ जुड़ गये अस्पताल, स्कूल, सहकारी समिति एवं पर्यावरण संरक्षण के रचनात्मक कार्यक्रम। व्यस्त रहते हुए भी शंकर कभी अध्ययन से दूर नहीं रहे और कोई विकल्प तैयार करे बगैर आंदोलन में उतरे नहीं। विदेश से मशीन लाकर आधुनिकीकरण के नाम पर जब 8,000 मजदूरों की छँटनी की योजना बनीं तब लोहा खदानों में शंकर बगावत का बिगुल फूँक चुके थे, लेकिन साथ ही साथ भारत की स्थिति में उपयोगी मशीन और श्रमशक्ति को मिलाकर उन्होंने 'अर्द्ध-मशीनीकरण' की एक वैकल्पिक स्कीम भी पेश की थी जिसने इस्पात मंत्रालय को भी आश्चर्यचकित कर दिया और अंत में यही वहाँ लागू हुई। मशीनीकरण की समस्या को शंकर एक वर्ग दृष्टिकोण के साथ देखते थे। **मशीनीकरण या तथाकथित आधुनिकीकरण, सिर्फ रोजगार को ही संकुचित नहीं करता है, बल्कि एक विशेष वर्ग के हाथ से रोजगार छीनता है**। और वह वर्ग है समाज का कमजोर वर्ग – हरिजन, आदिवासी, महिला। इसलिए मशीन-आधारित आधुनिक खदान या कारखाने में हरिजन, आदिवासी तथा महिला की संख्या नहीं के बराबर रहती है। विकास का यह रास्ता कितना सही है, जो दुर्बल को और दुर्बल बना देता है?

---

[1] मूल कथन के लिए देखिये '2-3 जून शहीद दिवस-शपथ दिवस' लेख का पहला पैराग्राफ, पृ. 115

नियोगी की हत्या के बाद उनके बारे में लिखे गये लेखों, सम्पादकियों एवं टिप्पणियों का अचानक अम्बार लग गया। परंतु इन सब में उन्हें मुख्यतः एक निष्ठावान और कुशल ट्रेड यूनियन नेता के रूप में ही पेश किया गया, चाहे कइयों ने यह जरूर स्वीकारा कि नियोगी ने ट्रेड यूनियन आंदोलन में एक रचनात्मक आयाम जोड़ कर नयी दिशा दी है। हमने इस पुस्तक के लिए जब सामग्री संकलित करनी शुरू की तो धीरे-धीरे बढ़ते हुए क्रम में यह स्पष्ट होता चला गया कि हमारे सामने कोई ट्रेड यूनियन नेता नहीं, वरन् पूरे भारत के नवनिर्माण का एक क्रांतिकारी स्वप्नद्रष्टा खड़ा है। दरअसल, नियोगी के ट्रेड यूनियन के काम में ही एक अनूठा, सृजनात्मक राजनैतिक सोच उभरने लगा था जिसकी बुनियाद पूरे समाज के प्रति सरोकार, देशप्रेम एवं मानवता के उत्कृष्ट मूल्यों पर टिकी हुई थी। जैसे-जैसे अस्सी के दशक में नियोगी के काम का दायरा फैलता गया, वैसे-वैसे उनका राजनैतिक सोच भी विकसित होता गया। द्वंद्वात्मक भौतिकवाद के वैज्ञानिक सिद्धांत को मानने वाले नियोगी ने एक ओर छत्तीसगढ़ के इतिहास और संस्कृति से शिक्षा ली और दूसरी ओर छत्तीसगढ़ के पिछड़ेपन, शोषण एवं औद्योगीकरण के दुष्प्रभावों से भी। इस अनुभव से नियोगी के राजनैतिक सोच में राष्ट्रीयता और देश की एकता, विकास की दिशा, तकनालाजी और पर्यावरण के प्रश्न आदि मुद्दे जुड़ते चले गये। धीरे-धीरे उनका सोच समाज एवं पूरे देश के क्षितिज को अपने दायरे में समेटने लगा था। आंदोलन के ही दौरान नियोगी ने 'संघर्ष और निर्माण' की राजनीति विकसित की और इसका छत्तीसगढ़ में जीता-जागता मॉडल खड़ा किया। अब उनका राजनैतिक चिंतन दर्शन बनता जा रहा था।

इस खंड में चार लेखों के सहारे हमने नियोगी के राजनैतिक दर्शन को प्रस्तुत करने की कोशिश की है। अपने-आप में इनमें से कोई भी लेख पूरा खाका नहीं खींच पाता है, परंतु यदि उनको एक-दूसरे के पूरक के रूप में जोड़ कर देखा जाये तो कैनवास पूरा उभरने लगता है।

एक और बात पर जोर देना जरूरी लगता है। नियोगी बुनियादी रूप से एक कर्मयोगी थे। उनके दर्शन का स्रोत उनका कर्म ही है। इसीलिए उनके दर्शन को जो लोग मात्र शब्दों के सहारे समझना चाहेंगे, वे शायद कभी भी उनकी पूरी बात पकड़ न पायें। नियोगी के साथ हम न्याय तभी करेंगे जब हम 'शहीदों द्वारा सिंचित राह' पर चलते हुए, उनके कर्म और दर्शन के द्वंद्वात्मक व गतिशील रिश्ते में उनकी सच्चाई को खोजेंगे।

यह वैज्ञानिक एवं कर्मयोग की पद्धति एक ओर तो उनके 'संघर्ष और निर्माण' के दर्शन का आधार है, पर साथ-साथ दूसरी ओर, उसी दर्शन को जानने-समझने का सर्वोत्तम औजार भी।

❑

वे,
जो उसके जीते जी
उसके खून के प्यासे थे,
अपनी क्रूरता को धार्मिक जामा पहना
उसे शहीद कहकर
मजाक उड़ा रहे हैं।

वह,
एक मजबूत किला था
जिसे कायरों ने बारूद से उड़ा दिया।
शंकर गुहा नियोगी,
जिसे मैं ईश्वर का प्रवक्ता मानता हूँ,
उसमें पीड़ाओं को सहने की
अपूर्व क्षमता थी।
उसके लहू में साहस
और हड्डियों में दृढ़ विश्वास था।
मैंने कभी नहीं देखा
कोई युवा उसके जैसा,
जिसमें इतनी गहन संवेदनशीलता
और विवेक के साथ
अभिव्यक्ति की आश्चर्यजनक क्षमता हो।

उसने जनता को समझाया
कि वे कौन हैं।
उसने उनके लिए
उन सड़कों का नक्शा तैयार किया,
जिनसे होकर संघर्ष का रास्ता
तय होता है।

उसने श्रमिकों को
न्याय और स्वतंत्रता के लिए
लड़ने की कला सिखायी।
वह अपने ध्येय के प्रति
सम्पूर्ण शक्ति और निष्ठा के साथ समर्पित था।

. . . . नर्मदा के तट से
अंतिम कराह की फुसफुसाहट
गूँजती है।
पुकारती है नागरिकता,
नागरिकता को।
न्याय, न्याय को गुहारता है।
नियोगी कभी नहीं मरता
मरते हैं उसके विरोधी ही।

उसके संघर्ष को
और तेज करना,
उसके क्षितिज को निरंतर विस्तार देना,
यही संकल्प और विवेक
उसको सच्ची श्रद्धांजलि है।
जैसा कि लूथर ने कहा था,
" बाकी सब फिजूल है ! "

नर्मदा की आँखों से अनचुए आँसू
अपने इस कामरेड को
स्मरणांजलि अर्पित करते हैं,
जो अनंत शांति की गोद में सो गया

नर्मदा घाटी, म. प्र.,
2 अक्तूबर 1991
(मूल अंग्रेजी से हरि ठाकुर द्वारा अनूदित कवितांश।)

आज सितम्बर की अट्ठाइस तारीख को,
जो सूरज उगा है,
वो तुम्हारे खून से सना है।
दोस्त, तुम तो लड़ लिये, खूब लड़े।

अब देखना है कि लोहे की गोलियों ने
पीछे रहने वालों को जो चुनौती दी है,
उसका सामना हम कैसे करेंगे . . . . ?

अलीराजपुर,
जिला झाबुआ, म. प्र.,
28 सितम्बर 1991

स्वप्नद्रष्टा

रक्षा शुक्ला

कवियित्री के पुत्र राकेश शुक्ला (देखिये पृ. 618-619) ने लम्बे समय तक छमुमो के साथ काम किया है। यह कविता पुत्र के कामरेड के प्रति माँ की मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति है। *— स.*

छिपे हैं हत्यारे
हर कोने-आँतर में।
मुस्कानों के नीचे छिपी हैं
पिस्तौलें, मशीनगनें, टाइमबम।

धरती, आकाश और जल में,
होती हैं रोज-रोज हत्याएँ।
हत्याओं के शिकार
निहत्थे होते हैं, निर्दोष होते हैं,
और उनका हृदय होता है निर्मल

मारने वाले नहीं देखते
कि प्रार्थना कर रहा है कोई
या आशीष दे रहा है झुककर,
या फिर शंकर गुहा नियोगी की तरह
रात एक बजे तक काम करते-करते
थककर सोया देख रहा है शायद
मीठे सपने रोज की तरह।
क्योंकि उसकी आदत थी सपने देखना
और फिर उन सपनों को
जीवन में ढालकर पूरा कर लेना।

वह पहला आदमी था मामूली सा
जिसके सपने
अपने ही नहीं, सबके थे।
और वे सपने
उसने सच कर दिखाये थे।

सुंदर दुनिया की खातिर

अनिल सद्गोपाल

नियोगी द्वारा अपनी हत्या के कुछ सप्ताह पूर्व टेप किये गये वक्तव्य (देखिये पृ. 304) एवं 28 अगस्त 1991 को भिलाई (फौजी नगर) की अंतिम आम सभा (देखिये पृ. 306) में व्यक्त विचारों से अनुप्रेरित कविता के कुछ अंश ; कविता में उद्धृत वाक्यांश स्वयं नियोगी के हैं। — स.

(1)

" यह दुनिया बहुत सुंदर है ",
यह मैं जानता हूँ।
इस दुनिया में शोषण खत्म हो,
यह मैं चाहता हूँ।
एक दिन दुनिया की हर कली खिल उठेगी,
यह मैं मानता हूँ।
दुनिया का ऐसा नक्शा
अपने आप नहीं बनने वाला है।
" मेरे चाहने से सब कुछ नहीं होने वाला है।"
इसकी सुंदरता की खातिर
हमको कुर्बानी देनी होगी।
मौत के सामने हँसना सीखना होगा।
जेल की सलाखों को हाथों की गर्मी से
गलाना सीखना होगा।
तभी तो दुनिया की सुंदरता निखरेगी।
कई जिंदगियों के खप जाने,
कई पीढ़ियों के संघर्ष के बाद ही,
हर इंसान के लिए दुनिया सुंदर बन सकेगी।

(2)

" मैं सुंदर दुनिया को अवश्य प्यार करता हूँ। "
अपनी सुंदर जिंदगी को भी प्यार करता हूँ।
इसलिए खेत-खलिहानों से खदानों तक,
बस्ती-मुहल्लों से कारखानों तक,
हिम्मत और न्याय की जोत जलाने के लिए ,
इंसान से मशीन बनाने के लिए नहीं,
वरन् मशीन में इंसानियत जगाने के लिए ,
दुनिया के विकास में हरेक को
बराबर का हिस्सा दिलाने के लिए ,
इंसान को कुदरत पर राज करने के लिए नहीं,
पर कुदरत के साथ
जिंदा रहना सिखाने के लिए ,
मैंने अपनी मौत से
खौफ खाना बंद कर दिया है,
खिड़कियाँ खोलकर सोना शुरू कर दिया है।
पुलिस की रायफल,
गुंडों के कट्टों,
और उद्योगपतियों की धमकियों के सामने
सीना खोलकर घूमना शुरू कर दिया है।
दरअसल,
उनकी सीमाओं को पहचानना शुरू कर दिया है।
उनके दिलों में समाये डर को
जानना शुरू कर दिया है।
मैं जान गया हूँ कि दुनिया की सुंदरता से
वे खौफ खाते हैं।
दुनिया को हर इंसान प्यार कर सके,
इससे वे घबराते हैं।

जब-जब मरीज बिना दवा के जिंदगी से लड़ेगा,
मौत की गोद में सोते-सोते
तुम्हें याद करेगा।
जब-जब कल-कारखानों में शोषण बढ़ेगा,
मुक्ति चाहने वाला लड़ाई के मैदान में
तुम्हें याद करेगा।
फिर ऐसा एक दिन आयेगा,
किसान-मजदूर एक होकर
सुनहरा छत्तीसगढ़ बनायेगा।
खेतों में पानी, मरीजों को दवाई,
मजदूरों को हक मिलेगा।
उस दिन खुशी में झूमते हुए
सारा छत्तीसगढ़
तुम्हें याद करेगा।

शंकर मर नहीं सकता

दिलीप बागची

कवि की नियोगी से प्रथम व अंतिम मुलाकात 21 सितम्बर 1991 को दल्ली राजहरा में हुई थी। एक सप्ताह बाद शहादत की खबर सुनकर लिखी गयी कविता।
— स.

अब रोने का वक्त नहीं है,
अब आँसू बहाना है नहीं।
शंकर की चिता छू लो,
अब हर दिल में शपथ लो यही,
उसी आग से हत्यारों को
जलाकर राख बना दो,
एक चिराग से लेकर आग,
अब लाखों चिराग जला दो।

एक-एक मजदूर एक-एक शंकर,
एक-एक शंकर हर किसान।
लहराता नभ में सबका शंकर,
बनकर लाल-हरा निशान।
अब रोने का वक्त नहीं . . . .

एक शंकर को छीन लिया,
न आदर्श उनका छीन सका।
छत्तीसगढ़ से उनका विचार,
हिन्दुस्तान भर में फैल चुका।
अब रोने का वक्त नहीं . . . .

कातिलो !
कोई फर्क नहीं पड़ता
नियोगी के मर जाने से,
हवा में उसकी आवाज बाकी है।
जिन तारों को छेड़ा है
उसकी उँगलियों ने,
टूटा नहीं, वह साज बाकी है।

हाँ,
एक जख्म हो गया
हमारे सीने पर,
जिसे वक्त जरूर सी देगा।
देर से ही सही,
नियोगी का ये बलिदान
हमें फिर एक नियोगी देगा।

19 अक्तूबर 1991

एक अभेद्य दीवार

सुरेश सलिल

हत्यारे के हाथ
अपनी औकात भर दिखा पाते हैं,
बस्स
कोई गोली या कोई कटार
आवाज की बुलंदी का
गला घोंट नहीं पाती।
दरख्तों का हरापन है
उनका संकल्प।

पिघलते फौलाद का लाल रंग
ऊपर उठकर
आकाश की लाली बन जाता है।

पिघलते फौलाद का लाल रंग
जमीन पर फैलकर
बस्ती से जंगलात तक
एक अभेद्य दीवार की तरह तन जाता है।

वही आकाश की लाली,
आवाज की बुलंदी,
वही अभेद्य दीवार,
देखिये अभी भी
यहीं कहीं होगी —
यानी कि . . . .
शंकर गुहा नियोगी।

('समकालीन तीसरी दुनिया', नयी दिल्ली, दिसम्बर 1991, से साभार।)

नियोगी ' संघर्ष और निर्माण ' के जन नायक तो थे ही, जन कवि भी थे। वे बचपन से ही कविताएँ लिखते थे। उनके बचपन में रचित कुछ कविताओं के उदाहरण पृ. 249-250 व 566-567 पर मिलेंगे। वयस्क जीवन में लिखी गयी उनकी कविताओं का संकलन खंड चार में प्रस्तुत है। वे स्वयं भी प्रसिद्ध कवियों और साहित्यकारों से लगातार प्रेरणा लेते रहते थे एवं उनके अपने भाषण, बयान, लेख व आंदोलन के लिए लिखे गये पर्चे इनके उद्धरणों से भरपूर रहते थे। उनकी काव्यात्मक भाषा और उनका संघर्षशील जीवन कवियों और लेखकों को भी आकर्षित करता रहा। उनके जीवनकाल में ही उनके बारे में लिखी गयी कविताओं का एक उदाहरण पृ. 42 पर प्रस्तुत है। उनकी शहादत के बाद तो देश के कोने-कोने में विभिन्न भाषाओं में उनके बारे में कविताएँ लिखी गयीं। कवियों के अतिरिक्त मजदूरों, किसानों, विद्यार्थियों, समाजकर्मियों एवं डाक्टरों व वैज्ञानिकों तक ने कविताएँ लिख डालीं। छत्तीसगढ़ के मजदूर-कवि श्री फागूराम यादव द्वारा नियोगी के जीवन पर रचित छत्तीसगढ़ी ' आल्हा ' के कुछ अंश पृ. 420-421, 453 और 487 पर उद्धृत हैं। अभी हाल में लिखी गयी एक ऐसी अन्य कविता पृ. 504 पर प्रस्तुत है। निःसंदेह यह सारा सृजनात्मक स्फुटन नियोगी के जीवन के महाकाव्य से अनुप्रेरित था।

छत्तीसगढ़ के प्रसिद्ध कवि-इतिहासकार श्री हरि ठाकुर की निम्न पंक्तियाँ नियोगी के व्यक्तित्व का यथार्थ व्यक्त करती हैं –

" लोक साधना में जीता जो वह है सच्चा योगी।
ऐसे लोगों को हम कहते शंकर गुहा नियोगी।।'

नियोगी का न रहना दुःखद मानते हुए भी अनेक कवियों ने उनके विचारों को महत्व दिया और विचारों की अमरता में उनकी अमरता देखने का आशापूर्ण प्रयास किया। डॉ. इश्तियाक की कविता की पंक्तियाँ हैं –

हाँ, एक जख्म हो गया हमारे सीने पर,
जिसे वक्त जरूर सी देगा।
देर से ही सही,
नियोगी का ये बलिदान
हमें फिर एक नियोगी देगा।'

इस खंड में नियोगी की शहादत से अंकुरित ऐसी ही कुछेक कविताओं को संकलित किया गया है। आशा है कि ये कविताएँ पाठकों के हृदय को स्पर्श करेंगी, उन्हें सोचने के लिए प्रोत्साहित करेंगी और कुछ करने का भी साहस देंगी।

ऐसी कविताओं का एक संकलन छमुमो की लोक साहित्य परिषद् द्वारा ' उसकी आवाज बाकी है व अन्य कविताएँ ' शीर्षक की पुस्तिका के रूप में फरवरी 1992 में प्रकाशित किया गया था।

❑

शोषक हत्यारा वर्ग जनता को भीड़ या मशीन बनाना चाहता है। हमने जनता को भीड़ नहीं बनने दिया है। हमने भीड़ को जनता बनाया है। समझदार सही विचारों से लैस मुक्ति फौज का सिपाही बनाया है। यह जनता हमारा विचार को पूरा देश में बुलंद करेगा। यह महाजुलूस छत्तीसगढ़ की मुक्ति का बिगुल बजा रहा है। भारत की मुक्ति का झंडा बुलंद कर रहा है। शोषणमुक्त, न्यायप्रिय, निर्भय दुनिया का नवनिर्माण का प्रारम्भ करने जा रहा है।"

"हम पहले भी जुलूस निकालते थे। रायपुर का रैली में आप भी तो हमारे साथ थे, हम दोनों कितना थके थे। आज का जुलूस देखो। लाखों सिपाही बिना कमांडर के चल रहे हैं। अनुशासित चल रहे हैं। कोई भी 'खून का बदला खून से' वाला बात नहीं बोल रहा है। इतनी जनता आज जो चाहे, सब कर सकता है। मेरी हत्या कराने वालों की फैक्ट्रियाँ फूँक सकता है। जो बड़ा-बड़ा मशीन बेरोजगारी पैदा कर रहा है, उसे ये जनता लोग तोड़ सकता है। सारा आकाश को आग की लपटों से आच्छादित कर सकता है। लेकिन इस तरह का तोड़-फोड़ का काम भीड़ कर सकता है। हमारे साथ जनता है। भीड़ नहीं है। इसीलिए तो पूँजीपति वर्ग हमसे नाराज रहता है कि हम भीड़ क्यों नहीं इकट्ठा करते? भीड़ को जनता क्यों बना देते हैं? देखो, उधर आकाश में अनुसूइया बाई, जगदीश भाई और कितने शहीद लाल-हरा झंडा बुलंद कर हमारा स्वागत कर रहे हैं।"

नियोगी का महाप्रयाण था। यह एक 'राजा' का महाप्रयाण था, लाखों गरीब मेहनतकशों के हृदय पर राज करने वाले राजा का यह महाप्रयाण था। एक 'रंक' का जिसका बेटा जीत मेरे यहाँ छुट्टियाँ बिताना चाह कर भी इसलिए नहीं आ पाया चूँकि उसके पास पहनने के कपड़ों का केवल एक सेट था। यह एक बैगा का महाप्रयाण था, जिसे छत्तीसगढ़ की जनता देवता समझती है। यह एक खुली किताब जैसे व्यक्तित्व के एक मामूली आदमी का प्रयाण था जो बीड़ी-सिगरेट पिया करता था।

लोग बढ़ते जा रहे हैं। लेकिन सब जगह एक ही तरह के नारे गूँज रहे हैं, "शहीद नियोगी के रास्ते पर अमल करो।" हर गली से एक ही तरह का पानी बह रहा है, एक ही दिशा में। नियोगी के विचारों की दिशा में, उनके सपनों की दिशा में।

नियोगी की चिता धू-धू कर जल उठती है। एक बार फिर मेरे दोनों हाथ उठते हैं और प्रणाम की मुद्रा में माथे से लग जाते हैं।

❑

(अगस्त 1992)

कही। इसी बीच बहुत से लोग उन्हें नजदीक से देखने की कोशिश करने लगे। ये लोग उन्हें पहली बार देख रहे थे। सभी को यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि इतने बड़े नेता का कुर्ता एक किनारे से फटा हुआ है, पाजामा मटमैला है तथा चप्पलें पहने हैं, वे भी घिसी हुईं। उनके साधारण रहन-सहन का मुझ पर व मेरे साथियों पर गहरा प्रभाव पड़ा।

दिसम्बर 1990 की भिलाई में आयोजित शहीद वीर नारायण सिंह दिवस की रैली के ठीक बाद हमारी हड़ताल शुरू हो गयी। इसी समय 'टर्मिनेशन' की प्रक्रिया भी शुरू हो जाने से हमारी परेशानी बढ़ गयी। चूँकि नियोगीजी उस वक्त जेल में थे (फरवरी-मार्च 1991), मैं अक्सर उनसे मिलने जाता था। वे कभी भी मेरी किसी बात को काटते या टोकते नहीं थे। न ही अपनी बात जोर देकर मनवाते थे। मेरे यह कहने पर कि, 'मालिक तो सही होता है, सारी गड़बड़ बीच के कर्मचारी करते हैं', वे मुस्करा देते थे और कहते थे, "कोई आदमी अच्छा है या बुरा है, यह सोच गलत है, क्योंकि यह सब सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था के तहत है। पूँजीपति कभी भी हमारे हितैषी नहीं हो सकते।"

एक बार उनके घर जाने पर आशाजी 'लाल चाय' लेकर आयीं। नियोगीजी बोले, "मोरो बर बाँचे है कि नईं ?" आशाजी ने जवाब दिया, "लावत हौं जी"। उनकी बेटी मुक्ति के कपड़े मुझे अन्य मजदूरों के लड़के-लड़कियों के कपड़ों से किसी भी प्रकार से भिन्न नहीं लगे।

यूनियन कार्यालय, बगीचा, शहीद अस्पताल आदि देखकर मैं काफी प्रभावित हुआ व उनसे पूछा, "जिसे आदमी सोच भी नहीं सकता, वह आपने कैसे कर दिखाया ?" तब वे बोले, "यह सब काम मेरा नहीं, मजदूरों का है।"

एक बार मैंने उनसे कहा, "आप पागलों जैसे काम करते हैं।" जब उन्होंने पूछा, "कैसे ?", तो मैंने कहा, "आप असाधारण काम करते हैं, दुनिया भर की बातें करते हैं। कभी आपको घर की जिम्मेदारी का अहसास नहीं होता ?" तब उन्होंने कहा, "हाँ, मैं मानता हूँ, यह मेरी गलती है। एक मध्यमवर्गीय परिवार की तरह मैंने अपने परिवार के बारे में नहीं सोचा।"

किसी कठिन काम के होने, या न हो पाने की उलझन के सिलसिले में उन्होंने कहा, "हमारा एक सिद्धांत है। अगर जिंदा रहना है तो करना है, नहीं तो मरना है।" ये शब्द उन्होंने तब कहे थे, जब वे राष्ट्रपति को ज्ञापन देने सितम्बर 1991 में हमारे साथ ट्रेन से जा रहे थे।

और अंत में मुझे याद आती है नियोगीजी की डाँट। उस समय फैक्ट्री में हड़ताल के कारण बैठे होने की वजह से परिवार के खर्चे के लिए नियोगीजी मुझे हर महीने कुछ पैसे दिया करते थे। 26 सितम्बर 1991 को उन्होंने मुझे राजहरा जाकर इस बारे में यूनियन आफिस से औपचारिक बात कर लेने की सलाह दी। परंतु मुझे अपने परिवार के खर्च हेतु यूनियन आफिस से बात करना अच्छा नहीं लग रहा था। अतः मैंने राजहरा जाने के लिए मना कर दिया। तब उन्होंने मुझे डाँटते हुए कहा, "हमारा तुम्हारा कोई व्यक्तिगत सम्बंध नहीं है। हम सभी संगठनात्मक रूप से जुड़े हुए हैं। इसलिए तुम्हें राजहरा जाना ही होगा।

27 सितम्बर को राजहरा से मैं जब लौटा, तो शाम को वे रायपुर जा चुके थे। सोचा कि अगली सुबह उनसे बात कर लूँगा। किंतु वह सुबह अब कभी नहीं आयेगी। □

(अगस्त 1992 ; अमन कुमार नम्र द्वारा लिये गये साक्षात्कार पर आधारित।)

बनाया था। ठीक उसी तरह पुलिस ने भी धोखे से नियोगीजी को गिरफ्तार कर लिया।"

उस बूढ़े की कहानी में महाकाव्य का नायक और हमारे काल का नायक एक-दूसरे के प्रतिरूप बन गये थे। मैंने महाश्वेता देवी का उपन्यास 'चोट्टी मुंडा और उसका तीर' पढ़ रखा था और जानता था कि कैसे एक इंसान अमर, अविरल धारा, किंवदंती और अक्षय बन जाता है। यह कोई महज कपोलकल्पना नहीं थी, इसे नियोगीजी ने साबित कर दिखाया था।

नियोगीजी ने गांधीजी के जन्मदिन के अवसर पर 2 अक्तूबर 1990 को भिलाई के मजदूरों के प्रति सहानुभूति रखने वाले लोगों की एक मीटिंग बुलायी। भयभीत पूँजीपतियों के इशारे पर भाजपा सरकार ने मीटिंग पर पाबंदी लगा दी। लेकिन नियोगीजी ने इसकी परवाह नहीं की। उन्होंने 24 घंटे के भीतर मीटिंग का स्थान भिलाई से बदल कर रायपुर कर दिया, 30-40 हजार लोगों के भोजन की व्यवस्था की, मीटिंग को सफलतापूर्वक आयोजित किया और इस तरह से राज्य सरकार के मंसूबों पर पानी फेर दिया। सिर्फ वे ही ऐसा कर सकते थे। अखबारों ने भी स्वीकार किया कि उनकी संगठन क्षमता अनूठी थी।

पिछले तीन दिनों से भारी वर्षा हो रही थी। फिर भी ..... वह विशाल जन समूह सपने की तरह लग रहा था। लोग खड़े-खड़े वक्ताओं की बातें सुन रहे थे, क्योंकि मैदान कीचड़ से भर गया था। माइक्रोफोन पर नियोगीजी की आवाज गूँज रही थी, "हम मजदूर और किसान हैं। हमारा पूरा अस्तित्व ही पानी और धरती पर निर्भर है। इसलिए अगर बैठ सकते हों तो बैठ जाइये।"

और वह सागर के समान विशाल भीड़ चुपचाप उसी कीचड़ भरे मैदान में बैठ गयी ताकि नियोगीजी को सुन सके।

एक बार मैं अपने एक दोस्त के साथ राजहरा उनके घर गया। पिछली रात 2 बजे तक बैठक चलती रही थी। वे 3 बजे के बाद ही सो पाये होंगे। उन्हें जगाया नहीं जाना चाहिए था, फिर भी उन्होंने बिछावन छोड़ दिया और शांत व संयत रूप से एक बेंच पर आ बैठे। आशा दीदी चाय ले आयीं। इतने बड़े नेता की पत्नी होने के बावजूद घर में उनका कोई मददगार न था, वे घर का सारा काम खुद ही करती थीं।

चाय की चुस्की लेते हुए नियोगीजी ने कहा, "मेरी तबियत ठीक नहीं है। रात से ही थोड़ा-थोड़ा बुखार है।"

मैं अपने आपको भूल-सा गया और अनायास ही उनका बदन छू लिया। बदन काफी गर्म था, उन्हें तेज बुखार था। फिर भी वे हमसे मिलने चले आये थे — दो साधारण आदमियों से।

ऐसे थे नियोगीजी। उनकी नजरों में कोई भी छोटा नहीं था। वे सबों को एक समान तरजीह व तवज्जो देते थे। जो कोई भी उनके पास आता, उनके प्यार का हकदार बन जाता था।

* * *

आज 29 सितम्बर को मैं अपने प्यारे नेता शंकर गुहा नियोगी के दर्शन करने आया था। वे शहीद चौक के सामने लेटे हुए थे। ..... मैंने उन्हें सलाम किया। नहीं, हमेशा की तरह आज उन्होंने अपनी कसी हुई मुट्ठी आसमान की ओर नहीं उठायी। ऐसा लगता था कि

से मेरी किताब ' अग्निगर्भ ' निकाल कर मुझे अचम्भे में डाल दिया। वह रिक्शा चलाने, मछली केंद्रों में काम करने व राजमिस्त्री होने के साथ-साथ ' बर्तिका ' और अन्य छोटी पत्रिकाओं के लिए लिखता भी था। फिर कुछ सालों के लिए मैं उसकी खोज-खबर न ले सकी। तभी बस्तर से मनोरंजन ब्यापारी की अपील आयी। मदन का ही असली नाम मनोरंजन है। वह नियोगी के प्रोत्साहन पर ही विद्रोही कवि सुकांत भट्टाचार्य के नाम पर एक पुस्तकालय खोल रहा था। उसने मुझसे बंगला पुस्तकों के लिए अपील की थी। नियोगी की मौत के बाद उसने मुझे यह लेख बंगला में भेजा था जिसे ' प्रतिक्षण ' ने अपने दिसम्बर (1991) के अंक में प्रकाशित किया था। यहाँ उसकी श्रद्धांजलि का अनुवाद दिया जा रहा है। मुझे उसका अनुवाद करने में गौरव का अहसास हो रहा है। यह अमर शंकर गुहा नियोगी के प्रति मिट्टी से उपजी श्रद्धांजलि है।

— महाश्वेता देवी

जब मैं कलकत्ता छोड़कर स्थायी रूप से मध्य प्रदेश रहने आ रहा था तो कवि समीर राय ने उनका पता देकर कहा था कि ' उससे जरूर मिलना। '

दंडकारण्य (बस्तर) में बसने के बाद मैंने उन्हें कई पत्र लिखे, लेकिन कोई जवाब नहीं आया। दल्ली तक जाने के लिए मेरे पास पैसे नहीं थे। सन् 1989 के संसदीय चुनाव के दौरान डॉ. शैबाल जाना और जोगिन सेन गुप्ता से मेरा परिचय हुआ। वे छमुमो के उम्मीदवार जनकलाल ठाकुर का प्रचार करने हमारे क्षेत्र में आये हुए थे। वे मुझे नियोगीजी के पास ले गये।

पखांजोर बाजार में छमुमो की एक सभा हो रही थी। मैंने देखा कि एक आदमी मोटे खद्दर का कुर्ता-पाजामा पहने अन्य लोगों के साथ जमीन पर बैठा था। तब भी वह इतना अलग दिख रहा था ! उसका चेहरा हँसी से खिला हुआ और आत्मविश्वास से भरा हुआ था। एक नजर में ही स्पष्ट हो गया कि वह व्यक्ति किसी भी दबाव या पैसे के सामने झुकने वाला नहीं था।

मैंने उनके साथ दस मिनट बातचीत की और तभी तय कर लिया कि मैं जिंदगी भर इस व्यक्ति के कदमों पर चलने का प्रयास करूँगा। मैंने उन्हें बीड़ी दी और उन्होंने माचिस मेरी ओर बढ़ा दी। फिर मुझसे कहा, " ब्यापारी, कभी दल्ली आना। "

दल्ली राजहरा मजदूरों का नया तीर्थ है। वहाँ पहुँचते ही मैं हैरत में पड़ गया। दुकानों, बाजारों, घरों और नुक्कड़ों, सभी जगहों से, लाल-हरे झंडे स्वागत कर रहे थे। पुरुष लाल कमीज और हरी हाफ़पैंट पहने थे, औरतें लाल साड़ी और हरा ब्लाउज। ट्रकों, जीपों व रिक्शों पर लाल-हरे झंडे लहरा रहे थे।

मैं शाम को नियोगीजी से मिला। वे यूनियन आफिस में बैठे हुए एक बूढ़े आदमी से बात कर रहे थे। वह बूढ़ा किसी बहुत दूर के गाँव से आया था। उसने सुन रखा था कि नियोगीजी

इसी प्रकार जब वे मुझे पर्यावरण पर अपना लेख (उनका अंतिम लेख) डिक्टेट करवा चुके थे तो बोले, " तुम इसे फटाफट समेटो, मैं इस लेख के आखिर में एक कविता बनाना चाहता हूँ।" यह कहकर वे अलग से, अपने कमरे में बैठ गये। करीब एक घंटे बाद वे अपनी कविता लाये और कागज हमारी ओर बढ़ाते हुए कहा, " लो पढ़ो, ठीक है ? "

कविता पढ़ते-पढ़ते, उसकी अंतिम पंक्तियाँ पढ़कर मैं आशंका से ठिठक गया, " अंत नहीं होगा जहाँ अंत होना था, वहीं शुरूआत की सुबह खिल उठेगी।" (देखिये खंड चार में ' शुरूआत की सुबह ' कविता, पृ. 264)। भावनावश मैं हिल भी नहीं पाया था कि ' क्यों ठीक है, ना ? ', नियोगीजी ने पूछा और जोर से हँसने लगे। सच, वे मौत की नजरों में घूमते हुए भी हँस कर चलते थे।

जब 27 वर्ष के कारावास के बाद नेल्सन मंडेला की रिहाई का समय नजदीक आता गया तो नियोगीजी अत्यधिक उत्तेजित व व्यग्र होते गये और जैसे ही नेल्सन मंडेला की रिहाई का समाचार फूटा, वे जोश में बोले, " जाओ, खूब फटाका फोड़ो, धूम-धाम से इस रिहाई को मनाओ।" और वह दिन हमारे शहर में खूब हर्षोल्लास से मनाया गया।

हमारे संगठन में शहीदों की कुर्बानी को सर्वाधिक महत्व दिया जाता है। हमारे ' शहीद मेला ' में आजादी के लिए कुर्बान हुए सैकड़ों शहीदों की तस्वीरें संजोकर रखी गयी हैं। छत्तीसगढ़ की वीर गाथा हमें गौरवान्वित करती है। इसके अतिरिक्त प्रतीक स्वरूप तीन ऐसे चित्र हैं जो हमारे कार्यक्रमों में प्रमुखता पाते रहे हैं। वे हैं – छत्तीसगढ़ के महान शहीद वीर नारायण सिंह, भारत के शहीद-ए-आजम सरदार भगत सिंह और अंतर्राष्ट्रीय स्तर के नेल्सन मंडेला। नियोगीजी कारावास भुगत रहे मंडेला को कभी-कभी ' जिंदा-शहीद ' भी कह देते थे। ❑

(सितम्बर 1992)

प्रसंगों के आइने से

अनुराग सिंह

नियोगीजी की हत्या के करीब एक या सवा महीने बाद दीवाली का त्यौहार था। तमाम मजदूरों ने इस त्यौहार को शोक तथा विरोध दिवस के बतौर मनाने का निर्णय लिया व इस दिन पूरे छत्तीसगढ़ में सरकार, पूँजीपति, पुलिस आदि के पुतले जलाने का कार्यक्रम बनाया गया था। राजहरा में एक चौक पर बैठे हम ऐसे ही एक पुतले के तैयार होने का इंतजार कर रहे थे, जो पास के ही एक मोहल्ले में बन रहा था और जिसे चौक पर जलाया जाना था। वहीं पर मेरे पास बहलराम भी बैठा हुआ था जो यूनियन की जीप चलाता है।

उस शाम नियोगीजी को याद करते हुए उसने यह घटना सुनायी, " एक दिन मैं बाहर

करने करीब 10 बजे रात को राजहरा पहुँची। मैंने उन्हें अपना प्रस्ताव बताया तो कहने लगे इसके लिए कल महिलाओं के साथ बैठकर एक मीटिंग कर लो और फिर वे जो निर्णय लेंगी वैसा कर लेना। सुबह 6 बजे नियोगीजी ने महिलाओं से मुलाकात करवायी। महिलाओं ने मुझसे पूरी जानकारी ली। उसके बाद उन लोगों ने 8 मार्च में भाग लेने हेतु अपनी सहमति प्रकट की।

इस प्रक्रिया को देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य भी हुआ और मेरी पूर्व की धारणा भी बदली। मुझे लगता था कि सामूहिक निर्णय की बात कोरी है। इतने बड़े संगठन में कहाँ सामूहिक निर्णय होता होगा। नियोगीजी जो कहते होंगे वही होता होगा। पर जब पूरी प्रक्रिया देखी तो मुझे लगा कि वास्तव में अब वो दिन दूर नहीं जब सामाजिक बदलाव की बात ठोस बनने लगेगी।

नियोगीजी का कहना था कि **महिलाओं की लड़ाई उनकी अकेले की लड़ाई नहीं है।** अगर पुरुष की लड़ाई में उनकी बराबर की भागीदारी रहती है, तो महिलाओं की लड़ाई में पुरुषों की भागीदारी क्यों नहीं ? **क्यों महिलाएँ ' महिला समस्या ' कहकर अपनी लड़ाई अकेले लड़ने चली जाती हैं, क्यों बाँट देती हैं हमें ?** उनका मानना था कि जब मजदूर लड़ता है तो वह भी व्यवस्था के खिलाफ और वर्ग प्रधान समाज से ही लड़ता है। महिला भी जब अपनी लड़ाई लड़ती है तो वो भी व्यवस्था व वर्ग प्रधान समाज से ही लड़ती है, फिर वे क्यों बाँट देती हैं हमें ? ❑

(सितम्बर 1992 ; मूल लेख के कुछ अंश।)

नेल्सन मंडेला की रिहाई धूम-धाम से मनायी

अनूप सिंह

भिलाई के कार्यालय में मौजूद हम 15-16 साथी हँसी-ठट्ठा कर रहे थे, " ये देखो, संतोष अभी थोड़ी देर पहिली खाना खाए रिहिस, अब तुंहर मन बर निकाले हन तो एक घंटा भीतर दोबारा खूब खाना खाइसे। हो-हो-हो !" पास ही बैठे नियोगीजी के कान में जब यह बात पड़ी तो उनकी मुखाकृति एकाएक गम्भीर हो गयी। उनके दिल में उठी पीड़ा की रेखाएँ उनके चेहरे पर स्पष्ट दिखायी दे रही थीं। साथियों की बात को ही बुदबुदाते हुए , " . . . . एक घंटा भीतर दोबारा खूब खाइसे . . . . ? " " इसका मतलब क्या है, जानते हो ? ", उन्होंने उचक कर मुझसे पूछा। मुझे निरुत्तर देख कर खुद जवाब दिया, " ही हैज़ बीन स्टार्विंग। उसे भरपेट खाना नहीं मिल रहा है।" (पाठकगण यह तो समझ ही गये होंगे कि भिलाई आंदोलन के सिलसिले में काम से निकाले गये हजारों साथियों में से ही एक संतोष भी था)।

चाहिए। तब श्री झा ने कहा कि नियोगीजी भी ऐसी ही आवश्यकता महसूस कर रहे हैं। उसके पश्चात् एक दिन नियोगीजी, नाथजी, गौतमजी और अन्य एक-दो मित्रों के साथ हम लोगों ने ग्रामीण युवा अभिक्रम (तिल्दा, जिला रायपुर) में बैठक की। दिनभर की इस बैठक में छत्तीसगढ़ की आर्थिक, सामाजिक व राजनैतिक स्थिति का विश्लेषण किया। ग्रामीण संगठनों और शहरी संगठनों के संयुक्त प्रयास से उभरने वाली सम्भावनाओं पर विचार किया। विभिन्न प्रकार के संगठनों के बीच तालमेल बिठाने की दृष्टि से जो-जो कदम उठाये जाने चाहिए उन पर भी चर्चा हुई। हम लोगों के प्रिय विषय, अखबार प्रकाशन पर भी पुनः एक बार चर्चा हुई (इसके पूर्व एक बार नियोगीजी के साथ गरीबों का साथ देने वाले एक अखबार की जरूरत पर रायपुर में चर्चा हुई थी)।

अगस्त 1990 में रायपुर के सिंधु भवन में वही ऐतिहासिक बैठक हुई जिसमें ग्रामीण स्तर पर काम करने वाले विभिन्न संगठनों के सैकड़ों कार्यकर्ता और छमुमो के तहत काम करने वाले अनेकानेक कार्यकर्ता एकत्रित हुए। ये सभी लोग एक दूसरे के विचारों से परिचित हुए और छत्तीसगढ़ को मद्देनजर रखते हुए व्यापक मुद्दों पर आंदोलन छेड़ने का निर्णय हुआ। गांधीवादी नेता श्री ठाकुरदास बंग और स्व. श्री चंद्रप्रताप तिवारी इस सम्मेलन के मुख्य अतिथि थे और उन दोनों ने ही इस प्रक्रिया की मुक्त कंठ से प्रशंसा की कि गाँव-गाँव और शहर-शहर से उभरी जनशक्ति एक मंच पर एकत्रित हो रही है। व्यक्तिवाद और संस्थावाद से पीड़ित इस समाज में यह विपरीत प्रक्रिया सबके मन में आशा की किरणें बिखेर रही थी।

गांधी जयंती के दिन रायपुर शहर इन संगठनों के प्रतिनिधियों से भरा हुआ था। चारों ओर से संगठन के लोग ट्रेनों में, बसों में भरकर रायपुर पहुँच गये थे। शहर और गाँव की मिली-जुली आवाज उस दिन पूरे रायपुर शहर में गूँज रही थी। गांधी के सपनों का भारत बनाने के लिए कृतसंकल्प हजारों लोग आम सभा में एकत्रित हुए थे। एकत्रित जन समुदाय तालियाँ बजा-बजाकर इस आंदोलन के लिए सहमति व्यक्त कर रहा था। छत्तीसगढ़ में युवा साथियों को काम देने की बात, जल-जंगल-जमीन पर मेहनतकश गरीबों के हक की बात और सामाजिक न्याय की बात, इन सभी बातों को लेकर एक व्यापक जन आंदोलन छेड़ने की तैयारी 2 अक्तूबर को उस मंच से की जा रही थी।

सभा के अगले दिन 3 अक्तूबर को आगे की रणनीति निर्धारित करने के लिए हममें से कुछ लोग फिर बैठे। बहुत सारी योजनाएँ और बहुत बड़े-बड़े सपने हम सबने मिल-जुलकर गरीबों और शोषितों के लिए देखे और उन सपनों को साकार करने के लिए साथ-साथ चलने का निर्णय भी लिया।

❑

(सितम्बर 1992 ; मूल लेख के कुछ अंश।)

अथक सागर की तरह बनो, कामरेड !

राकेश शुक्ला

नियोगीजी से मेरी पहली मुलाकात करीब एक दशक पहले दल्ली राजहरा में सन् 1982 में हुई थी। उन दिनों मैं बस्तर जिले की 'परिर्वतन' नामक एक स्वयंसेवी संस्था में काम कर रहा था। पैसा लेकर स्वयंसेवी संस्था चलाने की सीमाएँ मुझे धीरे-धीरे स्पष्ट हो रही थीं। एक प्रकार का मोहभंग हो रहा था और साथ-साथ हताशा एवं निराशा भी बढ़ रही थी। इसी समय मैं सी. एम. एस. एस. के सम्पर्क में आया और मेरा राजहरा आना-जाना होने लगा। ऐसे ही एक प्रवास के दौरान मैं यूनियन दफ्तर से सटे कमरे में चल रही डिस्पेंसरी में बैठा हुआ था। नियोगीजी भी वहीं आकर बैठ गये। इधर-उधर की बातें चल रही थीं। हो सकता है मैंने संस्थाओं के बारे में कुछ कहा हो, याद नहीं है। उस पर नियोगीजी बोले, "आप वहाँ क्यों फालतू टाइम बरबाद कर रहे हैं, यहाँ आ जाइये।" इसके बाद कुछ तफसील से बात हुई कि संगठन के परिप्रेक्ष्य में मेरी क्या भूमिका और काम हो सकता है। नियोगीजी तकरीबन हर क्षेत्र में लीक से हटकर सोचते थे।

मेरी भूमिका के बारे में उनकी राय थी कि कोर्ट के अंदर वकालत करने का ज्यादा महत्व नहीं है। छमुमो का काम उन दिनों शुरू हो चुका था। आस-पास के गाँवों से लोग अपनी जमीन आदि सम्बंधित झगड़े, कानूनी समस्याएँ व केस लेकर यूनियन के दफ्तर पहुँच जाते थे। नियोगीजी का सुझाव था कि मैं इन लोगों से बात करूँ, देखूँ कि किस प्रकार की समस्या या झगड़ा है। जरूरत हो तो जिस गाँव से लोग आये हैं, वहाँ जाऊँ, गाँव के अन्य लोगों से भी बातचीत करूँ, उनकी राय जानूँ आदि। बिना कोर्ट जाये समस्या का समाधान कैसे हो सकता है, इसका प्रयास करूँ। दोनों पक्षों का गाँव में किस प्रकार का समर्थन है, क्या कोई खास तबका या वर्ग किसी एक पक्ष के विरोध या समर्थन में है। गाँव से आये सभी लोगों से सम्पर्क रखूँ और छमुमो के साथ मिल-जुल कर काम करूँ। हो सकता है इनमें से कुछ लोग मोर्चे से जुड़ना चाहें और अपनी समस्याओं से जूझते हुए नये समाज की रचना में भाग लें। नियोगीजी की निगाह में मेरी भूमिका का आखिरी पहलू था – अगर कोर्ट जाना ही पड़ जाये या जो मामले कोर्ट में अटके हुए हैं, उनमें लोगों और वकील के बीच मध्यस्थता की भूमिका निभाने का।

मुझे तो यह भूमिका बिलकुल भा गयी। अपना बोरिया-बिस्तर बाँधकर मैं बस्तर से राजहरा पहुँच गया और वहीं रहने लगा। राजहरा से कोर्ट करीब 30 किलोमीटर दूर बालोद में है। यूनियन और मोर्चा के कार्यकर्ताओं पर थोपे गये ज्यादातर फौजदारी केस वहीं चल रहे थे। कुछ समय बाद मैं बालोद से 5-6 किलोमीटर दूर दानीटोला में रहने लगा और वहीं से बालोद कोर्ट आने-जाने लगा। वहाँ मेरे पड़ोसी थे आशाजी के पिता यानी नियोगीजी के ससुर, श्री सियाराम। मैं कुल मिलाकर करीब साल भर दल्ली राजहरा एवं दानीटोला में रहा।

आज करीब पाँच साल से दिल्ली में वकालत कर रहा हूँ। वकालत में पैसा, सम्पत्ति,

जिसका सपना मर गया, समझो वह इंसान भी मर गया

सुरेश कुमार

मैं तब सिर्फ 10 वर्ष का रहा होऊँगा जब नियोगीजी से पहली बार मिला था। नियोगीजी के प्रति उस उम्र में मेरे आकर्षण का कारण उनका प्यार व संजीदगी थी।

एक सुंदर दुनिया की स्थापना ही नियोगीजी का सपना था। वे कहते थे कि जिसका सपना मर गया, समझो वह इंसान भी मर गया। हर इंसान को अपने दिल में एक सुंदर दुनिया का सपना संजोकर उसे साकार रूप देने के लिए संघर्ष करना चाहिए।

2 अक्तूबर 1989 को रायपुर में गांधी जयंती मनायी गयी। उसके बाद नियोगीजी वहीं रुककर कुछ सामग्री (लेख सम्बंधी) तैयार कर रहे थे। तब मैं 17 वर्ष का था। नियोगीजी कुछ लिख रहे थे तथा बीच-बीच में मुझसे पूछते थे कि यह कैसा रहेगा ? और क्या हो सकता है ? मुझे उनके इस तरह पूछने पर बहुत आश्चर्य हुआ। किंतु नियोगीजी की यह एक सामान्य प्रवृत्ति ही थी कि उनके साथ चाहे जो भी रहे – मजदूर, किसान, छात्र, युवा, बुद्धिजीवी, बच्चे आदि – सभी से मुद्दे पर बात करते थे और सभी का विचार जानना चाहते थे।

नियोगीजी अपने उत्साह से छोटी-से-छोटी चीजों में सजीवता ला देते थे। चाहे वो खाने के लिए भाजी पकाने का काम हो, घर की सफाई का काम हो, बगीचे का काम हो या अन्य कुछ भी। 'चलो, जोरदार ढंग से बनायेंगे', यह कहकर सामूहिकता की भावना पैदा करके उत्साह के साथ वे हर समय जीवंत माहौल बनाये रखते थे।

एक बार बी. एस. पी. के मुख्य चिकित्सालय में हमारा एक मजदूर साथी घायल अवस्था में भर्ती था। नियोगीजी उसे देखने के लिए गये तो वहाँ उपस्थित सभी डाक्टरों ने उन्हें नमस्ते की। फिर वे घायल साथी के पास पहुँचे तो उसने बातचीत के दौरान उन्हें बताया कि उस दिन उसकी छुट्टी हो गयी थी, किंतु अस्पताल का बिल देने में 25 रुपये कम पड़ रहे थे, इसलिए वे लोग जा नहीं पाये। यह सुनकर नियोगीजी बहुत परेशान हो गये और मुझसे बोले, " जाओ 50 रुपये लेकर आओ, तब तक मैं यहाँ बैठा हूँ। " और उस मजदूर साथी को यूनियन की गाड़ी से उसके घर छुड़वा दिया। उसके बाद उन्होंने डाक्टरों से कहा, " बड़े दुःख की बात है। मेरा एक साथी सिर्फ 25 रुपये के कारण घर नहीं जा सका और आप लोग मेरे इतने सारे साथी यहाँ होकर भी उसके लिए कुछ नहीं कर पाये। "

हर व्यक्ति के लिए प्यार व अपनापन था उनमें।

□

(सितम्बर 1992 ; मूल लेख के कुछ अंश।)

है, क्रांतिकारी, पढ़ा-लिखा युवा — इसका बड़ा भारी समस्या है। ये जिस दिन जनता से जुड़ता है और आंदोलन का पहला कदम उठाता है, उसी दिन उसे पुलिस की बंदूक का नली दिख जाता है। इसका इलाज नहीं। मजदूर ऐसा नहीं है, उसको पुलिस की बंदूक का नली बहुत मुश्किल से नजर आता है। और उस बीच जन आंदोलन खड़ा हो जाता है।" सारा हाल स्तब्ध हो गया, प्रश्न जहाँ के तहाँ रुक गये। बुद्धिजीवियों के तर्क, उनकी पेचीदा परिभाषाएँ अचानक सहम गयीं। नियोगी ने फिर बात सँभाली, "देखो, ये युवा बहुत पढ़ा-लिखा होता है न, थ्योरी जानता है, इसलिए बहुत दूर तक देख लेता है, अमूर्त स्तर पर ही कई लम्बा-लम्बा डग तय कर लेता है। पर मजदूर को ठोस अनुभव करके ही बात समझ आती है।" बात सँभलने की जगह और 'बिगड़' गयी। स्तब्धता और गहरा गयी।

मैं आज तक उन शब्दों की गहराई में अपने-आपको टटोल रहा हूँ। उन शब्दों में लेनिन और ग्रामशी के बीच का वह 'मध्यमवर्गीय-बुद्धिजीवी' संतुलन खोज रहा हूँ जिसे नियोगी ने दानीटोला खदान में पत्थर तोड़कर और केरी-जुंगेरा में बकरी चराकर अपने अंतःस्तल में उतार लिया था।

* * *

ऐसा नहीं था कि नियोगी ने वैकल्पिक समाज बनाने के जितने सपने देखे, वे सभी सफल हुए हों। *शहीद स्कूल और शहीद अस्पताल खड़ा करने के साथ-साथ नियोगी ने सपना देखा* एक शहीद टेक्निकल इंस्टीट्यूट (आई. टी. आई.) बनाने का। यहाँ स्थानीय शिक्षित नौजवानों को तकनीकी प्रशिक्षण देकर छत्तीसगढ़ में विकसित हो रहे उद्योगों के लायक बनाने की योजना थी। नियोगी को चिंता थी कि छत्तीसगढ़ के बाहर का व्यक्ति तकनीकी कुशलता लेकर आता है और यहाँ के उद्योगों में रोजगार पा लेता है, जबकि स्थानीय नौजवान भटकता रहता है। मजदूरों के चंदे से बनने वाले इस टेक्निकल इंस्टीट्यूट के लिए नियोगी तत्कालीन कांग्रेसी प्रदेश सरकार से केवल मान्यता की माँग करते रहे। अनेक नेताओं एवं नौकरशाहों के सामने लिखित प्रस्ताव पेश किये परंतु किसी ने एक न सुनी। मुझे याद है कि आंदोलन के प्रति हमदर्दी रखने वाले एक वरिष्ठ सचिव ने इस सिलसिले में सरकारी रवैये की व्याख्या करते हुए मुझे कहा था, "सरकार नियोगी की हड़तालों और धरनों से तो निपटना जानती है, पर शहीद टेक्निकल इंस्टीट्यूट से जो खतरा पैदा होगा, उससे प्रदेश की कोई सरकार निपट नहीं पायेगी। इसलिए उसके लिए मान्यता मिलना नामुमकिन है।"

* * *

सन् 1984-85 में जब भोपाल गैस पीड़ितों ने आंदोलन खड़ा किया तो नियोगी ने आंदोलन के साथ घनिष्ठ सम्पर्क बनाया और यह सलाह दी कि प्रदेश के हर जिला मुख्यालय पर लोगों को संगठित करके यूनियन कार्बाइड पर कड़ी कार्रवाई की माँग को लेकर सत्याग्रह किया जाये। छत्तीसगढ़ के सातों जिलों में सत्याग्रह करने की जिम्मेदारी उठाने को वे स्वयं तैयार थे। यह तो गैस पीड़ितों का दुर्भाग्य था कि उस समय उनका नेतृत्व करने वाले संगठनों ने नियोगी के प्रस्ताव के महत्व को नहीं समझा। अंततः भोपाल का आंदोलन राष्ट्रव्यापी बनने की जगह पुराने भोपाल की चंद गलियों में सिमट कर रह गया।

* * *

19 दिसम्बर 1985 — वीर नारायण सिंह का जन्म स्थल, ग्राम सोनाखान, जिला रायपुर।

अधिकारी को चिट्ठी भेजी, फोन पर बहुत भला-बुरा कहा, लेकिन बिजली, पानी चालू करने के लिए एक बार भी अनुरोध नहीं किया। बल्कि उसी समय उन्होंने अस्पताल के पास डॉ. सेन का क्वार्टर बनाने का निर्णय लिया।

वे खुद मिट्टी के साधारण घर में रहते थे। लोगों ने उनके लिए अच्छा मकान बनाने की बात कही पर वे नहीं माने। राजहरा की मजदूर बस्तियों में बिजली नहीं थी, अनेक आंदोलनों के बाद बस्ती में बिजली आयी। हम लोग नियोगीजी को बार-बार बिजली कनेक्शन के लिए बोले लेकिन वे हमेशा यही जवाब देते थे, " पहले मजदूरों के घरों में बिजली आने दो फिर मेरे घर में आयेगी। " एक सरल तथा सुदृढ़ व्यक्तित्वपूर्ण चरित्र था उनका।

वे कहते थे लोग खराब नहीं होते हैं। सच्चाई यह है कि वर्ग विभाजित समाज में लोगों की स्थिति व चिंतन लोगों को खराब करता है। इसलिए आंदोलन के समय वे किसी को भी नहीं छोड़ते थे, बड़े-से-बड़े आफिसर का भी घेराव करते थे। कई बार उन्होंने भिलाई स्टील प्लांट के मैनेजिंग डायरेक्टर का भी घेराव किया। फिर समय-समय पर आफिसरों के साथ सामान्य रूप से व्यवहार भी करते थे। वे अपनी राजनैतिक बातें उन्हें घंटों समझाया करते थे। बलबीर सिंह नाम का एक आफिसर पर्सनल विभाग में आया। आंदोलन के समय उसका घेराव किया गया, गाली-गलौज भी की, लेकिन जब उसका तबादला हुआ तो नियोगीजी ने उसे अपने घर पर बुलाकर चाय-नाश्ता करवाया।

सन् 1987 में हम लोगों को ' फूड-पॉयजनिंग ' (विषाक्त भोजन का प्रभाव) हो गया था। तबियत ज्यादा खराब होने के कारण अस्पताल बंद करना पड़ा। हम लोगों को तेज बुखार व उल्टी-दस्त हो रहा था। नियोगीजी उस समय 4-5 दिन के लिए सपरिवार राजनांदगाँव गये हुए थे। जैसे ही उन्हें हमारी बीमारी का पता चला वे तुरंत लौट आये और रात-दिन हमारी सेवा में लग गये।

दो-तीन साल पहले की बात है। दल्ली से 20-25 कि. मी. दूर कुटमारदी गाँव है। वहाँ के एक बुजुर्ग बालसिंग के घर में वन विभाग के लोगों ने अत्याचार किया व घर में लगी लकड़ी निकालकर ले गये। बालसिंग को गिरफ्तार कर लिया गया। नियोगीजी को पता चला तो उन्होंने वन विभाग के विरोध में एक बड़ा आंदोलन शुरू किया, बालसिंग को जेल से छुड़वाकर लाये और खुद गाड़ी में उसको घर तक छोड़कर आये।

फरवरी-मार्च 1991 में नियोगीजी के जेल में रहने के कारण दल्ली राजहरा में होली नहीं मनायी गयी थी। जिस दिन वे जेल से रिहा हुए उस दिन सुबह से नगाड़े बजने लगे। लोग नियोगीजी के आने का इंतज़ार कर रहे थे। नियोगीजी गाड़ी से आ पहुँचे, गाड़ी से उतरकर वे लोगों के साथ पैदल चलने लगे। मजदूरों व गाँव के लोगों ने गुलाल के साथ अपना स्नेह मिलाकर उन्हें सराबोर कर दिया। लोग खुशी से झूम उठे थे। ऐसा लग रहा था जैसे सब खुशी से पागल हो गये हों , कोई किसी से अलग नहीं था। सब एक साथ मिलकर नाच रहे थे। लोगों ने नियोगीजी को कंधे पर उठा लिया था, बीच-बीच में वे पैदल भी चल रहे थे। चारों ओर लाल-हरा गुलाल उड़ रहा था। भीड़ में नियोगीजी के जूते चार बार गुमे पर हर बार मजदूर साथी उन्हें अपना जूता पहना देते थे। लगातार 3-4 कि. मी. पैदल चलने के बाद वे मंच पर पहुँचे। चारों ओर नगाड़ों और पटाखों की आवाज गूँज रही थी। लोग पागलों की तरह नाच रहे थे, जैसे कि होली

को होशंगाबाद जिले के ग्राम पलिया पिपरिया के दौरे पर साथ रहे। कई महीनों से उनकी हत्या की साजिश की सूचना उन्हें थी। पर कहीं भी कोई लेशमात्र चिंता, कोई भय, कोई शिकन मुझे उनके विचारों में देखने को नहीं मिली। बल्कि दिल्ली यात्रा से उनका मनोबल, उनका उत्साह बहुत बढ़ा था और 2 अक्तूबर 1991 को भिलाई में एक ऐतिहासिक रैली आयोजित करने की उनकी जबर्दस्त मानसिक तैयारी थी। पिपरिया में रात की जनसभा के बाद मुझे ट्रेन में चढ़ाते हुए वादा ले लिया था कि 2 अक्तूबर को मैं भिलाई जरूर पहुँचूँगा।

लेकिन मुझे क्या पता था कि लौह अयस्क की खानों से निकलकर भिलाई इस्पात नगरी में ढला फौलादी संकल्पशक्ति का वह प्रेरणा-पुंज शंकर 28 सितम्बर को ही शहादत का जाम पीकर अमर हो जायेगा।

जब मुझे इसकी सूचना मिली तो मैं वाराणसी के पास मिर्जापुर के एक कार्यक्रम को बीच में छोड़कर हतप्रभ भागा। दल्ली राजहरा में, लाल-हरे झंडे की नगरी में मीलों फैली बस्तियों में मौत का सन्नाटा था – दिल को अंदर तक चीरने वाली खामोशी थी। लग रहा था कि अभी कहीं से नियोगी भैया मुस्कराते हुए आयेंगे और हमेशा की तरह अपने खास किस्म की गर्मजोशी से मिलेंगे।

छमुमो के साथी तत्काल हमें शहीद पार्क में उनके चितास्थल पर ले गये। शहीद अनुसूइया बाई [1] और शहीद जगदीश भाई [1] के बगल में चिता शांत हो चुकी थी। हम मौन खड़े थे। तभी एक साथी ने नारा लगाया – " शहीद शंकर गुहा नियोगी अमर रहें " और सारा पहाड़ गूँज उठा – " अमर रहें . . . अमर रहें। " यह नारा मेरे पूरे अस्तित्व को भेदता, चीरता, टुकड़े-टुकड़े करता निकल गया। अंदर, गहरे में जैसे सपनों का संसार चूर-चूर हो रहा था।

❑

(अगस्त 1992 ; मूल लेख का संक्षिप्त स्वरूप।)

सपना टूटता नहीं

शैबाल जाना

5 जनवरी 1982 को मैं अपने दोस्त तिमिर मुखर्जी के साथ कलकत्ता से दल्ली राजहरा आया था। शाम 5 बजे जब हम यूनियन के आफिस में पहुँचे उस समय नियोगीजी मीटिंग में बैठे थे। मीटिंग के खत्म होने पर वे हमसे मिले, आफिस के बगल की चाय की दुकान पर बैठकर बातें होती रहीं। बात करते समय मुझे यह महसूस नहीं हुआ कि मैं आज ही यहाँ आया हूँ।

लोगों के साथ मिल-बैठकर बातचीत करना उनका स्वभाव था। कितने ही दिन व रातें

[1] 2-3 जून 1977 के गोलीकांड में शहीद।

दस हजार साल के लिए रुक नहीं सकते

आयेशा हेब्ले

यह कई लोगों का अवलोकन है कि नियोगी सब जगहों के अनुभवों से सीखने को तैयार रहते थे। इस संदर्भ में मुझे एक छोटी-सी घटना याद है। सन् 1979 की शुरूआत में नियोगी से मिलने के कुछ ही महीने पहले तक मैं ईरान में अंग्रेजी पढ़ाती थी। उन्हीं दिनों शाह-विरोधी आंदोलन शुरू हुआ था। एक बार सन् 1980 में जब नियोगी दिल्ली आये हुए थे तो मैं उन्हें ईरान के इस आंदोलन के बारे में बता रही थी। मैंने उन्हें यह भी बताया कि जब वहाँ 10-11 दिसम्बर 1978 को शाह के खिलाफ बड़े-बड़े जुलूस निकले तो उनमें 35 लाख से भी अधिक लोग शामिल हुए। वे लोग जुलूस में चलते-चलते न केवल नारे लगा रहे थे बल्कि एक साथ कोरस में गाना भी गा रहे थे जो सुनने में बहुत ही अच्छा लगता था। मैंने सोचा कि नियोगी ने इस बात पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया होगा। लेकिन जब मैं अगली बार दल्ली राजहरा गयी, तो मैंने शहीद दिवस के अवसर पर देखा कि नियोगी ने वहाँ के जुलूस में भी कोरस गान की इस बात को अपना लिया था। मैं यह देखकर अचम्भित हो गयी कि राजहरा के मजदूरों को भी सुंदर ढंग से कोरस में गाना गाते हुए जुलूस में चलना सिखा दिया गया था। सच है, नियोगी की हर चीज में दिलचस्पी थी, उनके पास हर सार्थक चीज के लिए समय था और समय हमेशा कम था। नियोगी को देखकर मुझे हमेशा माओ-त्से-तुंग की एक कविता की ये पंक्तियाँ याद आ जाती थीं —

> 'इतने काम बाकी रहे,
> और सारे बहुत जरूरी।
> जमाना आगे भाग रहा है,
> समय हाथ से खिसक रहा है।
> दस हजार साल के लिए रुक नहीं सकते।
> समय मत चूको,
> मौके को पकड़ो।'[1]
>
> (9 जनवरी 1963)

(नवम्बर 1992)

[1] इस कविता के भाव की झलक नियोगी द्वारा अगस्त 1990 में दिये गये 'जीवन की मृत्यु पर विजय' शीर्षक के भाषण में देखी जा सकती है (देखिये खंड छह, पृ. 283, पहला पैराग्राफ)। — स.

बैल को भगाते-भगाते यूनियन दफ्तर ले गया। इससे नियोगी बहुत खुश हुए। उनका कहना था, " मैं गुंडा को आदिवासी नेता, क्रांति को बुद्धिजीवी बनाऊँगा। मुक्ति (छोटी बेटी) के बारे में कह नहीं सकता कि वो क्या बनेगी। उसके ऊपर मेरी इच्छा नहीं चलती। लेकिन इतना जानता हूँ कि वह अपने-आपको सँभाल लेगी। "

* * *

आंदोलन के संकट के समय जिन लोगों ने नियोगी का साथ दिया, उनमें से गाज़ी एम. अंसार के बारे में बहुत लोग नहीं जानते हैं। अस्सी के दशक की शुरूआत में अंसार नियोगी के घर में ही रहता था। वह उम्र में उनसे बहुत छोटा था — उनके छोटे भाई जैसा। मेरे विचार में उन शुरूआती वर्षों में अंसार की भूमिका संगठन और नियोगी दोनों के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण थी, हालाँकि उसका संगठन में कोई औपचारिक पद नहीं था (बाद में जरूर वह ' मितान ' का सम्पादक बना)।

फरवरी 1981 में राष्ट्रीय सुरक्षा कानून में नियोगी और सहदेव साहू की गिरफ्तारी के तुरंत बाद जब मैं राजहरा पहुँचा तो पाया कि जनकलाल, छबिलाल आदि नेतागण भूमिगत हो चुके थे। उस समय अंसार ही जनकलाल से सलाह लेकर अलग-अलग दफाइयों में बैठकें, जुलूस, प्रदर्शन आदि करके आंदोलन को नेतृत्व दे रहा था। उस दौरान पुलिस और प्रशासन द्वारा ढाये गये अत्याचारों के बावजूद मजदूर पीछे नहीं हटे। इसके लिए अंसार ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

नियोगी की रिहाई के लगभग छह माह बाद अंसार को घर से चिट्ठी आयी कि उसके पिताजी किसी अन्य के खेत में मजदूरी करते हुए बेहोश हो गये। उनकी तबियत बहुत खराब थी और घर में नमक-चावल का भी इंतजाम मुश्किल से हो पा रहा था। मैंने अंसार को नियोगी से बात करने की सलाह दी। लेकिन वह बोला, " जिन्होंने कभी अपनी व्यक्तिगत समस्या के बारे में ध्यान नहीं दिया, मैं उनसे अपनी समस्या लेकर कैसे बात करूँ ? " उन दिनों तीन चार साल से भी कम उम्र का था — उसे टी. बी. होने का शक था और नियमित इंजेक्शन लगवाना सम्भव नहीं हो रहा था। संगठन की आर्थिक स्थिति भी अच्छी नहीं थी। जब नियोगी को मुझसे अंसार के बारे में पता चला तो उन्होंने अंसार से पूछा। अंसार बोला, " नहीं, कोई खास समस्या नहीं है। मुझे एक बार शायद घर जाना पड़ेगा, पिताजी की तबियत ठीक नहीं है। " नियोगी जोर देकर बोले, " आपको तो जरूर जाना चाहिए। वहाँ पहुँचते ही पिताजी की खबर देते हुए चिट्ठी लिखना। " लेकिन अंसार तब घर नहीं गया। लगभग डेढ़ साल बाद गया। उसके बाद नियोगी ने मुझे, मेरी पत्नी आयेशा और संगठन के डॉ. आशीष कुंडु को खबर लेने पश्चिम बंगाल के चौबीस परगना जिले में अंसार के गाँव भेजा। अंसार आज भी अपने गाँव के पास के किसी स्कूल में मास्टर है। नियोगी अंत तक बहुत पीड़ा के साथ याद किया करते थे, " अगर उस समय हमारे संगठन की आर्थिक स्थिति थोड़ी भी अच्छी होती तो अंसार को ऐसे जाना नहीं पड़ता और मुझे मेरे सबसे अच्छे कामरेडों में से एक को खोना नहीं पड़ता। "

* * *

सन् 1981 के बाद बाहर से दल्ली राजहरा बहुत लोग आया करते थे। उनमें से कुछेक संदेहास्पद भी होते थे। मेरे आपत्ति करने पर भी नियोगी उनको आने से रोकते नहीं थे। नियोगी का कहना था, " कोई यहाँ काम करना चाहता है तो मैं कौन होता हूँ उसे रोकने वाला। यदि

जैसे गलत काम में तो नहीं पड़ गया हूँ।

मेरा एक ही बच्चा है जो पूरे शरीर से अपंग है। नियोगीजी ने देखा तो बहुत दुःखी हुए। तुरंत ही डॉ. गुण के साथ कलकत्ता भिजवाया। वहाँ भी ठीक नहीं हुआ, यह अलग बात है क्योंकि बच्चे की उम्र ज्यादा हो गयी थी। वे मेरे बच्चे के भविष्य के लिए और भी उपाय सोच रहे थे कि इसी बीच भिलाई के मजदूरों का आंदोलन शुरू हो गया। वे उसमें लग गये।

(जुलाई 1992)

नियोगीजी ने मेरी जान बचायी

भक्तिपद घोष

कामरेड नियोगी की हत्या के बाद किसी ने उनके मजदूर आंदोलन के तरीके को निखरते देखकर उन्हें ' मार्क्स ' कहा, तो किसी ने दलित वर्ग के प्रति उनका सेवा भाव देखकर उन्हें गांधी की उपमा दी, किसी ने पिछड़े वर्ग के लोगों की चेतना जागरण के उनके प्रयासों को देखकर विवेकानंद कहा, तो कुछ ने उनके प्रकृति प्रेम को देखकर उन्हें रवीन्द्रनाथ कहा। मैं तो बस इतना ही कह सकता हूँ कि वे बहुत हमदर्द थे।

26 नवम्बर 1989 का दिन मेरी जिंदगी का सबसे कठिन दिन था। उस दिन मैं जगदलपुर से जीप में वापिस आ रहा था। रास्ते में हमारी जीप दुर्घटनाग्रस्त हो गयी, तीन साथी मारे गये। मैं बेहोश हो गया था, बीस दिन बाद होश आया तो मेरी पत्नी से पता चला कि कामरेड नियोगी व उनके सहयोगी मुझे पहले जगदलपुर अस्पताल ले गये थे, बाद में राजहरा के अस्पताल में ले आये। घर पर भी उन्हीं ने खबर भिजवायी। इसके बाद डाक्टर की सलाह पर भिलाई लाये, फिर वहाँ से नागपुर, नागपुर से जबलपुर, जबलपुर से वापिस भिलाई। यह सारी भागदौड़ कामरेड नियोगी ने की। चिकित्सा सम्बंधी पूरा प्रबंध उन्होंने किया था। इतना ही नहीं मेरी सेवा-शुश्रूषा के लिए अपने चार सहयोगी भी नियुक्त कर दिये।

मैं एक मामूली आर्थिक स्थिति का व्यक्ति हूँ। जब मेरी हालत सुधरी तो मैंने अपनी पत्नी से पूछा कि मेरे इलाज के लिए तुम्हें पैसा कहाँ से मिला (करीब बीस हजार रुपया खर्च हुआ था)। उसने बताया कि नियोगीजी ने बंदोबस्त किया था। मैं चौंक गया क्योंकि मैं जानता था कि उनकी आर्थिक स्थिति मुझसे भी ज्यादा खराब चल रही थी। परंतु मैं बाद में भी उनसे यह नहीं पूछ पाया कि यह पैसा उन्होंने कहाँ से लिया था। मेरी इस जिज्ञासा को शांत किया मेरे कुछ मित्रों ने। उन्होंने बताया कि हमारे साथी लोग अपने वेतन का कुछ अंश हर महीने

था उस वक्त। चाय पीते हुए बातचीत चल पड़ी। सहसा वे बोले, " अच्छा, तुम्हें नहीं लगता कि बहुत से दबाव के बीच पत्रकारिता दूषित हो जाती है। क्या नहीं लगता कि पत्रकारिता को प्रतिबद्ध होना चाहिए ? "

मैं बहस के मूड में आ गया। मैंने कहा, " किसके प्रति ? आप कहें जनता के प्रति तो यहाँ जनता में अनेक लोग हैं, सबकी रुचियाँ अलग, मानसिक स्तर अलग। "

नियोगी बोले, " नहीं, मैं दूसरा कुछ सोच रहा हूँ। दरअसल तुम्हारा ध्यान पेपर की व्यवस्था पर है। तुम इसे आगे बढ़ाना चाहते हो . . .। "

मैंने कहा, " कौन नहीं चाहता ? "

नियोगी ने टोकते हुए कहा, " अरे सुनो तो, तुम चाहते हो ट्रेडिल से आफसेट मशीन लग जाये। पर उससे होगा क्या ? साधनों में खो नहीं जाओगे तुम, इसकी गारंटी क्या है ? साध्य का क्या होगा ? "

इस प्रश्न पर मैं उन्हें ठीक से जवाब नहीं दे सका था।

* * *

सन् 1989 के लोक सभा चुनाव की घोषणा हो चुकी थी। एक दिन नियोगी हड़बड़ी में आये। कार्यालय में हम दो मित्र बैठे थे। वे बोले, " हम कांकेर लोक सभा से उम्मीदवार खड़ा करें तो ? क्या सोचते हो तुम लोग ? अच्छी हवा बनायी जा सकती है। "

मित्र ने कहा, " फालतू खर्चा होगा। बीस दिन में क्या हवा बनेगी ? "

नियोगी बोले, " तुम समझते नहीं, जनता दल के वी. सी.[1] हमें एक भी सीट देने को तैयार नहीं हैं। "

मैंने कहा, " लेकिन उम्मीदवार जीत नहीं सकता क्योंकि लोक सभा का क्षेत्र बहुत बड़ा है — बीस दिन में क्या होगा ? अभी भी लोक सभा में राष्ट्रीय दलों का महत्व इस क्षेत्र में तो नहीं घटा। "

नियोगी बहुत पशोपेश में थे। मेज पर रखे हुए हाथ की मुट्ठियाँ भींचकर वे बोले, " नहीं, हार-जीत का सवाल नहीं है। अपने लोगों की एकता का सवाल है। हम वाक ओवर नहीं दे सकते, वैसे में हमारे लोग इस या उस दल में चले जायेंगे। "

* * *

29 सितम्बर 1991 — दल्ली राजहरा के शहीद चौक पर नियोगी फूल-मालाओं और रंग-गुलाल से सराबोर हैं। मैं सामने जाकर नमस्कार करता हूँ। वे गहरी नींद में सोये लगते हैं। 49 वर्ष की उम्र में जितनी नींद उनके परिसर में बाकी थी, सबकी सब इकट्ठे ले रहे हैं। पर रो क्यों रहा है इतना बड़ा हुजूम। दादा अभी उठेंगे और डाँटेंगे सबको। कहेंगे कि मेहनतकशों को रोना नहीं चाहिए। गुस्सा नहीं होना चाहिए। क्रोध और आँसू को पीने से ही अंतःकरण में नयी चेतना फूटती है।

❑

(मूल लेख के कुछ अंश ; ' अमृत संदेश ', रायपुर, के प्रकाशन ' आमंत्रण ', 6-12 अक्तूबर 1991, से साभार।)

---

[1] श्री विद्याचरण शुक्ल।

लेकर यह जताना चाहा कि अपने साथी की गलती के लिए वे भी जिम्मेदार थे। धीरे से यूनियन के अन्य नेता भी झाड़ू लेकर सफाई में जुट गये। इससे एक नया माहौल खड़ा हुआ जिसमें अपने साथी के सम्मान को बनाये रखने के लिए अन्य मजदूर नेताओं ने उसकी सजा में सम्मिलित होकर एक नयी संस्कृति को जन्म दिया। एक सच्चे कामरेड की परम्परा निभाते हुए नियोगीजी ने अपने साथी की सजा में भागीदारी की।

* * *

नियोगीजी अपने बहुत से सपनों को साकार नहीं कर सके। कभी-कभी वे अपने बुढ़ापे के बारे में सोचते थे और कहा करते थे कि मैं बस्तर में आदिवासी 'घोटुल' परम्परा पर आधारित एक स्कूल स्थापित करूँगा। शिक्षा और ज्ञान के आदान-प्रदान के लिए इस स्कूल में वे लोगों के अनुभव के आधार पर भावी पीढ़ी को शिक्षित करने की बात किया करते थे। इस कल्पना में वे इतना आगे बढ़ जाते थे कि इस स्कूल का डिजाइन भी तैयार करने लगते थे और कहते थे कि इसके प्रवेश द्वार पर 'घोटुल' की भाँति ही वे सल्फी के पेड़ लगायेंगे। इस सपने को पूरा करने के लिए आज वे नहीं रहे, लेकिन मुझे यकीन है कि कोई-न-कोई इसे भी एक दिन पूरा करके दिखायेगा।

□

(अगस्त 1992 ; मूल लेख के कुछ अंश।)

आखिरी हैंड शेक / राजेन्द्र कुमार सायल

27 सितम्बर 1991 की रात 12:30 बजे नियोगीजी मेरे रायपुर आफिस से भिलाई जाने को उठ खड़े हुए। मैं उन्हें उनकी कार तक छोड़ने गया। 2 अक्तूबर के कार्यक्रम के बारे में फिर कुछ जिम्मेदारियाँ मुझे सौंपीं और तपाक से उन्होंने अपना हाथ मेरी ओर बढ़ा दिया और कहा, "अच्छा सायल साहब, अब 2 अक्तूबर को मिलेंगे।" नियोगीजी मुझसे कभी हाथ नहीं मिलाते थे। मिलने और जाने के समय वे अपने खास अंदाज में झुककर सलाम किया करते थे, दाहिना हाथ हमेशा अपने सर की ओर उठाते हुए। ज़िंदगी में शायद पहली कुछ मुलाकातों में ही उन्होंने मुझसे हाथ मिलाया होगा। इसलिए उनके इस समय तपाक से हाथ मिलाने पर मैं थोड़ा अचम्भित भी हुआ था, "अरे, आज तो नियोगीजी हाथ मिला रहे हैं।" उनसे हाथ मिलाकर मैंने उनकी कार का दरवाजा खोल दिया, और वे 'लाल जोहार' कहते हुए निकल पड़े। यह हमारा आखिरी हैंड शेक साबित हुआ। शायद नियोगीजी मुझसे हाथ मिलाकर हमारी लम्बी दोस्ती का खाता बंद कर गये।

□

(अगस्त 1992)

बिल कानून बनेगा तो इसका इस्तेमाल सरकार-विरोधी, विपक्षी और ट्रेड यूनियन नेताओं के खिलाफ किया जायेगा। इस बात पर ज्ञानीजी ने स्पष्ट आश्वासन दिया कि इस कानून का उपयोग समाज-विरोधी और राष्ट्र-विरोधी तत्वों से निपटने के लिए किया जायेगा। इनमें शामिल होंगे — चोर, लुटेरे, शोषक, फूट पैदा करने वाले, नफरत फैलाने वाले, गरीबों को दबानेवाले, अल्पसंख्यकों का दमन करने वाले और हरिजनों की हत्याएँ करने वाले आदि।

अभी इस आश्वासन की प्रतिध्वनि संसद भवन की गुम्बदों में गूँज ही रही थी कि मध्य प्रदेश की कांग्रेसी सरकार ने इसके सहारे शंकर गुहा नियोगी को नजरबंद कर दिया। इसका एक मात्र मकसद था उनकी गतिविधियों को कुचलना।

छत्तीसगढ़ शंकर की गतिविधियों का केंद्र था। कभी-कभार ही वे इससे दूर जाते थे। प्रत्येक दृष्टि से उनका स्थान मजदूरों के बीच ही रहा। मैंने जब उन्हें पहली बार सन् 1978 में देखा था तब वे एक झोपड़े में रह रहे थे। नहीं, यह जनता के कुछ नेताओं के एयरकंडीशंड 'झोपड़ों' जैसा नहीं था, खदान के इर्द-गिर्द रहने वाले गरीब मजदूरों के झोपड़ों जैसा ही था। यही जगह थी जहाँ मेरे दल्ली राजहरा जाने पर हर बार उनसे मुलाकात होती थी। जब हत्यारे की गोली ने उनका अंत कर दिया तब भी उनका घर यही था। सन् 1977 में जब शंकर ने मजदूरों को संगठित करना शुरू किया था तब वे औसत तीन रुपये प्रतिदिन कमा रहे थे और आज वे 72 रुपये प्रतिदिन कमा रहे हैं। फिर भी शंकर की जिंदगी में कुछ भी नहीं बदला था। □

('लक्ष्य अभी जिंदा है.' लेख का एक अंश ; 'प्रतिपक्ष', नवम्बर 1991, से साभार।)

एक कामरेड की कहानी

राजेन्द्र कुमार सायल

"कामरेड नियोगी जिंदाबाद", "नियोगीजी को लाल जोहार", "शहीद नियोगी अमर रहे" — दल्ली राजहरा की पहाड़ियों में पहली बार इस तरह के नारे गूँज रहे थे। लाखों लोगों का हुजूम पहली बार जिंदगी में ये नारे लगा रहा था। नियोगीजी ने अपने जीवनकाल में किसी को भी इस तरह के नारे लगाने नहीं दिये, जिससे किसी व्यक्ति विशेष की महिमा हो। लेकिन आज माहौल बदला हुआ है। 29 सितम्बर 1991 को तवारीख में याद रखा जायेगा। आज के दिन दल्ली राजहरा में नियोगीजी की शवयात्रा निकल रही थी। मैं इन नारों की गूँज दूर से सुनकर स्तब्ध रह गया। एक पुराना नजारा मेरी आँखों के सामने खिंच गया।

जाड़े की एक सुबह नियोगीजी ने मुझसे फोन पर कहा कि मुझे उनके साथ रायपुर से तकरीबन 90 किलोमीटर दूर बालोदा बाजार के खान गाँव जाना पड़ेगा जहाँ मोदी सीमेंट कारखाने

बनाकर उसी पर निर्भर रहने की बात कभी नहीं कहते थे। इसलिए आज उनके न रहने पर भी, भले ही हम सबकी जिम्मेदारी बढ़ गयी है लेकिन संगठन को किसी प्रकार का कोई खतरा नहीं है।

❑

(अगस्त 1992 ; साक्षात्कार पर आधारित।)

' मा गो ' चीख सुनकर मेरी नींद खुली

बहलराम साहू

मैं यूनियन की जीप का ड्राइवर हूँ। जिस रात नियोगीजी की गोली चला कर हत्या की गयी उस रात भिलाई की हुडको कालोनी के घर में उनके अलावा अकेला मैं ही वहाँ था। उनकी ' मा गो ' की कराहने वाली चीख सुनकर मैं दौड़ा और खून से लथपथ उन्हें देखा। भागकर सड़क के पार वाले लोगों को जगाया और उनकी मदद से यूनियन के दफ्तर में खबर दी।

सन् 1977 में राजहरा में मजदूर आंदोलन चल रहा था। उस समय मैं पुराने बाजार के एक होटल में काम करता था। मजदूर लोग हर रोज वहाँ आते थे व नियोगीजी के बारे में चर्चा करते रहते थे। उन लोगों से नियोगीजी के बारे में सुनते-सुनते मेरे मन में भी उनके प्रति सद्भावना जागी। तभी एक दिन अचानक मजदूर बस्ती में गोली चली, कुछ मजदूर मारे गये। नियोगीजी को जेल में बंद कर दिया गया। बस्ती के लोगों की मृत्यु का मुझे बहुत दुःख हुआ। फिर मैं भी संगठन के लिए काम करने लगा। पुलिस के डर से रात के अंधेरे में संगठन के पर्चे बाँटता था। नियोगीजी जब जेल से छूटकर आये तब मजदूर साथी मुझे उनके पास ले गये। तभी से मैं यूनियन में काम करने लगा।

एक बार पैर की हड्डी टूट जाने के कारण वे अस्पताल में भर्ती थे, तब वहाँ मैं उनकी सेवा करने लगा। अस्पताल में रहते हुए उनकी बातें सुनकर मुझे वे और भी अच्छे लगने लगे, हो सकता है मैं भी उन्हें पसंद आया होऊँ। उन्होंने मुझे होटल में काम करने को मना कर दिया। अस्पताल से छुट्टी मिलने के बाद वे मुझे अपने साथ सत्तार मिस्त्री के गैरेज में ले गये। वहाँ उन्होंने सत्तार मिस्त्री से मुझे काम सिखाने को कहा। काम सीखने के बाद मुझे गैरेज में ही काम पर लगा दिया। यहीं रहते हुए मैंने जीप ड्राइविंग सीख ली व यूनियन की जीप चलाने लगा।

नियोगीजी की हत्या वाले दिन मैं उनके साथ था। पिछले 3-4 दिनों से लगातार गाड़ी चलाने के कारण मैं थका हुआ था। उस दिन उन्होंने मुझसे कहा, " तू खाना बनाकर रख, मैं रायपुर से वापिस आ रहा हूँ। " मैंने खाना बनाया, उनके लिए ढककर रखा, फिर थका होने के कारण खुद खाकर सो गया। रात को जब वे वापिस आये तो मैंने उनसे खाने के लिए पूछा।

हमने उन्हें कभी बाहरी समझा ही नहीं

छबिलाल साहू

नियोगीजी से मेरा पहला परिचय सत्तर के दशक की शुरूआत में हुआ। उस समय मैं ड्रिलिंग करने और गिट्टी फोड़ने का काम करता था। साथ ही दल्ली की खदानों में मजदूरों का संगठन बनाने व सभा आयोजित करने का काम भी। इन सभाओं में हिस्सा लेने के लिए नियोगीजी दानीटोला से आते थे। वे सभा में अच्छा भाषण दिया करते थे जिसके कारण स्थानीय यूनियनों के कुछ नेताओं ने अपनी नेतागिरी के लिए खतरा महसूस कर नियोगीजी को नक्सलवादी कहकर थाने में खबर कर दी। इसके बाद पुलिस से बचने के लिए नियोगीजी गाँवों में छिपकर रहने लगे व वहाँ संगठन बनाने का प्रयास तथा रचनात्मक कार्य करते रहे।

लोग अक्सर यह सवाल करते हैं कि बाहरी होने के बावजूद नियोगी यहाँ इतने सफल कैसे हुए? हकीकत यह है कि हमने उन्हें कभी बाहरी समझा ही नहीं। दानीटोला व आस-पास के गाँवों में बरसों से काम करने के कारण उनकी अच्छी जान-पहचान हो गयी थी। वहीं के लोग दल्ली की खदानों में काम करने आते थे। बाहरी लोग यहाँ पहले से मजदूरी पर लगे हुए थे जिनसे हमारे अच्छे सम्बंध थे तथा एक ही वर्ग के होने के कारण उनके कंधे-से-कंधा मिलाकर हम पूँजीपतियों के खिलाफ संघर्ष में शामिल होते थे। यही कारण है कि नियोगीजी यहाँ सफल हो सके।

चर्चा के दौरान कोई बात समझ में न आने पर वे अलग से उसे अच्छी तरह समझाते थे। उनके विचारों से सहमत न होने पर कई बार मैं बहस भी करता था। हम दोनों बहस करने में पूरी रात गुजार देते थे।

बचपन से लेकर आज तक जितने भी लोग मुझे मिले, नियोगीजी उन सबसे अलग थे। यदि हम उनके लिए पहनने को कोई अच्छा-सा कपड़ा या घर के लिए कोई अच्छी चीज भेजते थे, तब वे तुरंत उसे वापिस कर देते थे। अपने व्यक्तिगत उपयोग के लिए यूनियन से कोई चीज अनावश्यक लेना उन्हें स्वीकार नहीं था।

❑

(अगस्त 1992; अमन कुमार नम्र द्वारा लिये गये साक्षात्कार का संक्षिप्त स्वरूप।)

रहा था, " देखो जी ! आप हमारे नेता बंशीलाल साहू का सहयोग करो। बंशीलाल साहू तुमको जैसे-जैसे बोलेंगे, वैसे-वैसे तुमको काम करना होगा। हम तुम्हें इसलिए बुलाये हैं क्योंकि तुम दानीटोला खदान में मजदूरी करते थे और वहाँ के मुखिया भी थे। सुना है कि तुम कुछ पढ़े-लिखे हो, कुछ अंग्रेजी भी जानते हो। इसलिए तुम हमारे नेता के सहयोगी रहोगे।" वह युवक और कोई नहीं, शंकर गुहा नियोगी ही था।

कामरेड नियोगी के साथ केवल मेरी ही नहीं, बल्कि उस बैठक में उपस्थित अधिकांश लोगों की भी यह पहली मुलाकात थी। वहाँ मुखियाओं की ही मीटिंग चल रही थी। मैं तो एक साधारण रेजिंग मजदूर था और उसमें मात्र उत्सुकतावश शामिल हो गया था।

अगले कुछ महीनों में नियोगीजी ने बंशीलालजी के साथ उनके आदेशों का पालन करते हुए काम किया। परंतु उन्हें जो भी काम दिया गया, उसको क्रियान्वित करने की पद्धति को देखकर आम मजदूरों के बीच उनकी विलक्षण समझ एवं ईमानदारी स्पष्ट रूप से स्थापित हो गयी। नियोगीजी ने नवगठित सी. एम. एस. एस. के पंजीयन से लेकर झोपड़ी मरम्मत भत्ते व ' फाल बैक वेजेस ' जैसी माँगों को सामाजिक व मूलभूत मुद्दों के रूप में प्रतिष्ठित किया एवं उन्हें हासिल करने के नये-नये तौर-तरीके खोजे व अपनाये।

नियोगीजी कार्यकर्त्ताओं के विकास पर विशेष ध्यान देते थे। उन्होंने मजदूर वर्ग में नेतृत्व उभारने की काफी कोशिश की — चाहे यह बंशीलालजी की बात हो, जनकलाल ठाकुर या सहदेव साहू की बात हो, मेरी अपनी बात हो या अन्य किसी की भी। वे कार्यकर्त्ताओं को उनके काम, ईमानदारी और संघर्ष की क्षमता की कसौटी पर परखते थे। उन्हें रोज नयी-नयी जिम्मेदारियाँ देने या उनसे समस्याओं के हल हेतु सुझाव लेने की कोशिश करते थे। नियोगीजी जल्दबाजी में कोई भी काम नहीं उठाते थे। काम उठाने के पहले उस सम्बंध में पूरी वैज्ञानिक या सैद्धांतिक जानकारी बटोर लेते थे।

वे ईमानदार कार्यकर्त्ताओं पर संगठन के अंदर से या बाहर से कोई भी हमला बर्दाश्त नहीं करते थे। जब मेरे साथ ऐसी दो-तीन घटनाएँ हुईं तो उन्होंने तत्काल उनमें हस्तक्षेप करके मुझे समर्थन दिया। इसके विपरीत बी. एस. पी. के प्रबंध निदेशक श्री संगमेश्वरन के कार्यकाल में, यानी सन् 1985-86 में यूनियन के तत्कालीन अध्यक्ष सहदेव साहू पर उनका अहम् हावी हो चुका था। श्री संगमेश्वरन के इशारे पर एक खदान ठेकेदार ने सहदेव साहू के मन में उनके पद एवं क्षमता का अहम् उभारकर उनमें संगठन के खिलाफ विद्रोह करने की भावना जगा दी थी। ऐसी तर्कहीन एवं व्यक्तिवादी भावना से ग्रसित और संगठन को मैनेजमेंट-परस्त बनाने पर उतारू सहदेव को जब मजदूरों ने अपनी कसौटी पर परखा तो उसे संगठन से बाहर निकाल दिया। इस घटना के कुछ दिन पूर्व ही नियोगीजी ने मुझे संगठन के कामों में दिलचस्पी लेने के लिए प्रेरित किया था।

श्री संगमेश्वरन ने पूर्ण मशीनीकरण की नीति को लागू करने के लिए संगठन को तोड़ने तक की कोशिश की। उनके निर्णयों के कारण लगभग 4,600 मजदूर बेरोजगार हो गये। उस परिस्थिति में यूनियन ने निर्णय लिया कि दल्ली मशीनीकृत खदान को बंद करना है। मुझे 2 जनवरी 1987 को दल्ली क्रशिंग प्लांट के बंकर पर डम्पर रोकने के लिए भेजा गया। वहाँ केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल के जवानों ने हम लोगों पर लाठी चार्ज किया। नियोगीजी बिना

हमने उनसे कहा, " हम इस काम में नये हैं और इन मुद्दों पर ज्यादा कुछ नहीं जानते हैं। अतः आप हमारे साथ चलिये।" उसी दिन शाम को वे दल्ली आ गये जहाँ डी. के. एम. एस. एस. कार्यालय के पास हम लोगों की मीटिंग हुई। नियोगीजी ने इसमें पुरानी यूनियनों के नेताओं के मजदूर-विरोधी चरित्र को उजागर किया। फिर नये मजदूर संगठन के बारे में बताते हुए कहा कि यह मजदूरों से ही चलेगा, जिन्हें अपने नेताओं पर पूरी निगरानी रखनी होगी ताकि वे बहक न जायें। साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि महिला व पुरुष एक साथ खड़े होंगे तभी मजदूर संगठन मजबूत होगा।

उस समय वे जेल में दी जाने वाली लम्बी सी चड्डी पहने हुए थे, ऊपर से आधी बाँहवाली बनियान। उनके पास पाजामा तक नहीं था। उनकी बातचीत, हावभाव, रहन-सहन आदि से हमें कहीं भी ऐसा महसूस नहीं हुआ कि अन्य ट्रेड यूनियन नेताओं की तरह यह भी हमें धोखा देगा। शुरू में कई दिन तक वे मेरे ही घर में रहे। खाना-पीना भी हम साथ ही करते थे। फर्श पर मेरे साथ ही सोते थे। एक दिन दानीटोला का चक्कर लगाकर वे लौटे तो पाजामा पहने हुए थे — उनकी पत्नी को घर में एक पुराना फटा हुआ पाजामा मिल गया था, उसी की मरम्मत करके उन्हें दे दिया था।

एक बार हमें हिर्री माईन्स (बिलासपुर) से बुलावा आया। मैं और नियोगीजी बिलासपुर जाने के लिए दल्ली के मेन रोड पर ट्रक के इंतजार में कड़ाके की सर्दी में सारी रात एक होटल की भट्ठी के पास बैठे रहे। इस बीच मैंने उन्हें कई बार घर चलकर सो लेने की सलाह दी, किंतु वे नहीं माने और कहते रहे कि मीटिंग में पहुँचना जरूरी है, मजदूर साथी इंतजार करेंगे। अगली सुबह हमें एक ट्रक मिला। रास्ते में नियोगीजी ने कहा, " अगर हम ट्रक का इंतजार न करते व घर जाकर सो जाते तो यह ट्रक भी हमें नहीं मिलता। जिन लोगों ने हमें बुलाया है वे निराश हो जाते।" इस घटना से मुझे, खुद तकलीफ झेलकर भी, दूसरों के विश्वास की रक्षा करने की प्रेरणा मिली।

कई साल पहले (शायद सन् 1985 में) 14 अगस्त को यूनियन दफ्तर में हमारी मीटिंग चल रही थी। रात हो चुकी थी व काफी तेज बारिश हो रही थी। तभी हमें खबर मिली कि बारिश के कारण बैगापारा व घोड़ा मंदिर का इलाका डूब चुका है व अन्य कई बस्तियाँ भी खतरे में हैं। नियोगीजी, मैं व हमारे अन्य सभी साथी कार्यकर्ता सारी रात तैर-तैरकर लोगों को निकालने और उनके लिए आवश्यक सामान लाने का काम करते रहे। गहरे पानी में घुसने और तैरकर आगे बढ़ने का नियोगीजी को तनिक भी भय नहीं था।

अगले दिन सुबह से हमारी यूनियन के चार-पाँच सौ साथियों ने मजदूर बस्ती (थाने के आस-पास) व अन्य जगहों पर दवाई डालने, साफ-सफाई करने, मरीजों की सेवा करने आदि का काम शुरू कर दिया। आधा काम हो जाने के बाद पुलिस ने अपने आदमियों को भेजा। इससे पूर्व हम माइक लगाकर लोगों को सावधान होने और शहीद अस्पताल की मदद से दवा व साफ-सफाई सम्बंधी आवश्यक सूचनाएँ दे चुके थे।

इसके 3-4 दिन बाद तक हम पेचिश, उल्टी आदि से पीड़ित लोगों की सेवा में लगे रहे। इसी बीच बी. एस. पी. के मैनेजिंग डायरेक्टर श्री संगमेश्वरन बारिश से पीड़ित मजदूर बस्ती का मुआयना करने वहाँ पहुँचे। वे इसके पहले इन बस्तियों में कभी नहीं आये थे। जब-जब

चाहते थे। इन लोगों का सोचना था कि नियोगीजी को पैसे देकर वे उनकी बौद्धिक क्षमता का इस्तेमाल अपने लिए करते रहेंगे। परंतु नियोगीजी ने ऐसा न करके उलटे अपनी जर्सी गाय बेचकर पूरा पैसा यूनियन पर खर्च कर दिया तथा बगैर पैसा लिए निःस्वार्थ भाव से संगठन का काम करते रहे। लेकिन बंशी, राजन जैसे कुछ स्वार्थी तत्व उनकी इस बात से नाराज थे।

उस समय रोज रात को मैं नियोगीजी से लाल मैदान में जाकर मिलता था। पहले-पहल बंशीलाल साहू नियोगीजी की अवहेलना करते रहे पर शीघ्र ही वे समझ गये कि नेतृत्व देने की असली क्षमता नियोगीजी के पास ही है। एक दिन शाम को मैंने सुना कि नियोगीजी बंशीलाल से कह रहे थे, " आप दुबले होते जा रहे हैं, एक लीटर दूध पिया करें। दूध का इंतजाम मैं कर दूँगा। "

कभी-कभी जब मैं जुलूस में भाग लेता था तो वे मुझे समझाते थे कि एक जगह पर नारा लगाने के बाद फिर दूसरी जगह जाकर नारा लगाओ। इस तरह मजदूर तुम्हें पहचानने लगेंगे। उनका कहना था कमांड (नेतृत्व) चाहिए तो कमांड (नेतृत्व) दो। तुम स्वयं हर काम नहीं कर सकते हो।

राजन, बंशी जैसे लोग मैनेजमेंट और ठेकेदारों के साथ नियोगीजी का बातचीत करना पसंद नहीं करते थे। नियोगीजी कई बार इससे चिढ़कर दानीटोला वापस चले जाते थे, मगर तब तक उन्होंने मजदूरों के बीच अपनी पक्की जगह बना ली थी। मजदूरों के दबाव के कारण उन्हें दानीटोला से वापस आना पड़ता था। उनके विनम्र व्यवहार व ईमानदारी ने मजदूरों का दिल जीत लिया था।

नियोगीजी जब दानीटोला में रहते थे तब मैं कभी-कभी वहाँ उनसे मिलने जाया करता था। वे मेरी लिखी कविताएँ बहुत ध्यान से पढ़ते थे और अपनी कविताएँ मुझे पढ़ाते थे। एक बार मैंने पूरा दिन उनके साथ झोपड़ी में बिताया। दोपहर में उन्होंने अपने खाने में से आधा खाना मुझे दे दिया।

नियोगीजी अक्सर मुझे अपने फरार जीवनकाल की कहानियाँ सुनाया करते थे। बस्तर के राजनैतिक जीवन की, आशा भाभी दानीटोला के जंगल में चावल पकाकर कहाँ रख देती थीं, लकड़ी काटते समय कैसे उनके पाँव में घाव हो गया था, आदि आदि कहानियाँ।

उन दिनों राजहरा के करीब-करीब हर स्तर के परिवारों में मैं ट्यूशन पढ़ाने जाता था। बी. एस. पी. के मैनेजर सी. एस. ब्रम्हा, ठेकेदार दत्ता व यूनियन के एक नेता के यहाँ भी। नियोगी राजहरा आंदोलन के बारे में मुझसे इन सब लोगों की प्रतिक्रियाएँ पूछा करते थे। इससे बाद में उन्होंने आंदोलन के नारों में कुछ-कुछ संशोधन किया एवं दोस्त व दुश्मन किसे कहेंगे या छत्तीसगढ़ी किसको कहेंगे, यह तय किया। 'मितान' का सम्पादन, वयस्क मजदूरों के लिए 'नाइट स्कूल', सांस्कृतिक क्रियाकलाप आदि मैंने नियोगीजी की प्रेरणा से ही चालू किये थे। नियोगीजी ने मुझे सही दिशा देकर एक महान व पवित्र कर्त्तव्य की ओर मेरे जीवन को मोड़ा है। □

(अगस्त 1992 ; मूल लेख का संक्षिप्त स्वरूप।)

तलाशेगी। वैसे हालात भी बनायेगी जो अंदर की उस आग को विकास का रास्ता दिखाने में मददगार बनें। आज लगता है कि नियोगीजी का यह तर्क सही था। आज से पाँच-सात बरस पहले तक कौन कह सकता था कि बस्तर जैसे शांत इलाके में नक्सलवाद उफन जायेगा।

दरअसल, बस्तर के पूर्व शासक प्रवीरचंद्र भंजदेव और छमुमो के शंकर गुहा नियोगी जैसे लोग जीवनपर्यन्त उग्रवाद के खिलाफ ढाल की तरह काम करते रहे। बस्तर में जब तक प्रवीर जीवित रहे उन्होंने आदिवासियों की आस्था और विश्वास की शक्ति से न उग्रवाद को कोई जगह बनाने दी, न राजनीतिज्ञ, नौकरशाह और थैलीशाह की तिगड़ी को खुलकर खेलने दिया।

ठीक उसी तरह अनाचार, उग्रवाद और शोषण के विरुद्ध एक ढाल की तरह खड़े थे शंकर गुहा नियोगी। नासमझ और अदूरदर्शी अंधस्वार्थ ने सितम्बर 1991 में उस ढाल को तोड़ दिया। वे समझ न पाये कि तात्कालिक स्वार्थों के लिए वे अपने हाथों से अपना ही रक्षा कवच तोड़ रहे हैं। □

(अगस्त 1992 ; मूल लेख का संक्षिप्त स्वरूप।)

रमता जोगी बहता पानी

मधुकर खेर

'रमता जोगी बहता पानी' कहावत का अर्थ जग जाहिर है, किंतु इसका पर्यायवाची शब्द है शंकर गुहा नियोगी। नियोगीजी को भूख, प्यास, वस्त्र, निवास आदि की चिंता कभी नहीं रहती थी। वे अपने लक्ष्य की धुन में मस्त रहते थे और यह लक्ष्य था, मजदूरों का पारिवारिक, सामाजिक तथा आर्थिक जीवन अच्छा रहे तथा वे पूर्णतः स्वस्थ रहें।

एक बार नियोगीजी जब जेल में थे, तब मजदूरों का आंदोलन चल रहा था। मैं तथा मेरे पत्रकार साथी श्री रमेश नैय्यर चौक पर एक कपड़ों की दुकान पर खड़े जुलूस देख रहे थे, जो पुलिस थाने की ओर बढ़ रहा था। दुकानदार श्री जैन ने कहा, "देखते जाइये, जुलूस पर जल्द ही लाठियाँ और अश्रुगैस छोड़ी जायेगी। यहाँ यह रोज हो रहा है।" पूछने पर श्री जैन ने बताया कि नियोगीजी के शराब विरोधी आंदोलन से बाजार में दुकानदारों का मुनाफा तिगुना बढ़ गया है। पर पुलिस और शराब के ठेकेदारों की साँठ-गाँठ के कारण लोहा खदानें बंद पड़ी हैं और हम मिट रहे हैं।

रमेश नैय्यर ने पुलिस आक्रमण के फोटो खींच लिये थे। पुलिस फोटो जब्त करना चाहती थी, पर रमेश नैय्यर ने कड़ा रुख अपनाया। थाने के बाहर एक युवक ने रमेश नैय्यर से फोटो

भोर में उठकर पढ़ा करो।" दूसरे दिन से बाबू सुबह उठ जाते थे, फिर अपने और मेरे लिए चाय बनाकर मुझे जगाते थे। वे देर रात तक जागकर भी सुबह जल्दी उठ जाते थे।

मुझे याद आ रही है बचपन के उन दिनों की जब बाबू गणित सिखाया करते थे। यूनियन दफ्तर से जब भी लौटते थे, चाहे देर रात क्यों न हो मुझे उठाकर पढ़ाते थे। उनके सिखाने का ढंग ऐसा था कि मैं नींद में भी गणित की ही बात करती थी।

बाबू बहुत नरम दिल इंसान थे। उन्हें पेड़-पौधों से बेहद प्यार था। इंसानों को तो वे प्रकृति से भी ज्यादा प्यार करते थे। बाहर से लौटने पर यदि वे कोई पेड़-पौधा मुरझाया हुआ देखते तो हमें डाँटते थे। वे पेड़-पौधे, फूल-पत्ती व चिड़ियों को देखते हुए घंटों समय बिता सकते थे। उन पर काम का तनाव बहुत होता था जो ऐसा करने से कम हो जाता था। उन्हें सबसे ज्यादा पसंद था मजदूर साथियों के साथ बैठकर आंदोलन की बातें करना।

मैंने बाबू से बहुत कुछ सीखा। सारी जिंदगी उनकी शिक्षा को आदर्श बनाकर आगे बढ़ूँगी। ❑

(मूल बंगला से अनूदित एवं पुन: साक्षात्कार के आधार पर संशोधित ; मूल लेख अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित 'संघर्ष ओ' निर्माण ' से साभार।)

वह नेता नहीं, मजदूर मालूम पड़ता था

रमेश नैय्यर

नियोगीजी से मेरी पहली मुलाकात इमरजेंसी से कुछ पहले भिलाई स्टील प्लांट द्वारा संचालित भिलाई होटल के सामने हुई थी। उन दिनों मैं रायपुर के एम. पी. क्रॉनिकल अखबार में था। केंद्रीय इस्पात और खानमंत्री की प्रेस कान्फ्रेंस के सिलसिले में पत्रकार श्री मधुकर खेर और श्री दास गुप्ता के साथ भिलाई होटल की तरफ बढ़ रहा था, तो मुख्य द्वार के नजदीक साधारण कद-काठी का एक साँवला सा युवक मिला। हम लोग आगे बढ़ गये थे और वह युवक पीछे रह गया था। पोर्च के पास पहुँचकर मैंने पलटकर देखा। तब तक पुलिसवालों की एक टोली उस युवक को घेर चुकी थी। उसके बारे में मेरी जिज्ञासा जागी। खेर साहब ने बताया कि वह शंकर गुहा नियोगी है, खदान मजदूरों का नेता।

तब तक मैंने इंटक, एटक और सीटू के नेताओं को देखा था। उस युवा मजदूर नेता की शख्सियत उन सबसे अलग थी। वह नेता नहीं, मजदूर मालूम पड़ता था। श्री दास गुप्ता ने बताया कि नियोगी खुद भी मजदूरों की तरह काम करता है व आम मजदूर नेताओं के विपरीत सामान्य मजदूरों की तरह मजदूर बस्ती की एक झोपड़ी में रहता है . . . . . उनसे मेरी दूसरी मुलाकात रायपुर सेंट्रल जेल में हुई थी। तब तक नियोगीजी की चर्चा अखबारों में होने लगी थी। लेकिन जेल अधीक्षक श्री तिवारी की नजर में वे एक आम कैदी की तरह थे। मेरे अनुरोध पर

परिवार के लिए उनके मन में गहरी चिंता थी। बीच-बीच में बोलते थे कि साथ रहने की इच्छा होती है, पर मेरे नसीब में यह सब कहाँ। उनके मन की, दुःख की बात उनके मन में ही रह जाती थी। बीच-बीच में वे अपने में ही खो जाते थे।

वे अक्सर कहा करते थे कि एक ही जगह अटक जाने से काम नहीं चलेगा। राजहरा के मजदूर जब अपना काम खुद सँभाल लेंगे, उस दिन हम कहीं और चले जायेंगे। हमारे साथ उनका लगाव बहुत गहरा था, कभी भी नहीं लगता था कि वे हमसे दूर हैं। मेरी जैसी अनपढ़ औरत के साथ उनको जिंदगी गुजारने में कोई तकलीफ नहीं थी।

राजहरा छोड़कर भिलाई जाने के बाद वे बार-बार कहते थे कि तुम सब लोगों को हम भिलाई ले जायेंगे, वहाँ सब साथ में रहेंगे, कितना मजा आयेगा। 'जिलाबदर' की कार्रवाई के बाद उन्होंने भिलाई में बच्चों के लिए स्कूल खोजना शुरू कर दिया था। लेकिन उनकी यह इच्छा पूरी नहीं हो पायी।

वे चले गये, लेकिन उनके हाथों का स्पर्श बहुत सारी चीजों पर आज भी मौजूद है। वे नहीं हैं, ऐसा मैं सोच भी नहीं सकती हूँ। अभी भी ऐसा लगता है जैसे एक-दो दिन में वापिस आ जायेंगे और फिर मुझे वही परिचित आवाज सुनायी देगी, "आसु, चाय बना, बहुत थक गया हूँ।"

□

(मूल बंगला से अनूदित एवं पुनः साक्षात्कार के आधार पर संशोधित; मूल लेख अनुष्टुप द्वारा प्रकाशित 'संघर्ष औ' निर्माण' से साभार।)

बाबू से मैंने बहुत कुछ सीखा

क्रांति गुहा नियोगी

बाबू की याद मुझे हमेशा आती है। जब भी कोई काम करती हूँ तो उनसे मिली शिक्षा आँखों के सामने आ जाती है। बाबू से जो शिक्षा मिली उसी को याद करके मैं अपनी बात कह रही हूँ।

मैं और मेरा छोटा भाई जीत माचिस पर छपी तस्वीर से 'चित्तर' का खेल खेला करते थे। एक दिन इस खेल में भाई के साथ मेरा जमकर झगड़ा हो गया। मैंने बाबू के पास जाकर उसकी शिकायत की। बाबू ने हम दोनों को बैठाकर समझाया कि तुम इस खेल को बंद करो और दूसरा नया खेल खेलो। मैं तुम दोनों को माचिस की खाली डिबिया लाकर दूँगा जिस पर नयी-नयी तस्वीरें होंगी। तुम दोनों उन्हें जमा करना। मैंने बाबू की बात मान ली। इसके बाद बाबू जब भी बाहर जाते थे तब लौटते समय हमारे लिए माचिस की नयी-नयी तस्वीरों वाली

से भाग गये। पुलिस ने सारे घर को तहस-नहस कर डाला, अंत में पिताजी को पकड़कर ले गये। हम लोग बहुत डर गये थे। पिताजी के सीने पर पुलिस ने बंदूक तानकर उनका अता-पता पूछा। फिर भी पिताजी ने कुछ नहीं बताया। दानीटोला के लोगों को भी पुलिस ने बहुत परेशान किया।

पुलिस से वे बहुत सतर्क रहते थे। एक मजेदार घटना याद आती है। एक दिन वे दानीटोला के पास के गाँव दहियान के तालाब में नहा रहे थे, कपड़े वहीं किनारे पर रख दिये थे। स्कूल के बच्चे पास में खेल रहे थे। तभी मास्टर बच्चों को ढूँढ़ते हुए वहाँ आया और बच्चों को डाँटने लगा। मास्टर ने कुछ खाकी रंग के कपड़े पहन रखे थे। बस, यह देखते ही वे तालाब से भाग खड़े हुए और उनके कपड़े वहीं पड़े रह गये।

इस तरह छह-सात महीने बीत गये। एक दिन केरी-जुंगेरा में उन्हें पुलिस ने पकड़ लिया। उस समय मैं गर्भवती थी। पिताजी ने यह खबर उन्हें जेल में दी। यह सुनकर वे मेरे लिए काफी चिंतित हो गए। पिताजी से 2-4 बकरी बेचकर मेरे इलाज की व्यवस्था करने को कहा। मेरे लिए वह बहुत कठिन समय था। पहली बार माँ बनने वाली थी और पति मुझसे दूर थे। बहुत दुःख होता था – घर में पैसा नहीं, पास में पति नहीं। जचकी के लिए मुझे मेरी नानी के घर सालेटोला गाँव भेजा गया था। जिस समय मैंने लड़की को जन्म दिया उस समय वे जेल की काली कोठरी में बंद थे। गाँव का कोतवाल बच्ची का पंजीयन करने के लिए आया तो हमने उसका नाम सुनीता लिखा दिया। परंतु जेल में उनके दोस्तों ने मिलकर लड़की का नाम 'क्रांति' रख दिया। आज मेरी बड़ी लड़की का यही नाम है।

प्रसव के बाद मैं काफी कमजोर हो गयी थी। मेरे मन में शंका थी कि मैं अपनी लड़की को बचा भी सकूँगी या नहीं, क्योंकि बहुत तकलीफ से हम दिन गुजार रहे थे। वे 13 महीने जेल में रहे। जब लड़की छह महीने की हो गयी तब वे जेल से छूटकर उसी रात हमारे घर आये। इतने दिनों बाद उन्हें देखकर मुझे बहुत खुशी हुई। वे अपनी बच्ची को प्यार करने लगे। अपने हाथ से बच्ची को बकरी का दूध पिलाया।

उसी रात उन्हें मालूम पड़ा कि दल्ली राजहरा के मजदूरों ने एटक और इंटक के नेताओं द्वारा किये गये एग्रीमेंट के विरुद्ध विद्रोह कर दिया है। यह खबर सुनने के बाद अपना अगला कार्यक्रम तय करके वे दूसरे ही दिन दल्ली चले गये। वहाँ जाकर मजदूरों से बात करके वे आंदोलन में शामिल हो गये।

उन दिनों मैं दानीटोला अपने मायके में रहती थी और बीमार थी। अतः प्रसव के बाद दोबारा काम नहीं मिल पाया। हम बहुत आर्थिक तंगी में रह रहे थे। वे दल्ली राजहरा में थे, 3-4 दिन के अंतराल से हमें देखने के लिए आ जाते थे। कुछ ही दिनों में राजहरा में लाल-हरे झंडे की एक नयी यूनियन तैयार हो गयी। पुलिस ने उन्हें फिर गिरफ्तार कर लिया और मजदूरों पर बर्बरतापूर्वक गोली चलायी जिसमें हमारे 11 साथी शहीद हुए।

इस बार डेढ़ महीने बाद उन्हें जेल से छुटकारा मिला। छुटकारा पाते ही वे दानीटोला आ पहुँचे। इसके बाद से हमारे घर में लगातार मीटिंगें होती रहीं, कितने ही लोग आते-जाते रहते थे। लेकिन ये बड़े दुःख की बात थी कि पैसा न होने के कारण हम उन्हें चाय भी नहीं पिला सकते थे।

एक साल बाद दल्ली राजहरा के मजदूरों ने तय किया कि काम का स्थान राजहरा है,

वे नहीं हैं, ऐसा मैं सोच भी नहीं सकती

आशा गुहा नियोगी

आज से करीब बाईस साल पहले उनसे मेरी पहली मुलाकात हुई थी। उस समय मेरी उम्र करीबन 13-14 वर्ष की रही होगी। मेरे फूफाजी जो दुर्ग जिले के गंजी गाँव में रहते थे, उन्हीं के साथ वे हमारे घर पहली बार आये थे। मेरे पिताजी से उन्होंने दानीटोला खदान में अपने लिए काम खोजने के बारे में बातचीत की। पिताजी ने उनको कहा कि जब गाँव के आदमी को ही काम नहीं मिल रहा है तो बाहर के आदमी को कहाँ से काम मिलेगा ? यहाँ तो केवल पत्थर तोड़ने का काम है। रोजी-रोटी भी ठीक से नहीं मिलती। पिताजी की इस बात से वे निराश नहीं हुए। बीच-बीच में हमारे घर आते रहे। कभी-कभार वे हमारे घर रुक भी जाते थे। मेरे पिताजी के मन में उनके लिए हमदर्दी जागी। पिताजी के एक दोस्त हैं दशरूराम, जिनका ठेकेदार शंकरलाल काबरा से अच्छा परिचय था। पिताजी ने दशरूराम से कहकर उन्हें दानीटोला खदान में मेट का काम दिला दिया। हम लोगों की आर्थिक स्थिति उन दिनों बहुत खराब थी। अतः मैं भी उसी खदान में मजदूरी करने लगी। मेरे माता-पिता तो वहाँ पहले से ही काम करते थे।

अब उनके रहने की समस्या सामने थी क्योंकि एक तो हमारी आर्थिक स्थिति खराब थी, ऊपर से झोपड़ी में जगह भी बहुत कम थी। अतः पिताजी ने उन्हें किसी दूसरी जगह रहने का इंतजाम करने को कहा। परंतु वे हम लोगों को छोड़कर कहीं जाना नहीं चाहते थे। वे बोले, " मैं यहीं परछी के एक कोने में पड़ा रहूँगा। " अपने खाने के लिए वे हमें कुछ पैसे भी देते थे।

उस समय वे छत्तीसगढ़ी व हिन्दी ठीक से नहीं जानते थे। ' बासी ' (पका हुआ चावल जो रातभर पानी में भिगो दिया गया हो) वे नहीं खा सकते थे। वे उसमें साग-भाजी, चटनी मिलाकर खाते थे, जबकि हम छत्तीसगढ़ी लोग उसमें नमक मिलाकर ऐसे ही खा लेते थे। कई बार उन्हें खाना नहीं मिलता था, जो मिलता भी था उसे अक्सर दूसरों को खिला देते थे (अभी भी वे यही करते थे)। उन्हें गंदे, फटे कपड़े पहनना पड़ता था। लेकिन यह सब परेशानी वे सहज ढंग से झेल लेते थे। एक साल के अंदर ही उन्होंने यहाँ की भाषा व रीति-रिवाज सब इस तरह अपना लिये कि उन्हें अलग से पहचाना नहीं जा सकता था। इन्हीं दिनों भिलाई और दुर्ग से पुलिस उन्हें ढूँढने आने लगी थी।

उनका असली नाम हममें से कोई नहीं जानता था। हम उन्हें केवल शंकर नाम से जानते थे। गाँव के लोग उन्हें शंकर बाबू कहते थे। नियोगी नाम तो दल्ली राजहरा के काम से सन् 1977 में शुरू हुआ। शुरू में हम नहीं जानते थे कि पुलिस उनको तलाश रही है। पुलिस ने उनकी तस्वीर एक बार हमें दिखायी। हम पहचान तो गये पर पुलिस को बताया नहीं। उन दिनों वे मुख्य रास्ता छोड़कर सायकिल पर गाँव-गाँव घूमा करते थे। दशरू ठेकेदार के काम से भी उन्हें अक्सर भिलाई जाना पड़ता था। वहाँ पुलिस उनको पहचान गयी। अंत में एक दिन दल्ली

107. सायल, राजेन्द्र कुमार – रायपुर के जाने-पहचाने समाजकर्मी एवं पी. यू. सी. एल. के. राष्ट्रीय संगठन सचिव ; छमुमो के 'छत्तीसगढ़ ग्रामीण श्रमिक संघ' से सम्बद्ध।

108. साहू, कुमारसिंह – दल्ली राजहरा में सी. एम. एस. एस. के कार्यालय सचिव।

109. साहू, छबिलाल – सी. एम. एस. एस. के महामंत्री ; पूर्व में खदान मजदूर।

110. साहू, बहलराम – सी. एम. एस. एस. के भूतपूर्व जीप ड्राइवर ; नियोगी की हत्या के समय उनके बगल के कमरे में सो रहे थे।

111. सिंह, अनुराग – दिल्ली में विभिन्न जन आंदोलनों के उपयोग हेतु वीडियो फिल्में बनाने का कार्य।

112. सिंह, अनूप – छमुमो के कार्यकर्ता एवं भिलाई आंदोलन के अगुवा साथी।

113. सिंह, मोहन – रायपुर की एक स्वैच्छिक संस्था के जीप ड्राइवर

114. सिंह, डॉ. विजय बहादुर – विदिशा (म. प्र.) के शासकीय कालेज में हिन्दी विभाग में व्याख्याता एवं हिन्दी साहित्य के जाने-पहचाने समीक्षक व कवि ; जनवादी लेखक संघ म. प्र., के अध्यक्ष।

115. सिंह, त्रिवेणी प्र. – हिन्द मजदूर किसान पंचायत के बिहार में नेता।

116. सिन्हा, कंचन – लखनऊ में ऑक्सफैम (उ. प्र.) की कार्यकर्ता।

117. सियाराम – शहीद नियोगी के ससुर एवं दानीटोला क्वार्ट्ज़ाइट खदान में ठेका मजदूर।

118. सुनीलम्, डॉ. – हिन्द मजदूर किसान पंचायत से सम्बद्ध युवा समाजवादी नेता ; जिला बैतूल (म. प्र) के आदिवासियों के बीच काम ।

119. सुबन्ना, के. आर. – नयी दिल्ली के कन्नड़ हाईस्कूल में कला शिक्षक एवं उभरते हुए युवा कलाकर।

120. सेन, ऑरिजित – नयी दिल्ली में सामाजिक मुद्दों से सम्बंधित कलात्मक एवं साहित्यिक सामग्री के विक्रेता ; दुकान – पीपल ट्री ; उभरते हुए युवा कलाकार।

121. सेन, डॉ. इलीना – रायपुर की 'रूपांतर' संस्था के माध्यम से शैक्षिक कार्य ; पूर्व में छमुमो के साथ खदान मजदूर महिलाओं के बीच काम ; 'किशोर भारती' संस्था (जिला होशंगाबाद, म. प्र.) की पूर्व कार्यकर्ता।

122. सेन, डॉ. बिनायक – जन स्वास्थ्य अवधारणा से जुड़ी हुई गतिविधियों में सक्रिय एवं मेडिको फ्रेंड्स सर्किल के सदस्य; पूर्व में छमुमो के शहीद अस्पताल के डाक्टर (1981-87) ।

123. सेनगुप्ता, अमित – पूर्व में दिल्ली के कपड़ा मजदूर ट्रेड यूनियन आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका ; तत्कालीन 'दिल्ली मुक्ति मोर्चा' के संस्थापक ; छमुमो आंदोलन से जुड़े हुए और उसके 'नवाँ अंजोर' सांस्कृतिक दल के संस्थापक-सदस्य ; सम्प्रति : दिल्ली में संगीत निर्देशन कार्य।

124. सेनगुप्ता, रफ़ी – दिल्ली में कक्षा चार का विद्यार्थी जिसका अपने जन्म से ही नियोगी से परिचय रहा।

125. हक्सर, पी. एन. – विख्यात राजनयिक ; भूतपूर्व प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी के प्रमुख सचिव एवं योजना आयोग के पूर्व उपाध्यक्ष।

126. हरदेनिया, राजेन्द्र – पिपरिया (जिला होशंगाबाद, म. प्र.) में 'नई दुनिया' (भोपाल) के प्रतिनिधि ; मानवाधिकार व विकास सम्बंधी मुद्दों पर शोधपूर्ण लेखन ; कृषि उपकरणों का व्यवसाय।

127. हेब्ले, आयेशा – जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली, में अंग्रेजी विभाग में व्याख्याता।

❑